एचआईवी / एड्स

और

कानून

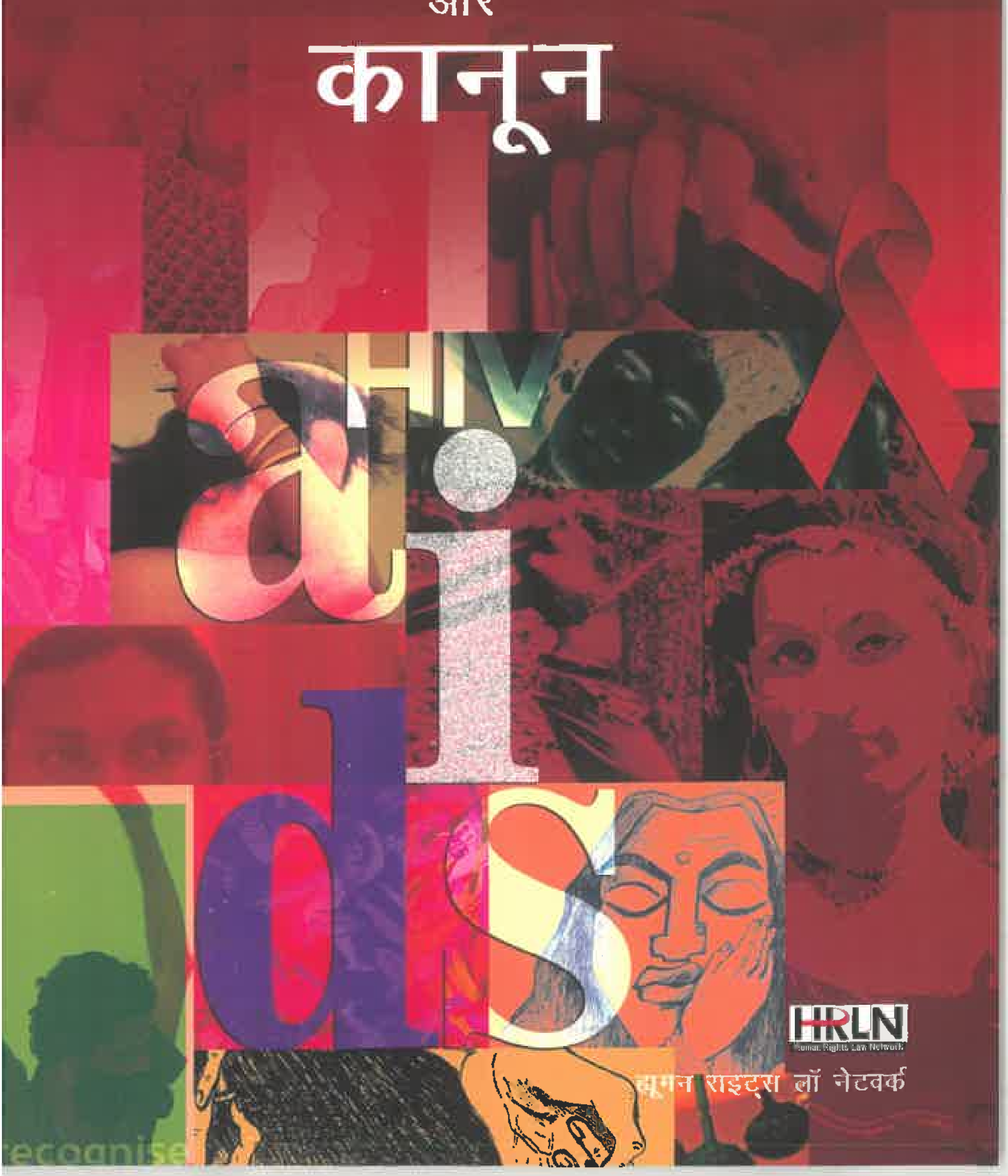

HRLN
Human Rights Law Network
ह्यूमन राइट्स लॉ नेटवर्क

स्वस्थ रहने का अधिकार

एचआईवी/एड्स और कानून

संपादन

लया मेदिनी । दीपिका जैन । कॉलिन गोन्साल्विस

HRLN

ह्यूमन राइट्स लॉ नेटवर्क
दिल्ली, भारत

ह्यूमन राइट्स लॉ नेटवर्क (एचआरएलएन) के उद्देश्य

- मूलभूत मानवाधिकारों की सुरक्षा करना, आवश्यक संसाधनों तक वंचित समुदायों की पहुंच बढ़ाना और भेदभाव दूर करना
- ऐसी सदाशय न्याय प्रणाली विकसित करने में योगदान करना जो समाज के कमजोर और वंचित तबकों के लिए सुलभ हो और साथ ही जवाबदेह, पारदर्शी, चुस्त–दुरुस्त और आम जन की आर्थिक पहुंच के भीतर हो
- गरीबों के लिए प्रभावी कानूनी सहायता प्रणाली विकसित करने में योगदान करना
- जनहित में रुचि रखने वाले वकीलों और कानून से किसी न किसी रूप में जुड़ी नयी पीढ़ी के लोगों को उचित प्रशिक्षण देना ताकि सामाजिक आंदोलनों को समझने और जरूरतमंद लोगों, समुदायों को कानूनी सहायता देने के अलावा नयी विधिक संकल्पनाएं और रणनीतियां विकसित करने में दक्षता हासिल हो सके।

एचआईवी/एड्स और कानून
(HIV/AIDS AUR QANOON, Hindi title)
©: सोसियो लीगल इन्फरमेशन सेंटर–2008
e-mail: publications@hrln.org
ISBN:818947937-7
2008
संपादन : लया मेदिनी, दीपिका जैन, कॉलिन गोन्साल्विस
अनुवाद : विनोद विप्लव, चंदन कुमार
आलेख संपादन : भुवनचंद्र खंडूरी
संपादन सहयोग : चारुचंद्र तिवारी, सिराज केसर, अनुपमा चतुर्वेदी
आवरण : संजोग शरण
लेआउट : बीरेन्द्र कुमार गुप्ता

प्रिंटर: शिवम सुन्दरम, ई–9, ग्रीन पार्क एक्सटेंशन, नई दिल्ली–110016

प्रकाशक
ह्यूमन राइट्स लॉ नेटवर्क
(सोसियो लीगल इन्फरमेशन सेंटर का एकांश)
576, मस्जिद रोड, जंगपुरा, नई दिल्ली–110014
फोन: +91–11–24378854/24379855/56
Website: www.hrln.org
E-mail: publications@hrln.org, contact@hrln.org

विषय-सूची

प्रस्तावना v

आभार ix

खंड-एक : विषय प्रवेश

अध्याय 1 : स्वस्थ रहने का अधिकार राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय दृष्टिकोण 3

खंड-दो : उपचार

अध्याय 2 : एंटीरेट्रोवायरल चिकित्सा पद्धति (थेरेपी) एवं इलाज की सुलभता 49

अध्याय 3 : पेटेंट और औषधियां 71

खंड-तीन : भेदभाव

कलंक तथा भेदभाव 83

अध्याय 4 : रोजगार संबंधी भेदभाव और कानून 89

अध्याय 5 : चिकित्सा संबंधी भेदभाव और कानून 109

अध्याय 6 : शैक्षिक भेदभाव और कानून 119

खंड-चार : नैतिकता, मानवाधिकार एवं एचआईवी/एड्स

अध्याय 7 : चिकित्सा नैतिकता – निजता, सहमति और मानवाधिकार 145

खंड-पांच : जोखिम की संभावना और अनदेखी/उपेक्षा

अध्याय 8 : महिलायें और एचआईवी 163

अध्याय 9 : बच्चे एवं एचआईवी 209

अध्याय 10 : कैदी एवं एचआईवी 229

अध्याय 11ए : व्यावसायिक यौनकर्मी 253

अध्याय 11बी : एमएसएम और एचआईवी 305

अध्याय 11सी : सुई द्वारा मादक द्रव्यों का सेवन 317

अध्याय 12 : खाद्य सुरक्षा तथा एचआईवी/एड्स 341

अध्याय 13 : शरणार्थी और एचआईवी/एड्स 363

खंड-छह : दीवानी एवं आपराधिक कानून और एचआईवी/एड्स

अध्याय 14 : जानबूझकर या असावधानीवश एचआईवी/एड्स का संचरण 381

प्रस्तावना

वालंटरी हेल्थ एसोसिएशन ऑव पंजाब (वीएचएपी) ने जब एचआईवी ग्रस्त लोगों और जिनमें सीडी–4 की संख्या 200 से भी कम हो गयी हो, उनके लिए एंटीरेट्रो वायरल (एआरवी) औषधियां उपलब्ध कराने की खातिर केन्द्र सरकार को निर्देश दिलाने के उद्देश्य से उच्चतम न्यायालय में अनुमति याचिका दाखिल की तब किसी ने कल्पना तक नहीं की थी कि इसकी ऐसी प्रतिक्रिया होगी। याचिका में दक्षिण अफ्रीका के संविधान न्यायालय और दक्षिण अफ्रीकी देशों के उच्चतम न्यायालयों के अनेक फैसलों का हवाला देते हुये बताया गया था कि विभिन्न संविधानों के विभिन्न प्रावधानों के अनुरूप गरीब लोगों को जीवन के अधिकार के तहत एचआईवी के निःशुल्क इलाज का हक है। जिस समय यह याचिका दाखिल की गयी थी, उस समय केवल तपेदिक जैसे संक्रमणों के लिए ही दवाइयां उपलब्ध कराने की भारत सरकार की नीति थी। भारत सरकार इस बात पर अड़ी हुई थी कि वह एंटीरेट्रो वायरल (एआरवी) पर धन खर्च नहीं करेगी। सरकार ने इस बीमारी के इलाज के बगैर लोगों को मौत का ग्रास बनने को स्वीकार किया हुआ था।

पर उच्चतम न्यायालय ने जब केन्द्र सरकार को हलफनामा पेश कर एआरवी उपचार के बारे में अपनी नीति बताने का निर्देश दिया तो सरकार के लिये संकट पैदा हो गया। काफी टालमटोल एवं ना–नुकुर के बाद तत्कालीन केन्द्रीय स्वास्थ्य मंत्री सुषमा स्वराज ने अचानक यह घोषणा कर दी कि केन्द्रीय नीति बदल गयी है और सरकार एआरवी औषधियां उपलब्ध कराना शुरू कर देगी। मुझे यह समझने में कोई दिक्कत नहीं हुई कि सरकार की नीति में इस बदलाव का कारण सरकार पर अपने दृष्टिकोण का खुलासा करने के लिए न्यायालय का दबाव था।

इसके बाद सरकार ने एआरवी दवाइयां उपलब्ध कराने का दिखावा किया। नीति में परिवर्तन सिर्फ कागजों पर हुआ है, यह देखकर वीएचएपी ने चंडीगढ़ में एक राष्ट्रीय सम्मेलन बुलाया जिसमें देश भर से आए एचआईवी संक्रमित लोगों ने अपनी व्यथा सुनाई। विभिन्न राज्यों से जो आंकड़े प्राप्त हुए, वे काफी निराशाजनक थे।

सरकारी आंकड़ों के अनुसार 50 लाख लोग एचआईवी से संक्रमित हैं। इन संक्रमित लोगों में से 10 प्रतिशत लोगों में सीडी–4 की संख्या 200 से कम है। इसलिए उन्हें एआरवी इलाज की जरूरत है। इस तरह भारत में ऐसे पांच लाख लोग हैं जिन्हें इस इलाज की जरूरत है। यह वास्तव में स्तब्ध करने वाली बात है कि अपने ही आंकड़ों के अनुसार केन्द्र सरकार अगस्त 2006 में केवल 32 हजार संक्रमित लोगों को ही यह इलाज मुहैया करा पा रही थी। वर्ष 2006 तक एक लाख लोगों को एआरवी इलाज मुहैया कराने के सरकारी लक्ष्य की तुलना में यह सिर्फ एक तिहाई लोगों को ही एआरवी इलाज मुहैया हो पाया था। पांच लाख लोगों का लक्ष्य वर्ष 2010 में पूरा होना है। अगर हम इसी तरह काम करते रहे तो उस समय तक दो लाख लोग

बगैर इलाज के होंगे। यह एक क्रूर स्थिति है कि अपने को आर्थिक महाशक्ति होने का दावा करने वाला देश अपने लोगों को इलाज के बगैर मरने के लिए छोड़ दे।

वीएचएपी की रिपोर्ट के अनुसार वर्ष 2006 के अंत तक पश्चिम बंगाल, मध्य प्रदेश और राजस्थान में से प्रत्येक में सिर्फ दो–दो सेंटर पूरे राज्य में एआरवी इलाज के लिये थे। पश्चिम बंगाल में 20 हजार संक्रमित लोगों में से सिर्फ एक हजार को यह इलाज मयस्सर हुआ और बड़ी संख्या में लोगों ने धीरे–धीरे इलाज छोड़ दिया। अब उनका कोई अता–पता नहीं है। मध्य प्रदेश में ढ़ाई हजार लोगों को इस दवा की जरूरत थी, जबकि सिर्फ 940 लोगों को यह इलाज मिल पाया। सबसे परेशानी की बात तो यह रही कि अप्रैल 2006 में 20 दिनों तक दवा की आपूर्ति बाधित रही जिससे अनेक लोगों की बीमारी फिर से बढ़ गयी। राजस्थान में 6300 लोगों को दवा की जरूरत थी, पर सिर्फ 700 लोगों को यह इलाज मयस्सर हुआ। यहां बीच में ही इलाज छोड़ने की दर बहुत अधिक रही, खासतौर से विधवाओं के बीच। उड़ीसा में 3961 एचआईवी संक्रमित हैं, परन्तु वहां एक भी एआरवी केन्द्र नहीं है। दिल्ली में 645 लोगों के इलाज छोड़ने की सूचना मिली, ऐसा आगे इलाज उपलब्ध नहीं होने से हुआ, जो एक गंभीर मामला है क्योंकि इससे बीमारी और बढ़ जाती है। सभी राज्यों से संक्रमित लोगों ने यह शिकायत की कि चूंकि अधिकतर संक्रमित लोग गरीब हैं; इसलिए उन्हें यह तय करना पड़ता है कि दवा खरीदें या पेट भरने के लिए खाना। लोगों को एआरवी केन्द्र पहुंचने के लिए सैकड़ों मील का सफर तय करना पड़ता है और वहां पहुंच कर उन्हें यही सुनना पड़ता है कि जांच कराने के लिए या दवा के लिए उन्हें कुछ दिन रुकना पड़ेगा। रहने की सुविधा कहीं नहीं है। यात्रा का खर्च भी वह वहन नहीं कर सकते हैं। ऐसी स्थिति में बाजार की दवा सस्ती पड़ती है। रिपोर्टों के अनुसार आधे से अधिक लोगों को बाजार से ही दवा लेनी पड़ती है इसलिए नहीं कि वे इसे खरीदने में समर्थ हैं बल्कि इसलिए कि उनके पास और कोई चारा नहीं रह जाता।

इलाज की ऐसी अव्यवस्था की आलोचना के जवाब में राष्ट्रीय एड्स नियंत्रण संगठन (नाको) ने दावा किया है कि दवा उपलब्ध है लेकिन लोग लेने नहीं आते हैं। पर वीएचएपी की रिपोर्ट साफ–साफ कहती है कि लोगों को यह मालूम तक नहीं है कि सरकारी अस्पतालों में दवाएं मुफ्त मिलती हैं। अगर सरकार टीवी, रेडियो और अखबारों में बड़े पैमाने पर प्रचारित करे तो हजारों लोग इलाज के लिए वहां पहुंच सकते हैं।

जांच करने का काम तो और भी नहीं होता। गोवा, मध्य प्रदेश, हिमाचल प्रदेश, पश्चिम बंगाल, हरियाणा और नागालैंड में राज्य भर में सीडी–4 जांचने की सिर्फ एक–एक मशीन है। गोवा में पहचान पत्र के बगैर जांच नहीं करते। मध्य प्रदेश में जांच के लिए 500 रुपये लेते हैं लेकिन साथ ही ये भी बताया जाता है कि मशीन खराब है, बेहतर होगा कि पड़ोस में प्राइवेट अस्पताल में जांच करा लें। यही स्थिति हिमाचल प्रदेश में है, जहां लोगों को खून हैदराबाद भेजने की सलाह दी जाती है; जिस पर 1,850 रुपये खर्च बैठता है, जबकि यह जांच मुफ्त होनी चाहिए। नागालैंड में मशीन सिर्फ मंगलवार और बुधवार को चलती है। देश की राजधानी में भी स्थिति निराशाजनक है। सफदरजंग अस्पताल और राष्ट्रीय सक्रांमक रोग संस्थान (एनआईसीडी) जांच के लिये पांच सौ रुपये लेते हैं। अखिल भारतीय आयुर्विज्ञान संस्थान (एम्स) में जांच के 800 रुपये लिए जाते हैं। डा. राम मनोहर लोहिया अस्पताल में जांच के लिए दो–दो महीने इंतजार करना पड़ता है। कई राज्यों में रोग प्रतिरोध क्षमता की जांच (रजिस्टेंस टेस्ट) करने की मशीन नहीं है।

सारे पैसे कहां गये? चिंताजनक रिपोर्ट यह है कि पैसा तो है पर या तो उसका उपयोग नहीं हो रहा है या फिर दुरुपयोग हो रहा है। वीएचएपी की रिपोर्ट का निष्कर्ष है कि हर जिले में सीडी–4 जांच के लिए मशीनें, परामर्शदाता और निष्क्रमण केन्द्र स्थापित होने चाहिये। उनके अनुसार इसके लिए निर्धारित समय सीमा वर्ष 2008 होनी चाहिए। केन्द्र सरकार की ओर से पांच लाख लोगों को दवा उपलब्ध कराने की निर्धारित

समय सीमा वर्ष 2010 तक न सिर्फ दो लाख संक्रमित लोगों को मरने के लिए छोड़ देता है बल्कि इस तथ्य की भी उपेक्षा करता है कि 2010 तक तीन लाख लोगों को एआरवी इलाज की जरूरत पड़ेगी।

इन सब बातों से ह्यूमन राइट्स लॉ नेटवर्क (एचआरएलएन) इस निष्कर्ष पर पहुंचा है कि सरकार के साथ निरंतर मिलकर काम करना तो जरूरी है ही लेकिन जहां सरकार उपेक्षापूर्ण रवैया अपना रही हो या ध्यान नहीं दे रही हो वहां इलाज के संवैधानिक अधिकार को न्यायपालिका के जरिए लागू कराने की जरूरत है। भारतीय संविधान दुनिया में सबसे अच्छे संविधानों में एक है। यह हमें उन अधिकारों को लागू कराने के लिए उच्च न्यायालय या उच्चतम न्यायालय में जनहित याचिका दायर करने का अवसर प्रदान करता है, जो लोग इतने गरीब हैं या निरक्षर हैं कि खुद अदालतों में नहीं जा सकते। इस तरह सरकारी अस्पतालों में भेदभाव, बच्चों के बहिष्कार, कर्मचारियों को निकालने, अनिवार्य जांच और अपर्याप्त चिकित्सा सेवा जैसी डॉक्टरी सलाह की कमी, जांच और दवाओं की व्यवस्था आदि मुद्दों पर बड़ी अदालतों में जाया जा सकता है। एचआरएलएन अपने सहयोगी विधि–वेत्ताओं के साथ यह चाहता है कि इस किताब के जरिए वकीलों, जजों, गैर सरकारी संगठनों, शिक्षाविदों और प्रेस के बीच एचआईवी संक्रमित लोगों में कानूनी अधिकारों के प्रति जागृति पैदा हो।

हम लोग सचमुच इवानगेलिस्चेर इंटविक्लुंग्स्डिएन्स्ट ईवी और स्विडिश इंटरनेशनल डेवलपमेंट कोऑपरेशन एजेंसी के आभारी हैं कि वे वर्षों से हमारा सहयोग एवं समर्थन कर रहे हैं।

कॉलिन गोंसाल्विस

नयी दिल्ली

आभार

इस पुस्तक के प्रकाशन में जे ली, रोजी लाफ, मनमीत बिन्द्रा, हेलेन निक एन री और ताशी सी. शेरपा का महत्वपूर्ण योगदान रहा है। हम उनके प्रति आभार व्यक्त करते हैं।

अपनी सलाह, अपने शोध और अपने प्रयासों से एचआईवी/एड्स और लॉ इनीशिएटिव के साथ काम कर रहे अनेक सहयोगियों ने भी इस पुस्तक को तैयार करने में सहयोग दिया है। इनमें रागिनी त्रकरू, कोमल जैसमिन सुब्बा, सोफिया कुमुकचम, निकोलस रॉबिन्सन और विक्रमादित्य राय तथा प्रशिक्षु सुनीत यादव, सुषमा राघवन, श्रुति राघवन, कोरोबी गोगोई, दीप्ति सिंह, वसुधा रेड्डी, अमरिन्दर, वृंदा आघी, अदिति दास, मैरी हेलेन और संगीता जॉन और काइजाद कस्साद शामिल हैं। इन्होंने अपनी महत्वपूर्ण सलाह, अध्ययन एवं प्रयासों से इस पुस्तक में योगदान किया है। हम सहयोग देने के लिये इन सभी के आभारी हैं। हिन्दी अनुवाद एवं संपादन में दिशा–निर्देशन के लिए सुरेश नौटियाल के आभारी हैं।

खंड-एक

विषय प्रवेश

अध्याय 1 : स्वस्थ रहने का अधिकार : राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय दृष्टिकोण

1

स्वस्थ रहने का अधिकार
राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय दृष्टिकोण

स्वास्थ्य के अधिकार की परिभाषा

परंपरागत दृष्टि से स्वास्थ्य को सार्वजनिक चिंता की बजाय निजी चिंता का विषय माना जाता रहा है। स्वास्थ्य का मतलब आमतौर पर 'बीमार नहीं होना' ही समझा जाता रहा। स्वास्थ्य संबंधी प्रावधानों से युक्त पहली बार जो कानून बना वह मॉरल अप्रेंटिस एक्ट (1802)[1] था। इसके बाद पब्लिक हेल्थ एक्ट (1848)[2] बना। यह कानून ब्रिटेन में गरीब मजदूरों की स्थिति से उत्पन्न सामाजिक दबाव को दूर करने के लिए बनाया गया था। पहली बार 1843 में पारित मेक्सिको के संविधान में जन–स्वास्थ्य की रक्षा के लिए राज्य की जिम्मेदारी का उल्लेख मिलता है। मेक्सिको पहला देश था, जिसने आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक अधिकारों की गारंटी को (1917 के अपने संविधान में) औपचारिक रूप से शामिल कर लिया।यद्यपि स्वास्थ्य के अधिकार को इसमें विशेष रूप से वर्णन नहीं किया गया।[3]

आधुनिक स्वास्थ्य की अवधारणा दो संबद्ध पर एक–दूसरे से अलग दो विषयों को मिला कर बनती है। वे हैं– औषध और जन–स्वास्थ्य। औषध जहां व्यक्ति के स्वास्थ्य पर केन्द्रित होता है, वहीं जन–स्वास्थ्य पूरी जनसंख्या के स्वास्थ्य पर।[4] स्वास्थ्य की व्याख्या एक सामाजिक मुद्दे के रूप में करने की प्रक्रिया ने ही 1946 में विश्व स्वास्थ्य संगठन (डब्ल्यूएचओ) को जन्म दिया। विश्व स्वास्थ्य संगठन की स्थापना के साथ ही पहली बार अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर स्वास्थ्य के अधिकार को स्वीकृति मिली। डब्ल्यूएचओ ने स्वास्थ्य की परिभाषा इस प्रकार की है "शारीरिक, मानसिक और सामाजिक दृष्टि से पूरी तरह स्वस्थ रहने की स्थिति, सिर्फ बीमारी और दुर्बलता का होना नहीं।"[5] स्वास्थ्य की आधुनिक परिभाषा में सिर्फ स्वास्थ्य की देखरेख मात्र नहीं रह गयी है, इसमें सामाजिक पक्ष भी शामिल हो गया है तथा व्यक्ति और जनसंख्या के स्वास्थ्य का संदर्भ भी।

---

1 औद्योगिकीकरण के आरंभ से ही, गरीबों और बेसहारा बच्चों को मिलों में प्रशिक्षु का कार्य देना, मिल मालिकों के लिए आम बात हो गयी थी। यह कानून मिलों की कार्यदशा सुधारने की दिशा में पहली कोशिश थी। देखें : सर्किल ऑव राइट्स : इकोनॉमिक, सोशल एंड कल्चरल राइट्स : अ ट्रेनिंग रिसोर्स : द राइट्स टु हेल्थ; मोड्यूल 14

2 1848 के कानून ने (अपनी तरह के पहले) केन्द्रीय स्वास्थ्य बोर्ड को सड़कों की सफाई, कूड़ा उठाने, जल आपूर्ति और नालों की सफाई का अधिकार दिया।

3 सर्किल ऑव राइट्स : इकोनॉमिक, सोशल एंड कल्चरल राइट्स : अ ट्रेनिंग रिसोर्स : द राइट टु हेल्थ, माड्यूल 14

4 हेल्थ एंड ह्यूमन राइट्स : ऐन इंटरनेशनल जर्नल वॉल्यूम–1, नंबर–1, वर्ष 1994

5 विश्व स्वास्थ्य संगठन के संविधान की प्रस्तावना, जिसे न्यूयार्क में 19–22 जून, 1946 को आयोजित अंतर्राष्ट्रीय स्वास्थ्य सम्मेलन में पारित किया गया। इस पर 61 देशों के प्रतिनिधियों ने 22 जुलाई, 1946 को हस्ताक्षर किए और यह 7 अप्रैल, 1948 से लागू हो गया। (विश्व स्वास्थ्य संगठन का अधिकारिक रिकार्ड, नंबर–2, पृष्ठ–100)

डब्ल्यूएचओ का संविधान यह सुनिश्चित करता है कि "नस्ल, धर्म, राजनीतिक विश्वास और आर्थिक या सामाजिक स्थिति से परे हर व्यक्ति का यह एक मौलिक अधिकार है कि वह स्वास्थ्य के यथासंभव सर्वोच्च स्तर का आनंद उठाये।"

सिर्फ एक नैतिक दावे के रूप में नहीं बल्कि एक मानवाधिकार के रूप में स्वास्थ्य की अवधारणा से यह तय हो जाता है कि इस अधिकार का सम्मान करना, इसकी रक्षा करना और इसे प्रोत्साहित करना राज्य का अनिवार्य दायित्व है। इस बात को लेकर हालांकि महत्वपूर्ण मतभेद बना हुआ है कि क्या स्वास्थ्य एक सार्थक, निर्धारित, व्यावहारिक और लागू हो सकने वाला अधिकार है या फिर मात्र प्रेरणाप्रद।[6] उदाहरण के लिए डब्ल्यूएचओ की परिभाषा वास्तव में "पूरी तरह शारीरिक, मानसिक और सामाजिक रूप से स्वस्थ होने की स्थिति" है। पर विद्वानों और विशेषज्ञों की नजर में अगर इस परिभाषा को संपूर्ण मानक के तौर पर उचित मान भी लिया जाए तो इसे लागू और हासिल करना कठिन हो जायेगा।[7]

प्रो. लारेन्स ओ. गोस्टिन और जिटा लेजारिनी ने इंस्टीट्यूट ऑव मेडिसिन की परिभाषा[8] से आगे बढ़कर जन–स्वास्थ्य की एक विचारपूर्ण परिभाषा प्रस्तुत की है : "लोगों के स्वास्थ्य के लिए उपलब्ध संसाधनों की सीमाओं के अंतर्गत राज्य की ओर से एक दायित्व के रूप में माकूल परिस्थिति सुनिश्चित करना।[9]

मूल रूप से, स्वास्थ्य के अधिकार का अब अपनी आबादी के स्वास्थ्य के संरक्षण और प्रोत्साहन के लिए राज्यों का अंतर्राष्ट्रीय वैधानिक दायित्व है। स्वास्थ्य के अधिकार के अंतर्राष्ट्रीय स्रोतों का अर्थ समाज में स्वास्थ्य की स्थिति वैचारिक स्तर पर निर्धारित करना है। स्वास्थ्य को एक आदर्श मानवीय स्थिति के रूप में परिभाषित किया गया है और एक महत्वपूर्ण सामाजिक तथा राजनीतिक अच्छाई के रूप में भी परिभाषित किया गया है। औषधीय चिकित्सा, स्वास्थ्य रक्षा के तात्कालिक उपाय और जन–स्वास्थ्य राष्ट्रीय चिंता के विषय हैं।[10]

मानवाधिकार और स्वास्थ्य के बीच संबंध

मानवाधिकार उन सार्वभौमिक अधिकारों का समुच्चय है जो व्यक्ति को लिंग भेद, राष्ट्रीयता, धर्म, संस्कृति या अन्य प्रकार के सामाजिक पद–प्रतिष्ठा के बावजूद प्राप्त है, जो मनुष्य को विरासत में प्राप्त है और जो अंतर्राष्ट्रीय कानून द्वारा प्रदत्त और संरक्षित है। मानवाधिकार और जनस्वास्थ्य एक दूसरे के पूरक दृष्टिकोण हैं। ये दोनों विचारणीय क्षेत्र – मानवाधिकार और जन–स्वास्थ्य परस्पर अलग–अलग नहीं हैं बल्कि अक्सर ऐसे कार्यक्रम जो मानवाधिकार के लिए होते हैं स्वास्थ्य से भी जुड़े होते हैं और ऐसे कार्यक्रम जो मानवाधिकारों को बाधित करते हैं जन–स्वास्थ्य के उद्देश्यों के भी खिलाफ होते हैं। जन–स्वास्थ्य के कार्यक्रम मानवाधिकार पर सकारात्मक या नकारात्मक प्रभाव भी डाल सकते हैं और संघर्ष तथा शांति के समय मानवाधिकार के उल्लंघन स्वास्थ्य पर असर डाल सकते हैं।

---

6 लारेंस ओ. गोस्टिन, जिटा लेजारिनी; ह्यूमन राइट्स एंड पब्लिक हेल्थ इन द एड्स पैंडेमिक; ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस 1997 ; पृष्ठ 28–29

7 वही

8 हम सामाजिक स्तर पर लोगों के स्वास्थ्य के लिए जो सामूहिक उपक्रम करते हैं वही जन स्वास्थ्य है। इसके लिए जरूरी है कि लोगों के स्वास्थ्य के नये–पुराने खतरों का सफलतापूर्वक समाधान किया जाए। इन खतरों में तात्कालिक संकट, जैसे एड्स का खतरा; स्थायी समस्याएं, जैसे– चोट और पुरानी बीमारियां और बढ़ती चुनौतियां, जैसे उम्रदराज लोगों की बढ़ती आबादी तथा आधुनिक अर्थव्यवस्था के उत्पादनों से वायु, जल, मिट्टी और भोजन के जरिए फैलते जहरीले रसायन। इन समस्याओं तथा अन्य समस्याओं को देखते हुए यह जरूरी हो जाता है कि देश के स्वास्थ्य की रक्षा के लिए सार्वजनिक क्षेत्र के नेतृत्व में प्रभावी, सुनियोजित और निरंतर उपाय किये जाएं।

9 लारेंस ओ. गोस्टिन, जिटा लेजारिनी : नोट 6

10 शीतल बी. शाह ; इल्युमिनेटिंग द पासिबल इन द डेवलपिंग वर्ल्ड : गारंटिंग द ह्यूमन राइट टू हेल्थ इन इंडिया : वंडरबिल्ट जर्नल ऑव ट्रांसनेशनल लॉ; मार्च 1999

इस तरह एचआईवी/एड्स के प्रति मानवाधिकार दृष्टिकोण मानवाधिकार संरक्षण के संदर्भ में राज्य के दायित्व पर आधारित है। एचआईवी/एड्स मानवाधिकार की अनिवार्यता को प्रदर्शित करता है क्योंकि प्रभावी कदम उठाने में आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक अधिकारों के साथ ही नागरिक तथा राजनीतिक अधिकारों को लागू किया जाना जरूरी है। इसके अलावा एचआईवी/एड्स के प्रति अधिकारों पर आधारित दृष्टिकोण मानवीय गरिमा और समानता की अवधारणा में भी समाहित होता है, जो सभी संस्कृतियों और परंपराओं में पायी जाती है।

एचआईवी/एड्स जैसी महामारी के खिलाफ काम करने के वर्षों के अनुभव से यह स्पष्ट हो गया है कि एचआईवी को फैलने से रोकने और उसका प्रभाव कम करने के लिए मानवाधिकार का संरक्षण और प्रोत्साहन अनिवार्य है। मानवाधिकार का संरक्षण और प्रोत्साहन एचआईवी/एड्स प्रभावित व्यक्तियों की गरिमा के संरक्षण और इनके संक्रमण को कम करने संबंधी जन–स्वास्थ्य के लक्ष्यों को पूरा करने के लिए भी जरूरी है। यह एचआईवी/एड्स प्रभावित लोगों पर पड़ रहे प्रतिकूल प्रभाव को कम करने के लिए तथा इनके खिलाफ लड़ रहे व्यक्तियों और समुदायों को अधिकार संपन्न बनाने के लिए भी जरूरी है।

इस तरह, आमतौर पर, सभी लोगों की भलाई और अधिकारों के संरक्षण और प्रोत्साहन के लिए मानवाधिकार और जन–स्वास्थ्य में लक्ष्य एक से ही होते हैं। मानवाधिकार की दृष्टि से, हर किसी के अधिकार और गरिमा की रक्षा करके ही इसे पूरी तरह लागू किया जा सकता है; विशेष रूप से उन पर ध्यान देते हुए जिनसे भेदभाव किया जाता है या जिनके अधिकारों का किसी न किसी तरह से हनन किया जाता है। इसी तरह जन–स्वास्थ्य के लक्ष्य तभी हासिल किये जा सकते हैं जब शारीरिक, मानसिक और सामाजिक दृष्टि से कमजोर लोगों पर विशेष बल देते हुए सबके लिए स्वास्थ्य को प्रोत्साहित किया जाए। इस तरह स्वास्थ्य और मानवाधिकार एक–दूसरे की सहायता करते हैं और किसी भी संदर्भ में परस्पर एक–दूसरे का ही काम करते हैं। एचआईवी/एड्स के संदर्भ में भी ये एक दूसरे के पूरक हैं और एक–दूसरे को मजबूत बनाते हैं।

मानवाधिकार और जन–स्वास्थ्य की परस्पर निर्भरता का पता उन अध्ययनों से चलता है जिनका निष्कर्ष है कि एचआईवी की रोकथाम और देखभाल के कार्यक्रमों को बलात या दंडात्मक तरीके से चलाया जाता है। तब ऐसी स्थिति में इनमें लोगों की भागीदारी कम हो जाती है और संक्रमण के खतरे में पड़े लोग कार्यक्रम से अलग होते चले जाते हैं।[11] विशेष तौर पर, लोग एचआईवी संबंधित सलाह लेना नहीं चाहते, जांच, इलाज और सहायता हासिल नहीं करना चाहते; अगर इनसे उनके प्रति भेदभाव बढ़ता हो, अपने में विश्वास घटता हो और दूसरे नकारात्मक असर पैदा होते हों। इससे यह स्पष्ट होता है कि जन–स्वास्थ्य के कठोर उपाय उन लोगों को ऐसे कार्यक्रमों से दूर कर देता है जिन्हें इनकी सबसे ज्यादा जरूरत है। इस प्रकार सिर्फ व्यवहार में परिवर्तन लाकर देखभाल करके और स्वास्थ्य संबंधी सहायता देकर जन–स्वास्थ्य हासिल करने के लक्ष्य भी पूरे नहीं हो सकते।

मानवाधिकार के संरक्षण और प्रभावी एचआईवी/एड्स कार्यक्रमों के बीच संबंध का एक पक्ष इस तथ्य से भी स्पष्ट होता है कि कुछ आबादियों में एचआईवी/एड्स होने और फैलने की घटना आनुपातिक रूप से बहुत ज्यादा है। इस महामारी की प्रकृति और हर देश की कानूनी, सामाजिक और आर्थिक स्थिति को देखते हुए जो समूह ज्यादा पीड़ित हैं उनमें महिलाएं, बच्चे, गरीबी में रहने वाले, अल्पसंख्यक, मूल निवासी, विस्थापित, शरणार्थी, आंतरिक रूप से विस्थापित लोग, अपंग, कैदी, यौनकर्मी, समलैंगिक, सुई से नशीले पदार्थ लेने वाले शामिल हैं। कहा जा सकता है कि इनमें वे लोग हैं जिन्हें मानवाधिकार संरक्षण एवं भेदभाव से संरक्षण प्राप्त नहीं है अथवा जो अपनी कानूनी स्थिति के कारण अलग–थलग पड़ गये हैं। मानवाधिकार

11 जे. डवेर, "लेजिसलेटिंग एड्स अवे : द लिमिटेड रोल ऑव लीगल परसुएशन इन मिनिमाइजिंग द स्प्रेड ऑव एचआईवी", इन नाइन्थ जर्नल ऑव कंटेम्पररी हेल्थ लॉ एंड पॉलिसी 167 (1993)

संरक्षण नहीं होने के कारण इन समूहों के एचआईवी/एड्स संक्रमित हो जाने पर इसका सामना करने की उनकी क्षमता कम होती चली जाती है।

इस संदर्भ में अब एक अंतर्राष्ट्रीय सहमति बन रही है कि एचआईवी/एड्स पीड़ितों को शामिल करते हुए व्यापक आधार पर कार्यक्रम बनाया जाना चाहिए तभी वह सफल हो सकेगा। इस व्यापक सहमति का एक पक्ष मानवाधिकारों के संरक्षण की दृष्टि से माकूल कानूनी और नैतिक माहौल बनाना है। यह लक्ष्य सुनिश्चित करने के लिए जरूरी कदम उठाना होगा कि सरकारें, समुदाय और व्यक्ति मानवाधिकार और मानवीय गरिमा का सम्मान करें तथा सहिष्णुता, संवेदना और एकजुटता के साथ काम करें। इस महामारी से एक जरूरी बात यह भी सीखने को मिली है कि अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर स्वीकृत मानवाधिकारों के मानक ही नीति–निर्माताओं के लिए एचआईवी संबंधी नीति तय करने और राष्ट्रीय तथा स्थानीय कार्यक्रम तैयार करने में आधार होने चाहिए।

अंतर्राष्ट्रीय कानून में स्वास्थ्य का अधिकार

एचआईवी जैसी महामारी और अन्य स्वास्थ्य संबंधी चुनौतियों का सामना करने में मानवाधिकारों का भारी महत्व है। इनमें जन–स्वास्थ्य के लिए व्यवस्थागत उपाय करना और जन–स्वास्थ्य के क्षेत्र में अनुसंधान संबंधी कमियों को उजागर करना शामिल है।[12] मानवीय गरिमा और समानता के सिद्धांत के आधार पर बने अंतर्राष्ट्रीय मानवाधिकार कानून में एचआईवी/एड्स और उनसे संबंधित अधिकार भी शामिल हैं। अनेक अंतर्राष्ट्रीय समझौते, संधियां और दस्तावेज मौजूद हैं जो पॉजिटिव लोगों के स्वास्थ्य संबंधी अधिकारों की रक्षा बतौर मानवाधिकार करते हैं और इन अधिकारों को लागू करने की व्यवस्था करते हैं।

अंतर्राष्ट्रीय मानवाधिकार कानून द्वितीय विश्व युद्ध की त्रासदी और 1945 में संयुक्त राष्ट्र की स्थापना के संदर्भ में बने थे। संयुक्त राष्ट्र के घोषणापत्र को स्वीकार करते हुए इसके सदस्यों ने यह माना कि उनके आंतरिक मामलों में हस्तक्षेप नहीं करने के सिद्धांत को अंतर्राष्ट्रीय शांति और सुरक्षा के समक्ष खतरा आने पर छोड़ा जा सकता है।[13] घोषणापत्र के अनुच्छेद–55 में भी संयुक्त राष्ट्र को अंतर्राष्ट्रीय स्वास्थ्य संबंधी समस्याओं के निराकरण के लिए अधिकृत किया गया है। कई अंतर्राष्ट्रीय कानूनों में स्वास्थ्य का अधिकार शामिल है।

एचआईवी/एड्स के लिए प्रभावी सरकारी उपाय करने के संबंध में जो महत्वपूर्ण मानवाधिकार सिद्धांत हैं; वे मौजूदा अंतर्राष्ट्रीय व्यवस्थाओं में शामिल हैं, जैसे– मानवाधिकार का सार्वजनिक घोषणापत्र, आर्थिक–सामाजिक, सांस्कृतिक, नागरिक और राजनीतिक अधिकारों पर अंतर्राष्ट्रीय समझौता, हर तरह के नस्लभेद के उन्मूलन पर अंतर्राष्ट्रीय समझौता, महिलाओं के प्रति हर तरह के भेदभाव को समाप्त करने के लिए अंतर्राष्ट्रीय समझौता, यातना अथवा किसी प्रकार के क्रूर, अमानवीय, अपमानजनक व्यवहार या दंड के खिलाफ समझौता तथा बच्चों के अधिकारों के संबंध में समझौता। क्षेत्रीय व्यवस्थाएं जैसे– मानवाधिकार पर अमरीकी समझौता, मूलभूत अधिकारों और मानवाधिकारों के संरक्षण के लिए यूरोपीय समझौता तथा जन एवं मानवाधिकारों पर अफ्रीकी समझौता, ये सभी एचआईवी/एड्स के प्रति सरकारों को उत्तरदायी बनाती हैं। इसके अलावा अंतर्राष्ट्रीय श्रम संगठन के कई सम्मेलनों और सिफारिशों की भी एचआईवी/एड्स के संदर्भ में प्रासंगिकता है, जैसे– रोजगार और व्यवसाय में भेदभाव, नौकरी से निकाले जाने, कर्मचारियों की निजता के संरक्षण, कार्यस्थल पर उनकी सुरक्षा और स्वास्थ्य का संरक्षण।

---

12 ट्वेंटी–फाइव क्वेश्चन्स एंड आन्सर्स ऑन हेल्थ एंड ह्यूमन राइट्स, जेनेवा : वर्ल्ड हेल्थ आर्गनाइजेशन ; 2002

13 चार्टर ऑव द यूनाइटेड नेशन्स (VI), न्यूयार्क : यूनाइटेड नेशन्स; 1994; पृष्ठ 22–8

यूडीएचआर

द यूनिवर्सल डिक्लरेशन ऑन ह्यूमन राइट्स (यूडीएचआर) यानी मानवाधिकारों के सार्वभौम घोषणापत्र में बताया गया है कि अंतर्राष्ट्रीय समुदाय के लिये मानवाधिकार का क्या अर्थ है और इसने मानवाधिकार के क्षेत्र में एक के बाद एक कानूनी उपाय करने के लिए प्रेरित किया है। घोषणापत्र में तीस अनुच्छेद इन सिद्धांतों पर आधारित हैं कि मनुष्य सम्पूर्ण गरिमा और अधिकारों के साथ स्वतंत्र और एक समान पैदा हुआ है।[14]

यूडीएचआर का अनुच्छेद–25 स्वास्थ्य के अधिकार को इस तरह मान्यता देता है–

"हर किसी को एक ऐसे जीवन स्तर का हक हासिल है जो उसके और उसके परिवार के स्वास्थ्य और समृद्धि के लिए पर्याप्त है जिससे उसकी भोजन, वस्त्र, आवास, चिकित्सा तथा अन्य सामाजिक जरूरतें पूरी हो सकें तथा बेरोजगारी, बीमारी, अपंगता, विधवापन, बुढ़ापा तथा अन्य कठिनाइयों के समय, जो उसके नियंत्रण से बाहर हों, में सामाजिक सुरक्षा मिल सके।"

इस घोषणापत्र से इसके प्रस्तावना की अधिकांश बातें पूरी हो जाती हैं और मानवाधिकार के 'सामान्य स्तर' का पता चल जाता है। हालांकि इसे सदस्य देशों पर कानूनी रूप से लागू नहीं किया गया था लेकिन इसके मूल प्रावधानों को इतनी बार लागू और स्वीकृत किया गया है कि यह परंपरागत अंतर्राष्ट्रीय कानून का दर्जा हासिल कर चुका है।[15]

आईसीईएससीआर

अंतर्राष्ट्रीय आर्थिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक अधिकार कोवेनेंट (आईसीईएससीआर) स्वास्थ्य के अधिकार के मामले में सर्वविदित अंतर्राष्ट्रीय कानूनी हथियार है। इसके तहत सरकारी पक्ष मानवाधिकार को स्वास्थ्य के उच्चतम स्तर पर स्वीकार करते हैं और इन उपायों के जरिए इसे हासिल करने का प्रयास करते हैं : (1) मृत शिशु के जन्म दर और बाल मृत्यु की दर कम करके तथा बाल विकास के जरिए; (2) पर्यावरणीय और औद्योगिक सुधार के जरिये; (3) महामारी तथा अन्य बीमारियों से बचाव, चिकित्सा और नियंत्रण के उपाय करके; तथा (4) सबको ध्यान में रखते हुए चिकित्सा सेवा सुनिश्चित करके।[16]

आईसीईएससीआर का अनुच्छेद–12 यह सुनिश्चित करता है कि "सबको उच्चतम स्तर का शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्य हासिल करने का अधिकार है" और निर्देश देता है कि इन अधिकारों को क्रमशः लागू किया जाए। अनुच्छेद–2 में निर्दिष्ट किया गया है, "हर राज्य को खुद या अंतर्राष्ट्रीय सहयोग और सहायता से अपने उपलब्ध संसाधनों का अधिकतम उपयोग करते हुए इस समझौते में शामिल सभी अधिकारों को क्रमशः लागू करने का यथासंभव प्रयास करना चाहिए, खासतौर से कानूनी उपाय करके।"

सभी मानवाधिकारों की तरह स्वास्थ्य का अधिकार भी राज्य प्रशासनों के लिए तीन तरह से कर्तव्य अधिकारों का सम्मान करने, संरक्षण करने और इन्हें लागू करने का निर्धारित करता है। क्रियान्वयन में कर्तव्य के साथ इन अधिकारों को स्वीकार करना, इन्हें प्रदान करना और प्रोत्साहित करना भी जुड़ा हुआ है। स्वास्थ्य के अधिकारों का सम्मान करने का कर्तव्य पूरा करने के लिए राज्यों को स्वास्थ्य के अधिकार में प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से हस्तक्षेप करने से बचना होगा। इन अधिकारों के संरक्षण के लिए राज्यों को ऐसे उपाय करने होंगे, कि कोई तीसरा पक्ष अनुच्छेद–12 में प्रदत्त गारंटियों में हस्तक्षेप नहीं कर सके। अंततः इन्हें लागू करने

14 लारेंस ओ. गोस्टिन, जिटा लेजारिनी; ह्यूमन राइट्स एंड पब्लिक हेल्थ इन द एड्स पैंडेमिक ; ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस 1997 ; पृष्ठ 3

15 वही

16 देखें – आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक अधिकारों (आईसीईएससीआर) पर अंतर्राष्ट्रीय समझौता अनुच्छेद–12, 993 यूएनटीएस 3 (1976)

के लिए राज्यों को उपयुक्त कानूनी, प्रशासनिक, बजटीय, न्यायिक, प्रोत्साहनपरक तथा अन्य उपाय करने होंगे ताकि इन्हें पूरी तरह लागू किया जा सके।[17]

आईसीईएससीआर में शामिल हर अधिकार के लिए राज्य को अपने अधिकतम उपलब्ध संसाधनों के अनुरूप उपाय करने होंगे, ताकि उन्हें क्रमशः पूरी तरह लागू किया जा सके। इन अधिकारों की खुली प्रकृति, लचीलापन और राज्यों पर इन्हें लागू करने की जिम्मेदारी छोड़ देने के कारण अंतर्राष्ट्रीय कानूनों के तहत इन्हें परिभाषित करना कठिन हो जाता है। आईसीईएससीआर के तहत निगरानी की कमजोर व्यवस्था के कारण स्वास्थ्य के अधिकार की ही तरह सामाजिक, आर्थिक और सांस्कृतिक अधिकारों को स्पष्ट करने के प्रयास को महत्व नहीं दिया जाता है। कमजोर व्यवस्था में यह भी शामिल है कि राज्य खुद रिपोर्ट करेंगे। इन रिपोर्टों में जो कुछ लिखा जाता है उसकी आलोचना या निंदा करने का अधिकार भी आईसीईएससीआर ने ईसीओएसओसी को पूरी तरह नहीं दिया है।[18]

मास्ट्रिच दिशानिर्देशों[19] के साथ लिम्बर्ग सिद्धांत[20] उन मानकों में शामिल हैं, जिनके आधार पर आईसीईएससीआर की व्याख्या की जा सकती है और इनका उपयोग स्वास्थ्य के अधिकार की व्याख्या करने के लिए किया गया है। इनसे आईसीईएससीआर में शामिल अधिकारों को क्रमशः लागू करने के लिए किए गए उपायों और राज्यों द्वारा की गयी कार्रवाई पर विचार करने की दृष्टि हासिल होती है।[21]

लिम्बर्ग सिद्धांत के पैराग्राफ[22] में कहा गया है कि राज्यों को समझौते के अनुरूप अपने दायित्वों को पूरा करने के लिए तत्काल उपाय करना चाहिए। इसके अलावा, इस सिद्धांत के अनुसार "क्रमशः लागू करने" का दायित्व स्वतंत्र रूप से संसाधन बढ़ाने में निहित है। इसमें उपलब्ध संसाधनों का प्रभावी उपयोग करने की व्यवस्था है। इस तरह हस्ताक्षर करने वाले सभी राज्य न सिर्फ अपने सभी नागरिकों के लिए स्वास्थ्य सेवा की व्यवस्था करेंगे बल्कि संसाधनों की कमी होने पर भी तत्काल इस दिशा में सक्रिय होंगे।[23] लिम्बर्ग सिद्धांतों के प्रभाव को राज्यों ने इस बहाने कम करने की कोशिश की है कि संसाधनों की कमी है ताकि आईसीईएससीआर के अनुरूप काम नहीं करें। दिशानिर्देश यह है कि राज्य समझौते के अनुच्छेद–2 के तहत "क्रमशः लागू करने" के प्रावधान को समझौता लागू नहीं करने का बहाना नहीं बना सकते।[24] मास्ट्रिच दिशानिर्देश संख्या–6 इस बात की पुष्टि करता है कि जरूरतमंद लोगों को प्राथमिक स्वास्थ्य सेवा उपलब्ध कराने में राज्यों की असफलता समझौता लागू करने के दायित्व का उल्लंघन माना जाएगा। अतः अगर कोई राज्य अपने नागरिकों की सामान्य स्वास्थ्य सेवा बेहतर बनाने के लिए नए–नए उपाय नहीं करता है या

17 संयुक्त राष्ट्र आर्थिक एवं सामाजिक परिषद की आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक अधिकारों पर गठित समिति (सीईएससीआर)। द राइट टु द हाइएस्ट अटेनेबल स्टैंडर्ड ऑव हेल्थ, पैरा 33, यूएन दस्तावेज संख्या ई/सी. 12/2000/4, सीईसीएसआर जनरल कमेंट 14 (2000) (जनरल कमेंट 14)

18 मैरी ओन्स टोरेस, पब्लिक हेल्थ एंड इंटरनेशनल लॉ, द ह्यूमन राइट्स टु हेल्थ, नेशनल कोर्ट्स एंड एक्सेस टु एचआईवी/एड्स ट्रीटमेंटः वेनेजुएला पर एक केस स्टडी, शिकागो जर्नल ऑव इंटरनेशनल लॉ, स्प्रिंग 2002.

19 द. मास्ट्रिच गाइडलाइन्स ऑन वायोलेशन्स ऑव इकोनॉमिक सोशल एंड कल्चरल राइट्स, जनवरी 22–26 1997, http://www1.umn.edu/humanrts'instree/Maastrichtguidelines.html

20 आईसीईएससीआर के प्रति राज्यों की नीतियों की प्रकृति और संभावना के मद्देनजर अंतर्राष्ट्रीय कानून की विशेषज्ञों के एक समूह ने 1986 में लिम्बर्ग सिद्धांत विकसित किया था।

21 साउथ अफ्रीकाज राइट टु हेल्थ केयर : इंटरनेशनल एंड कंस्टीट्यूशनल ड्यूटीज इन रिलेशन टु द एचआईवी/एड्स एपिडेमिक; ह्यूमन राइट्स ब्रीफ; 38 से 67 दस्तावेज; रोजर फिलिप्स; 2004

22 "इन अधिकारों को क्रमशः पूरी तरह लागू करने का दायित्व पूरा करने के लिए जरूरी है कि राज्य यथासंभव तेजी से इन अधिकारों को लागू करें।"

23 साउथ अफ्रीकाज राइट टु हेल्थ केयर : इंटरनेशनल एंड कंस्टीट्यूशनल ड्यूटीज इन रिलेशन टु द एचआईवी/एड्स एपिडेमिक; ह्यूमन राइट्स ब्रीफ; 38 से 67 दस्तावेज; रोजर फिलिप्स; 2004

24 वही

स्वास्थ्य संबंधी प्रमुख समस्याओं का प्रभावी तरीके से निराकरण नहीं करता है तो वह आईसीईएससीआर के प्रति अपने दायित्वों का पालन नहीं करता है।

ईसीएस पर गठित समिति ने वर्ष 2000 में 'स्वास्थ्य' शब्द का अर्थ निर्धारित करते हुए कुछ महत्वपूर्ण टिप्पणियां कीं। उसने कहा कि स्वास्थ्य के अधिकार को स्वस्थ रहने का अधिकार नहीं समझना चाहिए। अनेक पहलू हैं जिन्हें महज राज्य और व्यक्ति के संबंधों के आधार पर नहीं समझा जा सकता। खासतौर पर अच्छा स्वास्थ्य कोई राज्य सुनिश्चित नहीं कर सकता और न ही राज्य मनुष्य के खराब स्वास्थ्य में हर संभावित कारण से संरक्षण प्रदान कर सकता है। व्यक्ति के स्वास्थ्य में जीन संबंधी कारक, व्यक्तिगत कमजोरी और अस्वस्थ या खतरनाक जीवन शैली की भी भूमिका होती है।[25] अनुच्छेद 12.1 में परिभाषित किया गया है कि राज्य यह सुनिश्चित करे कि उसे अपने उपलब्ध संसाधनों में से अपने नागरिकों को बेहतर स्वास्थ्य सुविधाएं उपलब्ध कराये। जिसमें उसके जीने और सामाजिक–आर्थिक अधिकार सुरक्षित रहे। राज्य से बहुत सारी अपेक्षाएं होती है लेकिन यह नहीं माना जा सकता है कि राज्य और व्यक्ति के संबंधों के आधार पर व्यक्ति को खराब स्वास्थ्य का हरसंभव संरक्षण प्राप्त हो सके। आनुवंशिकी कारण, व्यक्तिगत कमजोरी और अनियमित दिनचर्या भी खराब स्वास्थ्य में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। अर्थात् स्वास्थ्य के अधिकार को अनेक प्रकार की सुविधाओं, सामानों, सेवाओं और स्थितियों के उपयोग के आधार पर समझा जाना चाहिए जो स्वास्थ्य में उच्चतम मानक को हासिल करने के लिए जरूरी है।[26]

वर्ष 1966 में दो अंतर्राष्ट्रीय समझौते स्वीकार करने के बाद विश्व स्वास्थ्य की स्थिति में नाटकीय परिवर्तन आया, स्वास्थ्य की समझ में मूलभूत परिवर्तन नजर आया और उसका दायरा भी बढ़ गया। स्वास्थ्य के अनेक कारकों पर ध्यान दिया जा रहा है जैसे संसाधनों का वितरण और लिंग–भेद। स्वास्थ्य की व्यापक परिभाषा हिंसा और सशस्त्र संघर्ष जैसी सामाजिक चिंताओं पर भी ध्यान देती है। इसके अलावा अतीत में अज्ञात बीमारियों जैसे एचआईवी/एड्स तथा अन्य व्यापक बीमारियां जैसे– कैंसर तथा जनसंख्या में वृद्धि आदि ने स्वास्थ्य के अधिकार को लागू करने में और अधिक बाधाएं खड़ी कर दी हैं। अनुच्छेद–12 की व्याख्या करने में इन सभी पर ध्यान देना होगा।[27]

समिति स्वास्थ्य के अधिकार की व्याख्या, जैसा कि अनुच्छेद–12.1 में परिभाषित किया गया है, समय पर पर्याप्त स्वास्थ्य सेवा के रूप में ही नहीं, बल्कि स्वास्थ्य के अन्य कारकों की उपलब्धता के रूप में भी जैसे– स्वच्छ पेय जल, पर्याप्त मात्रा में सुरक्षित भोजन की आपूर्ति, पोषक तत्वों, आवास, स्वस्थ व्यावसायिक और पर्यावरणीय स्थिति, स्वास्थ्य संबंधी शिक्षा और सूचना जिसमें यौन और प्रजनन संबंधी शिक्षा शामिल हो आदि की उपलब्धता के रूप में एक संपूर्ण अधिकार के रूप में करती है। इसका एक और महत्वपूर्ण पहलू सामुदायिक, राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय स्तरों पर सभी स्वास्थ्य संबंधी फैसलों में जनता की हिस्सेदारी का भी है।[28]

अपने सभी रूपों में और सभी स्तरों पर स्वास्थ्य के अधिकार में निम्नलिखित आपस में जुड़े अनिवार्य तत्व शामिल हैं जो संबद्ध राज्य में व्याप्त स्थिति पर निर्भर है।[29]

(ए) उपलब्धता : राज्यों में कारगर जन स्वास्थ्य और स्वास्थ्य सेवा की सुविधाएं पर्याप्त रूप में उपलब्ध होनी चाहिए। सुविधाओं (सेवाओं और सामान) की पर्याप्त मात्रा विभिन्न कारकों पर निर्भर होगी, जिनमें

25 द राइट टु द हाएस्ट अटेनेबल स्टैंडर्ड ऑव हेल्थ : 11/08/2000. ई/सी. 12/2000 /4 (आम टिप्पणियां)
26 वही
27 वही
28 वही
29 वही

राज्य के विकास का स्तर भी शामिल है। इसमें स्वास्थ्य का आधार सुनिश्चित करना भी शामिल है जैसे– स्वच्छ और सुरक्षित पेयजल, पर्याप्त सफाई, चिकित्सालय की इमारतें, प्रशिक्षित चिकित्सक और चिकित्साकर्मी जिन्हें अच्छा वेतन प्राप्त हो और जरूरी दवायें जिनकी सिफारिश डब्ल्यूएचओ एक्शन प्रोग्राम ऑन इसेंशियल ड्रग्स ने की है।

(बी) पहुंच : स्वास्थ्य सुविधाएं (सामान और सेवाएं) बिना किसी भेदभाव के और राज्य के कार्यक्षेत्र में सबकी पहुंच में होनी चाहिए। पहुंच के एक–दूसरे से मिलते–जुलते चार पहलू हैं :

भेदभाव रहित : स्वास्थ्य सुविधाएं (सामान और सेवाएं) सबकी पहुंच में होनी चाहिए, खासतौर पर जिन्हें सबसे ज्यादा जरूरत है या जो आबादी का गरीब हिस्सा है उनकी पहुंच में। कानून में भी और वास्तव में भी किसी तरह के भेदभाव के बगैर।

भौतिक पहुंच : आबादी के हर वर्ग की सुरक्षित भौतिक पहुंच में स्वास्थ्य सुविधाएं (सामान और सेवाएं) होनी चाहिए, खासतौर पर जिन्हें सबसे ज्यादा जरूरत है या जो गरीब हैं उनकी पहुंच में। ऐसे लोगों में जातीय अल्पसंख्यक और स्थानीय आबादी, महिलाएं, बच्चे, किशोर, बूढ़े लोग, अपंग और एचआईवी/एड्स पीड़ित लोग शामिल हैं। पहुंच का यह भी अर्थ होता है कि चिकित्सा सेवाएं और स्वास्थ्य की आधारभूत जरूरतें जैसे स्वस्थ पेयजल और पर्याप्त सफाई की सुविधाएं ग्रामीण क्षेत्रों सहित सबकी सुरक्षित पहुंच में हों। इसके अलावा ऐसी इमारतें हों जहां अपंग भी आसानी से आ–जा सकें।

आर्थिक पहुंच (वहन योग्य) : स्वास्थ्य सुविधाएं (सामान और सेवाएं) सबके खर्चे के अंदर होनी चाहिए। स्वास्थ्य के लिए जरूरी सेवाओं, जिनमें स्वास्थ्य की आधारभूत जरूरतों का खर्च पक्षपात रहित होना चाहिए ताकि यह सुनिश्चित किया जा सके कि चाहे ये निजी या सरकारी क्षेत्र में हों, हर किसी के खर्चे के अंदर हों भले ही वे सामाजिक रूप से पिछड़े हुए क्यों न हों। पक्षपात रहित होने का मतलब है कि गरीब परिवारों पर अमीर परिवारों की तुलना में अत्यधिक बोझ न पड़े।

सूचना की उपलब्धता : इसका अर्थ स्वास्थ्य संबंधी मामलों में सूचना मांगना, प्राप्त करना और उसका प्रसार करना होता है। पर, सूचना तक पहुंच का अर्थ उस व्यक्तिगत स्वास्थ्य की जानकारी हासिल करना नहीं है जहां इलाज गोपनीयता के आधार पर हो रहा हो।

(सी) स्वीकार्यता : सभी स्वास्थ्य सुविधाएं (सामान और सेवाएं) चिकित्सीय नैतिकता और सांस्कृतिक दृष्टि से सम्मानजनक होनी चाहिए, अर्थात् व्यक्तियों, अल्पसंख्यकों, लोगों और समुदायों की संस्कृति को स्वीकार्य, लिंग–भेद के अनुसार संवेदनशील और जीवनचक्र की जरूरतों के मुताबिक होनी चाहिए। इसके अलावा ऐसी होनी चाहिए जो लोगों में विश्वास पैदा करे तथा संबद्ध लोगों के स्वास्थ्य का स्तर बढ़ाने वाली हो।

(डी) गुणवत्ता : सांस्कृतिक रूप से स्वीकार्य होने के अलावा स्वास्थ्य सुविधाओं, सामान और सेवाओं को वैज्ञानिक और चिकित्सकीय दृष्टिकोण से उपयुक्त और अच्छे किस्म का होना चाहिए। इसका अर्थ है कि चिकित्साकर्मी कुशल होने चाहिए, दवाएं और उपकरण खराब नहीं होने चाहिए, स्वच्छ पेय जल उपलब्ध होना चाहिए और पर्याप्त साफ–सफाई होनी चाहिए।

आईसीसीपीआर

अंतर्राष्ट्रीय नागरिक एवं राजनीतिक अधिकार समझौता (आईसीसीपीआर) का अनुच्छेद–26 "किसी भी प्रकार के भेदभाव पर रोक लगाता है तथा हर व्यक्ति को किसी भी आधार पर भेदभाव के खिलाफ संरक्षण देता है जैसे नस्ल, लिंग, रंग, भाषा, धर्म, राजनीतिक या अन्य विचार, राष्ट्रीय या सामाजिक मूल, संपत्ति, जन्म या अन्य

आधार पर भेदभाव के खिलाफ संरक्षण। संयुक्त राष्ट्र मानवाधिकार आयोग ने इसकी व्याख्या एचआईवी/एड्स के आधार पर भेदभाव के खिलाफ संरक्षण के रूप में भी की है।[30]

स्वास्थ्य के अधिकार को लागू करना अन्य मानवाधिकारों को लागू करने से पूरी तरह जुड़ा है और उस पर निर्भर है। इसमें व्यक्ति के जीने[31], स्वतंत्र रहने और सुरक्षा का अधिकार[32], यातना या क्रूर, अमानवीय या अपमानजनक व्यवहार तथा दंड से मुक्ति का अधिकार[33] भी शामिल है। इसमें अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता जिसमें सूचना मांगने, प्राप्त करने और उसका प्रसार करने का अधिकार शामिल है।[34] इसमें व्यक्ति की निजता का अधिकार भी शामिल है।[35]

सीईडीएडब्ल्यू

महिलाओं के खिलाफ हर तरह के भेदभाव के खिलाफ समझौता (सीईडीएडब्ल्यू) राज्यों को लिंग भेद पर आधारित हर तरह के भेदभाव का निराकरण कानूनी, नीतिगत और व्यवहारगत आधार पर करने को कहता है। यह राज्यों के लिए महिलाओं और पुरुषों के बीच गैर–बराबरी और उनकी परंपरागत भूमिका पर आधारित सांस्कृतिक और सामाजिक व्यवस्था में सुधार लाने के लिए उपाय करने को भी कहता है। महिलाओं के प्रति भेदभाव का उन्मूलन करने के लिए गठित समिति, जो कि उक्त समझौते में क्रियान्वयता पर नजर रखती है, ने महिलाओं की मां की भूमिका, उनकी अधीनस्थ सामाजिक स्थिति और उनके एचआईवी संक्रमण के खतरे के बीच संबंध रेखांकित किया है।[36] मानवाधिकार और जन स्वास्थ्य के बीच संबंध से साफ पता चलता है कि महिलाओं के मानवाधिकार का उल्लंघन अक्सर उनके स्वास्थ्य के लिए गंभीर परिणाम का कारण बनता है। सीईडीएडब्ल्यू ने महिलाओं के लिए अंतर्राष्ट्रीय मानवाधिकार कानून की आधारशिला राष्ट्रीय, धार्मिक और रीति–रिवाजों से ऊपर रखी है। कानून और समाज में महिलाओं की कमजोर स्थिति की जड़ कानूनी, सामाजिक और आर्थिक संरचना है इनमें सुधार के लिए सीईडीएडब्ल्यू चाहता है कि राज्य, महिलाओं के प्रति वैयक्तिक और सार्वजनिक स्तर पर हो रहे भेदभाव को दूर करने के लिए संवैधानिक, वैधानिक और सामाजिक–आर्थिक सुधार का काम शुरू करें।

---

30 आईसीसीपीआर, अनुच्छेद–26 ; कमिशन ऑन ह्यूमन राइट्स, "द प्रोटेक्शन ऑव ह्यूमन राइट्स इन द कांटेक्स्ट ऑव ह्यूमन इम्युनोडेफिसिएंसी वायरस (एचआईवी) एंड एक्वायर्ड इम्युन डेफिसिएंसी सिन्ड्रोम (एड्स)," प्रस्ताव 1995/44, बगैर मतदान के 3 मार्च 1995 को पारित।

31 नागरिक एवं राजनीतिक अधिकारों पर अंतर्राष्ट्रीय संधि का अनुच्छेद–6(1) कहता है कि 'प्रत्येक व्यक्ति को जीवन जीने का आनुवांशिक अधिकार है। इस अधिकार की रक्षा कानून को करनी होगी। किसी को भी उसके इस अधिकार से वंचित नहीं किया जा सकता।'

32 अंतर्राष्ट्रीय सार्वजनिक एवं राजनीतिक अधिकार संधि का अनुच्छेद–9 कहता है कि प्रत्येक व्यक्ति को स्वतंत्र और सुरक्षा का अधिकार है। किसी जबर्दस्ती गिरफ्तार या बंदी नहीं बनाया जा सकता। उसे उसकी स्वतंत्रता से वंचित नहीं किया जा सकता जब तक कि कोई कानूनी प्रावधान इसकी इजाजत नहीं देता।

33 अंतर्राष्ट्रीय सार्वजनिक एवं राजनीतिक अधिकार संधि का अनुच्छेद–7 कहता है 'किसी को भी प्रताड़ित नहीं किया जा सकता है अथवा उसके साथ निर्दयतापूर्ण, अमानवीय अथवा अपमानजनक व्यवहार नहीं किया जा सकता है अथवा उसे सजा नहीं दी जा सकती है। विशेष तौर पर किसी को भी उसकी मर्जी के बिना चिकित्सकीय अथवा वैज्ञानिक प्रयोग का हिस्सा नहीं बनाया जा सकता है।'

34 अंतर्राष्ट्रीय नागरिक एवं राजनीतिक अधिकार संधि का अनुच्छेद–19 कहता है '1. प्रत्येक व्यक्ति को हस्तक्षेप के बिना विचार रखने का अधिकार होगा। 2. प्रत्येक व्यक्ति को अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता का अधिकार होगा; अधिकार के अंतर्गत मौखिक, लिखित अथवा मुद्रित, कला के रूप में अथवा अपनी पसंद के किसी अन्य माध्यम के जरिये सभी प्रकार की सूचना और विचार मांगने, प्राप्त करने तथा प्रदान करना शामिल होगा। 3. इस अनुच्छेद के पैरा 2 में उल्लिखित अधिकारों के प्रयोग के साथ विशेष कर्तव्यों और दायित्वों की भी बात आती है। इसलिए इस पर कुछ प्रतिबंध हो सकते हैं, लेकिन वे केवल कानून द्वारा निर्दिष्ट और जरूरी ही होते हैं : (ए) अन्य लोगों के अधिकारों अथवा प्रतिष्ठा का सम्मान; (बी) राष्ट्रीय सुरक्षा अथवा सार्वजनिक व्यवस्था अथवा जन स्वास्थ्य अथवा नैतिकता की रक्षा के लिए।'

35 अंतर्राष्ट्रीय नागरिक एवं राजनीतिक अधिकार संधि का अनुच्छेद–17 कहता है कि 'किसी की भी निजता, परिवार, घर अथवा पत्राचार का जबर्दस्ती अथवा गैरकानूनी तरीके से उल्लंघन नहीं किया जा सकता और न ही उसके सम्मान अथवा प्रतिष्ठा पर गैरकानूनी ढंग से आघात किया जा सकता है। प्रत्येक व्यक्ति को इस प्रकार के हस्तक्षेप अथवा आघात से बचने के लिए कानूनी संरक्षण प्राप्त करने का अधिकार है।'

36 देखें, 0/सीईडीएडब्ल्यू, आम सिफारिश संख्या 15 (नौवां सत्र, 1990)। महासभा के आधिकारिक दस्तावेज, पैंतालीसवां सत्र, पूरक संख्या 38 (ए/45/38), अध्याय छह।

सीईडीएडब्ल्यू संधि तथा अनुच्छेद–12 में उल्लिखित सीईडीएडब्ल्यू समिति, सामान्य संस्तुति 19, सामान्य संस्तुति 14 और 15 महिलाओं के स्वास्थ्य अधिकारों के पूर्ण क्रियान्वयन की हिमायत करती हैं।

सीईडीएडब्ल्यू के अनुसार पुरुषों और महिलाओं में समानता के आधार पर रोजगार के क्षेत्र में महिलाओं के खिलाफ भेदभाव खत्म करने और उनके लिए समान अधिकार सुनिश्चित करने हेतु सभी पक्षों को सभी उपयुक्त उपाय करने चाहिये। इन अधिकारों में महिलाओं के लिए प्रजनन अधिकार की सुरक्षा समेत कामकाजी माहौल में स्वास्थ्य की सुरक्षा और हिफाजत का अधिकार प्रमुख है।[37]

सीईडीएडब्ल्यू का अनुच्छेद–12 विशिष्ट रूप से स्वास्थ्य सेवाओं की सुलभता के मामले में महिलाओं के खिलाफ भेदभाव के उन्मूलन की बात कहता है।[38]

अनुच्छेद–14[39] ग्रामीण क्षेत्रों में स्वास्थ्य सेवाएं मुहैया कराने के लिए है।

सीआरसी

संयुक्त राष्ट्र बाल अधिकार संधि (सीआरसी) कहती है कि स्वास्थ्य के उच्चतम संभव मानक तक बच्चे के अधिकार को पहचानना और शिशु तथा बाल मत्यु दर को कम करना, सभी बच्चों के लिए आवश्यक चिकित्सा सेवा तथा स्वास्थ्य सेवा की उपलब्धता सुनिश्चित करना और माताओं के लिए प्रसव पूर्व एवं प्रसवोपरांत उपयुक्त देखभाल सुनिश्चित करना सरकार का कर्तव्य है। अनुच्छेद–24[40] बच्चों के स्वास्थ्य संबंधी अधिकारों की बात करता है। अनुच्छेदों में संधि के सामान्य सिद्धांतों में दिये गये अधिकारों – भेदभावहीनता का अधिकार (अनुच्छेद–2), अपने हितों को सर्वोपरि रखने का बच्चों का अधिकार (अनुच्छेद–3), जीवन, उपार्जन और विकास के अधिकार[41], जीवन और बच्चों की देखभाल के पर्याप्त स्तर का ध्यान रखा गया है और सीआरसी

---

37 महिलाओं के साथ सभी प्रकार के भेदभाव के उन्मूलन पर संधि का अनुच्छेद–11

38 महिलाओं के साथ सभी प्रकार के भेदभाव के उन्मूलन पर संधि का अनुच्छेद–12 कहता है : 1. राज्य महिलाओं तथा पुरुषों के बीच समानता बरतते हुए महिलाओं के लिए स्वास्थ्य सेवाओं की सुलभता सुनिश्चित करने हेतु स्वास्थ्य सेवा के क्षेत्र में महिलाओं के साथ भेदभाव समाप्त करने के लिए उपयुक्त उपाय करेंगे।

39 महिलाओं के साथ सभी प्रकार के भेदभाव के उन्मूलन पर संधि के अनुच्छेद–14 में कहा गया है : राज्य (ए) महिलाओं तथा पुरुषों को समान मानते हुए ग्रामीण क्षेत्रों में महिलाओं के साथ भेदभाव समाप्त करने के लिए उपयुक्त उपाय करके यह सुनिश्चित करेंगे कि वे ग्रामीण विकास में हिस्सा लें और उससे लाभ प्राप्त करें। (बी) सुनिश्चित करेंगे कि महिलाओं के लिए सूचना, सलाह सेवाओं तथा परिवार नियोजन समेत पर्याप्त स्वास्थ्य सेवायें सुलभ हो सकें। (एच) सुनिश्चित करेंगे कि महिलाओं को जीवन यापन के लिए आवास, स्वच्छता, बिजली एवं जल आपूर्ति, परिवहन और संचार से संबंधित पर्याप्त सुविधायें मिलेंगी।

40 "राज्य पक्ष सर्वोच्च प्राप्य स्वास्थ्य मानदंडों के बाल अधिकार को मान्यता दें और बीमारी के उपचार तथा स्वास्थ्य पुनर्वास के लिए सुविधायें उपलब्ध करायें। राज्य पक्ष यह सुनिश्चित करने के लिए प्रयास करेंगे कि किसी भी बच्चे को ऐसी स्वास्थ्य सेवाओं के अधिकार से वंचित न किया जाये। राज्य पक्ष इन अधिकारों के पूर्ण क्रियान्वयन के लिए प्रयास करेंगे और विशेष तौर पर शिशु एवं बाल मत्यु दर कम करने; प्राथमिक स्वास्थ्य सेवा के विकास पर जोर देते हुए सभी बच्चों को आवश्यक चिकित्सा सहायता एवं स्वास्थ्य सेवा का प्रावधान सुनिश्चित करने; प्राथमिक स्वास्थ्य सेवा के ढांचे में ही मौजूदा तकनीकों के इस्तेमाल और पर्यावरणीय प्रदूषण के खतरों को ध्यान में रखते हुए पर्याप्त पोषक भोजन और स्वच्छ पेयजल के प्रावधान के जरिये रोगों और कुपोषण का मुकाबला करने; माताओं को प्रसव पूर्व और प्रसवोपरांत उपयुक्त स्वास्थ्य सेवा सुनिश्चित करने; समाज के सभी वर्गों विशेष तौर पर बच्चों और माता–पिता को सूचना और शिक्षा की सुलभता सुनिश्चित करने, उन्हें बाल स्वास्थ्य एवं पोषण, स्तनपान के लाभों, स्वच्छता तथा पर्यावरणीय स्वच्छता एवं दुर्घटनाओं से बचाव के बारे में प्राथमिक ज्ञान के इस्तेमाल की जानकारी देने; निरोधक स्वास्थ्य सेवा, माता–पिता के लिए निर्देश और परिवार नियोजन संबंधी शिक्षा तथा सेवाओं का विकास करने के लिए उपयुक्त उपाय करेंगे। राज्य पक्ष बाल स्वास्थ्य के लिए हानिकारक परंपरागत रीतियों के उन्मूलन के लिए सभी प्रभावी एवं उपयुक्त उपाय करेंगे। राज्य पक्ष मौजूदा अनुच्छेद में उल्लिखित अधिकारों के पूर्ण इस्तेमाल तक पहुंचने के लिहाज से अंतर्राष्ट्रीय सहयोग को प्रोत्साहन देंगे। इस संबंध में विकासशील देशों की जरूरतों पर खास ध्यान दिया जाना चाहिये।

41 अनुच्छेद–6 "राज्य पक्ष इस बात को स्वीकार करते हैं कि प्रत्येक बच्चे को जीवन का अधिकार है।" साथ ही राज्य पक्ष बच्चों के जीवन और विकास को अधिकतम सीमा तक सुनिश्चित करेंगे। कन्वेंशन ऑन द राइट्स ऑव द चाइल्ड के अनुच्छेद–6.1 के अनुसार "राज्य पक्ष इस बात को स्वीकार करते हैं कि प्रत्येक बच्चे को जीवन का अधिकार है।" अनुच्छेद–6.2 कहता है, "राज्य पक्ष बच्चों के जीवन और विकास को अधिकतम सीमा तक सुनिश्चित करेंगे।" बच्चों के अधिकर पर समिति ने एचआईवी/एड्स के मुद्दे को विशेषरूप से इस रूप में उठाया कि इससे बच्चे अनाथ हो जाते है और इसलिये उनके जीवन और साथ ही स्वास्थ्य और विकास पर भी प्रभाव पड़ता है।

के अनुच्छेद–23 तथा 24 सभी बच्चों के स्वास्थ्य के अधिकार को मान्यता देते हैं और इन्हें पूरा करने के लिए परिवार नियोजन समेत विभिन्न चरणों को चिन्हित करते हैं। 2. सीआरसी कहती है कि राज्य पक्षों को गर्भावस्था, अवकाश और प्रसवोपरांत अवधि के सिलसिले में महिलाओं के लिए उपयुक्त सेवायें सुनिश्चित करनी होंगी, उन्हें आवश्यकतानुसार निःशुल्क सेवाओं और गर्भावस्था तथा स्तनपान के दौरान पर्याप्त पोषण की उपलब्धता भी सुनिश्चित करनी होगी।

यह संधि स्वास्थ्य के अधिकार की पर्याप्त सार्वभौमिक सुरक्षा की पुष्टि करती है और घोषणा करती है कि बच्चे राज्य के नागरिक हैं और इस तरह वे मानव हैं और उन्हें सार्वभौमिक मानवाधिकार घोषणापत्र में दिये गये अधिकारों की गारंटी दी जाती है। अनुच्छेद–19 कहता है, "बच्चे जब माता–पिता, कानूनी अभिभावक अथवा किसी अन्य व्यक्ति के संरक्षण में हैं, तो उन्हें सभी प्रकार की शारीरिक अथवा मानसिक हिंसा, चोट अथवा अत्याचार, अनदेखी अथवा नजरअंदाज करने वाले व्यवहार, दुर्व्यवहार अथवा यौन शोषण समेत सभी प्रकार के शोषण से बचाने के लिए उपयुक्त विधायी, प्रशासनिक, सामाजिक और शैक्षिक उपाय करना सरकार का कर्तव्य है।" उदाहरण के लिए, अनुच्छेद–20 कहता है, "पारिवारिक माहौल से पूरी तरह अथवा आंशिक तौर पर वंचित बच्चे अथवा ऐसा बच्चा, जिसे उसके हित के कारण ही ऐसे माहौल से दूर रखा गया है, को सरकार की ओर से विशेष संरक्षण अथवा सहायता प्राप्त होनी चाहिये। सरकारें अपने राष्ट्रीय कानूनों के अनुसार ऐसे बच्चों के लिए वैकल्पिक देखभाल सुनिश्चित करेंगी।" वैकल्पिक देखभाल में अन्य बातों के साथ सुरक्षित पुनर्वास, गोद देना अथवा यदि जरूरी हुआ तो बच्चे को देखभाल के लिए उपयुक्त संस्थाओं में प्रवेश दिलाना शामिल है। समाधानों पर विचार करते समय बच्चे के पालन–पोषण में सतर्कता और उसकी नस्ली, धार्मिक, सांस्कृतिक और भाषायी पृष्ठभूमि पर भी पूरा ध्यान देना चाहिये।"

आईसीईआरडी

संधि के अनुच्छेद–1 में दी गयी परिभाषा के अनुसार नस्लीय भेदभाव का अर्थ 'नस्ल के रंग, रूप, राष्ट्रीय अथवा जातीय उद्भव के आधार पर किसी प्रकार का भेदभाव, बहिष्कार, प्रतिबंध अथवा अनदेखी है, जिसका उद्देश्य मानवाधिकारों की समान मान्यता, उपभोग अथवा प्रयोग को रोकना है।'

नस्ल संधि के पक्षों के तौर पर सरकारों ने "नस्लीय भेदभाव के सभी रूपों और प्रकारों के तेजी से उन्मूलन और नस्लों के बीच समझ बढ़ाने के लिए नस्ली सिद्धांतों और परंपराओं का मुकाबला करने तथा सभी प्रकार के नस्लीय भेदभाव और विभाजन से मुक्त अंतर्राष्ट्रीय समुदाय की स्थापना के लिए सभी आवश्यक उपाय करने" का संकल्प लिया है।

इस संधि के अनुच्छेद–5 के तहत उल्लिखित अधिकारों, जो विशेष तौर पर स्वास्थ्य के संदर्भ में प्रासंगिक हैं, में व्यक्ति की स्वतंत्रता और सुरक्षा का अधिकार[42], स्वास्थ्य के संदर्भ में समान अधिकार[43], अन्य सामाजिक–आर्थिक अधिकार, जैसे काम करने का अधिकार और शिक्षा का अधिकार[44] तथा विवाह करने और परिवार बनाने के समान अधिकार शामिल हैं।[45]

42 इस कन्वेंशन के अनुच्छेद–2 में दिये गए मौलिक उत्तरदायित्वों की पूर्ति के लिये, राज्य पक्ष जातिगत भेदभाव का निषेध करेंगे और जाति, वर्ण, जन्म के आधार पर भेदभाव किये बिना प्रत्येक को अधिकार की गारंटी, कानून के समक्ष समानता, विशेषरूप से निम्न अधिकारों के लिये करेंगे : (बी) व्यक्ति की सुरक्षा का अधिकार और हिंसा या शारीरिक हानि से बचाव के लिये राज्य द्वारा सुरक्षा, भले ही हानि सरकारी अधिकारी या किसी अन्य व्यक्तिगत समूह या संस्था द्वारा की गई हो।

43 5 (इ) आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक अधिकार, विशेषतः (iv) जन स्वास्थ्य, चिकित्सा सुविधा, सामाजिक सुरक्षा और सामाजिक सेवाओं का अधिकार

44 5 (इ) आर्थिक, सामाजिक और संस्कृतिक अधिकार, विशेषतः i) काम, रोजगार के स्वतंत्र चयन, काम की न्यायपूर्ण और अनुकूल परिस्थितियां, बेरोजगारी से सुरक्षा, समान कार्य के लिये समान वेतन, न्यायपूर्ण व उचित पारिश्रमिक पाने का अधिकार; ii) व्यापार संघों से जुड़ने और बनाने का अधिकार; iii) आवास का अधिकार; iv) जन स्वास्थ्य, चिकित्सा सुविधा, सामाजिक सुरक्षा और सामाजिक सेवाओं का अधिकार; v) शिक्षा और प्रशिक्षण का अधिकार; vi) सांस्कृतिक क्रियाओं में समान रूप से भागीदारी का अधिकार

45 (डी) अन्य नागरिक अधिकार, विशेषतः (iv) विवाह और साथी के चयन का अधिकार।

एचआईवी एड्स और अंतर्राष्ट्रीय कानून

इस संदर्भ में राज्यों को बाध्य करने के लिए हालांकि इस समय कोई अंतर्राष्ट्रीय संधि आदि नहीं है, लेकिन एचआईवी और संबंधित मानवाधिकार मसलों पर लगातार ध्यान केंद्रित रहने के कारण कई घोषणायें हुई हैं और एचआईवी/एड्स तथा मानवाधिकारों पर संयुक्त राष्ट्र दिशानिर्देशों[46] पर आम सहमति भी बनी है, जिनमें इस महामारी के खिलाफ राज्य की भूमिका का जिक्र है। इन विभिन्न प्रयासों के परिणामस्वरूप एड्स के लिए संयुक्त राष्ट्र का संयुक्त कार्यक्रम (यूएनएड्स) भी तैयार किया गया है, जिसमें महामारी के व्यापक प्रभाव से निपटने के लिए संयुक्त राष्ट्र की विभिन्न एजेंसियों और विश्व बैंक के प्रयासों के एकीकरण की बात कही गयी है।[47]

मानवाधिकार आयोग ने 19 अप्रैल, 1996 को अपने 52वें सत्र में अपने प्रस्ताव 1996/43 में संयुक्त राष्ट्र मानवाधिकार उच्चायुक्त से एचआईवी/एड्स के संदर्भ में मानवाधिकारों के संरक्षण और संवर्द्धन के लिए दिशानिर्देशों की व्याख्या हेतु यूएनएड्स और गैर सरकारी संगठनों तथा एचआईवी/एड्स के साथ जी रहे लोगों के समूहों की मदद से अपने प्रयास जारी रखने का अनुरोध किया।[48]

मानवाधिकारों और एचआईवी/एड्स पर दिशानिर्देशों की बात आयोग के 55वें सत्र में आयोग के महासचिव की एक पहले वाली रिपोर्ट[49] में उल्लिखित सिफारिश पर आधारित थी, जिसमें कहा गया है कि ऐसे दिशानिर्देशों अथवा सिद्धांतों का विकास जन स्वास्थ्य और एचआईवी/एड्स के मानवाधिकार संदर्भ के बीच जटिल संबंधों की व्यापक समझ विकसित करने के लिए राष्ट्रीय, क्षेत्रीय और अंतर्राष्ट्रीय स्तरों पर मानवाधिकार संबंधी मुद्दों के विचार–विमर्श के वास्ते अंतर्राष्ट्रीय ढांचा मुहैया करा सकता है। विशेष तौर पर राज्य उन दिशानिर्देशों से लाभ उठा सकते हैं, जो एचआईवी/एड्स के क्षेत्र में मानवाधिकार मानदंडों को लागू करते हैं और विधायी तथा व्यावहारिक मामलों में ठोस तथा विशिष्ट उपायों के संकेत देते हैं।[50]

उपरोक्त अनुरोधों के जवाब में संयुक्त सष्ट्र मानवाधिकार उच्चायुक्त केंद्र और एचआईवी/एड्स पर संयुक्त राष्ट्र के संयुक्त कार्यक्रम ने एचआईवी/एड्स पर सकारात्मक और अधिकार आधारित प्रतिक्रिया को तैयार करने में राज्य पक्षों की मदद करने के लिए 23 से 25 सितंबर 1996 तक जेनेवा में एचआईवी/एड्स और मानवाधिकारों पर दूसरे अंतर्राष्ट्रीय सलाहकार कार्यक्रम का आयोजन किया। यह प्रक्रिया एचआईवी/एड्स का संक्रमण और प्रभाव रोकने में प्रभावी है और उसमें मानवाधिकारों तथा मौलिक स्वतंत्रता का भी पूरा सम्मान किया गया है। एचआईवी/एड्स और मानवाधिकारों पर दूसरे अंतर्राष्ट्रीय सलाहकार कार्यक्रम में एड्स तथा मानवाधिकार के क्षेत्रों के 35 विशेषज्ञ एकजुट हुए, जिनमें सरकारी अधिकारी, राष्ट्रीय एड्स कार्यक्रमों के कर्मचारी, एचआईवी/एड्स के साथ जी रहे लोग, मानवाधिकार कार्यकर्ता और शिक्षाशास्त्री शामिल थे।[51]

लेकिन इससे पहले ही संयुक्त राष्ट्र मानवाधिकार केंद्र द्वारा विश्व स्वास्थ्य संगठन के सहयोग से 1989 में जेनेवा में एड्स और मानवाधिकारों पर आयोजित पहले अंतर्राष्ट्रीय सलाहकार कार्यक्रम के दौरान कानून, प्रशासनिक व्यवहार और नीति के मामले में अंतर्राष्ट्रीय मानवाधिकार मानदंडों का पालन करने में नीति निर्माताओं और अन्य व्यक्तियों की मदद करने के लिए दिशानिर्देशों की व्याख्या की जा चुकी थी।[52]

---

46 एचआईवी/एड्स और मानव अधिकारों पर अंतर्राष्ट्रीय निर्देशिका, यूएनसीएचआर प्रस्ताव 1997/33, यूएन डॉक्यूमेंट ई/सीएन 4/1997/150 (1997)

47 वही

48 वही

49 देखें प्रस्ताव संख्या (ई/सीएन 4/1995/45, पैरा 135)।

50 अंतर्राष्ट्रीय 46।

51 एचआईवी/एड्स और मानवाधिकारों पर अंतर्राष्ट्रीय दिशानिर्देश, यूएनसीएचआर प्रस्ताव संख्या 1997/33, संयुक्त राष्ट्र दस्तावेज संख्या ई/सीएन 4/1997/150 (1997)।

52 देखें पहले सलाहकार सम्मेलन की रिपोर्ट – (एचआर/पीयूबी/90/2)।

सलाहकार कार्यक्रम में एचआईवी/एड्स और मानवाधिकारों के बारे में दिशानिर्देश तय किये गये, जिनका उद्देश्य अंतर्राष्ट्रीय मानवाधिकार नियमों को एचआईवी/एड्स के परिप्रेक्ष्य में अमली जामा पहनाना है। दिशानिर्देशों के दो भाग हैं : पहला, एचआईवी/एड्स पर सकारात्मक प्रतिक्रिया देने वाले मानवाधिकार सिद्धांत और दूसरा, विधि, प्रशासनिक नीति और व्यवहार के मामले में सरकारों द्वारा अपनाये गये कार्य आधारित उपाय, जो मानवाधिकार की रक्षा करेंगे और एचआईवी से संबंधित जन स्वास्थ्य लक्ष्यों को प्राप्त करेंगे। राज्य एचआईवी से संबंधित मानवाधिकारों की रक्षा करने और जन स्वास्थ्य के लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए कदम उठा सकते हैं।

ये दिशानिर्देश मौजूदा अंतर्राष्ट्रीय मानवाधिकार नियमों के ढांचे में सख्ती से ढाले गये हैं और उन रणनीतियों को पहचानने के कई वर्षों के अनुभव पर आधारित हैं, जो एचआईवी/एड्स से निपटने में सफल साबित हुई हैं। ये नियम, सिद्धांत व्यावहारिक रणनीतियों के साथ मिलकर राज्यों को एचआईवी संबंधित अधिकारों का सम्मान सुनिश्चित करने के लिए अपनी नीतियों और कार्यक्रमों की दोबारा समीक्षा करने और उन्हें दोबारा तैयार करने के लिए प्रमाण और विचार उपलब्ध कराते हैं और इस महामारी से निपटने में सबसे अधिक प्रभावी साबित हुए हैं। राज्यों को इन रणनीतियों के क्रियान्वयन के लिए राजनीतिक नेतृत्व और पर्याप्त वित्तीय संसाधन उपलब्ध कराने चाहिये।[53]

दिशानिर्देश अंतर्राष्ट्रीय और क्षेत्रीय मानवाधिकार नियमों के तहत अपनी बाध्यता के कारण राज्यों द्वारा चलायी जा रही गतिविधियों पर केंद्रित हैं। लेकिन ये दिशानिर्देश अन्य प्रमुख कारकों जैसे स्वास्थ्य कर्मचारियों आदि व्यावसायिक समूहों समेत निजी क्षेत्र, मीडिया और धार्मिक समुदायों की जिम्मेदारियों से भी इंकार नहीं करते हैं। इन समूहों पर भेदभाव में लिप्त नहीं रहने और संरक्षणात्मक एवं नीतिपरक नीतियों तथा व्यवहार को लागू करने की भी जिम्मेदारी है।

राज्यों से एचआईवी/एड्स से प्रभावित लोगों के मानवाधिकारों का सम्मान सुनिश्चित करने और एचआईवी/एड्स के खिलाफ प्रभावी तथा समेकित जन स्वास्थ्य कार्यक्रम सुनिश्चित करने के लिए इन दिशानिर्देशों को लागू करने का अनुरोध किया जाता है। इन दिशानिर्देशों को लागू कर राज्य उन नकारात्मक तथा बाध्यकारी नीतियों से बचने में सफल होंगे जिनका लोगों के जीवन और राष्ट्रीय एचआईवी/एड्स कार्यक्रमों पर विनाशकारी प्रभाव हुआ है।[54]

एचआईवी से संबंधित मानवाधिकारों की रक्षा के व्यावहारिक पहलू ज्यादा अच्छी तरह से लागू किये जा सकते हैं, यदि सरकार की कार्यकारी और विधायी शाखा में इस मसले पर नेतृत्व हो और यदि बहुक्षेत्रीय ढांचे स्थापित किये जाते हैं। प्रभावित समुदायों, संबंधित व्यवसायियों और धार्मिक तथा सामुदायिक नेताओं को प्रक्रिया में समान रूप से सहभागी बनाना किसी भी नीति के विकास और क्रियान्वयन के लिए महत्वपूर्ण है।[55]

राष्ट्रीय कानून चूंकि एचआईवी से संबंधित मानवाधिकारों की रक्षा के लिए महत्वपूर्ण ढांचा मुहैया कराते हैं, इसलिए कई दिशानिर्देश कानून में सुधार की जरूरत से संबंधित हैं। सामाजिक परिवर्तन का एक अन्य प्रमुख रास्ता सहायक तथा सक्षम वातावरण का प्रावधान है, जिसमें एचआईवी से संबंधित सुरक्षा, देखभाल और सहायता जैसे क्रियाकलाप किये जा सकें। इस सक्षम वातावरण का एक अंश सामान्य तथा लक्षित शिक्षा, जन सूचना और शिक्षा अभियानों के जरिये रवैये में बदलाव लाकर प्राप्त किया जा सकता है। ये अभियान एचआईवी संबंधित अधिकारों, सहिष्णुता और समेकता के क्षेत्रों में काम करते हैं। इस सक्षम वातावरण के

53 · एचआईवी/एड्स और मानवाधिकारों पर अंतरराष्ट्रीय दिशानिर्देश, यूएनसीएचआर प्रस्ताव संख्या 1997/33, संयुक्त राष्ट्र दस्तावेज संख्या ई/सीएन 4/1997/150 (1997)।

54 वही ।

55 वही ।

अन्य अंश में एचआईवी/एड्स से निपटने के लिए महिलाओं और प्रभावित समूहों का सशक्तिकरण शामिल है। सशक्तिकरण के तहत महिलाओं और इन समूहों की सामाजिक तथा विधिक स्थिति में सुधार के उपाय किये जाते हैं और उन्हें समुदायों को जागरुक करने में मदद की जाती है।

एचआईवी/एड्स और मानवाधिकारों पर दूसरे अंतर्राष्ट्रीय पंचायत ने निम्न निष्कर्ष निकाले[56]:

ए. एचआईवी/एड्स के संदर्भ में मानवीय गरिमा की रक्षा करने और एचआईवी/एड्स के खिलाफ प्रभावी तथा अधिकार आधारित प्रतिक्रिया सुनिश्चित करने के लिए मानवाधिकारों का संरक्षण अनिवार्य है। प्रभावी प्रतिक्रिया के लिए वर्तमान अंतर्राष्ट्रीय मानवाधिकार मानदंडों के अनुरूप सभी व्यक्तियों के मानवाधिकारों, सार्वजनिक तथा राजनीतिक, आर्थिक, सामाजिक और मौलिक स्वतंत्रता का क्रियान्वयन जरूरी है।

बी. जन स्वास्थ्य के कार्यक्रम मानवाधिकार विरोधी नहीं होते हैं। इसके उलट, यह देखा गया है कि जब मानवाधिकारों की रक्षा की जाती है, तो कम लोग प्रभावित होते हैं और एचआईवी/एड्स के साथ जीवन गुजार रहे व्यक्ति तथा उनके परिवार एचआईवी/एड्स से बेहतर तरीके से निपट सकते हैं।

सी. एचआईवी/एड्स महामारी के खिलाफ अधिकार आधारित प्रभावी अभियान में सरकारी संस्थाओं की जिम्मेदारियां, कानूनी सुधारों और सहायक सेवाओं का उपयुक्त क्रियान्वयन तथा एचआईवी/एड्स की चपेट में आने की आशंका वाले समूहों और एचआईवी/एड्स के साथ जीवन गुजार रहे समूहों के लिए अनुकूल वातावरण को बढ़ावा देना शामिल है।

डी. एचआईवी/एड्स के संदर्भ में अंतर्राष्ट्रीय मानवाधिकार कानूनों और जन स्वास्थ्य के लक्ष्यों के लिए राज्यों को ऐसे उपायों पर विचार करने की आवश्यकता है, जिन्हें खासतौर पर महिलाओं और बच्चों, यौनकर्मियों, नशेड़ियों तथा समलैंगिक पुरुषों के मामले में विवादास्पद माना जा सकता है। लेकिन अपने विशिष्ट राजनीतिक, सांस्कृतिक और धार्मिक संदर्भों में मानवाधिकार संबंधी अपने कर्तव्यों को सर्वश्रेष्ठ तरीके से पूरा करने और जन स्वास्थ्य की सुरक्षा करने के तरीके ढूंढना राज्यों की जिम्मेदारी है।

ई. ऐसी रणनीतियां लागू करना हालांकि राज्यों की प्राथमिक जिम्मेदारी है जिनसे मानवाधिकार और जन स्वास्थ्य की सुरक्षा हो और संयुक्त राष्ट्र निकायों, एजेंसियों तथा कार्यक्रमों, क्षेत्रीय अंतरसरकारी निकायों तथा एचआईवी/एड्स से पीड़ित व्यक्तियों के नेटवर्क समेत गैर सरकारी संगठनों की इस संदर्भ में महत्वपूर्ण भूमिका है।

प्रभावी और अधिकार आधारित प्रतिक्रिया लागू करने के लिए सलाहकार कार्यक्रम में राज्यों को सुझाये गये 12 दिशानिर्देशों के बारे में संक्षेप में नीचे दिया गया है।[57]

निर्देश 1: राज्यों को एचआईवी/एड्स के प्रति अपने जवाब के लिए एक प्रभावी राष्ट्रीय ढांचा स्थापित करना चाहिये, जो एचआईवी/एड्स नीतियों को सरकार की सभी शाखाओं में इस कार्यक्रम की जिम्मेदारी को एकीकृत कर एक समन्वित, सहभागितापूर्ण, पारदर्शी एवं जवाबदेह रवैया सुनिश्चित करे।

निर्देश 2: राज्यों को राजनीतिक और वित्तीय सहयोग के जरिये सुनिश्चित करना चाहिये कि एचआईवी/एड्स नीति के निर्माण, कार्यक्रम क्रियान्वयन और मूल्यांकन के सभी चरणों में समुदाय से सलाह–मशविरा हो और नीतियों, कानून तथा मानवाधिकार के क्षेत्रों में इन सभी गतिविधियों को प्रभावी रूप से लागू करने के लिए सामुदायिक संस्थाओं को सक्षम बनाया जाये।

56 देखें एचआईवी/एड्स और मानवाधिकारों पर दूसरा अंतर्राष्ट्रीय सलाहकार सम्मेलन (जेनेवा, 23–25 सितंबर 1996), महासचिव की रिपोर्ट, ई/सीएन 4/1997/37।

57 देखें एचआईवी/एड्स और मानवाधिकारों पर दूसरा अंतर्राष्ट्रीय सलाहकार सम्मेलन (जेनेवा, 23–25 सितंबर 1996), महासचिव की रिपोर्ट, ई/सीएन 4/1997/37।

निर्देश 3: राज्यों को जन स्वास्थ्य कानूनों की समीक्षा कर और उनमें सुधार कर यह सुनिश्चित करना चाहिये कि वे एचआईवी/एड्स द्वारा उठाये गये जन स्वास्थ्य मसलों को पर्याप्त रूप से निपटा दें और संक्रामक रोगों के मामले में लागू उनके प्रावधान एचआईवी/एड्स के मामले में भी उपयुक्त तरीके से लागू हों तथा वे अंतर्राष्ट्रीय मानवाधिकार कर्तव्यों के अनुरूप हों।

निर्देश 4: राज्यों को आपराधिक कानूनों और सुधार प्रणालियों की समीक्षा और उनमें सुधार के जरिये यह सुनिश्चित करना चाहिये कि वें अंतर्राष्ट्रीय मानवाधिकार कर्तव्यों के अनुरूप हों और एचआईवी/एड्स के संदर्भ में उनका दुरुपयोग न हो अथवा प्रभावित समूहों को उनका निशाना न बनाया जाये।

निर्देश 5: राज्यों को भेदभाव निरोधक और अन्य सुरक्षात्मक कानून लागू करने चाहिये और उन्हें मजबूत बनाना चाहिये, जो प्रभावित समूहों, एचआईवी/एड्स से पीड़ित व्यक्तियों तथा विकलांगों को सार्वजनिक निजी क्षेत्रों में भेदभाव से बचायें, मानवीय मामलों में अनुसंधान में निजता, गोपनीयता और नीतियों का पालन सुनिश्चित करें, शिक्षा और शांति पर जोर दें और त्वरित तथा प्रभावी प्रशासनिक और सार्वजनिक उपचार उपलब्ध कराये।

निर्देश 6: राज्यों को एचआईवी संबंधित वस्तुओं, सेवाओं और सूचना के नियमन के लिए कानून लागू करना चाहिये ताकि गुणात्मक सुरक्षा उपायों और सेवाओं, एचआईवी से सुरक्षा और देखभाल संबंधी पर्याप्त सूचना तथा किफायती कीमत पर सुरक्षित एवं प्रभावी उपचार की व्यापक उपलब्धता सुनिश्चित हो सके।

निर्देश 7: राज्यों को कानूनी सहायता सेवायें लागू करनी चाहिये और उनका समर्थन करना चाहिये, ताकि एचआईवी/एड्स से प्रभावित लोगों को उनके अधिकारों के बारे में शिक्षित किया जा सके, उन्हें अधिकारों के इस्तेमाल के लिए निःशुल्क कानूनी सेवा मुहैया करायी जा सके, एचआईवी संबंधित कानूनी मसलों पर विशेषज्ञता विकसित की जायेगी और अदालतों के अतिरिक्त भी सुरक्षा के उपायों जैसे न्याय मंत्रालय के कार्यालयों, ओम्बुड्समैन, स्वास्थ्य सेवा इकाइयों और मानवाधिकार आयोगों का इस्तेमाल किया जाना चाहिये।

निर्देश 8: सामाजिक एवं स्वास्थ्य सेवाओं तथा सामुदायिक समूहों की मदद से राज्य को पूर्वाग्रहों और विषमताओं को दूर करने वाले महिलाओं, बच्चों और अन्य प्रभावित समूहों के लिए सहयोगी और सक्षम वातावरण को बढ़ावा देना चाहिये।

निर्देश 9: राज्य को इस मसले को समझने और उसकी स्वीकार्यता बढ़ाने के लिए रचनात्मक शिक्षा, प्रशिक्षण और एचआईवी/एड्स के साथ जुड़े भेदभाव और पूर्वाग्रही रवैये को बदलने हेतु खासतौर पर बनाये गये कार्यक्रमों के व्यापक और सतत् वितरण को बढ़ावा देना चाहिये।

निर्देश 10: राज्य सुनिश्चित करें कि सरकार और निजी क्षेत्र एचआईवी/एड्स के मसलों के संबंध में आचार संहिता विकसित करें, जो मानवाधिकार सिद्धांतों को व्यावसायिक जिम्मेदारियों और व्यवहार में तब्दील करे और इन संहिताओं को क्रियान्वित करने की प्रणाली भी विकसित करे।

निर्देश 11: राज्यों को एचआईवी/एड्स से पीड़ित व्यक्तियों, उनके परिवारों और समुदायों समेत एचआईवी संबंधित मानवाधिकारों की सुरक्षा की गारंटी के लिए निगरानी और क्रियान्वयन प्रणालियां सुनिश्चित करनी चाहिये।

निर्देश 12: राज्यों को एचआईवी संबंधित मानवाधिकार मामलों के बारे में ज्ञान तथा अनुभव साझा करने के लिए यूएनएड्स समेत संयुक्त राष्ट्र व्यवस्था के सभी प्रासंगिक कार्यक्रमों और एजेंसियों के जरिये सहयोग करना चाहिये और अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर एचआईवी/एड्स के संदर्भ में मानवाधिकारों की रक्षा के लिए प्रभावी प्रणाली सुनिश्चित करनी चाहिये।

यूएनजीएएसएस - एचआईवी/एड्स घोषणा पर संयुक्त राष्ट्र महासभा का विशेष सत्र[58]

एचआईवी/एड्स पर संयुक्त राष्ट्र महासभा का विशेष सत्र एचआईवी/एड्स महामारी के खिलाफ अंतर्राष्ट्रीय समुदाय की लड़ाई में मील का एक पत्थर थी। राज्य और सरकार के प्रमुख तथा राज्य और सरकारों के प्रतिनिधि एचआईवी/एड्स की समस्या के सभी पहलुओं की समीक्षा और उन पर विचार करने तथा समग्र तरीके से इसके खिलाफ राष्ट्रीय, क्षेत्रीय और अंतर्राष्ट्रीय प्रयासों का तालमेल बढ़ाने में वैश्विक प्रतिबद्धता का निर्माण करने के लिए, प्रस्ताव 55/13 के अनुरूप, संयुक्त राष्ट्र में 25 से 27 जून 2001 तक आपात रूप से आयोजित महासभा के 26वें विशेष सत्र में एकत्र हुए। इसमें राज्यों के प्रमुख और सरकारों के प्रतिनिधियों ने एचआईवी/एड्स पर प्रतिबद्धता की घोषणा की।

घोषणा की प्रस्तावना में इस महामारी की व्यापकता, इसके प्रभावों और इससे निपटने के उपायों का रेखांकन किया गया। उसके बाद मसौदे में उस प्रतिज्ञा का जिक्र किया गया, जो सरकारों ने अंतर्राष्ट्रीय और क्षेत्रीय संगठनों तथा सभ्य समाज के साथ साझेदारी में एचआईवी/एड्स महामारी के उन्मूलन के लिए ली थी। शपथ की घोषणा कानूनी रूप से बाध्य करने वाला कोई दस्तावेज नहीं है। लेकिन यह विशिष्ट समय सीमा के साथ अपने क्रियाकलापों के बारे में स्पष्ट सरकारी घोषणा है। कुल मिलाकर घोषणा एक महत्वपूर्ण उपकरण है, जिससे सरकार के भीतर और बाहर इस महामारी से लड़ रहे सभी लोगों के लिए कार्रवाई, संकल्प, सहयोग और संसाधनों के संबंध में निर्देश दिये गये हैं।

घोषणा में निरोधात्मक रणनीतियों, एचआईवी/एड्स से पीड़ित व्यक्तियों के मानवाधिकारों, उपचार की सुलभता और स्वास्थ्य एवं एचआईवी/एड्स पर वैश्विक कोष समेत विभिन्न मसलों का ध्यान रखा गया है। अन्य प्रगतिशील संधियों के साथ यह घोषणा, जनसंख्या और विकास पर अंतर्राष्ट्रीय सम्मेलन तथा 15 से 24 वर्ष की आयु वाले युवाओं के बीच एचआईवी की व्यापकता कम करने के लिए तय पांच लक्ष्यों की पुनः पुष्टि करती है। इसमें लैंगिक रूढ़ियों और विषमताओं को चुनौती देने की जरूरत के बारे में भी सख्त बयान हैं। खासतौर पर यह कहती है कि महिलाओं के लिए सभी मानवाधिकारों का प्रयोग सुरक्षित किया जाये, राष्ट्रीय एचआईवी निरोधक रणनीतियों में "महिलाओं को अपने यौन संबंधित मसलों पर स्वतंत्र रूप से और जिम्मेदारी के साथ निर्णय लेने और उन पर नियंत्रण करने के अधिकार दिये जायें" और महिलाओं तथा किशोरियों को यौन एवं प्रजनन स्वास्थ्य सेवायें उपलब्ध करायी जायें।

राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय दोनों स्तरों पर उठाये जाने वाले कदमों में राष्ट्रीय रणनीतियों का विकास, महामारी के लिंग और आयु आधारित आयामों पर विचार, सभी मानवाधिकारों का पूर्ण संरक्षण, उपचार और सहायता की समान सुरक्षा, देखभाल और सुलभता पर विचार और महामारी के विनाशकारी प्रभावों को कम करने के लिए स्वास्थ्य, शिक्षा और कानूनी प्रणालियों को मजबूत करना शामिल है। महत्वपूर्ण रूप से आम सभा ने इस महामारी के खिलाफ सुरक्षा, देखभाल, सहयोग और उपचार संबंधित एकीकृत रवैये पर आधारित त्वरित और व्यापक प्रतिक्रिया को वित्तीय सहायता देने के लिए एक वैश्विक एचआईवी/एड्स तथा स्वास्थ्य कोष भी स्थापित किया।

एचआईवी/एड्स के संदर्भ में मानवाधिकारों का सम्मान, संकल्प की घोषणा के केंद्र में है। सदस्य राज्यों ने एचआईवी/एड्स महामारी को वैश्विक आर्थिक, सामाजिक और विकास के लिए संकट माना तथा मानवाधिकारों खासतौर पर महिलाओं और बच्चों समेत संक्रमण की सर्वाधिक आशंका वाले समुदायों के अधिकारों के सम्मान को मजबूत कर एचआईवी/एड्स से निपटने की जरूरत पर सहमत हो गये। घोषणा में चार क्षेत्रों में मानवाधिकार कानूनों और सिद्धांतों पर आधारित लक्ष्यों को पहचाना गया : नये संक्रमणों की

58 देखें www.unaids.org

रोकथाम, बेहतर देखभाल का प्रावधान, एचआईवी/एड्स से प्रभावित और पीड़ित व्यक्तियों के लिए सहयोग और उपचार, संक्रमण की आशंका में कटौती और एचआईवी/एड्स के सामाजिक तथा आर्थिक प्रभाव को कम करना। इसके अतिरिक्त यूएनजीएएसएस की संकल्प घोषणा एचआईवी/एड्स के संदर्भ में निगरानी और जवाबदेही के महत्व की बात करती है और एचआईवी/एड्स से संबंधित मानवाधिकारों के लिए निगरानी प्रणाली को मजबूत करने की अपील भी करती है।

इस विशेष सत्र में विभिन्न मसलों पर निम्न दिशानिर्देश तैयार किये गये[59]:

नेतृत्व

व्यक्तिगत संकल्प और ठोस कार्य योजनाओं के रूप में महामारी का प्रभावी जवाब सुनिश्चित करने हेतु राष्ट्रीय, क्षेत्रीय और वैश्विक स्तरों पर सशक्त नेतृत्व। समाज, व्यापारिक समुदाय और निजी क्षेत्र को एचआईवी/एड्स के खिलाफ लड़ाई में सरकार के प्रयासों में पूरक की भूमिका निभाने की जरूरत है।

रोकथाम

राज्यों को एचआईवी संक्रमण की महामारी के खिलाफ रोकथाम को राष्ट्रीय, क्षेत्रीय और अंतर्राष्ट्रीय प्रयासों का मूल समझना चाहिये और वैश्विक लक्ष्य प्राप्त करने तथा लैंगिक रूढ़ियों तथा रवैयों को चुनौती देने, रोकथाम एवं सूचना कार्यक्रमों को सुलभ बनाने और स्थान विशेष सूचना कार्यक्रम तैयार करने के उद्देश्य सहित समयबद्ध राष्ट्रीय निरोधक लक्ष्य निर्धारित करने चाहिये।

देखभाल, सहायता और उपचार

राज्यों को स्वास्थ्य सेवा तंत्र मजबूत करने, एचआईवी से पीड़ित व्यक्तियों के लिये औषधियों को सुलभ बनाने, उच्च श्रेणी का उपचार सुनिश्चित करने और घरेलू औषधि उद्योगों के विकास तथा नवीकरण को बढ़ावा देने के लिए अंतर्राष्ट्रीय समुदाय और सभ्य समाज के सहयोग से राष्ट्रीय रणनीतियां बनानी चाहिये। राज्य परिवार और समुदाय सेवा को मजबूत करने तथा महामारी से पीड़ित सभी व्यक्तियों के लिए गुणवत्ता से भरपूर चिकित्सकीय और मनोवैज्ञानिक देखभाल सुनिश्चित करने के लिए प्रयास करें।

एचआईवी/एड्स और मानवाधिकार

राज्य एचआईवी/एड्स से पीड़ित व्यक्तियों के खिलाफ सभी प्रकार के भेदभाव दूर करने के लिए उपयुक्त कानून, नियम और अन्य उपाय लागू करें और ऐसे व्यक्तियों के लिए मानवाधिकार एवं मौलिक स्वतंत्रता सुनिश्चित करें।

संक्रमण की आशंका में कटौती

राज्यों को महिलाओं और बच्चों की खास जरूरतों को ध्यान में रखकर ऐसी रणनीतियां, नीतियां और कार्यक्रम तैयार करने चाहिये जो लोगों को एचआईवी संक्रमण के करीब ले जाने वाले कारकों की पहचान करायें और उन पर कार्रवाई करें।

एचआईवी/एड्स के कारण अनाथ हुए बच्चे

राज्य को उपयुक्त सलाह एवं मानसिक–सामाजिक सहयोग के जरिये अनाथों और एचआईवी/एड्स से संक्रमित तथा प्रभावित लड़कों एवं लड़कियों के लिए समर्थ वातावरण मुहैया कराने हेतु सरकारी, पारिवारिक

59 देखें www.unaids.org

एवं सामुदायिक क्षमताओं का निर्माण एवं सशक्तिकरण करना चाहिये। एचआईवी/एड्स द्वारा अनाथ बनाये गये और उससे संक्रमण की आशंका वाले बच्चों को अलगाव से बचाने के लिए सक्रिय नीति को बढ़ावा देते हुए सभी मानवाधिकारों का पूर्ण एवं समान प्रयोग और भेदभाव की रोकथाम सुनिश्चित करनी चाहिये।

सामाजिक एवं आर्थिक प्रभाव कम करना

राज्य को एचआईवी/एड्स के आर्थिक एवं सामाजिक प्रभाव का मूल्यांकन करना चाहिये और समाज के सभी स्तरों पर इसके प्रभाव से निपटने के लिए बहुक्षेत्रीय रणनीतियां विकसित करनी चाहिये, एचआईवी/एड्स के प्रभाव से निपटने के लिए राष्ट्रीय गरीबी उन्मूलन रणनीतियों का क्रियान्वयन सुनिश्चित करना चाहिये और एक राष्ट्रीय कानूनी और नीतिगत ढांचा विकसित करना चाहिये, जो कार्यस्थल में एचआईवी/एड्स से पीड़ित और प्रभावित व्यक्तियों के अधिकारों और गरिमा की रक्षा करे।

अनुसंधान एवं विकास

राज्य को एचआईवी टीकों के विकास पर निवेश और अनुसंधान बढ़ाना चाहिये। इसके साथ ही खासतौर पर विकासशील देशों में एचआईवी/एड्स से संबंधित अनुसंधान एवं विकास में राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय निवेश को बढ़ावा देकर राष्ट्रीय अनुसंधान क्षमता भी तैयार करना चाहिये।

युद्ध एवं आपदाग्रस्त क्षेत्रों में एचआईवी/एड्स

राज्य को राष्ट्रीय रणनीतियों का विकास और क्रियान्वयन शुरू करना चाहिये, जिनमें आपात स्थितियों से निपटने वाले कार्यक्रमों अथवा गतिविधियों में एचआईवी/एड्स जागरुकता, रोकथाम, देखभाल और उपचार के तत्व शामिल होने चाहिये।

संसाधन

राज्यों को सुनिश्चित करना चाहिये कि एचआईवी/एड्स से निपटने के लिए वैश्विक प्रतिक्रिया हेतु उपलब्ध कराये गये संसाधन महत्वपूर्ण, सतत् और परिणामोन्मुखी होने चाहिये और यह सुनिश्चित करने के लिए राज्यों को उपाय करने चाहिये कि जरूरी संसाधन खासतौर पर दाता देशों और राष्ट्रीय बजटों से उपलब्ध कराये जायें।

समीक्षा

राज्यों को सभ्य समाज के साथ मिलकर तय अवधि पर इन संकल्पों की पूर्ति में हुई प्रगति की राष्ट्रीय समीक्षा करनी चाहिये, प्रगति की राह में आयी समस्याओं और बाधाओं की पहचान करनी चाहिये और प्रगति को मापने और उसके आकलन में समीक्षा की मदद के लिए उपयुक्त निगरानी एवं मूल्यांकन प्रणालियों का विकास करना चाहिये।

एचआईवी/एड्स विशिष्ट कानून

दक्षिण अफ्रीका

दक्षिण अफ्रीका गणराज्य का संविधान, 1996 का अधिनियम–108 कभी–कभी दुनिया के सबसे प्रगतिशील संविधानों में शुमार किया जाता है, जिसमें अधिकारों का विधेयक भी शामिल है। मानवाधिकारों को साफ तौर पर प्रमुखता दी गयी है। उन्हें "लोकतांत्रिक मूल्यों, सामाजिक न्याय और मूलभूत मानवाधिकारों पर

आधारित समाज" की स्थापना की घोषित मंशा के साथ प्रस्तावना में भी शामिल किया गया है। इसमें दिये गये अधिकारों में स्वास्थ्य सेवा की सुलभता को दक्षिण अफ्रीका में मूलभूत मानवाधिकारों में गिनाया गया है। धारा–27 का पैरा 1 "प्रजनन स्वास्थ्य सेवा समेत स्वास्थ्य सेवाओं" के अधिकार की गारंटी देता है। इसके अतिरिक्त अनुच्छेद–27 (2) के अनुसार राज्य संविधान में उल्लिखित जन स्वास्थ्य से संबंधित लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए जिम्मेदार है। इतना ही नहीं समानता और भेदभाव निरोध का सिद्धांत पूरे स्वास्थ्य तंत्र में शामिल किया गया है। इसका समर्थन 'दक्षिण अफ्रीका में स्वास्थ्य तंत्र के रूपांतर पर कायापलट के लिए श्वेत पत्र' (अप्रैल 1997) और 2000 का समानता संवर्धन और पक्षपातपूर्ण भेदभाव निरोध अधिनियम संख्या 4 भी करते हैं। इन अधिकारों का प्रयोग सीधे राष्ट्रीय अदालतों में किया जा सकता है और संविधान में भी राज्य को अंतर्राष्ट्रीय संधियों के प्रावधानों में उल्लिखित कर्तव्यों के साथ इन अधिकारों का 'सम्मान करने, सुरक्षा करने, बढ़ावा देने और पूरा करने' के लिए बाध्य किया जाता है।

एचआईवी/एड्स से पीड़ित व्यक्तियों के सामने आने वाले भेदभाव के मामले में सबसे महत्वपूर्ण दक्षिण अफ्रीकी कानून रोजगार हिस्सेदारी अधिनियम, 1998 है। इस कानून की धारा–5 साफ तौर पर कहती है कि प्रत्येक रोजगार दाता को रोजगार की किसी नीति अथवा व्यवहार में पक्षपातपूर्ण भेदभाव दूर कर कार्यस्थल पर समान अवसरों को बढ़ावा देने के लिए कदम उठाने चाहिये। धारा–6 कहती है कि अन्य बातों के अलावा एचआईवी के आधार पर किसी कर्मचारी के साथ पक्षपातपूर्ण भेदभाव नहीं किया जा सकता। लेकिन इसमें यह भी कहा गया है कि नौकरी की मूलभूत जरूरतों के कारण की गयी सख्त कार्रवाई अथवा अलगाव भेदभाव में शामिल नहीं होता है।

धारा–7 के अनुसार किसी भी कर्मचारी की चिकित्सकीय जांच पर रोक लगायी जा सकती है, जब तक कि कोई कानून इसकी अनुमति नहीं देता अथवा इसे जरूरी नहीं बताता अथवा चिकित्सा तथ्यों, नौकरी की स्थितियों, सामाजिक नीति, कर्मचारी लाभों के निष्पक्ष वितरण और नौकरी की मूलभूत जरूरतों के अनुसार यह न्यायोचित नहीं होता। एचआईवी परीक्षणों पर रोक लगायी गयी है, जब तक कि श्रम अदालत इसे न्यायोचित नहीं ठहराती। धारा–8 मनोवैज्ञानिक परीक्षणों पर रोक लगाती है, जब तक कि वह विश्वसनीय और कर्मचारियों के किसी समूह के प्रति पक्षपातहीन न हो। इस कानून के तहत जब कोई विवाद खड़ा होता है, तो धारा–11 के अनुसार रोजगार दाता को यह साबित करना होगा कि उसकी नीतियां निष्पक्ष हैं। धारा–15 कहती है कि रोजगार दाता को यह सुनिश्चित करने हेतु लक्षित समूह के लोगों के लिए ऐसा माहौल तैयार करना चाहिये कि उन्हें समान अवसर मिलें और कार्यस्थल में उनकी समान सहभागिता हो। धारा–16 कहती है कि रोजगार दाता को ऐसा करते समय लक्षित समूह के दृष्टिकोण पर भी विचार करना चाहिये।

धारा–25 के अनुसार इस अधिनियम के प्रावधान कार्यस्थल में प्रदर्शित होने चाहिये। धारा–27 कहती है कि रोजगार शर्त आयोग निजी कर्मचारियों के बारे में किसी सूचना का खुलासा नहीं कर सकता। धारा–51 के अनुसार कोई भी व्यक्ति ऐसे किसी कर्मचारी के साथ भेदभाव नहीं कर सकता जो इस अधिनियम में वर्णित किसी अधिकार का इस्तेमाल कर रहा है और न हीं किसी कर्मचारी को ऐसा करने से रोका जा सकता है। वह किसी कर्मचारी के बारे में अतीत, वर्तमान अथवा किसी भी संभावित सूचना के आधार पर पूर्वाग्रह नहीं पाल सकता। कोई भी व्यक्ति किसी कर्मचारी का हित इस आधार पर नहीं कर सकता कि वह इस अधिनियम में वर्णित अधिकारों का इस्तेमाल नहीं कर रहा है। धारा–59 कहती है कि इस अधिनियम के तहत वर्णित किसी कार्य को करते समय प्राप्त गोपनीय सूचना का खुलासा करने वाला कोई भी व्यक्ति अपराध करता है, बशर्ते यह खुलासा कानूनी अदालत न करवाये अथवा इस अधिनियम के तहत वर्णित कार्य करने के लिए यह जरूरी न हो।

संयुक्त राज्य अमेरिका

अमेरिका में एचआईवी से संक्रमित लोगों के अधिकारों के संबंध में कोई संघीय कानून नहीं है। इसके बजाय एचआईवी/एड्स से पीड़ित व्यक्ति "विकलांगों" की श्रेणी में आते हैं और इस प्रकार उन पर अमरीकी विकलांगता अधिनियम, 1990 लागू होता है। इस अधिनियम की धारा–102 के मुताबिक विकलांगता से ग्रस्त किसी दक्ष व्यक्ति को किसी भी नौकरी पर रखने, आगे बढ़ाने, क्षतिपूर्ति, प्रशिक्षण नौकरी छोड़ने अथवा किसी अन्य स्थिति और कर्मचारियों को दिये जाने वाले विशेषाधिकारों के मामले में उसके साथ केवल विकलांगता के कारण भेदभाव नहीं किया जा सकता है। यह धारा कहती है कि किसी नौकरी के लिए आवेदन करने वाले की विकलांगता के बारे में या विकलांगता की गंभीरता के बारे में कोई भी चिकित्सा जांच अथवा अन्य किसी प्रकार की जांच नहीं करायी जा सकती। लेकिन ऐसे परीक्षण और जांच कराये जा सकते हैं, यदि सभी आवेदकों के परीक्षण किये जा रहे हों और उनका विकलांगता से कोई संबंध न हो, यदि नौकरी के लिहाज से वे जरूरी हों और यदि उनका रिकॉर्ड गोपनीय रखा जाता हो और विशेष उद्देश्यों से ही उनका इस्तेमाल होता हो।

धारा–103 कहती है कि भेदभाव से बचने के लिए रोजगार प्रदाता दिखा सकता है कि पर्याप्त प्रयासों के बावजूद ऐसा नहीं किया जा सका। रोजगार प्रदाता योग्यता के मानदंड भी तय कर सकता है, जिनके अनुसार कार्यस्थल पर कोई व्यक्ति अन्य व्यक्तियों के स्वास्थ्य अथवा सुरक्षा के लिए प्रत्यक्ष खतरा न बने। धारा–202 के अनुसार विकलांगता से ग्रस्त किसी भी योग्य व्यक्ति को उसकी विकलांगता के कारण सेवाओं, कार्यक्रमों अथवा किसी सार्वजनिक निकाय की गतिविधियों में हिस्सा लेने से वंचित नहीं किया जा सकता। धारा–223 के अनुसार विकलांगों को दी जाने वाली सुविधाओं के सिलसिले में कानून और नीतियां बनाते समय विकलांग समुदाय से सलाह ली जानी चाहिये।

धारा–302 भेदभाव निरोध की पुष्टि करते हुए कहती है कि सार्वजनिक स्थल पर किसी संपत्ति का स्वामी या उसे पट्टे पर लेने वाला अथवा उसका संचालन करने वाला व्यक्ति किसी भी व्यक्ति की विकलांगता के कारण उसके साथ सार्वजनिक स्थल की किसी वस्तु, सेवा, सुविधा, विशेषाधिकार अथवा लाभ देने में भेदभाव नहीं कर सकता। यह धारा आगे कहती है कि किसी भी व्यक्ति की विकलांगता के कारण प्रत्यक्ष अथवा परोक्ष रूप से अथवा किसी प्रकार के करार, लाइसेंस या समझौते के जरिये उसे अन्य व्यक्तियों से भिन्न वस्तु, सेवा, सुविधा, विशेषाधिकार, लाभ अथवा स्थान प्रदान करना भेदभाव होगा। ऐसा तभी किया जा सकता है, जब व्यक्ति को ऐसी सुविधायें प्रदान करना जरूरी हो, जो अन्य को दी गयी सुविधाओं जैसी ही प्रभावी हों। इसके अलावा किसी व्यक्ति को विकलांग व्यक्ति के साथ संबंधों के कारण भेदभाव का शिकार नहीं बनाया जा सकता।

धारा–304 कहती है कि मूलरूप से व्यावसायिक तौर पर लोगों के परिवहन के काम में लगी किसी निजी संस्था द्वारा प्रदान की जा रही सार्वजनिक परिवहन सेवा के पूर्ण और समान उपभोग के मामले में किसी भी व्यक्ति के साथ उसकी विकलांगता के आधार पर भेदभाव नहीं किया जायेगा।

धारा–305 के अनुसार इस अधिनियम के प्रावधान निजी क्लबों अथवा नागरिक अधिकार अनिधियम, 1964 के दायरे से मुक्त प्रतिष्ठानों अथवा धार्मिक संगठनों या उनके द्वारा नियंत्रित संस्थाओं जैसे पूजा स्थलों पर लागू नहीं होते हैं। धारा–309 के अनुसार माध्यमिक अथवा माध्यमिकोत्तर शिक्षा, व्यावसायिक अथवा व्यापार उद्देश्यों के लिए आवेदन, लाइसेंस, प्रमाणपत्र अथवा प्रमाणन आदि से संबंधित परीक्षाएं और पाठ्यक्रम आयोजित कराने वाली कोई भी संस्था विकलांगता से ग्रस्त व्यक्तियों के लिए सुलभ स्थान और तरीके से परीक्षायें अथवा पाठ्यक्रम आयोजित करेगी अथवा विकलांगों की जरूरतों के अनुकूल वैकल्पिक इंतजाम करेगी। धारा–503 इस अधिनियम के तहत कहे गये अधिकारों का प्रयोग करने का प्रयास करने वाले किसी भी व्यक्ति अथवा

इस मामले में भेदभाव की शिकायत करने वाले किसी व्यक्ति को धमकाने, डराने अथवा उसके मामले में दखल देने को अवैध करार देती है।

ब्रिटेन

ब्रिटेन भी ऐसा ही एक देश है, जहां एचआईवी/एड्स के विषय में कोई विशेष कानून नहीं है। इसके बजाय एचआईवी से संक्रमित व्यक्ति के साथ भेदभाव के मामले को विकलांगता भेदभाव अधिनियम, 1995 के प्रावधानों के जरिये निपटाया जाता है। इस अधिनियम का अनुच्छेद–1 विकलांगता की स्थिति को शारीरिक अथवा मानसिक अपंगता के रूप में परिभाषित करता है, जिसका असर उस व्यक्ति की दैनिक गतिविधियां निपटाने की क्षमता पर महत्वपूर्ण और दीर्घकालिक प्रतिकूल प्रभाव डालती है। इस अधिनियम की पहली अनुसूची की धारा–8 में ह्यूमन इम्यूनोडेफिशेंसी वायरस द्वारा संक्रमण को विकलांगता में शामिल किया गया है। अनुच्छेद–4 कहता है कि चयन के मानदंडों अथवा रोजगार की शर्तों के मामले में किसी विकलांग व्यक्ति के साथ भेदभाव करना अथवा उसे नौकरी देने से जानबूझकर इंकार करना किसी भी रोजगार दाता के लिए गैरकानूनी है। यह अनुच्छेद प्रोन्नति, स्थानांतरण, प्रशिक्षण और अन्य लाभों के अवसरों और बर्खास्तगी के मामले में भी विकलांगों के साथ भेदभाव को पूरी तरह निषेध करार देता है। अनुच्छेद–5 भेदभाव की परिभाषा देता है। यह कहता है कि यदि कोई रोजगार प्रदाता बिना किसी ठोस वजह के महज विकलांगता के कारण किसी विकलांग व्यक्ति को अन्य सामान्य व्यक्तियों के मुकाबले कम तरजीह देता है तो यह भेदभाव है। अनुच्छेद–6 के अनुसार रोजगार प्रदाता द्वारा की गयी किसी व्यवस्था अथवा उसके स्वामित्व वाले भवन में किसी व्यवस्था के कारण विकलांग व्यक्तियों को सामान्य व्यक्तियों की अपेक्षा असुविधा होती है तो उनकी असुविधा दूर करने के लिए उपयुक्त व्यवस्थायें करना रोजगार प्रदाता का कर्तव्य है। लेकिन ये प्रावधान उस स्थिति में लागू नहीं होंगे यदि रोजगार प्रदाता कर्मचारी की विकलांगता के बारे में नहीं जानता है। इसके साथ ही सेवानिवृत्ति, सेवा की समाप्ति, मृत्यु, दुर्घटना, चोट, बीमारी आदि से संबंधित लाभप्रद योजनाओं के मामले में भी ये प्रावधान लागू नहीं होते।

अनुच्छेद–13 के अनुसार प्रवेश की शर्तों अथवा विशिष्ट लाभ प्रदान करने के मामलों में किसी विकलांग व्यक्ति के साथ भेदभाव करना अथवा सदस्यता के उसके आवेदन को अस्वीकार कर देना किसी भी व्यापारिक संगठन के लिए गैरकानूनी है।

डॉमिनिक गणराज्य

एचआईवी/एड्स के संदर्भ में डॉमिनिक का पहला कानून 1993 के उत्तरार्द्ध में लागू हुआ। अनुच्छेद–1 कहता है कि जब किसी व्यक्ति में एचआईवी/एड्स के संक्रमण की जानकारी मिले, तो स्वास्थ्य अधिकारियों को फौरन सूचित किया जाये, चाहे वह व्यक्ति जीवित हो अथवा मृत।

अनुच्छेद–2 में कहा गया है कि एचआईवी परीक्षण निम्नलिखित स्थितियों में ही किया जा सकता है: स्वैच्छिक अनुसंधान के दौरान, किसी प्रभावित पक्ष के अनुरोध पर, अंगदान अथवा रक्तदान के समय, जब चिकित्सक को विश्वास हो कि रोगी एचआईवी से संक्रमित है और रोगी परीक्षण के लिए सहमत हो जाये। धारा–3 के अनुसार एचआईवी परीक्षण रोजगार बरकरार रखने के लिए रोजगार की जरूरत के तौर पर नहीं किये जा सकते हैं और न ही स्वास्थ्य सेवा से संबंधित उद्देश्यों के लिए यदि रोगी की देखभाल परीक्षण के नतीजों पर ही निर्भर करती है। धारा–22 के अनुसार किसी संभावित कर्मचारी को यह खुलासा नहीं करना है कि वह एचआईवी से संक्रमित है अथवा नहीं। धारा–24 कहती है कि किसी भी बच्चे को उनके माता–पिता अथवा स्वयं उनके एचआईवी से संक्रमित होने के कारण शैक्षिक संस्था में प्रवेश से नहीं रोका जा सकता है और न ही उन्हें वहां पढ़ने से रोका जा सकता है।

जिन मामलों में रोगी को एचआईवी से संक्रमित पाया गया है, उन सभी से संबंधित सूचना अनुच्छेद–6 के अनुसार पूरी तरह गोपनीय है। अनुच्छेद–26 कहता है कि एचआईवी से संक्रमित व्यक्ति को अपनी स्थिति की जानकारी अपने यौन साथी को जरूर देनी चाहिये। यदि वह ऐसा करने से इंकार करता है, तो अनुच्छेद–21 के अनुसार चिकित्सक को इसकी सूचना अधिकारियों को देनी चाहिये, जो यह सूचना अन्य लोगों तक पहुंचाने के तरीके तय करेंगे। अनुच्छेद–5 में यह कानून कहता है कि स्वास्थ्य सेवायें प्रदान करने वाली संस्थाओं को प्रशिक्षित एवं योग्य कर्मचारियों की मदद से सलाह प्रदान करनी चाहिये और भावनात्मक समर्थन भी देना चाहिये। अनुच्छेद–8 कहता है कि स्कूल और कॉलेजों को अपने छात्रों के लिए यौन शिक्षा की कक्षायें आयोजित करनी होंगी। अनुच्छेद–11 के अनुसार ऐसे ही पाठ्यक्रम कारखानों के कामगारों, सरकारी कर्मचारियों और सुरक्षा बलों के लिए भी आयोजित कराये जाने चाहिये। अनुच्छेद–9 कहता है कि दूरसंचार महानिदेशालय को एचआईवी/एड्स की रोकथाम के बारे में जन माध्यमों में निःशुल्क संदेश देना चाहिये।

अनुच्छेद–2 के अनुसार रक्त की एचआईवी/एड्स और विषाणुजनित हेपेटाइटिस संबंधी जांच कराये बगैर रक्तदान नहीं किया जायेगा। अनुच्छेद–15 कहता है कि सिरिंज, सुई और अन्य चिकित्सा उपकरणों को दोबारा इस्तेमाल नहीं किया जायेगा। अनुच्छेद–16 के अनुसार निजी कमरों, होटल और बिस्तर मुहैया कराने वाले अन्य स्थानों को ग्राहक की मांग नहीं होने पर भी कम से कम दो कंडोम उपलब्ध कराने होंगे। अधिनियम इन प्रावधानों का उल्लंघन करने वालों को जुर्माना अथवा कारावास अथवा दोनों प्रकार की सजा देने की बात भी कहता है।

कम्बोडिया

एचआईवी/एड्स के बारे में कम्बोडियाई कानून 2002 में लागू किया गया। इसमें भेदभाव समाप्त करने और ऐहतियाती उपायों पर जोर देकर जन जागरूकता लाने पर ध्यान देकर एचआईवी/एड्स के प्रसार और प्रतिकूल प्रभावों पर अंकुश लगाने की बात कही गयी है।

अनुच्छेद–5 के अनुसार राज्य विभिन्न मीडिया माध्यमों के जरिये एचआईवी/एड्स से संबंधित जानकारी का प्रसारण करेगा। अनुच्छेद–6 और अनुच्छेद–7 के अनुसार किशोरियों और महिला प्रभुता वाले घरों को लक्ष्य बनाकर विशेष शैक्षिक कार्यक्रम शुरू किये जायें और पर्यटकों को रोग की रोकथाम पर सामग्री उपलब्ध करायी जाये। अनुच्छेद–8 कहता है कि कारणों और रोकथाम के उपायों पर कामगारों, राजनयिकों और प्रशासनिक अधिकारियों के लिए कार्यशालायें आयोजित की जायेंगी। अनुच्छेद–12 एचआईवी/एड्स के बारे में किसी प्रकार के दुष्प्रचार अथवा गलत सूचना को पूरी तरह निषेध करता है। अनुच्छेद–11 कहता है कि वितरित किये जाने वाले अथवा बेचे जाने वाले निरोधात्मक उपकरणों पर उनके सही प्रयोग तथा एचआईवी/एड्स के विषय में विस्तृत जानकारी होनी चाहिये।

अनुच्छेद–14 में अधिनियम कहता है कि दान के लिए उपलब्ध रक्त अथवा अंगों का एचआईवी परीक्षण किया जायेगा। अनुच्छेद–16 के अनुसार रिश्तेदार अथवा दान दिये गये रक्त या अंग को प्राप्त करने वाले के पास वास्तविक रक्ताधान या प्रत्यारोपण से पहले पुनः परीक्षण कराने का अधिकार है। अनुच्छेद–19 कहता है कि संबंधित व्यक्ति की स्वैच्छिक और सूचित सहमति के बिना किसी प्रकार का एचआईवी परीक्षण नहीं कराया जा सकता। अनिवार्य एचआईवी परीक्षण अदालती आदेश पर ही कराया जायेगा। अनुच्छेद–20 रोजगार, शैक्षिक संस्थाओं में प्रवेश, निवास, यात्रा और चिकित्सा प्रावधानों तथा अन्य सेवाओं के उद्देश्य से एचआईवी परीक्षण को पूरी तरह निषिद्ध करता है। अनुच्छेद–33 में अधिनियम एचआईवी परीक्षण करा रहे व्यक्ति की गोपनीयता की गारंटी देता है। लेकिन अनुच्छेद–34 के अनुसार अपवाद स्वरूप अदालती आदेश का जवाब देते समय, आंकड़ों का संग्रह करते समय राज्य को सूचना उपलब्ध कराने तथा कानूनी अभिभावकों के मामले में किसी व्यक्ति के एचआईवी से ग्रस्त होने का खुलासा स्वास्थ्य कर्मचारियों के सामने किया जायेगा।

अनुच्छेद–36 किसी सार्वजनिक पद के लिए चयन समेत रोजगार प्रक्रिया के किसी भी चरण में किसी व्यक्ति के साथ उसकी अथवा उसके परिवार की किसी वास्तविक अथवा संभावित एचआईवी/एड्स स्थिति के आधार पर भेदभाव को साफ तौर पर निषिद्ध करता है। इन आधारों पर सेवा की समाप्ति पूरी तरह गैरकानूनी है। अनुच्छेद–37 के अनुसार कोई शिक्षण संस्था इन्हीं कारणों की वजह से किसी छात्र को प्रवेश देने से इंकार नहीं कर सकती, निष्कासित नहीं कर सकती, उसके खिलाफ अनुशासनात्मक कार्रवाई नहीं कर सकती, अलग–थलग नहीं कर सकती अथवा लाभ और सेवायें प्राप्त करने से नहीं रोक सकती। अनुच्छेद–38 कहता है कि एचआईवी/एड्स से पीड़ित व्यक्ति को यात्रा और निवास की स्वतंत्रता का पूरा अधिकार है। उन्हें उनकी अथवा उनके परिवार की वास्तविक अथवा संभावित एचआईवी/एड्स स्थिति के कारण अलग–थलग नहीं किया जा सकता और निवास के अधिकार से इंकार नहीं किया जा सकता।

एचआईवी से पीड़ित व्यक्तियों की सरकार द्वारा की जा रही देखभाल के संबंध में अधिनियम अनुच्छेद–24 में इच्छुक व्यक्तियों को परीक्षण से पूर्व और पश्चात् सलाह–मशविरे की सेवायें मुहैया कराने का प्रावधान करता है। एचआईवी/एड्स से पीड़ित सभी व्यक्तियों को अनुच्छेद–26 के अनुसार सभी सार्वजनिक स्वास्थ्य संस्थाओं में निःशुल्क प्राथमिक स्वास्थ्य सेवायें प्रदान की जायेंगी। अनुच्छेद–28 कहता है कि राज्य एचआईवी से पीड़ित व्यक्तियों को व्यावसायिक प्रशिक्षण और स्वयं सहायता समूह की गतिविधियां मुहैया करायेगा।

सिंगापुर

जब एचआईवी/एड्स समेत किसी भी संक्रामक रोग के प्रसार पर रोकथाम की बात आती है, तो यदि किसी चिकित्सक को किसी मरीज के संक्रामक रोग से ग्रस्त होने अथवा उस रोग से मर जाने की आशंका होती है, तो धारा–6 के अनुसार वह इस संबंध में चिकित्सा सेवा निदेशक को इसकी जानकारी देने के लिए बाध्य है। धारा–8 के अनुसार निदेशक संक्रामक रोग से पीड़ित होने की आशंका वाले किसी भी व्यक्ति को चिकित्सकीय परीक्षण कराने अथवा उसकी स्थिति की जानकारी देने के लिए बाध्य कर सकता है। अनुच्छेद–15 के तहत निदेशक को अपनी इच्छा के अनुसार ऐसी स्थिति में निश्चित समय के लिए ऐसे व्यक्ति को अलग–थलग रखने अथवा निगरानी में रखने के आदेश देने का भी अधिकार है।

धारा–21 के अनुसार निदेशक संक्रामक रोग से ग्रस्त व्यक्ति को ऐसे किसी व्यवसाय, व्यापार अथवा कारोबार का संचालन करने से रोक सकता है, जिसमें संक्रमण का प्रसार हो सकता है। यदि उसे लगता है कि कोई बैठक अथवा जनसभा करने से संक्रमण के प्रसार में तेजी आयेगी, तो धारा–20 के तहत उसे बैठक या जनसभा का आयोजन रोकने का भी अधिकार है। 'सिंगापुर का संक्रामक रोग अधिनियम' चिकित्सा सेवा निदेशक को अनेक अधिकार प्रदान करता है, लेकिन वह एचआईवी/एड्स के बारे में जागरूकता फैलाने, एचआईवी/एड्स से पीड़ित व्यक्तियों के साथ भेदभाव रोकने और उन्हें उपचार तथा देखभाल प्रदान करने के बारे में बमुश्किल कोई बात कहता है।

धारा–22 के तहत निदेशक एचआईवी/एड्स से पीड़ित किसी भी व्यक्ति को सलाह–मशविरे के लिए भेज सकता है अथवा सुरक्षा के उपाय अपनाने के लिए बाध्य कर सकता है। धारा–24 के अनुसार एचआईवी से पीड़ित व्यक्ति अंग अथवा रक्तदान नहीं कर सकता और ऐसी किसी भी गतिविधि में लिप्त नहीं हो सकता, जिससे एचआईवी/एड्स का प्रसार हो। यदि पीड़ित का यौन साथी उसकी एचआईवी स्थिति के बारे में नहीं जानता है, उसे इससे एचआईवी/एड्स संक्रमण के खतरे की जानकारी नहीं है और वह खुद यह खतरा उठाने के लिए राजी है, तो धारा–23 पीड़ित को यौन संबंध स्थापित करने से रोकती है।

धारा–25 कहती है कि किसी व्यक्ति के एचआईवी संक्रमित होने की बात जानने वाला कोई भी व्यक्ति उस व्यक्ति की सहमति अथवा अदालत के आदेश या निदेशक की अनुमति के बिना इसका खुलासा नहीं कर

सकता। वह ऐसा कर सकता है, यदि संक्रमित व्यक्ति ने अंग, वीर्य, स्तन से निकले दुग्ध अथवा रक्त का दान किया है। खुलासा ऐसे चिकित्सा कर्मी के सामने भी किया जा सकता है जो उस व्यक्ति का उपचार करेगा। इसके अलावा यौन अपराध का शिकार हुए व्यक्ति, पीड़ित के संबंधियों और आव्रजन अधिकारियों को भी इसकी जानकारी दी जा सकती है। धारा–25ए के अनुसार चिकित्सा अधिकारी किसी व्यक्ति के एचआईवी संक्रमित होने की जानकारी उसके वर्तमान और पूर्व यौन साथियों को दे सकता है यदि उसे लगता है कि यौन साथियों के भी इस बीमारी से ग्रस्त होने की तीव्र आशंका है और संक्रमित व्यक्ति साथियों को जानकारी देने से इंकार कर दे अथवा संक्रमित व्यक्ति को अधिकारी के इस कदम की जानकारी हो। जिस व्यक्ति को यह जानकारी दी जा रही है वह किसी और के आगे इसका खुलासा नहीं करेगा।

जिम्बाब्वे

जिम्बाब्वे में एचआईवी/एड्स के बारे में कानून जिम्बाब्वे श्रम संबंध (एचआईवी एवं एड्स) कानून है। इसकी धारा–3 में कहा गया है कि प्रत्येक रोजगार प्रदाता को अपने कर्मचारियों के सम्मुख एचआईवी/एड्स के संक्रमण और रोकथाम से संबंधित विभिन्न मुद्दों, सुरक्षित सेक्स की तकनीकों और यौन संक्रामक रोगों का खतरा कम करने वाली तकनीकों एवं सलाह–मशविरे के बारे में जानकारी रखनी चाहिये। धारा–4 में स्पष्ट रूप से कहा गया है कि कोई भी रोजगार प्रदाता रोजगार देने से पहले शर्त के रूप में एचआईवी परीक्षण के लिए बाध्य नहीं कर सकता और धारा–5 कहती है कि किसी भी कर्मचारी के लिए एचआईवी परीक्षण कराना अनिवार्य नहीं किया जा सकता और न ही उसे अपनी एचआईवी स्थिति बताने के लिए बाध्य किया जा सकता है। यदि किसी व्यक्ति को काम के दौरान एचआईवी/एड्स का संक्रमण हो गया है और कानूनन उसका खुलासा करना जरूरी है, तो उस व्यक्ति की लिखित सहमति के बाद ही ऐसा किया जा सकता है।

धारा–6 कहती है कि केवल एचआईवी/एड्स से पीड़ित होने के कारण प्रोन्नति, स्थानांतरण अथवा किसी अन्य प्रक्रिया में किसी व्यक्ति के साथ भेदभाव नहीं किया जा सकता और न ही इस कारण से उसे नौकरी से निकाला जा सकता है। धारा–7 कर्मचारियों को दिये जाने वाले व्यावसायिक तथा अन्य लाभों से एचआईवी पीड़ित व्यक्ति को वंचित किये जाने पर सख्त रोक लगाती है। यदि इस योजना के लिए अर्हता एचआईवी परीक्षण पर निर्भर करती है तो बीमारी से संबंधित शर्तें वही होंगी जो किसी प्राणघातक रोग के लिए होती हैं। ऐसी हालत में रोजगार प्रदाता को यह सुनिश्चित करना होगा कि उक्त कर्मचारी को परीक्षण से पहले और बाद में सलाह–मशविरा दिया जाये। यदि रोजगार प्रदाता इस प्रकार की योजना का संचालन करता है तभी वह परीक्षण के परिणाम जान सकता है।

धारा–8 के अनुसार एचआईवी संक्रमित कर्मचारी को किसी भी अन्य बीमार कर्मचारी के समान ही चिकित्सा अवकाश दिये जायेंगे। यदि किसी व्यक्ति को ऐसे क्षेत्र में काम पर लगाया जाता है जहां उसे एचआईवी/एड्स होने का खतरा है, तो रोजगार प्रदाता उसे खतरे के बारे में सही सूचना उपलब्ध करायेगा और उसे कम करने के लिए भी निर्देश देगा। रोजगार प्रदाता ऐसे कर्मचारियों को निःशुल्क निजी सुरक्षात्मक उपकरण भी मुहैया करायेगा। अंत में धारा–11 कहती है कि इस अधिनियम के प्रावधानों के विरुद्ध जाने वाला व्यक्ति आपराधिक कृत्य का दोषी होगा और उसे जुर्माने अथवा कारावास के रूप में दंडित किया जायेगा।

वेनेजुएला

एचआईवी/एड्स पर वेनेजुएला की नीति स्वास्थ्य एवं सामाजिक सहयोग मंत्रालय के प्रस्ताव संख्या एसजी–439 के रूप में 1994 में प्रभाव में आयी और यह मुख्य तौर पर एचआईवी परीक्षणों से संबंधित है। प्रस्ताव की धारा–1 कुछ ही हालात में एचआईवी परीक्षण की अनुमति देती है। सबसे पहले, एचआईवी परीक्षण महामारी के

अध्ययन के लिए कराये जा सकते हैं, जिनका समन्वय स्वास्थ्य अधिकारी केवल सांख्यिकीय अथवा विवरणात्मक उद्देश्य के लिए करेंगे। अध्ययन में हिस्सा लेने वालों को हर हाल में गोपनीयता कायम रखनी होगी।

रक्त, ऊतक, वीर्य और अंगदाताओं के भी एचआईवी परीक्षण किये जा सकते हैं। दाताओं को परीक्षण करने से पहले सूचना दी जायेगी और उनके नतीजे जब दूसरों को बताये जायेंगे तो गोपनीयता बनाये रखने के लिए सभी उपाय किये जायेंगे। अंत में बीमारी के लक्षण प्रदर्शित करने वाले व्यक्तियों की स्वतंत्र सहमति से चिकित्सक की देखरेख में उनके एचआईवी परीक्षण किये जा सकते हैं।

धारा–2 कहती है कि उक्त व्यक्ति की स्वतंत्र और स्वैच्छिक सहमति के बगैर एचआईवी परीक्षण कराना निषिद्ध है। रोजगार के लिए आवेदन अथवा नौकरी बरकरार रखने के मामले में ऐसे परीक्षण नहीं किये जा सकते। सीखने के लिए किसी संस्था में प्रवेश के सिलसिले में भी ये परीक्षण नहीं किये जा सकते। धारा–2 कहती है कि यदि एचआईवी परीक्षण से किसी व्यक्ति के निजी, सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक और सांस्कृतिक अधिकारों का हनन होता है तो परीक्षण नहीं कराये जा सकते।

उजबेकिस्तान

एचआईवी/एड्स के संदर्भ में उजबेक कानून 1999 में लागू हुआ। कानून का अनुच्छेद–9 एचआईवी/एड्स से पीड़ित व्यक्तियों को मानवीय उपचार का अधिकार देता है। उपचार के दौरान कानून में उल्लिखित प्रक्रिया के अनुसार निःशुल्क चिकित्सा सहायता और सामाजिक सुरक्षा प्रदान की जायेगी। 16 वर्ष से कम उम्र के व्यक्ति राज्य से मासिक लाभ प्राप्त करने के अधिकारी होते हैं। एचआईवी संक्रमित बच्चों के माता–पिता को काम से छुट्टी लेकर और अस्थायी विकलांगता लाभ पाते हुए अपने बच्चों के साथ रहने का अधिकार है।

अनुच्छेद–11 चिकित्सकों के बारे में है और कहता है कि एचआईवी पीड़ितों के उपचार के प्रावधान तथा रोग की रोकथाम के लिए अनुसंधान में संलग्न व्यक्ति कानून के अनुसार निश्चित लाभ पाने के अधिकारी हैं। यदि ऐसा व्यक्ति अपने काम के दौरान एचआईवी से ग्रस्त हो जाता है तो उनकी बीमारी को व्यावसायिक रोग माना जायेगा। अनुच्छेद–5 इस बात पर जोर देता है कि एड्स सेवा की मुख्य गतिविधि रोग के बारे में जन जागरूकता फैलाना है। राज्य का कर्तव्य एचआईवी/एड्स के प्रसार को रोकने के बारे में जनता को सूचना देना है। संबद्ध निकायों को चिकित्सा सामग्री, जैव द्रव्य और निदान तथा अनुसंधान कार्यों में प्रयुक्त अंग एवं ऊतकों के बारे में सूचना देना भी राज्य का काम है।

अनुच्छेद–4 कहता है कि एचआईवी/एड्स से पीड़ित व्यक्तियों को सामाजिक और दैनिक जीवन में सहायता प्रदान करना भी राज्य का काम है। कानून का अनुच्छेद–10 महज एचआईवी संक्रमित होने के कारण किसी व्यक्ति के श्रम करारों को रद्द करने, उसे नौकरी देने से इंकार करने और शैक्षिक संस्थाओं तथा चिकित्सा प्रतिष्ठानों में उसके पंजीकरण से इंकार करने पर रोक लगाकर उसके अधिकारों की रक्षा करता है। किसी संक्रमित व्यक्ति और उसके परिवार को रहने के अधिकार तथा अन्य वैध अधिकारों से वंचित करने पर भी यह अनुच्छेद रोक लगाता है। एचआईवी परीक्षण से गुजरने वाले व्यक्तियों की गोपनीयता कठोरता के साथ बरती जाती है। एचआईवी से ग्रस्त व्यक्ति को संबंधित कानूनों के अनुसार विकलांग व्यक्ति के समकक्ष रखा जाता है।

सीरिया

सीरिया में एचआईवी/एड्स पर नीति स्वास्थ्य मंत्रालय के आदेश संख्या 17/टी के रूप में 1991 में लागू की गयी। कानून की धारा–1 के अनुसार सीरिया में रहने के इच्छुक विदेशियों, हीमोफीलिया से ग्रस्त व्यक्तियों, संभावित रक्तदाताओं, तीन महीने से अधिक समय तक विदेश में रहकर आये सीरियाई नागरिकों और एचआईवी

संक्रमण की आशंका वाले व्यक्तियों के एचआईवी परीक्षण अनिवार्य हैं। धारा–2 के अनुसार ये परीक्षण मंत्रालय द्वारा मान्यता प्राप्त प्रयोगशालाओं में ही कराये जा सकते हैं। रिपोर्ट तीन महीने के लिए वैध होती हैं और उनकी सामग्री प्रयोगशाला में ही रहती है। धारा–3 कहती है कि निवासियों की निश्चित श्रेणियों को छोड़कर अन्य के लिए ये परीक्षण निःशुल्क कराये जायेंगे, बशर्ते वे जनहित में कराये जायें।

धारा–4 कहती है कि प्रयोगशाला प्रभारी सकारात्मक परिणाम वाले सभी आरंभिक परीक्षणों के बारे में गोपनीयता बरतते हुए मंत्रालय को सूचित करेगा। पुष्टि के लिए किये गये जिन परीक्षणों के परिणाम सकारात्मक होंगे, उनकी जानकारी प्राथमिक स्वास्थ्य सेवा निदेशालय के अंतर्गत एड्स नियंत्रण कार्यक्रम के निदेशक, संक्रामक रोगों की महामारी के अध्ययन विभाग के प्रमुख और एड्स एवं यौन संक्रामक रोग विभाग के प्रमुख को दी जायेगी। प्रयोगशाला की गतिविधियों के बारे में गोपनीय मासिक रिपोर्ट संदर्भ प्रयोगशाला प्रमुख के पास प्रस्तुत की जायेगी। प्रयोगशाला प्रभारी यह भी सुनिश्चित करेगा कि एचआईवी परीक्षण कराने वालों की पहचान और परीक्षण के परिणामों के बारे में पूरी तरह गोपनीयता बरती जायेगी।

धारा–7 में उन प्रयासों के बारे में प्रावधान दिये गये हैं, जो किसी व्यक्ति के एचआईवी संक्रमित होने की पुष्टि के बाद उठाये जायेंगे। संक्रमण की उत्पत्ति और अन्य व्यक्तियों में इसके संक्रमण के खतरे के बारे में जानकारी हासिल करने के लिए उक्त व्यक्ति का साक्षात्कार किया जायेगा। उसके बाद बीमारी से उसे पूरी तरह वाकिफ कराने, एचआईवी/एड्स से संबंधित सामाजिक समस्याओं से निपटने और अन्य लोगों में उसका संक्रमण रोकने के उपायों की जानकारी देने, स्वास्थ्य संबंधी खतरों और उचित उपचार की जानकारी देने के लिए उक्त व्यक्ति के साथ सलाह–मशविरा किया जायेगा। धारा–8 कहती है कि यदि कोई संक्रमित व्यक्ति इन प्रावधानों का पालन करने से इंकार कर देता है तो उसे अलग–थलग रखकर उसके खिलाफ कार्रवाई की जा सकती है।

धारा–9 के अनुसार राष्ट्रीय एड्स नियंत्रण समिति की मंजूरी के बिना कोई भी अधिकारी एचआईवी संक्रमित व्यक्ति के बारे में कोई कार्रवाई नहीं कर सकता। कानून की धारा–10 एड्स नियंत्रण कार्यक्रमों में संलग्न कर्मचारियों को उन सूचनाओं के बारे में पूरी गोपनीयता बरतने के लिए बाध्य करती है जो व्यावसायिक गतिविधियों के दौरान उन्हें प्राप्त हुई हैं। उक्त धारा यह सूचना केवल इसमें प्रत्यक्ष रूप से लिप्त व्यक्तियों को ही देने के लिए बाध्य करती है, बशर्ते उसका कानूनन सार्वजनिक खुलासा जरूरी न हो।

रूस

"रूसी संघ में ह्यूमन इम्यूनोडेफिशियेंसी वायरस द्वारा उत्पन्न रोग के प्रसार की रोकथाम" के बारे में कानून 1995 में पारित हुआ। अनुच्छेद–1 कहता है कि राज्य अपने नागरिकों को एचआईवी/एड्स की रोकथाम, उसकी रोकथाम की विधियों, निदान और उपचार की नियमित जानकारी, विषाणु का पता लगाने के लिए चिकित्सकीय परीक्षणों की उपलब्धता और परीक्षण से पूर्व तथा उसके पश्चात् सलाह–मशविरा, शैक्षिक पाठ्यक्रमों में नैतिक तथा यौन शिक्षा के समावेश, एचआईवी संक्रमित व्यक्तियों के लिए निःशुल्क चिकित्सा देखभाल और औषधियां, कर्मचारियों के प्रशिक्षण और एचआईवी संक्रमित व्यक्तियों को शिक्षा और रोजगार के संबंध में सहायता की गारंटी देगा।

अनुच्छेद–5 में कहा गया है कि एचआईवी संक्रमित व्यक्तियों को भी संविधान के अनुरूप अन्य रूसी नागरिकों के ही समान अधिकार और दायित्व प्राप्त हैं। अनुच्छेद–7 कहता है कि एचआईवी परीक्षण लाइसेंसयुक्त अस्पतालों में ही कराये जायेंगे। चिकित्सकीय जांच कराने वाले व्यक्ति को अपना कानूनी प्रतिनिधि साथ रखने का अधिकार है। परीक्षण से पहले और बाद में सभी व्यक्तियों के साथ मशविरा किया जाना चाहिये और सरकारी स्वास्थ्य केंद्रों में यह परीक्षण निःशुल्क कराया जाना चाहिये।

अनुच्छेद–8 के अनुसार अनुच्छेद–9 के प्रावधानों को छोड़कर सभी एचआईवी परीक्षण स्वैच्छिक होने चाहिये। अनुच्छेद–9 के मुताबिक कुछ व्यवसायों और संस्थाओं से जुड़े व्यक्तियों को एचआईवी परीक्षणों से हर हाल में गुजरना होगा (या तो निश्चित अवधि पर अथवा नौकरी के लिए आवेदन के समय) और इसी तरह रक्त, ऊतक, अंग और अन्य शारीरिक द्रव्यों का दान करने की योजना बना रहे व्यक्तियों को भी यह परीक्षण कराना होगा। अनुच्छेद–12 कहता है कि एक बार एचआईवी परीक्षण करा चुके व्यक्ति को उसी चिकित्सा संस्थान अथवा अपनी पसंद के किसी अन्य संस्थान में दोबारा परीक्षण कराने का अधिकार है, चाहे दोनों परीक्षणों के बीच समय का कितना भी अंतर हो।

अनुच्छेद–13 में कहा गया है कि एचआईवी/एड्स से ग्रस्त व्यक्ति को परीक्षण करने वाले स्वास्थ्यकर्मी के जरिये परिणाम और ऐहतियाती उपायों तथा अधिकारों के बारे में सूचित किया जाना चाहिये। अनुच्छेद–14 कहता है कि एचआईवी/एड्स से ग्रस्त व्यक्ति नागरिक स्वास्थ्य की सुरक्षा के बारे में रूसी संघ के कानून में उल्लिखित सभी अधिकारों का प्रयोग करेंगे और उन्हें सामान्य तौर पर सभी प्रकार की चिकित्सा सेवा दी जायेगी।

अनुच्छेद–17 किसी व्यक्ति के एचआईवी संक्रमित होने की स्थिति में उसे काम से बर्खास्त करने, किसी शैक्षिक संस्थान अथवा अस्पताल में प्रवेश से वंचित करने और रहने के अधिकार से वंचित करने से उसे या उसके परिवार के अधिकारों का हनन करने पर सख्ती से रोक लगाता है। अनुच्छेद–18 के अनुसार 15 वर्ष से कम उम्र के संक्रमित बच्चों के माता–पिता अथवा अभिभावकों को उपचार के दौरान अस्पताल में उनके साथ रहने और अपने रोजगार प्रदाता से भुगतान लेने का भी अधिकार है। माता–पिता में से किसी एक को उपचार स्थल तक निःशुल्क परिवहन सुविधा उपलब्ध करायी जायेगी और संक्रमित बच्चे की उम्र 18 वर्ष होने तक उसके माता–पिता को लगातार काम नहीं दिया जायेगा। यदि वे आवासीय स्थिति में सुधार चाहते हैं और एचआईवी संक्रमण वाला 18 वर्ष से कम उम्र का बच्चा उनके साथ रहता है तो उन्हें सरकारी आवास के आवंटन में भी वरीयता दी जायेगी।

अनुच्छेद–19 एचआईवी से ग्रस्त 18 वर्ष से कम उम्र के अवयस्क को वे सभी पेंशन, लाभ तथा विशेषाधिकार मुहैया कराता है जो अवैध बच्चे को मिलते हैं और उस बच्चे की देखभाल करने वाले को भी वे लाभ दिये जाते हैं जो अवैध बच्चे की देखभाल करने वाले को मिलते हैं। अनुच्छेद–20 कहता है कि चिकित्सा व्यवसायियों की लापरवाही के कारण एचआईवी/एड्स से संक्रमित हुए व्यक्ति रूसी नागरिक कानून के मुताबिक मुआवज़े की मांग कर सकते हैं। अनुच्छेद–21 कहता है कि एचआईवी/एड्स के निदान और उपचार अथवा अनुसंधान में संलग्न संस्थाओं के कामगार संक्रमण की स्थिति में अनिवार्य सरकारी बीमा के हकदार हैं। अनुच्छेद–22 ऐसे कामगारों को कार्य के घंटों में कटौती और अतिरिक्त वेतन जैसे कई विशेषाधिकार उपलब्ध कराता है।

बोलीविया

बोलीविया का संविधान और उसमें दिये गये कानून स्वास्थ्य के अधिकार और सामाजिक सुरक्षा के अधिकार को स्वायत्ततापूर्ण तथा मौलिक अधिकारों में शुमार करते हैं (अनुच्छेद–7)। इसके अलावा यह भी कहा जा सकता है कि इस संविधान में स्वास्थ्य को नागरिक अधिकार माना गया है, जिससे इंकार नहीं किया जा सकता। राज्य जनता और समाज के स्वास्थ्य के लिए उत्तरदायी है। वर्ष 1995 में अंगीकृत स्वास्थ्य संहिता के अनुसार "स्वास्थ्य जनहित की संपत्ति है और जनता के स्वास्थ्य की देखभाल करना राज्य का कर्तव्य है।" इसकी पुष्टि इस बात से भी होती है कि आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक अधिकारों की संधि समेत बोलीविया द्वारा अपनायी गयी सभी अंतर्राष्ट्रीय संधियों को संवैधानिक दर्जा मिला है और राष्ट्रीय अदालतों में उनका प्रत्यक्ष उल्लेख हो सकता है। अंत में संविधान का अनुच्छेद–19 'एम्पारो' नाम के संवैधानिक संरक्षण

का प्रावधान करता है। नागरिक स्वास्थ्य के अधिकार समेत संविधान में उल्लिखित अधिकारों और गारंटियों का उल्लंघन करने वाले अवैध कानूनों अथवा नागरिक संस्थाओं के अनुचित नियमों के खिलाफ राष्ट्रीय अदालतों में दावे कर सकते हैं।

कोलम्बिया

कोलम्बियाई संविधान और उसके कानूनों में स्वास्थ्य सेवा तथा अन्य सामाजिक सेवाओं के बारे में कई गारंटियां दी गयी हैं। संविधान का लक्ष्य खासतौर पर कोलम्बिया के सबसे कमजोर समूहों के लिए बुनियादी स्वास्थ्य एवं अन्य सामाजिक सेवायें सुलभ बनाने की गारंटी देना है।

कोलम्बियाई संविधान का अनुच्छेद–13[60] अपनी आर्थिक, शारीरिक अथवा मानसिक स्थितियों के कारण नाजुक परिस्थितियों में फंसे लोगों को समान उपचार और विशेष सुरक्षा के अधिकार देने का वायदा करता है। संविधान का अनुच्छेद–49[61] जन स्वास्थ्य और पर्यावरण संरक्षण के क्षेत्र में राज्य की जिम्मेदारी तय करता है। यह अनुच्छेद स्वास्थ्य के संवर्धन, सुरक्षा तथा संरक्षण के लिए सभी व्यक्तियों को चिकित्सा सेवायें सुलभ कराने की गारंटी देता है। यह भी निर्धारित किया गया है कि कानून वे शर्तें तय करेगा, जिनमें सभी निवासियों के लिए मौलिक स्वास्थ्य सेवा निःशुल्क और अनिवार्य होगी।

अल सल्वाडोर

अल सल्वाडोर में कानूनी प्रावधानों का एक निकाय है, जो स्वास्थ्य को रोग अथवा बीमारी की अनुपस्थिति तथा शारीरिक, मानसिक और सामाजिक रूप से पूर्ण कल्याण की स्थिति के रूप में परिभाषित करता है। ये प्रावधान स्वास्थ्य के अधिकार को स्वायत्त अधिकार के रूप में परिभाषित करते हैं। इसके अलावा अल सल्वाडोर के संवैधानिक कानून में स्वास्थ्य को राज्य का कर्तव्य बताया गया है और देश के विकास के लिए इसके संरक्षण तथा पुनर्वास को महत्वपूर्ण कारक मानकर बढ़ावा देने के प्रयास भी राज्य को करने चाहिये।

अंतर्राष्ट्रीय कानूनों के घरेलू इस्तेमाल के संदर्भ में अल सल्वाडोर के संविधान का अनुच्छेद–144 विधायिका को देश द्वारा हस्ताक्षरित अंतर्राष्ट्रीय संधियों के विपरीत कानून लागू करने से रोकता है। विवाद की हालत में ये संधियां राष्ट्रीय कानून से ऊपर मानी जायेंगी। इसलिए स्वास्थ्य के अधिकार के संदर्भ में मानवाधिकार संधियों के प्रावधानों को अदालतों के सामने न्यायोचित ठहराये जाने योग्य संवैधानिक दर्जा दिया जायेगा।

अल सल्वाडोर का संविधान उच्चतम न्यायालय और कुछ मामलों में अपीलीय अदालतों को गणराज्य के निवासियों के संवैधानिक अधिकारों की सुरक्षा की जिम्मेदारी देता है। कोई भी व्यक्ति संविधान द्वारा प्रदत्त अधिकारों के उल्लंघन के मामले में उच्चतम न्यायालय के सामने पेश होकर सुरक्षा की मांग कर सकता है। संवैधानिक प्रक्रियाओं पर कानून इन अधिकारों के प्रयोग की बात कहता है। संविधान के तहत प्रत्येक व्यक्ति को प्रदत्त अधिकारों के प्रयोग में बाधा उत्पन्न करने वाले किसी भी सरकारी अधिकारी के खिलाफ एम्पारो की याचिका दाखिल की जा सकती है।

कोस्टारिका

कोस्टारिका के संविधान, जिसकी समीक्षा अंतिम बार 2001 में की गयी थी, में स्वास्थ्य के अधिकार को किसी प्रकार की मान्यता नहीं दी गयी है। लेकिन इसमें कुछ न्यायिक नियम शामिल हैं, जो कोस्टारिका में स्वास्थ्य के

60 सभी व्यक्तियों ने स्वतंत्र स्थिति में जन्म लिया है और कानून के सामने सभी बराबर हैं तथा अधिकारियों से समान संरक्षण तथा व्यवहार के हकदार हैं, और वे लिंग, नस्ल, राष्ट्रीय अथवा पारिवारिक मूल, भाषा, धर्म, राजनीतिक विचार अथवा दर्शन के आधार पर भेदभाव के बिना समान अधिकार, आजादी और अवसरों के हकदार हैं।

61 जन स्वास्थ्य और पर्यावरण संरक्षण जन सेवायें हैं, जिनके लिए राज्य उत्तरदायी है। सभी व्यक्तियों को उन सेवाओं की गारंटी दी जाती है, जो जन स्वास्थ्य को बढ़ावा देती हैं, उनकी सुरक्षा और पुनर्वास करती हैं।

अधिकार और मानवाधिकारों की रक्षा का वायदा करते हैं। वास्तव में कोस्टारिका का राजनीतिक संविधान कहता है कि स्वास्थ्य नीतियां और उन सभी गतिविधियों के लिए योजना बनाना गणराज्य के राष्ट्रपति और स्वास्थ्य मंत्री की जिम्मेदारी है। दूसरी ओर संविधान का अनुच्छेद–73 कहता है कि स्वास्थ्य सेवाओं के लाभ सभी लोगों को स्वास्थ्य सेवायें देने के प्रभार वाली संस्था के रूप में काजा कोस्टारिकेंस डी सेगुरो सोशल (सामाजिक तंत्र) के जरिये दिये जायेंगे।

कोस्टारिका ने मानवाधिकारों पर विभिन्न अंतर्राष्ट्रीय उपाय जैसे मानवाधिकारों पर सार्वभौमिक घोषणा, अंतर्राष्ट्रीय आर्थिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक अधिकार संधि, मानवाधिकारों पर अमेरिकी संधि अथवा सैन जोस संधि और बाल अधिकार संधि भी अंगीकृत किये हैं। मानवाधिकारों के बारे में कोस्टारिका ने न केवल अपनी न्याय व्यवस्था में अंतर्राष्ट्रीय स्तर के विभिन्न समझौते शामिल किये हैं, बल्कि उसने लोगों के अधिकारों को उल्लंघन अथवा हनन से बचाने के लिए संस्थाओं की स्थापना के जरिये प्रणालियां भी तैयार की हैं। संवैधानिक अदालत और ओम्बुड्समैन कार्यालय इनमें से दो उदाहरण हैं जहां लोग अपने मौलिक अधिकारों की सुरक्षा कर सकते हैं। रोगी की बेरोकटोक और उपयुक्त देखभाल और अन्य मौलिक अधिकारों के बारे में नियम भी बनाये गये हैं, जो जीवन और स्वास्थ्य जैसे कीमती तत्वों की गारंटी देते हैं।

जर्मनी

जर्मनी में एचआईवी/एड्स से पीड़ित व्यक्तियों के लिए हालांकि कोई विशिष्ट कानून नहीं हैं, लेकिन संविधान के अनुच्छेद–1 और 2 निजता का अधिकार प्रदान करते हैं। इस संबंध में जर्मन संवैधानिक अदालत ने कहा है कि प्रत्येक व्यक्ति को यह तय करने का अधिकार है कि अपने बारे में कौन सी जानकारी वह दूसरों के साथ बांटना चाहता है। स्वनिर्धारण के अधिकार का इस्तेमाल निजी सूचना के खुलासे और उपयोग पर नियंत्रण के एचआईवी संक्रमित व्यक्ति के अधिकार की रक्षा करने के लिए किया गया है। लेकिन सार्वजनिक तथा निजी हित में इस अधिकार को सीमित किया गया है।

यदि कोई व्यक्ति एड्स अनुसंधान अथवा समाज कल्याण के क्षेत्रों में काम करते समय एचआईवी से संक्रमित होता है तो उसके संक्रमण को व्यावसायिक रोग माना जा सकता है। वह व्यक्ति व्यावसायिक रोगों के कानून के तहत लाभ, खासतौर पर व्यावहारिक पुनर्वास और अन्य लाभ, प्राप्त करने के लिए दावा कर सकता है। जर्मन सामाजिक संहिता के तहत एचआईवी/एड्स को विकलांगता माना गया है। इसके अतिरिक्त संक्रमित व्यक्तियों को भेदभाव के विरुद्ध विशेष कानूनी संरक्षण मिलता है। नौकरी की शुरुआत, प्रोन्नति और बर्खास्तगी के निर्देशों के बारे में किसी विकलांग कर्मचारी के साथ उसकी विकलांगता के कारण भेदभाव नहीं किया जा सकता है।

इसके अलावा जर्मन कानून के अनुसार विकलांग व्यक्ति अपने रोजगार प्रदाताओं से अनेक अधिकार पाने का दावा कर सकते हैं। वे ऐसे रोजगार की मांग कर सकते हैं जिनसे उनके कौशल और ज्ञान का सर्वाधिक उपयोग और विकास हो सके तथा व्यावसायिक प्रशिक्षण के लिए वे आंतरिक व्यवस्थाओं में वरीयता भी मांग सकते हैं। बाह्य प्रशिक्षण कार्यक्रमों में उनकी भागीदारी आसान बनायी जायेगी और प्रशिक्षण कार्यक्रम, कार्यकारी सुविधाओं, मशीन एवं उपकरणों, दिये गये कार्य के प्रारूप और कार्य के निर्धारित घंटों तथा दुर्घटना से बचाव के लिए कार्यस्थल पर स्थितियां उनके अनुकूल बनायी जायेंगी। अंत में विकलांग व्यक्तियों को तकनीकी कार्य में मदद के लिए जरूरत के अनुसार उपकरण मांगने का अधिकार प्राप्त है।

जर्मन सामाजिक संहिता की धारा–85 कहती है कि किसी विकलांग व्यक्ति को नौकरी से निकालने के लिए एकीकरण प्रशासन की पूर्व सहमति आवश्यक है। धारा–86 से धारा–92 तक की सभी धाराओं में अन्य प्रावधान हैं जो विकलांग कर्मचारियों को बर्खास्तगी के खिलाफ विशेष सुरक्षा प्रदान करते हैं। लेकिन ये धारायें नौकरी के छह महीने पूरे होने के बाद ही प्रभावी होती हैं।

जर्मनी में बीमा कानून सुनिश्चित करते हैं कि एचआईवी संक्रमित व्यक्ति स्वास्थ्य बीमा से वंचित न हो। कानून के मुताबिक सभी रोग कोषों को लाभों का एक मानक पैकेज देना होता है, जिसमें एम्बुलेंस समेत एक चिकित्सक कीं सतत् देखभाल और अस्पताल में देखभाल तथा दवायें शामिल हैं। लेकिन एचआईवी/एड्स के उपचार के सिलसिले में केवल विशिष्ट तौर पर बतायी गयी औषधियों का खर्च ही मिलता है, किसी प्रकार की अमान्य अथवा नयी औषधियों का खर्च इसमें शामिल नहीं होता।

कजाकस्तान

एड्स की रोकथाम के विषय में कजाकस्तान गणराज्य के कानून की धारा–5 कहती है कि सभी नागरिकों, विदेशियों और कजाकस्तान में रहने वाले राज्यविहीन लोगों को सरकारी अस्पतालों में स्वैच्छिक, गोपनीय और नाम छुपाकर एचआईवी परीक्षण कराने का अधिकार होगा। धारा–6 कहती है कि परीक्षण उसी स्थिति में अनिवार्य है जब यह मानने का पर्याप्त अधिकार हो कि अमुक व्यक्ति एचआईवी संक्रमित हो सकता है। पर यह धारा राजनयिक संगठनों तथा वाणिज्य दूतावास सेवाओं के सदस्यों को अनिवार्य परीक्षण से बरी कर देती है। एचआईवी संक्रमित व्यक्तियों को उनकी स्थिति के बारे में उन स्वास्थ्य प्रतिष्ठानों द्वारा लिखित जानकारी दी जायेगी, जिन्होंने परीक्षण किये हैं। परीक्षण से इंकार करने वाले अथवा एचआईवी संक्रमित विदेशी का प्रत्यर्पण कर दिया जायेगा।

कानून की धारा–7 एचआईवी से संक्रमित सभी नागरिकों और राज्यविहीन व्यक्तियों को दवाओं की निःशुल्क आपूर्ति और सरकारी स्वास्थ्य केंद्रों में निःशुल्क चिकित्सा का अधिकार एवं उपचार स्थल तक तथा वहां से घर तक परिवहन में हुए खर्चे की वापसी का अधिकार देती है। इस धारा में कहा गया है कि 16 वर्ष से कम उम्र वाले एचआईवी संक्रमित बच्चों को न्यूनतम वेतन का 80 प्रतिशत भत्ता मिलेगा और यदि 16 वर्ष से कम उम्र के एचआईवी संक्रमित बच्चे की देखभाल के लिए माता–पिता में से किसी एक को अपने काम से अवकाश लेना पड़ता है तो उसकी वरिष्ठता बरकरार रहेगी। इस धारा के अनुसार एचआईवी संक्रमित बच्चे के पास स्कूल में शिक्षा प्राप्त करने का अधिकार है। एचआईवी संक्रमित व्यक्ति को बर्खास्त करना, नौकरी देने से इनकार, स्कूल में प्रवेश से इनकार, आवास, रिश्तेदारों और निकट सहयोगियों के मामले में संक्रमित व्यक्ति के वैध अधिकारों पर प्रतिबंध लगाने पर रोक है।

धारा–8 कहती है कि एचआईवी से संक्रमित चिकित्सा तथा औषधकर्मी अपने मौजूदा काम से हटाये जायेंगे और उन्हें अन्य काम सौंपे जायेंगे। यह कहती है कि एचआईवी संक्रमित व्यक्ति रक्त, ऊतक अथवा अंगदान नहीं कर सकता। धारा–9 के अनुसार यदि अपने संक्रमण की जानकारी रखने वाला व्यक्ति जानबूझकर किसी अन्य व्यक्ति को संक्रमण के खतरे में डालता है अथवा जानबूझकर उस व्यक्ति को भी संक्रमित कर देता है तो कानून के तहत उस पर कार्रवाई की जायेगी। धारा–10 कहती है कि जिन चिकित्साकर्मियों और सेवा क्षेत्र में काम करने वाले व्यक्तियों की लापरवाही से किसी अन्य व्यक्ति को एचआईवी/एड्स का संक्रमण होता है तो उन पर भी कानून के अंतर्गत कार्रवाई की जायेगी।

स्वास्थ्य कर्मी और कोई अन्य, जो अपने काम के दौरान किसी व्यक्ति की एचआईवी अवस्था के बारे में जान गये हैं, धारा–11 के तहत उस व्यक्ति के बारे में गोपनीयता बरकरार रखेंगे। धारा–12 कहती है कि यदि अनुसंधान तथा सेवा क्षेत्रों में कार्यरत व्यक्ति काम करते समय एचआईवी से संक्रमित हो जाते हैं, तो उन्हें व्यावसायिक रोग से ग्रस्त माना जायेगा। धारा–13 के अनुसार जिन कर्मचारियों को काम के दौरान एचआईवी/एड्स का संक्रमण होने की आशंका है उन्हें अनिवार्य रूप से सरकारी बीमा की सुविधा दी जायेगी। किसी प्रकार के संक्रमण, रोग, अक्षमता और रोग के कारण मृत्यु की हालत में उन्हें एक तयशुदा

राशि अदा की जायेगी। धारा–14 के अनुसार ये कर्मचारी कई विशेषाधिकारों जैसे कम कार्य घंटे और पूरक मुआवजे के हकदार हैं।

ओमान

एक्वायर्ड इम्यूनोडेफिशियेंसी सिंड्रोम (एड्स) की रोकथाम के लिए राष्ट्रीय कार्यक्रम पर ओमान का मंत्रीस्तरीय प्रस्ताव 1990 में पारित किया गया था। उसकी धारा–1 कहती है कि संक्रामक रोगों की सूची के तहत् एड्स को भी संक्रामक रोग माना जायेगा। इस धारा में यह भी कहा गया है कि एड्स के सभी मामलों की जानकारी 24 घंटों के भीतर सरकार को दी जायेगी। धारा–2 के अनुसार सभी रक्तदाताओं को एचआईवी परीक्षण कराना पड़ेगा और स्वास्थ्य मंत्रालय की अनुमति और निगरानी के बगैर विदेश से रक्त अथवा रक्त के किसी तत्व का आयात नहीं किया जायेगा। आयात की हालत में यह शर्त होगी कि आयातित पदार्थों का एचआईवी परीक्षण किया जायेगा। एचआईवी परीक्षण के बिना किसी अंग का प्रत्यारोपण भी नहीं किया जायेगा। एचआईवी/एड्स के संक्रमण की अधिक आशंका वाले समूहों का भी परीक्षण होगा। धारा–3 जनता के बीच रोग के बारे में स्वास्थ्य जागरूकता फैलाने और इससे जुड़े तथ्यों को स्पष्ट करने तथा रक्तदान को बढ़ावा देने के लिए स्वास्थ्य शिक्षा मंत्रालय के अधीन एक राष्ट्रीय समिति की स्थापना की बात कहती है। धारा–4 के अनुसार एचआईवी से संक्रमित किसी भी विदेशी का प्रत्यर्पण कर दिया जायेगा।

वियतनाम

एचआईवी/एड्स पर वियतनामी नीति दो दस्तावेजों – एचआईवी/एड्स की रोकथाम और उसके विरुद्ध संघर्ष के अधिनियम तथा एचआईवी/एड्स की रोकथाम एवं उससे सुरक्षा के बारे में कानून लागू करने के निर्देशों पर सरकारी निर्णय में संकलित है।

अधिनियम के अनुच्छेद–4 में स्पष्ट तौर पर कहा गया है कि एचआईवी/एड्स से पीड़ित व्यक्तियों को भेदभाव से बचने का अधिकार है। उनका कर्तव्य है कि वे इस रोग के प्रसार पर रोक सुनिश्चित करने के लिए सभी कदम उठायें। रोजगार के बारे में अनुच्छेद–22 कहता है कि संक्रमित व्यक्तियों को उन क्षेत्रों में काम नहीं करने दिया जायेगा जहां उनसे एचआईवी/एड्स फैलने की आशंका है। अनुच्छेद–3 में जोर देकर कहा गया है कि प्रत्येक व्यक्ति और प्रत्येक संगठन को एचआईवी/एड्स के विरुद्ध अभियान का हिस्सा बनना होगा। अनुच्छेद–5, 7, 9, 11 और 12 में एचआईवी/एड्स के बारे में जागरूकता उत्पन्न करने तथा उसके फैलने के तरीकों, रोकथाम के उपायों और उससे संबंधित कानूनों के बारे में जनता को शिक्षित करने पर जोर दिया गया है। अनुच्छेद–8 कहता है कि स्कूलों के लिए अपने छात्रों को इस रोग की रोकथाम के बारे में जानकारी देना और ऐसी सूचना देना अनिवार्य है जिन्हें वे सांस्कृतिक मानदंडों, आयुवर्गों, लिंग और जातीय समूहों की रीति–रिवाजों के संदर्भ में समझ सकें।

किसी भी काम, जिससे एचआईवी/एड्स का प्रसार होता है– जैसे देह व्यापार अथवा नशीले पदार्थों का कारोबार आदि पर रोक है। अनुच्छेद–14 के मुताबिक रक्त, वीर्य, ऊतक अथवा अन्य मानव अंगों के दान के समय सभी चिकित्सा संस्थानों के लिए एचआईवी परीक्षण करना अनिवार्य है। अनुच्छेद–23 में कहा गया है कि किसी भी संक्रमित व्यक्ति के लिए अपने यौन साथी को अपनी स्थिति के बारे में बताना अनिवार्य है। अनुच्छेद–17 में सहमति और गोपनीयता के बारे में बात कही गयी है। इसमें चिकित्सा प्रतिष्ठान के "जिम्मेदार व्यक्ति" को एचआईवी/एड्स के संक्रमण की आशंका वाले व्यक्तियों का परीक्षण करने का अधिकार है। अनुच्छेद–18 "जिम्मेदार व्यक्ति" को रोगी की पत्नी, पति, परिजन, कार्यालय अथवा उसके स्वास्थ्य की देखभाल करने वाले व्यक्ति को यह बताने का अधिकार देता है कि रोगी एचआईवी/एड्स से संक्रमित है।

अधिनियम के अनुच्छेद–27 में ऐसे सभी व्यक्तियों और संगठनों को सम्मान प्रदान करने का भी प्रावधान है जिन्होंने एचआईवी/एड्स के विरुद्ध लड़ाई में महत्वपूर्ण उपलब्धियां हासिल की हैं। अनुच्छेद–21 के अनुसार एचआईवी/एड्स से संक्रमित व्यक्तियों का प्रत्यक्ष तौर पर प्रबंधन, देखभाल, जांच और उपचार करने वाले व्यक्तियों को व्यावसायिक खतरों से बीमा प्रदान करना राज्य का कर्तव्य है। 'निर्देशों पर सरकारी निर्णय' उन प्रयासों की बात कहता है जिनका पालन देश में लगभग प्रत्येक मंत्रालय को करना है, ताकि अधिनियम समुचित तरीके से लागू हो सके। अनुच्छेद–7 में यह भी कहा गया है कि एचआईवी संक्रमित व्यक्ति को कोई संक्रामक रोग होने पर सरकारी स्वास्थ्य केंद्रों पर उसका उपचार किया जायेगा।

स्वास्थ्य के अधिकार और एचआईवी/एड्स पर अंतर्राष्ट्रीय न्यायिक उद्घोषणायें

विभिन्न देशों में न्यायपालिका ने संवैधानिक प्रावधानों और अंतर्राष्ट्रीय कानून के जरिये स्वास्थ्य के अधिकार को मौलिक अधिकार घोषित किया है। उसने एचआईवी/एड्स से ग्रस्त लोगों को रोजगार और सेवाओं में भेदभाव से बचाने की भी व्यवस्था की है, लेकिन एचआईवी से ग्रस्त व्यक्तियों के लिए स्वास्थ्य का अधिकार एक नया और उभरता हुआ क्षेत्र है। अंतर्राष्ट्रीय संधियां जीवन के अधिकार और स्वास्थ्य के अधिकार के बीच संबंध को स्पष्ट करती हैं। इन अधिकारों के तहत यदि सरकार एड्स का उपचार उपलब्ध कराने में सक्षम है तो उसे जरूरतमंदों को यह उपचार मुहैया कराना होगा। कई देशों में न्यायिक प्रणाली ने सभी जरूरतमंद व्यक्तियों के लिए एड्स का उपचार सुनिश्चित करने हेतु इन अधिकारों को लागू किया है। विभिन्न देशों के स्वास्थ्य संबंधी न्यायिक उद्घोषणाओं को समझने के लिए दुनिया भर में विभिन्न अदालती मामलों की ओर देखना जरूरी है।

दक्षिण अफ्रीका में 1994 में रंगभेद समाप्त करने वाले बहुलतावादी और लोकतांत्रिक राज्य के मूल्यों को प्रतिबिंबित करने वाले स्वास्थ्य के अधिकार को संवैधानिक मान्यता प्रदान की गयी है। सुब्रमणि बनाम स्वास्थ्य मंत्री क्वाजुलू नटाल[62] में संवैधानिक अदालत 27(3) ने आपात चिकित्सा उपचार के अधिकार की तुलना जीवन के अधिकार के साथ करते हुए याचिकाकर्ता को निःशुल्क चिकित्सा उपचार की गारंटी प्रदान की।

डॉ. मोहिउद्दीन फारूक बनाम बंगलादेश एवं अन्य[63] में बंगलादेशी सुप्रीम कोर्ट ने देखा कि जब एक कंपनी द्वारा आयातित दूध पावडर की खेप का विभिन्न सरकारी विभागों ने परीक्षण किया तो उसमें स्वीकार्य सीमा से अधिक विकिरण निकला। इस पर कोर्ट ने इस दावे को बरकरार रखा कि यह खेप वापस भेजने के लिए आयातक को मजबूर नहीं करने की सरकारी अधिकारों की कार्रवाई से संभावित उपभोक्ताओं के जीवन के संवैधानिक अधिकार का उल्लंघन हो रहा है। कोर्ट ने कहा कि जीवन का अधिकार केवल जीवन अथवा अंगों की सुरक्षा तक ही सीमित नहीं है; बल्कि अन्य बातों के अलावा इसमें एक सामान्य मानव के स्वास्थ्य और सामान्य आयु की सुरक्षा भी शामिल है। उसने कहा कि यदि इस अधिकार को मानव निर्मित किसी हानिकारक वस्तु से खतरा होता है, तो अदालत राज्य को वह खतरा दूर करने के लिए बाध्य कर सकती है, चाहे उसमें अनुच्छेद–18 के तहत पोषण और जन स्वास्थ्य बेहतर करने की बाध्यता लागू न होती हो।

वाइसकोंटे, मैरिएला सेसिला बनाम अर्जेंटीना राज्य[64] में याचिकाकर्ताओं ने एक विशिष्ट बुखार से लोगों के स्वास्थ्य की रक्षा करने के अधिकार के संरक्षण की मांग करते हुए जनहित याचिका दायर की। अदालत ने आदेश जारी किया, जिसके अनुसार एक टीका बनाकर तथा मुहैया कराके अपने यहां की जनता के स्वास्थ्य की रक्षा करना राज्य के लिए अनिवार्य है। अदालत ने आगे कहा कि स्वास्थ्य के अधिकार के बारे में अंतर्राष्ट्रीय संधियों को संवैधानिक नियमों का दर्जा दिये जाने के कारण कोई भी व्यक्ति इससे संबंधित शिकायतें कर सकता है।

62 1997 (12) बीसीएलआर 1696
63 48 डीएलआर (1996) एचसीडी 438
64 (स्वास्थ्य विभाग) 2 जून 1998

श्री एक्स बनाम इंस्टीट्यूटो डी सेजुरोस सोशल्स (आईएसएस)[65] में कोलम्बियाई अदालत ने जीवन के अधिकार से जुड़े होने की स्थिति में स्वास्थ्य के अधिकार को मौलिक अधिकार मानते हुए निर्णय किया कि गंभीर रोगों से ग्रस्त लोगों के जीवन की स्थिति सुधारने के लिए आईएसएस के जरिये उन्हें पर्याप्त उपचार मुहैया कराने के लिए राज्य बाध्य है।

विलियम गार्सिया अल्वारेज बनाम काजा कोस्टारिकेंस डी सेजुरो सोशल में 1997 में कोस्टारिका के सुप्रीम कोर्ट ने एआरवी दवाओं को सुलभ बनाने का आदेश दिया और जीवन तथा स्वास्थ्य के अधिकारों की महत्ता को अपने निर्णय का आधार बनाया। उसने कहा, "यदि प्रत्येक आधुनिक राज्य में जीवन के अधिकार और स्वास्थ्य के अधिकार की विशेष रूप से रक्षा की जा रही है, तो इन दोनों अधिकारों के प्रयोग को प्रतिबंधित करने वाले किसी भी आर्थिक मापदंड का महत्व कम हो जाता है। जीवन के अधिकार के बगैर बाकी सभी अधिकार बेकार हो जाते हैं।"

इसी प्रकार 2001 में जोर्गे ओदिर मिरांदा कोर्तेज बनाम सल्वाडोरन इंस्टीट्यूट ऑव सोशल सिक्योरिटी के निदेशक मामले में ऐल सल्वाडोर के सुप्रीम कोर्ट ने कहा कि एचआईवी से ग्रस्त लोगों को मौत से बचाने और उनका जीवन स्तर सुधारने वाली एवीआर चिकित्सा तथा अन्य औषधियां प्रदान करना ऐल सबंडोरिन सरकार का कर्तव्य है। अदालत ने पाया कि यदि विशिष्ट देखभाल के पात्र किसी व्यक्ति को उक्त प्रकार की देखभाल नहीं मिलती है और उसके कारण उसे निम्न स्तर का जीवन व्यतीत करना पड़ता है अथवा उसकी मौत हो जाती है तो उसे संविधान द्वारा संरक्षित स्वास्थ्य के अधिकार और उससे भी ज्यादा जीवन के अधिकार पर हमला माना जायेगा। राज्य के त्वरित और प्रभावी हस्तक्षेप तथा मदद से किसी व्यक्ति को स्वास्थ्य का अधिकार देना अंततः गरिमा के साथ जीवन की अवधि बढ़ाने का प्रयास माना जायेगा। गरिमा एक सिद्धांत है, जो पूरी न्याय व्यवस्था से जुड़ा है और जीवन एक अधिकार है, जो अन्य अधिकारों के अस्तित्व का मूल है।"

दक्षिण अफ्रीकी संवैधानिक अदालत ने ट्रीटमेंट ऐक्शन कैम्पेन बनाम स्वास्थ्य मंत्री एवं अन्य[66] में कहा कि 'न्यूनतम को परिभाषित करना आसान नहीं है, लेकिन इसका अर्थ मानवीय गरिमा के साथ जीवन की न्यूनतम मर्यादा है। किसी भी व्यक्ति को गरिमामय मानवीय अस्तित्व के मौलिक स्तर से निम्न जीवन जीने के लिए विवश नहीं किया जाना चाहिये।'

एनएन बनाम ला कॉरपोरेसियां डेल सेजुरा सोशल मिलिटार (कॉसमिल)[67] में बचाव पक्ष के डेल पुएब्लो ने कॉसमिल द्वारा एचआईवी की औषधियों का खर्च लौटाये जाने की प्रक्रिया में किसी प्रकार की बाधा रोकने के लिए एचआईवी संक्रमित व्यक्तियों की ओर से एक मुकदमा दायर किया। उसमें सुप्रीम कोर्ट ने निर्णय दिया कि जीवन के अधिकार से संबंधित स्वास्थ्य के अधिकार को संवैधानिक दर्जे वाला मौलिक अधिकार माना जाये। इस प्रकार यह निम्न दर्जे के अन्य सभी कानूनों से ऊपर माना जायेगा। अदालत ने सैन्य सामाजिक संस्थान को सामाजिक सुरक्षा नियम की परवाह किये बिना दवायें उपलब्ध कराते रहने का आदेश दिया।

श्री अलोंसो मुनोज सेबालॉस बनाम इंस्टीट्यूटो डी सेजुरोस सोशल्स (आईएसएस)[68] में संवैधानिक अदालत ने आदेश दिया कि एड्स से पीड़ित इस कर्मचारी को कुछ निश्चित स्वास्थ्य सेवायें प्राप्त करने का अधिकार है। घरेलू और अंतर्राष्ट्रीय कानून के संदर्भ में स्वास्थ्य के अधिकार की काफी चर्चा की गयी। अदालत का विचार था कि अंतर्राष्ट्रीय आर्थिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक अधिकार संधि के अनुच्छेद–12 का पालन करने

65 संवैधानिक अदालत, निर्णय संख्या टी 271 (23 जून 1995)
66 (2002) 5 एसए 721 (सीसी)
67 बोलीवियाई उच्च न्यायालय, सलाह संख्या 2002–05354–10, 8 जनवरी 2003–12–16
68 कोलम्बिया की संवैधानिक अदालत टी–484, 11 अगस्त 1992 (कोलम्बिया)

के लिए ही संविधान में स्वास्थ्य के अधिकार के प्रावधान शामिल किये गये हैं। अदालत ने कहा कि स्वास्थ्य के अधिकार के दो आयाम हैं : जीवन के अधिकार (अनुच्छेद–11 कोलंबियाई संविधान) के संदर्भ में यह स्वास्थ्य के लिए खतरों के मामले में मौलिक अधिकार बन जाता है; और यह सार्वजनिक स्वास्थ्य संस्थाओं में प्रवेश, अस्पताल में भर्ती होने, चिकित्सा जांच कराने तथा उपचार के मामले में सामाजिक अधिकार बन जाता है। अदालत ने कहा कि राज्य को वे स्वास्थ्य सेवायें मुहैया करानी होंगी जो मौलिक मानी जाती हैं।

भारतीय कानून

इस तथ्य के बावजूद कि अंतर्राष्ट्रीय समुदाय ने मानवाधिकारों के महत्व को स्वीकार किया है किसी भी अधिकार की गारंटी राज्य की मुख्य जिम्मेदारी है और उनका कर्तव्य है कि वे अधिकारों को अमली जामा पहनायें। स्वास्थ्य के अधिकार की गारंटी देने की भारतीय न्याय व्यवस्था की क्षमता को भारतीय संविधान और संवैधानिक प्रावधानों की भारतीय उच्चतम न्यायालय द्वारा की गयी रचनात्मक व्याख्या में देखा जा सकता है।

भारतीय संविधान परंपरागत आर्थिक और राजनीतिक अधिकारों की तुलना में सामाजिक अधिकारों और समाज कल्याण की प्रमुखता तथा समानता की बात कहता है। सामाजिक न्याय और जनता का कल्याण संविधान के केंद्रीय तत्व हैं, जैसे मानवाधिकार और सामाजिक अधिकार मौलिक अधिकारों और दिशा निर्देशक सिद्धांतों में भी पाये जाते हैं। भाग 3 में उल्लिखित मौलिक अधिकार संविधान के अंतर्गत न्यायोचित ठहराये गये हैं, लेकिन दिशा निर्देशक सिद्धांत न्याय सीमा की परिधि से बाहर हैं और उनका पालन नहीं करने पर राज्य के खिलाफ किसी प्रकार का दावा नहीं किया जा सकता। भाग 4 में उल्लिखित दिशा निर्देशक सिद्धांतों को संविधान का अनुच्छेद–37[69] विशेष तौर पर न्याय सीमा की परिधि से परे बताता है तथा क्रियान्वयन के दायरे से बाहर रखता है। उच्चतम न्यायालय[70] ने शिक्षा के अधिकार पर एक मामले में देखा कि 'भाग तीन और चार के प्रावधान एक दूसरे के पूरक हैं और उन्हें एक दूसरे से अलग नहीं किया जा सकता तथा मौलिक अधिकार भाग 4 में दिये गये लक्ष्यों की प्राप्ति के साधन मात्र हैं।' पूर्व मुख्य न्यायाधीश न्यायमूर्ति भगवती ने दिशानिर्देशक सिद्धांतों को जनता के सामाजिक तथा आर्थिक अधिकारों का समूह बताया, जिसमें सामाजिक न्याय नये संवैधानिक ढांचे की केंद्रीय विशेषता है।'[71]

उच्चतम न्यायालय लगातार यह कहता है कि जिन अधिकारों की गारंटी दी गयी है उनसे वंचित किये जाने पर न्यायिक हस्तक्षेप आवश्यक है और उन अधिकारों के क्रियान्वयन के लिए व्यवस्था प्रदान करना अदालत का दायित्व है। इसके कारण जनहित याचिकायें दाखिल करने के पूरे अवसर बनते हैं।

वर्ष 1960 के दशक में न्यायालय ने कहा था कि भारतीय नागरिकों में से अधिकतर को उनके संवैधानिक अधिकारों से एक सोची–समझी प्रक्रिया के तहत वंचितकर शक्तिहीन किया जा रहा है। इस हनन को रोकने के लिए न्यायालय ने इन सामाजिक जरूरतों के संदर्भ में संविधान और उसमें किये गये वायदों की व्याख्या आरंभ कर दी। इसके अतिरिक्त अदालत ने देखा कि संवैधानिक अधिकारों में भारतीय नागरिकों के लिए सार्थक और मान्य तथ्य होने चाहिये। परिणामस्वरूप न्यायालय ने कहा कि राज्य अपने संवैधानिक कर्तव्यों के तहत व्यक्तियों को सामाजिक तथा आर्थिक सशक्तिकरण और सामाजिक आर्थिक न्याय प्रदान करे। इतना ही नहीं, न्यायालय ने देखा कि आर्थिक सशक्तिकरण, सामाजिक न्याय और व्यक्तिगत गरिमा संविधान के अंतर्गत मौलिक अधिकार हैं, जिनका संरक्षण सरकार और न्यायालय को करना चाहिये। भारतीय नागरिकों

69 इस भाग में उल्लिखित प्रावधान किसी भी अदालत द्वारा लागू नहीं किये जायेंगे, लेकिन उसमें दिये गये सिद्धांत देश के प्रशासन में मौलिक माने जायेंगे और कानून बनाते समय उन सिद्धांतों का इस्तेमाल राज्य का कर्तव्य है।

70 उन्नीकृष्णन जे पी बनाम आंध्र प्रदेश राज्य, एआईआर 1993 एससी 2178

71 देखें पी. एन. भगवती, न्यायिक सक्रियता तथा जनहित याचिका, कोलम्बिया यूनिवर्सिटी स्कूल ऑव लॉ में संबोधन (3 अक्टूबर, 1984), 23वां कॉलम। जे. ट्रांसनेशनल 561, 569 (1985) शाह द्वारा सं. 216 में उल्लिखित।

के सशक्तिकरण के मामले में न्यायपालिका की ओर से सर्वाधिक अनुकूल प्रतिक्रिया सामाजिक अधिकारों को लागू होने योग्य कानूनी गारंटी बनाने के रूप में सामने आयी। न्यायालय को महसूस हुआ कि जीवन का अधिकार जैसे मौलिक अधिकार तभी सार्थक होते हैं जब किसी व्यक्ति को मानवीय गरिमा के साथ जीने का अवसर दिया जाता है।[72] इससे न्यायालय ने माना कि राज्य को यह सुनिश्चित करना चाहिये कि नागरिकों को अनिवार्य सामाजिक एवं आर्थिक सेवाओं के प्रावधानों के जरिये अपने सामाजिक वातावरण को बेहतर बनाने और उस पर नियंत्रण करने का प्रत्येक अवसर मिले।[73] भारत में स्वास्थ्य के अधिकार की मान्यता पर सबसे गहरा प्रभाव इन महत्वपूर्ण मान्यताओं का पड़ा कि प्रत्येक व्यक्ति को गरिमा के साथ जीने का अधिकार है और राज्य उसे समुचित सामाजिक हालात मुहैया करायेगा।[74] न्यायिक समीक्षा के अपने अधिकार के इस्तेमाल में न्यायालय ने संविधान के अनुच्छेद–21 के तहत प्रदत्त जीवन के अधिकार को बदलकर और संविधान के अनुच्छेद–48–ए तथा 51 ए(जी) की व्याख्या करके दुर्बलों के लिए संवैधानिक तथा वैध अधिकार लागू किये। भारतीय उच्चतम न्यायालय के पास मौलिक अधिकारों से संबंधित मामलों की सुनवाई का अधिकार है।[75] मौलिक अधिकारों के संरक्षण के मामलों में उच्चतम न्यायालय अंतिम मध्यस्थ है और अधिकारों के क्रियान्वयन के संबंध में भी उसके पास ही व्यापक अधिकार हैं। दिशा निर्देशक सिद्धांतों से न्यायालय को संविधान और मौलिक अधिकारों की व्याख्या में मदद मिलती है। न्यायालय संविधान के तहत दिशा निर्देशक सिद्धांतों का संज्ञान लेने के लिए बाध्य है और मौलिक अधिकारों का दायरा तथा अर्थ परिभाषित करने तथा सरकारी कार्रवाई का मूल्यांकन करने में उसने इनका इस्तेमाल किया है। यह वर्ग भारतीय संविधान का सबसे गतिशील और रचनात्मक हिस्सा बन गया है और उसने स्वास्थ्य के अधिकार जैसे सामाजिक अधिकारों के क्रियान्वयन में सहायता की है।[76]

स्वास्थ्य का अधिकार

न्यायालय ने जनहित याचिकाओं के अंतर्गत अपने अधिकार का विकास किया है[77] और संविधान में मौजूद जीवन के अधिकार के प्रावधान का इस्तेमाल कर राज्य को सामाजिक सेवायें मुहैया कराने के लिए बाध्य किया है। अनुच्छेद–21 में कहा गया है, "किसी भी व्यक्ति को कानूनी कार्यवाही के अलावा उसके जीवन अथवा व्यक्तिगत स्वतंत्रता से वंचित नहीं किया जायेगा।"[78] न्यायालय ने अनुभव किया कि जीवन का अधिकार निरर्थक है यदि उसके साथ उन सामाजिक अधिकारों की गारंटी न दी जाये जो सभी को गरिमा के साथ जीवन जीने के समान अवसर प्रदान करते हैं।

---

72 बंधुआ मुक्ति मोर्चा, ए. आई. आर. 1984 एस. सी. 802, 811

73 देखें मोहिनी जैन बनाम कर्नाटक राज्य, 3 एस. सी. जे. 152, 156 (1992)

74 इल्युमिनेटिंग द पॉसिबल इन द डेवलपिंग वर्ल्ड : गारंटींग द ह्यूमन राइट टु हेल्थ इन इंडिया : वांडरबिल्ट जर्नल ऑव ट्रांसनेशनल लॉ; मार्च, 1999; शीतल बी. शाह

75 भारत के संविधान के अनुच्छेद–32 के अंतर्गत उच्च न्यायालय में रिट याचिका दाखिल की जा सकती है और मानवाधिकारों का पालन कराने के लिए न्यायालय को निर्देश अथवा आदेश अथवा रिट जारी करने का अधिकार होगा, जिनमें हेबियस कॉर्पस (बंदी को अदालत में बुलाने की रिट), मैंडेमस (निचली अदालतों को रिट), निषेध और वारंट शामिल होंगे।

76 इल्युमिनेटिंग द पॉसिबल इन द डेवलपिंग वर्ल्ड : गारंटींग द ह्यूमन राइट टु हेल्थ इन इंडिया : वांडरबिल्ट जर्नल ऑव ट्रांसनेशनल लॉ; मार्च, 1999; शीतल बी. शाह

77 मानवाधिकार न्याय विधि और पर्यावरण न्याय विधि के आधार पर उच्चतम न्यायालय की पहल पर भारत में जनहित याचिका (पीआईएल) की शुरुआत हुई। अब सार्वजनिक हित के मुकदमों के लिये कानूनी आधार की परम्परागत अवधारणा की रुकावटें समाप्त हो गई। अब कोई पीड़ित पक्ष, जनहित के कार्य करने को इच्छुक नागरिक समूह या स्वैच्छिक संगठन (एनजीओ) पीआईएल के माध्यम से उच्चतम न्यायालय के दरवाजे खटखटा सकते हैं। उच्चतम न्यायालय ने इन याचिकाओं का संज्ञान लेते हुये प्रक्रियाओं में और ढील देते हुये राहत या न्याय पाने के लिये अदालत के समक्ष औपचारिक रिट याचिका की जरूरत में छूट दे दी। कोई भी नागरिक खासतौर पर मानवाधिकार के मामले में केवल एक साधारण पोस्टकार्ड लिखकर अदालत से न्याय की गुहार कर सकता है।

78 भारतीय संविधान का अनुच्छेद–21, 1950

अनुच्छेद–47, जो एक दिशा निर्देशक सिद्धांत है, सरकार को नागरिक स्वास्थ्य बेहतर करने का निर्देश देते हुए कहता है, "राज्य अपनी जनता के पोषण के स्तर और जीवन स्तर को सुधारने तथा नागरिक स्वास्थ्य में सुधार को अपना प्राथमिक कर्तव्य माने।" अनुच्छेद–21, जो मौलिक अधिकार है, में कहा गया है, "किसी भी व्यक्ति को कानूनी कार्यवाही के अलावा किसी भी स्थिति में उसके जीवन अथवा व्यक्तिगत स्वतंत्रता से वंचित नहीं किया जायेगा।" अनुच्छेद–47 का न्यायिक प्रयोग हालांकि कम होता है; लेकिन दोनों अनुच्छेद मिलकर आईसीईएससीआर, आईसीसीपीआर और अन्य अंतर्राष्ट्रीय संधि आदि में दिये गये अंतर्राष्ट्रीय मानवाधिकार मानदंडों के समकक्ष संवैधानिक अधिकार बनाते हैं। इन संधियों पर या तो भारत ने हस्ताक्षर किये हैं या उन्हें स्वीकार किया है।

वर्ष 1981 के आरंभ में फ्रांसिस मुलिन बनाम केंद्रशासित प्रदेश दिल्ली में उच्चतम न्यायालय ने जीवन के अधिकार की विस्तृत व्याख्या कर "मानवीय गरिमा के साथ जीने और उसके साथ जुड़ी आधारभूत आवश्यकताओं जैसे पर्याप्त पोषण, वस्त्र और आश्रय के अधिकार"[79] को भी उसमें शामिल किया है। बाद के मामलों में जीवन के अधिकार की जो पुष्टि की गयी उसके संदर्भ में दिशा निर्देशक सिद्धांतों और "सार्थक तथा जीने योग्य जीवन" के लायक सक्षम वातावरण मुहैया कराने के लिए आधारभूत आवश्यकताओं के प्रावधानों की ओर संकेत करते हुए एक सिद्धांत तय किया गया। न्यायालय ने इस अधिकार को महज "जीवन यापन अथवा प्राणी के अस्तित्व"[80] से अधिक माना। न्यायालय ने अगला तार्किक कदम उठाया और स्वास्थ्य के अधिकार को जीवन के अधिकार और मानवीय गरिमा के साथ जीवन यापन करने के अधिकार का आवश्यक तत्व माना।[81] उसने गैर न्यायिक दिशा निर्देशक सिद्धांतों को न्यायिक मौलिक अधिकारों में मिलाकर ऐसा किया और कहा कि "(एफ) स्वास्थ्य का अधिकार......(ए) जीवन के सार्थक अधिकार का अभिन्न हिस्सा है।"[82]

मुलिन के बाद से गैर न्यायिक स्वास्थ्य नीति और अपने नागरिकों का स्वास्थ्य सुनिश्चित करने की राज्य की जिम्मेदारी का स्थान एक विकासशील न्यायिक दूरदर्शिता ने ले लिया है, जिसमें राज्य को स्वास्थ्य, जीवन और अंत में मानवीय गरिमा के विकास के लिए उपयुक्त सामाजिक स्थितियां मुहैया कराने के लिए बाध्य किया जाता है। स्वास्थ्य के अधिकार को सबल करने से संकेत मिलता है कि कानून स्वास्थ्य सेवाओं की पर्याप्त सुलभता के अधिकार के उल्लंघन की आशंका को महसूस करता है और स्वास्थ्य के संरक्षण की मांग करने वाली याचिका के लिए शक्तिशाली माध्यम भी मुहैया कराना चाहता है।

उच्चतम न्यायालय ने यह मानने के बाद कि संविधान के अनुच्छेद–21 में जीवन का मौलिक अधिकार मानवीय गरिमा के मूल्य पर जोर देता है, भारतीय नागरिकों के मौलिक अधिकार के रूप में स्वास्थ्य की महत्ता पर विचार करना शुरू कर दिया। इस वर्ग में अनुच्छेद–47[83] में स्वास्थ्य के अधिकार के इस्तेमाल में राज्य के हित को मान्यता दी गयी। अनुच्छेद–47 कहता है कि नागरिक स्वास्थ्य में सुधार को राज्य के मौलिक कर्तव्यों में शुमार किया जाना चाहिये। अनुच्छेद–47 के साथ–साथ, स्वास्थ्य के अधिकार को दिशा

---

79 फ्रांसिस मुलिन, (1981) 2 एस. सी. आर. 629 पर

80 डा. अशोक बनाम भारत संघ, (1997) 5 एससीसी 10, बंधुआ मुक्ति मोर्चा, एआईआर 1984 एससी 802, 811

81 शाह 476 पर

82 शाह 476 पर

83 सार्वजनिक स्वास्थ्य, लोगों के जीवन स्तर तथा पोषण में सुधार लाने की जिम्मेदारी सरकार की है। सरकार अपने प्राथमिक दायित्वों में लोगों के जीवन स्तर तथा पोषण स्तर में सुधार लाने तथा सार्वजनिक स्वास्थ्य में सुधार लाने को शामिल करेगी और खासतौर पर सरकार चिकित्सकीय उद्देश्यों को छोड़कर स्वास्थ्य के लिये नुकसानदायक मादक पेय और नशीले द्रव्यों के सेवन पर रोक लगाने के लिये कदम उठायेगी।

निर्देशक सिद्धांतों के अनुच्छेद–38[84], 39 (ई)[85], 41[86] और 48 ए[87] में भी जगह दी गयी है। कई मामलों में उच्चतम न्यायालय ने स्वास्थ्य की देखभाल के मसले को मौलिक अधिकार के समकक्ष माना है और राज्य को न केवल आपात चिकित्सा सुविधा मुहैया कराने बल्कि मौलिक उपचारात्मक एवं निरोधात्मक स्वास्थ्य सेवाओं समेत अच्छे स्वास्थ्य के लिए आवश्यक हालात बनाने के लिए भी बाध्य किया है। न्यायालय नागरिकों को मौलिक स्वास्थ्य सेवायें और स्वास्थ्य लाभ उठाने के लिए अनिवार्य सामाजिक हालात मुहैया कराने के लिए राज्य को बाध्य करता है।

बंधुआ मुक्ति मोर्चा बनाम भारत गणराज्य[88] में न्यायालय ने स्वास्थ्य लाभ के लिए आवश्यक सामाजिक स्थितियों के प्रकार के बारे में कहा। इस मामले में पत्थर की खदानों में काम करने वाले मजदूरों को अमानवीय जीवन एवं काम की शर्तों के कारण जीवन के अधिकार से वंचित किया जा रहा था। न्यायालय ने कहा कि मानवीय गरिमा के साथ जीवन यापन करने के अधिकार में व्यक्तियों के स्वास्थ्य की सुरक्षा भी शामिल है। उसने यह भी कहा कि मानवीय गरिमा के साथ जीने के अधिकार की गारंटी के लिए राज्य को स्वास्थ्य लाभ हेतु आवश्यक स्थितियां भी मुहैया करानी चाहिये। न्यायालय के अनुसार कामगारों के स्वास्थ्य की रक्षा के लिए सरकार को उन्हें स्वच्छ पेयजल, स्वच्छता की सुविधायें और चिकित्सा सुविधायें उपलब्ध करानी चाहिये।

उपभोक्ता शिक्षा एवं अनुसंधान केंद्र एवं अन्य बनाम भारत गणराज्य[89] में न्यायालय ने कहा कि स्वास्थ्य का अधिकार और स्वास्थ्य की रक्षा के लिए चिकित्सा सहायता मौलिक अधिकार है और स्वास्थ्य का अर्थ रोगमुक्ति से अधिक है। एक अन्य मामले में उच्चतम न्यायालय ने दोहराया कि स्वास्थ्य का अधिकार जीवन के अधिकार से अलग नहीं है और स्वास्थ्य सुविधायें मुहैया कराना सरकार की संवैधानिक बाध्यता है।[90]

एक अन्य मामले में न्यायालय ने कहा कि अनुच्छेद–21 में उल्लिखित अधिकार नागरिकों के स्वास्थ्य की गारंटी लेने की जिम्मेदारी राज्य पर डालता है। इस कर्तव्य की पुष्टि अनुच्छेद–47 में की गयी है और यह राज्य की सबसे जरूरी बाध्यताओं में है।[91] इसी प्रकार उच्चतम न्यायालय ने कहा कि चिकित्सा एवं स्वास्थ्य सेवायें केवल बीमारी से नहीं बचाती हैं बल्कि आर्थिक विकास के लिए स्थायी मानवशक्ति भी सुनिश्चित करती है। न्यायालय ने यह भी कहा कि स्वास्थ्य की देखभाल एक अनिवार्य संवैधानिक लक्ष्य है।[92]

डॉ. अशोक बनाम भारत सरकार[93] में न्यायालय ने कहा कि संविधान के अनुच्छेद–21 के अंतर्गत जीवन के अधिकार का अर्थ महज जीवन यापन अथवा अस्तित्व से अधिक है। इसके विपरीत इसमें वह सभी कुछ शामिल है जो मानव की विरासत से लेकर उसके स्वास्थ्य तक उसके जीवन को अर्थ देता है और उसकी

---

84 सरकार लोगों के कल्याण को बढ़ावा देने के लिये एक सामाजिक व्यवस्था सुनिश्चित करेगी– 1. सरकार कोई न्यायिक, सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक व्यवस्था को कारगर तरीके से सुनिश्चित करके तथा उन्हें संरक्षित रख कर जनकल्याण को बढ़ावा देने के लिये प्रयासरत रहेगी। 2. सरकार विशेष तौर पर न केवल व्यक्तियों बल्कि विभिन्न क्षेत्रों में रहने वाले तथा विभिन्न तरह के पेशों से जुड़े समूहों के खिलाफ मौजूद आमदनी में विषमताओं को कम से कम करने की कोशिश करेगी तथा स्थितियों, सुविधाओं एवं अवसरों में असमताओं को दूर करने का प्रयास करेगी।

85 सरकार को कुछ नीति सिद्धांतों का पालन करना होगा। सरकार को खासतौर पर इन बातों को सुनिश्चित करने के लिये नीतियां बनानी होंगी ताकि श्रमिकों, पुरुषों और महिलाओं के स्वास्थ्य एवं शक्ति का संरक्षण हो, छोटे बच्चों का शोषण न हो तथा आर्थिक मजबूरियों के चलते नागरिकों को ऐसे काम करने के लिये मजबूर न होना पड़े जो उनकी उम्र या क्षमता के हिसाब से अनुकूल नहीं है।

86 काम, शिक्षा, और कुछ मामलों में सार्वजनिक सहयोग के अधिकार – सरकार आर्थिक क्षमताओं और विकास के दायरे में रहते हुये काम, शिक्षा और बेरोजगारी, बुढ़ापे, बीमारी और अपंगता तथा अवांछित जरूरतों के अन्य मामलों में सरकारी सहायता पाने के अधिकार सुनिश्चित करेगी।

87 48 ए. पर्यावरण में सुधार और संरक्षण तथा वनों एवं वन्यजीवों की रक्षा – सरकार देश के जंगलों एवं वन्य जीवों की रक्षा तथा पर्यावरण को बचाने तथा उसे सुधारने के लिये कोशिश करेगी।

88 एआईआर 1984 एससी 802

89 (1995) 3 एससीसी 42

90 पंजाब राज्य एवं अन्य बनाम मोहिन्दर सिंह चावला (1997) 2 एससीसी 83

91 पंजाब राज्य एवं अन्य बनाम राम लुभाया बग्गा एवं अन्य (1998) 4 एससीसी 11

92 सीईएससी लिमिटेड एवं बन्य बनाम सुभाष चन्द्र बोस एवं अन्य (1992) एससीसी 441

93 (1997) 5 एससीसी 10

सुरक्षा करता है। न्यायालय ने इस प्रकार अनुच्छेद–21 में प्रयुक्त "जीवन" शब्द के अर्थ का विस्तार कर दिया। ऐसा करके उसने जीवन के अधिकार के प्रावधान के दायरे में ही हानिकारक दवाओं और अन्य पदार्थों तथा प्रदूषण के कारण नागरिक के स्वास्थ्य को होने वाले नुकसान से बचाव को भी शामिल किया है।

उच्चतम न्यायालय ने कई मामलों में कामगारों के स्वास्थ्य के अधिकार की बात कही है। किर्लोस्कर ब्रदर्स लिमिटेड बनाम इम्प्लॉयीज स्टेट इंश्योरेंस कॉर्पोरेशन[94] में न्यायालय ने कहा कि स्वास्थ्य पूर्ण शारीरिक, मानसिक और सामाजिक कल्याण की स्थिति है इसीलिए स्वास्थ्य का अधिकार कामगारों का मौलिक एवं मानवीय अधिकार है। नियमित अंतराल पर चिकित्सा सुविधा देने से कामगारों का स्वास्थ्य अच्छा होता है और मानव संसाधन के जीवन में बढ़ोत्तरी होती है। न्यायालय ने आगे कहा है कि स्वास्थ्य का अधिकार जीवन के सार्थक अधिकार का महत्वपूर्ण आयाम है।[95] उच्चतम न्यायालय ने व्यवस्था दी कि जीवन का संरक्षण भारतीय संविधान के अनुच्छेद–21 में वर्णित जीवन के अधिकार का ही हिस्सा है। इतना ही नहीं, कई दशकों से इस अधिकार को पवित्र, अनुल्लंघनीय और मौलिक माना जाता है।[96]

पश्चिम बंग खेत मजदूर समिति एवं अन्य बनाम पश्चिम बंगाल सरकार एवं अन्य में न्यायालय ने कहा कि राज्य का प्राथमिक कार्य अपनी जनता का कल्याण सुनिश्चित करना है। उनको पर्याप्त चिकित्सा सुविधायें मुहैया कराना इसी बाध्यता का अंग है। न्यायालय ने इस मामले में अनुच्छेद–21 के तहत वर्णित जीवन के अधिकार का उल्लंघन मानते हुए और मुआवजे का आदेश देते हुए कहा कि आपात चिकित्सा सुविधा का अधिकार स्वास्थ्य के उस अधिकार का प्रमुख तत्व है जिसे जीवन के अधिकार का अखंड हिस्सा माना गया है। न्यायालय ने जीवन के अधिकार को प्रत्येक नागरिक के जीवन की सुरक्षा के लिए राज्य की सकारात्मक बाध्यता बताते हुए कहा कि "मानव जीवन का संरक्षण सर्वाधिक महत्वपूर्ण है" और "संविधान कल्याणकारी राज्य की स्थापना की बात कहता है..... जिसमें जनता को पर्याप्त चिकित्सा सुविधायें मुहैया कराना अनिवार्य है और राज्य अस्पतालों तथा स्वास्थ्य केंद्रों के संचालन के जरिये इस कर्तव्य को पूरा करता है।"

ऐसे ही एक मामले पंडित परमानंद कटारा बनाम भारत गणराज्य एवं अन्य[97] में न्यायालय ने एक स्वर में कहा कि मानव जीवन का संरक्षण अत्यधिक महत्वपूर्ण है और संविधान का अनुच्छेद–21 ऐसा करने के लिए राज्य को बाध्य करता है। कानून व्यवस्था के संदर्भ में अधिकारी जीवन का संरक्षण करने के लिए बाध्य हैं ताकि निर्दोष की सुरक्षा हो सके और दोषी को दंडित किया जा सके। इस प्रकार किसी सरकारी अस्पताल में जीवन रक्षा के लिए चिकित्सकीय मदद देना चिकित्सक का कर्तव्य है। जीवन की रक्षा के लिए अपनी सेवायें देना उसका कर्तव्य है और कोई भी कानून अथवा राज्य की कार्रवाई इस कर्तव्य के वहन में हस्तक्षेप नहीं कर सकता। चिकित्सक जब इस दायित्व का निर्वाह करें तो किसी भी नियम या कार्यवाही से उसमें बाधा नहीं पड़नी चाहिये।

न्यायालय ने निवारक स्वास्थ्य सेवायें मुहैया कराने के महत्व पर भी ध्यान दिया है। उच्च न्यायालय[98] ने कहा, "जीवन में महान उपलब्धियां तभी संभव हैं यदि किसी व्यक्ति को स्वीकार्य रूप से स्वस्थ जीवन व्यतीत करने की अनुमति दी जायेगी।" उच्च न्यायालय ने कहा कि सरकार को देश भर में प्राथमिक स्वास्थ्य केंद्र स्थापित कर लोगों को पर्याप्त स्वास्थ्य सेवायें प्राप्त करने में मदद करनी चाहिये।

---

94 (1996) 2 एससीसी 682

95 भारतीय जीवन बीमा निगम एवं अन्य बनाम उपभोक्ता शिक्षा एवं अनुसंधान केन्द्र एवं अन्य (1995) 5 एससीसी 482

96 सुरजीत सिंह बनाम पंजाब राज्य एवं अन्य, (1996) 2 एससीसी 336

97 (एआईआर 1989 एससी 2039)

98 महेन्द्र प्रताप सिंह बनाम उड़ीसा राज्य, एआईआर 1997 उड़ीसा ओआरक्यू 37

भारत में एचआईवी/एड्स मुकदमे

भारतीय अदालतों में एचआईवी/एड्स मुकदमे 90 के दशक के आरंभ में शुरू हुआ, जब बम्बई उच्च न्यायालय की पणजी पीठ में लूसी डीसूजा बनाम गोवा राज्य[99] मामला दर्ज किया गया।

एचआईवी संक्रमित एक व्यक्ति के द्वारा दान किये गये रक्त में जब संक्रमण पाया गया तो उसे बताये बगैर और सुनवाई का मौका दिये बगैर एक टीबी सैनेटोरियम में रख दिया गया। तीन महीने से अधिक समय बीतने के बाद उसकी बहन लूसी डीसूजा ने पणजी उच्च न्यायालय में कानून की धारा–53(1) को चुनौती देने वाली रिट याचिका दाखिल कर दी। रिट में कहा गया कि यह कानून तर्कहीन और अवैध है तथा इससे भारतीय संविधान के अनुच्छेद–14, अनुच्छेद–19 और अनुच्छेद–21 का उल्लंघन होता है। इसमें कहा गया कि स्वास्थ्य अधिकारी को विवेकाधीन जो अधिकार दिये गये हैं वे निर्देशहीन और पक्षपातपूर्ण हैं। सुनवाई के अधिकार की अनुपस्थिति में अलग–थलग करना प्राकृतिक न्याय के सिद्धांत के खिलाफ है।

न्यायालय ने निर्णय दिया कि गोवा नागरिक स्वास्थ्य (संशोधन) अधिनियम की धारा–53 के प्रावधान तर्कसंगत और वैध हैं और उनसे भारतीय संविधान के अनुच्छेद–14, 19(1) और अनुच्छेद–21 का उल्लंघन नहीं होता। पीठ ने कहा कि हालांकि 'अलग–थलग करना किसी व्यक्ति की स्वतंत्रता में हस्तक्षेप है' लेकिन इस मामले में व्यक्तिगत स्वतंत्रता और जनहित आमने–सामने हैं और इसमें जनहित का ध्यान रखा जाना चाहिये।

यह एक निराशाजनक न्यायिक टिप्पणी थी, क्योंकि इस प्रकार के दंडात्मक उपायों से वे लोग भूमिगत हो सकते थे जिन्हें उपचार की सबसे ज्यादा जरूरत थी और इससे नये संक्रमण की रोकथाम और एचआईवी/एड्स से ग्रस्त लोगों के लिए देखभाल तथा समर्थन सुनिश्चित करने के वांछित लक्ष्य को प्राप्त करने में रुकावट आती। यह केवल चिकित्सीय समस्या नहीं है बल्कि इस पर बहुआयामी प्रतिक्रिया की आवश्यकता है। यह अधिनियम 1996 में खत्म कर दिया गया।

एक मिलते–जुलते मामले पीएन स्वामी, लेबर लिबरेशन फ्रंट, महबूबनगर बनाम स्टेशन हाउस ऑफिसर हैदराबाद एवं अन्य[100] में बचायी गयी महिलाओं को कल्याण गृह और फिर चंचलगुड़ा जेल के महिला वार्ड में रखा गया। न्यायालय ने ज्यादातर महिलाओं को रिहा करने का निर्देश दे दिया, लेकिन संक्रमित महिलाओं को रिहा करने के लिए नहीं कहा गया। न्यायालय ने कहा कि महिलाओं को कल्याण गृहों में रखने का अर्थ है उन्हें अपनी बीमारी का उपचार और व्यावसायिक शिक्षा मिल रही है ताकि वे जीविकोपार्जन कर सकें और इस तरह उनका पुनर्वास हो सके। इसके अलावा एचआईवी के प्रसार पर भी अंकुश लगेगा और इस प्रकार महिलाओं को कल्याण गृह में रखने से संविधान के अनुच्छेद–14 और 21 का उल्लंघन नहीं होगा, बल्कि इससे संक्रमण पर समुचित रोक लग सकेगी। न्यायालय ने लूसी डीसूजा बनाम गोवा राज्य मामले का उदाहरण दिया और निर्णय दिया कि समाज के व्यापक हित में व्यक्तिगत अधिकारों का बलिदान किया जा सकता है, खासकर जब नागरिक स्वास्थ्य, समाज हित और नैतिकता की बात आती है।

लेकिन 1997 में बम्बई उच्च न्यायालय ने भारत में एचआईवी संक्रमित व्यक्ति के रोजगार के अधिकार के बारे में एक ऐतिहासिक फैसला किया।[101] न्यायालय ने कहा कि रोजगार के मामले में किसी व्यक्ति के साथ इस आधार पर भेदभाव नहीं किया जा सकता कि वह एचआईवी से संक्रमित है। ऐसा करना संविधान के अनुच्छेद–14 और 21 का उल्लंघन होगा। यदि बीमारी के कारण कोई व्यक्ति अक्षम हो जाता है तो उसे

99 (1990) एम आई. एल. जे. 713, बम्बई उच्च न्यायालय

100 1998 (1) ए एल डी 755

101 बम्बई निवासी एम एक्स बनाम जेडवाई एवं अन्य – एआईआर 1997 बम्बई 406, याचिकाकर्ता को एचआईवी से संक्रमित पाया गया और उसका नाम अस्थायी मजदूरों के रोस्टर से हटा दिया गया और उसके अस्थायी करार को रद्द कर दिया गया।

तर्कसंगत विकल्प मुहैया कराया जाना चाहिये। इसके साथ ही राज्य और सरकारी कर्मचारी यह नहीं तय कर सकते कि वे बिना यह सुनिश्चित किये किसी को भी स्थायी नौकरी पर नहीं रखेंगे कि वह अपना सेवाकाल पूरा कर पायेगा। न्यायालय ने कहा कि उच्च न्यायालय अपने सामने पेश हुए किसी पक्ष या दोनों पक्षों से न्याय के हित में पहचान छिपाने को कह सकता है।

ऐसे ही एक मामले[102] में न्यायालय ने वही दोहराया जो एम एक्स ऑव बॉम्बे इंडियन इनहैबिटेंट बनाम मैसर्स जेडवाई, वी.पी.जी.एस.पी. मंडल बनाम महाराष्ट्र राज्य और बलबीर कौर एवं अन्य बनाम स्टील अथॉरिटी ऑव इंडिया लिमिटेड एवं अन्य मामलों में कहा था। इनमें एक स्वर में कहा गया था कि किसी भी व्यक्ति को केवल इसी आधार पर रोजगार से वंचित नहीं किया जा सकता कि वह एचआईवी संक्रमित है और शेष हर प्रकार से वह फिट है, क्योंकि ऐसा करने से भेदभाव होता है और संविधान के अनुच्छेद–14, 16 और 21 में वर्णित सिद्धांतों का उल्लंघन होता है।

वर्ष 2000 में गुजरात उच्च न्यायालय[103] के समक्ष एक अन्य मामले में याचिकाकर्ता का चयन निःशस्त्र पुलिस कांस्टेबल के पद पर हुआ और उसका नाम पद के लिए चयनित उम्मीदवारों की सूची में था। वह मेडिकल फिटनेस परीक्षण के लिए उपस्थित हुआ और सर्जन ने उसके वरिष्ठ पदासीनों को पत्र लिखकर कहा कि वह चिकित्सा की दृष्टि से फिट नहीं है क्योंकि उसके रक्त परीक्षण मे एचआईवी संक्रमण का पता चला है। याचिकाकर्ता का नाम उसके बाद सूची से हटा दिया गया। न्यायालय ने कहा कि यह स्पष्ट है कि दूसरे पक्ष ने चयनित अभ्यर्थियों की सूची से याचिकाकर्ता का नाम महज इसलिए हटा दिया क्योंकि वह एड्स से पीड़ित था। कुछ अमेरिकी फैसलों का जिक्र करते हुए न्यायालय ने कहा कि एचआईवी से संक्रमित लोगों को सरकारी नौकरियों अथवा सेवाओं से वंचित नहीं किया जा सकता। चयनित अभ्यर्थियों की सूची से याचिकाकर्ता का नाम हटाया जाना संविधान के अनुच्छेद–14 और 16 का उल्लंघन है।

बम्बई उच्च न्यायालय के सामने पेश एक अन्य मामले[104] में याचिकाकर्ता नौ वर्ष से बैंक ऑव इंडिया में सफाईकर्मी के तौर पर कार्यरत था, तभी उसे बताया गया कि एक साक्षात्कार में उत्तीर्ण होने पर उसे प्रोन्नत कर दिया जायेगा। साक्षात्कार के बाद हुई चिकित्सा जांच में याचिकाकर्ता को एचआईवी से संक्रमित पाया गया और उसकी सेवा समाप्त कर दी गयी। उससे कहा गया कि एचआईवी निगेटिव होने पर ही उसे नौकरी वापस दी जायेगी। न्यायालय ने अपने फैसले में कहा कि याचिकाकर्ता को रोजगार से वंचित नहीं किया जा सकता। लेकिन उसने कहा कि रोजगार प्रदाता चिकित्सा जांच में यह जानकर कि याचिकाकर्ता अपना काम पूरा करने में सक्षम है या नहीं, ही उसे स्थायी नौकरी देने के बारे मे फैसला कर सकता है। फैसले का आधार यह भी होगा कि याचिकाकर्ता से उसके साथियों में संक्रमण की आशंका तो नहीं है। दिल्ली उच्च न्यायालय के सामने पेश एक अन्य मामले में पूर्व कांस्टेबल बदन सिंह बनाम भारत गणराज्य एवं अन्य[105] में याचिकाकर्ता सीमा सुरक्षा बल का पूर्व सदस्य था, जिसे चिकित्सा परीक्षण के दौरान पता चला कि वह एचआईवी संक्रमित है। उसे बाद में सेवा के लिए अयोग्य करार दिया गया और 70 प्रतिशत विकलांगता की बात कहकर नौकरी से हटा दिया गया, जबकि उसका कहना था कि वह काम करने के लिए पूरी तरह फिट है। न्यायालय ने याचिकाकर्ता के पक्ष में फैसला करते हुए कहा कि सरकार का आवश्यक कार्य बीमारी का उपचार कराना है और पेंशन देना भी इसी बाध्यता के तहत आता है।

---

102 मुंबई निवासी बनाम न्यू इंडिया एश्योरेंस कम्पनी लि., बम्बई उच्च न्यायालय, 2002

103 छोटूलाल शामभाई साल्वे बनाम गुजरात राज्य

104 एक्स बनाम बैंक ऑव इंडिया

105 97 (2000) डीएलटी 1996

बीमा से संबंधित एक मामले[106] में भारतीय जीवन बीमा निगम ने याचिकाकर्ता के भाई के साथ किया करार केवल इस आधार पर तोड़ दिया कि उसने यह तथ्य जानबूझकर बीमाकर्ता से छिपाया था कि वह एचआईवी संक्रमित है। न्यायालय ने बीमा निगम को करार के तहत भुगतान किये जाने वाला धन एक बैंक में जमा कराने का आदेश दिया और उसे धोखाधड़ी के कारण करार को निरस्त करने की याचिका भी अदालत में दाखिल करने का विकल्प दिया। उसने कहा कि यदि बीमा निगम साल भर के भीतर यह याचिका दाखिल नहीं करता है तो उसे याचिकाकर्ता को वह धन अदा करना होगा।

हाल ही में कर्नाटक न्यायाधिकरण[107] के सामने 2005 में आये एक मामले में याचिकाकर्ता ने पुलिस कांस्टेबल के पद के लिए आवेदन किया था। साक्षात्कार के बाद उसका नाम अस्थायी रूप से चयनित अभ्यर्थियों की सूची में शामिल कर लिया गया। उसके बाद याचिकाकर्ता का चिकित्सा परीक्षण हुआ, जिसमें पता चला कि वह एचआईवी से संक्रमित है और उस पद पर उसकी नियुक्ति रद्द कर दी गयी। न्यायालय ने पिछले मामलों में कही गयी बात दोहरायी और कहा कि किसी विशेष रोग से पीड़ित व्यक्ति को यदि अपनी ड्यूटी से संबंधित काम करने में कोई दिक्कत नहीं आती है और उससे सहकर्मियों के स्वास्थ्य तथा सुरक्षा को भी कोई खतरा नहीं होता है तो महज उस बीमारी से पीड़ित होने के आधार पर ही उसे नौकरी से नहीं निकाला जा सकता।

एचआईवी संक्रमित व्यक्ति के विवाह के अधिकार से संबंधित मसला 1998 में एक्स बनाम वाई मामले[108] में उच्चतम न्यायालय के सामने आया। अपीलकर्ता के रक्त की जांच की गयी और उसे एचआईवी संक्रमित पाया गया। परीक्षण करने वाले चिकित्सक ने अपीलकर्ता के परिवार और उसकी मंगेतर को एचआईवी संक्रमण के बारे में जानकारी दे दी। परिणामस्वरूप अपीलकर्ता का विवाह रद्द हो गया और उसे सामाजिक बहिष्कार का सामना करना पड़ा। उसने चिकित्सक पर गोपनीयता बरकरार रखने के अपने कर्तव्य का उल्लंघन करने का आरोप लगाया और उसके बाद अपने साथ हुए भेदभाव, रोजगार से वंचित तथा सामाजिक बहिष्कार के लिए चिकित्सक को जिम्मेदार ठहराते हुए मुआवजे की मांग वाली याचिका दायर कर दी। न्यायालय ने निर्णय दिया कि ऐसे मामलों में विवाह करने का अधिकार खत्म हो जाता है और चिकित्सक को याचिकाकर्ता की बीमारी के बारे में उसकी मंगेतर को बताने का अधिकार है और मंगेतर को भी इस बारे में जानने का अधिकार है। न्यायालय के फैसले के खिलाफ अपनी अपील में याचिकाकर्ता ने यह स्पष्ट किये जाने की मांग की कि यदि स्वस्थ मंगेतर उसकी बीमारी से सहमत है और उसके बावजूद विवाह के लिए सहमत है तो क्या उसके विवाह पर कोई रोक लगायी जा सकती है। न्यायालय ने कहा कि ऐसे मामलों की पड़ताल विस्तार से करना अनावश्यक है क्योंकि उसने पुराना निर्णय भी तथ्यों के आधार पर ही दिया है। न्यायालय को गोपनीयता और निजता के अधिकार जैसे मामलों पर विचार करने की कोई जरूरत नहीं है, लेकिन उसने कहा कि अपीलकर्ता के एचआईवी संक्रमित होने के खुलासे का उसके विवाह करने के अधिकार से कोई संबंध नहीं है।

ऐसे ही एक मामले[109] में अपीलकर्ता ने रक्तदान किया और उसे एचआईवी संक्रमित पाया गया। अस्पताल में मौजूद चिकित्सक ने अपीलकर्ता की मंगेतर को इस बारे में जानकारी दे दी, परिणामस्वरूप विवाह रद्द हो गया। अपने संक्रमण के कारण अपीलकर्ता को सामाजिक भेदभाव का सामना भी करना पड़ा। उसने गोपनीयता

106 राव साहेब महादेव गायकवाड़ एवं अन्य बनाम भारतीय जीवन बीमा निगम एवं अन्य, एआईआर 2004 कर्नाटक 439

107 आरआर बनाम पुलिस अधीक्षक एवं अन्य कर्नाटक प्रशासनिक प्राधिकरण (2005)

108 एआईआर 2003 एससी 664

109 डा. टोकुघा येप्थोमी बनाम अपोलो अस्पताल इंटरप्राइजेज लिमिटेड एवं अन्य, एआईआर 1999 एससी 495

की शर्त के उल्लंघन और सामाजिक स्थिति में ह्रास के कारण अस्पताल से मुआवजे की मांग की। न्यायालय ने कहा कि गोपनीयता का अधिकार अपरिहार्य नहीं है। अमुक मामले के समान यदि किसी विशिष्ट व्यक्ति को गंभीर और जानने योग्य खतरा है, तो ऐसी हालत में चिकित्सक को याचिकाकर्ता की स्थिति के बारे में उसकी मंगेतर को बताने का अधिकार है और मंगेतर को भी इस बारे में जानने का अधिकार है। जब भी दो अधिकार एक दूसरे के खिलाफ नजर आते हैं तो न्यायालय ऐसे अधिकार के क्रियान्वयन का आदेश देगा जो जन नैतिकता और जनहित के अनुकूल होगा। ऐसे हालात में विवाह का अधिकार निलंबित हो जाता है। न्यायालय ने कहा कि याचिकाकर्ता किसी भी हालत में मुआवजा पाने का अधिकारी नहीं है।

एसी एवं अन्य बनाम भारत गणराज्य एवं अन्य[110] मामले में एक पुरुष और एक महिला याचिकाकर्ता थे, जो एचआईवी संक्रमित थे और एक दूसरे से विवाह करना चाहते थे। उन्होंने बम्बई उच्च न्यायालय में एक रिट याचिका दाखिल की ताकि विवाह के अधिकार के विषय में श्री एक्स बनाम अस्पताल जेड मामले में उच्चतम न्यायालय के निर्णय के आधार पर अदालत से विवाह करने की मंजूरी मिल सके और वे यह भी जानना चाहते थे कि विवाह करने पर क्या उन्हें भारतीय दंड संहिता की धाराओं 269 और 270 के अंतर्गत दोषी माना जायेगा। लेकिन न्यायालय ने कहा कि यदि याचिकाकर्ता इस मसले पर मंजूरी चाहते हैं तो उन्हें स्वयं उच्चतम न्यायालय के पास जाना चाहिये।

भारतीय उच्चतम न्यायालय ने देश के रक्तकोषों की गुणवत्ता एवं सुरक्षा के मसले पर भी विचार किया। जनहित याचिका[111] में उसने देखा कि सरकारी और वाणिज्यिक रक्तकोषों की वर्तमान स्थिति से स्वास्थ्य को गंभीर खतरा है। अपने निर्णय में उच्चतम न्यायालय ने वाणिज्यिक रक्तकोषों पर प्रतिबंध लगा दिया और सभी रक्तकोषों के लिए सरकारी लाइसेंस की योजना लागू कर दी। सरकार को भी रक्तकोषों की सकल गुणवत्ता के साथ–साथ रक्त संग्रह, प्रसंस्करण, भंडारण, वितरण और रक्त के परिवहन के नियमन के वास्ते कानून लागू करने होंगे। न्यायालय ने भारत सरकार को रक्ताधान पर राष्ट्रीय परिषद का गठन करने का निर्देश दिया, जो राष्ट्रीय स्तर पर स्वायत्तशासी संस्था होगी और रक्त कोष से संबंधित सभी काम जैसे प्रशिक्षण, समुचित भंडारण, परिवहन और रक्तदान शिविरों के आयोजन आदि की निगरानी करेगी।

एक अन्य मामले[112] में याचिकाकर्ताओं को राज्य सरकार की ओर से कारण बताओ नोटिस दिये गये, जिनमें उन्हें लाइसेंस प्राप्त किये बगैर औषधियों के निर्माण और विक्रय तथा औषधि एवं सौंदर्य प्रसाधन अधिनियम 1940 के प्रावधानों के उल्लंघन के लिए दंडित किये जाने की बात कही गयी थी। याचिकाकर्ताओं ने तर्क दिया कि उक्त अधिनियम के तहत रक्त को औषधि नहीं माना जा सकता और यदि उसे औषधि माना जाये तब भी वे महज रक्त उपलब्ध कराने के व्यवसाय में लिप्त थे, उसका निर्माण नहीं कर रहे थे, इसलिए उन्हें लाइसेंस की आवश्यकता नहीं थी। न्यायालय ने कहा कि जिन मामलों में वैधानिक प्रावधान की व्याख्या की आवश्यकता है उनमें किसी प्रकार की खामी नहीं छोड़ी जानी चाहिये और जन स्वास्थ्य के संबंध में बीमारी पर अंकुश लगाने वाले प्रावधान को महत्व दिया जाना चाहिये। भारत में एचआईवी/एड्स के तीव्र प्रसार पर टिप्पणी करते हुए और रक्त को इसके प्रसार का प्रमुख कारण मानते हुए न्यायालय ने कहा कि औषधि एवं सौंदर्य प्रसाधन अधिनियम के अनुसार रक्त "औषधि" के दायरे में ही आता है।

एचआईवी/एड्स के संबंध में भारतीय न्यायपालिका ने रक्ताधान के मामलों पर भी विचार किया है। एम. विजया बनाम अध्यक्ष एवं प्रबंध निदेशक, सिंगारेनी कॉलियरीज कंपनी लिमिटेड एवं अन्य[113] मामले में

110 (1999) बम्बई उच्च न्यायालय

111 कॉमन कॉज बनाम भारत संघ एवं अन्य (एआईआर 1996 एससी 929)

112 सुबोध एस शाह एवं अन्य बनाम निदेशक, खाद्य एवं औषधि, खाद्य एवं औषधि नियंत्रण कार्यालय, अहमदाबाद एवं अन्य – एआईआर 1997 गुज 83

113 2002 एसीजे 32

याचिकाकर्ता को ऑपरेशन के दौरान अपने भाई से रक्त मिला। सर्जरी के बाद उसे लगातार बुखार रहने लगा और जब उसे अस्पताल में भर्ती किया गया, तो वह एचआईवी संक्रमित पायी गयी। उसने अस्पताल के खिलाफ मामला दायर कर दिया। न्यायालय ने कहा कि उच्चतम न्यायालय के पुराने फैसलों के अनुसार जीवन के अधिकार में स्वास्थ्य का अधिकार भी शामिल होता है। आंध्र प्रदेश उच्च न्यायालय ने कहा कि रक्त चढ़ाये जाने के समय एचआईवी का पता लगाने के लिए जरूरी परीक्षण करना उक्त अस्पताल के कर्मचारियों के लिए अनिवार्य था। इसलिए अस्पताल की लापरवाही के कारण ही याचिकाकर्ता को तकलीफ उठानी पड़ी। न्यायालय ने याचिकाकर्ता के चिकित्सा खर्च के एवज में एक लाख रुपये देने का निर्देश अस्पताल को दिया।

ऐसे ही एक मामले[114] में भारतीय नौसेना ने एक महिला को उसके बच्चे के प्रसव के लिए अस्पताल में भर्ती किया। प्रसव के बाद महिला को रक्त चढ़ाये जाने की जरूरत हुई। चूंकि उसका कोई भी निकट संबंधी रक्ताधान के लिए वहां मौजूद नहीं था इसलिए अस्पताल प्रशासन ने अन्य लोगों के रक्त का इंतजाम किया। रक्त की जांच के लिए अस्पताल के पास उपयुक्त उपकरण नहीं थे, इसलिए उसने उतनी ही जांच की जो संभव थी। रक्ताधान के बाद पता चला कि चढ़ाया गया रक्त एचआईवी से संक्रमित था। न्यायालय ने भारतीय नौसेना को जिम्मेदार ठहराया और रक्षा मंत्रालय को निर्देश दिया कि वह याचिकाकर्ता को दस लाख रुपये का मुआवजा, सरकारी नौकरी, आवास और निःशुल्क चिकित्सा खर्च मुहैया कराये। न्यायालय ने भारत सरकार को तीन महीने के भीतर इसका अनुपालन करने का निर्देश देकर याचिका का निपटारा कर दिया।

भारतीय अदालतों ने अन्य मामलों में भी फैसले दिये हैं। उनमें से कुछ निम्न हैं :

राज बहादुर बनाम भारत गणराज्य[115] एवं अन्य में याचिकाकर्ता राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र दिल्ली सरकार के खाद्य नियंत्रण विभाग में कार्यरत था। दिल्ली सरकार के कर्मचारियों से संबंधित कानूनों के मुताबिक उसे दिल्ली सरकार के तहत आने वाले किसी भी अस्पताल में निःशुल्क उपचार की सुविधा प्राप्त थी। याचिकाकर्ता का उपचार कर रहे चिकित्सकों को महसूस हुआ कि उसका विशिष्ट उपचार करने की जरूरत है और इसीलिए उसे एम्स भेज दिया गया। लेकिन एम्स दिल्ली सरकार के अधिकार क्षेत्र का अस्पताल नहीं था इसीलिए प्रश्न उठा कि याचिकाकर्ता को वहां निःशुल्क उपचार मिलेगा अथवा नहीं। अदालत ने फैसला किया कि निःशुल्क औषधि एवं विशिष्ट उपचार उपलब्ध कराने की जिम्मेदारी दिल्ली सरकार की है। उसने कहा कि चूंकि निःशुल्क उपचार की योजना एक लाभार्थ उपाय है, इसका इस्तेमाल आजादी के साथ नहीं करना चाहिये। न्यायालय ने कहा कि दिल्ली सरकार जरूरी उपचार के लिए यदि याचिकाकर्ता को समय–समय पर धन मुहैया कराती रहेगी, तो उसकी जिम्मेदारी पूरी हो जायेगी।

सुबोध शर्मा एवं अन्य बनाम असम राज्य एवं अन्य[116] में असम में एचआईवी/एड्स की समस्या पर राज्य सरकार की ओर से उचित कदमों के अभाव की बात कहते हुए एक जनहित याचिका दाखिल की गयी। याचिकाकर्ताओं ने कहा कि संक्रमण के प्रसार पर रोक लगाने के लिए राज्य को दिया गया धन वांछित उद्देश्य के लिए इस्तेमाल नहीं हो रहा है, बल्कि उसे भी राजस्व में ही जोड़ दिया गया है। न्यायालय याचिकाकर्ता से सहमत था कि एचआईवी/एड्स से निपटने के लिए राज्य सरकार के प्रयास पर्याप्त नहीं हैं। इसीलिए उसने राज्य सरकार को कई निर्देश जारी किये। एड्स की रोकथाम पर लंदन घोषणा और विश्व स्वास्थ्य

114 पी बनाम भारत संघ (साइटेशन वांछित)
115 106 (2003) डीएलटी 666
116 एमएएनयू/जीएच/0016/2001

संगठन द्वारा घोषित वैश्विक रणनीति के संदर्भ में नाको द्वारा निर्दिष्ट दिशानिर्देशों का प्रभावी क्रियान्वयन होना चाहिये। इसलिए अब तक रोके गये धन को जारी किया जाये। राज्य में रक्तकोषों के नियमन के लिए राज्य रक्ताधान परिषद का गठन किया जाये। धन के आवंटन में हुई अनियमितताओं की जांच की जाये। एड्स सलाह केंद्र भी स्थापित किये जायें। कार्यक्रम के क्रियान्वयन की निगरानी के लिए खातों की नियमित जांच समेत प्रभावी उपाय किये जाने चाहिये। यह सुनिश्चित करने के लिए आदेश जारी किये जाने चाहिये कि उन्हें सरकारी अस्पतालों में उपचार से वंचित न किया जाये।

खंड-दो

उपचार

अध्याय 2 : एंटीरेट्रोवायरल चिकित्सा पद्धति (थेरेपी) एवं इलाज की सुलभता
अध्याय 3 : पेटेंट और औषधियां

2

एंटीरेट्रोवायरल चिकित्सा पद्धति (थेरेपी) एवं इलाज की सुलभता

अस्सी के दशक में एचआईवी/एड्स के पहली बार प्रकट होने के बाद से इस संक्रामक बीमारी के विरुद्ध अभियान में तेजी आयी, जिसके फलस्वरूप इस बीमारी के उपचार की एंटीरेट्रोवायरल (एआरवी थेरेपी) का उद्‌भव हुआ है। इससे यह बीमारी हालांकि पूरी तरह ठीक तो नहीं होती, लेकिन इसमें शरीर में एचआईवी विषाणुओं के स्तर को कम करने की क्षमता मौजूद है। इस चिकित्सा पद्धति से मरीज की रोग प्रतिरोधक क्षमता की हुई क्षति को काफी हद तक ठीक किया जाता है। एचआईवी/एड्स से संक्रमित जिस व्यक्ति को एंटीरेट्रोवायरल उपचार (एंटीरेट्रोवायरल ट्रीटमेंट– एआरवी थेरेपी) दिया जा रहा है वह यह उपचार नहीं लेने वाले एचआईवी संक्रमित व्यक्ति की तुलना में अधिक लंबा एवं स्वस्थ जीवन जी सकता है। एंटीरेट्रोवायरल थेरेपी (एआरवी थेरेपी) में परीक्षण, उपचार तथा चिकित्सीय देखरेख आदि शामिल हैं। इस उपचार के जरिये एड्स की आखिरी अवस्था में पहुंच चुके मरीजों में दोबारा स्वस्थ जीवन लौटाया जा सकता है[1]– यह एक महत्वपूर्ण उपलब्धि है जिसे 'लेजारस प्रभाव' का नाम दिया गया है।

आरंभ में यह उपचार मुख्य तौर पर अमीर देशों तक ही सीमित था लेकिन अब अर्जेंटीना, ब्राजील, चिली, थाईलैंड, सेनेगल और युगांडा समेत निम्न और मध्यम आय वर्ग वाले विभिन्न देशों में इस उपचार प्रणाली से संबंधित राष्ट्रीय और पायलट परियोजनाएं लागू की जा रही हैं। यह पाया गया है कि गरीब और विकासशील देशों में एआरवी थेरेपी को व्यापक तौर पर अमल में लाया जाना अमीर देशों के समान ही व्यावहारिक और प्रभावकारी है।[2] इसके अलावा यह बात भी उजागर हुयी है कि एचआईवी/एड्स के कारण होने वाले संक्रमण–ऑपरच्यूनिस्टिक इंफेक्शन्स (ओआई) में कमी आने से दवाइयों पर आने वाली लागत तो कम होती ही है बल्कि सरकारी चिकित्सा व्यवस्था पर भी बोझ कम पड़ता है, एचआईवी/एड्स मरीजों की उत्पादकता बढ़ जाती है और सामाजिक सुरक्षा और सामुदायिक नेटवर्क पर बोझ भी कुछ हल्का हो जाता है।[3]

दुनिया भर में एंटीरेट्रोवायरल थेरेपी (एआरवी थेरेपी) की सर्वसुलभता को अमीर देशों की सरकारों की विलासिता का सूचक नहीं समझा जाना चाहिए, क्योंकि अगर आर्थिक, सामाजिक और नस्लीय विचारों को अलग रख दिया जाये तो कहा जा सकता है कि एंटीरेट्रोवायरल थेरेपी की अनुपलब्धता मानवाधिकारों का

---

1 एंटीरेट्रोवायरल ट्रीटमेंट (एआरवी) थेरेपी फैक्ट शीट 02, इंटरनेशनल एचआईवी/एड्स अलाइन्स, मार्च 2005। http://www.aidsalliance.org

2 श्रुति पांडे, फाइट फॉर फ्री एआरवी ड्रग्स, कॉम्बैट लॉ, वॉल्यूम–5, अंक–2, पृष्ठ–11, अप्रैल–मई 2006

3 वही

उल्लंघन है।[4] राष्ट्रीय एवं अंतर्राष्ट्रीय नीति निर्माताओं और कानून बनाने वालों पर इस एंटीरेट्रोवायरल थेरेपी की आवश्यकता समझने और उसके अनुसार पहल करने के लिए दबाव बनाया जाना चाहिए।

यह अध्याय एंटीरेट्रोवायरल थेरेपी की सर्वसुलभता के मुद्दे पर बहुआयामी समझ को प्रोत्साहित करने के लिए चिकित्सा से लेकर सामाजिक और कानूनी सभी पहलुओं पर व्यापक सामग्रियां उपलब्ध कराता है। इस अध्याय में एंटीरेट्रोवायरल थेरेपी के ऐतिहासिक और चिकित्सीय पहलुओं पर संक्षिप्त में चर्चा की गई है और साथ ही नीतियों और सामाजिक–कानूनी प्रभावों पर विस्तार से चर्चा की गई है। इस अध्याय के अंत में अंतर्राष्ट्रीय और भारतीय कानून की समीक्षा के साथ–साथ एआरवी थेरेपी को सर्वसुलभ बनाने से संबंधित मामलों पर भी विचार किया जाएगा। इसमें शामिल किया गया प्रत्येक कानूनी मामला संक्षिप्त रूप में पेश किया गया है, जबकि उपलब्ध फैसलों से संबंधित प्रासंगिक अंश के मूलपाठ यथासंभव उपलब्ध कराये गए हैं। बौद्धिक संपदा और अंतर्राष्ट्रीय पेटेंट कानून से संबंधित समस्याओं पर 'पेटेंट और औषधियां' शीर्षक वाले अन्य अध्याय में चर्चा की गयी है।

एंटीरेट्रोवायरल थेरेपी : चिकित्सीय पहलू[5]

एआरवी थेरेपी संबंधी नीतियों के प्रभावों को समझने के लिये एआरवी थेरेपी के चिकित्सीय पहलुओं की सामान्य समझ जरूरी है।

आधारभूत पहलू

इलाज से वंचित एचआईवी/एड्स के संक्रमित लोगों में हर मिलीलीटर रक्त में हजारों और यहां तक कि लाखों की संख्या में एचआईवी सूक्ष्म रोगाणु मौजूद होते हैं। विषाणुओं की संख्या जितनी कम होगी, उतनी ही आसानी से मानव शरीर की प्रतिरोधक क्षमता भी सुधरेगी। एआरटी थेरेपी का मुख्य काम शरीर में एचआईवी के स्तर को गिराकर उसके निम्नतम स्तर – प्रति मिलीलीटर रक्त में विषाणुओं की 50 प्रतिलिपियों तक लाना है। प्रति घन मिलीमीटर रक्त में विषाणुओं का स्तर 50 से कम होने पर आमतौर पर इसका पता लगा पाना मुश्किल होता है। एचआईवी का आक्रमण नहीं होने पर विशेष प्रकार की श्वेत रक्त कणिकायें – सीडी–4 और शरीर की रोग प्रतिरोधक प्रणाली संक्रमणों का मुकाबला करके मरीज को दोबारा स्वस्थ बनाने में सक्षम होती हैं। इस तरह से विषाणुओं की संख्या में कमी कर और इसके बाद सीडी–4 कणिकाओं की संख्या बढ़ाकर एचआईवी/एड्स ग्रस्त मरीजों के स्वास्थ्य में सुधार किया जा सकता है और उसके स्वस्थ्य जीवन को लौटाया जा सकता है।

व्यक्ति के शरीर में एचआईवी विषाणुओं की मौजूदगी का एक ऐसा स्तर भी होता है जिसकी पहचान नहीं हो पाती है और इस कारण यह पता नहीं चल पाता है कि वह व्यक्ति एचआईवी संक्रमित है या नहीं या वह दूसरे व्यक्ति को संक्रमित कर सकता है या नहीं। वे व्यक्ति जिनमें एचआईवी (विषाणुओं) के स्तर का पता नहीं चल सका है वे संक्रामक हो सकते हैं इसलिए उन्हें खुद की और दूसरों की भलाई के लिए सभी तरह की सावधानियां बरतनी चाहिए। एआरटी थेरेपी से एचआईवी (विषाणुओं) की संख्या में कमी आने

---

4 देखें इन्क्रा एक्सेस एआरवी एंड द लॉ

5 हसीन–जे ली, एचआईवी/एड्स ट्रेनिंग मॉड्युल्स : एंटीरेट्रोवायरल, फ्रीडम फाउंडेशन एचआईवी/एड्स यूनिट, बैंगलूर इंडिया 2006 (निम्नलिखित स्रोतों से संवर्धित : द एड्स सपोर्ट ऑर्गनाइजेशन (टीएएसओ), एफएक्यू, युगांडा, http://www.avert.org/starttrt.htm; माइकल कार्टर, एंटी–एचआईवी ड्रग्स। एनएएम इंफार्मेशन सीरीज फॉर एचआईवी–पॉजिटिव पीपल, छठा संस्करण, लंदन 2004; माइकल कार्टर, एचआईवी थेरेपी। एनएएम इंफार्मेशन सीरीज फॉर एचआईवी–पॉजिटिव पीपल, दूसरा संस्करण, लंदन 2003; एमिल पी. लेशो एंड डेनियेला सी.गे, एम.डी., मैनेजिंग इश्युज रिलेटेड टू एंटीरेट्रोवायरल थेरेपी, ऐम फैम फिजिशियन 2003; 68:675–86,689–90, 2003. http://www.aafp.org/afp/20030815/675.html; न्यू मेक्सिको एड्स इनफो नेट, एचआईवी लाइफ साइकल, फैक्ट शीट नंबर–106. अक्टूबर 9, 2004. http://www.thebody.com/nmai/cycle.html; रोगर स्पिटजर, एम.डी., लीविंग विद एचआईवी– एडवांस्ड एचआईवी डिस्कशन टॉपिक्स, http://ourworld.com/homepages/bugdoc/livhiv2.htm)

के प्रमाणों के बावजूद इस बात के कोई ठोस साक्ष्य नहीं मिले हैं कि यह थेरेपी एचआईवी संचरण की दर को भी घटाती है।[6] संक्रमण के स्तर के बारे में कोई जानकारी नहीं मिल पाने के कारण एआरटी थेरेपी से इलाज करा रहे एचआईवी/एड्स ग्रस्त लोगों को इस बात के लिए पूरी तरह सतर्क रहना चाहिए कि संक्रमण का आगे संचरण नहीं हो। एचआईवी/एड्स ग्रस्त लोगों को अधिक जोखिम वाली गतिविधियों से दूर रहना चाहिये, क्योंकि इससे नया संक्रमण हो सकता है क्योंकि इन गतिविधियों से दवाई की कारगरता प्रभावित हो सकती है और शरीर में दवाई के खिलाफ प्रतिरोध क्षमता विकसित हो सकती है।

एआरटी थेरेपी से उपचार के बारे में दिशानिर्देश अलग–अलग क्षेत्र के लिये अलग–अलग होते हैं, और ये मुख्य रूप से आर्थिक परिस्थितियों और दवाओं की उपलब्धता पर निर्भर करते हैं। भारत जैसे कम संसाधन वाले देशों में एआरवी थेरेपी का इस्तेमाल आमतौर पर तब शुरू होता है जब मरीज के शरीर में सीडी–4 की संख्या प्रति घन मिलीमीटर 200 तक कम हो जाती है। अमेरिका के रोग नियंत्रण केन्द्र (सीडीसी) ने शरीर में सीडी–4 की उपस्थिति के इस स्तर को रोग प्रतिरोध क्षमता की सीमा रेखा माना है। अमेरिका और पश्चिमी यूरोपीय देशों जैसे अमीर देशों के दिशानिर्देशों के अनुसार एचआईवी/एड्स के लक्षणों वाले मरीजों मे एआरटी थेरेपी की शुरुआत सीडी–4 की संख्या के प्रति घन मिलीमीटर 350 गिरने पर ही हो जाती है। फिलहाल इस बात पर बहस जारी है कि क्या इस थेरेपी का इस्तेमाल बहुत पहले ही शुरू कर दिया जाना चाहिए। अगर रोगी में एचआईवी पॉजिटिव होने के कुछ लक्षण दिखते हों, क्लिनिकल जांच से एचआईवी संक्रमण के बहुत अधिक हो जाने की जानकारी मिले, या विषाणुओं की संख्या प्रति घन मिलीमीटर एक लाख तक पहुंच जाए और सीडी–4 की मौजूदगी का स्तर प्रति घन मिलीमीटर 350 हो जाये तो एआरवी थेरेपी का इस्तेमाल शुरू कर देने की सलाह दी जाती है।

एचआईवी जीवन चक्र : दवाई किस तरह काम करती है

एचआईवी (विषाणुओं) का हमला शरीर के रोग प्रतिरोधक प्रणाली की विशेष कोशिकाओं पर होता है, जिसे टी–हेल्पर या सीडी–4 कोशिकाएं कहते हैं, जो शरीर को बाहरी संक्रमणों से बचाने के लिये सुरक्षा कवच का काम करती है। एचआईवी संक्रमण समय के साथ–साथ सीडी–4 कोशिकाओं की संख्या कम करने लगता है और प्रतिकृति (रेप्लिकेशन) चक्र के जरिये शरीर की प्रतिरोधक प्रणाली कमजोर करने लगता है। यदि सीडी–4 कोशिकाओं का नष्ट होना जारी रहे तो हमारा शरीर मामूली से मामूली संक्रमणों से भी नहीं लड़ सकता, और आखिरकार व्यक्ति एड्स का शिकार हो जाता है।

एचआईवी विषाणुओं का जीवन चक्र विशेष उत्पादकता प्रक्रिया के तहत संचालित होता है। यह चक्र सीडी–4 कोशिकाओं के एचआईवी विषाणुओं के संपर्क में आने से शुरू होता है, शुरुआत में ये कोशिकायें संक्रमित होने लगती हैं और अंत में एचआईवी विषाणु प्रतिकृति (रिप्लिकेशन) प्रक्रियाओं के जरिये अपनी उपस्थिति इतना अधिक बढ़ा लेते हैं कि सीडी–4 कोशिकाओं के उत्पादन प्रक्रिया पर उनका नियंत्रण हो जाता है। इसके परिणामस्वरूप सीडी–4 कोशिकायें मृत हो जाती है और बहुत अधिक संख्या में नये एचआईवी विषाणु पैदा होते हैं और इसकी परिणति एड्स के रूप में होती है। एचआईवी विषाणुओं के जीवन चक्र के पांच ऐसे मूल चरण, जो एआरटी थेरेपी के लिए प्रासंगिक हैं, निम्न प्रकार से हैं–

1. बाइंडिंग एंड फ्यूजन – एचआईवी विषाणु सीडी–4 कोशिकाओं से चिपक जाते हैं और एचआईवी जेनेटिक तत्वों को उत्सर्जित करते हैं।
2. रिवर्स ट्रांसक्रिप्शन – सीडी–4 कोशिकाएं एचआईवी जेनेटिक तत्वों का अनुसरण करती हैं।

---

6 मीड ओवर एंड पीटर हेवुड इत्यादि, एचआईवी/एड्स ट्रीटमेंट एंड प्रीवेंशन इंन इंडियाः मॉडेलिंग द कॉस्ट्स एंड द कन्सेक्वेंसेज, द वर्ल्ड बैंक, पृष्ठ–20, जून 2004

3. इंटीग्रेशन– एचआईवी विषाणुओं का डीएनए सीडी–4 कोशिकाओं के डीएनए के साथ समायोजित हो जाते हैं।
4. ट्रांसक्रिप्शन/ट्रांसलेशन– सीडी–4 कोशिकाएं अपनी उत्पादन प्रक्रिया के दौरान एचआईवी जेनेटिक तत्वों का ही निर्माण शुरू कर देती हैं।
5. वायरल एसेम्बली– सीडी–4 कोशिकाओं की उत्पादन प्रणाली पर कब्जा करने तथा जेनेटिक तत्वों का उत्सर्जन करने के बाद एचआईवी विषाणु मुक्त सीडी–4 कोशिकाओं को विखंडित करते हैं, परिणामस्वरूप सीडी–4 कोशिकाएं फट जाती हैं और मृत होने लगती हैं।

एचआईवी चक्र[7] और एंटीरेट्रोवायरल दवाओं की श्रेणियां

एचआईवी विषाणुओं से मुकाबले के लिए फिलहाल एंटीरेट्रोवायरल दवाओं की पांच श्रेणियां हैं– नॉन–न्यूक्लियोसाइड रिवर्स ट्रांसक्रिप्टेस इनहिबिटर्स (एनएनआरटीआई), न्यूक्लियोटाइड एनालॉग रिवर्स ट्रांसक्रिप्टेस इनहिबिटर्स (एनएआरटीआई), न्यूक्लियोसाइड एनालॉग रिवर्स ट्रांसक्रिप्टेस इनहिबिटर्स (एनआरटीआई), प्रोटीज इनहिबिटर्स एंड फ्यूजन इनहिबिटर्स। ये दवाएं तीन बिंदुओं पर एचआईवी की प्रतिकृति प्रक्रिया (रेप्लिकेशन) को रोकता है – पहला, यह सीडी–4 रिसेप्टर्स के साथ एचआईवी के चिपकने से रोकता है। दूसरा, एनएनआरटीएस, एनआरटीआई, एनआरआरटी उल्टे ट्रांसक्रिप्शन को रोकते हैं और अंतिम, यह प्रोटीन श्रृंखलाओं को प्रोटीन में तोड़ने से प्रोटीन एंजाइम को रोककर एचआईवी कोशिका के शक्तिशाली होने से रोकता है। इस तरह से एआरवी थेरेपी एचआईवी उत्पादन प्रक्रिया को रोकने के लिये एचआईवी की प्रतिकृति प्रक्रिया के प्रत्येक चरण को प्रभावित करती है।

यह जानना महत्वपूर्ण है कि विभिन्न श्रेणियों की दवाइयों के विभिन्न तरह के प्रभावों के मद्देनजर यह जरूरी है कि इन सभी दवाइयों को मिलाकर इस्तेमाल किया जाये– आम बोलचाल में इन दवाइयों के समन्वय को "कॉकटेल" भी कहा जाता है। ऐसा समन्वय रक्त में एचआईवी के स्तर घटाने की दृष्टि से सर्वाधिक प्रभावकारी होता है, क्योंकि इससे एचआईवी (विषाणुओं) को उनके जीवनचक्र के विभिन्न बिंदुओं पर खत्म किया जा सकता है और नये विषाणुओं के उत्पन्न होने से रोका जा सकता है। इस प्रकार यदि कोई एक दवा किसी खास बिंदु पर एचआईवी विषाणु के उत्पन्न होने की प्रक्रिया को रोक पाने में असफल रहती है तो दूसरे चरण में दूसरी दवा को इसमें सफलता मिल जाती है। इतना ही नहीं इस प्रक्रिया में ऐसा कम ही होता है कि दवा का असर नहीं हो, लेकिन यदि किसी मामले में किसी विषाणु पर दो दवाओं का प्रभाव नहीं पड़ता तो उम्मीद की जाती है कि तीसरी दवा अपना असर जरूर दिखाएगी। इस प्रकार दवाओं का बहुआयामी प्रभाव विषाणुओं की उत्परिवर्तन और इस तरह प्रतिरोधक क्षमता को कम कर देता है। इसके लिये हालांकि आवश्यक होता है कि लगातार सही और उच्च गुणवत्ता की दवा ली जाए। इन मानकों पर अमल नहीं कर पाने का सीधा अर्थ होता है– असफल इलाज।

एआरवी थेरेपी का सार्वजनिक वितरण और अनुपालन की जटिलताएं

एआरवी थेरेपी दीर्घकालिक और जीवनपर्यंत चलती है। मौजूदा चिकित्सा प्रौद्योगिकी शरीर से एचआईवी विषाणुओं को पूरी तरह से खत्म नहीं कर सकती और सीडी–4 डीएनए में छिपे समायोजित एचआईवी डीएनए इस बात को सुनिश्चित करता है कि रेट्रोवायरल तत्व की बहुत कम मौजूदगी तथा निष्क्रियता के बावजूद एचआईवी विषाणु शरीर में मौजूद रहते हैं। इसीलिए प्रभावकारी इलाज के लिए सभी उपायों को अपनाना

7 न्यू मेक्सिको एड्स इंफोनेट, एचआईवी लाइफ साइकल, फैक्ट शीट नंबर 106. अक्टूबर 9, 2004.http://www.thebody.com/nmai/cycle.html.

आवश्यक होता है और डॉक्टरी परामर्श के अनुसार समय पर दवाइयां लेना एवं आहार और जीवनशैली संबंधी सभी एहतियातों पर अमल करना जरूरी होता है। खान–पान और दवा संबंधी एहतियातों का पालन नहीं करने पर दो मुख्य समस्याएं उत्पन्न होती हैं – एचआईवी को दबाने वाली दवाइयां काम नहीं करतीं और दवाई के विरुद्ध प्रतिरोधक क्षमता बढ़ जाती है। इलाज के दिशा–निर्देशों पर अमल नहीं करने से दवाओं का अनुचित इस्तेमाल और अनावश्यक बर्बादी होती है। बेहतर परिणाम के लिए निर्देशों एवं एहतियातों का 90 से 95 प्रतिशत तक पालन करना आवश्यक होता है। इसका मतलब है कि एक महीने में एक से अधिक खुराक छूटनी नहीं चाहिए। अनेक दवाओं के दुष्प्रभाव (साइड–इफेक्ट) भी होते हैं, इसलिए इस बारे में सतर्क रहना आवश्यक है।

दूसरी सबसे बड़ी समस्या एचआईवी विषाणुओं की परिस्थिति के अनुसार अपने आप को ढाल लेने की तीव्र क्षमता को लेकर है, जिसके कारण यह दवा के खिलाफ प्रतिकृति क्षमता विकसित कर लेते हैं और इनकी संख्या तेजी से बढ़ती रहती है। एचआईवी विषाणु एक दिन में कई–कई गुना तक बढ़ सकते हैं और उनका जेनेटिक म्यूटेशन भी होता है और इस कारण प्रतिकृति बनने की हर प्रक्रिया के साथ विषाणुओं की दवा के खिलाफ प्रतिरोधक क्षमता बढ़ती है। इसलिए यदि मरीज एक भी खुराक छोड़ देता है तो विषाणुओं की दवा के खिलाफ प्रतिरोधक क्षमता बढ़ जाती है, जिससे लंबे समय तक विषाणुओं की बढ़ती संख्या को रोक पाना कारगर नहीं हो पाता। ज्यादातर मामलों में विषाणुओं की प्रतिरोधक क्षमता बढ़ती है। यूरोप और अमेरिका में, जहां कुछ दवाएं करीब दो दशकों से इस्तेमाल में हैं, इनमें से कुछ दवाओं का एचआईवी विषाणुओं असर समाप्त हो गया है। दवाओं के प्रति विषाणुओं की प्रतिरोध क्षमता पर अंकुश लगाने का एकमात्र कारगर तरीका है– विषाणुओं की बढ़ती संख्या पर अंकुश रखने के लिए अधिक से अधिक उपाय करना।[8] शरीर में प्रति घन मिलीमीटर 500 विषाणुओं की मौजूदगी होने पर विषाणुओं का बहुत अधिक पुनरोत्पादन होता है जिसके कारण इन विषाणुओं में दवाइयों के प्रति प्रतिरोध क्षमता विकसित हो सकती है।

लेकिन एआरवी थेरेपी की कई विधियां हैं, ताकि रोगी में अगर किसी दवाई के प्रति प्रतिरोधक क्षमता विकसित हो जाये तो थेरेपी की दूसरी या तीसरी विधि का इस्तेमाल किया जा सके। फिलहाल एआरटी की थेरेपी के पहले तरीके के तहत आने वाली दवाओं पर 200 अमरीकी डालर अर्थात् करीब नौ हजार रुपये की लागत आती है, जबकि दूसरी विधि वाली दवाओं पर 2000 अमरीकी डालर अर्थात् लगभग 90 हजार रुपये लागत आती है। खासकर गरीब देशों में थेरेपी की दूसरी और तीसरी तरह की विधियों के तहत आने वाली दवाइयां एचआईवी/एड्स ग्रस्त मरीजों के लिये बहुत मंहगी पड़ती हैं और ये इन मरीजों में से ज्यादातर के लिये सुलभ भी नहीं हैं। हालांकि इस बात के संकेत मिल रहे हैं कि स्थिति बदल रही है। क्लिंटन फाउंडेशन ने कम कीमत पर दूसरी विधि की दवाइयां बनाने के लिए हाल ही में जेनेरिक दवा बनाने वाली कंपनियों– सिपला, रैनबैक्सी और एस्पेन के साथ समझौता किया है।[9]

केवल दवाइयों की व्यवस्था करके तथा दवाओं का नियमित सेवन सुनिश्चित करके समस्या का समुचित समाधान नहीं किया जा सकता है। एआरवी थेरेपी से चूंकि व्यापक औषधि विषाक्तता (टॉक्सिसिटी) और घातक दुष्परिणाम (साइड इफेक्ट्स) होने की आशंका होती है, इसलिए संबंधित दवाओं का सेवन कड़ी निगरानी में होना चाहिये। इतना ही नहीं रोगियों को हमेशा पौष्टिकता संबंधी दिशानिर्देशों का पालन भी करना चाहिए। साथ ही चिकित्साकर्मियों को नियमित रूप से मरीज की स्थिति में हो रहे सुधार तथा उस पर दवा के असर का निरीक्षण करते रहना चाहिये।

8 बोसेली, साराह, क्लिंटन स्ट्राइक्स डील फॉर चीपर एड्स ड्रग्स एंड फास्ट एचआईवी टेस्ट, द गारडियन, शुक्रवार जनवरी 13, 2006
9 वही

एआरवी थेरेपी के प्रति लापरवाही पूर्ण रवैये का उल्टा असर हो सकता है और बीमारी काफी गंभीर रूप ले सकती है। इसके कारण थेरेपी की पहली विधि की दवाइयों की सुलभता के फायदे समाप्त हो सकते हैं और महामारी की प्रकृति और गंभीर रूप ले सकती है। गरीब देशों के संदर्भ में यह बात खासतौर पर महत्वपूर्ण है, जहां पर्याप्त चिकित्सीय सुविधाओं का अभाव है तथा जहां इलाज के बाद की देखरेख की स्थिति खराब है या इलाज को लंबे समय तक चलाना मुश्किल होता है। तमाम कठिनाइयों के बावजूद एआरवी थेरेपी के एहतियातों एवं नियमों के पालन के अलावा इलाज पर गहन निगरानी रखनी चाहिए तथा इस बात पर ध्यान दिया जाना चाहिये कि थेरेपी ले रहे मरीजों से एचआईवी का फैलाव नहीं हो। यदि ऐसा नहीं होता तो एआरवी थेरेपी को सर्वसुलभ बनाने की जद्दोजहद की अंतिम परिणति गंभीर हो सकती है – एआरटी निष्प्रभावी साबित होगी और दवाइयों के प्रभावों से मुक्त विषाणुओं की उत्पत्ति होगी, जिसके कारण इस समय उपलब्ध दवाओं से एचआईवी संक्रमण का इलाज करना संभव नहीं हो पायेगा।

केन्या में इस तरह के प्रमाण मिले हैं जिससे पता चलता है कि रोकथाम के उपायों को मजबूत बनाये बगैर एआरवी थेरेपी की उपलब्धता एक तरह से लोगों को ख़तरनाक यौन गतिविधियों के लिये प्रोत्साहित करती है।[10] इस तरह जहां अनुसंधानों से यह पता चला कि है कि विकासशील देशों में मरीजों को एआरटी उपलब्ध किए जाने पर वे इलाज के दिशानिर्देशों का जिम्मेदारी और कड़ाई से पालन करते हैं, लेकिन वहीं इस बात की जरूरत है कि एआरवी थेरेपी को उपलब्ध बनाये जाने के साथ–साथ एचआईवी/एड्स की रोकथाम के कार्यक्रम जोर–शोर से चलाए जाएं। एआरवी थेरेपी हालांकि एक महत्वपूर्ण कदम है, लेकिन एचआईवी के विषाणुओं के फैलाव पर रोक लगाने के लिये जिन व्यापक योजनाओं की जरूरत है उनमें से यह महज एक कदम है। एआरटी की उपलब्धता सतत् और प्रभावकारी तरीके से सुनिश्चित की जानी चाहिए। इसकी निरंतर उपलब्धता में बाधा आना दरअसल दवाओं की अनुपलब्धता की तुलना में ज्यादा हानिकारक है। एआरवी थेरेपी नीति की विफलता का बहुत ही खराब प्रभाव होता है, जिससे मरीजों पर दवाइयों का असर नहीं होता, दवाओं के खिलाफ विषाणुओं की प्रतिरोधात्मकता बढ़ती है और अंततः दवाइयों के प्रभाव से बेअसर (ड्रग–रेसिस्टेंट) एचआईवी की नई किस्म विकसित होने का खतरा पैदा हो जाता है।

भारत में एंटीरेट्रोवायरल थेरेपी की उपलब्धता

भारत में ऐसे लोगों के लिए एआरवी थेरेपी लेना मुश्किल है जो दवाइयों के बहुराष्ट्रीय फर्मास्युटिकल कंपनियों द्वारा निर्धारित बाजार मूल्य का भुगतान कर पाने में असमर्थ हैं। हाल में भारत, दक्षिण अफ्रीका और ब्राजील की दवा कंपनियों ने अपेक्षाकृत सस्ती फर्स्ट लाइन और सेकेंड लाइन की जेनेरिक दवाइयां बाजार में उतारी हैं लेकिन इसके बावजूद एचआईवी/एड्स के ज्यादातर मरीजों को एआरवी थेरेपी दवाइयां नियमित रूप से नहीं मिल पा रही हैं। फर्स्ट लाइन की जेनेरिक एआरवी थेरेपी के लिए प्रतिदिन एक डालर अर्थात् करीब 45 रुपये खर्च करना ज्यादातर भारतीयों के लिए बहुत कठिन है। लगातार आवश्यक जांच पर खर्च करने के अलावा उन्हें थेरेपी लेने के लिये आने–जाने पर भी बहुत खर्च करना पड़ता है। निजी और सार्वजनिक दोनों ही कार्यक्रमों के तहत इलाज पाने के लिये एचआईवी/एड्स ग्रस्त मरीजों के लिए बिहार से दिल्ली के अस्पतालों तक पहुंचना और आंध्र प्रदेश के सुदूर ग्रामीण इलाकों से बेंगलूर पहुंचना बहुत ही मुश्किल काम है। कुछ मामलों में लोग स्थानीय एआरवी थेरेपी केंद्रों से परिचित नहीं होते हैं, जिसके कारण अनावश्यक पैसों की बर्बादी होती है। इसके परिणामस्वरूप, यदि कोई एचआईवी/एड्स मरीज एआरवी थेरेपी हासिल करने के मामले में सौभाग्यशाली भी रहता है तो इसकी निरंतरता बनाये रखना बहुत ही मुश्किल काम होता है। अभी तक तो एड्स के इलाज पर मूलतः अमीरों का विशेषाधिकार रहा है, जबकि गरीबी की वजह से एचआईवी संक्रमण का प्रभाव बढ़ रहा है।

---

10 वर्ल्ड बैंक 21 पर

केवल जेनेरिक दवाओं के उत्पादन से ही दवाइयों को सर्वसुलभ कराने की समस्या का उचित समाधान संभव नहीं है। भारतीय दवा कंपनियों ने 2000 में ही एआरवी थेरेपी का उत्पादन शुरू किया था, लेकिन इलाज हासिल कर पाने वाले मरीजों की संख्या एचआईवी/एड्स ग्रस्त लोगों की संख्या से बहुत ही कम है। वर्ष 2004 में जारी विश्व बैंक की एक रिपोर्ट इस बात का संकेत देती है कि भारत में जिन साढ़े पांच लाख एड्स रोगियों को इलाज की आवश्यकता है, उनमें से केवल 11 हजार 700 रोगियों को ही एआरवी थेरेपी नसीब है। इतना ही नहीं, इनमें से ज्यादातर का इलाज विश्व स्वास्थ्य संगठन (डब्ल्यूएचओ) और राष्ट्रीय एड्स नियंत्रण संगठन (नाको) के मानकों के अनुरूप नहीं चल रहा है।[11]

वर्ष 2005 के अपेक्षाकृत ताजा आंकड़ों से इस बात का खुलासा होता है कि भारत में कुल सात लाख 70 हजार एचआईवी/एड्स ग्रस्त मरीजों को एआरवी थेरेपी की आवश्यकता है, जिनमें से केवल 35,000 को ही यह उपलब्ध हो रही है[12] जो कुल मरीजों की संख्या में से पांच प्रतिशत से भी कम है। वर्ष 2003 के अंत में उच्चतम न्यायालय में दायर "एचआईवी/एड्स ग्रस्त मरीज (वीएचएपी) बनाम भारत सरकार" की याचिका (जिसके बारे में नीचे विचार किया गया है) से प्रेरित होकर स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण मंत्रालय ने एड्स रोगियों की अधिकता वाले छह राज्यों में एक लाख एचआईवी/एड्स मरीजों को निःशुल्क एआरवी थेरेपी उपलब्ध कराने की नीति की घोषणा की थी। इसे अप्रैल 2004 से शुरू करके 2005 में पूरा करना था। लेकिन जुलाई 2005 तक मंत्रालय ने वर्ष के अंत तक एक लाख पीएलएचए पीड़ितों को एआरटी उपलब्ध कराने की किसी भी नीति के अस्तित्व को ही नकार दिया। यह समयावधि बढ़ाकर 2007 के अंत तक कर दी गयी। साथ ही कार्यक्रम के पहले वर्ष के दौरान केवल 10,255 रोगियों को ही सूचीबद्ध किया गया, जबकि ताजा आंकड़े बताते हैं कि संपूर्ण भारत के महज 25 जिला अस्पतालों में ही निःशुल्क एआरटी उपलब्ध कराने का प्रावधान है।

एक लाख एड्स रोगियों को मुफ्त इलाज उपलब्ध कराने के कार्यक्रम के क्रियान्वयन में सरकार की असफलता के अलावा दवाइयों के अभाव, दवाइयों की उपलब्धता में विलम्ब और दवाइयों के वितरण की गड़बड़ियों के कारण एड्स नियंत्रण के लिये चलाये गये कुछ और भी कार्यक्रमों के सामने काफी मुश्किलें हैं।[13] एचआईवी/एड्स मरीजों को दवाइयां हासिल करने के लिये लंबी दूरी तय करनी पड़ती है और उन्हें हर महीने एआरटी केंद्रों तक जाने की खुद व्यवस्था करनी पड़ती है जिसके कारण उन्हें अपने अन्य जरूरी काम टालने पड़ते हैं। लेकिन जब ये मरीज एआरटी केन्द्रों पर पहुंचते हैं तो उन्हें दवाइयों के अभाव अथवा वितरण संबंधी गड़बड़ियों के कारण दवाइयां नहीं मिल पाती हैं। दवाइयों के अलावा कुछ और भी समस्याएं आती हैं। कुछ जिले में तो उन मरीजों को शक्तिशाली एआरवी थेरेपी की अधिक खुराक बांटने को बाध्य किया जाता है जो इस दवा के प्रभाव और दुष्प्रभाव को झेल नहीं सकते। इसका एकमात्र कारण यही है कि सही खुराक उपलब्ध नहीं हो पा रही है, साथ ही एआरटी और ओआई प्रोफाइलैक्सिस इलाज के बीच समुचित तालमेल का अभाव है। दोनों ही स्थितियों की वजह से मरीजों का सही इलाज नहीं हो पाता है।

सरकार उन मरीजों को दूसरी लाइन की एआरवी थेरेपी उपलब्ध कराने से इंकार करती है जिनमें एचआईवी/एड्स संक्रमण के खिलाफ प्रतिरोध क्षमता है। सरकार प्रथम लाइन की दवाइयां तक उपलब्ध कराने में व्यापक रूप से असफल रही है और इसे देखते हुये दूसरे लाइन की दवाइयां उपलब्ध कराने के निर्धारित लक्ष्य के महज पांच प्रतिशत हिस्से को पूरा करना भी दूर का सपना नजर आ रहा है।

---

11 वर्ल्ड बैंक 19 पर

12 वॉलंटरी हेल्थ एसोसिएशन ऑव पंजाब बनाम भारत सरकार व अन्य, रिट पिटिशन (सिविल) नं. 311 ऑव 2003, पेज. 20, डब्ल्यूएचओ स्टैटिक्स ऑव जून 2005

13 अर्चना कपूर, इम्फाल, 'स्टॉकिंग मणिपुर : एचआईवी/एड्स', हार्डन्यूज, अगस्त 2005

एड्स नियंत्रण के लिये धन के अभाव की वजह से भी इस संक्रामक महामारी के खिलाफ जंग कारगर नहीं हो पा रही है। वर्ष 2005 के आंकड़ों के अनुसार भारत सरकार ने एड्स संबंधी कार्यक्रमों पर प्रति व्यक्ति करीब 29 सेंट अर्थात् 13 रुपये खर्च किये। एचआईवी/एड्स के खिलाफ संघर्ष में बेहतर सफलता वाले देशों– थाईलैंड, युगांडा और कम्बोडिया ने क्रमशः 55 सेंट (24.75 रुपये), 1.85 अमरीकी डालर (83.25 रुपये) और 5.70 अमरीकी डालर (256.50 रुपये) खर्च किये। इतना ही नहीं भारत में एचआईवी/एड्स के नियंत्रण के लिये जितनी भी धन राशि का प्रावधान किया गया है उसका या तो सही इस्तेमाल नहीं हो पाता है या वह नौकरशाही के चक्कर में फंसी रह जाती है।[14] एचआईवी/एड्स के खिलाफ संघर्ष के लिये भारत सरकार की ओर से खर्च की जाने वाली राशि का बड़ा हिस्सा विश्व बैंक और ग्लोबल फंड फॉर एड्स, टीबी एंड मलेरिया जैसे विदेशी स्रोतों से प्राप्त होता है।[15] एचआईवी/एड्स के खिलाफ अभियान को सफल बनाने के लिए इसे और अधिक लक्ष्य केन्द्रित बनाने तथा इसके लिये पर्याप्त धन लगाने की जरूरत है। साथ ही साथ इस अभियान को सरकार की दृढ़ कार्रवाई का सहयोग मिलना आवश्यक है।

एचआईवी/एड्स, एआरवी थेरेपी और नीति

भारत में एचआईवी/एड्स के खिलाफ संघर्ष की सफलता के लिये भविष्य की सारी उम्मीदों को पूरी तरह से एंआरटी पर निर्भर नहीं रखा जा सकता है। यह कोई जादू की छड़ी नहीं है। इस संक्रामक बीमारी के प्रति हमारा रवैया बहुआयामी और व्यापक होना चाहिए तथा निजी और सार्वजनिक क्षेत्र को इस समस्या पर काबू पाने के लिए अनेक मोर्चों पर एक साथ मिलकर काम करना होगा। इतिहास हमें बताता है कि मूल नीतियों में परिवर्तन और कार्रवाइयां सरकार की ओर से होनी चाहिये – चाहे वह प्रारम्भिक कदम के रूप में हो या नागरिक संगठनों के कार्यों को समर्थन के रूप में। एआरवी थेरेपी दवाइयों की सर्वसुलभता के रास्ते में पहला मुख्य अवरोधक है – एआरवी थेरेपी दवाइयों की कीमत– जिस पर भारतीय पेटेंट कानून और अंतर्राष्ट्रीय संपदा का नियंत्रण है।[16] पेटेंट के मसले को छोड़ दिया जाये तो एआरवी थेरेपी दवाइयों के लिये रियायती एवं नियंत्रित मूल्यों के साथ बुनियादी कार्रवाई शुरू की जानी चाहिये। एआरटी दवाइयों का इस्तेमाल सतत् और प्रभावकारी तरीके से किया जाना चाहिए और भारत के प्रत्येक जिला अस्पतालों में यह उपलब्ध कराई जानी चाहिए। इसके अलावा एआरवी थेरेपी के समुचित इस्तेमाल को सुनिश्चित करने के लिये रोगनिरोध और एचआईवी/एड्स के कारण समय–समय पर उत्पन्न होने वाले संक्रमणों के इलाज के लिये भी एआरटी उपलब्ध होनी चाहिये।

एआरवी थेरेपी और ओआई एंचआईवी/एड्स से जुड़े विभिन्न संक्रमणों के लिये दवाइयों की सुविधा सुनिश्चित करने के साथ–साथ सरकार को एचआईवी/एड्स संक्रमित लोगों के लिये चिकित्सीय, आर्थिक और मनोवैज्ञानिक–सामाजिक सहयोग से जुड़े कार्यक्रम भी शुरू करने चाहिये। इन कार्यक्रमों के जरिये यह सुनिश्चित किया जाना चाहिये कि लोग उपचार बीच में नहीं छोड़ें तथा दवाइयों की उपलब्धता अधिक से अधिक हो। इसके अलावा संक्रमण को और फैलने से रोकने की भी कोशिश होनी चाहिये। इन कार्यक्रमों[17] में निम्नलिखित को शामिल किया जा सकता है–

- प्रत्येक जिला अस्पताल में निःशुल्क या कम से कम शुल्क पर आवश्यक जांच और निगरानी उपकरणों की व्यवस्था सुनिश्चित की जानी चाहिये, जैसे सीडी–4, विषाणुओं की संख्या, लीवर आदि की जांच आदि।

14 वीएचएपी याचिका 35 पर
15 वही
16 देखें (इंटेलेक्चुअल प्रोपर्टी : पेटेंट्स, ट्रिप्स एंड एंटीरिट्रोवायरल)
17 श्रुति पांडे, फाइट फार फ्री एआरवी ड्रग्स, कम्बैट लॉ, वाल्यूम–5 इश्यू नं. 2, पेज–15, अप्रैल–मई 2006

- मरीज की नियमित निगरानी तथा देखभाल के लिये पर्याप्त धन राशि की व्यवस्था होनी चाहिये।
- एचआईवी/एड्स उपचार केंद्रों तक मरीजों को पहुंचाने के लिए सस्ते या निःशुल्क सरकारी वाहनों की व्यवस्था।
- चिकित्सकों, नर्सों और सलाहकारों के लिए राष्ट्रव्यापी स्तर पर एचआईवी/एड्स प्रशिक्षण एवं जागरूकता कार्यक्रम चलाना, ताकि एचआईवी/एड्स ग्रस्त लोगों का इलाज ससम्मान, पूरे विश्वास और कारगर चिकित्सा सेवाओं के साथ हो सके।
- निम्न आय वाले एचआईवी/एड्स ग्रस्त लोगों के लिए अंत्योदय अन्न योजना कार्ड जारी किया जाना चाहिये, ताकि उन्हें रियायती दर पर खाद्यान्न उपलब्ध हो सके।
- सरकार के एचआईवी/एड्स इलाज कार्यक्रमों का व्यापक प्रचार।
- रोकथाम के लिये अधिक जोरदार प्रयास करना, खासतौर पर एआरवी थेरेपी लेने वाले एचआईवी/एड्स ग्रस्त लोगों के लिये।
- एआरटी की व्यवस्था सहित एमटीसीटी का प्रभावकारी क्रियान्वयन, भले ही इसे निजी और सरकारी अस्पतालों के बीच सहयोग के साथ ही क्यों न अमल में लाया जाए।
- एचआईवी/एड्स का इलाज उपलब्ध कराने वाले केंद्रों तथा एचआईवी/एड्स से जुड़े संक्रमणों खासतौर पर तपेदिक आदि का उपचार करने वाले केन्द्रों और डॉट्स कार्यक्रमों को संचालित करने वाले केंद्रों के बीच संबंध स्थापित करना और इनके बीच के संबंधों को मजबूत बनाना।

स्पष्ट है कि एचआईवी/एड्स की रोकथाम के लिये बनायी जाने वाली नीतियों को "एआरटी थेरेपी की सर्वसुलभता" से भी व्यापक बनाया जाना चाहिये। एआरवी थेरेपी की जटिल और सूक्ष्म प्रकृति और राष्ट्रव्यापी कार्यक्रम के क्रियान्वयन पर आने वाली लागत के मद्देनजर ऐसे उपाय किये जाने चाहिए जिनसे एचआईवी चिकित्सा सुविधाओं को सुलभ बनाने के प्रयास बेकार न जाएं। वितरण से जुड़ी बहुआयामी समस्याओं के समाधान के लिये बहुआयामी समाधान की जरूरत होती है। राष्ट्रीय स्तर पर एआरवी थेरेपी चिकित्सा को सर्वसुलभ बनाने के संदर्भ में एआरवी थेरेपी चिकित्सा के प्रभावों से निपटने के लिये सकारात्मक तैयारियां उतनी ही जरूरी हैं जितनी जरूरत सही दवाइयों को उपलब्ध कराने की है।

आमतौर पर व्यापक एआरटी कार्यक्रम शुरू करने से पूर्व समुचित चिकित्सा की आधारभूत संरचना कायम की जानी चाहिये, ताकि यह कार्यक्रम अधिक से अधिक कारगर हो सके। हालांकि एआरवी थेरेपी व्यवस्था की वकालत करने वाले अनेक लोगों की दलील है कि संसाधनों का अभाव झेल रहे देशों में भी एआरवी थेरेपी शुरू की जा सकती है और एआरवी थेरेपी को शुरू करने के लिये आदर्श स्थिति तैयार होने का इंतजार नहीं किया जा सकता।[18] दक्षिण अफ्रीका की संवैधानिक अदालत ने इस मसले पर विशेष टिप्पणी करते हुए इस बात से सहमति जताई कि एआरवी थेरेपी को उपलब्ध कराने के लिये पूर्व शर्त के तौर पर आदर्श स्थिति कायम करने की आवश्यकता अतार्किक है और इसी के मद्देनजर उसने आवश्यक दवाओं की आपूर्ति का आदेश दिया।[19] यद्यपि इस बहस की यहां विस्तृत चर्चा की गुंजाइश नहीं है, लेकिन एआरवी थेरेपी व्यवस्था के लिए किये गये किसी भी न्यायिक फैसले अथवा इसके लिये उठाये गये किसी भी कदम को स्वीकार करना चाहिये तथा ऐसे किसी कार्यक्रम में निहित जटिलताओं का समाधान करना चाहिये।

---

18 एलीसिया फ्लाय यामिन यामिन, नॉट जस्ट अ ट्रैजेडी: एक्सेस टू मेडिकेशन्स एज अ राइट अंडर इंटरनेशनल लॉ, 21 बी.यू. इंटील एल.जे. 325, 327 (2003)
19 स्वास्थ्य मंत्री बनाम चिकित्सा कार्यवाही अभियान, दक्षिण अफ्रीका का संवैधानिक न्यायालय, सीसीटी 8/02 (2002); यामिन, 361 पर

एआरवी थेरेपी की उपलब्धता और कानून

दुर्भाग्यवश, भारत में एचआईवी/एड्स से संबंधित पूर्ण रूप से विकसित कानूनी निकाय और खासतौर पर एआरवी थेरेपी के लिये सरकारी व्यवस्था का अभाव है। भारत में हालांकि राष्ट्रीय एड्स नियंत्रण कार्यक्रम (नाको) चलाया गया है, लेकिन एचआईवी/एड्स के संबंध में मानवाधिकारों के उल्लंघन के ढेर सारे मामलों पर देश की अदालतों में कानूनी कार्यवाही शुरू नहीं होती। इस कारण एचआईवी/एड्स से जुड़े मानवाधिकारों और एआरवी थेरेपी के बीच के संबंधों की अंतर्राष्ट्रीय कानून और अंतर्राष्ट्रीय नियमों के आधार पर ही समीक्षा की जाती है। हालांकि प्रत्येक देश और अदालतें मामले का निपटारा अपने कानूनी प्रावधानों एवं नियमों के आधार पर ही करती हैं, इस कारण हर देश में जीने के अधिकार और स्वास्थ्य के अधिकार के बुनियादी सिद्धांत उस देश में सफलतापूर्वक निपटाये गये कानूनी मामलों में ही अंतर्निहित होते हैं।

एआरवी थेरेपी की उपलब्धता और मानवाधिकार : एक अंतर्राष्ट्रीय दृष्टिकोण

मानवाधिकार के प्रारूप के भीतर, सार्वजनिक तौर पर एआरवी थेरेपी उपलब्ध कराने के मामले में सरकार की लापरवाही एवं विफलता के खिलाफ अनेक सफल मामले दर्ज किये गये हैं और इनकी मदद से पूर्व मानवाधिकार के उल्लंघनों को सुधारा जा सका है। दवाइयों और चिकित्सीय सुविधाओं की उपलब्धता तथा जीवन एवं स्वास्थ्य के अधिकारों तक पहुंच के मामलों में मानवाधिकारों के मामले अवश्य उठाये जाने चाहिये।

जीने के अधिकार

अंतर्राष्ट्रीय नागरिक एवं राजनीतिक अधिकार कोवेनेन्ट (आईसीसीपीआर) की धारा–6 (1) में अंतर्निहित जीवन का अधिकार सर्वाधिक मौलिक और सर्वमान्य मानवाधिकार है। जीने के अधिकार के मूल मसौदे में यद्यपि यह घोषणा की गयी है कि जीने का अधिकार "कानून के तहत संरक्षित होगा और किसी को भी मनमाने तरीके से जीने के अधिकार से वंचित नहीं किया जाएगा।"[20] जीने के अधिकार की व्यापक व्याख्या की गयी है। जीने का मौलिक अधिकार जैविक रूप से जीने और जीवन के खिलाफ किसी शासनात्मक निकाय की प्रत्यक्ष कार्रवाई के दायरे से ऊपर है तथा जीने के अधिकार में सरकार की ओर से निर्मित या अनुमोदित स्थितियों को भी शामिल किया गया है। जीने के अधिकार के तहत इस बात को जरूरी बनाया गया है कि स्थितियां न केवल जीने के लिए पर्याप्त हों, बल्कि गरिमामय एवं बेहतर जीवन के अनुकूल हों।[21] जीने का अधिकार मूल रूप से अस्पष्ट एवं व्यापक है, लेकिन कानूनी फैसलों के जरिये इसे बेहतर तरीके से समझा जा सकता है।

जीने के अधिकार के मामलों पर अंतर्राष्ट्रीय कानून और उनकी कानूनी व्याख्याओं के साथ–साथ इस अधिकार के दायरे में व्यापकता आती गयी है। टैवरेस बनाम फ्रांस मामले में, यूरोपीय मानवाधिकार आयोग ने जोर दिया कि जीने के अधिकार के तहत किसी के जीवन को गैरइरादतन समाप्त किये जाने के खिलाफ आवश्यक कार्रवाई को शामिल किये जाने की जरूरत है।[22] इसी प्रकार मोरालेस बनाम ग्वाटेमाला मामले में, इंटर–अमेरिकन कोर्ट ऑव् ह्यूमन राइट्स ने व्यवस्था दी कि "जीने के अधिकार का मतलब किसी को जान–बूझकर जीने के अधिकार से वंचित नहीं रखने का नकारात्मक दायित्व ही नहीं है बल्कि उसके मौलिक अधिकारों का उल्लंघन

20 सामाजिक और राजनीतिक अधिकारों पर अंतर्राष्ट्रीय कोवेनेंट (आईसीसीपीआर), जीए रेस. 2200, यूएन. गाओर, सप्लीमेंट नंबर–16, एट 52, यूएन डॉक. ए/6316(1966), 999 यूएनटीएस. 171, 174 (इंटर्ड मार्च 23, 1976)

21 यामिन, 331 पर

22 टैवेयर्स बनाम फ्रांस, आवेदन संख्या–16593/90, 12 सितंबर, 1991(मानवाधिकारों पर यूरोपियन आयोग)

न हो, इसके लिए सभी सकारात्मक कदम उठाना भी है।[23] स्वीकारात्मक कदम और सकारात्मक दायित्वों के निर्वाह के तहत संक्रामक बीमारियों का उन्मूलन[24], प्रदूषण नियंत्रण और पर्यावरण विनाश को रोकने[25] और इन सबके लिये सक्षम परिस्थितियां तैयार करने[26] की सरकारी व्यवस्था भी शामिल है। साथ ही इसमें गर्भपात रोकने और महिलाओं को घरेलू हिंसा से बचाने वाले कानूनों[27] के अभाव जैसे महिलाओं के लिये नकारात्मक परिणामों वाली सामाजिक नीतियों को हटाने जैसे कदम भी शामिल हैं। संयुक्त राष्ट्र की मानवाधिकार समिति ने जीने के अधिकार की व्यापक व्याख्याओं की खासतौर पर संस्तुति की है। राज्य द्वारा जीवन पर अतिक्रमण नहीं करने की पूर्ववर्ती अवधारणा से ऊपर उठते हुये आज जीने के अधिकार की व्याख्या में जीवन को संरक्षित, सुरक्षित और व्यापक बनाने के लिए सरकार की ओर से उठाये गए स्वीकारात्मक कदमों को शामिल किया गया है। कानूनी फैसलों में चिकित्सीय सुविधाओं की उपलब्धता और जीवन रक्षक उपचार आदि के मुद्दे प्रमुखता से उभरे हैं।

एआरवी थेरेपी हासिल करने के लिए जीने के अधिकार के इस्तेमाल से संबंधित सर्वाधिक महत्वपूर्ण घटनाक्रम बहुपक्षीय/अंतर्राष्ट्रीय अदालतों में नहीं घटते, बल्कि पूरी दुनिया के विभिन्न देशों की अदालतों में भी नजर आते हैं। अंतर्राष्ट्रीय मानकों के समानान्तर ज्यादातर देश के संविधानों में जीने के मौलिक अधिकार को सुनिश्चित करने के प्रावधानों को शामिल किया गया है और जिनमें अंतर्राष्ट्रीय कानूनों के अनुकूल जीने के अधिकार की व्यापकतम व्याख्यायें परिलक्षित होती हैं। इस प्रकार एचआईवी/एड्स से ग्रस्त लोगों को एआरटी उपलब्ध कराने संबंधी मुकदमों के माध्यम से सरकार पर डाले गए दबावों ने सिद्धांत रूप में जीने के संवैधानिक अधिकार का महत्व प्रदर्शित किया है। एआरटी उपलब्धता नहीं करा पाने की सरकार की असफलता को जीने के अधिकार का उल्लंघन मानते हुये कई सफल मुकदमे वेनेजुएला[28], अर्जेंटीना[29], बोलिविया[30], कोस्टारिका[31], इक्वाडोर[32], अल सल्वाडोर[33] और कोलम्बिया[34] में दर्ज किये गये। ऐसा लगता है कि किसी भी मामले में हालांकि जीने के अधिकार को गारंटी देने वाले अंतर्राष्ट्रीय प्रावधानों पर निर्भर नहीं किया गया, उसे पूरी तरह आधार नहीं

23 मोरेल्स बनाम ग्वाटेमाला, ज्वाइंट कंकरिंग ओपिनियन आफ जजेज ए.ए.। कनकैडो त्रिनिदादे एंड ए। ए एब्रेयू , इंटर–एम, कनक्टि. एच.आर. (सिरि. सी.) संख्या–63, पृष्ठ–2–4 (सरकारी एजेंट के सड़कों पर पलने वाले बच्चों को को उत्पीड़ित करते हैं, धमकाते हैं और आखिरकार हत्या भी कर देते हैं। सरकार ने इन्हें संरक्षण नहीं दिया है और न ही इस बारे में पर्याप्त जांच की है।)

24 द राइट टू लाइफ, यूएन जीएओआर मानवाधिकार आयोग, 37 वां सेशन, सप्लीमेंट नंबर 40 जेन. कमेंट नंबर–6 पृष्ठ 5 पर, यूएन डॉक्युमेंट ए/37/40(1982)

25 सोशल एंड इकोनोमिक राइट्स एक्शन सेंटर बनाम नाइजीरिया, सूचना 155/96 (अफ्रिकन कमीशन ऑन ह्यूमन एंड पीपुल्स राइट्स) (अक्टूबर–2001)

26 यामिन, 331 परी

27 कनक्लुडिंग ऑब्जर्वेशन ऑव द ह्युमन राइट्स कमिटी : पेरू, पृष्ठ 13, 15, यू.एन. डॉक्यु. सीसीपीआर/सी 79/ऐड. 72(1996)

28 ग्लेंडा लोपेज बनाम इंस्टीटुटो वेनेजोलानो डी सेगुरोस सोशलस, सुप्रीम कोर्ट ऑव वेनेजुएला, एक्सपेडियेंट एन0 00–1343 6 अपैल 2001.

29 एसोसिएसन बेंघालेनसिस ईएलएएन बनाम मिनिस्टेरियो डी सालुड वाइ एक्सियन सोशन, सुप्रीम कोर्ट ऑव जस्टिस ऑव अर्जेंटीना, फैलोस 323: 1339, 1 जून 2000.

30 एन.एन. बनाम ला कारपोरेशन डेल सुगुरो सोशल मिलिटर (कॉसमिल), बोलिवियन सुप्रीम कोर्ट , एक्सपेडियेंट नंबर 2002–05354–10, 8 जनवरी 2003–12–16

31 विलियन गार्सिया अल्वारेज बनाम काजा कोस्टेरिसेंस डी सेगुरो सोशल, कोस्टरिका का संवैधानिक न्यायालय, फाइल 5778–वी–97, 23 सितंबर 1997

32 एडगर मौरिसियो कार्पियो कास्ट्रो बनाम प्रोग्राम नेशनल डेल एसआईडीए–वीआईएच–आईटीएस एंड मिनिस्टेरियो डी सालुड पब्लिका, कंस्टीच्युशनल ट्रिब्युनल (थर्ड चैम्बर), निर्णय संख्या 0749–2003–आर ए (2004)

33 जॉर्ज ओडिर मिरांडा कोर्टेज बनाम ला डायरेक्टोरा डेल इंस्टीटुटो सोल्वाडोरेनो डेल सेगुरो सोशल, एल सैलवाडोर का संवैधानिक न्यायालय, फाइल संख्या 348–99, 4 अप्रैल 2001

34 xxx बनाम इंस्टीटुटो डी सेगुरोस सोसियेल्स (आई एस एस), कोलंबिया का संवैधानिक न्यायालय, निर्णय संख्या टी–271 ऑव 23 जून 1995 (कोलंबिया)

बनाया, उस पर पूरी तरह भरोसा किया नहीं गया, लेकिन अनेक अदालतों ने अंतर्राष्ट्रीय कानूनी प्रावधानों[35] को अपने फैसलों का आधार बनाया या कम से कम उनका उल्लेख विभिन्न मामलों में किया है।[36]

यह प्रवृत्ति अब अंतर्राष्ट्रीय और क्षेत्रीय अदालतों में भी उभर रही है। ओडिर मिरांडा मामला खासतौर पर महत्वपूर्ण है क्योंकि यह पहला क्षेत्रीय मानवाधिकार (इंटर–अमेरिकन कोर्ट ऑव ह्यूमन राइट्स) संबंधी मामला था जिसमें एआरवी थेरेपी की उपलब्धता के मुद्दे[37] के बारे में फैसला दिया गया। ओडिर मिरांडा के मुकदमे में जीत के परिणामस्वरूप अंतर–अमरीकी मानवाधिकार आयोग में अनेक मुदकमे दायर किये गए। कुछ सीमित फैसलों में ही क्षेत्रीय निकायों ने हालांकि एआरटी के संदर्भ में जीने के अधिकार के अनुरूप फैसले सुनाये, लेकिन मानवाधिकार व्यवस्थाओं के बीच अंतरसंबंध विकसित होने का लाभ मिलेगा और एआरटी के संदर्भ में जीने के अधिकार के अनुकूल समान रूप से निर्णय दिया जायेगा।[38]

अदालतों ने जीवन के अधिकार के अनेक न्यायसंगत फैसलों पर भरोसा जताया। उन्होंने आमतौर पर इस बात पर सहमति जताई कि जीवन के अधिकार के मुख्य केंद्र में मानवीय मर्यादा है और इस अधिकार की वजह से राज्य/देश/शासकीय निकाय का कर्त्तव्य बन जाता है कि वह जीवन संरक्षण संबंधी सेवाएं उपलब्ध कराए। ज्यादातर अदालतों ने स्वास्थ्य के अधिकार को जीवन के अधिकार का महत्वपूर्ण कारक माना है।

अदालतों ने जीवन के अधिकार के लिये विभिन्न तर्कों का सहारा लिया है– इन सभी ने आमतौर पर इस बात को माना है कि मानवीय गरिमा का महत्व जीने के अधिकार का केन्द्रीय पहलू है और यह अधिकार राज्य पर यह सकारात्मक दायित्व देता है कि वह जीवन को संरक्षित करने के लिये सेवायें उपलब्ध कराये। अधिकतर अदालतों ने स्वास्थ्य के अधिकार को जीवन के अधिकार का एक निर्णायक तत्व माना है और परिणामस्वरूप एआरवी थेरेपी चिकित्सा के साथ दवाइयों और चिकित्सीय सेवाओं का मुद्दा निकटता के साथ जुड़ गया है।

कोस्टारिका की अदालत ने इससे आगे बढ़ते हुये तर्क दिया कि जीवन के अधिकार को बरकरार रखा जाना चाहिए, अन्यथा अन्य सभी अधिकार बेकार साबित हो जायेंगे। इससे भी ज्यादा, कोस्टारिका की अदालत ने इस दावे को खारिज करने का भी महत्वपूर्ण कदम उठाया कि आर्थिक संसाधनों को अन्य अधिकारों की पूर्ति सुनिश्चित कराने के लिए सुरक्षित रखना चाहिए।[39] कोलम्बिया की संवैधानिक अदालत ने इलाज पाने के अधिकार को उपचार लेने से इंकार करने के अधिकार की तरह मौलिक माना।[40] कोर्ट ने माना कि आर्थिक दबाव में भी पूर्व में बनी व्यवस्था और एआरवी के प्रावधान का पालन करने के लिए संसाधनों को सुरक्षित रखा जाना चाहिए। कोर्ट ने पाया कि सरकार एआरवी के प्रावधानों का पालन करने में असमर्थ रही है जिससे जीने का अधिकार वाधित हुआ है।

---

35 अलोंसो मुनोज सेबालोस बनाम इंस्टीटुटो डी सेगुरोस सोसियेल्स (आई एस एस), कोलंबिया का संवैधानिक न्यायालय संख्या टी–484 ऑव 11 अगस्त 1992; विलियम गार्सिया अल्वारेज बनाम काजा कोस्टारिसेन्स डी सेगुरो, कोस्टा रिका का सामाजिक, संवैधानिक न्यायालय, फाइल 5778–वी–97, 23 सितंबर 1997; ग्लेंडा लोपेज बनाम इंस्टीटुटो वेनेजोलानो डी सेगुरोस सोसियेल्स, वेनेजुएला का उच्चतम न्यायालय, एक्सपेडियेंट नं0– 00–1343, 6 अप्रैल 2001; एसोसिएशन बेंघालेनसिस बनाम मिनिस्टेरियो डी सालुड वाई एक्सियन, अर्जेंटीना के न्याय का उच्चतम न्यायालय, फैलोस 323 : 1339 (1 जून 2000) ; क्रुज डेल वैले बर्मुडेज बनाम मिनिस्टेरियो डी सालुड वाई एक्सियन, वेनेजुएला का उच्चतम न्यायालय, एक्सपेडियेंट नं 15789, 15 जुलाई 1999; एडगर मौरिसियो कार्पियो कैस्ट्रो बनाम प्रोग्राम नेशनल डेल एसआईडीए–वीआईएच–आईटीएस एंड मिनिस्टेरियो डी सालुड पब्लिका, कंस्टीच्युशनल ट्रिब्युनल(थर्ड चैम्बर), निर्णय संख्या 0749–2003–आरए (2004)

36 डी बनाम ब्रिटेन, 30240/96 (1997) ईसीएचआर 25 (मानवाधिकारों का यूरोपियन न्यायालय)

37 मिस्टर जॉर्ज ओडिर मिरांडा कोर्टेज बनाम ला डायरेक्टोरा डेल इंस्टीटुटो साल्वाडोरेनो डेल सेगुरो, एल साल्वाडोर का सामाजिक, संवैधानिक न्यायालय, फाइल संख्या 348–99, 4 अप्रैल 2001

38 यामिन, 334 पर

39 मिस्टर विलियम गार्सिया अल्वारेज बनाम काजा कोस्टारिसेंस डी सेगुरो, कोस्टा रिका का संवैधानिक न्यायालय, फाइल 5778–वी–97, 23 सितंबर 1997 (कोस्टा रिका)

40 xxx बनाम इंस्टीटुटो डी सेगुरोस सोसियेल्स (आईएसएस), कोलंबिया का संवैधानिक न्यायालय, निर्णय संख्या टी–271 ऑव 23 जून 1995

स्वास्थ्य का अधिकार

एचआईवी/एड्स के संदर्भ में स्वास्थ्य के अधिकार के केंद्र में एआरवी थेरेपी और एचआईवी/एड्स के इलाज के लिये जरूरी अन्य चिकित्सा सुविधायें (समय–समय पर उत्पन्न होने वाले संक्रमणों के उपचार, रोग–निरोधक चिकित्सा, दर्द निवारण की दवाइयां आदि) हासिल करना मुख्य है। स्वास्थ्य के अधिकार को अक्सर जीने के अधिकार का ही मुख्य घटक समझा जाता रहा है, ताकि एचआईवी/एड्स से संबंधित ज्यादातर मामलों में स्वास्थ्य के अधिकार और जीने के अधिकार के साथ इसके संबंधों को ध्यान में रखकर फैसले दिये जायें। अंतर्राष्ट्रीय नागरिक एवं राजनीतिक अधिकार कोवेनेन्ट (ईएससीआर) का पालन करने वाले राष्ट्रों के लिये "संक्रामक रोगों की रोकथाम, इलाज और नियंत्रण करने" के साथ–साथ ऐसी स्थितियां बनाने की जरूरत है जिनसे मरीजों को सभी न्यूनतम चिकित्सीय सेवायें एवं चिकित्सीय देखरेख सुनिश्चित हो सके।"[41]

जीवन के अधिकार की तरह ही स्वास्थ्य के अधिकार को – हालांकि कुछ हद तक ही – करीब साठ देशों के संविधान में दिशा निर्देशक सिद्धांतों के रूप में या मौलिक अधिकार के रूप में शामिल किया गया है।"[42] जिन–जिन देशों के राष्ट्रीय न्यायालयों ने एआरवी थेरेपी की सुलभता को सरकार की जिम्मेदारी बताया है उनमें भारत, कोस्टारिका, वेनेजुएला, दक्षिण अफ्रीका, कोलम्बिया, इक्वाडोर और अर्जेंटीना शामिल हैं। मुकदमों में स्वास्थ्य और जीवन के अधिकार को अनुपूरक तौर पर या स्वतंत्र आधार पर इस्तेमाल करने की क्षमता अदालतों के न्यायिक क्षेत्र और दृष्टांतों पर निर्भर करती है। कुछ अदालतें स्वास्थ्य के अधिकार को जीवन के अधिकार का महत्वपूर्ण हिस्सा समझती हैं जबकि कुछ अदालतें इसे स्वतंत्र जिम्मेदारी के रूप में देखती हैं। "ट्रीटमेंट एक्शन कैम्पेन बनाम स्वास्थ्य मंत्री" मामला एआरवी थेरेपी की उपलब्धता को लेकर सर्वाधिक सफल मुकदमे का बेहतरीन उदाहरण है। ज्ञातव्य है कि दक्षिण अफ्रीका में आईसीईएससीआर (जिसमें शारीरिक एवं मानसिक स्वास्थ्य को भी शामिल किया गया है) पर हस्ताक्षर करने के कारण भी स्वास्थ्य सुविधाएं पाने के अधिकार (स्वास्थ्य के अधिकार का सीमित रूप) को संवैधानिक गारंटी (धारा–27, 28 और 35) दी गयी है जिसमें शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्य (अनुच्छेद–12) शामिल है।

स्वास्थ्य के अधिकार पर व्यापक जानकारी के लिए 'स्वास्थ्य का अधिकार : राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय दृष्टिकोण' नामक पूर्ववर्ती अध्याय का अवलोकन करें।

उपचार की सर्वसुलभता : भारतीय परिप्रेक्ष्य

उपचार की गारंटी के मामले में अनुच्छेद– 21 का विस्तार किया जाना बहुत ही महत्वपूर्ण पहलू रहा है। इससे पहले इलाज की सुलभता के संदर्भ में गैर–एचआईवी मामले व्यापक दृष्टांत उपलब्ध कराते रहे हैं। "पंडित परमानन्द कटारा बनाम भारत सरकार और अन्य"[43] के मामले में उच्चतम न्यायालय ने व्यवस्था दी थी कि अनुच्छेद–21 के तहत सरकार मानव जीवन को संरक्षित रखने के लिये बाध्य है और खासकर सरकारी अस्पतालों और सरकारी चिकित्सकों का कर्तव्य है कि वे चिकित्सीय सेवाओं के जरिये लोगों के जीवन को बचाएं। इसके साथ ही, न्यायालय ने यह भी व्यवस्था दी कि यह कर्तव्य सर्वाधिक महत्व का है और किसी तरह का कदम, कानून, दिशा–निर्देश, या प्रक्रिया किसी सरकारी चिकित्सक को रोगियों का जीवन बचाने का कर्तव्य निर्वाह करने से न तो रोक सकती है और न इसमें विलंब करा सकती है। इस प्रकार इलाज की सर्वसुलभता के संदर्भ में जीवन के अधिकार की संवैधानिक गारंटी एक पूर्ण गारंटी है। "पश्चिम बंग

41 आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक अधिकारों पर अंतर्राष्ट्रीय कोवेनेंट। (ईएससीआर), जीए रेस 2200, यू.एन. जीएओआर, 21वां सत्र, सप्लीमेंट नंबर–16, पर 49, यू.एन. डॉक्यू ए/6316, अनुच्छेद–12 (2) (सी) और (डी) (1996)

42 यामिन, 340 पर

43 पीटी. परमानंद कटारा बनाम भारत संघ और अन्य, एआईआर 1989 एससी 2039

खेत मजदूर समिति एवं अन्य बनाम पश्चिम बंगाल सरकार एवं अन्य"[44] के एक मामले में न्यायालय ने इस सिद्धांत की पुष्टि की थी कि किसी व्यक्ति को आवश्यकता के समय चिकित्सा संबंधी सुविधा उपलब्ध कराने से इंकार करना उसके अनुच्छेद–21 के तहत प्रदत्त जीवन के अधिकार का उल्लंघन है। न्यायालय ने स्पष्ट कहा कि वित्तीय अवरोधों को दरकिनार कर पर्याप्त चिकित्सा सेवा उपलब्ध कराना आवश्यक होता है। उसने कहा, "इस उद्देश्य के लिए जो भी आवश्यक कदम हो उसे उठाया जाना चाहिए।"

"सुरजीत सिंह बनाम पंजाब सरकार एवं अन्य"[45] के मामले में एक सरकारी कर्मचारी ने सरकारी अस्पतालों में अनुपलब्ध चिकित्सा सुविधा अलग से एक निजी अस्पताल से हासिल की और निजी अस्पताल पर खर्च राशि की भरपाई का दावा भी किया। उच्चतम न्यायालय ने व्यवस्था दी कि जीवन की रक्षा (खासकर विषम परिस्थितियों में) को लेकर न तो किसी तरह की कोताही होनी चाहिए और न ही मरीजों को किसी खास अस्पताल के खूंटे से बांधकर रखा जाना चाहिए। "पंजाब सरकार बनाम मोहिन्दर सिंह चावला"[46] के मामले में न्यायालय ने एक कदम और आगे ले जाते हुए व्यवस्था दी कि राज्य सरकार को न केवल सरकारी कर्मचारी के निजी अस्पताल में ऑपरेशन पर हुए खर्च का भुगतान करना होगा, बल्कि उसे निजी अस्पताल द्वारा लिए गए किराए का भी भुगतान करना पड़ेगा। चावला का मामला स्वास्थ्य सुविधाओं संबंधी सरकारी व्यवस्था की दिशा में सरकार के बढ़ते कदम को प्रदर्शित करता है।

केवल एक साल बाद ही हालांकि "पंजाब सरकार एवं अन्य बनाम राम लुभाया बग्गा एवं अन्य" के मामले[47] में न्यायालय को तार्किक रूप से अपने फैसले से पीछे हटना पड़ा। इस मामले में राज्य सरकार की नीति में परिवर्तन को चुनौती देने वाली याचिका दायर की गई थी जिसमें चिकित्सा पर किया गया भुगतान पूर्व निर्धारित स्तर तक ही सीमित कर दिया गया था। न्यायालय ने एक बार फिर कहा कि संविधान के अनुच्छेद–21 और 47 में नागरिक को स्वस्थ जीवन का अधिकार प्रदान किया गया है, लेकिन वित्तीय सीमाओं का अर्थ है कि राज्यों को चिकित्सा पर आने वाले खर्च के भुगतान की एक सीमा निर्धारित करनी चाहिए। न्यायालय ने इलाज़ कराने के अधिकार का रास्ता थोड़ा संकीर्ण करते हुए निर्धारित दर से ही चिकित्सा व्यय के भुगतान करने की व्यवस्था दी। न्यायालय ने किसी एक तर्क पर पूरी तरह से निर्भर हुये बगैर अनेक तर्कों के आधार पर, इस नीतिगत परिवर्तन को अनुमोदित किया, जिनमें राज्य के नीति नियमन को न्यायालय में चुनौती न दे सकने तथा पुरानी व्यवस्था के तहत हुये दुरुपयोग के साक्ष्य भी शामिल हैं। न्यायालय ने उस चिकित्सीय उपचार को प्राप्त करने के अधिकार के दायरे को भी सीमित किया ज़िसमें निर्धारित दर पर केवल क्षतिपूर्ति को ही शामिल किया गया है, और जो चिकित्सीय उपचार पाने के अधिकार को कमजोर बनाता है। न्यायालय ने कहा कि "किसी कल्याणकारी राज्य में कोई भी अधिकार निरपेक्ष नहीं हो सकता। सभी व्यक्तिगत अधिकार को आमतौर पर जनता के अधिकारों को रास्ता देना चाहिए।" अनुच्छेद–21 और चिकित्सा की उपलब्धता के सार्वजनिक हितों के संदर्भ में हालांकि यह स्पष्ट नहीं है और व्यापक संदर्भ में देखने पर यह 'पश्चिम' जैसे पहले के निर्णयों का खंडन करता है।

चिकित्सा सुविधाओं और एआरवी थेरेपी की उपलब्धता के लिए एचआईवी/एड्स संक्रमित लोगों (पीएलएचए) की ओर से दायर मुकदमे में उच्चतम न्यायालय का रुख रहा है कि स्वास्थ्य सुविधायें उपलब्ध कराने संबंधी सरकारी प्रावधान को जीवन के अधिकार के दायरे में शामिल किया जाए। खासकर 'पश्चिम' मामला एचआईवी से जुड़ी चिकित्सा सुविधाओं से संबंधित उस सरकारी व्यवस्था का समर्थन करता है जिसमें हर प्रकार से आवश्यक स्वास्थ्य सुविधाएं उपलब्ध कराने का स्पष्ट प्रावधान किया गया है। यहां यह प्रश्न

---

44 पश्चिम बंगाल खेत मजदूर समिति और अन्य बनाम पश्चिम बंगाल राज्य और अन्य, एआईआर 1996 एससी 2426
45 सुरजीत सिंह बनाम पंजाब राज्य और अन्य, (1996) 2 एससीसी 336
46 पंजाब राज्य बनाम मोहिन्दर सिंह चावला, एआईआर 1997 एससी 1225
47 पंजाब राज्य बनाम राम लुभाया बग्गा और अन्य, (1998) 4 एससीसी 117

उठता है कि क्या बग्गा को इन्हीं तथ्यों तक सीमित किया जाये या फिर न्यायालय चिकित्सा सुविधाओं की सर्वसुलभता के संदर्भ में वित्तीय कठिनाइयों और सार्वजनिक कल्याण को शामिल करते हुये एक नया सिद्धांत प्रतिपादित कर रहा है।

अभी तक भारत के सर्वोच्च न्यायालय के समक्ष एआरवी थेरेपी की उपलब्धता से जुड़ा महज एक ही मामला आया है। यह मामला 2003 में वॉलंटरी हेल्थ एसोसिएशन ऑव पंजाब (वीएचएपी) और ह्यूमन राइट्स लॉ नेटवर्क की ओर से दायर एक जनहित याचिका के जरिये लाया गया था। "वीएचएपी बनाम भारत सरकार" नामक इस मामले में वीएचएपी की ओर से दायर याचिका में एआरवी थेरेपी को सार्वजनिक तौर पर उपलब्ध कराने तथा इसके समर्थन में नीतिगत दिशा–निर्देशों को जारी किये जाने का अनुरोध किया गया था। इस याचिका के परिणामस्वरूप उच्चतम न्यायालय ने दिसंबर 2003 में केंद्र और राज्य सरकारों को नोटिस जारी करके हलफनामे दायर करने को कहा जिनमें पूरे देश में एआरवी थेरेपी की सर्वसुलभता सुनिश्चित करने में नाकाम रहने के कारण बताने का निर्देश दिया गया था।

एआरवी थेरेपी से संबंधित गैर–कानूनी मामलों को सही परिप्रेक्ष्य में देखा जाना जरूरी है। खासकर कैंसर, टीबी, मलेरिया, हेपेटाइटिस, डायरिया जनित बीमारियों जैसे अन्य रोगों, खासतौर पर जिनका आसानी से इलाज हो सकता है या जिनसे बचाया जा सकता है, के मरीजों के इलाज के लिये सरकारी संसाधनों में वृद्धि किये बगैर एआरवी थेरेपी के लिए सरकारी संसाधनों में भारी बढ़ोतरी तभी न्यायोचित ठहरायी जा सकती है जब एचआईवी/एड्स और अन्य बीमारियों के बीच के अंतर का खुलासा किया जाये। आलोचकों का मानना है कि मलेरिया और डायरिया जैसी बीमारियों की रोकथाम के लिए जरूरी संसाधनों को गलत तरीके से एचआईवी/एड्स जैसी बीमारियों में इस्तेमाल किया जा रहा है। यह अवधारणा सही हो सकती है, लेकिन पूरी तरह से इस पर सहमत नहीं हुआ जा सकता है। एचआईवी/एड्स पर संसाधनों को खर्च किया जाना, उपलब्ध धनराशि को दूसरी तरफ मोड़ने का मामला नहीं है, बल्कि एक खास संक्रामक रोग की ओर विशेष ध्यान देने की आवश्यकता का हिस्सा है। इस विचार को निम्नलिखित महत्वपूर्ण तर्कों से पुष्ट किया जा सकता है –

- एचआईवी एक विशेष तरह का खतरा उत्पन्न करता है, क्योंकि यह गुप्त रूप से फैलने वाला रोग है जो संचरण के अपने खास तरीकों के जरिये तेजी से फैलता जा रहा है।
- एचआईवी/एड्स के इतिहास (खासकर संसाधनों के मामले में गरीब देशों में) पर नजर डालने पर इस दिशा में कदम नहीं उठाने के गंभीर परिणामों और सरकार के प्रयासों के बेहतर परिणामों दोनों को देखा जा सकता है।[48]
- उचित इलाज से इसके प्रसार को कम किया जा सकता है।
- मौजूदा महामारी का जो स्वरूप है उसमें एड्स संबंधित स्थितियों से निपटने की तुलना में एआरवी थेरेपी को उपलब्ध कराना ज्यादा सस्ता हो सकता है।[49]

चाहे एड्स जागरूकता के अधिक कार्यक्रमों, हिमायत, कानूनी प्रयासों और अन्य संभव उपायों के जरिये किया जाए लेकिन नीति निर्धारकों एवं कानून निर्माताओं को इस महामारी के खिलाफ कार्रवाई किये जाने के महत्व को समझने के लिये बाध्य किए जाने की जरूरत है, ताकि एचआईवी/एड्स ग्रस्त लोगों की जरूरतों को पूरा करने वाले कानून बन सकें और कानून को लागू किया जा सके।

परिवर्तन संभव है और सफलता महज संभावनाओं से अधिक है, ऐसा दुनिया के अनेक देशों में समर्पित वकीलों और न्यायाधीशों के प्रयासों से संभव हुआ है। मानवाधिकार से संबंधित मुकदमों से इस बात से ऐसे अनेक मामले सामने आये हैं जिनसे जो व्यक्ति की दुर्दशा और एचआईवी/एड्स ग्रस्त लोगों की जरूरतों

48 वर्ल्ड बैंक 26 पर
49 श्रुति पांडे 10 पर

को प्राथमिकता दिलाने की अभिलाषा से युक्त एक सतत्, मानवीय और अधिकारोन्मुखी न्यायशास्त्र का विकास होने की सकारात्मक प्रवृति का संकेत मिलता है। कैदियों से लेकर अजन्मे बच्चे को सुलभता तथा एचआईवी/एड्स ग्रस्त लोगों को सरकार की ओर से सहायता देने की व्यवस्था जैसे एआरवी थेरेपी से जुड़े विभिन्न मुद्दों का सफल कानूनी फैसलों के जरिये समाधान किया गया है और जिसकी बदौलत इस बात को सुनिश्चित करना काफी हद तक संभव हुआ है कि सरकार अपने वायदों को पूरा करे।

यहां यह भी उल्लेखनीय है कि यद्यपि सफल कार्यक्रमों और मुकदमों के कारण अदालती आदेशों के जरिये विभिन्न देशों की सरकारों को एआरवी थेरेपी उपलब्ध कराने के निर्देश तो मिले हैं, लेकिन अनेक सरकारें इस समस्या की ओर ध्यान देने और इसके लिये पर्याप्त संसाधन उपलब्ध कराने में अक्षम रही हैं या इस संबंध में अनिच्छा जताती रही हैं। चाहे इस असफलता का कारण न्यायतंत्र के प्रति सम्मान में कमी रहा हो या पर्याप्त संसाधन जुटाने में असमर्थता या अनिच्छा रही हो या समस्या की भयावह स्थिति के कारण एआरटी उपलब्ध कराने के भी कोई परिणाम नहीं निकले हों। इस बात में हालांकि कोई संदेह नहीं कि कानूनी जीतों के यथार्थ में वांछित परिणाम नहीं मिले हैं। परिणामस्वरूप, इनमें से अनेक जीतों, जो आमतौर पर "केवल सैद्धांतिक विजय बन कर रह गयी"[60] हालांकि सांकेतिक एवं रणनीतिक विजय एआरवी थेरेपी की सर्वसुलभता को सुनिश्चित कराने की दिशा में पहला कदम है। कानूनी फैसलों से व्यापक योजनाओं का कच्चा आधार तैयार हो सकता है, सुझाव और दिशानिर्देश मिल सकते हैं। इस कारण केवल न्यायिक एडवोकेसी और न्यायिक फैसले अपने आप में प्रभावकारी नहीं हो सकते, इसके लिए संगठित आंदोलन, राजनीतिक दबाव और निरंतर मुकदमे को साथ–साथ जारी रखने की जरूरत है।

और अधिक जानकारी के लिये निम्नलिखित स्रोतों को भी पढ़ें

- *कोर्टिंग राइट्स : "केस स्टडीज इन लिटिगेटिंग द ह्यूमन राइट्स ऑव पीपुल लिविंग विद एचआईवी,* यूएन एड्स एंड कनाडियन एचआईवी/एड्स लीगल नेटवर्क, यूएन एड्स बेस्ट प्रैक्टिस कलेक्शन, पृ. 81, मार्च 2006
- एलिसिया इली यामिन, *"नॉट जस्ट अ ट्रेजडी : एक्सेस टु मेडिकेशन एज ए राइट अंडर इंटरनेशनल लॉ",* 21 बीयू इंटर. आईएलजे 325, 327 (2003)
- शाह, शीतल, *'इलुमिनेटिंग द पॉसिबल इन डेवलेपिंग वर्ल्ड : गारंटिंग द ह्यूमन राइट टु हेल्थ इन इंडिया',* 32 वांड जे. ट्रांसमेट' एल, 435, 466 (1999)
- मेड ओवर एंड पीटर हेवुड एवं अन्य, *"एचआईवी/एड्स ट्रीटमेंट एंड प्रिवेंशन इन इंडिया : मॉडलिंग द कॉस्ट एंड द कॉन्सिक्वेंसेज",* द वर्ल्ड बैंक, पृ 20, जून, 2004
- कॉम्बैट लॉ : एचआईवी/एड्स संस्करण, अंक–5, इश्यू–2, अप्रैल–मई 2006

एंटीरेट्रोवायरल और सामाजिक सुरक्षा

1. ***स्वास्थ्य मंत्रालय बनाम ट्रीटमेंट एक्शन कैम्पेन,* दक्षिण अफ्रीका की संवैधानिक अदालत, सीसीटी 8/02(2002) (दक्षिण अफ्रीका) :** दक्षिण अफ्रीकी सरकार के पीपीटीसीटी कार्यक्रम ने देश में चुनिंदा परीक्षण स्थलों को केवल नेविरापाइन उपलब्ध कराई। नेविरापाइन एक एआरवी थेरेपी है जो पीटीसीटी की रोकथाम में प्रभावी है। संसाधन यद्यपि उपलब्ध थे फिर भी सरकार ने जो स्थल अध्ययन क्षेत्र में नहीं थे, उनमें से किसी को भी नेविरापाइन उपलब्ध नहीं कराई और अन्य किसी भी अस्पताल में दवा के उपयोग पर प्रतिबंध लगा दिया। वादी ने कार्यक्रम को चुनौती देते हुए सभी एचआईवी पीड़ित गर्भवती

60 काउंटिंग राइट्स : केस स्टडीज इन लिटिगेटिंग द ह्यूमन राइट्स आफ पीपुल लिविंग विद एच आईवी, यूएन एड्स एवं कनाडियन एचआईवी/एड्स लीगल नेटवर्क, यूएन एड्स, बेस्ट प्रैक्टिस कलेक्शन, पृ. 8, मार्च 2006.

महिलाओं के लिए नेविरापाइन उपलब्ध कराने के वास्ते दक्षिण अफ्रीकी सरकार पर दबाव डालने के लिए मुकदमा दायर किया।

पहले के एक उदाहरण का अनुसरण करते हुए जहां अदालत ने व्यवस्था दी कि सरकार की दोनों तरह की सकारात्मक और नकारात्मक कानूनी बाध्यताएं थीं– संविधान में दिए गए अधिकारों की प्राप्ति को सुनिश्चित करने के लिए सकारात्मक तथा ऐसी कोई कार्रवाई न करने की नकारात्मक बाध्यता जो इन अधिकारों को हासिल करने के रास्ते में बाहर हो। अदालत ने स्वास्थ्य देखभाल सेवाओं तक पहुंच के संवैधानिक अधिकार 927 का उल्लेख किया। इस प्रकार, अदालत ने कहा कि सार्वजनिक स्वास्थ्य क्षेत्र में पायलट स्थलों से बाहर नेविरापाइन के उपयोग को प्रतिबंधित करने की नीति तर्कसंगत नहीं है तथा यह कि स्वास्थ्य देखभाल के लक्ष्य को हासिल करने के लिए एक अनुचित रुकावट है। स्वास्थ्य देखभाल के अधिकार को क्षति पहुंचाने की कार्रवाई को न रोक कर अपनी नकारात्मक बाध्यताओं का उल्लंघन किया है। अदालत ने कहा कि नेविरापाइन पर्याप्त जिंदगियों को बचाएगी, यह कि दवा के खिलाफ प्रतिरोधक क्षमता का जोखिम एचआईवी की रोकथाम की तुलना में कम है तथा यदि देशभर में कार्यक्रम लागू करने के लिए क्षमता अपर्याप्त थी, तो नेविरापाइन जहां आवश्यक सुविधाएं मौजूद हैं वहां इस्तेमाल की जा सकती थी। अदालत ने कहा कि चुनिंदा स्तर पर चलाया गया कार्यक्रम असंवैधानिक था क्योंकि यह उन लोगों को शामिल करने में असफल रहा जो यथोचित तरीके से शामिल किए जा सकते थे। अदालत ने साफ कहा कि इस बात में कोई गलतफहमी नहीं होनी चाहिए कि राष्ट्रव्यापी एमटीसीटी रोकथाम कार्यक्रम सरकार की एक अपरिहार्य बाध्यता है। अदालत ने एचआईवी के मां से बच्चे में संप्रेषण को रोकने अथवा कम करने के लिए एक प्रभावी विस्तृत राष्ट्रीय कार्यक्रम की योजना बनाने के लिए दक्षिण अफ्रीकी सरकार को आदेश दिया।

2. ***मि. विलियम गर्सिया अल्वारेज बनाम कजा कॉंस्टेरिसेंस डि सेगुरो सोशियल,* कोस्टारिका की संवैधानिक अदालत, फाइल 5778–वी–97, 23 सितंबर 1997 (कोस्टारिका)** : इस मामले में, एक एचआईवी पीड़ित व्यक्ति ने उसे आवश्यक एंटीरेट्रोवायरल इलाज देने से मना करने के लिए सामाजिक सुरक्षा संस्था को चुनौती दी, क्योंकि ये दवाएं सरकारी राष्ट्रीय दवा सूची में शामिल नहीं की गई थीं। वह इन दवाओं का खर्च उठाने में असमर्थ था और इनकार करने को जीवन के अधिकार का उल्लंघन मानते हुए चुनौती दी।

वर्ष 1992 के एक फैसले से अलग जिसमें अदालत ने एंटीरेट्रोवायरल दवा संबंधी ऐसे ही एक मामले को खारिज कर दिया था, अदालत ने यहां वादी के पक्ष में फैसला देते हुए राष्ट्रीय स्वास्थ्य देखभाल प्रणाली को उस व्यक्ति को निःशुल्क इलाज प्रदान करने का आदेश दिया। अदालत ने यह फैसला जीवन के अधिकार और स्वास्थ्य के अधिकार के आधार पर सुनाया जैसा कि राष्ट्रीय संविधान में स्थापित है, साथ ही अंतर्राष्ट्रीय समझौते में कोस्टारिका द्वारा हस्ताक्षर किए गये हैं। अदालत ने व्यवस्था दी कि यदि प्रत्येक आधुनिक राज्य में जीवन का अधिकार विशेष रूप से संरक्षित है, साथ ही स्वास्थ्य का अधिकार भी संरक्षित है तो इन अधिकारों के उपयोग को नकारने वाला कोई भी आर्थिक आधार का कोई मतलब नहीं रह जाता है। बिना जीवन के अधिकार के बाकी सभी अधिकार बेकार होंगे। सार रूप में, अधिकारों की रक्षा करने में सरकार के विफल रहने के लिए वित्तीय प्रतिबंधों को आधार नहीं माना गया। अदालत ने संक्षिप्त रूप से यह भी कहा कि 'एचआरटी' की लागत अस्पताल तथा वैकल्पिक इलाज से जुड़ी लागत की अपेक्षा काफी कम होनी चाहिए। अदालत ने सरकार को आदेश दिया कि वह अल्वारेज की दशा को देखते हुए उसे एआरटी की थेरेपी प्रदान करने की तत्काल व्यवस्था करे।

3. ***मि. जॉर्ज ओदिर मिरांडा कॉर्टेज बनाम ला डाइरेक्टोरा डेल इंस्टीट्यूटो सल्वाडोरेनो डेल सेगुरो सोशियल,* अल सल्वाडोर की संवैधानिक अदालत, फाइल सं0 348—99, 4 अप्रैल 2001 (अल सल्वाडोर)** : एक क्षेत्रीय मानवाधिकार अदालत के सामने लाए गए एआरवी थेरेपी पहुंच के पहले मामले में, एचआईवी पीड़ित वादी ने 1999 में सामाजिक सुरक्षा संस्थान के खिलाफ निशुल्क एंटी रेट्रोवायरल इलाज मुहैया कराने से इनकार करने पर मुकदमा दायर किया। उसने आरोप लगाया कि अस्थिर आर्थिक हालत के कारण उसके जीवन के अधिकार, स्वास्थ्य के अधिकार और भेदभाव से स्वतंत्र रहने के अधिकार का उल्लंघन हुआ है। सामाजिक सुरक्षा संस्थान ने दावा किया कि आर्थिक संसाधनों की कमी के चलते उसे इलाज मुहैया कराने में संस्थान असमर्थ है। जैसा कि संविधान (धारा—65) में निहित है, जीवन के अधिकार तथा स्वास्थ्य के अधिकार तथा अल सल्वाडोर द्वारा अंतर्राष्ट्रीय समझौते में प्रमाणित तथ्यों को आधार बनाकर अदालत ने वादी के पक्ष में फैसला सुनाया। अदालत ने पाया कि संवैधानिक जिम्मेदारी रोकथाम या जीवन के प्रति हिंसा से बचने के अलावा सरकार द्वारा जीवन के संरक्षण के लिए प्रेरक परिस्थितियों को बढ़ाने के लिए सकारात्मक कर्तव्यों को लागू करना भी है। अदालत ने स्वास्थ्य के अधिकार को जीवन के अधिकार से जोड़ा अदालत ने वादी को सामाजिक सुरक्षा संस्थान को आवश्यक एंटी रेट्रोवायरल इलाज मुहैया कराने का आदेश दिया।
4. ***एसोसिएशन बेघालेंसिस एवं अन्य बनाम मिनिस्टीरियो डि सलुद वाई एक्सियन सोशियल,* सुप्रीम कोर्ट ऑव जस्टिस ऑव अर्जेंटिना, फेलोस 323:1339 (1 जून 2000) (अर्जेंटिना)** : आठ लोगों ने राष्ट्रीय स्वास्थ्य और समाज कल्याण मंत्रालय के खिलाफ एचआईवी/एड्स पीड़ित लोगों की दवाओं की आपूर्ति करने में असफल रहने पर एक संयुक्त एंपारो एक्शन (जो कि एक सामूहिक संरक्षण पहल है) दाखिला किया। अर्जेंटिना एड्स कानून के अंतर्गत इन दवाओं को उपलब्ध कराने का दायित्व स्वास्थ्य मंत्रालय का था। कार्रवाई में आवेदकों ने मांग की कि मंत्रालय पर सभी पीड़ित व्यक्तियों को आवश्यक दवाएं उपलब्ध कराने का दबाव डाला जाना चाहिए ताकि सभी सार्वजनिक अस्पतालों तथा स्वास्थ्य देखभाल इकाइयों में सरकार इन दवाओं को उपलब्ध कराए। मंत्रालय ने दलील दी कि दवाएं उपलब्ध करने का दायित्व राज्यों का है न कि संघ का। मंत्रालय ने यह भी तर्क दिया कि दवाओं का प्रबंधन अदालत के अधिकार क्षेत्र के अंतर्गत नहीं आता।
   अदालत ने कहा कि मंत्रालय सभी एचआईवी/एड्स पीड़ित व्यक्तियों को एआरवी थेरेपी प्रदान करने को बाध्य था जैसा कि जीवन के अधिकार की गारंटी में शामिल स्वास्थ्य के अधिकार से प्राप्त संवैधानिक दायित्व के रूप में वर्णित है। यह फैसला 1998 में इस आदेश की पुष्टि करता है कि मंत्रालय ने अपने दायित्व नहीं निभाए। वर्ष 2000 में, सर्वोच्च अदालत ने मंत्रालय की ओर से दी गयी सभी दलीलों को सुना और दृढ़तापूर्वक पुनः पुष्टि की कि एड्स कार्यक्रम को प्रभावी रूप से लागू करने का उत्तरदायित्व मंत्रालय का था। इस संवैधानिक संरक्षण से स्थिति में इस सीमा तक सुधार हुआ कि 15,000 व्यक्तियों को तुरंत इस संरक्षण से लाभ प्राप्त हुआ।
5. ***मि. डिएगो सरना गोमेज बनाम हॉस्पिटल यूनीवर्सीटेरियो डेल वेले, कोलंबिया की संवैधानिक अदालत,* फैसला सं. टी—505, 28 अगस्त 1992 (कोलंबिया)** : वादी एड्स से पीड़ित था और उसकी आर्थिक स्थिति खराब थी। एक अस्पताल के उसको चिकित्सा सेवाएं देने से इनकार करने को उसने अदालत में चुनौती दी। उसने दावा किया कि अस्पताल का इलाज से इनकार करना संविधान की धारा—13 के अंतर्गत मिले स्वास्थ्य के अधिकार का उल्लंघन है। अदालत ने घोषणा की कि सरकार के पास सीमित संसाधन हैं, अतः व्यक्तियों को निःशुल्क स्वास्थ्य सेवाएं उपलब्ध कराना अनिवार्य नहीं। उसने व्यवस्था दी कि फिर भी धारा—13 में गारंटी प्राप्त अधिकारों के तहत सरकार से आशा की जाती है कि वह विशेष

संरक्षण प्रदान करे, खासकर तब जब किसी व्यक्ति को आर्थिक संसाधनों की कमी, पीड़ा, भेदभाव और असाध्य बीमारियों से निजात पाने से रोकती है।

6. ***श्रीमती ग्लेंडा लोपेज एवं अन्य बनाम इंस्टीट्यूटो वेनेजोलानो डि सेगुरस सोशियलेस,* वेनेजुएला सर्वोच्च अदालत, एक्सपीडिएंट नं. 00–1343, 6 अप्रैल 2001 (वेनेजुएला) :** वेनेजुएलन सामाजिक सुरक्षा संस्थान (आईवीएसएस) के खिलाफ एक मुकदमा दायर किया गया जिसमें आरोप लगाये कि आईवीएसएस नियमित रूप में एआरवी थेरेपी उपलब्ध कराने में असफल हुई है और कंबीनेशन थेरेपी के लिए आवश्यक विशेष प्रयोगशाला परीक्षणों की लागत वहन करने से भी संस्थान ने इनकार कर दिया। अदालत ने व्यवस्था दी कि वेनेजुएला के संविधान में दिए गए स्वास्थ्य के अधिकार के अनुसार, "जीवन के अधिकार का यह अभिन्न भाग "न केवल एक व्यक्ति की बीमारी बल्कि समग्र व्यक्ति की सुरक्षा की गारंटी देता है। इस प्रकार, अदालत ने इसी तरह की परिस्थितियों के सभी व्यक्तियों को वादी मानते हुए अपने फैसले को विस्तार दिया। इसमें फिर से पुष्टि की गई कि आईवीएसएस ने इलाज में कमी कर तथा अपने चिकित्सा कवरेज में इलाज शामिल न कर उनकी जिंदगियों को खतरे में डालकर वादियों के मानवाधिकारों का उल्लंघन किया है। अदालत ने एचआईवी और संभावित संक्रमणों के इलाज के लिए जरूरी दवाओं को निःशुल्क प्रदान करने का संस्थान को आदेश दिया।

7. XXX ***बनाम इंस्टीट्यूट डि सेगुरस सोशियलेस (आईएसएस),* कोलंबिया संवैधानिक अदालत, निर्णय सं. टी–271, 23 जून 1995 (कोलंबिया) :** वादी, आईएसएस से इलाज करा रहे एक एचआईवी पीड़ित व्यक्ति ने यह मुकदमा दायर किया। उसने "एंटीरेट्रोवायरल कॉकटेल" प्रदान करने से मना करने पर सार्वजनिक सामाजिक सुरक्षा योजना को चुनौती देनी चाही। इस "कॉकटेल" की उसे अपनी जिंदगी बर्बाद होने से बचाने के लिए आवश्यकता थी। इस संस्थान ने दलील दी की कि खर्चीली होने के कारण सरकारी दवा सूची में अधिसूचित न होने के कारण ये दवाएं उसे प्रदान नहीं की जा सकीं। अदालत ने आदेश दिया कि विभिन्न कारणों से गंभीर बीमारियों से जूझ रहे लोगों की जिंदगी को कम तकलीफदेह बनाने की दिशा में पर्याप्त इलाज प्रदान करना आईएसएस का दायित्व है। अदालत ने स्वास्थ्य के अधिकार को मूलभूत अधिकार के रूप में माना जब यह प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से जीवन के अधिकार से जुड़ा हो, तथा यह कि इलाज की मांग का अधिकार, इलाज से मना करने के बराबर है। काफी बहस के बाद अदालत ने "मानवीय गरिमा तथा व्यक्ति के अहस्तांतरणीय मूल अधिकारों को प्राथमिकता" प्रदान करने के आधार पर अपना विचार दिया।

8. ***वाई बनाम सेक्रेटेरिया डि सलुद पब्लिका म्युनिसिपल डी केली,* कोलंबिया की संवैधानिक अदालत, निर्णय सं0 टी–177, 18 मार्च 1999 (कोलंबिया) :** वाई एचआईवी पीड़ित व्यक्ति था जो अपनी शारीरिक हालत के कारण कार्य करने में असमर्थ था, वित्तीय सहारे के लिए केवल अपनी 81 वर्षीय मां के सहारे था। उसकी एआरवी थेरेपी का केवल संभावित जरिया सामाजिक सुरक्षा थी। यह मुकदमा आईएसएस द्वारा संचालित विशेष योजना एसआईएसबीईएन के अंतर्गत एक एचआईवी पीड़ित को सामाजिक सुरक्षा अधिकारों से वंचित करने को चुनौती के रूप में दायर किया गया। इस योजना का उद्देश्य समाज के गरीब लोगों को कुछ स्वास्थ्य सेवाओं और इलाज के लाभ की गारंटी प्रदान करना था। यह व्यक्ति एक वर्ष से अधिक कार्य करने की हालत में नहीं था और आर्थिक रूप से बदतर स्थिति में था।

अदालत ने व्यवस्था दी कि अपनी जिंदगी को बेहतर बनाने के लिए आवश्यक दवाओं को निःशुल्क पाने के लिए सामाजिक सुरक्षा अधिकारों से लाभ उठाने का इस व्यक्ति को मौलिक अधिकार है। अदालत ने

पाया कि एचआईवी/एड्स पीड़ितों को सरकार से विशेष संरक्षण की आवश्यकता है और यह कि सभी एचआईवी पीड़ितों को निःशुल्क इलाज प्रदान करना राज्य की प्राथमिकता थी। इसलिए पीएलएचए की खराब आर्थिक स्थिति भेदभाव का विषय नहीं बननी चाहिए बल्कि विशेष रूप से संरक्षित होनी चाहिये। इस प्रकार, यदि कोई मरीज स्वास्थ्य देखभाल के खर्चे नहीं उठा सकता तो सरकार का कर्तव्य बनता है कि वह इन दवाओं को मरीज तक पहुंचाया।

9. ***एड्गर मॉरिसियो कार्पियो कास्त्रे एवं अन्य बनाम प्रोग्राम नेसियोनल डेल एसआईडीए–वीआईएचआई टीएस एंड मिनिस्टेरियल डेलसलुद पब्लिक, कंस्टीट्यूशनल ट्रिब्युनल* (थर्ड चेंबर) निर्णय सं0–0749–2003–आरए (2004) (इक्वाडोर) (पूरा मैटर उपलब्ध नहीं)** : एआरवी थेरेपी दवाइयों की पहुंच सुनिश्चित करने में असफल रहने या मना करने पर कुछ पीएलएचए ने अंतर–अमरीकी मानवाधिकार आयोग के समक्ष मुकदमा दायर किया जिसमें आयोग ने इक्वाडोर को चिकित्सा सुविधा, प्रयोगशाला परीक्षणों, एआरवी थेरेपी दवाओं, तथा ओएल चिकित्सा प्रदान करने का आदेश दिया। इक्वाडोर सरकार ने पीएलएचए को सार्वजनिक अस्पतालों में स्वास्थ्य सेवाएं देना शुरू कर दिया लेकिन कुछ समय के बाद सेवाएं इस सीमा तक घटती गईं कि केवल एआरवी थेरेपी दवाएं ही अस्पताल में उपलब्ध थीं। वादियों ने याचिका दायर की और दावा किया कि दवाओं से इनकार करना संवैधानिक अधिकारों का उल्लंघन है खासकर जीवन के अधिकार, स्वास्थ्य के अधिकार, तथा इस मामले पर राष्ट्रीय कार्यों से एचआईवी/एड्स इलाज को निःशुल्क पाने का अधिकार से वंचित करना।

संवैधानिक न्यायाधिकरण ने कहा कि स्वास्थ्य का अधिकार जीने के अधिकार का एक भाग है, यद्यपि ऐसा निष्कर्ष स्वास्थ्य के स्वतंत्र दर्जे के अधिकार को प्रभावित नहीं करता है। अपनी व्यवस्था के समर्थन में, न्यायाधिकरण ने विभिन्न राष्ट्रीय (राष्ट्रीय एचआईवी/एड्स अधिनियमों), क्षेत्रीय तथा अंतर्राष्ट्रीय/बहुपक्षीय दोनों कानूनी स्रोतों का हवाला लिया। प्रत्येक मसले पर न्यायाधिकरण ने वादियों का पक्ष लिया। न्यायाधिकरण ने कहा कि इक्वाडोर के कानून के अंतर्गत सरकार स्वास्थ्य के अधिकार को लागू करने को बाध्य थी और आवश्यकतानुसार एआरवी थेरेपी दवाएं मुहैया करने में असफल होकर उन्होंने एक व्यक्ति के संवैधानिक, वैधानिक और अंतर्राष्ट्रीय अधिकारों का उल्लंघन किया है। अधिकारों के उल्लंघन पर न्यायालय ने कहा कि वास्तव में सामाजिक अधिकारों की सुरक्षा सुनिश्चित करना सरकार का सकारात्मक कर्तव्य तथा कानूनी बाध्यताएं हैं। न्यायालय ने एआरवी थेरेपी दवाओं की उपलब्धता सुनिश्चित करने का मंत्रालय को आदेश दिया।

10. ***क्रूज डेल वेले बर्मूडेज एवं अन्य बनाम मिनिस्ट्रियो डे सलुद वाई एक्शन सोशल, वेनेजुएला सर्वोच्च न्यायालय,* एक्सपीडिएंटे सं0 15789, 15 जुलाई 1999 (वेनेजुएला)** : एचआईवी/एड्स पीड़ित 170 से अधिक व्यक्तियों ने आरोप लगाया कि मंत्रालय निर्धारित एंटी रेट्रोवायरल थेरेपी प्रदान करने में विफल रहा है। वादी ने व्यक्ति के जीने के अधिकार, स्वास्थ्य, आजादी और सुरक्षा के अधिकारों के उल्लंघन के विरुद्ध दावा किया तथा आधुनिक विज्ञान के समान लाभों को आधार बनाया गया। याचिकाकर्ताओं ने बहस की कि लंबे जीवन के लिए एआरवी थेरेपी का लाभ उन्हें भी मिलना चाहिए। एआरवी थेरेपी से उन्हें इलाज तथा भविष्य में होने वाले बेहतर इलाज का लाभ मिल सकता है। याचिकाकर्ताओं ने कानून तथा न्यायिक अर्थव्यवस्था के तहत समान इलाज के आधार पर व्यक्ति के हितों को मान्यता देने की भी मांग की। यद्यपि अदालत ने आजादी, व्यक्ति की सुरक्षा तथा समानता संबंधी दावे खारिज कर दिए। अदालत ने मंत्रालय को कानूनी बाध्यताओं के अनुसार कार्य करने को कहा और याचिकाकर्ताओं जैसे हालातों के अंतर्गत सभी व्यक्तियों को एंटीरेट्रोवायरल इलाज

प्रदान करने का आदेश दिया। स्वास्थ्य के अधिकार को वेनेजुएला में याचिकाकर्ताओं को ही नहीं बल्कि सभी पीएलएचए को प्रदान किया गया। बहुत से दावों के बीच, अदालत ने मुख्यतः स्वास्थ्य के अधिकार पर ध्यान केन्द्रित किया जिसमें अंतर्राष्ट्रीय कानूनी सिद्धांतों के संदर्भ शामिल थे। यद्यपि अदालत ने पाया कि वित्तीय अवरोध को न्यायसंगत ठहराकर सरकार ने याचिकाकर्ताओं के स्वास्थ्य के अधिकार का उल्लंघन किया है। अदालत ने यह पाया कि वेनेजुएला में ये मैकेनिज्म उपलब्ध है कि स्वास्थ्य मंत्रालय याचिकाकर्ताओं के लिए इलाज उपलब्ध कराने के लिए संसाधन हासिल कर सकता है। इस प्रकार, सरकार की विफलता इस तंत्र की भी विफलता है।

11. ***मि. जेआरबी एवं अन्य बनाम मिनिस्ट्रियो डे ला डिफेंस,* सुप्रीम कोर्ट ऑव जस्टिस ऑव वेनेजुएला, एक्पीडिएंट सं. 14000, 20 जनवरी 1998 (वेनेजुएला)** : यह मामला सेना के चार सदस्यों की ओर से एसीसीएस द्वारा रक्षा मंत्रालय के खिलाफ सम्मान, व्यक्तिगत जीवन, स्वास्थ्य के अधिकार के उल्लंघन का था। याचिकाकर्ताओं ने भेदभाव का आरोप लगाते हुए कहा कि सेना कर्मचारी होने के कारण उन्हें स्वास्थ्य देखभाल तथा निर्धारित दवाएं पाने का हकदार नहीं माना गया। अदालत ने स्वास्थ्य के अधिकार का विश्लेषण किया जैसा कि यह जीने के अधिकार से संबंधित है और निष्कर्ष निकाला कि स्वास्थ्य का अधिकार स्वास्थ्य के संरक्षण के अधिकार पर लागू होता है और सरकार पर सार्वजनिक स्वास्थ्य की देखभाल का कर्तव्य डालता है मुख्यतः बीमारी को फैलने से रोकने के उपायों को अपनाने के जरिए। अदालत ने रक्षा मंत्रालय को आदेश दिया कि पर्याप्त रोकथाम उपायों को लागू करने के लिए राष्ट्रीय कांग्रेस से फंड हासिल करे साथ ही एचआईवी पीड़ित याचिकाकर्ताओं की पेंशन योजना के माध्यम से पीड़ितों को एंटीरेट्रोवायरल इलाज तथा आवश्यक दवाओं को प्रदान करने का आदेश दिया।

12. ***मि. एनए, वाईएफ एवं अन्य बनाम मिनिस्टीरियो डी सेनीदाद वाई असिस्टेंसिया सोशल,* सुप्रीम कोर्ट ऑव वेनेजुएला, एक्सपीडिएंटे सं0 14625, 14 अगस्त 1998 (वेनेजुएला)** : याचिकाकर्ताओं ने सामाजिक सुरक्षा योजना के तहत उन लोगों के लिए सार्वजनिक स्वास्थ्य देखभाल प्रणाली के माध्यम से एचआईवी/एड्स चिकित्सा मुहैया कराने में विफल रहने का मंत्रालय पर आरोप लगाया जिन्हें सामाजिक योजना का लाभ नहीं मिलता है। उन्होंने अदालत से उन सभी मरीजों के हितों के लिए निर्णय को लागू करने की गुहार लगाई जो एक जैसी परिस्थितियों में जी रहे हैं।

अदालत ने व्यवस्था दी कि संविधान की 1961 की धारा–76 के अनुसार एंटीरेट्रोवायरल इलाज प्रदान करना सरकार का दायित्व था। इसे सरकार के मूलभूत कर्तव्यों से जोड़ा गया जिसमें एचआईवी महामारी के खिलाफ सार्वजनिक स्वास्थ्य उपायों को अपनाने का दायित्व वर्णित है। इस आधार पर कि निर्णय याचिकाकर्ताओं तक ही सीमित है। अदालत ने आदेश को सभी एचआईवी/एड्स पीड़ितों के लिए बढ़ाने से मना कर दिया। (देखें क्रुज डेल वेले बर्मुडेज)

3

पेटेंट और औषधियां

विकासशील देशों में अत्यधिक कारगर एंटीरेट्रो वायरल थेरेपी (हाइली एक्टिव एंटी–रेट्रोवायरल ट्रीटमेंट – एचएएआरटी) की शुरुआत और एचआईवी/एड्स की वजह से संयोगवश होने वाले संक्रमणों (ऑपच्युनिस्टिक इंफेक्शंस – ओआइ) की इलाज की औषधियों की उपलब्धता के कारण एचआईवी/एड्स से होने वाली मौतों में पर्याप्त कमी आई है।[1] आवश्यक औषधियों की उपलब्धता कई अंतर्संबंधित कारकों पर निर्भर है। इन औषधियों में एचआईवी के इलाज की औषधियां शामिल हैं। ये कारक हैं : लागत, आपूर्ति, प्रबंधन, औषधि चुनाव, कानून और नियमन, निर्माण बाध्यताएं और शोध तथा विकास निर्णय।[2]

चूंकि एचआईवी/एड्स का प्रभावी इलाज अपेक्षाकृत नया है इसलिए एड्स के इलाज के लिये ईजाद की गयी एंटी–रेट्रोवायरल औषधियां पेटेंट के अधीन हैं।[3] क्योंकि पेटेंट सुरक्षा कंपनियों की प्रतियोगिता रोकती है। अतः इससे एचआईवी/एड्स का इलाज महंगा हो जाता है और उसके द्वारा दवा उपलब्धता भी सीमित होती है। इस अध्याय में, हम पेटेंट की परिभाषा, अंतर्राष्ट्रीय पेटेंट प्रशासनिक व्यवस्था, भारतीय पेटेंट कानून, एचआईवी/एड्स औषधियों की पहुंच पर हाल ही में हुये संशोधन और इसके कार्यान्वयन की चर्चा करेंगे।

पेटेंट क्या है

पेटेंट किसी व्यक्ति या फर्म को वह अधिकार प्रदान करता है जिसके तहत किसी को भी पेटेंट वस्तु का निर्माण, उपयोग, बिक्री, बिक्री प्रस्ताव, या पेटेंट की अवधि के लिए पेटेंट खोज को आयात करने से रोकता है। प्रायः इसकी अवधि 20 वर्ष की होती है। सामान्यतः पेटेंट एक तरह से सरकार द्वारा आविष्कारकर्ता को दिया गया एक सीमित संपत्ति अधिकार है। किसी अन्य संपत्ति अधिकार की तरह, इसे बेचा जा सकता है, लाइसेंस दिया जा सकता है या गिरवी रखा जा सकता है, सौंपा जा सकता है या स्थानांतरित किया जा सकता है, दिया जा सकता है, या छोड़ा जा सकता है या परित्याग किया जा सकता है।[4] इसे अलग तरह से देखने पर, यह कानून की स्वीकृति के साथ एकाधिकार है।[5]

पेटेंट दो प्रकार के होते हैं : प्रक्रिया पेटेंट और उत्पाद पेटेंट। प्रक्रिया पेटेंट स्वयं उत्पाद को नहीं बल्कि निर्माण प्रक्रिया पर मालिक को विशेष अधिकार प्रदान करता है।[6] अन्य शब्दों में, कोई भी किसी खास उत्पाद

1 यूएनएड्स और डब्ल्यूएचओ : पेटेंट सिचुएशन ऑव एचआईवी/एड्स रिलेटेड ड्रग्स इन 80 कंट्रीज, जिनेवाः 2000
2 वही
3 वही
4 वही
5 रांगनेकर : द्विजेन, नो पिल्स फॉर पुअर पीपल्स अंडरस्टेंडिंग द डिसेमबॉलमेंट ऑव इंडियाज पेटेंट रिजीम। इकॉनोमिक एंड पॉलिटिकल वीकली, 2006
6 जोसेफ अम्मु, 'एडवेंट ऑव पेटेंट राज, इंफोचेंज न्यूज एंड फीचर्स, जून 2005 http://www.infochangeindia.org/agenda 2_01.jspa

को अलग प्रक्रिया अपनाकर चाहे तो बना सकता है और बेच सकता है। दूसरी तरफ, उत्पाद पेटेंट के तहत पेटेंटधारक[7] से अनुमति लिए बिना किसी को भी निर्माण, बिक्री, वितरण या पेटेंट उत्पाद को आयात करने से रोकता है, यहां तक कि अलग प्रक्रिया से निर्मित समान उत्पाद को भी प्रतिबंधित करता है।

ट्रिप्स और डब्ल्यूटीओ

पेटेंट चूंकि राष्ट्रीय कानूनों के तहत प्रदान और लागू किए जाते हैं अतः स्वरूप में क्षेत्रीय होते हैं। यद्यपि, इन राष्ट्रीय कानूनों को अंतर्राष्ट्रीय समझौतों से प्रभावित किया जा सकता है, जिन्हें सदस्य देशों को अपने राष्ट्रीय पेटेंट कानूनों में सम्मिलित करना होता है।[8] सामान्यतः देश के पेटेंट कार्यालय के जरिये पेटेंट प्रदान किये जाते हैं और पेटेंट कानूनों के उल्लंघन के मामले राष्ट्रीय अदालतों के माध्यम से सुलझाये जाते हैं।[9]

विश्व व्यापार संगठन (डब्ल्यूटीओ) देशों के बीच व्यापार नियमों को देखने वाला एक अंतर्राष्ट्रीय संगठन है। अक्टूबर 2006 तक डब्ल्यूटीओ के सदस्य देशों की संख्या 149 थी।[10] डब्ल्यूटीओ का सदस्य बनने के लिए डब्ल्यूटीओ के समझौते के अनुरूप 18 विशेष समझौतों को अपनाने और उन्हें लागू करने का वचन देना होता है। वे कुछ समझौतों को आंशिक रूप से चुन या कुछ को छोड़ नहीं सकते हैं (कुछ बहुपक्षीय समझौतों को छोड़कर जो कि बाध्यकारी नहीं)। इन समझौतों में, व्यापार संबंधी बौद्धिक संपदा अधिकारों (ट्रिप्स) के व्यापार–संबंधी पहलुओं का औषधि निर्माण क्षेत्र और दवाओं की पहुंच पर व्यापक प्रभाव है।[11] ट्रिप्स समझौता 1995 से लागू है और सभी तरह के बौद्धिक संपदा अधिकारों (आईपीआर) की सुरक्षा और कार्यान्वयन के लिये न्यूनतम वैश्विक मानकों की पहल करता है, जिसमें पेटेंट के लिये भी मानक शामिल हैं।[12]

ट्रिप्स से पहले अंतर्राष्ट्रीय सम्मेलनों में पेटेंट के लिये विशेष न्यूनतम मानक तय नहीं थे। वार्ता शुरू होने के समय विश्व के 40 से ऊपर देशों ने औषधीय उत्पादों के लिए पेटेंट सुरक्षा प्रदान नहीं की। ट्रिप्स समझौता सभी डब्ल्यूटीओ सदस्यों से कुछ अपवादों को छोड़कर, अपने कानूनों को आईपीआर सुरक्षा के न्यूनतम मानकों के अनुकूल बनाने की मांग करता है।[13] इसके अतिरिक्त, ट्रिप्स समझौते में बौद्धिक संपदा अधिकारों के प्रवर्तन के लिए विस्तृत दायित्वों की शुरुआत भी की गयी। इसने पहली बार, अंतर्राष्ट्रीय व्यापार प्रणाली में बौद्धिक संपदा कानूनों की एक व्यवस्थित और सशक्त तरीके से शुरुआत की और आज की तारीख में बौद्धिक संपदा पर सर्वाधिक व्यापक अंतर्राष्ट्रीय समझौता बना हुआ है।[14]

वर्ष 2001 में, विकासशील देशों की चिंता थी कि विकसित देश ट्रिप्स की एक अत्यधिक संकीर्ण विचारधारा पर जोर दे रहे थे। वार्ता के दौर की शुरुआत हुई और वह दोहा घोषणा के रूप में सामने आयी। डब्ल्यूटीओ के एक वक्तव्य, जो ट्रिप्स के कार्यक्षेत्र को स्पष्ट करता है, में मिसाल के तौर पर कहा गया है कि ट्रिप्स की व्याख्या "सभी के लिये दवाओं तक पहुंच को बढ़ावा देने के लक्ष्य को ध्यान में रखकर हो सकती है और होनी चाहिये।"

इस क्षेत्र में डब्ल्यूटीओ के विशेष रूप से सक्रिय होने के चलते पेटेंट कानूनों के वैश्विक समरूपता की दिशा में एक प्रवृति पैदा हुयी है। ट्रिप्स समझौता पेटेंट कानूनों को श्रेणीबद्ध बनाने में बहुत सफल सिद्ध हुआ है। डब्ल्यूटीओ की सदस्यता के लिये ट्रिप्स समझौते के साथ अनुरूपता आवश्यक है और इस

7 वही
8 वही
9 सुप्रा नोट 1
10 डब्ल्यूटीओ वेबसाइट : 'मेंबर्स एंड आब्जरवर्स' http://www.wto.org/english/thewto_e/whatis_e/tif_e/org6_e.htm
11 डब्ल्यूएचओ : डब्ल्यूटीओ और ट्रिप्स समझौता देखें www.wto.org/english/tratop_e/trips_e.htm
12 वही
13 वही
14 वही

प्रकार बहुत से देशों को ट्रिप्स का अनुपालन उतना ही आवश्यक दिखाई दिया है।[15] इससे बहुत से उन विकासशील देशों को ट्रिप्स आवश्यकताओं के अनुरूप पेटेंट कानूनों को लागू करने का रास्ता दिखाया है जिन्होंने अपने विकास में सहायक ऐतिहासिक रूप से अलग कानूनों को विकसित किया। औद्योगिक संपदा के संरक्षण के लिए पेटेंट संबंधी उल्लेखनीय अंतर्राष्ट्रीय पेरिस सम्मेलन है वर्ष जो वर्ष 1883 में हुआ। पेरिस सम्मेलन में पेटेंट से संबंधित आधारभूत नियमों की सीमा तय की गई। यद्यपि सम्मेलन का सीधे तौर पर कोई कानूनी प्रभाव नहीं है परंतु वर्तमान में सभी उल्लेखनीय पेटेंट प्रणाली में सम्मेलन के सिद्धांतों को शामिल किया गया है। पेरिस सम्मेलन का सर्वाधिक महत्वपूर्ण पहलू प्राथमिकता का दावा करने के अधिकार का प्रावधान है। पेरिस सम्मेलन के किसी भी एक सदस्य राज्य में आवदेन दाखिल करने से एक वर्ष के लिये किसी अन्य सदस्य राज्य में आवेदन करने का अधिकार बना रहता है, और मूल दाखिल तिथि के लाभ प्राप्त करने का अधिकार बन जाता है। क्योंकि पेटेंट का अधिकार तिथि संचालित है, यह अधिकार आधुनिक पेटेंट उपयोग के लिये मूलभूत अधिकार है।

ट्रिप्स समझौता विकासशील देशों को संक्रमण काल के रूप में अतिरिक्त समय प्रदान करता है ताकि वे इस दौरान ट्रिप्स प्रावधानों के अनुरूप राष्ट्रीय कानून बनायें और उन्हें व्यवहार में लायें। इस तरह के तीन प्रमुख संक्रमण काल हैं जो विकासशील देशों को अलग–अलग तरह से प्रभावित करते हैं। पहली अवधि 1995–2000 की थी, जिसके अंत में देशों को ट्रिप्स समझौता लागू करने को कहा गया। वर्ष 2000 से 2005 के दौरान कुछ देशों को उन क्षेत्रों में उत्पाद पेटेंट प्रदान करने में छूट की अनुमति दी गयी जो कि उस देश में ट्रिप्स समझौता लागू होने के समय संरक्षित नहीं थे। इन देशों को प्रौद्योगिकी और उत्पादों के लिए उत्पाद पेटेंट व्यवस्था लागू करने के लिए फिर अगले पांच वर्षों की अनुमति प्रदान की गयी। इन उत्पादों में औषधि निर्माण और एग्रो–रसायन जैसे उत्पाद थे जिन्हें पेटेंट संरक्षण प्रदान नहीं था। परिवर्तन अवधि के दौरान, इन देशों से 1995 से आगे पेटेंट आवदेन स्वीकृत करने और इन आवेदनों को एक पेटेंट 'मेलबॉक्स' में लंबित रखने को कहा गया। वर्ष 2005 में इस 'मेलबॉक्स' को खोला गया और आवेदनों पर विचार शुरू हुआ।

तृतीय संक्रमण काल सबसे कम विकसित देशों (एलडीसी) को उनकी आर्थिक और प्रशासनिक बाध्यताओं को ध्यान में रखते हुये ट्रिप्स समझौते के अंतर्गत अपने कानूनों को 2006 तक लागू करने की अनुमति देता है। इस अवधि को एलडीसी सदस्य देश के अनुरोध पर ट्रिप्स परिषद द्वारा बढ़ाया जा सकता है। ट्रिप्स समझौता और सार्वजनिक स्वास्थ्य पर दोहा घोषणा द्वारा औषधि उत्पादों के संबंध में एलडीसी सदस्य देशों को 2016 तक समय तथा विशेष विपणन अधिकार मिल गए हैं। इस प्रकार, सबसे कम विकसित देशों को एक जनवरी 2016 तक औषधीय उत्पादों से संबंधित पेटेंट और डाटा संरक्षण कानूनों को प्रदान करने और न ही लागू करने की आवश्यकता है। संक्रमण काल का मतलब है कि विकासशील देशों द्वारा अपने यहां ट्रिप्स कानूनों को लागू करने से पहले पेटेंट की गई दवाओं पर पेटेंट संरक्षण प्राप्त नहीं होगा, और इस प्रकार व्यापक प्रतियोगिता संभव है। विकाशील देशों के ट्रिप्स कानूनों को लागू होने के बाद पेटेंट हुई दवाओं का बाजार में हिस्सा बढ़ा है।

ट्रिप्स में हालांकि ऐसा भी प्रावधान है जो देशों को एक हद तक छूट और पर्याप्त समय प्रदान करता है ताकि वे अपने पेटेंट और बौद्धिक संपदा प्रणाली तथा विकासपरक आवश्यकता को अनुकूल बना सकें। इसका अर्थ यह हुआ कि अपने नियमों को सुधारने में देशों को कुछ हद तक आजादी है और नई औषधियों के लिये भविष्य की खोजों तथा आवश्यक दवाओं तक आसान पहुंच के लक्ष्य के लिए सुविधाएं प्रदान करने के बीच एक उचित संतुलन सुनिश्चित करने के लिए बहुत से विकल्प मौजूद हैं। साथ ही दो सबसे अधिक महत्वपूर्ण विंडो प्रावधान भी हैं : अनिवार्य लाइसेंसिंग और समांतर आयात।

15 वही

(1) अनिवार्य लाइसेंसिंग

अनिवार्य लाइसेंस वह सरकारी लाइसेंस है जो पेटेंटधारक के अलावा किसी को पेटेंट या कॉपीराइट कराए गए उत्पादों या प्रक्रियाओं को नकल करने का अधिकार देता है। सरकार इन्हें तब जारी कर सकती है जब कोई पेटेंटधारक अपने अधिकारों का दुरुपयोग करता है, उदाहरण के लिये, बाजार में अपना उत्पाद न भेजने पर, अथवा ऐसी कीमत पर बेचना जो संभावित खरीदार की पहुंच से बाहर हो। तब प्रतियोगी सरकारी लाइसेंस के अंतर्गत बिना कानूनी कार्रवाई[16] के भय के उत्पाद बना सकता है या उत्पादन प्रक्रिया इस्तेमाल कर सकता है। इस कारण से हालांकि औषधि की नकल करने पर, निर्माता को पेटेंटधारक के साथ पेटेंटधारक रायल्टी अदा करने की बातचीत करनी होगी।

वर्ष 2001 में हुए दोहा समझौते में भी घोषणा की गयी कि अनिवार्य लाइसेंस उन औषधियों के लिए जारी किया जा सकता है जो ऐसी बीमारी का इलाज करती हैं जिनसे देश में गंभीर स्वास्थ्य आपातकाल पैदा होता है। ऐसे मामले में, रायल्टी[17] अदा करने की आवश्यकता नहीं।

ट्रिप्स समझौता अनिवार्य लाइसेंस प्रदान करने के लिए कई आधार प्रदान करता है लेकिन किसी देश के उन अन्य आधारों पर अनिवार्य लाइसेंस स्थापित करने के अधिकार सीमित नहीं करता जो स्पष्ट रूप से निर्देशित नहीं हैं (कोरिया, 2000बी)[18] ट्रिप्स समझौते की धारा–31, जो अनिवार्य लाइसेंस जारी करने से संबंधित है, अनिवार्य लाइसेंस जारी करने के लिए मूल आधारों की एक लंबी–चौड़ी सूची सामने नहीं रखती है। इस कारण से, डब्ल्यूटीओ सदस्य अन्य आधारों को तय कर सकते हैं, जिनके आधार पर अनिवार्य लाइसेंस जारी[19] किये जा सकते हैं।

धारा–31 में अनिवार्य लाइसेंसों को प्रदान करने की शर्तें विशेष रूप से बतायी गयी हैं। इनमें अनिवार्य लाइसेंस के लिए पांच संभावित आधार गिनाये गये हैं। ये हैं : सौदे से इन्कार करने वाले मामले, राष्ट्रीय आपातकाल और अति आवश्यकता, प्रतियोगी व्यापार के मामले में राहत के रूप में, सार्वजनिक, गैर–व्यावसायिक उपयोग, और आश्रित मरीजों के लिये सुविधा प्रदान करना। औषधियों को प्राप्त करने में रुकावट डालने वाले व्यापक पेटेंट अधिकारों को संतुलित बनाने के लिए धारा–31 की उपयोगिता अनावश्यक रूप से सीमित ही रहेगी यदि अन्य आधारों का समावेश नहीं किया गया।[20] सार्वजनिक स्वास्थ्य की प्रभावी सुरक्षा और वहन करने योग्य दवाओं तक पहुंच बनाने के लिये विकासशील देशों को कई उचित कारणों के आधार पर अनिवार्य लाइसेंस प्रदान करने में समर्थ होना चाहिये, जिनमें निम्नलिखित[21] शामिल हैं :

(ए) ट्रिप्स की धारा–(2) 1 कार्य करने में असफल अथवा अपर्याप्त कार्य के आधार पर पेटेंट से मिले विशेष अधिकारों का दुरुपयोग रोकने के लिये अनिवार्य लाइसेंस प्रदान करने के अधिकार को मान्यता देती है। ट्रिप्स समझौते की धारा–2 मांग करती है कि डब्ल्यूटीओ के सदस्य देशों को पेरिस सम्मेलन[22] के विशेष प्रावधानों का अनुपालन करना होता है। इसलिए पेटेंट के अनुरूप असफलता अथवा अपर्याप्त कार्य अनिवार्य लाइसेंस जारी करने के लिये कानूनी आधार है। विकासशील देशों के परिप्रेक्ष्य से, घरेलू

16 बोनिता डि बोयर: ट्रिप्स, एड्स एंड जेनेरिक ड्रग्स: एवर्ट इंटरनेशनल वेबसाइट: www.avert.org पर उपलब्ध

17 वही

18 थर्ड वर्ल्ड नेटवर्क ब्रीफिंग पेपर: ट्रिप्स, पेटेंटस एंड एक्सेज टु मेडिसिन्स; प्रपोजल फॉर क्लैरिफिकेशन एंड रिफॉर्म्स; जून 2001 www.twnside.org.sg/title/drugs 2.htm

19 वही

20 वही

21 वही

22 पेरिस सम्मेलन, जिसमें 1883 में स्वीकृत पेटेंट्स के लिए विश्व मानक स्थापित किए गए, धारा–5 ए में प्रावधान है कि सम्मेलन में हस्ताक्षर करने वालों को 'गलत इस्तेमाल को रोकने के लिए अनिवार्य लाइसेंस प्रदान करने के लिए कानूनी उपाय करने का अधिकार है जिसे पेटेंट द्वारा दिए गए विशिष्ट अधिकारों के इस्तेमाल के फलस्वरूप देखभाल चाहिए उदाहरण के लिए कार्य में असफलता।'

निर्माण क्षमता बढ़ाने के लिए स्थानीय स्तर पर प्रौद्योगिकी हस्तांतरण वांछनीय है। घरेलू उत्पादन में वृद्धि विदेशी मुद्रा के खर्च को घटाने में भी सहायता करेगी। आयात में होने वाले खर्च बहुत–से विकासशील देशों के लिये एक महत्वपूर्ण कारक है।

(बी) कार्य न करने अथवा अपर्याप्त कार्य के आधार पर पेटेंट के उपयोग के लिए अनिवार्य लाइसेंस वहां उचित है जहां किसी देश में औषधीय उत्पादन के लिए उचित उच्च औषधीय उद्योग पहले से ही है। वर्तमान में, बहुत कम विकासशील देशों के पास यह क्षमता है। जहां घरेलू निर्माण क्षमता सीमित अथवा मौजूद नहीं है वहां अन्य उपायों की आवश्यकता है।

ट्रिप्स समझौते के तहत पेटेंट उत्पादों के आयात के लिए अनिवार्य लाइसेंस उपयोग करने के विकल्प को नहीं रोकना चाहिये। अनिवार्य लाइसेंस का इस्तेमाल करना प्रायः उन देशों में व्यावहारिक होना चाहिए जहां घरेलू निर्माण क्षमता मौजूद नहीं है, अथवा जहां स्थानीय बाजार का आकार स्थानीय निर्माण के हिसाब से मेल नहीं खाता, अथवा वहां जहां आपात स्थिति से निपटने की आवश्यकता है।

अनिवार्य लाइसेंस राष्ट्रीय स्वास्थ्य आवश्यकताओं के लिए प्रभावी तथा अनुकूल होना चाहिये, सदस्य देशों को भी अनिवार्य लाइसेंस जारी करने तथा अन्य देशों के उन दवा निर्माताओं से दवाएं प्राप्त करने का अधिकार होना चाहिये जिनके यहां आवश्यक उत्पादन क्षमता है।

(सी) एक सवाल और है कि उत्पाद के निर्यात के लिए, जिसके लिए उसे बनाने का लाइसेंस मिला है, कब और किस सीमा तक अनिवार्य लाइसेंस को अनुमति दी जानी चाहिए? ट्रिप्स समझौता निर्दिष्ट करता है कि अनिवार्य लाइसेंस 'मुख्यतः' घरेलू बाजार की आपूर्ति के लिए ही होना चाहिए (धारा–31– एफ)। इस तरह निर्यात की अनुमति है, हालांकि निर्यातित दवाओं की मात्रा अथवा अनुपात सीमित है। यद्यपि ऐसे मामलों में जहां गैर प्रतियोगी आचरण से छुटकारा पाने के लिये अनिवार्य लाइसेंस दिया गया है यह सीमा उठा ली गयी है।

विकासशील देश अनिवार्य लाइसेंस प्रदान करने की प्रक्रिया में एक और समस्या का सामना कर रहे हैं या करते हैं, वह है कई कानूनी आवश्यकताओं या शर्तों को पूरा करना। धारा–31 ऐसी कुछ विशेष शर्तों का उल्लेख करती है जिनमें उचित व्यावसायिक शर्तों और पर्याप्त पारितोषिक पर पेटेंटधारक से अधिकार हासिल करने के लिए कानूनी कार्यवाही इत्यादि शामिल हैं। इस तरह की कानूनी शर्तें अनिवार्य लाइसेंस जारी करने में रुकावट नहीं बननी चाहिये।

(2) समांतर आयात

समांतर आयात किसी अन्य देश से बहुत ही सस्ती दवाओं का सीमापार आयात है। बौद्धिक संपदा (ट्रिप्स) पर विश्व स्वास्थ्य संगठन (डब्ल्यूटीओ) समझौते के अंतर्गत समांतर आयात सीमित नहीं है। यह कार्य न तो स्पष्ट रूप से कानून के बाहर और न ही ट्रिप्स के अंतर्गत है। अमेरिका देशों पर समांतर आयात पर पाबंदी लगाने का दबाव डाल रहा है। समांतर आयात में पेटेंटधारक की सहमति के बिना देश में उस पेटेंट उत्पाद का आयात और बिक्री शामिल है जो पेटेंटधारक[23] द्वारा निर्यातक देश ने बाजार में भेजा था। समांतर आयात का सिद्धांत अधिकारों की समाप्ति के सिद्धांत पर आधारित है। यह सिद्धांत इस तथ्य पर आधारित है कि पेटेंट धारक को उत्पाद की पहली बिक्री अथवा वितरण का अधिकार हासिल हुआ है, उसे उत्पाद के उपयोग या पुनः बिक्री को नियंत्रित करने का कोई अधिकार नहीं है। यह डब्ल्यूटीओ के व्यापार उदारीकरण

23 थर्ड वर्ल्ड नेटवर्क ब्रीफिंग पेपरः ट्रिप्स, पेटेंट्स एंड एक्सेस टु मेडिसिन्स प्रपोजल फॉर क्लैरिफिकेशन एंड रिफॉर्म्स, जून 2001, www.twnside.org.sg/title/drugs 2.htm पर उपलब्ध

उद्देश्यों के अनुरूप भी होगा कि जब कोई उत्पाद बाजार में आता है तो पेटेंटधारक का इसके बाद के प्रसार (डब्ल्यूएचओ, 1999) पर आगे कोई नियंत्रण नहीं होगा।[24]

ट्रिप्स समझौते में समांतर आयात पर किसी प्रकार की रोक नहीं है। विशेष रूप से, धारा–6 के तहत प्रत्येक सदस्य देश को अपने राष्ट्रीय कानून में अधिकारों की समाप्ति के अंतर्राष्ट्रीय सिद्धांत को शामिल करने की आजादी है। इन अधिकारों में अपने राष्ट्रीय कानून में समांतर आयात के लिए निहित औचित्य शामिल है। इसमें आगे कहा गया है कि सदस्य अधिकारों के हनन संबंधी विवादों को निपटाने के लिए डब्ल्यूटीओ विवाद निपटान प्रणाली के अधीन नहीं है।[25]

समांतर आयात सार्वजनिक स्वास्थ्य के हित के लिए विशेषकर महत्वपूर्ण हैं, क्योंकि औषधि निर्माता कंपनियां एक ही दवा के लिए विश्वभर में भिन्न–भिन्न कीमतें तय करती हैं। समांतर आयात क्षेत्रीय अथवा अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर पेटेंटधारकों द्वारा बाजार को बांटने और कीमतों में अंतर को रोकेगा। एक देश से जहां कोई दवा कम कीमत पर बेची जाती है, वह पेटेंट दवा समांतर आयात के माध्यम से आयात करने वाले देश में ज्यादा से ज्यादा मरीजों को उपलब्ध होगी।[26] इस पहल से पेटेंट धारक को अपनी पेटेंट खोज के लिए किसी देश, जहां पहली बार दवा की बिक्री हुयी है, से पैसा पाने में भी रुकावट नहीं आयेगी। इस संबंध में, समांतर आयात को दवाओं की कीमतें कम करने के लिये एक कानूनी साधन के रूप में माना जाना चाहिए जिसका उपयोग डब्ल्यूटीओ सदस्य सार्वजनिक स्वास्थ्य और पोषण की सुरक्षा के लिये कर सकते हैं जैसा कि ट्रिप्स समझौते की धारा–8 में प्रावधान है।

धारा–27.1 के अंतर्गत संभावित भेदभाव की शिकायत से बचने और साथ ही अर्थव्यवस्था के सभी क्षेत्रों के लाभ के लिए यह सिफारिश की गई है कि राष्ट्रीय कानून के भीतर प्रौद्योगिकी के सभी क्षेत्रों में पेटेंट वस्तुओं के लिये समांतर आयात की अनुमति मिलनी चाहिये, न कि केवल स्वास्थ्य–संबंधी खोजों के लिये।[27]

सरकार उस परिस्थिति में समांतर आयात की अनुमति दे सकती है जब एक देश में पंजीकृत पेटेंट के अंतर्गत उत्पाद निर्मित हुआ हो लेकिन किसी और देश में कम कीमत पर बेचा गया हो, तब उसे बिना पेटेंटधारक की अनुमति के दूसरे देश से आयात किया जा सकता है। ट्रिप्स कहता है कि समांतर आयातों की अनुमति देने वाली सरकारों को डब्ल्यूटीओ विवाद निबटान प्रणाली के अंतर्गत चुनौती नहीं दी जा सकती है और वे पेटेंटधारक की राष्ट्रीयता के आधार पर भेदभाव नहीं कर सकते।[28] दोनों प्रावधानों के साथ तथापि कई शर्तें जुड़ी हैं जो इन्हें प्रभावी तथा सख्ती से काम करने में कठिनाई पैदा करती हैं।

भारतीय पेटेंट कानून

पहला पेटेंट कानून 1856 के आविष्कारों को विशेषाधिकार प्रदान करने वाला अधिनियम था। यह कानून भारत में हुए आविष्कारों को संरक्षण प्रदान करने के लिये बना था। बाद में 1852 के इंग्लिश पेटेंट अधिनियम के प्रारूप पर 1859 में नया अधिनियम लागू किया गया।[29] इस अधिनियम के अंतर्गत किसी नये उत्पाद के आविष्कारक को अपना उत्पाद पेटेंट कराने के बाद 14 वर्ष तक उसे भारत में बनाने, बेचने और उपयोग के साथ–साथ अन्य को ऐसा करने देने का अधिकार मिल जाता है। डिजाइनों के लिये संरक्षण प्रदान करने के उद्देश्य से 1872 में

24 थर्ड वर्ल्ड नेटवर्क ब्रीफिंग पेपरः ट्रिप्स, पेटेंटस एंड एक्सेज टु मेडिसिन्स; प्रपोजल फॉर क्लैरिफिकेशन एंड रिफॉर्म्स जून 2001 www.twnside.org.sg/title/drugs 2.htm

25 वही

26 वही

27 वही

28 मुदुम, गुमिसाई "हेल्थ एंड इंटेलेक्चुअल प्रोपर्टी; पूअर नेशन्स एंड ड्रग्स फर्मस टसल ओवर डब्ल्यू टी ओ पेटेंट प्रोविज़ंस।" अफ्रीका रिकवरी वॉल्यूम 15# 1–2(जून 2001), पृष्ठ 14

29 डॉ. हेडगे, वी.डी. "ईस्ट इज नॉट वेस्टः इंडिया एंड द पेटेंट रेजिम," काम्बैट लॉ; खंड 4 इश्यू 4, जून–जुलाई 2005

पेटेंट और डिजाइन संरक्षण अधिनियम पारित हुआ। अपने आविष्कार को प्रदर्शनी में प्रदर्शित करने की इच्छा वाले आविष्कारकों को संरक्षण प्रदान करने के लिये 1883 में एक संशोधन अधिनियम पारित हुआ। बाद में, 1888, 1859, 1872 और 1883 में पास हुए कानूनों को एक अधिनियम में समाहित कर दिया गया।[30] इस अधिनियम को संशोधित कर इसके स्थान पर भारतीय पेटेंट और डिजाइन अधिनियम, 1911 आ गया। यह अधिनियम भारत में पहली बार पेटेंट नियंत्रक प्रबंधन के अंतर्गत पेटेंट प्रशासन प्रणाली के रूप में स्थापित हुआ। 1911 से 1970 की अवधि के दौरान इस अधिनियम में विभिन्न संशोधन लागू किये गये।[31] भारत द्वारा अपने स्वयं के पेटेंट कानून बनाने के प्रयास स्वतंत्रता मिलने के तुरंत बाद शुरू हो गए। स्थानीय परिस्थितियों के विस्तृत मूल्यांकन पर आधारित कानून तथा नीति बनाने पर ध्यान केंद्रित किया गया।

स्वतंत्रता के तुरंत बाद गठित बख्शी टेकचंद समिति ने पाया कि इस विषय पर मौजूद औपनिवेशिक कानून अर्थात भारतीय पेटेंट और डिजाइन अधिनियम, 1911 आविष्कार गतिविधियों को प्रेरित करने में असफल रहा है।[32] इसके साथ ही, 1957 में जस्टिस राजगोपाला अयंगर की अध्यक्षता में भारत में पेटेंट कानूनों की समीक्षा के लिये एक समिति गठित हुयी। इस समिति ने अपनी रिपोर्ट 1959 में सौंपी।[33] वर्ष 1970 का भारतीय पेटेंट कानून मुख्यतः इसी समिति की अनुशंसाओं पर आधारित था। इस समिति ने पाया, कि भारत जैसे "एक अल्पविकसित देश का पेटेंट कानून ऐसा बनाया जाना चाहिये जिससे देश तीव्र औद्योगीकरण को अपनाने में समर्थ हो और जितनी जल्दी संभव हो सके और इसे पाने के लिये पेटेंट अनुदानों द्वारा आविष्कारों तथा निवेशकों को उचित उच्च स्तरीय प्रौद्योगिकी तथा पर्याप्त प्रोत्साहन देना चाहिये तथा साथ ही साथ अपने राष्ट्रीय आर्थिक तथा सामाजिक हित भी संरक्षित रखने चाहिये।[34]

भारत ने 1970 में, 1971 में ब्राजील, 1974 में एंडीयन समझौता और 1976 में मैक्सिको ने राष्ट्रीय बौद्धिक संपदा कानूनों की समीक्षा की जिसमें उन्होंने प्रचलित प्रौद्योगिकी हस्तांतरण के अंतर्राष्ट्रीय सिद्धांतों के प्रति असंतोष व्यक्त किया। इन देशों ने देसी प्रौद्योगिकी के विकास को बढ़ाने के लिए बौद्धिक संपदा कानूनों के उपयोग की मांग की।[35] वर्ष 1970 का पेटेंट अधिनियम सामान्यतः बौद्धिक संपदा का पश्चिमी प्रारूप है, जिसमें आविष्कारक को अपने आविष्कार से फायदे उठाने के लिए अस्थाई एकाधिकार प्रदान करके उसके योगदान को मान्यता देने का प्रयास किया गया है। वर्ष 1970 के अधिनियम को बनाने वालों ने यद्यपि ऐसे हितों का गलत इस्तेमाल रोकने तथा पेटेंट अधिकारों से बुनियादी आवश्यकताओं को पूरा करने में अनुचित रुकावटें पैदा न होने देने के लिये सुरक्षा उपायों को लागू किया। स्वास्थ्य के मामले में, खासकर दवाओं तक आसान पहुंच के लिए विशेष मापदंड सुनिश्चित किये गये। इसमें अधिकारों की अवधि काफी कम (14 वर्ष के स्थान पर 7 वर्ष), तथा सभी दवाओं पर उत्पाद पेटेंट पर प्रतिबंध तथा एक मजबूत अनिवार्य लाइसेंसिंग प्रणाली शामिल है।[36]

पेटेंट अधिनियम 1970 की प्रमुख विशेषताएं इस प्रकार थीं[37]:

- औषधियों, खाद्य और रसायन आधारित उत्पादों के लिए कोई उत्पाद पेटेंट नहीं था। ये क्षेत्र केवल प्रक्रिया पेटेंट के अंतर्गत आते थे।

---

30 डॉ. हेडगे, वी.डी. "ईस्ट इज नॉट वेस्टः इंडिया एंड द पेटेंट रेजिम," काम्बैट लॉ; खंड 4 इश्यू 4, जून–जुलाई 2005

31 वही

32 वही

33 रांगनेकर : द्विजेन, "नो पिल्स फॉर पुअर पीपल्स अंडरस्टैंडिंग द डिसेम्बॉलमेंट ऑव इंडियाज पेटेंट रेजीम।" इकॉनोमिक एंड पॉलिटिकल वीकली, 2006

34 वही

35 वही

36 कुलेट, फिलिप, "पेटेंट बिल्स, ट्रिप्स एंड राइट टु हेल्थ" , इकॉनोमिक एंड पॉलिटिकल वीकली; 27 अक्टूबर, 2001

37 कैयला, बीके "इंडिया एंड द पेटेंट रेजीम अमेंडेड पेटेंट एक्ट, 1970–ए क्रिटिक काम्बैट लॉ खंड 4, इश्यू, जून–जुलाई 2005

- पेटेंट की अवधि आवेदन की तिथि से सात वर्ष अथवा पेटेंट की सीलिंग तिथि से पांच वर्ष, जो भी अवधि कम हो, थी।
- पेटेंट उत्पाद में घरेलू उद्यमों की घोषित भूमिका सुनिश्चित करने के लिए प्रक्रिया पेटेंट के क्षेत्रों के लिए एक लाइसेंसिंग ऑव राइट यानी अधिकार लाइसेंस प्रणाली स्थापित की गई। आयात पर कोई बाध्यता नहीं थी। पेटेंटधारक पेटेंट के लिए कार्य करने को कानूनी रूप से बाध्य था। यदि पेटेंट कारगर नहीं हुआ तो पेटेंट वापस लेने का भी प्रावधान था।

अधिकारों के लाइसेंसों के लिए रायल्टी सीमा चार प्रतिशत निर्धारित थी।[38] बौद्धिक संपदा अधिकार (ट्रिप्स) समझौते के व्यापार संबंधी पहलुओं के धारा–65.4 में अतिरिक्त अल्पकालिक प्रावधानों से लाभ उठाने के बाद, भारत एक जनवरी 2005 तक औषधि और एग्री–रसायनों के लिए उत्पाद पेटेंट लागू करने को बाध्य था।[39] ट्रिप्स के अंतर्गत पहला मामला अमेरिका का था जिसमें धारा–70.8 तथा 70:9 से संबंधित कानूनों को लागू करने में असफल रहने का आरोप था। प्रतिकूल व्यवस्था के चलते भारत ने पेटेंट्स (संशोधन) अधिनियम, 1999 (1999 की सं0 17) बनाया जिसमें 'विशेष विपणन अधिकार' शीर्षक से IV ए अध्याय जोड़ा गया।

दूसरा संशोधन, पेटेंट्स (संशोधन) अधिनियम 2002 (2002 की सं0 38) 25 जून, 2002 में किया गया।[40] पेटेंट संबंधी अंतिम कानून मुक्त प्रौद्योगिकी में उत्पाद–पेटेंट पेटेंट्स (संशोधन) बिल, 2003 के जरिए कानून बनना था लेकिन संसद भंग होने के कारण कानून नहीं बन सका। वाम समर्थित कांग्रेस की संयुक्त प्रगतिशील गठबंधन की नई सरकार ने एक जनवरी, 2005 की समय सीमा को देखते हुए इसी अधिनियम में मामूली संशोधन कर पेटेंट्स (संशोधन) अध्यादेश, 2004 (2004 की ओआरडी सं0 7) के रूप में संसद में पेश करने का फैसला किया। खूब बहस और पर्याप्त बदलाव के बाद यह पेटेंट्स (संशोधन) अधिनियम, 2005 के रूप में (अतः तीसरा संशोधन)[41] 4 अप्रैल, 2005 का कानून बना।

एचआईवी/एड्स तथा तीसरा संशोधन

भारत में 1970 से ही जेनेरिक उद्योग काफी सफल था जब भारत ने औषधीय उत्पादों[42] के लिए पेटेंट संरक्षण के लिए मौजूदा पेटेंट अधिनियम संशोधित किया। भारत अधिकतर विकासशील देशों में औषधियों के लिए पसंदीदा निर्माता है तथा कम कीमत पर अधिक मात्रा[43] में अंतर्राष्ट्रीय मानकों को सुनिश्चित करने वाला दवा निर्माता बना हुआ है। हाल के समय में, भारतीय औषधि निर्माण कंपनियों की सर्वाधिक सफलता उचित कीमतों पर एचआईवी/एड्स दवाओं को मुहैया कराने की क्षमता है। 2000 तक ऊंची कीमतों के कारण विश्वभर में एचआईवी/एड्स (पीएलएचए) ग्रस्त मरीजों की विशाल संख्या को एंटीरेट्रो वायरल दवाएं उपलब्ध नहीं थीं। बहुराष्ट्रीय दवा कंपनियों ने एआरवी दवाओं की कीमत प्रति व्यक्ति 12–13,000 अमरीकी डालर वार्षिक रखी हुयी थी। वर्ष 2000 से भारत में एआरवी दवाओं के जेनेरिक वर्जन के उत्पादन की शुरुआत के बाद दवाओं की कीमतें गिरने लगीं। ये दवाएं वर्तमान में एचआईवी पीड़ितों को प्रति व्यक्ति 140 अमरीकी डालर प्रति वर्ष जैसी कम कीमत पर उपलब्ध हैं। यह भारत में उत्पाद पेटेंट प्रणाली न होने के कारण संभव हुआ। भारतीय

38 केला, बी.के. "इंडिया एंड द पेटेंट रेजीम अमेंडेड पेटेंट एक्ट, 1970–ए क्रिटिक, काम्बैट लॉ, खंड 4, इश्यू, जून–जुलाई 2005

39 रांगनेकर : द्विजेन, "नो पिल्स फॉर पुअर पीपल्स अंडरस्टैंडिंग द डिसेमबॉलमेंट ऑव इंडियाज पेटेंट रेजीम।" इकॉनोमिक एंड पॉलिटिकल वीकलि, 2006

40 वही

41 वही

42 बेकर, ब्रुक के. "इंडियाज 2005 पेटेंट एक्टः डेथ बाई पेटेंट और यूनीवर्सल एक्सेस टु सेकेंड–एंड फ्यूचर–जेनेरेशन एआरवीज?" बैकग्राउंड पेपर, हेल्थ गैप; ग्लोबल एक्सेस प्रोजेक्ट, 2005.

43 वही

फर्मों की प्रतियोगिता के चलते ही एचआईवी/एड्स के इलाज की लागत हाल के वर्षों में प्रति व्यक्ति 10,000 डालर से घटकर 150 डालर प्रति वर्ष हो गई है। अन्य बीमारियों के इलाज की लागत भी घटी है।[44] वर्ष 2005 में पेटेंट अधिनियम में तीसरा संशोधन हालांकि औषधि उत्पादों के उत्पाद पेटेंट अनुमति देता है।[45]

उत्पाद पेटेंट संरक्षण की अनुपस्थिति से एआरवी दवाओं के फिक्स्ड डोज कंबीनेशन (एफडीसी) को लागू करने में सहायता मिली है, क्योंकि जेनेरिक निर्माता उन दवाओं को एक ही गोली में मिला सके जिनके पेटेंट अलग प्रतियोगी कंपनियों के पास थे। जेनेरिक निर्माताओं द्वारा थ्री इन वन गोली बनाने से इसका उपयोग प्रतिदिन 6 गोलियां के स्थान पर किया जाने लगा।[46] इस प्रकार एफडीसी ने एआरवी दवाओं तक आसान पहुंच को बढ़ा दिया। एफडीसी की शुरुआत भारत में उत्पाद पेटेंट संरक्षण की गैर मौजूदगी के कारण ही संभव हुई। भारत में उत्पाद पेटेंट प्रणाली की शुरुआत भविष्य में जेनेरिक कंपनियों के इस तरह के आविष्कारों को रोकेगी।[47]

नया अधिनियम पहले से जेनेरिक वर्जन उत्पादित करने वाली भारतीय कंपनियों को उन्हें बनाने की अनुमति देगा, लेकिन तभी जब उपयुक्त रायल्टी अदा करने के बाद पर्याप्त निवेश किया गया हो। आलोचकों का कहना है कि इस तरह की अनिश्चित पारिभाषिक शब्दावली की व्याख्या जेनेरिक दवा निर्माताओं और अंततः उपभोक्ता की कीमत पर पेटेंटधारकों को फायदा पहुंचा सकती है।[48] भारतीय संदर्भ में दवाओं की कीमतों में तीव्र बढ़ोतरी के वित्तीय कारण गंभीर हैं क्योंकि यहां एचआईवी पीड़ितों और उनके परिवारों को सार्वजनिक स्वास्थ्य बीमा की बात तो दूर प्रभावी सार्वजनिक स्वास्थ्य प्रणाली के अभाव में दवाओं सहित सभी तरह के चिकित्सीय खर्चे वहन करने पड़ते हैं।[49]

यह उल्लेख करना उपयुक्त है कि भारत में, तीसरे संशोधन के बाद से आवश्यक दवाओं के पेटेंट का विरोध करने के लिए बहुत से संगठनों ने पेटेंट के प्रति विरोध दर्ज किया है। भारतीय पेटेंट कार्यालय ने नोवार्टिस द्वारा दायर गंभीर माइल्यॉड ल्यूकीमिया के इलाज में इस्तेमाल होने वाली जीवन रक्षक दवा ग्लीवेक (इमेटिनिब–मेसीलेट) के पेटेंट आवेदन को आगे स्वीकार करने से इंकार कर दिया। नोवार्टिस ने भारत में पेटेंट आवेदन दाखिल किया और उसे अस्थाई एकाधिकार प्रदान कर दिया गया। 1998 में, नोवार्टिस ने इमेटिनिब मेसीलेट (ग्लीवेक) पर पेटेंट हासिल करने के लिए चेन्नई पेटेंट कार्यालय में आवेदन किया।

वर्ष 2005 में, भारत ने पूरी तरह ट्रिप्स समझौते के अनुरूप अपने पेटेंट कानून में बदलाव किया और चेन्नई के पेटेंट कार्यालय द्वारा ग्लीवेक पर नोवार्टिस का पेटेंट आवेदन परीक्षण के लिए स्वीकार किया गया। भारतीय पेटेंट अधिनियम पेटेंट अधिकार देने से पहले किसी भी व्यक्ति या समूह को संबद्ध आवेदन का विरोध करने की अनुमति देता है। कैंसर रोगी सहायता संगठन ने कैंसर मरीजों की ओर से चेन्नई पेटेंट कार्यालय में एक विरोध दाखिल किया।[50] जनवरी 2006 में, चेन्नई पेटेंट कार्यालय ने नोवार्टिस के पेटेंट दावे को इस आधार पर खारिज कर दिया कि आवेदन में एक ज्ञात पदार्थ को केवल नए रूप में दिया गया है।[51] चेन्नई कार्यालय के इस आदेश से उन हजारों कैंसर रोगियों को राहत दी क्योंकि उसने 2018 तक न केवल पेटेंट एकाधिकार को रोका

44 शशिकांत, संगीता, 'टीडब्ल्युएन इनफो सर्विस ऑन डब्ल्यूटीओ एंड ट्रेड इश्यूज' थर्ड वर्ल्ड नेटवर्क, 2006 http://www.twnside.org.sg/title2/twninfo459.htm पर उपलब्ध

45 लियांग, लारेंस, "पेटेंट्स एट द कॉस्ट ऑव पेशेंट्स", अल्टरनेटिव लॉ फोरम http://www.altlawforum.org/PUBLICATIONS/document.2004-12-18.8851605223 पर उपलब्ध

46 वही

47 वही

48 पूर्वोक्त

49 वही

50 वही

51 वही

बल्कि ईएमआर (एक्सक्लूसिव मार्केटिंग राइट्स) भी स्वतः ही निरस्त हो गया।[52] ज्ञात पदार्थ को नया रूप देने के आधार ग्लीवेक का पेटेंट आवेदन ठुकराने से एड्स के इलाज वाली एंटीरेट्रोवायरल दवाओं सहित ज्ञात मॉलीक्यूल्स को शोधन से केवल नया रूप देने का दावा करने वाले अन्य पेटेंट आवेदनों के परीक्षणों के लिए भी इस फैसले ने महत्वपूर्ण उदाहरण स्थापित किया।[53]

52 एमएसएफ एंड लॉयर्स कलेक्टिव, इंडिया, 'नोवार्टिस चैलेंजेज इंडियन सेफगार्ड्स' पीपल्स हैल्थ मूवमेंट, 2006 http://www.phmovement.org/en/node/264 पर उपलब्ध

53 वही

खंड-तीन

भेदभाव

अध्याय 4 : रोजगार संबंधी भेदभाव और कानून

अध्याय 5 : चिकित्सा संबंधी भेदभाव और कानून

अध्याय 6 : शैक्षिक भेदभाव और कानून

कलंक तथा भेदभाव

ये दोनों ही मानवाधिकारों के हनन हैं, साथ ही एचआईवी/एड्स की महामारी को रोकने की दिशा में सबसे बड़ी बाधाएं हैं। एचआईवी से जुड़े कलंक तथा भेदभाव अपने आप में एक "महामारी" हैं।[1] इसे केवल व्यक्तिगत तौर पर ही नहीं, बल्कि परिवार तथा समुदायों और सरकारों तथा संस्थाओं के स्तर पर भी बढ़ावा दिया जाता है। संभवतः इसे व्यक्ति के सम्पूर्ण जीवन के साथ जोड़ दिया जाता है। एचआईवी/एड्स से जुड़ी शर्मिंदगी तथा भेदभाव की जड़ में इस बीमारी के होने के वे कारण जुड़े हैं जिनके अनुसार यह महामारी विवाह पूर्व यौन संबंध तथा समलैंगिकता जैसे गैरकानूनी, अनैतिक या निषिद्ध व्यवहारों/आचरणों के कारण उत्पन्न होती है। एचआईवी/एड्स से जुड़े लांछन तथा भेदभाव इस महामारी से भी ज्यादा त्रासदीपूर्ण होते हैं।

इसलिये एचआईवी/एड्स ग्रस्त लोगों की देखरेख तथा उनका उपचार और मानवीय गरिमा के साथ जीवन जीने के उनके अधिकार की बहाली एचआईवी/एड्स से जुड़े कलंक और भेदभाव का मुकाबला करने की पूर्व शर्तें हैं। केवल एचआईवी/एड्स पीड़ित व्यक्ति और उससे संबंधित लोग ही इस संक्रमण के फैलाव[2] से जुड़े कलंक एवं भेदभाव से प्रभावित नहीं होते हैं बल्कि इसके दूरगामी व्यापक मानवीय, सामाजिक और आर्थिक प्रभाव भी होते हैं।

इस अध्याय में एचआईवी/एड्स से संबंधित जुड़े कलंकों तथा भेदभाव के विभिन्न पहलुओं पर विस्तार से चर्चा की गई है तथा उस वैधानिक और विनियामक व्यवस्था का अध्ययन किया गया है जिनमें राष्ट्रीय तथा अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर ऐसे भेदभाव होते हैं। इसमें खासतौर पर एचआईवी/एड्स ग्रस्त लोगों के साथ कार्यस्थल, स्वास्थ्य–चिकित्सा और शिक्षा के संदर्भ में होने वाले भेदभाव पर बल दिया गया है।

1. एचआईवी/एड्स से संबद्ध कलंक तथा भेदभाव की समझ

कलंक तथा भेदभाव क्या हैं?

एचआईवी/एड्स के संदर्भ में कलंक और भेदभाव की प्रकृति को जानने के लिए एक दूसरे से निकटता से जुड़े सभी मुद्दों, धारणाओं तथा उनके अंतरसंबंधों को समझना–जानना बहुत जरूरी है।

कलंक को शक्तिशाली लज्जाजनक सामाजिक बिल्ले (लेबल) के रूप में परिभाषित किया जा सकता है।[3] इसमें एक सामाजिक समूह से अलगाव की भावना निहित है तथा इसका "व्यक्ति स्वयं को कैसे देखता है

---

1 एड्स पर डब्ल्यूएचओ ग्लोबल प्रोग्राम के तत्कालीन निदेशक स्वर्गीय जोनाथन मान ने 1987 में एचआईवी/एड्स महामारी के तीन चरणों की पहचान की थी : एचआईवी की महामारी, एड्स की महामारी तथा कलंक, भेदभाव और अभाव की महामारी। उन्होंने पाया कि तीसरा चरण "ग्लोबल एड्स के सामने ऐसी चुनौती है जैसी स्वयं बीमारी" (संदर्भ : एन रायजादा, सी श्यामसुंदरम, जेपी मेहता, वीपी पांड्या (2004), विद्यालय जाने वाले किशोरों के बीच एचआईवी/एड्स से संबद्ध कलंक को घटाने तथा जागरूकता बढ़ाने में विभिन्न आईईसी का प्रभाव, इंडियन जर्नल ऑव कम्युनिटी मेडिसिन, खंड 29, संख्या 1 (2004–01–2004–03))

2 एग्लेटन, पी, वुड के तथा मैलकॉम, ए. (2005) एचआईवी से संबद्ध, कलंक, भेदभाव तथा मानवाधिकारों का हनन, सफल कार्यक्रमों की केस स्टडी, यूएन एड्स के लिए तैयार, अप्रैल, 2005, पृ. 4

3 डी ब्रुयन, टी. (1998), एचआईवी/एड्स एंड डिस्क्रीमिनेशन : ए डिस्कशन पेपर मांट्रियल : कनेडियन एचआईवी/एड्स लीगल नेटवर्क एंड कनेडियन एड्स सोसायटी (http://www.aidslaw.ca/Maincontent/issues/discrimination/discussionpapers/DISCdiv.html से डाउनलोड (जुलाई 2006), कोटिंग एलोन्जो, एए, रेनाल्ड्स, एनआर, (1995) स्टिग्मा, एचआईवी एंड एड्स : एन एक्सप्लोरेशन एंड एलेबोरेशन ऑव ए स्टिग्मा ट्रैजेक्टरी, सोशल साइंस एंड मेडिसिन, 41(3) : 303–315 एट 304

और उसे व्यक्ति के रूप में कैसे देखा जाता है" पर गहरा असर पड़ता है।[4] यह अक्सर त्वचा के रंग अथवा यौन अभिरुचियों जैसी मनमाने मानदंडों[5] से जुड़ा होता है तथा शक्ति और नियंत्रण के सशक्त संबंधों को स्थापित करने तथा उन्हें पुनर्स्थापित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।[6]

सामान्य शब्दों में वास्तविक तथा अनुभूत लक्षणों के आधार पर किसी व्यक्ति या व्यक्तियों के समूह के साथ अलग प्रकार का व्यवहार करना भेदभाव है। इस परिभाषा के अनुसार सभी तरह के भेदभाव गैरकानूनी नहीं हैं। एक विशेष पद के लिए शैक्षिक रूप से योग्य व्यक्ति का चयन न्यायपूर्ण भेदभाव है। भेदभाव की कानूनी अवधारणा हालांकि उस व्यवहार से संबद्ध है जो "उद्देश्य, अनुपात और प्रभाव के अर्थों में अन्यायपूर्ण" है[7], ऐसे भेदभाव आवश्यक तौर पर तो नहीं लेकिन अक्सर कलंक को स्थापित करते हैं।

एचआईवी और एड्स से संबद्ध कलंक तथा भेदभाव का निर्धारण

सेक्स, बीमारी और मौत के परिदृश्य में एचआईवी/एड्स से जुड़े कलंक और भेदभाव[8] के मूल में पूर्वाग्रह, अज्ञान और डर का मिश्रण है। यौनकार्य, नशीली दवाओं के इंजेक्शन और विवाह पूर्व या विवाहेत्तर संबंध सहित एचआईवी/एड्स से संबद्ध अनैतिक, गैर कानूनी, अमान्य या निषिद्ध व्यवहार इस प्रकरण के केंद्र में है।

चूंकि एचआईवी संक्रमण मुख्य रूप से यौन संबंधों के जरिये फैलता है और अधिकतर देशों में एचआईवी से पहले ग्रस्त होने वाले लोगों में से वे थे, जिनके यौन संबंध सामाजिक रूप से मान्य मूल्यों से मेल नहीं खाते थे। एचआईवी/एड्स से संबद्ध कलंक और भेदभाव मुख्य रूप से यौन कलंक से जुड़े हुए हैं।[9] इसलिए नशे का इंजेक्शन, एक और पूर्वाग्रह है जो एचआईवी संक्रमण का एक मूल कारण है और यह भी एचआईवी से जुड़े कलंक का एक महत्वपूर्ण स्रोत है।[10] कलंक के अन्य पूर्व–विद्यमान स्रोत लिंग, नस्ल तथा गरीबी से संबद्ध हैं।[11] उदाहरणार्थ वेश्यावृति या पुरुष वेश्यावृति से जुड़े लोग या "अफ्रीकन सेक्सुअलिटी"।[12]

कलंक के ये पूर्व विद्यमान स्रोतों ने एचआईवी संबद्ध कलंक और भेदभाव को और सुदृढ़ किया और साथ ही वे भी एचआईवी संबद्ध कलंकों से सुदृढ़ हुये। एचआईवी/एड्स ग्रस्त व्यक्ति, जो पहले से ही इन कलंकित समूहों जैसे यौनकर्मियों, पुरुषों से यौन संबंध बनाने वाले पुरुषों तथा इंजेक्शन से नशीली दवाएं लेने वाले लोगों से संबद्ध हैं, एचआईवी/एड्स से जुड़े कलंक और भेदभाव से विशेष रूप से प्रभावित हुए।[13] कुछ नैतिक तथा सांस्कृतिक अवधारणाओं के अनुसार एचआईवी/एड्स को इस प्रकार के अनैतिक कार्य करने का दंड माना गया है।[14]

अफ्रीकी तथा एशियाई देशों में किए गए अध्ययनों से पता चला कि परिवार तथा समुदायों के स्तर पर महिलाएं भेदभाव की ज्यादा शिकार होती हैं।[15] भारत में किए गए एक अध्ययन से पता चला कि "यद्यपि

---

4 डी ब्रुयन, टी, एचआईवी/एड्स एंड डिस्क्रिमिनेशन : ए डिस्कशन पेपर, कोटिंग एए एलोन्जो, इत्यादि (1996), पृष्ठ 304

5 एगिलेटन, पी. इत्यादि 2005, पृष्ठ 7

6 यूएन एड्स (2003), कलंक तथा भेदभाव पर तथ्यपत्र, दिसंबर 2003 http://siteresources.worldbank.org/INTEAPREGTOPHIVAIDS/Resources/fs_stigma_discrimination_en_pdf.pdf से डाउनलोड, 26 जुलाई)

7 यूएन एड्स (2000 ए), प्रोटोकोल फॉर द आइडेंटिफिकेशन ऑव डिस्क्रिमिनेशन अगेंस्ट पीपुल लिविंग विद एचआईवी जेनेवा : यूएन एड्स, पृ. 7

8 यूएन एड्स (2000 बी) ओपनिंग अप द एचआईवी/एड्स एपिडेमिक, गाइडेंस ऑन एनकरेजिंग बेनिफिशियल डिस्क्लोजर, एथिकल पार्टनर काउंसलिंग एंड एप्रोप्रिएट यूज ऑव एचआईवी केस रिपोर्टिंग, जेनेवा : यूएनएड्स, पृ. 5

9 पार्कर आर. तथा एग्लेटन पी., अटावेल के., पुलिरविज जे. तथा ब्राउन एल. (2002), एचआईवी/एड्स रिलेटेड स्टिग्मा एंड डिस्क्रिमिनेशन : ए कान्सेप्चुअल फ्रेमवर्क एंड एन एजेंडा फॉर एक्शन, हॉरिजन्स प्रोग्राम, मई 2002 पृ. 2 (http://www.popcouncil.org/pdfs/horizons/sdcncptl-frmwrk.pdf#search=%22horizons%20HIV%20sexual%20stigma% 2006 से डाउनलोड, 22 जुलाई)

10 यूएन एड्स (2003)

11 पार्कर आर इत्यादि (2002), पृ. 2

12 वही, पृ. 2

13 एग्लेटन पी. इत्यादि (2005), पृ. 6

14 फ्रेडरिकसन–वास जे., तथा कैनबस ए. (2006) एचआईवी एड्स एंड डिस्क्रिमिनेशन एवीईआरटी (http://www.avert.org/aidsstigma.htm से डाउनलोड, जुलाई 2006)

15 भारत 'एस एग्लेटन पी. तथा टायरर' पी. के साथ (2001) इंडिया : एचआईवी एंड एड्स रिलेटेड डिस्क्रिमिनेशन, स्टिगमेटाइजेशन एंड डिनायल, जेनेवा : यूएन एड्स पृ. 9

एचआईवी से ग्रस्त अधिकतर लोगों को पारिवारिक देखभाल तथा सहायता मिलती है, लेकिन यह सहायता और देखरेख महिलाओं की तुलना में पुरुषों को ज्यादा मिलती है।" अध्ययन से यह भी पता चला कि देखभाल तथा सहायता पाने के लिये अन्य कारक भी जिम्मेदार हैं जैसे "पहले के पारिवारिक संबंधों का स्तर, आयु, आर्थिक तथा शैक्षिक स्तर तथा संक्रमण का प्रत्यक्ष और संभावित स्रोत।"[16]

इसके अतिरिक्त संक्रमण से संबंधित अज्ञान और विशेषकर संक्रमण के तरीके पूर्वाग्रहों में आग लगाने का काम करते हैं। इस बारे में भारत में किए गए अध्ययन में शामिल 60 प्रतिशत लोगों को विश्वास था कि 'समलैंगिकों, वेश्याओं और नशीली दवाएं लेने वालों को ही एड्स हो सकता है।[17] जहां इस प्रकार का सीधा संबंध जोड़ा जाता है, वहां एचआईवी/एड्स से जुड़े कलंक और भेदभाव और कठोर एवं मजबूत होते हैं।

संक्रमण के डर और साथ ही कलंक तथा भेदभाव को बढ़ाने में अज्ञानता महत्वपूर्ण योगदान देती है। एचआईवी/एड्स की जानलेवा प्रकृति के कारण डर पैदा होता है, तब भी जब एड्स का कारण और एचआईवी संक्रमण के जरिये की जानकारी होती है।

यह देखना महत्वपूर्ण है कि एचआईवी से संबद्ध सभी भेदभाव कलंक को स्थापित नहीं करते हैं। विशेषकर उस वातावरण में जहां चिकित्सा सुविधायें उपलब्ध हों और जहां संक्रमण का वास्तविक खतरा हो। इस तरह का भेदभाव पूरी तरह से डर पर आधारित होता है। अन्य मामलों में भेदभाव आर्थिक चिंताओं के कारण होता है, उदाहरण के लिए एक नियोक्ता एचआईवी संक्रमित व्यक्ति को कंपनी बीमा योजना की अधिक लागत के कारण रोजगार देने से मना कर देता है। कुछ मामलों में एचआईवी संबद्ध भेदभाव सद्भावपूर्ण अभिप्राय के कारण हो सकते हैं हालांकि इसका आधार गलत होता है।

2. भेदभाव के कार्य

एचआईवी/एड्स से संबद्ध कलंक और भेदभाव विश्व के सभी देशों में मौजूद हैं। सभी जगह मानवाधिकारों, रोजगार, शिक्षा तथा स्वास्थ्य सुरक्षा के अधिकारों के उल्लंघन के प्रमाण मिलते हैं।[18]

भेदभाव के विभिन्न रूप

स्पष्ट या छुपे तरीके से एचआईवी/एड्स से संबंधित भेदभाव अनेक रूपों में प्रकट होते हैं। न्यू साउथ वेल्स, आस्ट्रेलिया के भेदभाव विरोधी बोर्ड ने 1991 में एक सार्वजनिक अन्वेषण में एचआईवी/एड्स से संबंधित भेदभाव के आठ प्रकार चिन्हित किये।

न्यू साउथ वेल्स भेदभाव विरोधी बोर्ड : भेदभाव के प्रकार तथा उनकी परिभाषाएं[19]

- **प्रत्यक्ष भेदभाव :** ऐसा भेदभाव जो भेदभाव का शिकार व्यक्ति की स्थिति या लक्षणों से सीधे संबंधित हो।
- **अप्रत्यक्ष भेदभाव :** ऐसे नियमों, नीतियों तथा प्रतिबंधों पर आधारित भेदभाव जो स्वयं में भेदभावपूर्ण प्रतीत नहीं होते, लेकिन उनका प्रभाव विशेषकर ऐसे समूहों के लिए भेदभावपूर्ण होता है जो उन प्रतिबंधों के अनुपालन में अक्षम या कम सक्षम हैं।
- **प्रतिक्रियाजनक भेदभाव :** यह भेदभाव तब उत्पन्न होता है जब एक व्यक्ति दूसरे ऐसे समूह के सदस्य से मिलता है जिस समूह के प्रति उसके मन में पूर्वाग्रह होते हैं। इस प्रकार का भेदभाव नियोजित तथा जान–बूझकर नहीं किया जाता है।

16 भारत, एस. (1996), फेसिंग द चैलेंज : हाउसहोल्ड एंड कम्युनिटी रिस्पॉस टु एचआईवी/एड्स इन मुंबई, इंडिया. जेनेवा, यूएन एड्स/मुम्बई, टीआईएसएस, भारत एस. एट अल. से संदर्भित (2001), पृ. 9

17 अम्बाटी जे. तथा राव एएम (1997) डायनामिक्स ऑव नॉलेज एंड एटिट्यूड्स एबाउट एड्स एमंग द एजुकेटेड इन सदर्न इंडिया, एड्स केयर, 9 (3) : 319–330. भारत एस. इत्यादि. से उद्धृत (2001)

18 एग्लेटन, पी.इत्यादि. (2005), पृ.4

19 डी ब्रुथन से सीधे उद्धृत टी. (1998)। लेखक ने डिस्क्रीमिनेशन–द अदर एपिडेमिक में बोर्ड द्वारा दी गई परिभाषाओं को उद्धृत किया। रिपोर्ट ऑव द इन्क्वायरी इनटु एचआईवी एंड एड्स रिलेटेड डिस्क्रिमिनेशन। बोर्ड: 1992, पृ.5

- **नियोजित भेदभाव :** इस प्रकार का भेदभाव नियोजित तथा जान–बूझकर किया जाता है। नीतियां, प्रक्रियाएं तथा नियम बनाने के दौरान इस प्रकार का भेदभाव दिखाई देता है ताकि किसी समूह को बहिष्कृत किया जा सके।
- **निष्क्रिय भेदभाव :** कार्य की असफलता से यह भेदभाव उत्पन्न होता है, जब किसी समूह विशेष की विशेष आवश्यकता की पूर्ति नहीं होती। ऐसा अधिकतर तब होता है जब सभी को समान व्यवहार का तर्क दिया जाता है लेकिन वास्तविकता में कुछ की विशेष जरूरतें पूरी नहीं की जातीं।
- **बलि का बकरा बनाना :** लोगों को दंडित करने के लिए भेदभाव का प्रयत्न करना, मुख्यतः इस आधार पर कि वे किसी सामाजिक बुराई के दोषी हैं। इसमें प्रमुख रूप से पूर्वाग्रह के आधार पर उत्पीड़ित शामिल होता है।
- **दुर्व्यवहार :** किसी व्यक्ति के लक्षणों या विशिष्टताओं के कारण व्यक्ति को मनोवैज्ञानिक, भावनात्मक और कभी–कभी शारीरिक कष्ट देना इस प्रकार के भेदभाव में शामिल है। इसमें उसे पहचानने से इनकार करना, प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष रूप से गाली–गलौज करना, शारीरिक रूप से दुर्व्यवहार करना शामिल है।
- **निंदा :** इस प्रकार के भेदभाव में किसी समूह के लोगों के खिलाफ उसके लक्षणों के आधार पर वक्तव्य देना शामिल है, जिससे समूह के सदस्यों के प्रति घृणा, उपहास या तिरस्कार की भावना पैदा होती है।

भेदभाव के विविध स्वरूप[20]

एचआईवी/एड्स के संदर्भ में हम भेदभाव के विभिन्न स्वरूपों को तीन मुख्य श्रेणियों में बांट सकते हैं– पारिवारिक तथा सामुदायिक, संस्थागत और राष्ट्रीय स्तर।[21]

भेदभाव का पारिवारिक तथा सामुदायिक स्वरूप– "जान–बूझकर या गलती से किये जाने वाले, दूसरे को हानि पहुंचाने के लिए किये जाने वाले या किसी के कामकाज तथा अधिकार को नकारने के लिये किये जाने वाले भेदभाव"।[22] इस प्रकार के भेदभाव में गप्पबाजी, तानेबाजी करना, प्रभावित व्यक्ति से हटकर रहना, शारीरिक हिंसा, चिता को अग्नि देने जैसे पारंपरिक अधिकारों से वंचित करना आदि शाामिल हैं।[23] कुछ देशों में महिलाएं भेदभाव की ज्यादा शिकार हैं और इन महिलाओं को घर की संपत्ति में उनके हिस्से से वंचित कर दिया जाता है तथा पति की एचआईवी अवस्था के लिए उन्हें जिम्मेदार ठहराया जाता है[24], या एचआईवी संक्रमित होने की दशा में उन्हें अपने मायके के रिश्तेदारों के पास वापस लौटने को मजबूर किया जाता है।[25] एचआईवी/एड्स संक्रमित व्यक्ति के प्रति परिवार का व्यवहार एचआईवी/एड्स के प्रति सामाजिक व्यवहार से बहुत अधिक प्रभावित होता है।[26]

भेदभाव के संस्थागत स्वरूप – "संस्थागत नीतियों और प्रक्रियाओं में कलंक का निर्धारण जो एचआईवी पीड़ित व्यक्ति के खिलाफ भेदभाव है या भेदभाव विरोधी नीतियों अथवा क्षतिपूर्ति प्रक्रिया की कमी के कारण होता है।" अन्य संस्थाओं के अतिरिक्त स्वास्थ्य सुरक्षा सेवाएं, कार्यस्थल और विद्यालय उन संस्थाओं में शामिल

---

20 इस खंड का काफी भाग एग्लेटन, पी. एट अल. द्वारा, विभिन्न स्तर पर किए जाने वाले भेदभावों के विश्लेषण से लिया गया है (2005) पृ. 9–10
21 एग्लेटन, पी. इत्यादि (2005) पृ. 9
22 वही, पृ. 9
23 वही
24 भारत, एस. इत्यादि (2001), पृ. 9
25 एग्लेटन पी.इत्यादि (2005), पृ. 9
26 भारत एस इत्यादि (2001), पृ. 9

है जहां अक्सर इस प्रकार का भेदभाव दिखायी देता है। उदाहरण के तौर पर इन संस्थानों की भेदभावपूर्व नीतियों तथा प्रक्रियाओं में मामूली स्वास्थ्य सुविधायें या स्वास्थ्य सुरक्षा देने से इनकार करना, रोजगार के लिए अनिवार्य एचआईवी परीक्षण, एचआईवी संक्रमित होने के आधार पर स्कूल में प्रवेश नहीं देना शामिल है।[27] इस अध्याय के अगले हिस्से में भेदभाव के विभिन्न संस्थात्मक स्वरूपों की गहराई से जांच–पड़ताल की गयी है।

राष्ट्रीय स्तर पर भेदभाव "उन कलंकों द्वारा प्रदर्शित होता है जो मौजूदा कानूनों तथा नीतियों के जरिए अधिकारिक रूप से वैध या अनुमोदित होते हैं और व्यवहार तथा प्रक्रियाओं द्वारा लागू होते हैं। इसके परिणामस्वरूप एचआईवी ग्रस्त व्यक्ति को लांछित किया जाता है और इस तरह से भेदभाव को विधिसम्मत बनाया जाता है।"[28] इस संदर्भ में भेदभाव भूलवश भी हो जाता है, मिसाल के तौर पर एचआईवी ग्रस्त व्यक्ति के अधिकारों की सुरक्षा तथा क्षति–पूर्ति के कानूनों, नीतियों और प्रक्रियाओं का अभाव अथवा उन्हें ठीक से कार्यान्वित नहीं होने के कारण।[29] अनेक देशों में ऐसे वैधानिक उपाय किए हैं, जिनसे एचआईवी ग्रस्त व्यक्ति के अधिकारों का हनन होता रहता है। इसमें कुछ लोगों और समूहों का अनिवार्य परीक्षण, विशेष प्रकार के कामों में एचआईवी/एड्स पीड़ित को रोजगार पर प्रतिबंध तथा अंतर्राष्ट्रीय यात्रा और प्रवास पर प्रतिबंध आदि शामिल हैं।[30]

भारत में एचआईवी से संबद्ध भेदभाव

भारत में अंतर्राष्ट्रीय श्रम संगठन द्वारा एचआईवी से संबंधित अध्ययन (2002) के अनुसार अध्ययन में शामिल 70 प्रतिशत एचआईवी संक्रमित लोगों ने दावा किया कि उन्होंने किसी न किसी प्रकार के भेदभाव का सामना किया है। परिवार के संदर्भ में भेदभाव का दावा सबसे ज्यादा 33 प्रतिशत लोगों ने किया, जबकि 32 प्रतिशत लोगों ने स्वास्थ्य सुविधाओं के मामले में, 18 प्रतिशत ने पड़ोसियों द्वारा भेदभाव तथा 9 प्रतिशत लोगों ने सामुदायिक भेदभाव की शिकायत की। लगभग 6 प्रतिशत लोगों ने कार्यस्थल पर भेदभाव की शिकायत की। कार्यस्थल पर भेदभाव के ज्यादातर मामलों में इस बीमारी की बात छुपाने के कारण कार्यस्थल पर भेदभाव के आंकड़े बहुत साफ नहीं हैं।

3. एचआईवी/एड्स से संबद्ध कलंक तथा भेदभाव का प्रभाव

एचआईवी/एड्स से संबद्ध कलंक और भेदभाव का नकारात्मक प्रभाव संरक्षण और सुरक्षा से लेकर उपचार जैसे सभी मामलों में स्पष्ट रूप से दिखाई देता है।[31] इस कलंक एवं भेदभाव का मानवाधिकारों के संरक्षण तथा महामारी की रोकथाम पर बहुत बुरा असर पड़ता है।

एचआईवी संक्रमित और एड्स पीड़ित इससे प्रत्यक्ष रूप से प्रभावित होते हैं। एचआईवी/एड्स से जुड़े कलंक और भेदभाव इनसे पीड़ित व्यक्तियों को अलग–थलग कर देते हैं जिसका परिणाम अवसाद और निराशा के रूप में होता है। इस कारण एचआईवी संक्रमित व्यक्ति की देखभाल तथा उपचार कराने की संभावना तो कम हो ही जाती है, साथ ही उन्हें आवश्यक रोजमर्रा की गतिविधियों जैसे शिक्षा तथा कामकाज से भी रोका जाता है। एचआईवी/एड्स पीड़ितों को अन्य कठिनाइयों जैसे आर्थिक संसाधनों की कमी का भी सामना करना पड़ता है।

27 एग्लेटन, पी. इत्यादि (2005), पृ. 9
28 वही, पृ. 10
29 वही
30 वही
31 एग्लेटन, पी. इत्यादि (2005), पृ. 5

ऐसे व्यक्तियों को भी भेदभावपूर्ण व्यवहार झेलना पड़ता है जो स्वयं एचआईवी से संक्रमित नहीं हैं, लेकिन या तो उनके परिवार का कोई सदस्य एचआईवी संक्रमित है या ये किसी संक्रमित व्यक्ति की देखरेख कर रहे हैं। इसके अतिरिक्त एचआईवी से जुड़े कलंक तथा भेदभाव का एक और पहलू यह भी है कि सिर्फ एचआईवी/एड्स से पीड़ित व्यक्ति को ही अलग–थलग नहीं किया जाता बल्कि इस विश्वास के कारण कुछ समूहों के व्यक्तियों को एचआईवी/एड्स होता है उनके साथ भी भेदभावपूर्ण व्यवहार किया जाता है, जिसके कारण ये समूह और अधिक अलग–थलग धकेल दिये जाते हैं।[32] ऐसी स्थिति में जब एचआईवी/एड्स से पीड़ित व्यक्ति पहले से ही लांछित समूह का हो तो कलंक का नकारात्मक प्रभाव और भी बढ़ जाता है।

कलंक और भेदभाव से जुड़ी शर्म–लज्जा के कारण पीड़ित व्यक्ति तथा समुदाय मौन रहते हैं, जिसके कारण एचआईवी के प्रति उनकी स्वयं की तथा दूसरों की असुरक्षा बढ़ती है और वे इस 'अप्रत्यक्ष' महामारी के बढ़ने में योगदान करते हैं। रोग को छुपाने की वजह से अंतिम अवस्था में इसका पता चलता है। एड्स की अंतिम अवस्था के आधार पर संक्रमण के बारे में जो राय बनती है उसका और उल्टा प्रभाव पड़ता है, इस कारण एचआईवी/एड्स से जुड़े कलंक और डर को बल मिलता है।[33] परिवार के संदर्भ में देखें तो इसके कारण भविष्य की जरूरी योजनाएं नहीं बन पाती हैं, जिससे पहले ही पीछे छूट चुके लोगों को और परेशानियां होती हैं।[34]

एचआईवी/एड्स से जुड़े कलंक और भेदभाव के डर से व्यक्ति अपनी वास्तविक या संभावित जीरो–पॉजिटिव स्थिति की उपेक्षा कर देते हैं। इसके परिणामस्वरूप ये व्यक्ति स्वयं को उस देखभाल और उपचार से वंचित रखते हैं जो वास्तव में उन्हें मिल सकता था। इतना ही नहीं वे दूसरों को भी संक्रमण के खतरे में डालते हैं।[35] कलंक का डर संक्रमण के डर से ज्यादा होता है। यह दिखाने के लिए कि वे 'खतरे' में नहीं है व्यक्ति सुरक्षा के उचित उपाय नहीं करते।[36]

यदि मानवाधिकारों की चिंता को एक ओर रख दें तो भी पूरे विश्व में एचआईवी/एड्स का व्यापक पैमाने पर उभरना राजनीतिक स्थिरता, सामाजिक सहभागिता तथा आर्थिक विकास के लिए खतरा है और इस कारण सरकारों ने एचआईवी/एड्स से संबद्ध कलंक और भेदभाव के खिलाफ संघर्ष को अपनी प्राथमिकता सूची में रखा है।

4. एचआईवी/एड्स से संबद्ध कलंक और भेदभाव से निपटना : आगे का रास्ता

एचआईवी/एड्स से संबद्ध कलंक और भेदभाव से निपटने की रणनीतियां बहुआयामी होनी चाहिए। जिस स्वरूप में भेदभाव हो रहा है उसी को ध्यान में रखकर इनका कार्यान्वयन होना चाहिये।

अनुचित भेदभाव को रोकने वाला एक कानूनी ढांचा एचआईवी/एड्स से संलग्न कलंक और भेदभाव के खिलाफ संघर्ष करने, समाज के लिए मान्य मूल्यों की स्थापना करने और क्षतिपूर्ति के लिए अवसर उपलब्ध कराने हेतु एक अपरिहार्य घटक है। मुख्य लड़ाई हालांकि न्यायालय में नहीं बल्कि समाज में जीती जाएगी। भेदभावपूर्ण व्यवहार को रोकने के लिए शैक्षिक कार्यक्रमों की रूपरेखा बनाना भी एक आवश्यक घटक है।

खुली बहसों के जरिये राजनेता एक महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकते हैं।[37] जब तक एचआईवी/एड्स को लेकर चारों ओर बनी खामोशी नहीं टूटती तब तक उचित नीतियां, राष्ट्रीय स्तर पर वैधानिक सुधार, सूचना, शिक्षा और सामुदायिक स्तर पर एचआईवी/एड्स संबंधी जानकारियों का संचार संभव नहीं है।

32 पार्कर आर. इत्यादि (2002), पृ. 4
33 एग्लेटन पी. इत्यादि (2005), पृ. 6
34 वही
35 यूएन एड्स (2003)
36 वही
37 यूएन एड्स (1999) एचआईवी/एड्स, विधि एवं मानवाधिकारों तथा कानूनों पर हैंडबुक, जेनेवा :यूएन एड्स

4

रोजगार संबंधी भेदभाव और कानून

रोजगार महज आर्थिक आवश्यकता ही नहीं है बल्कि प्रतिष्ठा तथा आत्मसम्मान का एक महत्वपूर्ण स्रोत होने के अलावा सहकर्मियों के साथ सामाजिक रूप से मिलने–जुलने का एक माध्यम भी है। अंतर्राष्ट्रीय श्रम संगठन (आईएलओ) की रिपोर्ट के अनुसार एचआईवी संक्रमण की दर जनसंख्या के कामकाजी आयु वर्ग अर्थात 15–49 वर्ष के लोगों में सर्वाधिक है।[1] इससे पता चलता है कि कार्यस्थल पर एचआईवी/एड्स से संबधित भेदभाव विध्वंसक है, जो मनोवैज्ञानिक व्यथा तथा लाखों व्यक्तियों और उनके परिवारों की आर्थिक सुरक्षा को संकट में डालने का कारण है। इसके अतिरिक्त इस प्रकार का भेदभाव आर्थिक रूप से हानिकारक हो सकता है, क्योंकि यह श्रम बल में से योग्य तथा सक्षम कामगारों को घटा सकता है और सामाजिक सुरक्षा व्यवस्था पर अनावश्यक दबाव डाल सकता है।[2]

कार्यस्थल पर एचआईवी से संबद्ध भेदभाव की लड़ाई को एचआईवी/एड्स से संबद्ध कलंक और भेदभाव के खिलाफ बड़े युद्ध के संदर्भ में देखा जाना चाहिये। समाज में प्रभावी स्थिति माने जाने के कारण समुदाय के लिये उचित मानकों और प्रतिमानों की स्थापना और प्रोत्साहन में रोजगार क्षेत्र की महत्वपूर्ण नेतृत्वकारी भूमिका है। कलंक और भेदभाव के चक्रव्यूह को तोड़ने का सबसे प्रभावशाली तरीका यह सुनिश्चित करना है कि एचआईवी पीड़ित व्यक्ति भी समाज में योगदान दे सकता है।[3] उनका रोजगार महत्वपूर्ण है। एचआईवी संक्रमण किसी भी कर्मचारी को उसके काम के दायित्व को पूरा करने से नहीं रोक सकता तथा एंटीरेट्रोवायरल उपचार के विकास से कामगार अपना काम चालू रख सकते हैं या अपने काम पर वापस लौट सकते हैं।

एचआईवी भेदभाव तथा रोजगार : अंतर्राष्ट्रीय परिदृश्य

अंतर्राष्ट्रीय/क्षेत्रीय कानूनी साधन

अनेक अंतर्राष्ट्रीय कानूनी तथा नियंत्रक साधन एचआईवी संक्रमित व्यक्ति को कार्यस्थल पर भेदभाव के खिलाफ सुरक्षा उपलब्ध कराते हैं। मानवाधिकारों का सार्वभौमिक घोषणापत्र प्रत्येक व्यक्ति को काम के अधिकार, रोजगार चुनने के अधिकार, कार्य की अनुकूल तथा न्यायसंगत परिस्थितियां तथा बेरोजगारी से संरक्षण की गारंटी देता है।[4]

---

1 एचआईवी/एड्स एंड वर्क : ग्लोबल एस्टीमेट्स, इम्पैक्ट एंड रिस्पॉन्स, एचआईवी/एड्स एवं श्रम क्षेत्र पर अंतर्राष्ट्रीय श्रम संगठन कार्यक्रम, अंतर्राष्ट्रीय श्रम संगठन कार्यालय (आईएलओ), जिनेवा, 2004, आईएसबीएन 92 – 2–116824–1, www.ilo.org/aids पर उपलब्ध

2 यूएन एड्स (1999) हैंडबुक फॉर लेजिस्लेशन एंड एचआईवी/एड्स लॉ एंड ह्यूमन राइट्स, जिनेवा : यूएनएड्स, पृ. 76.

3 यूएन एड्स (2003)

4 अनुच्छेद–23 (1)

घोषणापत्र में कहा गया है कि प्रत्येक व्यक्ति को खाना, कपड़ा, मकान, चिकित्सा सहायता तथा आवश्यक सामाजिक सेवाओं के साथ अपने तथा अपने परिवार के स्वास्थ्य और बेहतरी के लिये यथेष्ट जीवन स्तर का अधिकार है तथा बेरोजगारी, बीमारी, विकलांगता, वैधव्य, वृद्धावस्था या अन्य ऐसी परिस्थितियां जिन पर उसका नियंत्रण नहीं है, की दशा में सुरक्षा का अधिकार है।[5]

आर्थिक, सामाजिक तथा सांस्कृतिक अधिकारों पर अंतर्राष्ट्रीय कोवेनेंट (प्रतिज्ञापत्र)

- **अनुच्छेद–6 (1)** : वे देश जो इस मौजूदा प्रतिज्ञापत्र का भाग हैं काम के अधिकार को मान्यता देंगे, जिसमें किसी व्यक्ति को अपनी जीविका के लिए स्वतंत्र रूप से काम चुनने या स्वीकार करने का अधिकार तथा इस अधिकार की सुरक्षा के लिए उचित कदम उठाने का अधिकार शामिल है।
- **अनुच्छेद–7** : वे देश जो इस मौजूदा प्रतिज्ञापत्र का भाग हैं प्रत्येक व्यक्ति को काम की न्यायपूर्ण तथा अनुकूल परिस्थितियों का उपयोग करने के अधिकार को मान्यता देंगे, जो विशेष रूप से यह सुनिश्चित करें कि... (सी) कार्यक्षेत्र में पर्याप्त उच्च स्तर तक पदोन्नति के समान अवसर मिले जिसमें वरिष्ठता और योग्यता के अतिरिक्त किसी अन्य बात पर विचार न किया जाये।
- **अनुच्छेद–11 (1)** : मौजूदा प्रतिज्ञापत्र में भागीदार देश व्यक्ति तथा उसके परिवार के लिए यथेष्ट जीवन स्तर के अधिकार को मान्यता देंगे, जिसमें पर्याप्त भोजन, कपड़ा और मकान तथा जीवन की परिस्थितियों में निरंतर सुधार शामिल है। भागीदार देश इस अधिकार का कार्यान्वयन सुनिश्चित करने के लिए उचित कदम उठायेंगे।

अंतर्राष्ट्रीय श्रम संगठन (आईएलओ) समझौता

अंतर्राष्ट्रीय श्रम संगठन (आईएलओ) संयुक्त राष्ट्र की विशिष्ट एजेंसी है, जो सामाजिक न्याय को बढ़ावा देने तथा अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर मानव और श्रम अधिकारों को मान्यता देने के लिए उत्तरदायी है। इसने समझौतों तथा सिफारिशों के रूप में अंतर्राष्ट्रीय श्रम मानक तैयार किए हैं। संगठन ने अवसरों तथा कार्यस्थल पर किए जाने वाले व्यवहार में समानता सहित काम से संबंधित सभी मामलों में बुनियादी श्रम अधिकारों के न्यूनतम मानक स्थापित किए हैं।[6]

किसी भी अंतर्राष्ट्रीय श्रम समझौते या सिफारिशों में हालांकि कार्यस्थल पर एचआईवी/एड्स के संबंध में विशेष तौर पर कुछ नहीं कहा गया है लेकिन अनेक दस्तावेज इस क्षेत्र में एचआईवी/एड्स से संबद्ध भेदभाव के खिलाफ सुरक्षा प्रदान करते हैं। इसमें भेदभाव (रोजगार तथा व्यवसाय) समझौता, 1958 (संख्या 111), रोजगार समाप्ति समझौता, 1982 (संख्या 158), व्यावसायिक पुनर्वास तथा रोजगार (विकलांग व्यक्ति), 1983 (संख्या 159) तथा सामाजिक सुरक्षा (न्यूनतम मानक) समझौता, 1952 (संख्या 102) शामिल है।[7]

- भेदभाव (रोजगार तथा व्यवसाय) समझौता 1958 (संख्या 111)[8] काम में समानता के अधिकार का मुख्य दस्तावेज है। यह नस्ल, रंग, लिंग, धर्म, राजनीतिक विचार धारा, राष्ट्रीय या सामाजिक मूल के आधार पर बहिष्कार या वरीयता, जो कार्य में अवसरों की समानता पर प्रभाव डालते हैं का निषेध करता है।[9] इसमें प्रशिक्षण तथा नौकरी तक पहुंच, पदोन्नति की प्रक्रिया, सेवाकाल की सुरक्षा, पारिश्रमिक तथा

5 अनुच्छेद–25 (1)

6 http://www.ilo.org/public/english/about/index.htm (जुलाई 2006 में डाउनलोड)

7 हॉजेज, जे., (2004). गाइडलाइन्स ऑन एड्रेसिंग एचआईवी/एड्स इन द वर्कप्लेस थ्रू एम्प्लायमेंट एंड लेबर लॉ, इन फोकस प्रोग्राम ऑन सोशल डायलॉग, लेबर लॉ एंड एडमिनिस्ट्रेशन, पृ 5

8 http://www.ilo.org/public/english/employment/skills/recomm/c_111.htm पर उपलब्ध (जुलाई 2006 में डाउनलोड)

9 वही

अवकाश, आराम के समय व्यावसायिक सुरक्षा, स्वास्थ्य सुरक्षा तथा सामाजिक सुरक्षा लाभों सहित कार्य की परिस्थितियां शामिल हैं।[10] भेदभाव के सात अधिसूचित कारणों के अलावा संबंधित राष्ट्र अन्य कारणों को भी शामिल कर सकते हैं, जैसे आईएलओ ने विकलांगता को शामिल करने का सुझाव दिया है। यह समझौता व्यक्तिगत रूप से विशेष सुरक्षा की जरूरत को पूरा करने के लिए सकारात्मक उपाय अपनाने को प्रोत्साहन देता है। समझौते का अनुच्छेद–1(2) भेदभाव की अवधारणा का एक अपवाद है, जिसमें कहा गया है, "जहां किसी विशेष नौकरी के लिये कुछ विशेष आवश्यकता हो।"[11]

- रोजगार समाप्ति संबंधी समझौता, 1982 (संख्या 158)[12] के अनुच्छेद–4 में अनुबंध है कि सिर्फ उस दशा में बर्खास्तगी की जा सकती है "जब कामगार की क्षमता या व्यवहार से संबंधित कोई ठोस कारण हो, या औद्योगिक संस्थान, प्रतिष्ठान या सेवा के संचालन की जरूरत के आधार पर ऐसा किया जा सकता है।"[13] अनुच्छेद–6 में स्पष्ट किया गया है कि बीमारी अथवा दुर्घटना के कारण अस्थायी रूप से अनुपस्थित रहने को बर्खास्तगी का ठोस कारण नहीं माना जायेगा। समझौता संख्या 158 पर गठित विशेषज्ञ समिति के 1995 के आम सर्वेक्षण में काम से अस्थायी अनुपस्थिति के मुद्दे को सविस्तार प्रतिपादित किया गया और समझौता के दायरे में एचआईवी तथा एड्स से ग्रस्त लोगों को भी शामिल किया गया।[14]
- व्यावसायिक पुनर्वास तथा रोजगार (विकलांगता) समझौता 1983 (संख्या 159)[15] विकलांगों के उपचार तथा अवसरों की समानता से संबंधित है। अनुच्छेद–4 विकलांग व्यक्ति को जीविका अर्जन कराने, कार्य स्थल पर रहने की व्यवस्था और स्थानांतरण सहित उनके लिये संरक्षित उपायों का अनुमोदन करता है।[16]
- सामाजिक सुरक्षा (न्यूनतम मानक) समझौता, 1952 (संख्या 102)[17] का अनुमोदन 40 सदस्य देशों ने किया है। इसमें लाभ के हकदार होने के संबंध में भेदभाव नहीं करने के सिद्धांत को स्थापित किया गया है।

एचआईवी/एड्स पर संयुक्त डब्ल्यूएचओ एवं आईएलओ व्यवहार संहिता एवं श्रम क्षेत्र[18]

वर्ष 2000 में डब्ल्यूएचओ तथा आईएलओ ने एचआईवी/एड्स की महामारी की समस्या के समाधान में सहायता के लिये राष्ट्रीय स्तर पर विधि शास्त्र बनाने की प्रक्रिया के विकास को बढ़ावा देने के उद्देश्य से एचआईवी/एड्स तथा श्रम क्षेत्र के बारे में व्यवहार संहिता (जिसे बाद में आईएलओ संहिता/नियमावली के नाम से जाना गया) को अंगीकार किया। इसके 10 मुख्य सिद्धांत निम्न प्रकार से हैं–

- **एचआईवी/एड्स को कार्यस्थल के विषय के रूप में मान्यता देना** : एचआईवी/एड्स केवल इसलिये कार्यस्थल से जुड़ा मामला नहीं है कि यह श्रम शक्ति को प्रभावित करता है बल्कि इसलिये भी कि कार्यस्थल इस महामारी के प्रसार और प्रभाव को सीमित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकता है।

10 हॉजेज, जे., (2004). पृ. 6
11 वही, पृ. 11
12 http://www.ilo.org/ilolex/english/reportforms/pdf/22e158.pdf (जुलाई 2006 में डाउनलोड)
13 होजेज, जे., (2004). पृ. 6
14 वही, पृ 6
15 http://www.ilo.org/ilolex/cgi-lex/convde/pl? C159 पर उपलब्ध (जुलाई 2006 में डाउनलोड)
16 होजेज, जे., (2004). पृ. 6
17 http://www.ilo.org/ilolex/cgi-lex/convde/pl? C102 पर उपलब्ध (जुलाई 2006 में डाउनलोड)
18 http://www.ilo.org/public/english/dialogue/sector/techmeet/tmehs05/guidelines.pdf पर उपलब्ध (जुलाई 2006 में डाउनलोड)

- **भेदभाव नहीं करना :** एचआईवी से संक्रमण की वास्तविक स्थिति और एचआईवी संक्रमण की संभावित स्थिति के आधार पर श्रमिकों के साथ भेदभाव नहीं किया जायेगा और न ही उसे लांछित किया जायेगा।
- **लैंगिक समानता :** एचआईवी संक्रमण के प्रसार को रोकने तथा महिलाओं को एचआईवी/एड्स का सामना करने में समर्थ बनाने के लिए बराबरी के लैंगिक संबंध तथा महिलाओं का सशक्तिकरण बहुत महत्वपूर्ण है।
- **स्वस्थ कार्य वातावरण :** कार्यस्थल का वातावरण स्वस्थ और सुरक्षित हो तथा कामगारों की क्षमताओं और स्वास्थ्य की अवस्था के अनुकूल हो।
- **सामाजिक संवाद :** एचआईवी/एड्स के बारे में सफल नीति तथा कार्यक्रम के लिए नियोक्ता, श्रमिकों और सरकार के बीच विश्वास और सहयोग जरूरी है।
- **रोजगार के लिए परीक्षण :** इस संहिता/नियमावली में उल्लेखित स्थितियों को छोड़कर अन्य स्थितियों में नौकरी पाने को इच्छुक उम्मीदवारों या नौकरी कर रहे कर्मचारियों का एचआईवी/एड्स परीक्षण कार्यस्थल पर नहीं किया जायेगा।
- **गोपनीयता :** आईएलओ नियमावली के अनुसार किसी कर्मचारी की एचआईवी अवस्था से संबंधित गोपनीय आंकड़ों तक पहुंच पर प्रतिबंध है।
- **रोजगार की निरंतरता :** एचआईवी संक्रमण तब तक किसी को रोजगार से अलग करने का कारण नहीं हो सकता जब तक कि एचआईवी संक्रमित व्यक्ति अनुकूल परिस्थिति में चिकित्सीय तौर पर फिट है।
- **रोकथाम :** सामाजिक सहयोगी सूचनाओं और शिक्षा के जरिए महामारी की रोकथाम करने तथा आचरण एवं व्यवहार में बदलाव करने में खासतौर पर सहायक होते हैं।
- **सुश्रुषा और सहायता :** कार्यस्थल पर एड्स मरीजों के लिये सहानुभूति, सुश्रुषा एवं सहयोग की भावना होनी चाहिए। सभी कामगार संवैधानिक और व्यावसायिक योजनाओं के जरिये मिलने वाली स्वास्थ्य सेवाओं और सुविधाओं के एकसमान रूप से हकदार हैं।

राष्ट्रीय स्तर पर संवैधानिक कानून

निम्नलिखित देशों के उदाहरणों से कार्यस्थलों पर एचआईवी संबंधी भेदभाव को लेकर लागू संवैधानिक उपायों के उदाहरण देखे जा सकते हैं :

अमेरिका

पुनर्वास अधिनियम, 1973[19]

- धारा–501 के तहत कार्यपालिका की संघीय एजेंसियों द्वारा विकलांगता से ग्रस्त लोगों के साथ रोजगार संबंधी भेदभाव प्रतिबंधित है।
- धारा–503 के तहत संघीय सरकार द्वारा 10 हजार डालर से अधिक के ठेके लेने वाले सरकारी ठेकेदार और उप–ठेकेदारों पर विकलांग व्यक्ति के खिलाफ रोजगार भेदभाव करने को प्रतिबंधित किया गया है।

19 http://www.blind.net/bg320001.htm पर उपलब्ध (जुलाई 2008 में डाउनलोड)

विकलांगता ग्रस्त अमेरिकियों के लिये अधिनियम (एडीए), 1990[20]

- एडीए में किसी व्यक्ति की विकलांगता के आधार पर उसके साथ रोजगार संबंधी भेदभाव किये जाने को प्रतिबंधित किया गया है और जरूरत पड़ने पर उस व्यक्ति के साथ समुचित समायोजन किये जाने की अनुशंसा की गयी है। इस कानून में 'विकलांग व्यक्ति' की जो परिभाषा दी गयी है वह पुनर्वास अधिनियम में दी गयी त्रिआयामी व्याख्या के समान है। एडीए के दायरे में विकलांगता से ग्रस्त व्यक्तियों से जुड़े व्यक्तियों को भी शामिल किया गया है। एडीए के तहत रोजगार अधिकार उन कर्मचारियों पर लागू हैं जो उस नियोक्ता के लिए काम कर रहे हैं जिसके अंदर कम से कम 15 व्यक्ति कार्यरत हैं। राज्य तथा स्थानीय कानून अक्सर कर्मचारियों के हितों की रक्षा करते हैं– चाहे कर्मचारियों की संख्या कुछ भी हो।
- एडीए का टाइटल–1, निजी क्षेत्र में विकलांगता से ग्रस्त लेकिन अन्य तरीके से योग्य व्यक्ति के खिलाफ रोजगार संबंधी भेदभाव किये जाने पर प्रतिबंध लगाता है।
- एडीए का टाइटल–5 राज्य और स्थानीय सरकारों में रोजगार भेदभाव को प्रतिबंधित करता है। अमेरीका में नियोक्ता सिर्फ विशेष परिस्थितियों में ही नौकरी के इच्छुक किसी उम्मीदवार या किसी कर्मचारी से चिकित्सीय परीक्षण कराने का आग्रह कर सकता है। किसी नौकरी की सशर्त पेशकश के मामले में नौकरी के इच्छुक उम्मीदवार का चिकित्सकीय परीक्षण किया जा सकता है और ऐसा केवल तभी किया जा सकता है जब सभी उम्मीदवारों के लिए यह जरूरी हो। चिकित्सकीय परीक्षण के परिणाम के आधार पर नौकरी की पेशकश तब तक वापस नहीं ली जा सकती जब तक कि परिणाम में यह न बताया जाए कि उम्मीदवार तर्कसंगत समायोजन के बगैर नौकरी के लिये जरूरी अपेक्षाओं को पूरा नहीं कर सकता। किसी कर्मचारी का चिकित्सीय परीक्षण केवल तब ही कराया जा सकता है जब नियोक्ता यह सिद्ध कर दे कि यह परीक्षण "नौकरी से संबंधित है तथा कार्य की आवश्यकता के अनुकूल है।"[21]

ब्रिटेन

विकलांगता भेदभाव अधिनियम (डीडीए), 1995[22]

ब्रिटेन का विकलांगता भेदभाव अधिनियम (डीडीए), 1995 पूर्व में अमेरिका के एडीए, 1990 के ही समान था। यह सिर्फ 15 या उससे अधिक कर्मचारी रखने वाले नियोक्ता पर ही लागू होता था। लेकिन एक अक्तूबर, 2004 से इस अधिनियम की धारा–7 के अनुसार 15 से कम कर्मचारी रखने वाले नियोक्ताओं पर भी यह अधिनियम लागू है।

दक्षिण अफ्रीका

श्रमिक संबंधी अधिनियम, 1995[23] (संख्या 66)

श्रमिक संबंधी अधिनियम (एलआरए), संविधान में अधिसूचित कारणों में से किसी एक के आधार पर हर प्रकार के प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष भेदभाव का निषेध करता है। इसमें कहा गया है कि किसी कर्मचारी को अनुचित ढंग से बर्खास्त नहीं किया जा सकता। यह अधिनियम लाभों, कर्मचारी प्रशिक्षण तथा कार्य अवसरों के संबंध में अनुचित भेदभाव के खिलाफ कर्मचारियों को संरक्षण प्रदान करता है।

20 http://www.dol.gov/esa/regs/statutes/ofccp/ada.htm पर उपलब्ध (जुलाई 2006 में डाउनलोड)
21 http://www.usdoj.gov/crt/ada/copsa7a.pdf से जानकारी प्राप्त (जुलाई 2006 में डाउनलोड)
22 http://www.opsi.gov.uk/acts1995/199050.htm पर उपलब्ध (जुलाई 2006 में डाउनलोड)
23 http://www.polity.org.za/govdocs/legislation/1995/act95_066.html पर उपलब्ध (जुलाई 2006 में डाउनलोड)

रोजगार निष्पक्षता अधिनियम, 1998 (संख्या 55)[24]

रोजगार निष्पक्षता अधिनियम (ईईए) संविधान तथा एलआरए में अधिसूचित कारणों के आधार पर अनुचित भेदभाव का निषेध करता है। विशेषकर एचआईवी पॉजिटिव व्यक्ति के लिए यह स्पष्ट रूप से रेखांकित किया गया है कि कार्यस्थल पर एचआईवी संबंधी स्थिति के आधार पर अनुचित भेदभाव नहीं किया जाएगा। इसके अलावा अगर किसी के साथ कोई भेदभाव होता है तो नियोक्ता को यह सिद्ध करना होगा कि उसकी एचआईवी अवस्था के कारण उसके साथ भेदभाव नहीं किया गया। यह अधिनियम कर्मचारी के एचआईवी परीक्षण पर तब तक प्रतिबंध लगाता है जब तक श्रम मंत्रालय इसे न्यायसंगत न बता दे। एलआरए के समान हालांकि ईईए दक्षिण अफ्रीकी राष्ट्रीय रक्षा बल (एसएएनडीएफ), खुफिया सेवाओं या राष्ट्रीय गुप्तचर एजेंसी के सदस्यों पर लागू नहीं होता है।[25]

चिकित्सा योजना अधिनियम (एमएसए), 1998(संख्या 131)[26]

एमएसए 'नस्ल, लिंग, आयु .... (और) स्वास्थ्य की स्थिति पर विचार किये बगैर स्वास्थ्य बीमा तक सभी की एक समान पहुंच सुनिश्चित करता है। इसमें कहा गया है कि सदस्यों का योगदान 'औसत' के आधार पर होता है। इस कानून में कहा गया है कि स्वास्थ्य बीमाकर्मी एचआईवी संक्रमित व्यक्ति को अनुचित तरीके से बीमा लाभ से वंचित नहीं रख सकते।[27]

इसके अतिरिक्त दक्षिण अफ्रीका के श्रम विभाग ने दिसंबर 2000 में एचआईवी/एड्स तथा रोजगार के मुख्य पहलुओं पर व्यवहार संहिता बनाई है।[28] उसने कार्यस्थल पर एचआईवी संक्रमित व्यक्ति के खिलाफ भेदभाव को रोकने के लिए नियोक्ता और मजदूर संगठनों के लिए स्पष्ट दिशा–निर्देश तय किए हैं।

श्रम कानून की परिभाषा तथा कार्यक्षेत्र

आईएलओ समझौता संख्या 111 के अनुच्छेद–1 में रोजगार तथा व्यवसाय की अवधारणा को परिभाषित किया गया है। इसमें व्यावसायिक प्रशिक्षण, रोजगार तथा विशेष व्यवसाय तक पहुंच तथा रोजगार की परिस्थितियों को भी शामिल किया गया है। यह परिभाषा अधिकांश देशों के श्रम कानूनों में प्रतिबिंबित होती है।

श्रम क्षेत्र में भेदभाव विरोधी विधानों के दायरे के संदर्भ में यह उल्लेखनीय है कि अधिकतर देशों के श्रम कानून रोजगार के औपचारिक क्षेत्रों पर लागू होते हैं, ये कानून 'कर्मचारी' तथा 'श्रमिक' में भेद करते हैं।[29]

मोजांबिक के एचआईवी/एड्स अधिनियम संख्या 5 इस संदर्भ में एक रोचक अपवाद है, जिसमें कहा गया है कि 'यह अधिनियम घरेलू नौकरों सहित निजी तथा सार्वजनिक क्षेत्र के श्रमिकों तथा आवेदकों के खिलाफ किसी भी प्रकार के भेदभाव पर लागू होगा।[30] मानवाधिकार कानून तथा अंतर्राष्ट्रीय श्रम मानक सभी श्रमिकों पर लागू होते हैं चाहे उनकी ठेके पर काम करने वाले श्रमिक हों और उनका कार्यस्थल का स्वरूप कुछ भी क्यों न हो। व्यवहार में हालांकि इस कानून के क्रियान्वयन को लेकर सवाल उठते रहे हैं।

विधि मामले : अंतर्राष्ट्रीय परिप्रेक्ष्य

अनुचित बर्खास्तगी

पिछले 20 वर्षों से रोजगार से अनुचित बर्खास्तगी के आरोपों ने एचआईवी संबंधी भेदभाव से जुड़े कानून के लिये मुख्य आधार का काम किया है। विश्व भर के न्यायालयों ने उन मामलों के फैसले सुनाये हैं जिनमें यह

24 http://www.workinfo.com/Free/sub_for_legres/data/equity/Act551998.htm पर उपलब्ध (जुलाई 2006 में डाउनलोड)
25 गवर्नमेंट गजट, एक दिसंबर 2000, खंड 426, संख्या 21815
26 http://www.doh.gov.za/docs/legislation/acts/1998/act98_131.html से उपलब्ध (जुलाई 2006 में डाउनलोड)
27 वैबर, डी डब्ल्यू, (संपादक) (जुलाई 1999) एड्स एंड द लॉ, 1999 संकलित सप्लीमेंट, पी पी. 153–160
28 http://www.ilo.org/public/english/protection/trav/aids/laws/southafricacop.pdf पर उपलब्ध (जुलाई 2006 में डाउनलोड)
29 हॉजेज, जे., (2004). पृ. 16
30 वही पृ. 16

पाया गया कि अन्य सभी तरह से योग्य कर्मचारियों को सिर्फ एचआईवी संबंधी वास्तविक या पूर्वानुमानित अवस्था के आधार पर हटाया गया है।

एक्स एक्स बनाम गन क्लब कोर[31], 1996 के मामले में कोलम्बिया की अदालत ने एक्स–एक्स की अपील का समर्थन किया तथा फैसला दिया कि एचआईवी परीक्षण के आधार पर उसके पॉजिटिव पाये जाने के पश्चात की गई उसकी बर्खास्तगी भेदभावपूर्ण है तथा नागरिकों को प्रदत्त समानता के विरुद्ध है। अदालत ने इस दिशा निर्देशक सिद्धांत को माना कि "मानवीय प्रतिष्ठा किसी मनुष्य को पक्षपातपूर्ण व्यवहार का शिकार होने से बचाती है" और क्योंकि कोलंबिया का संविधान अनुच्छेद–13 के तहत समानता का अधिकार प्रदान करता है जिसके अनुसार निर्बल लोगों को सुरक्षा प्रदान करने की जिम्मेदारी सरकार पर डाली गयी है। इसी प्रकार हॉफमैन बनाम दक्षिण अफ्रीकन एयरवेज, 2000 मामले[32] में दक्षिण अफ्रीकी संवैधानिक अदालत ने एचआईवी अवस्था के आधार पर आवेदन को निरस्त करने को असंवैधानिक माना, क्योंकि यह उसके सम्मान तथा समानता के अधिकार का उल्लंघन करता है।

न्यायालयों ने उन मामलों में भी यही रुख अख्तियार किया जिनमें शिकायतकर्ताओं को वैकल्पिक रोजगार की पेशकश की गयी थी। अमेरिका में इस प्रकार के मामलों में रेनट्री हेल्थकेयर सेंटर बनाम इलिनॉयस मानवाधिकार विभाग[33] (जिसमें एक रसोइये को दूसरे स्थान पर यही नौकरी देने की पेशकश की गयी थी), चॉक बनाम अमरीकी डिस्ट्रिक्ट न्यायालय, कैलिफोर्निया डिस्ट्रिक्ट एवं ऑरेंज काउंटी सुपरिटेन्डेंट ऑव स्कूल्स[34] (जिसमें एक क्लास रूम शिक्षक को समान वेतन तथा लाभों पर प्रशासनिक पद देने की पेशकश की गयी थी) का है। प्रत्येक मामले में न्यायालय ने बर्खास्तगी के अनौचित्यपूर्ण होने को अपने फैसले का आधार बनाया।

यूदिस लुज मर्काडो हेरेरा बनाम सोसाइडाड मेडिका सांता मार्टो लिमिटेड, 2004 मामले[35] में कोलंबिया के संवैधानिक न्यायालय ने एचआईवी पॉजिटिव व्यक्ति के अनुबंध का नवीकरण न किये जाने को असंवैधानिक माना। न्यायालय ने स्पष्ट किया कि 'रोजगार स्थायित्व' का संवैधानिक सिद्धांत (निजी एवं सरकारी क्षेत्र दोनों में) के तहत अनुबंध अवधि की समाप्ति के बाद नियोक्ता द्वारा किसी व्यक्ति को नौकरी से हटाने पर प्रतिबंध लगाया गया है, बशर्ते यह किसी उचित मानदंड पर आधारित न हो।

इसके अतिरिक्त न्यायालय का मानना है कि राज्य की तरह निजी क्षेत्र का भी यह सार्वजनिक दायित्व है कि वह हाशिए पर रह रहे लोगों के जीवन स्तर में सुधार को प्रोत्साहन दें।

अमेरिका में एचआईवी व्यक्ति से संबंध होने के कारण भेदभाव के शिकार लोगों को भी संरक्षण प्रदान किया जाता है। डोए बनाम ओरेगॉन रिसोर्ट मामले[36] में न्यायालय ने फैसला दिया कि डोए का स्थानांतरण किसी दूसरे कार्य के लिए सिर्फ इसलिए करना कि उसने एचआईवी पॉजिटिव महिला से विवाह किया है, गैर कानूनी भेदमाव है क्योंकि उससे सार्वजनिक सुरक्षा को कोई "प्रत्यक्ष खतरा" नहीं था।

ऐसे मामलों में जहां किसी व्यक्ति को हालांकि औपचारिक रूप से बर्खास्त तो नहीं किया जाता लेकिन ऐसी परिस्थितियां पैदा की जाती हैं कि जिससे वह महसूस करने लगता है कि उसके पास इस नौकरी को छोड़ने के अलावा दूसरा कोई चारा नहीं है, अनुचित 'सुनियोजित बर्खास्तगी (कंस्ट्रक्टिव डिसमिशल)' मामला बनता है। फोन्टेनी बनाम कैनेडियन पैसेफिक लिमिटेड मामले[37] में कनाडा के एक न्यायालय ने मानवाधिकार ट्रिब्युनल के उस फैसले को बरकरार रखा कि जिसमें कहा गया था कि कैनेडियन पैसेफिक ने कनाडा के

---

31 फैसला संख्या – एस यू–256/96(1996) कोलंबिया संवैधानिक न्यायालय
32 हॉफमैन बनाम साउथ अफ्रीका एयरवेज, 2000 (2) एस ए 628 (डब्ल्यू)
33 रेनट्री हेल्थकेयर सेंटर बनाम इलिनोइस मानवाधिकार विभाग, 672 एन ई 2 डी 1136 (1996) (यू एस)
34 840 एफ. 2 डी 701
35 (एसओएमईएसए – क्लिनिका अल प्रेडो), कोलंबिया संघीय न्यायालय, निर्णय संख्या – टी – 469, 17 मई, 2004 (कोलंबिया)
36 11 बजे प्रातः, विकलांगता मामले (बीएनए) 1824 (2001) (अमेरिकन डिस्ट्रिक्ट कोर्ट)
37 120 एनआर, 152, (1991) एफसी 571 (कनाडा)

मानवाधिकार अधिनियम– 7 का उल्लंघन किया है क्योंकि उसने 'अप्रीतिकर वातावरण' सृजित करके फोन्टेनी के सामने नौकरी को छोड़ने के अलावा कोई अन्य विकल्प नहीं रखा और इस तरह से यह मामला "सुनियोजित बर्खास्तगी" का है। न्यायालय ने खासतौर पर इस बात की व्याख्या की कि "नियोक्ता" या "नियोजक" को पारंपरिक मालिक–नौकर के रिश्ते से अधिक व्यापक अर्थ देना चाहिये।

"अंतर्जनित व्यावसायिक आवश्यकताएं"

यह सवाल कि कोई व्यक्ति किसी विशेष पद या नौकरी के योग्य है या नहीं इस बारे में किसी नौकरी या पद की जायज जरूरतों – 'अंतर्जनित व्यावसायिक आवश्यकताओं' के संदर्भ में विचार किया जाना चाहिये। यद्यपि न्यायालयों ने उसके समक्ष आने वाले मामलों के संदर्भ में कुछ व्यवसायों की अंतर्भूत आवश्यकताओं को परिभाषित किया है, लेकिन सशस्त्र बलों जैसे अन्य क्षेत्रों की व्यावसायिक जरूरतों ने वाद–विवादों को जन्म दिया है।

हॉफमैन बनाम दक्षिण अफ्रीकी एयरवेज (2000) के मामले में दक्षिण अफ्रीकी संवैधानिक न्यायालय ने दक्षिण अफ्रीकी एयरवेज (एसएए) के उस निर्णय पर विचार किया जिसमें एचआईवी संक्रमित उम्मीदवार को नौकरी देने से मना कर दिया गया था। एसएए ने दावा किया कि उनका निर्णय चिकित्सा, सुरक्षा तथा कार्य संचालन (ऑपरेशनल) संबंधी कारणों पर आधारित था।[38] संवैधानिक न्यायालय ने उच्च न्यायालय के इस फैसले को गलत पाया कि केबिन अटेंडेंट के पद के लिए एचआईवी निगेटिव होना इस नौकरी की व्यावसायिक आवश्यकता है।[39] संवैधानिक न्यायालय ने इस आधार पर एसएए को हॉफमैन को नौकरी पर रखने का निर्देश दिया।

एचआईवी तथा सेना के मामले में अनेक देशों में अभी भी कानून ठीक से नहीं बने हैं। हेनडोंगो नघिडिपोहाम्बा नांडिट्यूम बनाम रक्षा मंत्री मामले में नामीबिया की श्रम अदालत[40] ने माना कि सिर्फ एचआईवी अवस्था के आधार पर किसी को नौकरी से वंचित करना अनुचित भेदभाव है तथा श्रम अधिनियम 107 में शामिल भेदभाव विरोधी उपायों के विरुद्ध है। न्यायालय ने हालांकि नौकरी पर रखने की प्रक्रिया को तय करने के मामले में एचआईवी की भूमिका को पूरी तरह से दरकिनार नहीं किया। रोजगार पूर्व परीक्षण के संबंध में न्यायालय ने फैसला दिया कि किसी भावी कर्मचारी के स्वास्थ्य तथा कार्यक्षमता के अधिक सही मूल्यांकन के लिए न केवल एचआईवी परीक्षण, बल्कि सीडी–4 काउंट परीक्षण तथा वाइरल लोड परीक्षण सहित सभी प्रकार के चिकित्सीय परीक्षण जरूरी हैं। हालांकि इस मामले में अदालत का फैसला वर्तमान में बहस का विषय है क्योंकि नामीबियाई सरकार ने रक्षा संशोधन विधेयक (2001) पारित किया है जिसमें एचआईवी स्थिति के विरुद्ध प्रतिबंध को दोबारा लागू किया गया है।

कनाडा बनाम थॉइट्स[41], 1994 मामले में कनाडा के संघीय न्यायालय ने कनाडाई मानवाधिकार ट्रिब्युनल के इस फैसले को बरकरार रखा कि कनाडाई सशस्त्र बल में भर्ती के लिये सूचीबद्ध एचआईवी संक्रमित व्यक्ति के साथ भेदभाव हुआ है जो कनाडा के मानवाधिकार अधिनियम के विरुद्ध है। ट्रिब्युनल ने कहा कि कोई अपंगता एक न्यूनतम खतरे से अधिक कम से कम इतना खतरा तो उत्पन्न करे कि उसकी बर्खास्तगी को जायज ठहराया जा सके और हर मामले पर अलग–अलग तरीके से विचार किया जाये क्योंकि संक्रमित लोगों के लिये व्यापक चिकित्सकीय श्रेणी के आधार पर कोई निर्णय लेना अनुचित है।" संघीय न्यायालय के

38 होजेज, जे., (2004). पृ. 12
39 हॉफमैन बनाम साउथ अफ्रीका एयरवेज 2000 (2) एस ए 628 (डब्ल्यू)
40 10 मई, 2000, मामला संख्या एल सी 24/98
41 3 एफसी 38 (कनाडा संघीय अदालत–ट्रायल डिवीजन)

निर्णय के तुरंत बाद हालांकि फेडरल कोर्ट ऑव अपील ने दो मामलों–हसबैंड बनाम सी ए एफ (दृष्टि दोष से ग्रस्त व्यक्ति के आवेदन/भर्ती से संबंधित) तथा रॉबिन्सन बनाम सी ए एफ (मिर्गी ग्रस्त व्यक्ति की भर्ती) में फैसला दिया कि सेना किसी भी व्यक्ति को भर्ती करने से इंकार कर सकती है या उसे बर्खास्त कर सकती है अगर किसी शारीरिक रूप से समर्थ व्यक्ति को रखने की तुलना में उस व्यक्ति को बहाल रखना जोखिम भरा हो, चाहे जोखिम कितना ही कम क्यों न हो।[42]

एक्स बनाम राष्ट्रमंडल (1999) एचसीए 63 मामले में ऑस्ट्रेलिया के उच्च न्यायालय ने आस्ट्रेलिया रक्षा बल में भर्ती के लिये सूचीबद्ध किये गये एचआईवी संक्रमित व्यक्ति को इस आधार पर बर्खास्त करने के सशस्त्र बल के निर्णय को बरकरार रखा कि सेना की नौकरी में "सुरक्षित रक्तदान" नौकरी की अंतःर्निहित आवश्यकता है।

युक्तिसंगत समायोजन

किसी व्यवसाय अथवा पद की "अंतर्जनित व्यावसायिक आवश्यकताओं" को पूरा करने के कर्मचारी या आवेदक के दायित्व के पूरक के रूप में कुछ देशों में नियोक्ता पर 'युक्तिसंगत समायोजन' की सकारात्मक जिम्मेदारी डाली गई है। इसमें विकलांग जैसे एचआईवी/एड्स पीड़ित व्यक्ति के जब तक संभव हो तब तक काम पर रखने के लिए कार्यस्थल या दिनचर्या में परिवर्तन या यथोचित समायोजन करना शामिल है। ब्रेडली बनाम टैक्सास विश्वविद्यालय मामले[43] में न्यायालय ने स्पष्ट किया कि युक्तिसंगत समायोजन के लिये अदालत द्वारा उल्लिखित "अंतर्जनित आवश्यकताओं या आवश्यक भूमिकाओं" को पुनःपरिभाषित नहीं किया जा सकता है।

यह तय करने के लिए कि कोई समायोजन युक्तिसंगत है अथवा नियोक्ता के लिए अनुचित रूप से परेशानी का सबब है न्यायालय ने नियोक्ता के कार्य के आकार, वित्तीय संसाधनों, अपेक्षित समझौते के कार्यान्वयन पर होने वाले खर्च तथा इस समायोजन के कारण नियोक्ता के व्यवसाय में आने वाले व्यवधान आदि पर विचार किया।[44] किसी कर्मचारी या आवेदक को युक्तिसंगत समायोजन का अधिकार नहीं देने को अप्रत्यक्ष भेदभाव माना गया है। इसे अपने आप में एक अभियोग या अनुचित बर्खास्तगी जैसे किसी बड़े अभियोग के हिस्से के रूप में समझा जा सकता है।

मेल्विन बकिंघन बनाम यूनाइटेड स्टेट ऑव अमेरिका[45] के मामले में अदालत ने माना कि अन्य सभी तरह से योग्य उम्मीदवार को उसकी नौकरी के लाभ देने तथा विकलांगता का उपचार होने तक युक्तिसंगत समायोजन चाहिए। न्यायालय की मान्यता थी कि यदि कर्मचारी अपनी नौकरी की शर्तों को पूरा करने में सक्षम है तथा नियोक्ता को इससे कोई परेशानी नहीं होती तो एक विकलांग व्यक्ति (जिसमें एचआईवी पॉजिटिव या एड्स से प्रभावित व्यक्ति भी शामिल है) का स्थानांतरण युक्तिसंगत समायोजन की श्रेणी में आता है, यदि यह स्थानांतरण चिकित्सीय उपचार के लिये हो।

युक्तिसंगत समायोजन की महत्ता के संदर्भ में एक स्पष्ट वक्तव्य थ्वॉइट्स बनाम सीएएफ के मामले में देखा जा सकता है। कनाडियाई मानवाधिकार ट्रिब्युनल ने पाया कि सेना थ्वॉइट्स को समायोजित करने के अपने कानूनी दायित्व में असफल रही है और यह टिप्पणी की कि किसी व्यक्ति को कार्य करने की अनुमति

42 कनाडियन एचआईवी/एड्स लीगल नेटवर्क, कनाडियन एचआईवी/एड्स पॉलिसी एंड लॉ न्यूजलेटर, खंड – 1, संख्या – 3–1995: देखें http://www.aidslaw.co/Maincontent/othersdocs/Newsletter/April1995/303.htm

43 ब्रेडली बनाम टैक्सास विश्वविद्यालय में न्यायालय (3 एफ. 3 डी 922)

44 जीएलएडी ईक्वल जस्टिस अंडर लॉ : युअर राइट्स – एचआईवी इश्यूज http://www.glad.org/rights/maine_hiv.shtml पर उपलब्ध (जुलाई 2006 में डाउनलोड)

45 (998 एफ 2 डी 735)

देना या किसी भी जोखिम (यदि जोखिम एक कारण है) को कम करने के लिए युक्तिसंगत विकल्पों या समायोजन का पता लगाने की महत्ता देश के मानवाधिकारों से संबंधित कानूनों का मूल सिद्धांत है। युक्तिसंगत समायोजन के बिना कनाडियाई मानवाधिकार अधिनियम (सीएचआरए) द्वारा कुछ समूहों, विशेषकर विकलांगों को दिया गया संरक्षण मृग मरीचिका है।" ट्रिब्युनल ने एक अनुच्छेद का भी हवाला दिया, जिसमें कहा गया है कि "यह बहुत महत्वपूर्ण है कि विकलांग व्यक्ति का समायोजन व्यक्तिगत आधार पर किया जाए। हरेक की विकलांगता अलग–अलग प्रकार की होती है। एक ही प्रकार के विकलांगों के समूह में भी व्यक्तिगत आधार पर अनेक भिन्नताएं होती हैं।" ट्रिब्युनल ने आगे कहा कि "इस बात को स्वीकार करना होगा कि समायोजन से नियोक्ता पर कुछ बोझ पड़ेगा, उसे कुछ परेशानियां झेलनी पड़ेंगी और कुछ जोखिम भी उठाने पड़ेंगे, लेकिन यह समाज के समान अवसर के सिद्धांत जैसे उच्च मूल्य को कायम रखने की छोटी कीमत है।[46]

एचआईवी पीड़ित स्वास्थ्य कर्मियों के खिलाफ भेदभाव

शल्य क्रियाओं (इनवेसिव प्रोसीजर) को अंजाम देने वाले शल्य चिकित्सकों एवं दंत चिकित्सक जैसे चिकित्सा कर्मियों के रोजगार अधिकारों को परिभाषित करना अनेक देशों की अदालतों के लिए मुश्किल भरा काम रहा है एवं विवाद का विषय रहा है। ऐसी शल्य क्रियाओं के दौरान हालांकि एचआईवी संक्रमण के खतरे की संभावना संदेह के घेरे में है लेकिन कुछ न्यायालयों ने 'शून्य जोखिम' के मानक को लागू करना जरूरी माना है तथा एचआईवी अवस्था के आधार पर अनुबंध रद्द करने की अनुमति दिये जाने के पक्ष में फैसला दिया है।[47]

डो बनाम मेरीलैंड मेडिकल सिस्टम विश्वविद्यालय[48] के मामले में न्यायालय ने माना कि एचआईवी संक्रमित शल्य चिकित्सक डॉ डो अपने सहकर्मियों तथा उनके कार्य से प्रभावित अन्य लोगों के लिए अलग होने का खतरा उत्पन्न कर सकते हैं तथा इस खतरे को युक्तियुक्त समायोजन द्वारा दूर नहीं किया जा सकता। इसी प्रकार ब्रेडले बनाम टैक्सास विश्वविद्यालय मामले[49] में न्यायालय ने माना कि सर्जिकल असिस्टेंट को अन्य पद पर नियुक्त किया जाना जरूरी है, क्योंकि सर्जिकल असिस्टेंट होने के नाते इस पद के जरूरी कार्यों से जुड़े खतरे को युक्तिसंगत समायोजन के जरिये दूर नहीं किया जा सकता है।

उपर्युक्त मामलों में न्यायालयों की राय "उपचार से मना करने" के मामले में स्थापित इस सिद्धांत के उलट है कि एचआईवी संक्रमित मरीज के उपचार में लगे स्वास्थ्य कर्मियों को एचआईवी संक्रमण होने की संभावना बहुत कम है। अमेरिका में न्यायालयों ने 1991 की सीडीसी की अनुशंसाओं, जिनमें चिकित्सा प्रतिष्ठानों को "जोखिम भरी शल्य क्रियाओं" में संलग्न चिकित्साकर्मियों की गतिविधियों को प्रतिबंधित करने की अनुमति दी गयी है तथा इस कानूनी सिद्धांत जिसके अनुसार रोगियों के प्रति चिकित्साकर्मियों का विशेष कर्तव्य है, के आधार पर परस्पर–विरोधी निर्णयों को उचित ठहराया है।[50]

चिकित्सीय जांच-पड़ताल तथा परीक्षण

एचआईवी/एड्स तथा श्रम क्षेत्र पर "आईएलओ व्यवहार–संहिता" में इस बात को एक मूल सिद्धांत के रूप में माना है कि "रोजगार के इच्छुक आवेदक या नौकरी कर रहे व्यक्ति के लिए एचआईवी/एड्स का परीक्षण जरूरी नहीं है, क्योंकि एचआईवी संक्रमण किसी व्यक्ति की कार्यक्षमता को प्रभावित नहीं करता तथा औपचारिक संबंधों के जरिये किसी संक्रमित व्यक्ति से सहकर्मियों को संक्रमण का खतरा नहीं हो सकता।"[51]

---

46 हॉजेज जे. (2004) पृ. 14, व्हाँइट्स बनाम सी ए एफ, टी.डी. 9/93

47 जीएलएडी ईक्वल जस्टिस अंडर लॉ : युअर राइट्स – एचआईवी इश्यूज http://www.glad.org/rights/maine_hiv.shtml पर उपलब्ध (जुलाई 2006 में डाउनलोड)

48 50 एफ 3 डी 1261 (1995) (यू एस)

49 3 एफ 3 डी 922 (1993) (यू एस)

50 जीएलएडी ईक्वल जस्टिस अंडर लॉ : युअर राइट्स – एचआईवी इश्यूज http://www.glad.org/rights/maine_hiv.shtml पर उपलब्ध (जुलाई 2006 में डाउनलोड)

51 http://www.ilo.org/public/english/dialogue/sector/techmeet/tmehs05/guidelines.pdf पर उपलब्ध (जुलाई 2006 में डाउनलोड)

रोजगार–पूर्व परीक्षण की अनुमति देने से न केवल किसी व्यक्ति को काम पर रखने के मामले में भेदभाव होता है, बल्कि यह किसी व्यक्ति को आवेदन करने से भी रोकता है। त्रिनिदाद एवं टोबैगो में किए गए शोधों से पता चला कि 50 प्रतिशत एचआईवी संक्रमित लोग नौकरियों के लिए आवेदन ही नहीं करते क्योंकि उन्हें भेदभाव किये जाने की आशंका होती है। वे महसूस करते हैं कि वे अपनी एचआईवी स्थिति के कारण नौकरी पर रखे ही नहीं जायेंगे। अनेक कैरेबियन देशों में रोजगार–पूर्व परीक्षण को कानूनी मान्यता दी गयी है और इन देशों में इस तरह का परीक्षण सामान्य है।[52]

दियाउ बनाम बोत्स्वाना बिल्डिंग सोयायटी मामले[53] में दियाउ को बोत्स्वाना बिल्डिंग सोसायटी (बीबीएस) ने प्रोवेशनरी रोजगार की पेशकश की थी तथा रोजगार संबंधी चिकित्सकीय परीक्षण के तहत उससे अपनी एचआईवी संबंधी स्थिति प्रकट करने का अनुरोध किया गया। ऐसा करने से इंकार करने पर उसे बर्खास्त कर दिया गया। अदालत ने इस मामले में फैसला दिया कि बीबीएस, जो एक निजी संस्था है, पर अधिकार कानून लागू है और अमानवीय और असम्मानजनक व्यवहार के विरुद्ध जो अधिकार है उसका बीबीएस के इस कदम से उल्लंघन हुआ है, क्योंकि खासतौर पर एचआईवी की कलंकित स्थिति के मामले में अपनी निजता के अतिक्रमण के आगे झुकने से इंकार किये जाने पर उस महिला को आर्थिक रूप से सजा दी गयी। अदालत ने यह भी कहा कि दियाउ के स्वतंत्रता के अधिकार का भी उल्लंघन किया गया, क्योंकि अपनी एचआईवी संबंधी स्थिति को बताने की आवश्यकता अतार्किक है तथा रोजगार की जरूरतों से उसका कोई संबंध नहीं है। हालांकि अदालत ने यह भी कहा कि बीबीएस ने उसकी निजता के अधिकार का अतिक्रमण नहीं किया, क्योंकि वास्तव में कोई परीक्षण नहीं किया गया। अदालत ने यह भी कहा कि बीबीएस ने भेदभावपूर्ण कोई कदम नहीं उठाया, क्योंकि उसने संदेह या एचआईवी संक्रमित होने की अवधारणा के आधार पर उसे नौकरी से नहीं निकाला, लेकिन उसने यह स्वीकार किया कि एचआईवी की स्थिति या एचआईवी से ग्रस्त होने के संदेह के आधार पर किये जाने वाले भेदभाव को संविधान में प्रतिबंधित किया गया है।

एचआईवी/एड्स का मरीज के स्वास्थ्य पर बहुत हानिकारक प्रभाव पड़ता है और मरीज इन हानिकारक प्रभावों को झेलने के अलावा उसके साथ होने वाले भेदभाव तथा लांछन से भी प्रभावित होता है। ऐसा बहुधा कार्यस्थलों पर होता है जब नियोक्ता यह प्रदर्शित करता है कि नौकरी की अंतर्जनित आवश्यकताओं को पूरा करने की अक्षमता के आधार पर यह भेदभाव न्यायसंगत है। दियाउ बनाम बीबीएस मामले में बोत्स्वाना औद्योगिक न्यायालय ने पहले यह सुनिश्चित किया कि अधिकार विधेयक सरकारी क्षेत्रों के अलावा निजी व्यवसाय पर भी लागू होता है। इसका सकारात्मक उत्तर देते हुये न्यायालय ने कहा कि "ऐसे विश्व में जहां निजी संगठनों ने इतनी अधिक शक्ति अर्जित कर ली है, उन्हें अधिकार विधेयक के दायरे से बाहर रखना उन्हें मानवाधिकारों के उल्लंघन का लाइसेंस देने के साथ–साथ संविधान की आत्मा को सच्चा अर्थ देने में विफल रहना है।" न्यायालय इस निष्कर्ष पर पहुंचा कि सभी संभावित उम्मीदवार को अनिवार्य रूप से एचआईवी परीक्षण कराने को कहने तथा ऐसा करने से मना करने पर उन्हें नौकरी नहीं देने की नीति गैरकानूनी है। न्यायालय की नजर में ऐसा परीक्षण प्रतिष्ठा से जुड़ा मामला है और ऐसे परीक्षण करवाना अमानवीय तथा घटिया व्यवहार है, क्योंकि "प्रत्येक व्यक्ति अपने शरीर का मालिक है ......और वह अपनी निजता पर हो रहे अतिक्रमण का विरोध करने के लिए स्वतंत्र है।" इस तरह का परीक्षण संक्रमित लोगों के निजी मामलों के बारे में महत्वपूर्ण संकेत देता है।

---

52 कैरेबियन एपिडेमोलॉजी सेंटर एंड कम्युनिटी एक्शन रिसोर्स (सीएआरई). "क्वॉलिटी ऑव एचआईवी/एड्स केयर इन ट्रिनिडाड एंड टोबैगो : द केयर रिसीवर एंड केयर प्रोवाइडर पर्सपेक्टिव" 2000 (जीबीसी : स्टिग्मा, डिस्क्रिमिनेशन एंड एचआईवी – ए केस बिजनेस इश्यू से उद्धृत

53 मामला संख्या आईसी 50/2003, बोत्सवाना औद्योगिक न्यायालय (2003), (बोत्सवाना)

विधि तथा रोजगार भेदभाव : भारतीय परिदृश्य

भारत में वर्ष 2002 में आईएलओ की ओर से कराये गये अध्ययन के दौरान अध्ययन में शामिल किए गए लोगों में 6 प्रतिशत ने कार्यस्थल पर भेदभाव की शिकायत की। लोग चूंकि एचआईवी संबंधी स्थिति की अवस्था छिपाते हैं, इस कारण भेदभाव की दर अध्ययन के निष्कर्ष से कहीं अधिक है। एचआईवी संक्रमित लोगों द्वारा जल्दी–जल्दी नौकरियां बदलने के कारण उनके साथ नियोक्ता से कहीं अधिक भेदभाव सहकर्मियों द्वारा किया जाता है। इस भेदभाव को समाप्त करने के लिये भेदभाव विरोधी कानूनी उपाय करने के साथ–साथ एचआईवी/एड्स से जुड़ी बदनामी की भावना को समाप्त करने वाली शैक्षिक नीतियां बनाने की जरूरत है।

भारत में प्रासंगिक कानूनी प्रावधान तथा साधन

भारत में एचआईवी/एड्स तथा श्रम के संबंध में कोई विशिष्ट संवैधानिक कानून नहीं है। संविधान में हालांकि भेदभाव के खिलाफ व्यापक स्तर पर संरक्षण दिये जाने का प्रावधान है। संविधान का अनुच्छेद–14 समानता का अधिकार तथा अनुच्छेद–16 सार्वजनिक रोजगार में भेदभाव के खिलाफ संरक्षण प्रदान करता है।

भारत का संविधान, अनुच्छेद-16[54]

सार्वजनिक रोजगार के मामलों में अवसरों की समानता– (1) देश में सभी नागरिकों को किसी भी कार्यालय में रोजगार या नियुक्ति से संबंधित मामलों में अवसरों की समानता है।

(2) देश के किसी भी नागरिक के साथ धर्म, नस्ल, जाति, लिंग, वंश, जन्मस्थान, निवास या इनमें से किसी के आधार पर रोजगार तथा पद के संबंध में भेदभाव नहीं किया जाएगा।

भारत में न्यायालयों द्वारा किए गए कई ऐतिहासिक फैसलों से यह वैधानिक सिद्धांत सामने आया है कि कोई भी नियोक्ता किसी को सिर्फ उसकी एचआईवी पॉजिटिव स्थिति के कारण काम देने से मना नहीं कर सकता, बशर्ते कि वह उसे सौंपे गये कार्य को पूरा करने में पूर्णतः सक्षम हो। यह हालांकि एचआईवी भेदभाव से लड़ने में एक महत्वपूर्ण कदम है, लेकिन निजी क्षेत्र में भेदभाव के शिकार एचआईवी पीड़ित व्यक्ति के लिए बहुत कम कानूनी सहायता उपलब्ध है।

भारत में नियोक्ताओं को रोजगार–पूर्व स्वास्थ्य परीक्षण करवाने का अधिकार है। कार्य की आवश्यकताओं तथा कार्यस्थल की संपत्ति व लोगों के हित में चिकित्सीय जांच उचित है। यहां स्वास्थ्य का स्तर बहस का मुद्दा है। इस क्षेत्र में कानूनों के अभाव में इस स्तर को सुनिश्चित करना विधि मामले के जरिए होता है।

भारतीय विधि मामले

रोजगार का अधिकार

बाम्बे इंडियन इनहैबिटेट बनाम मेसर्स जेडवाई[55] के मामले में 1997 में दिए गए एक ऐतिहासिक फैसले में मुंबई उच्च न्यायालय ने माना कि "सिर्फ एचआईवी अवस्था के आधार पर एचआईवी संक्रमित व्यक्ति को रोजगार देने से मना करना निरंकुशता और अतार्किक है तथा संविधान के अनुच्छेद–14 और 21 का उल्लंघन करना है जबकि उसकी एचआईवी स्थिति के कारण उसके कार्य प्रदर्शन पर कोई प्रभाव न पड़ रहा हो तथा कार्यस्थल पर अन्य व्यक्तियों को उससे कोई खतरा न हो। न्यायालय ने यह भी कहा कि "राष्ट्रीय तथा सरकारी निगम

54 http://www.lawmin.nic.in/legislative/Art1-242%20 (1-88).doc पर उपलब्ध (जुलाई 2008 में डाउनलोड)

55 एमएक्स ऑव बम्बई इंडियन इनहैबिटैंट बनाम मेसर्स जेडवाई एवं अन्य, एआईआर 1997 (मुंबई) 406

इस प्रकार के निष्ठुर तथा अमानवीय आधार नहीं अपना सकते कि वे किसी व्यक्ति को तब तक रोजगार नहीं देंगे जब तक कि वे संतुष्ट नहीं हो जायें कि वह व्यक्ति सेवानिवृत्ति तक कार्य करता रहेगा।" यह स्पष्ट किया गया कि निजी क्षेत्र में भविष्य में अक्षम हो जाने की संभावना के आधार पर एचआईवी संक्रमित व्यक्ति के साथ किया जा रहा पक्षपात गैरकानूनी है।

भारतीय न्यायालयों ने सार्वजनिक क्षेत्र की नौकरियों जैसे पुलिस बलों में एचआईवी पीड़ित के प्रति भेदभाव को प्रतिबंधित करने की इच्छा प्रदर्शित की है। छोटूलाल शामभाई बनाम गुजरात राज्य[56] तथा आरआर बनाम पुलिस अधीक्षक एवं अन्य, कर्नाटक प्रशासनिक ट्रिब्युनल[57] मामलों में क्रमशः अहमदाबाद तथा कर्नाटक उच्च न्यायालय ने कहा कि अन्य सभी प्रकार से योग्य एचआईवी पॉजिटिव व्यक्ति को पुलिस बल में रोजगार देने से मना नहीं किया जा सकता। यदि ऐसा किया गया तो यह संविधान के अनुच्छेद–14 तथा 21 का उल्लंघन होगा।

मुंबई उच्च न्यायालय ने बॉम्बे इंडियन इनहैबिटेंट बनाम मेसर्स जेडवाई[58] मामले में स्थापित विधायी सिद्धांत के प्रति अपनी वचनबद्धता की अन्य मामलों जैसे एक्स बनाम बैंक ऑव इंडिया (2002), श्रीमती जी बनाम न्यू इंडिया इंश्योरेंस कम्पनी लिमिटेड[59] तथा श्री एस इंडियन बनाम पुलिस महानिदेशक एवं अन्य[60] द्वारा पुष्टि की।

मिस्टर एक्स, इंडियन इनहैबिटेंट बनाम अध्यक्ष राज्य स्तरीय चयन आयोग एवं अन्य[61] मामले में आंध्र प्रदेश उच्च न्यायालय ने आंध्र प्रदेश पुलिस नियमावली का आदेश 70(3), जिसके अनुसार उम्मीदवार को एचआईवी परीक्षण कराना जरूरी है तथा एचआईवी संक्रमित व्यक्ति को चयन तथा नियुक्ति के अयोग्य माना गया है, को अतार्किक तथा पक्षपातपूर्ण माना और संविधान के अनुच्छेद–14 तथा 16 के प्रतिकूल माना है। न्यायालय ने कहा कि यह स्पष्ट है कि चयनित उम्मीदवारों की सूची में से याचिकाकर्ता का नाम सिर्फ इसलिए हटा दिया गया कि वह एचआईवी पॉजिटिव है। न्यायालय ने आगे कहा कि "यदि उच्चतम न्यायालय ने यह माना है कि एचआईवी संक्रमण की अंतिम अवस्था में एड्स से पीड़ित व्यक्ति को सरकारी नौकरी देने से मना नहीं किया जा सकता तो एचआईवी पॉजिटिव, परीक्षण से गुजर चुके या शुरुआती लक्षणों वाले व्यक्ति को पुलिस बल में रोजगार देने से कैसे मना किया जा सकता है जबकि वे पुलिस प्रतिष्ठान में कार्य करने की उसकी शारीरिक तथा मानसिक योग्यता से संतुष्ट है।........ एचआईवी पॉजिटिव पाए जाने की स्थिति में व्यक्ति के प्रवेश पर रोक लगाना अमानवीय तथा अन्यायपूर्ण है।[62] संविधान का अनुच्छेद–14 तथा 16 विधि के समक्ष समान व्यवहार की गारंटी देता है। अभी तक यह प्रावधान सार्वजनिक क्षेत्र पर लागू है, निजी क्षेत्र को उनके स्वयं के नियम तथा नीतियां बनाने के लिए छोड़ दिया गया है। निजी क्षेत्र में पक्षपात तथा वंचना के प्रमाण हैं, लेकिन एचआईवी/एड्स के संदर्भ में निजी क्षेत्र तक कानूनों की पहुंच नहीं है। न्यायालय ने उपर्युक्त मामले में हालांकि स्पष्ट कर दिया है कि एचआईवी पॉजिटिव होने के आधार पर किसी व्यक्ति को रोजगार से मना करना सार्वजनिक रोजगार में समानता तथा समान अवसरों के मौलिक अधिकार का उल्लंघन है। एचआईवी/एड्स से संक्रमित या पीड़ित व्यक्ति के समान अधिकार तथा रोजगार को सुनिश्चित करने के लिए एचआईवी/एड्स के संदर्भ में विशेष रूप से लांछन तथा भेदभाव के मुद्दे से निपटने के लिये विशिष्ट कानून की जरूरत है।

---

56 विशेष अपील संख्या 11766/2000 दिनांक 17–2–2001, गुजरात उच्च न्यायालय

57 आवेदन संख्या 3386 1999 दिनांक 5–9–2005, कैट, कर्नाटक

58 वही, संख्या 55

59 श्रीमती जी बनाम इंडिया एश्योरेंस कंपनी लिमिटेड, मुंबई उच्च न्यायालय, रिट याचिका संख्या 1999 की 1563, सुनवाई 2004

60 मि. एस. इंडियन बनाम पुलिस महानिदेशक एवं अन्य, मुंबई उच्च न्यायालय, रिट याचिका संख्या 1999 का 202, सुनवाई 2004

61 2006 (2) एएलटी 82

62 वही

रोजगार संबंधी भेदभाव और कानूनी मुकदमे

एक्स एक्स बनाम गन-क्लब कॉर्पोरेशन, फैसला संख्या - एस यू - 256/96 (1996) कोलंबिया संवैधानिक न्यायालय (कोलंबिया)

एक्स एक्स गन–क्लब कॉर्पोरेशन का कर्मचारी था जिसे एचआईवी संक्रमित पाये जाने के बाद उसके नौकरी संबंधी करार को समाप्त कर दिया गया था। उससे 30 दिन का अपना वेतन नहीं लेने के एक पत्र पर भी हस्ताक्षर करवा लिया गया था। इस तरह उसे एक माह के वेतन से वंचित होना पड़ा और आख़िरकार उसे नौकरी से बर्खास्त कर दिया गया। बर्खास्त होने के कारण एक्स एक्स को इंस्टीच्यूट ऑव सोशल सेक्युरिटी (जो इस मामले में प्रतिवादी भी था) से रूग्णता संबंधी पैंशन से भी हाथ धोना पड़ा।

अदालत ने समानता, रोजगार, स्वास्थ्य और सामाजिक सुरक्षा के एक्स एक्स के अधिकार को स्वीकार करते हुये उसकी अपील मंजूर की। अदालत ने इस दिशानिर्देशक सिद्धांत को माना कि पीएलएचए के खिलाफ भेदभाव नहीं किया जायेगा, क्योंकि "मानवीय प्रतिष्ठा किसी भी मनुष्य को पक्षपातपूर्ण व्यवहार का शिकार होने से बचाती है" और क्योंकि कोलंबिया का संविधान अनुच्छेद–13 के तहत समानता का अधिकार प्रदान करता है जिसके अनुसार निर्बल लोगों को सुरक्षा प्रदान करने की जिम्मेदारी सरकार पर डाली गई है। इससे भी बढ़कर अदालत ने यह फैसला दिया कि नियोक्ता को किसी कर्मचारी के रोजगार संबंधी करार को समाप्त करने का परम अधिकार नहीं है, खास कर तब जब वह एचआईवी से ग्रस्त हो। इस तरह के कदम भेदभावपूर्ण और नागरिकों की समानता के विरुद्ध माने जायेंगे। अदालत ने एक्स एक्स को हुई हानि की क्षतिपूर्ति करने तथा एक्स एक्स की सामाजिक सुरक्षा के उसके हक को बहाल किये जाने का फैसला सुनाया।

स्कूल बोर्ड ऑव नासाउ काउंटी बनाम अर्लिन, 480 यूएस 273

अर्लिन शिक्षिका थी जिसे नौकरी ज्वाइन करने के बाद दो साल के भीतर क्षय रोग हो गया था। उसे "बार–बार क्षय रोग से पीड़ित होने" के आधार पर शिक्षिका के पद से बर्खास्त कर दिया गया था। अर्लिन ने अपनी "अपंगता" के खिलाफ भेदभाव का मुकदमा दायर किया।

उच्चतम न्यायालय ने यह फैसला सुनाया कि पुनर्वास अधिनियम, 1973 के अनुच्छेद–504 के तहत् संक्रामक रोग को अपंगता माना गया है और इसलिये दूसरे लोगों पर किसी बीमारी के संक्रामक प्रभावों तथा मरीज पर उस बीमारी के शारीरिक प्रभावों के बीच किसी भी तरह के अंतर के आधार पर होने वाले भेदभाव को औचित्यपूर्ण ठहराना इस अधिनियम के तहत अनुचित है। न्यायालय का मानना है कि उस मामले में कई तरह की जांचें जरूरी थीं – पहला तो यह पता लगाने की जांच होनी चाहिये थी कि उस बीमारी से किस प्रकार का खतरा हो सकता था, दूसरा यह कि उस बीमारी के संक्रमण की प्रकृति क्या थी तथा यह भी पता लगाया जाना चाहिये था कि किसी तीसरे व्यक्ति को होने वाली हानि को ध्यान में रखते हुये खतरे की गंभीरता, खतरे की अवधि तथा बीमारी के फैलने की संभाव्यता तथा बीमारी के कारण होने वाली क्षति की विभिन्न श्रेणियों को भी ध्यान में रखते हुये किस तरह के खतरे उत्पन्न हो सकते थे। अदालत ने कहा कि वह इस तथ्य को मानती है कि संक्रामक रोगों से ग्रस्त कुछ लोग स्वास्थ्य संबंधी खतरे पैदा कर सकते हैं, लेकिन यह तथ्य अकेले इस बात को न्यायोचित नहीं ठहरा सकता कि संक्रामक रोगों से ग्रस्त व्यक्ति को अपंगता के आधार पर मिलने वाले संरक्षण से वंचित कर दिया जाये।

चॉक बनाम यूनाइटेड स्टेट्स डिस्ट्रिक कोर्ट सेंट्रल डिस्ट्रिक ऑव कैलिफोर्निया, 840 एफ. 2डी 701 (1988) (अमेरिका)

शिक्षक की नौकरी करने वाले चॉक को एचआईवी संक्रमण से ग्रस्त पाये जाने के बाद कक्षा में पढ़ाने से रोक दिया गया और उसे प्रशासनिक पद दिया गया। चॉक ने पुर्नवास कानून, 1973 के अनुच्छेद 504 के तहत मुकदमा दायर किया जिसमें संघ से वित्तीय सहायता प्राप्त करने वाले संस्थानों को अपंगता के आधार पर भेदभाव करने से प्रतिबंधित किया गया है।

स्कूल बोर्ड ऑव नासाउ कांउटी बनाम एयरलाइन मामले में अदालत ने यह कहा था कि सभी संक्रामक रोग अपंगता है। इस मामले में अदालत ने कहा कि एचआईवी/एड्स के संक्रामक रोग होने के कारण इस अधिनियम का अनुच्छेद–504 इस मामले में लागू होता है। इसके अलावा अदालत यह मानती है कि चॉक पर परीक्षण करने की जो बाध्यता है उसमें संक्रामकता का भारी खतरा शामिल होना चाहिये। इस मामले में याचिकाकर्ता के पेशे को देखते हुये इस तरह के खतरे की संभावना बहुत कम है। दरअसल प्रतिवादी की तुलना में याचिकाकर्ता को ज्यादा क्षति हुयी है, क्योंकि उसे अपनी विशेष प्रतिभा का इस्तेमाल करने से वंचित किया गया है। वह डिप्रेशन से ग्रस्त हुआ है और उसमें अपनी सलामती का अहसास कम हुआ है। इसके अलावा इस मामले में इस चिकित्सकीय प्रमाण का भी अभाव है कि चॉक में एचआईवी फैलाने का बड़ा खतरा है। इसके अलावा जिस नौकरी का हकदार था उसके लिये वह योग्य है। इसलिये इस मामले की गुणवत्ता के आधार पर अदालत ने उक्त कार्रवाई को लंबित रखते हुये यथास्थिति बरकरार रखने का प्रारंभिक फैसला दिया।

युडिस लुज मेरकाडो हेरेरा बनाम सोसिएडाड मेडिका सान्ता मार्टा लिमिटेड (सोमेसा - क्लिनिका अल पराडो), कोलंबिया की संवैधानिक अदालत, फैसला संख्या टी - 469, 17 मई 2004 (कोलंबिया)

हेरेरा को तीन माह की नियत अवधि के लिये नौकरी पर रखा गया था और उसकी नौकरी के करार का समय–समय पर नवीनीकरण होना था। फरवरी 2000 में हेरेरा की जांच में उसे एचआईवी संक्रमित पाया गया और नवम्बर 2002 में उसे यह सूचित किया गया कि उसके नौकरी के करार को दिसंबर 2002 से आगे नहीं बढ़ाया जायेगा। हेरेरा ने मुकदमा दायर किया कि उसकी नौकरी के करार का नवीनीकरण इसलिये नहीं किया गया है क्योंकि वह एचआईवी संक्रमित है और ऐसा किया जाना जीवन, समानता, सम्मानजनक काम करने तथा सामाजिक सुरक्षा के उसके अधिकारों का उल्लंघन है। अदालत ने फैसला सुनाया कि कोलंबिया के संवैधानिक कानून में अपंगता से ग्रस्त व्यक्तियों या महिलाओं, जिनमें वे लोग भी शामिल हैं जो "स्पष्ट कमजोरी" की स्थिति से ग्रस्त हैं या सीमांत समूह के हिस्से हैं, के मामले में रोजगार की स्थिरता (निजी एवं सरकारी दोनों) की गारंटी दी गयी है। अदालत ने इस आधार पर हेरेरा को पुनर्नियुक्त करने का फैसला सुनाया।

हेर्डोंगो नघिडिपोहाम्बा नांदितुमे बनाम रक्षा मंत्रलय, मुकदमा संख्या - एलसी 24/98, नाम्बिया श्रम अदालत (2000) (नाम्बिया)

नांदितुमे प्रशिक्षित सैनिक था जिसे नाम्बियाई रक्षा सेना के लिये चुना गया था, लेकिन सूचीबद्ध किये जाने की प्रक्रिया के दौरान उसे एचआईवी संक्रमित पाये जाने के कारण सेना में नहीं लिया गया। चिकित्सक द्वारा उसके स्वास्थ्य की जांच से पता चला कि उसे कोई अन्य चिकित्सकीय समस्या नहीं है। उसे सूचीबद्ध नहीं किये जाने का एकमात्र कारण एचआईवी था।

अदालत ने कहा कि केवल एचआईवी होने के आधार पर उसे नौकरी से वंचित किया जाना अनुचित भेदभाव है और यह श्रम कानून की धारा–107 में शामिल किये गये भेदभाव विरोधी नियमों के विरुद्ध है। अदालत ने हालांकि नौकरी पर रखे जाने की प्रक्रिया में एचआईवी की भूमिका को पूरी तरह से इंकार नहीं किया। नियोजन पूर्व परीक्षण के संदर्भ में अदालत ने यह फैसला दिया कि एचआईवी से संबंधित सभी तरह की चिकित्सकीय जांच के लिये सीडी–4 काउंट टेस्ट की भी जरूरत है तथा कर्मचारी के स्वास्थ्य तथा काम करने की उसकी क्षमता के समुचित आकलन के लिये वायरल लोड टेस्ट भी वांछित है। (यहां यह उल्लेखनीय है कि इस मामले में अदालत का फैसला वर्तमान में बहस का विषय है क्योंकि नाम्बियाई सरकार ने रक्षा संशोधन विधेयक (2001) पारित किया है जिसमें एचआईवी स्थिति के विरुद्ध प्रतिबंध को दोबारा लागू किया गया है।)

हॉफमैन बनाम साउथ अफ्रीकन एयरवेज, दक्षिण अफ्रीका की संवैधानिक अदालत) मुकदमा संख्या- सीसीटी 17/00 (2000); 2001 (1) एसए 1 (सीसी), 2000 (11) बीसीएलआर 1235 (सीसी) (दक्षिण अफ्रीका)

साउथ अफ्रीकन एयरवेज द्वारा साक्षात्कार लिये जाने तथा केबिन सहायक की नौकरी के लिये योग्य पाये जाने के बाद होफमैन का चिकित्सकीय परीक्षण किया गया और उसे पूरी तरह से फिट पाया गया। चिकित्सकीय परीक्षण के दौरान हॉफमैन की एचआईवी संबंधी जांच भी की गई और उसे एचआईवी संक्रमित पाया गया। कंपनी की नीति के अनुसार होफमैन की चिकित्सकीय रिपोर्ट को बदल दिया गया जिसमें कहा गया कि वह नौकरी के अयोग्य है। एचआईवी के मामले में नौकरी पर नहीं रखे जाने का यह आधार केवल केबिन दल में किसी पद पर नौकरी के मामले में ही सीमित था क्योंकि इस पद पर काम करने वाले व्यक्ति के लिये अंतर्राष्ट्रीय टीकाकरण की जरूरत होती है और एचआईवी से संक्रमित लोगों पर टीकाकरण का उल्टा असर पड़ सकता है और साथ ही एचआईवी के कारण उस व्यक्ति को कुछ खास आपात एवं सुरक्षा कार्यों को करने में बाधां आ सकती है और एचआईवी के मामले में जीवन प्रत्याशा इतनी कम हो सकती है कि प्रशिक्षण के खर्च को औचित्यपूर्ण नहीं ठहराया जा सकता है।

दक्षिण अफ्रीकी संविधान में निहित समानता के अधिकार के तहत अदालत ने साउथ अफ्रीकन एयरलाइन्स जैसे सरकारी नियोक्ता के कदम की वैधता के बारे में निर्णय लेने के लिये दो संवैधानिक पहलुओं का इस्तेमाल किया – 1.) इस अंतर तथा वैध सरकारी उद्देश्य के बीच क्या कोई तर्कसंगत संबंध है? 2). यदि तर्कसंगत संबंध है, तो क्या इस अंतर के कारण अनुचित भेदभाव हुआ है? अदालत ने इस आधार पर फैसला दिया कि 1.) चूंकि सभी एचआईवी संक्रमित व्यक्ति अस्वस्थ एवं केबिन में काम करने के अयोग्य होते हैं, इसलिए इस अंतर और वैध सरकारी उद्देश्य के बीच कोई तर्कसंगत संबंध नहीं है 2.) चूंकि एचआईवी संक्रमित लोग दक्षिण अफ्रीकी कानून के तहत सर्वाधिक नाजुक समूहों में रखे गये हैं, इसलिये एयरलाइन के द्वारा एचआईवी होने के कारण हॉफमैन के खिलाफ अनुचित भेदभाव किया गया। अदालत ने इस भेदभाव को "प्रतिष्ठा पर आक्रमण" अथवा "कलंकित करने" जैसे कड़े शब्दों में निंदा की। अदालत ने माना कि यह नीति पुरातनपंथी है तथा व्यावसायिक हितों के नाम का पूर्वाग्रह से ग्रस्त छद्म आवरण है। साउथ अफ्रीकन एयरलाइन ने हॉफमैन की नौकरी बहाल की तथा हॉफमैन ने इस मामले में जो खर्च किया उसका भुगतान किया।

दियाव बनाम बोत्सवाना बिल्डिंग सोसायटी, मुकदमा संख्या- आईसी 50/2003, इंडस्ट्रियल कोर्ट ऑव बोत्सवाना (बोत्सवाना)

बोत्सवाना बिल्डिंग सोसायटी (बीबीएस) में दियाव को प्रशिक्षणार्थ नौकरी पर रखा गया था और उसे रोजगार संबंधी चिकित्सकीय जांच के दौरान एचआईवी संबंधी स्थिति का खुलासा करने को कहा गया था। दियाव

ने ऐसा करने से इंकार कर दिया और उसे नौकरी से निकाल दिया गया। अदालत ने इस मामले में फैसला दिया कि बीबीएस, जो एक निजी संस्था है, पर अधिकार कानून लागू है और अमानवीय और असम्मानजनक व्यवहार के विरुद्ध जो अधिकार हैं उसका बीबीएस के इस कदम से उल्लंघन हुआ है, क्योंकि खासतौर पर एचआईवी के कलंकित स्थिति के मामले में अपनी निजता के अतिक्रमण के आगे झुकने से इंकार किये जाने पर उस महिला को आर्थिक रूप से सजा दी गयी। अदालत ने यह भी कहा कि स्वतंत्रता के दियाव के अधिकार का भी उल्लंघन किया गया, क्योंकि अपनी एचआईवी संबंधी स्थिति को बताने की आवश्यकता अतार्किक है और रोजगार तथा रोजगार की जरूरतों से उसका कोई संबंध नहीं है। अदालत ने हालांकि यह भी कहा कि बीबीएस ने उसकी निजता के अधिकार का अतिक्रमण नहीं किया, क्योंकि वास्तव में कोई परीक्षण नहीं किया गया। अदालत ने यह भी कहा कि बीबीएस ने भेदभाव पूर्ण कोई कदम नहीं उठाया क्योंकि उसने संदेह या एचआईवी संक्रमित होने के कारण दियाव को नौकरी से नहीं निकाला। लेकिन अदालत ने यह स्वीकार किया कि एचआईवी की स्थिति या एचआईवी से ग्रस्त होने के संदेह के आधार पर किये जाने वाले भेदभाव को संविधान में प्रतिबंधित किया गया है।

कनाडा बनाम थ्वाइट्स, (1994) 3 एफसी 38 – (फेडरल कोर्ट ऑव कनाडा – ट्रायल डिविजन) (नियोजन भेदभाव) (कनाडा)

एचआईवी संक्रमित सैनिक थ्वाइट्स को पदावनत कर दिया गया, उसकी ड्यूटी सीमित कर दी गयी और एक चिकित्सकीय अध्ययन के आधार पर उसे सीएएफ से हटा दिया गया। इस चिकित्सकीय अध्ययन में किसी व्यक्तिगत जांच को शामिल नहीं किया गया बल्कि चिकित्सकीय दस्तावेजों का अध्ययन किया गया। इसके बाद थ्वाइट्स ने कनाडियन ह्यूमन राइट्स ट्रिब्युनल में यह दावा करते हुये शिकायत की कि उसे उसकी अपंगता (एचआईवी) के आधार पर उसके खिलाफ भेदभाव किया गया है। कनाडियन ह्यूमन राइट्स ट्रिब्युनल ने उसकी शिकायत मंजूर करते हुये उसे नौकरी तथा उसके पिछले वेतनमानों को कायम करने, कानूनी प्रक्रियाओं पर हुये खर्च का भुगतान करने तथा उसकी भावनाओं को जो क्षति पहुंची उसकी क्षतिपूर्ति करने का आदेश दिया। ट्रिब्युनल ने पाया कि थ्वाइट्स के खिलाफ भेदभाव हुआ है और यह कनाडा के मानवाधिकार कानून का उल्लंघन है, जिसमें सेना पर यह कानूनी दायित्व दिया गया है कि अपंगता के प्रति उदारशीलता बरते तथा संबद्ध व्यक्ति एवं अन्य लोगों को होने वाले खतरों के संदर्भ में उसकी संभावना का आकलन करें। ट्रिब्युनल ने यह भी कहा कि कोई अपंगता न्यूनतम खतरे से अधिक कम से कम इतना खतरा तो उत्पन्न करे कि उसकी बर्खास्तगी को जायज ठहराया जा सके और हर मामले पर अलग–अलग तरीके से विचार किया जाये क्योंकि संक्रमित लोगों के लिये व्यापक चिकित्सकीय श्रेणी के आधार पर कोई निर्णय लेना अनुचित है। इस फैसले के खिलाफ संघीय अदालत में अपील की गयी जिसने ट्रिब्युनल के फैसले को बरकरार रखा। कोर्ट ने थ्वाइट्स के वेतन को रोकने वाले अंतरिम आदेश को यह घोषणा करते हुये नामंजूर कर दिया कि थ्वाइट्स को "जीवन के शेष दिन पूर्ण प्रतिष्ठा के साथ व्यतीत करने दिये जायें।"

फोंटेन बनाम कनाडियन पैसिफिक लिमिटेड, 120 एनआर 152 (1991) एफसी 571 (कनाडा)

फोंटेन एचआईवी संक्रमित व्यक्ति था जिसे कनाडियन पैसिफिक (सीपी) ने रसोइये की नौकरी पर रखा था और उसने एचआईवी संबंधी स्थिति का पता चलने से पहले एक माह तक काम किया था। इसके बाद उसे नौकरी से बर्खास्त कर दिया गया। कागजातों में यह बात स्पष्ट नहीं होती कि उसने नौकरी छोड़ी या उसे नौकरी छोड़ने के लिये मजबूर किया गया, क्योंकि उसके किसी वरिष्ठ अधिकारी ने यह नहीं कहा कि उसे नौकरी से निकाला जा रहा है। बाद में यह तथ्य सामने आया कि फोंटेन के बॉस ने फोंटेन द्वारा बनाये गये

भोजन को खाने से खुले तौर पर इंकार कर दिया था। इससे जहाज के अन्य कर्मचारियों में यह चेतावनी गयी कि वे गंभीर खतरे में हैं। नियोक्ता की अन्य सभी कार्रवाइयों, जैसे फोंटेन के काम के लिये किसी अन्य व्यक्ति को रखने पर एक साथ विचार करते हुये अदालत ने यह निष्कर्ष निकाला कि उसे सुनियोजित तरीके से बर्खास्त किया गया।

मानवाधिकार प्राधिकरण ने यह फैसला सुनाया कि सीपी ने कनाडा के मानवाधिकार कानून की धारा–7 का उल्लंघन किया क्योंकि सीपी ने सुनियोजित बर्खास्तगी की क्योंकि उसने ऐसा वातावरण तैयार कर दिया कि फोंटेन के पास नौकरी छोड़ने के अलावा कोई और चारा ही नहीं रहे। कोर्ट ने प्राधिकरण के फैसले को बरकरार रखते हुये कहा कि किसी भी नियोक्ता या नियोजक को परंपरागत मालिक–नौकर के रिश्ते की तुलना में एक व्यापक अर्थ देना चाहिये। यह फैसला कनाडा के मानवाधिकार कानून के तहत सभी कंपनी पर लागू होता है भले ही रोजगार संबंध व्यक्तियों के बीच हों।

डोए बनाम एन ओरेगन रिसॉर्ट, 11 एएम डिसेबलिटिज केस (बीएनए) 1824 (2001) (अमेरिका)

डोए स्की पेट्रोलर था जिसकी पत्नी एचआईवी संक्रमित थी और बाद में उसे एड्स हो गया। डोए ने यह जानकारी अपने वरिष्ठ अधिकारी को बता दी। उस अधिकारी ने डोए से एचआईवी जांच कराने को कहा ताकि यह पता चल जाये कि यह एचआईवी संक्रमित है या नहीं। डोए ने एचआईवी जांच कराने से इंकार कर दिया और इस कारण डोए को बर्फ हटाने के काम में लगाया गया, क्योंकि डोए के पहले के काम में ढलान पर घायल स्कीयर्स को मदद करने के दौरान उन्हें एड्स लगने का खतरा था। बर्फ हटाने के काम के लिये उसके वेतन में बढ़ोतरी होनी थी। डोए ने एचआईवी होने के कारण उसके साथ गैरकानूनी भेदभाव होने के लिये अपंगता कानून के तहत मुकदमा दायर किया।

अदालत ने फैसला सुनाया कि एड्स के फैलने की संभावना बहुत कम है और किसी एचआईवी संक्रमित व्यक्ति से संबंधित होने के आधार पर डोए के साथ अलग तरह का व्यवहार किया जाना गैरकानूनी भेदभाव है। चूंकि सार्वजनिक सुरक्षा को कोई सीधा खतरा नहीं था लेकिन इसके बावजूद डोए के पद को बदला जाना भेदभावपूर्ण है। अदालत ने डोए को दोबारा उसके पहले के पद पर नियुक्त किये जाने का फैसला सुनाया।

डोए बनाम यूनिवर्सिटी ऑव मैरीलैंड मेडिकल सिस्टम, 50 एफ, 3डी 1261 (1995) (अमेरिका)

डॉ. डोए एचआईवी संक्रमित तृतीय वर्ष का न्यूरोसर्जिकल रेसिडेंट था। उसे एचआईवी से संक्रमित पाये जाने के बाद सर्जरी से स्थायी तौर पर हटा दिया गया। डोए को सर्जरी से परे क्षेत्रों में रेसिडेंट की नौकरी देने की पेशकश की गयी जिसे उसने स्वीकार करने से इंकार कर दिया। वैकल्पिक रेसिडेंसी को अपनाने से इंकार किये जाने के बाद उसे नौकरी से हटा दिया गया। डोए ने भेदभाव को लेकर मुकदमा दायर किया।

अदालत ने कहा कि किसी कर्मचारी को नौकरी से तभी हटाया जा सकता है जब उसके एचआईवी से ग्रस्त होने के कारण उसके साथ काम करने वाले कर्मचारियों एवं अन्य लोगों को उसके काम के कारण काफी खतरा हो ओर इस खतरे को विवेकपूर्ण तरीके से समायोजित करने के बाद भी समाप्त नहीं किया जा सकता है। अदालत ने कहा कि विवेकपूर्ण समायोजन के बाद भी आपातकालीन चोट के खतरे को समाप्त नहीं किया जा सकता है, इसलिए अतिरिक्त सुरक्षा उपायों के बाद भी सर्जरी की प्रकृति के कारण डोए से हमेशा थोड़ा खतरा रहेगा।

ब्रैडली बनाम यूनिवर्सिटी ऑव टेक्सास, 3 एफ. 3 डी 922(1993) (अमेरिका) भी देखें

इसमें यह फैसला दिया गया कि शल्य सहायक की प्रतिनियुक्ति आवश्यक थी, क्योंकि विवेकपूर्ण समायोजन के जरिये भी एक शल्य सहायक के नाते जरूरी कार्य कलापों से जुड़े खतरों को दूर नहीं किया जा सकता था

मेल्विन बकिंघम् बनाम यूनाइटेड स्टेट्स ऑव अमेरिका, 998 एफ : 2 डी 735 (1993) (यूनाइटेड स्टेट्स)

बकिंघम डाक कर्मचारी था जिसे एचआईवी ग्रस्त पाया गया और बाद में उसे एड्स हो गया। उसने अपने बेहतर इलाज के लिये लॉस एंजेलिस तबादला किये जाने का अनुरोध किया, लेकिन लॉस एंजेलिस डाक घर ने उसका तबादला इस आधार पर नहीं किया क्योंकि डाक कर्मचारी संगठन और डाक घर के बीच इस आशय का समझौता हुआ कि किसी कर्मचारी को एक साल की नौकरी कर लेने के बाद ही तबादला किया जा सकता है।

अदालत ने कहा कि किसी योग्य कर्मचारी को अपनी अपंगता के इलाज कराने तथा नौकरी के लाभों को पाने के लिये विवेकपूर्ण तरीके से समायोजित किया जाना चाहिये। लेकिन यह समायोजन नियोक्ता के लिये किसी अनुचित परेशानी का कारण नहीं बनना चाहिये। अदालत की यह राय थी कि अपंगता से ग्रस्त किसी व्यक्ति (जिसमें एचआईवी संक्रमित तथा एड्स मरीज भी शामिल हैं) का तबादला विवेकपूर्ण समायोजन में आता है, बशर्ते तबादला चिकित्सा के लिये किया गया हो लेकिन इस कारण नियोक्ता पर किसी तरह की अनुचित परेशानी नहीं आये और कर्मचारी नौकरी के सभी दायित्वों को पूरा करने में सक्षम हो।

रेनट्री हेल्थकेयर सेंटर बनाम इलिनोइस डिपार्टमेंट ऑव ह्यूमन राइट्स, 672, एन ई 2 डी 1136 (1996) (यूनाइटेड स्टेट्स)

रेनट्री में रसोइये की नौकरी करने वाले एचआईवी से ग्रस्त एक व्यक्ति को नौकरी से हटा दिया गया, जबकि वह डॉक्टर से इस आशय का नोट लाया था जिसमें कहा गया था कि एचआईवी रक्त के अतिरिक्त अन्य तरीकों से नहीं फैलता है। रेनट्री कंपनी ने 47 मील दूर किसी जगह पर रसोइये का काम देने की पेशकश की, जिसे उसने स्वीकार नहीं किया। दो वर्ष तक काम ढूंढने के लिये संघर्ष करने के बाद उसे सुरक्षा कर्मचारी के रूप में काम मिला। उस व्यक्ति ने भेदभाव की शिकायत की।

मानवाधिकार आयोग ने फैसला दिया कि उसके खिलाफ भेदभाव हुआ है और उसके पिछले बकाये का भुगतान करने का आदेश दिया। अपीली अदालत ने कहा कि याचिकाकर्ता ने यह साबित कर दिया है कि वह अपंगता से ग्रस्त है, लेकिन इसे छोड़ कर वह पूरी तरह से योग्य है। परंतु नियोक्ता ने उसके खिलाफ कार्रवाई की। इसलिये सरसरी तौर पर यह भेदभाव किये जाने का मामला प्रतीत होता है जिसका प्रतिवादी ने भी विरोध नहीं किया, और इसलिये नियोक्ता की ओर से की गई कार्रवाई को न्यायोचित नहीं ठहराया जा सकता है। अदालत ने आगे कहा कि किसी अपंग व्यक्ति की क्षमता के बारे में व्यक्तिगत आधार पर कोई निर्णय नहीं दिया गया है और इसलिये उसे बर्खास्त करने का कोई तार्किक, कानूनी और पक्षपातरहित कारण नहीं था। कर्मचारी को चूंकि बिना किसी ठोस कारण के सुनियोजित तरीके से बर्खास्त कर दिया गया जो कि अनुचित है, इसलिए नियोक्ता पर मुआवजा देने की जिम्मेदारी बनती है।

ए बनाम एक्स (पीटीवाई) लिमिटेड, लेबर कोर्ट ऑव साउथ अफ्रीका, मुकदमा संख्या - जेएस 597/02 (दक्षिण अफ्रीका)

याचिकाकर्ता 'ए' काम के दौरान बेहोश हो गया और उसे डाक्टर के पास ले जाया गया, जहां उसे एचआईवी संक्रमित टी शर्ट पहने हुये पाया गया। याचिकाकर्ता ने इस बात से इंकार किया कि वह एचआईवी संक्रमित है और उसने जो शर्ट पहन रखी है उसे उसने किसी से मांगा है। इसके बाद उससे एचआईवी, तपेदिक और मधुमेह संबंधी जांच कराने को कहा गया, जिसके लिये उसने मना कर दिया। याचिकाकर्ता का कहना था कि उससे इस्तीफे के पत्र पर हस्ताक्षर करने के लिये दबाव डाला गया जब उसने ऐसा करने से मना कर दिया तो उसे वेतन नहीं दिया गया।

अदालत ने कहा कि यह साबित करने की जिम्मेदारी याचिकाकर्ता पर है कि उसे अनुचित तरीके से बर्खास्त किया गया। सबूतों का आकलन करने पर अदालत ने कहा कि याचिकाकर्ता यह साबित करने में असफल रहा कि उसे बर्खास्त किया गया था।

नियरी बनाम इगर्टोन-रोथ से लिमिटेड, (2005) एएलएल ईआर (डी) 238 (जुलाई) (युनाइटेड किंगडम)

एचआईवी संक्रमित 'एन' विभाग प्रमुख शिक्षक की नौकरी करता था। एन के एचआईवी से संक्रमित होने के बारे में स्कूल के प्रधानाचार्य को सूचित किया गया, लेकिन शिक्षकों एवं स्कूल के डायरेक्टरों को इसकी सूचना नहीं दी गयी। शिक्षकों एवं अभिभावकों ने एन के पढ़ाने के तरीकों के बारे में शिकायत की और उसे निलंबित कर दिया गया और जांच बिठाई गई। आखिरकार छात्रों के प्रति अनुचित व्यवहार करने तथा डराने–धमकाने तथा अपने कामकाज से पूरी तरह से संबंध तोड़ लेने आदि के आरोप में उसे बर्खास्त कर दिया गया। उसने अपनी बर्खास्तगी के विरोध में ट्रिब्युनल के समक्ष अपील की, जिसमें उसने आरोप लगाया कि उसे एचआईवी होने के कारण भेदभाव पूर्ण तरीके से बर्खास्त किया गया।

ट्रिब्युनल ने कहा कि एनडीडीए के उद्देश्यों की दृष्टि से एन अयोग्य व्यक्ति था। लेकिन उसका एचआईवी से ग्रस्त होना उसकी बर्खास्तगी का कारण नहीं था। इसकी बजाय उसकी बर्खास्तगी के निर्णय का संबंध उसके आचरण एवं कामकाज नहीं करने से था।

5

चिकित्सा संबंधी भेदभाव और कानून

मनुष्य के जीवन के लिए उत्तम स्वास्थ्य आवश्यक है। स्वास्थ्य के अधिकार को[1] स्वयं में मौलिक मानवाधिकार तथा अन्य अधिकारों के उपभोग की पूर्व शर्त दोनों के रूप में स्वीकार किया गया है।

चिकित्सा प्रतिष्ठान हालांकि एचआईवी संक्रमित लोगों के प्रति भेदभाव के सबसे आम स्थान हैं लेकिन उच्च और निम्न आमदनी वाले देशों दोनों में ऐसे प्रतिष्ठानों में भेदभाव विद्यमान है।[2] इसमें रोगी को भर्ती, उसका उपचार और ऑपरेशन करने से इंकार किया जाना, निम्न स्वास्थ्य सुविधायें प्रदान करना तथा अनावश्यक और प्रताड़नापूर्ण अतिरिक्त एहतियाती उपाय करना शामिल हैं।

किसी भी प्रकार का अन्यायपूर्ण भेदभाव हालांकि मानव सम्मान के लिए अपमानजनक तथा मानवाधिकारों का उल्लंघन है लेकिन स्वास्थ्य सेवाओं के संदर्भ में एचआईवी संक्रमित व्यक्ति के साथ भेदभाव विशेष रूप से हानिकारक है, क्योंकि यह मरीज को आवश्यक चिकित्सा तथा उपचार से वंचित करता है। कुछ मामलों में भेदभाव का डर ही मरीज को स्वास्थ्य सेवाओं से दूर रखने के लिए पर्याप्त होता है।

ऐसे संस्थानों में जहां ऐसी चिकित्सा सुविधाओं का अभाव है कि स्वास्थ्य कर्मी स्वास्थ्य सेवा प्रदान करने के दौरान अपने को एचआईवी संक्रमण से बचा सकें, वहां एचआईवी पीड़ित व्यक्ति के प्रति भेदभाव दरअसल संक्रमण फैलने के वास्तविक डर पर आधारित होता है। संसाधनों की कमी से जूझ रहे अधिकतर देशों विशेषकर सब–सहारा अफ्रीका में यही स्थिति है। निम्न आय वाले देशों में चिकित्सा प्रतिष्ठानों में होने वाले भेदभाव से निपटने तथा एचआईवी संचरण को रोकने के लिए यह जरूरी है कि सार्वभौमिक सुरक्षा उपाय सार्वभौमिक रूप से कार्यान्वित हों। जहां जरूरी हो इन उपायों के लिए अंतर्राष्ट्रीय सहायता राशि उपलब्ध कराई जाये।

स्वास्थ्य सुरक्षा कर्मियों में एचआईवी संक्रमण का जोखिम[3]

अमेरिका स्थित सेंटर फॉर डिजीज कंट्रोल (सीडीसी) के अनुसार "स्वास्थ्यकर्मियों को अपने कार्य के दौरान एचआईवी संपर्क के कारण इसकी चपेट में आने का खतरा बहुत कम होता है विशेषकर तब जब वे सार्वभौमिक

---

1 देखें उदाहरण, आर्थिक, सामाजिक तथा सांस्कृतिक अधिकारों पर अंतर्राष्ट्रीय समझौता

2 ब्रिटेन में हुए एक सर्वेक्षण में पाया गया कि लंदन में एक एचआईवी आउटपेशेंट क्लिनिक में एचआईवी संक्रमित अवस्था के कारण भेदभाव के शिकार मरीजों में से करीब आधे रोगियों के साथ क्लिनिक के बाहर एक स्वास्थ्य कर्मी द्वारा अनुचित एवं भेदभावपूर्ण व्यवहार किया जा रहा था। सर्वेक्षण के दौरान कुल 1687 रोगियों से बात की गई जो कि कुल रोगियों का 73 प्रतिशत थे। उनमें से 475 मरीज (28 प्रतिशत) किसी न किसी प्रकार के भेदभाव का शिकार थे। इनमें से 238 के साथ एक स्वास्थ्य कर्मी ने भेदभाव किया था, 121 मरीजों (25 प्रतिशत) के साथ एक दंतचिकित्सक ने , 85 मरीजों (18 प्रतिशत) के साथ उनके जीपी ने तथा 48 (10 प्रतिशत) के साथ अस्पताल के कर्मचारियों ने भेदभाव किया था। देखें http://www.aids-map.com/en/news/379BC726-2D8F-44FA-BCF2-327OFC976E39.asp. एडविन जे. बर्नार्ड, मंगलवार 11 अप्रैल, 2006

3 अधिक जानकारी के लिए देखें – इंटीग्रेटेड प्रोटोकॉल टु मैनेज हेल्थ केयर वर्कर्स एक्सपोज्ड टु ब्लडबॉर्न पैथोजन्स।

सुरक्षा उपायों (अर्थात् संरक्षित प्रक्रिया का उपयोग तथा एचआईवी और अन्य रक्तजनित संक्रमणों से बचने के लिए व्यक्तिगत संरक्षण उपकरणों का प्रयोग)[4] का पालन करते हैं। अस्पताल के विशेष क्षेत्र जहां रक्त के संपर्क में आने का सबसे अधिक खतरा होता है वे प्रसूति (डिलीवरी) कक्ष, आपातकालीन कक्ष तथा ऑपरेशन कक्ष हैं।[5] ऑपरेशन कक्ष तथा प्रसूति कक्ष में संक्रमण से सुरक्षा के लिये उचित सुरक्षा उपायों में मास्क, आंखों को ढकने वाले संरक्षक आवरण, गाउन तथा दस्ताने शामिल हैं।[6]

स्वास्थ्यकर्मियों के अध्ययनों के आधार पर सीडीसी ने अनुमान लगाया कि एचआईवी संक्रमित रक्त के त्वचा के संपर्क में आने पर एचआईवी संचरण की औसत आशंका लगभग 0.3 प्रतिशत (95 प्रतिशत कानफिडेंस लेवल (सीएल) = 0.2 प्रतिशत–0.5 प्रतिशत) तथा म्यूकस मेम्ब्रेन (श्लेष्मा झिल्ली) के संपर्क में आने से 0.09 प्रतिशत (95 प्रतिशत सीएल = 0.006 प्रतिशत–0.5 प्रतिशत)[7] होती है। यद्यपि त्वचा से संपर्क में आने के कारण एचआईवी संक्रमण के खतरों के आंकड़ों की गणना नहीं की गई है लेकिन यह खतरा श्लेष्मा झिल्ली के संपर्क में आने के खतरे से कम होता है।

सीडीसी ने दिसंबर 2001 तक पेशेगत कामों से एचआईवी संपर्क के कारण एचआईवी संचरण होने के 57 मामले दर्ज किए थे।[8] जून 1997 तक चिकित्सा कर्मियों में एचआईवी संचरण के 114 अतिरिक्त मामले पेशेगत कामों के दौरान होने वाले एचआईवी संक्रमण की श्रेणी में रखे गये। इन चिकित्सा कर्मियों ने कहा था कि उन्हें यह संक्रमण चिकित्सीय कार्य के दौरान हुआ है। इन मामलों में एचआईवी संक्रमण के अन्य कारणों की पहचान नहीं हुई, लेकिन किसी खास संपर्क के बाद संक्रमण के संचरण को दर्ज नहीं किया गया।[9]

निम्न आय वाले देशों में सार्वभौमिक एहतियाती उपाय

उत्तरी अमेरिका तथा पश्चिमी यूरोप के बाहर चिकित्सा कर्मियों को संक्रमण के खतरे के स्तर के बारे में बहुत कम जानकारी है। वर्ष 1997 में पेशेगत एचआईवी संक्रमण के 90 प्रतिशत मामले उत्तरी अमेरिका और पश्चिमी यूरोप में दर्ज किये गए थे, जबकि वास्तविकता यह है कि इन देशों में एचआईवी संक्रमित लोगों में से केवल चार प्रतिशत लोग हैं।[10]

एचआईवी संक्रमित लोगों की ज्यादातर आबादी निम्न आय वाले देशों में हैं, जहां पर संसाधनों तथा प्रशिक्षण की कमी के कारण सार्वभौमिक सुरक्षा उपायों का हमेशा पालन नहीं किया जाता है।[11] विकासशील देशों में अधिकतर स्थानों पर चिकित्सा कर्मी दस्ताने तथा मास्क जैसे बुनियादी सुरक्षा उपकरणों का भी इस्तेमाल नहीं करते हैं।[12] अफ्रीका में ऐसा अधिक होता है जहां एड्स के अधिक प्रकोप होने के कारण चिकित्सा सुरक्षा कर्मियों के लिये बहुत अधिक जोखिम है।[13]

---

4 http://www.cdc.gov/hiv/resources/qa/qa28.htm. पेशेगत एचआईवी संपर्क की रोकथाम के बारे में अधिक जानकारी के लिए सीडीसी का तथ्य पत्र – "प्रिवेंटिंग आक्युपेशनल एचआईवी ट्रांसमिशन टु हेल्थकेयर पर्सनल" देखें, http://www.cdc.gov/hiv/pubs/facts/hcwprev.htm पर उपलब्ध।

5 पीडियाट्रिक्स खंड 104 संख्या 2, अगस्त, 1999, पृष्ठ 318–324

6 वही

7 रोग नियंत्रण तथा रोकथाम केंद (सीडीसीपी)। पब्लिक हेल्थ सर्विस गाइडलाइंस फॉर द मैनेजमेंट ऑव हेल्थ–केयर वर्कर एक्सपोजर टु एचआईवी एंड रिकमन्डेशन फॉर पोस्ट–एक्सपोजर प्रोफिलेक्सिज। एमएमडब्ल्यूआर 1998; 47 (संख्या आरआर–7) : (पेज संख्या समाहित)

8 रोग नियंत्रण तथा रोकथाम केंद्र (सीडीसीपी), गाइडलाइन फॉर इन्फेक्शन कंट्रोल इन डेंटल हेल्थ केयर सैटिंग्स – दिसंबर 19, 2003, एमएमडब्ल्यूआर 2003, खंड 52/आरआर–17: पृष्ठ 12

9 रोग नियंत्रण तथा रोकथाम केंद्र (सीडीसीपी)। पब्लिक हेल्थ सर्विस गाइडलाइंस फॉर द मैनेजमेंट ऑव हेल्थ–केयर वर्कर्स एक्सपोजर टु एचआईवी एंड रिकमन्डेशन फॉर पोस्ट–एक्सपोजर प्राफिलेक्सिज. एमएमडब्ल्यूआर 1998; 47 (संख्या आरआर–7): पृष्ठ 7–8

10 एचआईवी ट्रांसमिशन इन हेल्थ केयर सैटिंग्स : ए व्हाइट पेपर बाई फिजिशियन फॉर ह्यूमन राइट्स, 27 मार्च, 2003

11 वही। चार्ल्स सागो–मोसेज एवं अन्य, "रिस्क टू हेल्थ केयर वर्कर्स इन डवलपिंग कंट्रीज" न्यू इंग्लैंड जर्नल ऑव मेडिसिन (16 अगस्त, 2001) 345 (7): 538–541, 538 पर

12 वही। पृष्ठ 47

13 वही। पृष्ठ 48

जाम्बिया में किए गए एक अध्ययन में पाया गया कि यहां शल्य चिकित्सक को पश्चिमी देशों में काम करने वाले शल्य चिकित्सकों की तुलना में शल्य क्रिया के दौरान एचआईवी के संपर्क में आने का खतरा 15 गुना ज्यादा है। जाम्बिया में 22.3 प्रतिशत मरीज एचआईवी संक्रमण से ग्रस्त हैं।[14] अनुमान है कि जाम्बिया में पांच वर्ष तक शल्य चिकित्सक के रूप में कार्य करने वाले शल्य चिकित्सक को पेशेगत कारणों से एचआईवी संक्रमण होने का खतरा 1.5 प्रतिशत होता है।[15]

सार्वभौमिक सुरक्षा उपाय, भेदभाव तथा मानवाधिकार

चिकित्सा प्रतिष्ठानों में एचआईवी संचरण की रोकथाम तथा रोगियों और चिकित्सा कर्मियों – दोनों को एचआईवी संक्रमण से बचाव के लिए सार्वभौम एहतियाती उपाय लागू करना जरूरी है। एचआईवी संक्रमित व्यक्ति के प्रति भेदभाव को ध्यान में रखते हुए, पेशेगत संक्रमण तथा रोगी को रोगी से होने वाले संक्रमण से निपटना जरूरी है। सार्वभौमिक सुरक्षा उपायों को लागू करने से एचआईवी से संबद्ध कलंक में कमी लाने में भी सहायता मिलती है, क्योंकि इन उपायों को लागू करने से संक्रमण की संभावना कम हो जाती है तथा रोगी को देखभाल की गारंटी भी मिलती है।[16]

सार्वभौम एहतियाती उपायों के क्रियान्वयन के लिए संसाधनों की आपूर्ति तथा प्रशिक्षण की जरूरत है, संसाधनों की कमी झेल रहे देशों में एचआईवी से जुड़े भेदभाव को कम करने के लिये यह पूर्व शर्त है। अंतर्राष्ट्रीय मानवाधिकार कानून के तहत सरकारों तथा अंतर्राष्ट्रीय समुदाय के लिए यह सुनिश्चित करना आवश्यक है कि बिना किसी भेदभाव के एचआईवी संक्रमित व्यक्ति की चिकित्सा सुविधाओं एवं सेवाओं तक पहुंच हो। आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक अधिकारों के बारे में अंतर्राष्ट्रीय कोवेनेंट (आईसीईएससीआर) के तहत सदस्य देशों पर यह जिम्मेदारी डाली गयी है कि "वे बिना किसी भेदभाव के स्वास्थ्य सुविधाओं, वस्तुओं तथा सेवाओं तक पहुंच के विशेष रूप से वंचित तथा अलग–थलग पड़े समूहों के अधिकार को सुनिश्चित करेंगे।" हर देश एक–दूसरे को अंतर्राष्ट्रीय कानून के तहत मानवाधिकारों के प्रोत्साहन में सहायता भी देंगे।[17]

अंतर्राष्ट्रीय कानून के तहत कामगारों को "सुरक्षित तथा स्वस्थ कार्यस्थितियों"[18] का अधिकार है तथा सरकारों की यह खास जिम्मेदारी है कि "महामारियों, स्थानीय बीमारियों, पेशेगत तथा अन्य बीमारियों के नियंत्रण, उपचार तथा उनकी रोकथाम" के लिए कदम उठाएं।[19]

चिकित्सा प्रतिष्ठानों में गोपनीयता तथा प्रकटीकरण

चूंकि सभी चिकित्साकर्मियों के लिए सार्वभौम सुरक्षा उपाय जरूरी हैं, अतः किसी भी रोगी को सिर्फ इसलिए विशेष उपचार की श्रेणी में डालने का कोई कारण नहीं है कि उससे संक्रमण के संचरण का खतरा है। इस

14 वही। पृष्ठ 8. पेपर में कहा गया है कि "इस तथ्य के बावजूद कि गरीब देशों में शल्यक्रियाओं में कम समय लगता है तथा ये शल्यक्रियायें धनी देशों के मुकाबले सरल होती है लेकिन इन शल्यक्रियाओं के दौरान एचआईवी संक्रमण के खतरों को कम करने वाले उपकरणों (जैसे पावर टूल्स) या तकनीकों का प्रयोग नहीं होता है इसलिए यह खतरा बढ़ता है। देखें – ईस्टर सीजे कॉस्टेन एवं अन्य, "ए प्रोसपेक्टिव स्टडी ऑन द रिस्क ऑव एक्सपोजर टु एचआईवी ड्यूरिंग इन सर्जरी जाम्बिया।" एड्स (1995) 9 : 585–588, 587 पर

15 वही। पृष्ठ 8. स्रोत कांस्टेन एवं अन्य 1995, 585 पर

16 वही। पृष्ठ 56

17 यह उत्तरदायित्व आईसीईएससीआर सहित संयुक्त राष्ट्र चार्टर तथा अन्य संधियों द्वारा बनाए गए अंतर्राष्ट्रीय कानून में है। यूएन चार्टर सदस्यों को "सार्वभौमिक सम्मान को बढ़ावा देने तथा मानवाधिकारों एवं मौलिक स्वतंत्रता का पालन करने तथा स्वास्थ्य समस्याओं के अंतर्राष्ट्रीय हल" को प्रोत्साहन देने के लिए वचनबद्ध करता है। आईसीईएससीआर उच्चतम स्वास्थ्य मानकों की प्राप्ति के लिए सदस्य देशों से "अधिकारों की पूर्ण रूप प्राप्ति की दृष्टि से व्यक्तिगत तथा अंतर्राष्ट्रीय सहायता विशेषकर आर्थिक तथा तकनीकी के जरिए कदम उठाने का आग्रह करता है।" आईसीईएससीआर, अनुच्छेद–2, देखें वही अनुच्छेद–12

18 देखें आईसीईएससीआर, अनुच्छेद–7 (बी)

19 अनुच्छेद–12 (सी) आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक अधिकार पर अंतर्राष्ट्रीय कोवेनेंट (आईसीईएससीआर)

तथ्य से कि "संक्रामक रक्त के नमूनों की पहचान का प्रयास या किसी भी व्यक्ति को संक्रमित व्यक्ति के रूप में पहचान करना अव्यावहारिक और संभवतः भ्रामक है तथा सभी रोगियों की जांच व्यावहारिक नहीं है, अलग-अलग मरीजों का अलग-अलग तरीके से उपचार करना व्यवहारिक नहीं है।[20]

इसके अलावा अनुसंधानों से निष्कर्ष निकलता है कि किसी मरीज की एचआईवी की स्थिति को उजागर करने के विपरीत परिणाम निकल सकते हैं और इससे संचरण के दर में वृद्धि हो सकती है, क्योंकि चिकित्साकर्मी शल्यक्रियाओं और तकनीकी प्रक्रियाओं के दौरान असुविधा महसूस कर सकते हैं।[21] उस स्थिति में जब मरीज की एचआईवी स्थिति का पता नहीं होता तब भी स्वास्थ्यकर्मियों को सुरक्षा उपायों को अपनाने के लिए प्रोत्साहित किया जा सकता है।[22]

कुछ मामलों में हालांकि एचआईवी का प्रकटीकरण रोगी के प्रभावी उपचार के लिए जरूरी होता है।

स्वास्थ्य सुरक्षा संस्थानों में एचआईवी/एड्स से संबद्ध भेदभाव : अंतर्राष्ट्रीय परिदृश्य

स्वास्थ्य देखभाल के संदर्भ में एचआईवी भेदभाव के प्रति विशेष रूप से प्रासंगिक अंतर्राष्ट्रीय कानूनी साधनों में निम्नलिखित शामिल है:

मानवाधिकारों की सार्वभौम घोषणा

अनुच्छेद-25 (1): प्रत्येक व्यक्ति को अपने तथा अपने परिवार के स्वास्थ्य, भोजन, कपड़ा, मकान, चिकित्सीय देखरेख तथा आवश्यक सामाजिक सेवाओं के लिये पर्याप्त जीवन स्तर पाने का अधिकार है।

आर्थिक, सामाजिक तथा सांस्कृतिक अधिकारों के बारे में अंतर्राष्ट्रीय कोवेनेंट

अनुच्छेद-12 (1): इस समझौते के सदस्य देशों ने प्रत्येक व्यक्ति के शारीरिक तथा मानसिक स्वास्थ्य के उच्चतम मानकों के उपयोग के अधिकार का अनुमोदन किया है।

बाल अधिकार समझौता

अनुच्छेद-24 (1): इस समझौते के सदस्य देशों ने स्वास्थ्य के उच्चतम मानकों के उपभोग तथा बीमारी के उपचार के बच्चों के अधिकार का अनुमोदन किया है। सदस्य देश यह सुनिश्चित करेंगे कि किसी भी बच्चे को स्वास्थ्य सुरक्षा सेवाओं से वंचित नहीं किया जाएगा।

इसके अतिरिक्त संयुक्त राष्ट्र की स्वास्थ्य के लिए गठित विशिष्ट एजेंसी- विश्व स्वास्थ्य संगठन (डब्ल्यूएचओ) ने अपने संविधान की प्रस्तावना में कहा है कि :

> "नस्ल, धर्म, राजनीतिक विश्वास, आर्थिक या सामाजिक परिस्थितियों के भेदमाव के बगैर स्वास्थ्य के उच्चतम मानकों का उपभोग करना प्रत्येक मानव का मूल अधिकार है।"

---

20 इंफेक्शन कंट्रोल गाइडलाइन्स, प्रिवेंटिंग द ट्रांसमिशन ऑव ब्लडबोर्न पैथोजन्स इन हेल्थकेयर एंड पब्लिक सर्विस सेटिंग्स, खंड 23 एस, 3-मई 1997, पृष्ठ-3 http:/www.phac-aspc.gc.ca/publicat/ccdr-rmtc/97pdf/cdr23s3e.pdf.

21 गेरबर्डिंग जेएल, लिपटेल सी और अन्य, रिस्क ऑव एक्सपोजर ऑव सर्जिकल पर्सोनेल टू पेशेंट्स ब्लड ड्युरिंग सर्जरी ऐट एसएफ जनरल हास्पिटल, न्यू इंग्लैंड जर्नल आफ मेडिसीन, 332: 1788-93, 1990

22 देखें गेरबर्डिंग, जेएल डज नॉलेज ऑव ह्यूमन इम्युनोडिफिशियेंसी वाइरस इंफेक्शन डिक्रीज द फ्रीक्वेंसी ऑव आक्युपेशनल एक्सपोजर टु ब्लड? अमेरिकन जर्नल आफ मेडिसिन, 1991;91 (सप्लीमेंट 3 बी): S 306-11, रॉय ई, रॉबिलर्ड पी. इफेक्टिवनेस ऑव एंड कम्पलायन्स टु प्रिवेंटेटिव मेजर्स अगेंस्ट ऑक्युपेशनल ट्रांसमिशन ऑव ह्यूमन ट्रॉमा, एंड इंफेक्शन कंट्रोल : यूनिवर्सल प्रीकॉशन्स आर यूनिवर्सली इग्नोर्ड, एंड कॉकरोफ्ट ए, एल्फोर्ड जे. क्लिनिकल प्रैक्टिस एंड द परसीव्ड इम्पोर्टेंस ऑव आइडेंटिफाइंग हाइ रिस्क पेशेंट्स. जे. हॉस्पिटल, 1994; 28:127-36

राष्ट्रीय स्तर पर लागू होने वाले संवैधानिक विधानों के उदाहरण

अमेरिका

अमेरिका में चिकित्सा सुविधायें पाना संघीय अधिकार नहीं है। स्वास्थ्यकर्मियों द्वारा हालांकि विकलांगता और एचआईवी/एड्स ग्रस्त व्यक्ति के प्रति भेदभाव करने पर रोक है। संघीय कानून के तहत सार्वभौमिक सुरक्षा उपायों को अपनाना अनिवार्य है, लेकिन डॉक्टरों अथवा दंतचिकित्सकों द्वारा एचआईवी संक्रमित व्यक्ति से ज्यादा फीस वसूलना भेदभाव माना जाएगा। अमेरिका के विकलांगता अधिनियम में इस प्रश्न को खुला छोड़ दिया गया है कि सूचना के उद्देश्य से एचआईवी परीक्षण उपयुक्त है अथवा नहीं?

आमतौर पर एचआईवी/एड्स रोगी को उपचार या दाखिले से मना करने के भेदभावपूर्ण मामले विकलांगता के आधार पर और निम्न धाराओं के तहत दायर किए जाते हैं–

- अमेरिका विकलांगता अधिनियम (एडीए)[23] का अनुच्छेद–302
- 104 स्टैट., 355, 42 यूएससी. 12182
- पुनर्वास अधिनियम की धारा–504[24]

ब्रिटेन

ब्रिटेन में स्वास्थ्य सुरक्षा में एचआईवी पॉजिटिव व्यक्ति के प्रति भेदभाव को रोकने का सर्वाधिक उपयुक्त कानूनी प्रावधान विकलांगता भेदभाव अधिनियम (डीडीए) है।

डीडीए के भाग III का अनुच्छेद–19 वस्तुओं, सुविधाओं तथा सेवाओं, जिनमें सभी एनएचएस सुविधाओं की सुलभता भी शामिल है, में एचआईवी/एड्स सहित विकलांगों के भेदभाव को प्रतिबंधित करता है।

इसके अलावा मानवाधिकार अधिनियम के अंतर्गत स्वास्थ्य सेवाओं या चिकित्सीय उपचार का अधिकार विशेषाधिकार नहीं है। एचआईवी संबंधी अवस्था के आधार पर स्वास्थ्य सुरक्षा की सुलभता में भेदभाव जीवन के अधिकार के उपभोग में पक्षपात नहीं किए जाने के अधिकार का उल्लंघन है। जनरल मेडिकल काउंसिल के कथनानुसार "डॉक्टरों को एचआईवी पॉजिटिव या एड्स से ग्रस्त व्यक्ति के उपचार तथा देखभाल के लिए उसी प्रकार के मानक अपनाने चाहिए जैसे वे अन्य मरीजों के उपचार में अपनाते हैं।"[25]

दक्षिण अफ्रीका

एचआईवी से संबद्ध भेदभाव और स्वास्थ्य सुरक्षा की सुलभता से संबंधित कानून इस प्रकार हैं–

- **संविधान (अध्याय 2 – अधिकार विधेयक) का अनुच्छेद–27:** "प्रत्येक व्यक्ति को स्वास्थ्य सुरक्षा सेवाओं की सुलभता का अधिकार है। किसी भी व्यक्ति को जीवन–रक्षक चिकित्सीय उपचार देने से मना नहीं किया जा सकता।"
- एमएसए नस्ल, लिंग, आयु.....(और) स्वास्थ्य की स्थिति पर विचार किए बिना स्वास्थ्य बीमा सुलभ करवाता है। सदस्यों का योगदान "औसत" पर आधारित है। एमएसए, एचआईवी पॉजिटिव व्यक्ति को स्वास्थ्य बीमा से मना करने पर स्वास्थ्य बीमाकर्ता को प्रतिबंधित करता है।[26]

---

23 एडीए की धारा–302 के तहत "किसी भी व्यक्ति के प्रति विकलांगता के आधार पर किसी ऐसे व्यक्ति द्वारा जो ...सार्वजनिक स्थान का संचालन कर रहा है भेदभाव नहीं किया जाएगा तथा उसे वस्तुओं, सेवाओं, सुविधाओं, लाभों, फायदों का उपभोग करने का पूरा अधिकार होगा।" एसएस 12182 (ए)

24 पुनर्वास अधिनियम की धारा–504 के तहत : विकलांग व्यक्ति जो अन्य सभी प्रकार से सक्षम है, उसे उसकी विकलांगता के कारण किसी भी कार्यक्रम में भाग लेने से रोका नहीं जा सकता है, न ही भेदभाव का शिकार बनाया जा सकता है। ...29 यूएससी. एसएस 794 (ए)

25 हॉगन तथा हार्डसन

26 एड्स एंड द लॉ, 1999 क्यूम्युलेटिव सप्लीमेंट (जुलाई 1999), पृष्ठ 153–160, संपादक डेविड डब्ल्यू वेबर

अंतर्राष्ट्रीय कानूनी मामले

(ए) उपचार से इंकार

अमेरिका में एक दूरगामी परिणाम वाले मामले – ब्रैग्डन बनाम अबॉट[27] मामले में, अमरीकी सर्वोच्च न्यायालय ने निर्णय दिया कि अपंगता भेदभाव अधिनियम (डीडीए) के अंतर्गत कोई चिकित्सक केवल उसी स्थिति में उपचार से इंकार कर सकता है जब रोगी की अपंगता उसके लिए उल्लेखनीय जोखिम का कारण बन सकती है। इस महत्वपूर्ण मुद्दे पर कि चिकित्सक के पेशेगत निर्णय के विषय में न्यायालय किस प्राधिकरण की राय ले सकता है, न्यायालय ने रोग नियंत्रण एवं रोकथाम केन्द्रों (सीडीसीपी) जैसे जन स्वास्थ्य विशेषज्ञों के दृष्टिकोण को "विशेष वजन और महत्व" दिया, मगर साथ ही कहा कि प्रचलित आम राय से सहमति न रखने वाला कोई प्रतिवादी स्थापित व्यवस्था का विरोध करने के लिए किसी विश्वसनीय वैज्ञानिक आधार का उल्लेख करके इस दृष्टिकोण से इंकार कर सकता है। उसका अपना यह विश्वास कि कोई उल्लेखनीय जोखिम मौजूद है, बेशक वह चाहे कितने ही नेक इरादे से हो, उसे उसकी जिम्मेदारी से मुक्त नहीं कर सकता।

अपीली न्यायालय ने डॉ. ब्रैग्डन के इस दावे की जांच की कि दांत के छिद्र को भरना स्वयं उनके और अन्यों के लिए प्रत्यक्ष जोखिम का कारण था और दिसंबर 1998 में फैसला देते हुये कहा कि यह दावा केवल अंदाज या अनुमान पर आधारित था और इसलिए यह दावा उपचार से इंकार करने का औचित्य सिद्ध करने के लिए काफी नहीं है।[28] ब्रैग्डन मामले में सुनाया गया निर्णय स्कूल बोर्ड ऑव नसाउ काउन्टी बनाम एरलिन मामले में सर्वोच्च न्यायालय द्वारा स्थापित सिद्धांत के अनुरूप ही था कि छूत के रोगों से ग्रस्त लोगों के विरुद्ध भेदभाव को बेसिर पैर के विश्वासों के आधार पर सही नहीं ठहराया जा सकता। उस मामले में न्यायालय ने तद्नुसार निचली अदालतों को निर्देश दिया था कि छूत के रोगों संबंधी मामलों में जनस्वास्थ्य अधिकारियों की राय का सम्मान किया जाये।

होवे बनाम हल[29] मामले में न्यायालय ने यह भी कहा कि उपचार की सुविधा पाने के अवसर से वंचित किया जाना अपंगता से ग्रस्त अमरीकियों के अधिनियम (डीडीए) के अंतर्गत भेदभावपूर्ण है अगर किसी चिकित्सक द्वारा रोगी का इलाज करने से इंकार करने का कारण बहाने पर आधारित हो और वह दरअसल मरीज की एचआईवी स्थिति से डर कर ऐसा कर रहा हो।

विशिष्ट चिकित्सा की जरूरत का बहाना बनाकर उपचार से इंकार

कुछ मामलों में मरीज को विशिष्ट चिकित्सा की आवश्यकता होने की बात को ढाल बनाकर उपचार से इंकार किया जाता है। चिकित्साकर्मी अपने इस कृत्य को आवश्यक जानकारी और अनुभव नहीं होने के बहाने छुपाते हैं और यह तर्क देते हैं कि उपचार से इंकार करने और रोगी को कहीं और भेजने का उनका निर्णय न्यायपूर्ण चिकित्सीय समझ पर आधारित था।

ब्यूल्थ बनाम क्लॉसन[30] मामले में एक अमरीकी अदालत ने एक दंत चिकित्सक के इस दावे पर विचार किया कि एक एचआईवी संक्रमित मरीज को कहीं और रेफर करना उपयुक्त चिकित्सीय समझ पर आधारित था। अदालत ने इस दावे को मात्र भेदभाव के लिए बहाना माना। न्यायालय का यह निर्णय इस तथ्य पर आधारित था कि दंत चिकित्सक ने इस मामले में किसी सक्षम चिकित्सीय परामर्श का संदर्भ लेने के बजाय "अपूर्ण जानकारियों और .... अनौचित्यपूर्ण विश्वासों" के आधार पर यह कदम उठाया। इसी प्रकार अमेरिका

27 118 एस., सीटी 2196 (1998); 524 यूएस 624 (1998) (यूनाइटेड स्टेट्स) –इज राइट फार कोर्ट ऑव अपील्स
28 ऐबेट बनाम ब्रैग्डन, 163, एफ. 3 डी 87 (1998)
29 874 एफ, सप्लीमेंट 799 (1994) (यूएस)
30 491 एनडब्ल्यू 2 डी, 662 (मिन. 1992) (एक्स. 1)

बनाम मोरवेन्ट[31] मामले में न्यायालय ने कहा कि विशिष्ट चिकित्सा की आवश्यकता की बात सिर्फ भेदभाव का बहाना है, क्योंकि चिकित्सक स्पष्ट तौर पर दांत साफ करने के लिए आवश्यक योग्यता रखता है।

लेकिन लेस्ली बनाम ही मान ची[32] मामले में विशेषज्ञ देखभाल का सहारा लेने को सही ठहराया गया था। चिकित्सीय देखभाल करने से इंकार करने का एक डॉक्टर का फैसला सही माना गया क्योंकि इसमें केवल एचआईवी स्थिति के आधार पर भेदभाव नहीं हुआ था।

न्यायालय ने यह स्पष्ट किया कि पुनर्वास अधिनियम में "किसी चिकित्सक को अक्षम रोगी को कहीं और रेफर करने से नहीं रोका गया है क्योंकि कई बार ऐसा करने के चिकित्सीय कारण रोगी की अक्षमता से संबद्ध नहीं होते हैं।"

एचआईवी स्थिति नहीं बताने पर उपचार से इंकार

इस तरह के कई मामले सामने आये हैं जिनमें यह मुद्दा उठा कि क्या कोई चिकित्सक उपचार की एक शर्त के रूप में किसी मरीज से एचआईवी परीक्षण की मांग कर सकता है। जहां कहीं भी परीक्षण के सूचनात्मक उद्देश्य को चिकित्सा सेवा के प्रावधान और स्वास्थ्यकर्मियों की सुरक्षा के संदर्भ में प्रासंगिक पाया गया, वहां न्यायालयों ने कई बार चिकित्सा कर्मियों के पक्ष में फैसले दिये हैं।

डो बनाम कहाला डेन्टल ग्रुप[33] मामले में हवाई सर्वोच्च न्यायालय ने एक निजी दंत चिकित्सकों की टीम के उस निर्णय को सही ठहराया जिसमें एचआईवी स्थिति संबंधी चिकित्सा जानकारी न देने पर एक रोगी को वैसी चिकित्सा देने से इंकार किया गया था, जिसमें रक्त से संपर्क संभव था। न्यायालय ने कहा कि एचआईवी संबंधी स्थिति के कारण चिकित्सा देने से इंकार नहीं किया गया, अपितु दंत चिकित्सा टीम को यह जानकारी कि अतिरिक्त सावधानियां बरतने अथवा रोगी को बेहतर चिकित्सा के लिये कहीं रेफर किये जाने संबंधी फैसले लेने की जरूरत थी।

इस मसले पर कुक बनाम विर्ट्ज, 35 पीए. डी एंड सी. चौथा 264 (यूएस) मामले में भी विचार हुआ। न्यायालय ने कहा कि यह निष्कर्ष निकाला नहीं जा सकता कि वादी को उसकी बीमारी के कारण चिकित्सा सुविधा नहीं मिली। न्यायालय ने आगे कहा कि उपचार की सफलता सटीक जानकारी पर निर्भर करती है और "चिकित्सक स्वास्थ्य संबंधी ऐसी जानकारी मांग सकते हैं जिसका उपचार से समुचित संबंध हो।"

(बी) उपचार और देखभाल के दौरान युक्तिसंगत/अत्यधिक सावधानी के उपाय

युक्तिसंगत और अतिरिक्त सावधानियों के मसले ने अमेरिका में एचआईवी संक्रमित लोगों के विरुद्ध कथित भेदभाव ने कई मुकदमों को जन्म दिया है। आमतौर पर, उपचार करने से इंकार करने के सामान्य मामलों को न्यायालयों ने भेदभावपूर्ण माना है; किंतु वास्तविक या एचआईवी संक्रमित समझे जाने वाले लोगों के उपचार और देखभाल के दौरान विशिष्ट तरह की सावधानियां बरते जाने को भेदभावपूर्ण नहीं माना गया। अभी न्यायालय हालांकि यह निर्णय नहीं कर पाये हैं कि तर्कपूर्ण सावधानियों की परिधि में क्या-क्या शामिल है।[34]

सायराक्यूज कम्युनिटी हेल्थ सेंटर बनाम वेन्डी एएम[35] मामले में न्यायालय ने कहा कि एचआईवी संक्रमित रोगी के इलाज के दौरान जब स्टाफ ने दस्ताने, नकाब, चश्मे और गाउन पहने तथा रोगी के तकिये और लैंप को सफेद कागज से ढंका गया तो यह दंत चिकित्सक द्वारा मरीज के प्रति भेदभाव का परिचायक नहीं था।

---

31 898 एफ. सप्लीमेंट, 1167 (ईडी ला 1995)

32 250 एफ 3 डी 47 (प्रथम सर्कुलेटिड 2001) (एक्स. बी)

33 808 पृ. 2 डी 1276 (यूएस)

34 हॉगन एंड हार्ट्सन, एलएलपी

35 604 एनवाईएस, 2 डी, 406, (एनवाई एप. डिवि. 1993) (एक्स. वी)

इसी प्रकार नॉर्थ शोर यूनिवर्सिटी हॉस्पिटल बनाम रोजा[36] मामले में एक रोगी के एचआईवी पॉजिटिव होने के संदेह में क्लिनिक द्वारा 1985 के संक्रामक रोग नियमों के अनुसार अधिक सुरक्षा सावधानियां इस्तेमाल करने को न्यायालय ने भेदभावपूर्ण नहीं माना। डो बनाम कोलंबिया डिस्ट्रिक्ट[37] मामले में भी न्यायालय ने कहा कि एचआईवी जांच की रिपोर्ट आने तक वादी को मनोचिकित्सा आत्महत्या वार्ड में भेजे जाने से रोका जाना भेदभावपूर्ण नहीं था क्योंकि यह समुचित चिकित्सीय कारणों पर आधारित था।

किंतु शैरो बनाम बेली[38] मामले में न्यायालय ने यह पाया कि अमरीकी रोग नियंत्रण केन्द्र (सीडीसी) की सिफारिशों से बढ़कर सुरक्षा उपाय करना डॉ. बेली के विरुद्ध एडीए और पुनर्वास अधिनियम के अंतर्गत कार्रवाई किये जाने का कारण बनता है।

ब्रैग्डल बनाम ऐबट[39] मामले में भी न्यायालय ने कहा कि एक दंत चिकित्सक द्वारा एचआईवी पॉजिटिव रोगी का इलाज अस्पताल में ही करने पर जोर देना तर्कपूर्ण सावधानी नहीं थी और दंत चिकित्सक द्वारा अपने क्लिनिक में इलाज करने से इंकार करना गैर कानूनी था।

स्वास्थ्य सेवा और एचआईवी भेदभावः भारतीय परिदृश्य

भारत में एचआईवी/एड्स संबंधी बदनामी और भेदभाव के बारे में अंतर्राष्ट्रीय श्रम संगठन (आईएलओ) के एक अध्ययन में यह पाया गया कि इस अध्ययन के लिये प्रश्नों का जवाब देने वाले 32 प्रतिशत एचआईवी पॉजिटिव व्यक्तियों ने चिकित्सा परिसरों में भेदभाव का सामना किया था।[40] बंगलौर और मुम्बई में यूएनएड्स की ओर से किये गये एक अध्ययन में वहां के चिकित्सा प्रतिष्ठानों में एचआईवी/एड्स से ग्रस्त लोगों के प्रति व्यापक भेदभाव पाया गया था।[41]

भेदभाव के तरीकों में निम्नलिखित शामिल हैं[42]:

- एचआईवी/एड्स संबंधी बीमारी का उपचार करने से इंकार।
- देखभाल/उपचार के लिए अस्पताल में भर्ती करने, ऑपरेशन करने या चिकित्सीय प्रक्रियाओं में सहयोग से इंकार।
- शौचालयों जैसी सुविधाओं और खाने-पीने के साझे बर्तनों तक पहुंच के मामले में प्रतिबंध; वार्ड में मरीज को अलग रखा जाना (जैसे वार्ड से बाहर गैलरी या बरामदे में बिस्तर की अलग से व्यवस्था)
- चल रहे उपचार को बीच में रोक देना।
- अस्पताल से जल्दी छुट्टी देना।
- शल्य क्रिया से पूर्व और गर्भावस्था के दौरान एचआईवी के लिए अनिवार्य परीक्षण।
- वार्ड या कमरे में घूमने-फिरने पर रोक-टोक।
- स्वास्थ्यकर्मियों द्वारा बचाव के उपकरणों (गाउन, मास्क आदि) का अनावश्यक उपयोग।
- शव को छूने या उठाने से इनकार करना।

---

36 86 एन वाई, 2 डी, 413, (1995) (यूएस)

37 624 ए 2 डी 440 (यूएस)

38 910 एफ सप्ली. 187 (एम डी पेन. 1995)

39 118. एस सीटी. 2196 (1998) (यू एस)

40 एसेसिंग द सोशियो-इकोनॉमिक इम्पैक्ट ऑव एचआईवी/एड्स ऑन पीपुल लिविंग विद एचआईवी/एड्स (पीएलडब्ल्यूएचएएस) एंड देयर फैमिलीज इन इंडिया, www.undp.org.in/HIVAIDS/reports/India_Report.pdf

41 इंडियाः एचआईवी/एड्स-रिलेटेड डिस्क्रिमिनेशन, स्टिग्मेटाइजेशन एंड डिनायल, पीटर अग्लेटन और पॉल टाइरर के साथ मिलकर शालिनी भारत द्वारा यूएन एड्स के लिये तैयार रिपोर्ट, यूएन एड्स 2001

42 वहीं से उद्धृत, पृ. 16-17

- शव को लपेटने के लिये प्लास्टिक शीट का इस्तेमाल करना
- शव ले जाने के लिए वाहन देने में आनाकानी; साथ ही भेदभाव के अन्य घटिया तरीकों का इस्तेमाल जैसे :
    - इलाज में देरी।
    - रोगी को वार्डों/डॉक्टरों/अस्पतालों के चक्कर लगाते रहने को विवश करना।
    - किसी उपचार योजना के बिना ही रोगी को निरीक्षणाधीन रखना।
    - बेवजह बार–बार एचआईवी जांच कराना।

देखभाल से इंकार करने के लिए बताये जाने वाले कारणों में सबसे आम कारण यह बताया जाता है कि इस महामारी का उपचार करने के साथ बड़े स्तर का जोखिम जुड़ा हुआ है।[43] स्वास्थ्य सेवाओं से जुड़े पेशेवरों में से डॉक्टरों और विशेषकर वरिष्ठ डॉक्टरों के हाथों से भेदभाव होने की संभावना ज्यादा मानी गयी है।[44] अपने पेशे की जोखिम भरी प्रकृति के चलते शल्य चिकित्सकों और प्रसूति विशेषज्ञों, जिन्हें काम के दौरान संक्रमण होने की आशंका अधिक होती है, को भी भेदभाव का एक प्रमुख माध्यम माना जाता है।[45] इसके अलावा अध्ययन में पाया गया है कि ज्यादातर सरकारी अस्पतालों में सार्वभौम सावधानियों को लागू करने के लिए आवश्यक बुनियादी सुरक्षा उपकरणों की उपलब्धता असंतोषजनक थी और ऐसे कई मामले सामने आये हैं जब उपचार के दौरान चिकित्सकों एवं स्वास्थ्यकर्मियों द्वारा इस्तेमाल किये जाने वाले दस्तानों और अन्य प्रतिरक्षा उपकरणों के लिये एचआईवी ग्रस्त मरीजों से भुगतान को कहा गया।[46]

लेकिन यूएन एड्स के अध्ययन में उम्मीद के आधारों की भी पहचान की गयी है। वरिष्ठ डॉक्टरों की चिंता की वजह का कारण "अनजाने के प्रति डर"[47] बताया गया है, क्योंकि उनका प्रशिक्षण के दौरान एचआईवी संक्रमित रोगियों से संपर्क नहीं हुआ था। नए डॉक्टरों को एचआईवी संक्रमित मरीजों को देखने का अधिक अनुभव होने के कारण एचआईवी से जुड़े भ्रम और आशंकाओं को दूर करने में मदद मिल रही है और धीरे–धीरे ऐसा माहौल तैयार होने का मार्ग प्रशस्त हो रहा है जिसमें एचआईवी संक्रमित लोगों को कम प्रताड़ना झेलनी पड़ेगी।

संवैधानिक प्रावधान

भारत के संविधान की प्रस्तावना और अनुच्छेद–38 में नागरिकों के लिये सार्थक और सम्मानजनक जीवन सुनिश्चित करना राज्य का कर्तव्य बताया गया है। भारत में बेहतर स्वास्थ्य के लिये अनुकूल स्थितियों का सृजन तथा उन्हें कायम रखने का दायित्व राज्य को सौंपा गया है और संविधान के भाग–iv के अनुच्छेद–38, 39 (ई)[48] (एफ)[49], 42[50], 47 और 48 ए में इस संबंध में संवैधानिक निर्देश दिये गये हैं।

43 वही

44 वही, पृ. 32

45 वही, पृ. 33

46 देखें यूएनएड्स– इंडिया: एचआईवी/एड्स – रिलेटेड डिस्क्रिमिनेशन, स्टिग्मेटाइजेशन एंड डिनायल, अगस्त, 2001, 27–29 पर www.unaids.org /publications/documents/human/law/HR_India.pdf

47 वही, पृ 33

48 अनुच्छेद–39 (ई) : राज्य को अपनी नीतियां उस दिशा में उन्मुख करनी होंगी कि कर्मचारियों, पुरुषों और महिलाओं के स्वास्थ्य एवं क्षमताओं के अधिकारों की रक्षा हो सके तथा बच्चों के बचपन का दुरुपयोग नहीं हो और नागरिक आर्थिक आवश्यकताओं के चलते अपनी आयु और क्षमता के विपरीत कोई व्यवसाय अपनाने को बाध्य नहीं हों।

49 अनुच्छेद–39 (एफ) : बच्चों को ऐसे अवसर एवं सुविधायें मुहैया हों कि वे स्वस्थ तरीके से स्वतंत्रता एवं सम्मान के साथ विकसित हो सकें और उनका बचपन एवं युवावस्था शोषण, नैतिक एवं भौतिक अभावों से सुरक्षित रह सके।

50 अनुच्छेद–42 : राज्य को काम के मानवीय हालातों एवं मातृत्व लाभों के प्रावधान बनाने चाहिये।

भारत में हालांकि एचआईवी/एड्स से ग्रस्त लोगों के उपचार एवं चिकित्सीय देखभाल के दौरान होने वाले भेदभाव के संबंध में कोई कानून नहीं है, किन्तु संविधान के प्रावधानों और भारतीय न्यायपालिका द्वारा इनकी व्याख्याओं में जीवन के अधिकार और तदनुसार स्वास्थ्य के अधिकार की गारंटी मिली है।

विंसेंट पानिकुलांगरा बनाम भारत सरकार के मामले[51] में उच्चतम न्यायालय ने कहा, "सार्वजनिक स्वास्थ्य के रखरखाव और इसमें सुधार के उच्च स्तर को कायम रखने की आवश्यकता है, क्योंकि ये समुदाय के भौतिक अस्तित्व के लिए जरूरी हैं और इनकी बेहतरी पर समाज का निर्माण निर्भर है, जैसा कि संविधान निर्माताओं ने सोचा था। इसलिए हमारी राय में सार्वजनिक स्वास्थ्य की देखभाल को उच्च प्राथमिकता, शायद सबसे अधिक प्राथमिकता दी जानी चाहिये।"

पंजाब राज्य बनाम मोहिन्दर सिंह चावला[52] मामले में सर्वोच्च न्यायालय ने निर्णय दिया कि जीवन के अधिकार में स्वास्थ्य का अधिकार अंतर्निहित है।

पश्चल बंग खेत मजदूर समिति बनाम पश्चिम बंगाल राज्य[53] मामले में भारत के सर्वोच्च न्यायालय ने कहा, "संविधान में केन्द्र और राज्य के स्तर पर कल्याणकारी राज्य की स्थापना की परिकल्पना की गयी है। एक कल्याणकारी राज्य में सरकार का प्राथमिक कर्तव्य लोगों के कल्याण को सुनिश्चित करना है। ऐसे में लोगों को समुचित चिकित्सा सुविधाएं उपलब्ध कराना सरकार की जिम्मेदारियों का अनिवार्य अंग है। इसे पूरा करने के लिए सरकार अस्पताल और स्वास्थ्य केन्द्र चलाती है, जो इन सुविधाओं का लाभ लेना चाहने वाले लागों को चिकित्सा देखभाल मुहैया कराते हैं। अनुच्छेद–21 राज्य पर प्रत्येक व्यक्ति के जीवन के अधिकार की सुरक्षा करने का दायित्व डालता है। अतः मानव जीवन का संरक्षण सर्वाधिक महत्व का विषय है। राज्य द्वारा चलाए जा रहे सरकारी अस्पताल और उनमें काम करने वाले चिकित्सा अधिकारी मानव जीवन को संरक्षित करने के लिए चिकित्सा सहायता उपलब्ध कराने के लिए कर्तव्यबद्ध हैं। किसी सरकारी अस्पताल द्वारा उपचार की आवश्यकता वाले व्यक्ति को समय पर चिकित्सा सहायता उपलब्ध कराने मे विफल रहना अनुच्छेद–21 के अंतर्गत प्रदत्त जीवन के अधिकार का हनन है।

इस प्रकार भारतीय संविधान एचआईवी/एड्स पीड़ित लोगों के अधिकारों को भेदभाव से मुक्त करने और उन्हें समुचित चिकित्सा सुविधायें उपलब्ध कराने में मदद करता है। निजी क्षेत्र के स्वास्थ्य सेवा संस्थान और कर्मियों द्वारा भेदभाव और उपचार में इंकार के मामले में हालांकि अभी थोड़ी कानूनी खामियां हैं लेकिन एचआईवी/एड्स ग्रस्त मरीजों के प्रति भेदभाव को दूर करने के लिए एक प्रभावी उपाय यही है कि ऐसे लोगों के अधिकारों की रक्षा के लिए भेदभाव विरोधी कोई विशिष्ट कानून बनाया जाए।

---

51 मैन्यू/एससी/ 0157/1987
52 (1997) 2 एससीसी 83
53 एआईआर 1996 एससी 2426

6

शैक्षिक भेदभाव और कानून

मानव विकास और सम्मान सहित समाज की समग्र प्रगति के लिए शिक्षा अनिवार्य है। मानवाधिकारों पर सार्वभौम घोषणा में निहित शिक्षा के अधिकार की उद्घोषणा शिक्षा से जुड़े वैश्विक महत्व का परिचायक है।[1]

एचआईवी/एड्स से जुड़े कलंक और भय ने शैक्षिक संदर्भ में एचआईवी संक्रमित बच्चों एवं एचआईवी ग्रस्त लोगों के प्रति भेदभाव का माहौल पैदा किया है। मौजूदा परिवेश में भेदभाव के कई स्वरूप हैं जैसे स्कूली शिक्षा तक पहुंच में अवरोध उत्पन्न करना और एचआईवी संक्रमित बच्चों को जबरन अन्य बच्चों से अलग बिठाने जैसे पूर्वाग्रह से ग्रस्त बर्ताव। अंतर्राष्ट्रीय[2] और राष्ट्रीय[3] जनस्वास्थ्य अधिकारियों ने ऐसे भेदभावपूर्ण कृत्य को अन्यायपूर्ण बताया है।[4] एचआईवी के फैलने के तरीकों के बारे में जानकारियों के अभाव और अभिभावकों और शिक्षकों में एचआईवी को लेकर बेवजह भय के कारण भेदभाव और बढ़ते हैं।

एचआईवी/एड्स के जुड़ा कलंक और शिक्षा व्यवस्था में भेदभाव के नकारात्मक प्रभाव बहुआयामी हैं: शिक्षा तक पहुंच में अड़चन पैदा करने तथा भावनात्मक पीड़ा पहुंचाने के अलावा ये कलंक एवं भेदभाव भावी पीढ़ियों में एचआईवी/एड्स संबंधी बदनामी और भेदभाव की भावना में और वृद्धि करते हैं। ज्ञान पाने के स्थल के रूप में शैक्षिक प्रतिष्ठानों को एचआईवी/एड्स को लेकर कायम भ्रांतियों को बढ़ाने के बजाय इन भ्रांतियों को दूर करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभानी है। स्कूल के कर्मचारियों को बच्चों और पूरे समाज के लिए महत्वपूर्ण रोल मॉडल बनना चाहिये।

स्कूली वातावरण में एचआईवी संचरण के खतरे

आकस्मिक संपर्क के जरिये चूंकि एचआईवी का संचरण संभव नहीं है, इसलिए स्कूलों में सामान्य शैक्षिक गतिविधियों से एचआईवी संक्रमण का कोई खतरा नहीं होता है। अमेरिकन एकेडमी ऑव पीडिएट्रिक्स के अनुसार स्कूली परिवेश में एचआईवी संक्रमण का कोई मामला सामने नहीं आया है और न ही इस महामारी

1 अनुच्छेद–26, मानवाधिकारों पर संयुक्त राष्ट्र का घोषणापत्र

2 देखें उदाहरण विश्व स्वास्थ्य संगठन, यूएन एड्स, युनेस्को (1999) स्कूल स्वास्थ्य पर विश्व स्वास्थ्य संगठन की सूचना श्रृंखला, दस्तावेज छह : एचआईवी/एड्स यौन संक्रामक रोग और संबंधित भेदभाव की रोकथाम : स्वास्थ्य की एक महत्वपूर्ण जिम्मेदारी– स्कूलों को बढ़ावा, पृष्ठ 2

3 देखें उदाहरण पीडिएट्रिक्स खंड 104, संख्या 2, अगस्त 1999, पृष्ठ 318–324 http://aapolicy.aappublications.org/cgi/content/full/pediatrics; 104/2/318

4 आगे देखें – सीडीसी इत्यादि : मार्ग निर्देशन और नीति अनुशंसाएं इस नतीजे पर पहुंचे हैं कि एड्स ग्रस्त बच्चों को अत्यंत गंभीर परिस्थितियों के अलावा स्कूल से अलग नहीं किया जाना चाहिये।

सीडीसी : "ऐसे बच्चों को स्कूल और स्कूल पश्चात् देखभाल केन्द्र जाने की अनुमति दी जानी चाहिये और अप्रतिबंधित परिवेश में एक प्रोत्साहन गृह में रखा जाना चाहिये।"

को लेकर ऐसा कोई आंकड़ा है जिसके कारण एचआईवी संक्रमित बच्चों को स्कूल से निकाले जाने या स्कूल के भीतर अलग–थलग रखने को जायज ठहराया जा सके।[5]

ऐसी परिस्थिति हालांकि उत्पन्न हो सकती हैं जब कर्मचारी या छात्र किसी अन्य व्यक्ति के शारीरिक तरल और खासकर रक्त के संपर्क में आ जायें। उदाहरण के लिए किसी बच्चे की नकसीर फूट सकती है या किसी खेल–कूद के दौरान कोई दुर्घटना हो सकती है। किसी भी अन्य स्थानों की तरह स्कूलों के लिये भी यह अनुशंसा की जाती है कि किसी संक्रमण के विरुद्ध बचाव के लिए "संक्रमण नियंत्रण संबंधी सार्वभौम सावधानियां" बरती जायें और उनका पालन किया जाये। स्कूलों में संक्रमण नियंत्रण संबंधीं अनुशंसाओं का एक खंड विश्व स्वास्थ्य संगठन (डब्ल्यूएचओ) और यूनेस्को की ओर से संयुक्त रूप से प्रकाशित किया गया है[6] और जिन्हें इस पुस्तक में अनुलग्नक (ए) में दिया गया है। नर्सरी स्कूलों और खेल गतिविधियों के विशेष संदर्भ में निम्नलिखित टिप्पणियां और अनुशंसाएं की गई हैं–

नर्सरी स्कूल

नर्सरी स्कूलों में एचआईवी पॉजिटिव बच्चों की उपस्थिति ने कुछ चिंता और विवाद पैदा किया है, विशेषकर कुछ युवा बच्चों की दांत काटने की आदत को लेकर। युवा बच्चे सामान्य तौर पर भी रक्त या दूषित तरल के संपर्क में आने से बचने में कम सक्षम होते हैं।

अमेरिकन एकेडमी ऑव पीडिएट्रिक्स के अनुसार, हालांकि सिद्धांत के तौर पर दांत से काटना एचआईवी संक्रमण का एक संभावित माध्यम हो सकता है, किंतु इस तरह से संचरण का खतरा बहुत कम माना गया है।[7] कनाडियन पीडिएट्रिक्स सोसायटी की भी इसी तरह की राय है, "दांत से काटने के कारण त्वचा के कट–फट जाने पर भी तब तक एचआईवी/एड्स के संचरण की संभावना नहीं होती जब तक कि काटने वाले बच्चे के थूक में काफी मात्रा में रक्त मौजूद न हो।"[8]

अमेरिकन एकेडमी ऑव पीडिएट्रिक्स का निष्कर्ष है कि एचआईवी संक्रमित बच्चों पर किसी तरह के प्रतिबंध लगाने की कोई आवश्यकता नहीं है। साथ ही यह भी सिफारिश करती है कि उस स्थिति में जब चिकित्सकों को ऐसा विश्वास हो कि कोई संक्रमित बच्चा दूसरों को रक्त या दूषित तरल के संपर्क में ला सकता है तो, वैसी स्थिति में उस बच्चे को अलग किये जाने के बारे में फैसले किये जाने चाहिये।"[9]

खेल गतिविधियां

सीडीसी के अनुसार ऐसे खेल–कूदों में एचआईवी संचरण का खतरा नहीं हो सकता है जिनमें खून बहने का खतरा न हो। हालांकि जिस खेल–कूद के दौरान खून बहने की आशंका होती है उसमें भी संपर्क होने पर एचआईवी संचरण का बहुत कम खतरा होता है।[10] खेल–कूद के दौरान होने वाले संपर्क के कारण एचआईवी संचरण का कोई दस्तावेजी मामला अब तक इस सोसाइटी के पास नहीं आया है।[11] खेल–कूद के दौरान

5 पीडिएट्रिक्स खंड 104, संख्या 2, अगस्त 1999, पृष्ठ : 318 – 324 http://aapolicy.aappublications.org/cgi/content/full/pediatrics, 104/2/318

6 प्रभावी स्कूल स्वास्थ्य के लिये नवीन उपाय http://www.unesco.org/education/fresh

7 पीडिएट्रिक्स खंड 104, संख्या 2, अगस्त 1999, पृष्ठ 318–324 http://aapolicy.aappublications.org/cgi/content/full/pediatrics, 104/2/318

8 बाल चिकित्सकों की कनाडियाई सोसायटी, संक्रामक रोग एवं प्रतिरोधन समिति– पीडिएट्रिक्स और शिशु एवं बाल स्वास्थ्य, 1998, 3(5): 351–353। संदर्भ संख्या आई डी 98–01 (पूर्व में आई डी पी 98–01), पुनर्प्रतिष्ठित फरवरी 2005

9 वही

10 देखें http://www.cdc.gov/hiv/resources/qa/qa30.htm

11 वही

एचआईवी संचरण का एकमात्र संभावित मामला 1990 में मेडिकल जर्नल–"द लैन्सेट" में प्रकाशित हुआ था जिसमें एक फुटबाल मैच के दौरान दो खिलाड़ियों के भिड़ जाने के कारण एचआईवी संचरण होने की बात कही गयी थी। जन स्वास्थ्य अधिकारी एचआईवी संक्रमण की संभावना के अन्य कारकों से इंकार नहीं कर पाये थे और आखिरकार वे यह प्रमाणित नहीं कर पाये थे कि एचआईवी संक्रमण वास्तव में भिड़ंत के कारण ही हुआ था।[12] मुक्केबाजी जैसे खेल ने, जिसमें पुरजोर शारीरिक संपर्क होता है, एचआईवी संचरण के खतरे पर बड़े विवाद को जन्म दिया है। इसके मद्देनजर कई अमेरिकी राज्यों में मुक्केबाजों का अनिवार्य एचआईवी परीक्षण लागू है।

शैक्षिक परिसरों में गोपनीयता

शैक्षिक परिसरों में एचआईवी संचरण के अत्यंत कम खतरे के कारण सामान्य तौर पर यह सहमति बनी है कि किसी स्कूल या दिन में बच्चों को रखने वाले केंद्रों के लिए वहां आने वाले बच्चों की एचआईवी स्थिति को जानने की आवश्यकता नहीं है। जैसा कि अमेरिकन एकेडमी ऑव पीडिएट्रिक्स (एएपी) ने कहा है, "इस आशय का अधिनियम कि किसी बच्चे के एचआईवी संक्रमण की स्थिति स्कूल अधिकारियों की जानकारी में लायी जाये, एएपी[13] और पीएचएस[14] सहित अनेक चिकित्सीय, शैक्षिक और जनस्वास्थ्य संस्थाओं की ओर से प्रकाशित नीतियों से मेल नहीं खाती हैं। ये नीतियां उस मान्यता से प्रेरित है कि परिवार की जानकारी के बिना राज्य या स्थानीय जनस्वास्थ्य एजेन्सियों द्वारा स्कूल अधिकारियों को अधिसूचित करना बच्चों या उनके परिवारों के हितों के अनुकूल नहीं है, और यह स्कूल को सूचित करने या नहीं करने के परिवारों के अधिकारों का हनन करता है।"[15]

एचआईवी भेदभाव और शिक्षा : अंतर्राष्ट्रीय परिदृश्य

एचआईवी भेदभाव और शिक्षा से संबंधित अंतर्राष्ट्रीय विधायी परिपत्र

ऐसे अनेक अंतर्राष्ट्रीय विधान हैं जो शिक्षा के अधिकार का संरक्षण करते हैं, इन्हें अन्यायपूर्ण भेदभाव को रोकने वाले प्रावधानों के साथ लागू किये जाने पर अंतर्राष्ट्रीय कानून के तहत एचआईवी संक्रमित बच्चों के स्कूल जाने के अधिकार का संरक्षण होता है। एचआईवी संक्रमित बच्चों के साथ हो रहे भेदभाव से लड़ने के संदर्भ में मिलने–जुलने की आजादी और निजता के अधिकार के प्रावधान भी सहायक हैं। प्रासंगिक विधानों में निम्नलिखित शामिल हैं :

मानवाधिकारों पर सार्वभौम घोषणा (1948)

- अनुच्छेद–26
  - (1) सभी को शिक्षा का अधिकार है। शिक्षा निःशुल्क होगी, कम से कम शुरुआती और बुनियादी स्तरों पर। शुरुआती शिक्षा अनिवार्य होगी। तकनीकी और व्यावसायिक शिक्षा आमतौर पर उपलब्ध कराई जाएगी और उच्च शिक्षा योग्यता के आधार पर बराबरी की भावना के साथ उपलब्ध कराई जायेगी।
  - (2) शिक्षा का मकसद व्यक्तित्व के पूर्ण विकास और मानव अधिकारों एवं मूलभूत स्वतंत्रताओं के लिए सम्मान को बल प्रदान करना होगा। शिक्षा सभी राष्ट्रों, जातीय और धार्मिक समूहों के बीच आपसी

12 आस्ट्रेलियाई न्यायाधिकरण पर कनाडा एचआईवी/एड्स लेख

13 29 पीडिएट्रिक्स एड्स पर कार्यबल। मानव रोग प्रतिरोध नाशक वायरस संक्रमण वाले बच्चों की शिक्षा, पीडिएट्रिक्स, 1991; 88:645–647

14 रोग नियंत्रण और रोकथाम केन्द्र, ह्यूमन टी– लिम्फोट्रॉपिक वायरस टाइप III/लिम्फाडिनोपैथी– एसोसिएटेड वायरस से संक्रमित बच्चों की शिक्षा और पालन–पोषण – एमएमडब्ल्यूआर 1985; 34: 517–521

15 पीडिएट्रिक्स, 1998 फरवरी; 101 (2) : 315–9 पृष्ठ 318. इस नीति की पुनः सहमति का एक वक्तव्य 1 मई 2006 को प्रकाशित हुआ था

समझ, सहनशीलता और मैत्री भावना को बढ़ायेगी और शान्ति बनाये रखने के लिए संयुक्त राष्ट्र की गतिविधियों में सहयोग करेगी।

(3) बच्चों को किस तरह की शिक्षा दी जाये इसका फैसला करने का पहला अधिकार अभिभावकों का है।

आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक अधिकारों पर अंतर्राष्ट्रीय कोवेनेंट

- अनुच्छेद– 13

(1) मौजूदा समझौते में शामिल राष्ट्र सबके लिए शिक्षा के अधिकार को मान्यता देते हैं। वे मानते हैं कि शिक्षा ऐसी होनी चाहिए जो मानवीय व्यक्तित्व और उसके सम्मान की भावना का पूर्ण विकास करे और मानव अधिकारों और मूलभूत स्वतंत्रताओं के लिए सम्मान को मजबूत करे। वे यह भी मानते हैं कि शिक्षा सभी लोगों को एक उन्मुक्त समाज में प्रभावशाली तरीके से भागीदारी के लिए सक्षम बनाएगी, सभी राष्ट्रों और सभी जातीय, नस्लीय या धार्मिक समूहों के बीच आपसी समझ और सहनशीलता और मित्रता को बढ़ायेगी और शांति बनाए रखने के लिए संयुक्त राष्ट्र की गतिविधियों में सहयोग देगी।

(2) मौजूदा समझौते में शामिल राष्ट्र इस बात पर सहमत हैं कि इस अधिकार की पूरी प्राप्ति की दृष्टि से :

ए) प्राथमिक शिक्षा सभी के लिए अनिवार्य और निःशुल्क उपलब्ध होगी।

बी) तकनीकी और व्यावसायिक शिक्षा के विभिन्न स्वरूपों में माध्यमिक शिक्षा सामान्य तौर पर सभी उपयुक्त तरीकों से उपलब्ध कराई जाएगी और सबकी पहुंच में होगी और विशेष रूप से इसे धीरे–धीरे निःशुल्क उपलब्ध कराया जाएगा।

सी) क्षमतानुसार प्रत्येक उपयुक्त तरीके से उच्चतर शिक्षा के क्षेत्र में सभी की बराबर पहुंच होगी। और धीरे–धीरे यह निःशुल्क उपलब्ध करायी जायेगी।

शिक्षा में भेदभाव के विरुद्ध समझौता[16]

शिक्षा में भेदभाव के विरुद्ध समझौते के अनुच्छेद–3 (बी) में स्पष्ट किया गया है, "आवश्यक होने पर, विधायी तरीकों से यह सुनिश्चित करना कि शैक्षणिक संस्थानों में छात्रों के प्रवेश में कोई भेदभाव न हो।"

बाल अधिकारों पर समझौता[17] (1990)

- अनुच्छेद–2

(1) किसी बच्चे या उसके अभिभावक या उसके माता–पिता के नस्ल, रंग, लिंग, भाषा, धर्म, राजनीतिक या अन्य विचारधारा, राष्ट्रीय, जातीय, या सामाजिक उत्पत्ति, सम्पत्ति, विकलांगता, जन्म या अन्य किसी स्थिति को महत्व दिये बिना अपने न्याय क्षेत्र के भीतर सभी राष्ट्र प्रत्येक बच्चे के लिए मौजूदा समझौते में निर्धारित अधिकारों का सम्मान करेंगे और उन्हें सुनिश्चित करेंगे।

(2) सदस्य राष्ट्र यह सुनिश्चित करने के लिए सभी उपयुक्त उपाय करेंगे कि हर बच्चे उनके माता–पिता, कानूनी अभिभावकों या पारिवारिक सदस्यों की हैसियत, गतिविधियों, अभिव्यक्त विचारों अथवा मतों या विश्वास के आधार पर किसी प्रकार के भेदभाव या सजा से सुरक्षित रहें।

- अनुच्छेद–28

(1) सदस्य राष्ट्र बच्चों के शिक्षा के अधिकार को मान्यता देते हैं और इस अधिकार की क्रमशः प्राप्ति की दृष्टि से और समान अवसरों के आधार पर वे विशेष तौर पर : (ए) प्राथमिक शिक्षा को सबके लिए अनिवार्य और निःशुल्क उपलब्ध कराएंगे...

---

16 संयुक्त राष्ट्र शैक्षणिक, वैज्ञानिक और सांस्कृतिक संगठन (युनेस्को) की आम सभा द्वारा 1960 में पारित और 91 देशों द्वारा पुष्टि

17 बच्चों के अधिकारों पर समझौता – संयुक्त राष्ट्र महासभा के प्रस्ताव 44/25 दिनांक 20 नवम्बर 1989 द्वारा पारित और कई देशों द्वारा स्वीकृत

(2) सदस्य राष्ट्र यह सुनिश्चित करने के लिए सभी उपयुक्त उपाय करेंगे कि स्कूलों में अनुशासन इस तरह से लागू किया जाए कि वह बच्चे के मानवीय सम्मान से मेल खाता हो और वर्तमान समझौते की परिधि में हो।

राष्ट्रीय स्तर के अधिनियम

एचआईवी भेदभाव, बच्चों और शिक्षा के क्षेत्र में विभिन्न देशों के विशिष्ट अधिनियमों के कुछ उदाहरण नीचे दिये जा रहे हैं :

दक्षिण अफ्रीका

दक्षिण अफ्रीका का संविधान और अधिकार विधेयक[18] 1996 की सं. 108

- अधिकार विधेयक की धारा–28 सीधे तौर पर बच्चों के अधिकारों से संबंधित है; जिनमें दुर्व्यवहार, उपेक्षा, अत्याचार या बदनामी से संरक्षण के अधिकार (1डी) शामिल है।
- अधिकार विधेयक (1ए) की धारा–29 सभी को मूल वयस्क शिक्षा सहित आधारमूत शिक्षा के अधिकार की गारंटी देती है, जिनमें वयस्क शिक्षा शामिल है।

दक्षिणी अफ्रीकी विद्यालय अधिनियम 1996 की सं. 84[19]

अनुच्छेद–5 (1) कहता है कि किसी पब्लिक स्कूल को लोगों को अवश्य ही प्रवेश देना चाहिए और किसी भी प्रकार का अन्यायपूर्ण भेदभाव किये बिना उनकी शैक्षिक आवश्यकताओं को पूरा करना चाहिए।

समानता को बढ़ावा देने और भेदभाव की रोकथाम के अधिनियम में मौजूद भेदभाव विरोधी सामान्य प्रावधानों के साथ–साथ दक्षिण अफ्रीका में शैक्षणिक परिसरों में एचआईवी संक्रमित (पॉजिटिव) बच्चों से भेदभाव से निपटने के लिए कई कानूनी प्रावधान मौजूद हैं। किंतु, रोजगार के क्षेत्र से एकदम उलट, शिक्षा के क्षेत्र में भेदभाव से संबंधित कोई एचआईवी अधिनियम नहीं है, जिससे ऐसे प्रावधानों से जुड़ी कानूनी राहत तक बच्चों की पहुंच अवरुद्ध होती है।[20]

अमेरिका

1973 के पुनर्वास अधिनियम की धारा-504

धारा–504 के तहत संघीय वित्तीय सहायता प्राप्त करने वाले किसी शैक्षणिक संस्थान से यह अपेक्षित है कि वह जहां तक संभव हो अक्षम या विकलांग लोगों को मुख्य धारा में पूरी तरह शामिल होने का अवसर प्रदान करे।

अमेरिकी संघीय संविधान शिक्षा के अधिकार को स्पष्ट रूप से संरक्षित नहीं करता है। करदाताओं द्वारा वित्त पोषित शिक्षा को एक विशेषाधिकार माना जाता है। किंतु एक बार राज्य सार्वजनिक शिक्षा प्रदान करने का विकल्प अपना लेता है तो शिक्षा का अधिकार एक समान शर्तों पर उपलब्ध कराया जाना चाहिए (संविधान के 14वें संशोधन के अनुसार)। वर्ष 1986 में अधिकतर राज्यों ने फैसला किया कि एचआईवी संक्रमित (पॉजिटिव) बच्चों को यदि उनके स्वास्थ्य की स्थिति अत्यंत खराब न हो तो स्कूल में आने की अनुमति होनी चाहिए। एड्स को चिकित्सा से अधिक एक सामाजिक मुद्दा माना गया। बाद में सामने आने वाले भेदभाव के मामलों ने इस रुख को बल प्रदान किया है।

---

18 http://www.polity.org.za/html/govdocs/constitution/saconst.html?rebookmark=1

19 http://www.polity.org.za/html/govdocs/legislation/1996/act96-084.html/?rebookmak=1

20 बच्चे, एचआईवी और कानून – एक कानूनी संसाधन, राष्ट्रीय एड्स और बाल कार्यदल की परियोजना, सेव द चिल्ड्रन यूके, साउथ अफ्रीका प्रोग्राम द्वारा सौंपा गया कार्य। http://www.childrensrightscentre.co.za/legal_audit/DocSum.htm

अमेरिका के दो राज्यों–साउथ कैरोलिना और इलिनॉइस में कानूनन बच्चों की एचआईवी स्थिति स्कूल को बतानी आवश्यक है। इन राज्यों में स्वास्थ्य विभाग के अधिकारियों के लिए किसी एचआईवी पॉजिटिव बच्चे के स्कूल के प्रिंसिपल को इस बारे में जानकारी देना अनिवार्य है। साउथ कैरोलिना में यह नियम केवल पब्लिक स्कूलों पर लागू है।

ब्रिटेन

विकलांगता भेदभाव संबंधी अधिनियम (1995)[21]

एचआईवी प्रभावित लोगों सहित विकलांग व्यक्तियों के विरुद्ध शैक्षणिक संस्थानों द्वारा भेदभाव की रोकथाम के लिए विकलांगता भेदभाव अधिनियम (डीडीए) 1995 में संशोधन करते हुए विशेष शैक्षिक आवश्यकताएं और विकलांगता अधिनियम 2001 लाया गया। इससे पूर्व शिक्षा को विकलांगता भेदभाव अधिनियम से छूट प्राप्त थी। भेदभाव को अब प्रवेश प्रक्रिया, उसकी शर्तों, प्रार्थनापत्र स्वीकार करने, शिक्षा प्रदान करने या किसी जिम्मेदार संस्था द्वारा इससे जुड़ी गतिविधियां उपलब्ध कराने के संदर्भ में विधि विरुद्ध माना जाता है।[22] अधिनियम में इस बात का प्रावधान किया गया है कि विकलांग छात्र को बहुत अधिक अलाभप्रद स्थिति से बचाने के लिये जरूरत पड़ने पर विवेकपूर्ण समायोजन किया जा सकता है।[23]

ब्रिटेन में एचआईवी को ऐसी बीमारी नहीं माना गया है जिससे किसी व्यक्ति के ग्रस्त होने के बारे में रिपोर्ट दी जाये, इसलिये वहां शैक्षणिक संस्थाओं को किसी बच्चे की एचआईवी संबंधी स्थिति जानने का अधिकार नहीं है। यदि मां–बाप अपने बच्चे की एचआईवी स्थिति की जानकारी स्कूल कर्मचारियों को देते हैं तो कानून में इस जानकारी को गोपनीय रखने का प्रावधान किया गया है। ब्रिटेन में शिक्षा के क्षेत्र में भेदभाव से निबटने के संबंध में कोई स्पष्ट मामले सामने नहीं आये हैं।

न्यायिक निर्णय : अंतर्राष्ट्रीय परिदृश्य

दुनिया भर के न्यायालयों ने लगातार एचआईवी संक्रमित (पॉजिटिव) बच्चों के स्कूल जाने के अधिकार के पक्ष में फैसले सुनाये हैं और स्कूल परिवेश में भेदभाव से मुक्ति के उनके अधिकार की रक्षा की है। एक उल्लेखनीय और विवादास्पद अपवाद, जो नर्सरी स्कूल के एक एचआईवी संक्रमित आवेदक के मामले में है, नीचे दिया गया है।

स्कूल से निकाला जाना

जिला समुदाय स्कूल बोर्ड बनाम शिक्षा बोर्ड[24] के मामले में एक अमेरिकी न्यायालय ने एचआईवी संक्रमित (पॉजिटिव) बच्चों के प्रवेश के विरुद्ध दो स्कूल बोर्डों की याचिका खारिज कर दी। न्यायालय की राय थी कि कक्षा में एड्स फैलने की आशंका केवल सैद्धांतिक है और बच्चों को उनके एचआईवी संक्रमित होने के आधार पर प्रवेश पाने से वंचित करना पुनर्वास अधिनियम के अनुच्छेद–504 के अंतर्गत भेदभाव की श्रेणी में आता है। संविधान के 14 वें संशोधन का उल्लेख करते हुए न्यायालय ने निर्णय दिया कि इस तरह का भेदभाव अमेरिकी संविधान में सुनिश्चित एक समान सुरक्षा के प्रावधान का उल्लंघन है।

21 http://www.opsi.gov.uk/acts/acts1995/1995050.htm

22 भाग 28 बी (6)–(8) (स्कूल) और 28 एस (6)–(9) (अग्रिम और उच्चतर शिक्षा) डीडीए पर क्लिफर्ड चांस का ज्ञापन

23 भाग 28 सी (स्कूल) और 28 आर (अग्रिम और उच्चतर शिक्षा) डीडीए पर क्लिफर्ड चांस का ज्ञापन

24 (130 विविध 2 डी 398)

एक्स. एक्स बनाम राष्ट्रीय सुरक्षा मंत्रालय मामले में कोलंबिया में संवैधानिक न्यायालय ने एचआईवी संक्रमित छात्र को उक्त प्रकार का ही संरक्षण प्रदान किया।[25] एक कैडेट के एचआईवी परीक्षण में पॉजिटिव पाये जाने पर निकाले जाने को न्यायालय ने संविधान और मानवाधिकारों पर सार्वभौम घोषणा दोनों में प्रदत्त भेदभाव से आजादी के अधिकार का उल्लंघन माना। इसके अतिरिक्त, न्यायालय ने यह व्यवस्था दी कि उसके निकाले जाने से शिक्षा के अधिकार और व्यवसाय या रोजगार चुनने के अधिकार जैसे मूलभूत अधिकारों का भी उल्लंघन होता है।

दांत से काटने से सबंधी समस्याओं के मामले

एचआईवी संक्रमित (पॉजिटिव) बच्चों से भेदभाव संबंधी बहुत से मामले दांत से काटने के कारण होने वाले एचआईवी संचरण की आशंका आधारित हैं। इस मामले में न्यायालयों के फैसले अलग–अलग रहे हैं।

थॉमस बनाम अटास्काडेरो यूनिफाइड स्कूल डिस्ट्रिक्ट[26] मामले में न्यायालय ने एक ऐसे एचआईवी पॉजिटिव बच्चे को कक्षा में बैठने से रोकने के मसले पर विचार किया जो दांत से काटने की एक घटना में शामिल था। न्यायालय ने राय दी कि वह बच्चा कक्षा में अपने सहपाठियों के लिए कोई गंभीर खतरा पैदा नहीं करता था, क्योंकि इस बात के चिकित्सीय प्रमाण हैं कि किसी को दांत से काटने से एचआईवी/एड्स का संचरण नहीं होता। न्यायालय ने फैसला सुनाया कि दांत से काटने के कारण एड्स के संचरण की अप्रमाणित धारणा किसी भेदभाव को सही ठहराने के लिये काफी नहीं है।

कैरेन परेरा बनाम बुकल्यूश मांटेसरी नर्सरी स्कूल, 2003 के मामले[27] में हालांकि एक दक्षिणी अफ्रीकी न्यायालय ने एक नर्सरी स्कूल के उस फैसले को सही ठहराया जिसमें एक एचआईवी पॉजिटिव छात्रा को तब तक प्रवेश देने से इंकार कर दिया गया गया जब तक कि स्कूल एचआईवी पॉजिटिव बच्चों को प्रवेश देने के लिए स्वयं को तैयार न समझ ले और जब तक कि वह बच्चा "दांत से काटने की आयु को पार न कर ले"। न्यायाधीश लूसी मैलूला ने पाया कि चूंकि छात्रा के प्रवेश संबंधी आवेदन को केवल टाला गया था, न कि अस्वीकार किया गया था, अतः यह अन्यायपूर्ण भेदभाव का मामला नहीं बनता।

स्कूल में अलगाव

रॉबर्ट्सन बनाम ग्रेनाइट कम्युनिटी यूनिट स्कूल डिस्ट्रिक्ट नम्बर 9 के मामले[28] में एक अमेरिकी न्यायालय ने एक एचआईवी पॉजिटिव छात्र को दूसरे बच्चों से अलग कक्षा में इस आधार पर बिठाने कि वह "विकलांग है" की वैधता पर विचार किया। न्यायालय ने निर्णय दिया कि एड्स होना संबंधित परिस्थिति में कोई 'विकलांगता' नहीं है और चूंकि कक्षा में उसकी वापसी से 'उसके साथियों के स्वास्थ्य के लिए कोई उल्लेखनीय खतरा पैदा न होने" की स्थिति की संभावना है। इसलिए उसे उसकी कक्षा में वापस लाये जाने की अनुमति दी जानी चाहिए।

खेलों में भेदभाव

विशिष्ट खेल गतिविधियों में शामिल होने के एचआईवी पॉजिटिव व्यक्तियों के अधिकार के बारे में न्यायालयों के फ़ैसले कई मसलों पर केन्द्रित रहे हैं, जिनमें किसी विशेष खेल में एचआईवी संचरण के खतरे का स्तर, ऐसे संचरण के प्रभाव और ज्ञात एचआईवी पॉजिटिव व्यक्तियों के साथ भेदभाव किये जाने की वैधता शामिल है अगर अन्य अप्रशिक्षित और अनजान एचआईवी पॉजिटिव खिलाड़ी खेलकूद में भाग ले रहे हों।

---

25 केस संख्या टी – 707205, संवैधानिक न्यायालय की तीसरी अपील पीठ (2003)
26 (662 एफ अनुपूरक 376)
27 4377/02 (2003) (दक्षिण अफ्रीका)
28 (एसडी 111, 1988)

वर्ष 1999 में अमेरिका के सर्वोच्च न्यायालय ने उस निर्णय[29] पर पुनर्विचार करने से इंकार कर दिया जिसमें 'कठिन प्रकार' के जापानी कराटे सिखाने वाले एक स्कूल को एक एचआईवी पॉजिटिव लड़के को कक्षा में शामिल होने से रोकने की अनुमति दी गयी थी। इससे पहले चौथे अमेरिकी अपीली सर्किट कोर्ट ने यह पाया[30] कि हालांकि माइकल के चोटग्रस्त होकर शरीर से खून बहने तथा उसके बाद एचआईवी का संचरण होने का खतरा कम था लेकिन ऐसा होने पर अन्य छात्रों के परिणाम गंभीर हो सकते हैं। यह पहला ऐसा मामला था जिसमें अमेरिका के एक संघीय अपीली न्यायालय ने विकलांगता ग्रस्त अमेरिकियों के लिये बनाये गये अधिनियम (द अमेरिकन्स विद डिसेबिलिटीज एक्ट) के अंतर्गत एचआईवी संक्रमित लोगों के खेल–कूद और दौड़–धूप में भाग लेने के अधिकार के बारे में विचार किया।

आस्ट्रेलिया में हालांकिं एक मामले[31]– मैथ्यू हॉल बनाम विक्टोरियन अमेच्योर फुटबॉल एसोसिएशन मामले[32] में विक्टोरियन सिविल एंड एडमिनिस्ट्रेटिव ने फैसला सुनाया कि विक्टोरियन अमेच्योर फुटबॉल एसोसिएशन (वाफा) ने एचआईवी पॉजिटिव व्यक्ति को खिलाड़ी के रूप में पंजीकृत करने से इंकार करके समान अवसर अधिनियम 1995 की धारा–65 (बी) का उल्लंघन किया है। न्यायालय ने कहा कि एचआईवी के ज्ञात वाहकों के साथ भेदभाव अनौचित्यपूर्ण है जबकि परीक्षण नहीं कराने वाले या पहचाने नहीं गये एचआईवी संक्रमित खिलाड़ी उसी तरह के सैद्धांतिक खतरे उत्पन्न करने की आशंका के साथ खेलना बदस्तूर जारी रखे हुए हैं। न्यायालय ने आगे कहा कि 'वाफा' द्वारा संक्रामक रोग संबंधी नीति का कड़ाई से तथा लगातार इस्तेमाल किये जाने के कारण ही एचआईवी संक्रमित खिलाड़ियों से एचआईवी संचरण का खतरा कम होगा, मैथ्यू हॉल पर प्रतिबंध लगाने से नहीं।'

उद्घोषणा और गोपनीयता

किसी बच्चे की एचआईवी स्थिति को अनावश्यक रूप से सार्वजनिक करना गोपनीयता का उल्लंघन है जो कार्रवाई योग्य है। उदाहरण के लिए अमेरिकी न्यायालयों ने यह पाया है कि किसी बच्चे की एचआईवी स्थिति के बारे में स्कूल के कर्मचारियों और छात्रों को अवगत कराने का कोई न्यायोचित औचित्य साबित नहीं होता है।[33]

एचआईवी भेदभाव और शिक्षा : भारतीय परिदृश्य

भारत सरकार ने अनेक अवसरों पर बच्चों और शिक्षा संबंधी मामलों में अपनी प्रतिबद्धता की उद्घोषणा की है। महत्वपूर्ण बात है कि 1992 में भारत सरकार ने बच्चों के अधिकारों पर संयुक्त राष्ट्र घोषणापत्र को स्वीकार कर लिया। योजना आयोग द्वारा प्रकाशित 'इंडिया–विजन 2020' में शिक्षा के मूल्यों को स्पष्ट रूप से मान्यता दी गयी है। इसमें कहा गया है कि : 'समाज और व्यक्ति दोनों की प्रगति के लिए शिक्षा एक महत्वपूर्ण कारक है। नागरिकों को सुनियोजित तरीके से शिक्षा देने से सकल राष्ट्रीय उत्पादों में वृद्धि, सांस्कृतिक संपदा के विकास, सुशासन की क्षमता और कारगरता को बढ़ाने में सहायता मिल सकती है। शिक्षा किसी व्यक्ति के लिए नए आयाम खोलती है, नई उम्मीदें जगाती है और नए मूल्यों को जन्म देती है। यह क्षमताओं को सुदृढ़ और प्रतिबद्धता का विकास करती है। शिक्षा किसी व्यक्ति में सामाजिक और राजनीतिक सच्चाइयों के प्रति

29 कनाडा एड्स रिव्यू – मोंटाल्वो बनाम रेडक्लिफ से उद्धृत, यू एस, संख्या 98–1831, उत्प्रेरण लेख के दावे के लिये याचिका, 12 मई 1999 को दायर, एड्स पॉलिसी एंड लॉ में उद्धृत, 14 (11) : 9

30 मोन्टाल्वो बनाम रेडक्लिफ, चौथा सी आई आर, संख्या – 98–1169

31 कनेडियन लॉ रिव्यू में उद्धृत

32 मैथ्यू हॉल बनाम विक्टोरियन एम्योच्योर फुटबॉल एसोसिएशन, 1999 वी सी ए टी 627 (23 अप्रैल 1999)

33 डिस्ट्रिक्ट 27 कम्युनिटी स्कूल बोर्ड बनाम बोर्ड ऑफ एजुकेशन, 130 विविध, 2 डी 398 (न्यूयॉर्क 1986)

विश्लेषणात्मक दृष्टिकोण पैदा करती है और आत्मपरीक्षण, आत्मनिगरानी और आत्मविश्लेषण की क्षमता पैदा करती है।''[34]

इस उद्घोषणा के बावजूद, भारत सरकार ने शैक्षिक परिसरों में भेदभाव का शिकार होने वाले एचआईवी संक्रमित और इससे प्रभावित बच्चों के अधिकारों की रक्षा के लिए बहुत कम प्रयास किया है। ह्यूमन राइट्स वॉच के अनुसार ऐसे भेदभाव भारत में सामान्य हैं जहां अनेक माता–पिता और शिक्षक विश्वास करते हैं कि एड्स फैलने के लिये आकस्मिक संपर्क काफी है।[35] बंगलूर और मुम्बई में यूएनएड्स की ओर से हुये अध्ययन में भी यह कहा गया है कि इन दोनों जगहों पर गैर सरकारी संगठनों का मानना है कि स्कूल एचआईवी/एड्स संबंधी भेदभाव, कलंक एवं तिरस्कार (डिस्क्रिमिनेशन, स्टिग्मा एंड डिनायल– डीएसडी) के परिसर के रूप में उभर रहे हैं।[36]

इस समस्या का सामना करने के लिए 2004 में राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग के अध्यक्ष ने सिफारिश की कि एड्स से संक्रमित बच्चों को भेदभाव से बचाने, जिसमें स्कूलों के लिए भेदभाव शामिल है, के लिए सरकार कानून बनाए।[37] लेकिन ऐसा कानून नहीं बना।

प्रासंगिक संवैधानिक कानून

86 वें संविधान संशोधन विधेयक के जरिए प्राथमिक शिक्षा के अधिकार को भारतीय संविधान में जीवन के अधिकार का हिस्सा बनाया गया है। तद्नुसार अनुच्छेद–21 (ए) में कहा गया है, ''राज्य छह से चौदह वर्ष की आयु के सभी बच्चों को, जैसा कि राज्य विधि द्वारा निर्धारित करे, निःशुल्क और अनिवार्य शिक्षा उपलब्ध कराएगा।'' शिक्षा अधिकार विधेयक 2005 का लक्ष्य 86 वें संविधान संशोधन को अमल में लाना है।

86 वां संशोधन उन्नीकृष्णन् बनाम आंध्र प्रदेश राज्य मामले[38] में सर्वोच्च न्यायालय के उस निर्णय के बाद किया गया जिसमें शिक्षा के अधिकार को संविधान के भाग 21 में वर्णित जीवन के अधिकार में ही निहित एक मौलिक अधिकार बताया गया था।

भारतीय संविधान में स्कूल परिसरों में एचआईवी भेदभाव से संबंधित कई अन्य प्रावधान भी हैं :

- यह महिलाओं और बच्चों के लिए विशेष सुरक्षा और सकारात्मक कार्रवाई का प्रावधान करता है।[39]
- इसमें इस बात का प्रावधान किया गया है कि राज्य छह वर्ष की आयु पूरी होने तक सभी बच्चों को शुरुआती बाल्यकाल में देखरेख और शिक्षा उपलब्ध कराने का प्रयास करेगा।[40]
- इसमें इस बात की व्यवस्था की गयी है कि राज्य कमजोर वर्ग के लोगों विशेषकर अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति के लोगों के शैक्षिक और आर्थिक हितों को विशेष ध्यान रखकर पूरा करेगा तथा उन्हें सामाजिक अन्याय और सभी प्रकार के शोषण से सुरक्षा मुहैया कराएगा।[41]

चूंकि राज्य को अंतर्राष्ट्रीय कानून और संधि की जिम्मेदारियों को निभाना होता है। इसका अर्थ हुआ कि भारत सरकार और राज्य सरकार बच्चों के अधिकारों पर घोषणा पत्र में वर्णित शर्तों को पूरा करने के लिए प्रतिबद्ध हैं।[42]

---

34 पृष्ठ संख्या 250

35 ह्यूमन राइट्स वॉच, असुरक्षित भविष्य : भारत में एचआईवी/एड्स प्रभावी बच्चे के शोषण (न्यूयॉर्क : ह्यूमन राइट्स वॉच, 2004)

36 यूएनएड्स, भारत : एचआईवी और एड्स संबंधी बदनामी, भेदभाव और वंचना, अगस्त 2001, पृष्ठ 47. http://www.unaids.org/publications/documents/human/lawHR_India.pdf. पर उपलब्ध।

37 मनुपत्रा डॉट कॉम, राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग ने सरकार से एचआईवी/एड्स प्रभावित बच्चों को भेदभाव से बचाने के लिये कहा, नई दिल्ली, 11 अक्टूबर 2004

38 1993 (1) एससीसी 645

39 अनुच्छेद–15(3)

40 अनुच्छेद–45

41 अनुच्छेद–46

42 अनुच्छेद–51 (सी)

निष्कर्ष

एचआईवी भेदभाव और कानून

भेदभाव से मुक्ति का अधिकार अंतर्राष्ट्रीय कानून के अंतर्गत एक मूलभूत अधिकार है। अलग–अलग मात्रा में, विभिन्न वैधानिक उपायों के जरिये एचआईवी संबंधी भेदभाव से लोगों को कानूनी सुरक्षा दिलाने की कोशिश सभी देशों ने की है। कुछ ने एचआईवी/एड्स आधारित भेदभाव के लिये नए अथवा संशोधित अधिनियम बनाये हैं। कुछ देशों में विशेषकर जहां एक समान विधि प्रणाली है, न्यायालयों ने पहले से मौजूद अधिनियमों और न्यायिक सोच में मौजूद मानवाधिकार संबंधी प्रावधानों का उपयोग एचआईवी/एड्स से प्रभावित व्यक्तियों को सुरक्षा उपलब्ध कराने में किया है।[1]

कानूनी रूप से बंधे अंतर्राष्ट्रीय संधियों (इन्स्ट्रूमेंट्स) और राष्ट्रीय/स्थानीय कानूनों के अतिरिक्त एचआईवी संबंधित भेदभाव से प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से निपटने हेतु ऐसी बहुत सी उद्घोषणायें, अनुशंसाएं और कार्य संहितायें हैं जो विभिन्न देशों और अंतर्राष्ट्रीय संस्थानों ने जारी किये हैं। ये कानूनी तौर पर हालांकि बाध्यकारी नहीं हैं, किंतु ये अंतर्राष्ट्रीय मतैक्य और राजनीति प्रतिबद्धताओं का प्रतिनिधित्व अवश्य करती हैं।

इस भाग में एचआईवी भेदभाव से निपटने वाले वैधानिक और नियामक उपायों पर विचार किया गया है। इस भाग में क्रमवार तरीके से अंतर्राष्ट्रीय वैधानिक एवं नियामक उपायों, राज्यों/सरकारों के पास मौजूद विभिन्न कानूनी रणनीतियों (उदाहरण सहित) और अमेरिका, ब्रिटेन, दक्षिण अफ्रीका तथा भारत में एचआईवी संबंधी भेदभाव से निपटने वाले प्रमुख विधायी तंत्र पर विचार किया गया है। रोजगार, स्वास्थ्य, रक्षा और शिक्षा के क्षेत्रों में विशेष तौर पर लागू हो सकने वाले राष्ट्रीय एवं अंतर्राष्ट्रीय मसौदों और दस्तावेजों को उनसे संबंधित अध्यायों में अलग से सूचीबद्ध किया गया है।

अंतर्राष्ट्रीय कानून और नियामक उपाय

संयुक्त राष्ट्र महासभा द्वारा 1948 में पारित मानवाधिकारों पर सार्वभौम घोषणा सभी सदस्य राष्ट्रों द्वारा सहमति के आधार पर गैर भेदभाव का विस्तृत खाका उपलब्ध कराती है।

मानवाधिकारों पर सार्वभौम घोषणा

- **अनुच्छेद–1:** सभी मनुष्य जन्म से आजाद हैं और सम्मान एवं अधिकारों में एक समान हैं। उन्हें विवेक और बुद्धि की शक्तियां प्राप्त हैं और उन्हें एक दूसरे के प्रति भ्रातृ भाव से काम करना चाहिये।
- **अनुच्छेद–2:** नस्ल, लिंग, भाषा, धर्म, राजनीतिक अथवा अन्य राय, राष्ट्रीय या सामाजिक उद्भव, संपत्ति, जन्म या अन्य हैसियत जैसी हर तरह की विशेषताओं के बिना सभी को इस घोषणा में प्रदत्त अधिकारों एवं स्वतंत्रताओं पर पूरा अधिकार है। साथ ही किसी व्यक्ति के खिलाफ राजनीतिक, न्यायक्षेत्र संबंधी या उसके देश या क्षेत्र की अंतर्राष्ट्रीय स्थिति के अनुसार कोई भी भेदभाव नहीं किया जायेगा, चाहे वह क्षेत्र स्वतंत्र हो, ट्रस्ट द्वारा संचालित हो, किसी दूसरे द्वारा शासित हो अथवा किसी अन्य प्रकार की शासन व्यवस्था के तहत हो।
- **अनुच्छेद–3:** सभी को जीवन, स्वतंत्रता और व्यक्तिगत सुरक्षा का अधिकार है।
- **अनुच्छेद–5:** किसी को भी न तो यातना दी जायेगी न ही किसी के प्रति क्रूर अमानवीय या असम्मानजनक व्यवहार किया जायेगा और न ही ऐसी सजा दी जायेगी।

---

1 कार्टियर, एन सी, श्रम की दुनिया में एचआईवी/एड्स से निबटने की कानूनी पहल, एचआईवी/एड्स एवं श्रम की दुनिया पर आईएलओ के कार्यक्रम, 2006, पृष्ठ 13

- **अनुच्छेद–7:** कानून के सामने सभी बराबर हैं और किसी भेदभाव के बिना एक समान कानूनी सुरक्षा के हकदार हैं। इस घोषणा के विरुद्ध किसी भेदभाव और ऐसे भेदभाव के लिये भड़काये जाने के विरुद्ध सुरक्षा पाने के लिये सभी लोग एक समान हकदार हैं।
- **अनुच्छेद–12:** किसी भी व्यक्ति की निजता, उसके परिवार, घर या पत्र व्यवहार में मनमाना हस्तक्षेप नहीं किया जायेगा न ही उसके सम्मान और प्रतिष्ठा पर हमला किया जायेगा। सभी को ऐसे हस्तक्षेप या हमलों के विरुद्ध कानूनी सुरक्षा पाने का अधिकार होगा।

मानवाधिकारों पर हालांकि सार्वभौम घोषणा अपने आप में कानूनन बाध्यकारी नहीं है, लेकिन इसने कानूनी रूप से जरूरी अंतर्राष्ट्रीय मानवाधिकार संधियों के लिये आम सहमति का आधार उपलब्ध कराया है जिनमें आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक अधिकारों पर अंतर्राष्ट्रीय कोवेनेंट (आईसीईएससीआर) और अंतर्राष्ट्रीय नागरिक एवं राजनीतिक अधिकार कोवेनेंट (आईसीसीपीआर) शामिल हैं। सभी प्रमुख अंतर्राष्ट्रीय मानवाधिकार संधियों में भेदभाव से मुक्ति के अधिकार की गारंटी दी गयी है।

नागरिक और राजनीतिक अधिकारों पर अंतर्राष्ट्रीय प्रतिज्ञापत्र (कोवेनेंट)[2]

- **अनुच्छेद–2(1):** वर्तमान कोवेनेंट से जुड़े सभी राष्ट्र अपने भौगोलिक क्षेत्र के भीतर रहने वाले और उसके न्याय क्षेत्र में आने वाले सभी लोगों को इस घोषणापत्र में मान्य अधिकारों को दिलाने और सुनिश्चित करने का वचन देते हैं, इसमें नस्ल, रंग, लिंग, भाषा, धर्म, राजनीतिक, या अन्य विचारधारा, राष्ट्रीय या सामाजिक उत्पत्ति, संपत्ति जन्म या अन्य हैसियत के आधार पर कोई भेदभाव नहीं किया जायेगा।
- **अनुच्छेद–6(1):** प्रत्येक मनुष्य को जीवन का सहज अधिकार प्राप्त है। यह अधिकार कानून द्वारा सुरक्षित होगा। किसी को भी जीवन के अधिकार से निरंकुश तरीके से वंचित नहीं किया जाएगा।
- **अनुच्छेद–7:** न तो किसी को यातना दी जाएगी, न ही किसी के प्रति क्रूर, अमानवीय या असम्माननीय व्यवहार किया जाएगा और न ही सजा दी जाएगी।
- **अनुच्छेद–9(1):** सभी को स्वतंत्रता और व्यक्तिगत सुरक्षा का अधिकार प्राप्त है। किसी को भी मनमाने तरीके से न तो गिरफ्तार किया जाएगा और न ही बंदी बनाया जाएगा। विधि द्वारा स्थापित प्रक्रिया और कारणों के अतिरिक्त किसी की भी आजादी का हनन नहीं किया जाएगा।
- **अनुच्छेद–12 (1):** किसी राष्ट्र की परिधि में कानूनन रहने वाले सभी व्यक्तियों को उस क्षेत्र में कहीं भी आने–जाने और निवास का स्थान चुनने की आजादी होगी।
- **अनुच्छेद–17 (1):** किसी भी व्यक्ति की निजता, परिवार, घर या पत्र व्यवहार में मनमाना या गैर कानूनी हस्तक्षेप नहीं किया जाएगा, न ही उसके सम्मान और प्रतिष्ठा पर गैर कानूनी हमले किये जाएंगे।
- **अनुच्छेद–22 (1):** अपने हितों की रक्षा के लिए ट्रेड यूनियन बनाने और उसमें शामिल होने के अधिकार सहित सभी को अन्य लोगों के साथ मिलने–जुलने की आजादी का अधिकार होगा। (2) राष्ट्रीय सुरक्षा या सार्वजनिक व्यवस्था, जन स्वास्थ्य या सार्वजनिक मूल्यों की सुरक्षा अथवा दूसरे लोगों के अधिकारों और स्वतंत्रताओं की सुरक्षा के हित में किसी लोकतांत्रिक समाज के लिए जरूरी और विधि द्वारा निर्धारित प्रावधानों के अलावा उक्त अधिकार का पालन करने में कोई रोक–टोक नहीं की जाएगी। यह अनुच्छेद सशस्त्र सेनाओं और पुलिस के जवानों एवं कर्मचारियों पर उनके अधिकारों के प्रयोग पर न्यायोचित रोक लगाने में बाधक नहीं बनेगा।

2 संयुक्त राष्ट्र महासभा के प्रस्ताव 2200 ए (XXI), दिनांक 16 दिसंबर 1966 द्वारा हस्ताक्षर, सहमति और अंगीकरण के लिए स्वीकृत और सामने रखा गया। भाग 49 के अनुसरण में 23 मार्च 1976 से प्रभावी। http://www.unhchr.ch/html/menu3/b/a_ccpr.htm पर उपलब्ध

- **अनुच्छेद–26:** कानून की नजर में सभी बराबर हैं और किसी भेदभाव के बिना एक समान कानूनी सुरक्षा पाने के हकदार हैं। इस मामले में कानून सभी भेदभावों पर रोक लगाएगा और नस्ल, रंग, लिंग, भाषा, धर्म, राजनैतिक या अन्य विचारधारा, राष्ट्रीय या सामाजिक उत्पत्ति, सम्पत्ति, जन्म या अन्य किसी हैसियत– जैसे किसी आधार पर भेदभाव के विरुद्ध सभी लोगों को बराबर और प्रभावी सुरक्षा की गारंटी देगा।

अंतर्राष्ट्रीय आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक अधिकार कोवेनेंट[3]

- **अनुच्छेद–1(2):** आपसी लाभ के सिद्धांत पर आधारित अंतर्राष्ट्रीय आर्थिक सहयोग और अंतर्राष्ट्रीय कानूनों से उपजने वाली किसी बाध्यता के प्रति पूर्वाग्रह के बिना सभी लोग अपने लाभ के लिए, अपनी प्राकृतिक संपत्ति और संसाधनों का निःशुल्क निपटारा कर सकते हैं। किसी भी सूरत में किसी को भी जीविका के संसाधनों से वंचित नहीं किया जायेगा।
- **अनुच्छेद–(2):** वर्तमान कोवेनेंट में शामिल सभी राष्ट्र यह गारंटी देने का वचन देते हैं कि इस घोषणा पत्र में उल्लिखित अधिकारों को किसी भेदभाव के बिना मुहैया कराया जाएगा। मिसाल के तौर पर नस्ल, रंग, लिंग, भाषा, धर्म, राजनैतिक या अन्य राय, राष्ट्रीय या सामाजिक उत्पत्ति, संपत्ति, जन्म या अन्य कोई हैसियत जैसे भेदभाव।
- **अनुच्छेद–9:** वर्तमान कोवेनेंट में शामिल सभी राष्ट्र सामाजिक बीमा सहित सभी के लिए सामाजिक सुरक्षा के अधिकार को मान्यता देते हैं।

तथापि अंतर्राष्ट्रीय कानून भेदभाव के विरुद्ध मूलभूत मानवाधिकारों में अपवादों को भी मान्यता देते हैं।[4] किसी एचआईवी संक्रमित (पॉजिटिव) व्यक्ति से रक्तदान स्वीकार नहीं करके सार्वजनिक स्वास्थ्य को सुरक्षित करने जैसे कुछ व्यापक लक्ष्यों के हित में कुछ पूर्ण परिभाषित परिस्थितियों में भेदभाव औचित्यपूर्ण भी हो सकता है। एचआईवी/एड्स से प्रभावित व्यक्ति के प्रति भेदभावजन्य उपायों को दो शर्तों पर अवश्य खरा उतरना चाहिये। पहला, यह कि भेदभावजन्य कार्य सार्वजनिक स्वास्थ्य, दूसरों के अधिकार, नैतिकता, सार्वजनिक व्यवस्था और राष्ट्रीय सुरक्षा जैसे कानूनी रूप से मान्य किसी उद्देश्य की प्राप्ति के लिये हों। दूसरा, इस भेदभाव की वजह और एचआईवी/एड्स के स्वरूप पर भी विचार किया जाये। उदाहरण के लिए यदि इसकी वजह संक्रमण के फैलाव को रोकना है तो संक्रमण के संभावित तरीकों पर विचार करना महत्वपूर्ण होगा (यौन संबंध, रक्त और मां से बच्चे को)। इसका अर्थ हुआ कि रक्त दाताओं के एचआईवी संबंधी परीक्षण करना औचित्यपूर्ण हो सकता है, मगर किसी प्रकार के रोजगार के लिए आवेदकों को ऐसी जांच प्रक्रिया से गुजारना औचित्यपूर्ण नहीं होगा। एक बार दोनों शर्तों को पूरा कर लेने पर भी उपलब्ध न्यूनतम प्रतिबंधकारी उपाय अपनाने चाहिये और ये सुनिश्चित करना चाहिये कि किसी व्यक्ति के गैर भेदभाव के अधिकार के हनन के अनुपात में लाभ मिले।[5]

राष्ट्रीय स्तर के कानून

मानवाधिकार/भेदभाव विरोधी कानून

भेदभाव विरोधी और मानवाधिकार अधिनियम का स्पष्ट उद्देश्य मूलभूत अधिकारों और स्वतंत्रताओं की रक्षा करना है। इन कानूनों के अंतर्गत दायर किये जाने वाले मामले ऐसे मसलों पर विशेष तौर पर विचार करने वाले

3 संयुक्त राष्ट्र महासभा के प्रस्ताव 2200 ए (XXI), दिनांक 16 दिसंबर 1966 द्वारा हस्ताक्षर, सहमति और अंगीकरण के लिए स्वीकृत और खोला गया भाग 27 के अनुसरण में 3 जनवरी 1976 से प्रभावी। http://www.unhchr.ch/html/menu3/b/a_cescr.htm पर उपलब्ध

4 यह भाग यूएन एड्स (2002) में प्रस्तुत कानूनी विश्लेषण और उदाहरण का अनुसरण करता है। एचआईवी ग्रस्त लोगों के खिलाफ भेदभाव की पहचान के लिए मूलपत्र। जेनेवा : यूएन एड्स, पृष्ठ 6

5 वही, पृष्ठ 8

न्यायालयों के समक्ष लाये जाते हैं और उन्हें भेदभाव और अधिकार संबंधी मामलों में अच्छे अनुभव का लाभ मिलता है। भेदभाव विरोधी और मानव अधिकार अधिनियम आमतौर पर किसी कृत्य के स्रोत को सजा देने की बजाय उसे शिक्षित करने और सुधार के उपाय करने का लक्ष्य रखते हैं, जो किसी अधिकार के हनन से हुए अन्याय को दूर करता है।[6]

वर्ष 2002 में पारित रोमानिया का आपातकालीन अध्यादेश संख्या 137/2000 सभी प्रकार के भेदभाव को रोकने और सजा देने का प्रयास करता है। अध्यादेश में कई आधारों पर भेदभाव को प्रतिबंधित किया गया है जिससे एचआईवी/एड्स से संक्रमित लोगों जैसी नकारात्मक श्रेणी का हिस्सा होना शामिल है।[7]

विकलांगता संबंधी कानून

विकलांगता संबंधी कई कानून अक्षम लोगों को भेदभाव से बचाने और उन्हें जहां तक संभव हो समाज में पूरी तरह अंगीकृत करने का प्रयास करते हैं। ऐसे कानूनों में कई बार विस्तार से विकलांग लोगों की मदद के लिए औचित्यपूर्ण रियायतें देने संबंधी प्रावधान होते हैं। इसलिए ऐसे कानून एचआईवी ग्रस्त जैसे लोगों को सुरक्षा मुहैया कराने में बेहद उपयोगी हो सकते हैं जो काम करने या पढ़ाई करने के काबिल हैं। विभिन्न देशों में एचआईवी/एड्स पर लागू अक्षमता अधिनियमों का क्षेत्र भिन्न–भिन्न है, जो कानूनों में विकलांगता की परिभाषा और न्यायालयों द्वारा व्याख्या पर आधारित है।

अमेरिका के विकलांगता कानून के अंतर्गत किसी एचआईवी पॉजिटिव व्यक्ति को तब तक विकलांग नहीं माना जाता जब तक यह साबित न हो जाए कि एचआईवी जीवन की किसी महत्वपूर्ण गतिविधि को प्रतिबंधित करता है।[8] इससे उलट, चीन का विकलांगता भेदभाव अध्यादेश शरीर में रोग फैलाने वाले कीटाणुओं की उपस्थिति को विकलांगता में शामिल करता है। इस प्रकार इस परिभाषा की वजह से एचआईवी संक्रमित लोग स्वतः ही इस अध्यादेश के अंतर्गत सुरक्षित हो जाते हैं जिनमें एड्स के कोई लक्षण नहीं हैं।[9]

एचआईवी/एड्स संबंधी विशिष्ट कानून

एचआईवी/एड्स से संबंधित विशिष्ट कानून इस बारे में वैधानिक कार्रवाई के प्रति एक स्पष्ट और संगठित दृष्टिकोण उपलब्ध कराते हैं। आमतौर पर ये कानून एचआईवी/एड्स से संबंधित प्रमुख मुद्दों का समग्र रूप से प्रतिपादन करते हैं और इस प्रकार विधि द्वारा उपलब्ध कराई जा रही पूरी सुरक्षा तक पहुंच को आसान बनाते हैं। एचआईवी/एड्स के कानूनों को न्यायालयों की व्याख्या की कम आवश्यकता पड़ती है, क्योंकि यह काफी विस्तृत और स्पष्ट तौर पर परिभाषित होते हैं।[10]

फिलीपींस का एड्स रोकथाम और नियंत्रण कानून ऐसा ही एक विस्तृत और समग्र कानून है। जैसा कि इसके शीर्षक से स्पष्ट है इस अधिनियम का मुख्य उद्देश्य एचआईवी/एड्स के फैलाव को रोकना और नियंत्रित करना है। साथ ही यह एचआईवी संक्रमित के रूप में पहचाने गये या संदिग्ध लोगों के मानव अधिकारों और नागरिक स्वतंत्रताओं को भी पूरा संरक्षण प्रदान करता है।[11]

एक इससे भी अधिक विस्तृत कानून है कोस्टारिका का वर्ष 1998 का एचआईवी/एड्स संबंधी आम कानून और 1999 के रेगुलेशंस (नियमन)। रोकथाम और नियंत्रण के उपायों के अतिरिक्त यह कानून एचआईवी संक्रमित लोगों, उनके परिवारों और निकट सहयोगियों को रोजगार और शिक्षा के भेदभाव से बचाता है।[12]

6 कार्टियर, एमसी (2005), पृष्ठ 7
7 हॉजेज, जे., (2004), रोजगार और श्रम कानून के जरिये कार्यस्थल पर एचआईवी/एड्स से निबटने के दिशानिर्देश, सामाजिक वार्तालाप पर केंद्रित कार्यक्रम, श्रम कानून और श्रम प्रशासन, पृ. 34
8 कार्टियर एमसी (2005), पृ. 8
9 वही, पृ 25
10 वही, पृ 8
11 हॉजेज जे (2004), पृ. 18
12 कार्टियर एम सी (2005), पृ 4–5

क्षेत्र विशेष संबंधी कानून

एचआईवी/एड्स आधारित भेदभाव को उन कानूनों के सहारे ही लड़ा जा सकता है जो उन क्षेत्रों के लिए विशिष्ट तौर पर बने हों जहां ऐसे भेदभाव हुये हों। अधिकतर देशों में श्रम, स्वास्थ्य सेवा और शिक्षा के लिए अलग–अलग कानून हैं। ये कानून प्रत्येक क्षेत्र के संदर्भ में मुद्दे पर विचार करने की सुविधा प्रदान करते हैं।

श्रम और रोजगार से संबंधित विशिष्ट कानून बहुतायत में हैं। एचआईवी/एड्स आधारित भेदभाव को विकलांगता/अक्षमता या अन्य आधारों पर अप्रत्यक्ष रूप से रोका जा सकता है, या किसी देश का कानून एचआईवी/एड्स को एक पृथक मुद्दे की तरह देख सकता है। उदाहरण के लिए जिम्बाब्वे के श्रम संबंधी कानून (लेबर रिलेशंस एक्ट) में 1998 का श्रम संबंध (एचआईवी/एड्स) नियमन और 2002 का श्रम संबंधी संशोधन कानून (लेबर रिलेशंस अमेंडमेंट एक्ट) शामिल हैं। इन कानूनों के जरिये रोजगार के विभिन्न क्षेत्रों एवं दायरों में एचआईवी/एड्स के मामलों का निबटारा किया जाता है जिनमें भेदभाव और कार्यस्थल पर एचआईवी संचरण को रोकने के सुरक्षा उपाय भी शामिल हैं। जबकि 2002 के संशोधन कानून के तहत नियोक्ता द्वारा किसी कर्मचारी या प्रार्थी के साथ उसकी एचआईवी संबंधी स्थिति के आधार पर भेदभाव को प्रतिबंधित किया गया है।[13]

अमेरिका, ब्रिटेन, दक्षिण अफ्रीका और भारत में लागू कानूनी उपाय

अमेरिका

अमेरिकी संविधान में 14वां संशोधन[14]

14 वें संशोधन के अनुसार, "कोई ..... राज्य....... समुचित कानूनी प्रक्रियाओं के बिना किसी व्यक्ति को जीवन, स्वतंत्रता या संपत्ति से वंचित नहीं कर सकता है; न ही अपने न्याय क्षेत्र में किसी व्यक्ति को एक समान कानूनी संरक्षण प्रदान करने से इंकार करेगा।"

- **1998 में संशोधित पुनर्वास कानून 1973**[15]**:** अक्षमता या विकलांग लोगों के लिए अवसरों की समानता सुनिश्चित करने की दिशा में पुनर्वास कानून अमेरिका का पहला प्रमुख विधायी प्रयास था। इसमें विकलांगता से ग्रस्त व्यक्ति को ऐसे व्यक्ति के रूप में परिभाषित किया गया है– जिसे जीवन की एक या एक से अधिक मुख्य गतिविधियों को बाधित करने वाली कोई शारीरिक या मानसिक विकृति हो और जिसकी ऐसी विकृति का कोई रिकार्ड हो; या जिसे ऐसी विकृति से ग्रस्त होने का विश्वास किया जा सकता हो।
- **पुनर्वास कानून की धारा–504 (ए) में इस बात का प्रावधान किया गया है कि :** अन्य तरीकों से योग्य किसी व्यक्ति, जिसे धारा–7 (20) में परिभाषित कोई अक्षमता/विकलांगता हो, को संघीय वित्तीय सहायता से संचालित किसी कार्यक्रम या गतिविधि, अथवा किसी कार्यकारी एजेंसी या यूनाइटेड स्टेट्स पोस्टल सर्विसेज (अमेरिकी डाक सेवा) द्वारा संचालित किसी कार्यक्रम या गतिविधि में उसकी अक्षमता/ विकलांगता की वजह से, भाग लेने से या उसके लाभ लेने से न तो रोका जाएगा न ही किसी तरह का भेदभाव किया जायेगा।

---

13 वही, पृ. 6

14 http://www.usconstitution.net पर उपलब्ध (जुलाई 2006 में डाउनलोड किया)

15 http://www.blind.net/bg320001.htm पर उपलब्ध (जुलाई 2006 में डाउनलोड किया)

- **विकलांगता/अक्षमता से ग्रस्त अमरीकियों के लिए कानून (एडीए) 1990[16]:** अक्षमता या विकलांग लोगों को समान अवसर प्रदान करने की दिशा में यह एक सर्वाधिक समग्र कानून है जो विभिन्न निजी और सार्वजनिक क्षेत्रों में भेदभाव का निषेध करता है। इसमें किसी अपंग/विकलांग व्यक्ति की परिभाषा पुनर्वास कानून में प्रदत्त परिभाषा के समान है और इस कानून का लाभ अक्षमता या विकलांग को भी उपलब्ध है।
- **अमेरिकी विकलांगता/अक्षमता कानून (एडीए) के भाग 302 के अनुसार** किसी सार्वजनिक स्थान का स्वामित्व या ठेके के आधार पर संचालन करने वाले क़िसी व्यक्ति द्वारा ऐसे सार्वजनिक स्थान पर आने और वहां उपलब्ध वस्तुओं, सेवाओं, सुविधाओं, प्राथमिकताओं या अन्य लाभों के पूरे और एकसमान उपभोग में विकलांगता या अक्षमता के आधार पर क़िसी व्यक्ति के साथ भेदभाव नहीं किया जायेगा।

न तो पुनर्वास कानून में और न ही विकलांगता/अक्षमता कानून (एडीए) में किसी रोग या किसी स्थिति का वर्णन किया गया है। किंतु स्कूल बोर्ड ऑव नसाउ काउंटी बनाम अर्लिन 1987[17] मामले में सर्वोच्च न्यायालय ने पुनर्वास कानून के तहत किसी विकलांग व्यक्ति की परिभाषा के बारे में एक व्यापक निर्णय सुनाया जिसे आमतौर पर एचआईवी या एड्स ग्रस्त व्यक्तियों पर लागू होना माना गया। एक अन्य प्रमुख मामले – ब्रैग्डन बनाम एबट 1996[18] में सर्वोच्च न्यायालय ने निर्धारित किया कि अक्षमता या विकलांग अमेरिकियों के लिये कानून (एडीए) के अंतर्गत एचआईवी संक्रमित व्यक्ति, जिसमें भले ही एड्स सांकेतिक लक्षण हों, विकलांगता/अक्षमता से ग्रस्त माना जा सकता है। न्यायालय ने हालांकि यह कहने से परहेज किया कि इस कानून में एचआईवी संक्रमित सभी व्यक्ति शामिल हैं, मगर इतना अवश्य कहा कि ''जीवन की मुख्य गतिविधियां' वाले भाग पर व्यापक तौर पर विचार किया जाना चाहिये।

टोयोटा मोटर मैन्युफैक्चरिंग केंटकी, इंक. बनाम विलियम्स मामले[19] में हालांकि न्यायालय ने विकलांगता कानून (एडीए) में अक्षमता/विकलांगता की परिभाषा की अधिक बारीक व्याख्या प्रस्तुत की। इसके परिणामस्वरूप अब यह साबित करना आवश्यक है कि एचआईवी के कारण जीवन की कोई मुख्य गतिविधि व्यापक रूप से बाधित हो रही है और तभी इसे विकलांगता के रूप में स्वीकार किया जाएगा। इसने लक्षण विहीन एचआईवी संक्रमित लोगों के लिए संघीय कानून के अंतर्गत सुरक्षा पाने की संभावना पर प्रभाव डाला है।

ब्रिटेन

विकलांगता भेदभाव कानून (डीडीए) 1995[20]

ब्रिटेन के इस कानून में रोजगार, शिक्षा, वस्तुओं, सुविधाओं, सेवाओं और परिसरों तक पहुंच और सार्वजनिक परिवहन के क्षेत्र में विकलांग व्यक्तियों को अधिकार प्रदान किये गये हैं। इसके अंतर्गत विकलांग किसी व्यक्ति को उस व्यक्ति के रूप में परिभाषित किया गया है जो किसी ऐसी शारीरिक या मानसिक विकृति से ग्रस्त हो, जिसका उसके सामान्य रोजमर्रा की गतिविधियों पर पर्याप्त और दीर्घकालिक प्रभाव पड़ता हो। वर्ष 2005 से पूर्व एचआईवी ग्रस्त लोगों पर यह कानून (डीडीए) केवल उन स्थितियों में ही लागू होता था जब रोग सूचक लक्षण प्रकट हो चुके हों या जिनमें एचआईवी साबित हो चुका हो, मगर विकलांगता भेदभाव विधेयक, 2003 के क्रियान्वित होने के बाद से यह कानून एचआईवी ग्रस्त लोगों के लिये उसी समय से लागू हो जाता है जिस समय से उनमें एचआईवी की पहचान होती है।

---

16 http://www.dol.gov/esa/regs/statutes/ofccp/ada.htm पर उपलब्ध (जुलाई 2006 में डाउनलोड किया)

17 स्कूल बोर्ड ऑव नसाउ कांउटी बनाम एर्लिन, 1987, 480 यू एस 273

18 ब्रैग्डन बनाम ऐबट, 524, यू एस 624, 118 एस सी टी 2196 (1996)

19 टोयोटा मोटर मैन्युफैक्चरिंग, केंटकी, इंक. बनाम विलियम्स सं. 00–169, 8 जनवरी 2002 (2002) एससीटी–क्यूएल 5

20 http://www.opsi.gov.uk/acts/acts1995/1995050.htm पर उपलब्ध (जुलाई 2006 में डाउनलोड किया)

मानव अधिकार कानून (एचआरए) 1998[21]

ब्रिटेन में विशिष्ट मानव अधिकार कानून (एचआरए) भी है : मानव अधिकार कानून 1998 अक्टूबर 2000 से प्रभाव में आया और इसमें मानव अधिकारों पर यूरोपीय समझौता (ईसीएचआर) में निर्दिष्ट कुछ अधिकारों और स्वतंत्रताओं को भी शामिल किया गया। इस कानून के अनुच्छेद–14 के तहत भेदभाव निषिद्ध है। लेकिन अनुच्छेद–14 स्व प्रमाणित स्वच्छंद अधिकार नहीं देता। इस अनुच्छेद के अनुसार भेदभाव के दावे किसी अनुच्छेद या अन्य अनुच्छेदों के संदर्भ में ही किये जा सकते हैं, जैसे जीने के अधिकार, आजादी या निजी और पारिवारिक जीवन के लिए सम्मान का अधिकार। इसके अलावा इसके लिये केवल सरकारी अधिकारी को ही जवाबदेह बनाया जा सकता है।

दक्षिण अफ्रीका

संविधान और अधिकार विधेयक, धारा-9, 1996[22]

दक्षिण अफ्रीका के संविधान में समानता संबंधी एक धाशा है जिसमें कहा गया है कि अधिकार विधेयक में प्रदत्त अधिकार और स्वतंत्रता सबको समान रूप से उपलब्ध है। संविधान की धारा–9 नस्ल, लिंग, गर्भावस्था, वैवाहिक स्थिति, जातीय या सामाजिक उत्पत्ति, रंग, यौन अभिरुचियों, आयु, विकलांगता, धर्म, विचारधारा, विश्वास, संस्कृति, भाषा और जन्म जैसे एक या अधिक आधार पर भेदभाव को निषिद्ध करती है। साथ ही इसमें अन्याय पूर्ण भेदभाव को रोकने या निषिद्ध करने और समानता की प्राप्ति को बढ़ावा देने के लिए राष्ट्रीय कानून बनाने की व्यवस्था भी की गयी है। एचआईवी/एड्स को हालांकि अलग से किसी आधार के रूप में सूचीबद्ध नहीं किया गया है, किन्तु न्यायालय यह निर्णय दे सकते हैं कि एचआईवी/एड्स पर आधारित भेदभाव विकलांगता या अन्य सूचीबद्ध आधारों पर आधारित है।

समानता को बढ़ावा देने और अन्यायपूर्ण भेदभाव की रोकथाम करने संबंधी अधिनियम (2000 की सं. 4)[23]

समानता को बढ़ावा देने और अन्यायपूर्ण भेदभाव की रोकथाम करने संबंधी अधिनियम संविधान की धारा–9 को अभिव्यक्ति प्रदान करता है और संविधान में सूचित आधारों के समान ही अन्यायपूर्ण भेदभाव को प्रतिबंधित करता है। महत्वपूर्ण यह है कि यह अधिनियम समानता न्यायालयों की स्थापना की व्यवस्था करता है। ये न्यायालय इस मायने में अनोखे हैं कि यहां पहुंच आसान है और इनकी कानूनी प्रक्रिया सरल है। राज्य और "किसी व्यक्ति" दोनों द्वारा भेदभाव निषिद्ध है।

भारत

भारत में फिलहाल एचआईवी पॉजिटिव (संक्रमित) की स्थिति के आधार पर भेदभाव के खिलाफ सुरक्षा देने वाला कोई कानून नहीं है। कई अन्य देशों के विकलांगता संबंधी कानूनों के मुकाबले भारत का विकलांगता से ग्रस्त व्यक्तियों के लिये अधिनियम (समान अधिकार, अधिकारों की सुरक्षा और पूर्ण भागीदारी), 1995[24] में विकलांगता की संकीर्ण परिभाषा दी गयी है, जिसमें एचआईवी/एड्स को शामिल नहीं किया गया है। भारत में एचआईवी/एड्स से ग्रस्त लोगों को भेदभाव के विरुद्ध संरक्षण पाने के लिए संविधान और सामान्य कानूनों की शरण में जाना होता है। किंतु संविधान केवल सार्वजनिक क्षेत्र में होने वाले भेदभाव को स्पष्ट तौर पर निषिद्ध करता है। एक प्रकार से निजी क्षेत्र भेदभाव के आरोपों के प्रति कानूनन जवाबदेह नहीं है, हालांकि जीने के अधिकार जैसे अन्य संवैधानिक अधिकारों के उल्लंघन का दावा करना संभव है।

---

21 http://www.opsi.gov.uk/ACTS/acts1998/19980042.htm पर उपलब्ध (जुलाई 2006 में डाउनलोड किया)

22 http://www.polity.org.za/html/govdocs/constitution/saconst.html? rebookmark =1पर उपलब्ध (जुलाई 2006 में डाउनलोड किया)

23 http://www.info.gov.za.gazette/acts/2000/a4-00.pdf पर उपलब्ध (जुलाई 2006 में डाउनलोड किया)

24 http://www.disabilityindia.org/pwdacts.cfm पर उपलब्ध (जुलाई 2006 में डाउनलोड किया)

भारतीय संविधान[25]

- **अनुच्छेद–14:** कानून के सामने समानता : राज्य किसी व्यक्ति को कानून के जरिये समानता देने या अपने क्षेत्र के भीतर कानूनों के समान संरक्षण से इंकार नहीं करेगा।
- **अनुच्छेद–15:** धर्म, नस्ल, जाति, लिंग या जन्म स्थान के आधार पर भेदभाव का निषेध : (1) राज्य धर्म, नस्ल, जाति, लिंग, जन्म स्थान या इनमें से किसी एक के आधार पर किसी नागरिक के विरुद्ध भेदभाव नहीं करेगा; (2) किसी नागरिक को धर्म, नस्ल, जाति, लिंग, जन्म स्थान या इनमें से किसी एक कारण से (ए) दुकानों, सार्वजनिक रेस्तराओं, होटलों और सार्वजनिक मनोरंजन स्थलों तक पहुंच; या (बी) कुओं, तालाबों, नहाने के घाटों, सड़कों और सार्वजनिक उपयोग के ऐसे स्थानों के उपयोग के संबंध में विकलांगता, देनदारी या प्रतिबंध या शर्त के अधीन नहीं करेगा जो पूर्णतया या अंशतः राज्य द्वारा वित्त पोषित हों या आम जनता के इस्तेमाल के लिए संमर्पित हों।
- **अनुच्छेद–21:** जीवन की सुरक्षा और व्यक्तिगत आजादी : विधि द्वारा स्थापित प्रक्रियाओं के अलावा किसी व्यक्ति को उसके जीवन या व्यक्तिगत आजादी से वंचित नहीं किया जाएगा।

एचआईवी भेदभाव और एचआईवी संचरण का खतरा

जैसा कि पहले देखा गया है कि कानून की निगाह में भेदभाव का वैध या अवैध होना इस बात पर निर्भर करता है कि क्या किसी विषमतापूर्ण व्यवहार को उद्देश्य, अनुपात या परिणाम के आधार पर उचित ठहराया जा सकता है या नहीं।[26] अंतर्राष्ट्रीय और राष्ट्रीय कानूनों के अंतर्गत भेदभाव से सुरक्षा के लोगों के अधिकार के बारे में सार्वजनिक स्वास्थ्य का मामला अपवाद हो सकता है।

इस परिप्रेक्ष्य में एचआईवी संचरण के माध्यमों और उससे जुड़े खतरों को समझना, साथ ही साथ इन खतरों का युक्तिपूर्वक समायोजन करना, एचआईवी संबंधी भेदभाव की कानूनी जांच के लिए महत्वपूर्ण है। एचआईवी संचरण के बारे में नीचे दी गयी जानकारी रोग नियंत्रण केन्द्रों (सीडीसी)[27] और अमेरिकन एकेडमी ऑव पीडिएट्रिक्स[28] से उपलब्ध जानकारी से सीधे उद्‌धृत की गयी है।

एचआईवी संक्रमण के स्रोत और संक्रमण के खतरे[29]

सेरिब्रोस्पाइनल द्रव, मानव दुग्ध, वीर्य, योनि एवं सर्विकल स्राव, एम्नियोटिक तरल, थूक, अश्रु और साइनोवियल, प्ल्युरल, पेरिटोनियल द्रवों सहित शारीरिक द्रवों और रक्त में एचआईवी संक्रमण उपस्थित हो सकता है। रक्त से संक्रमित होने वाले अन्य शारीरिक द्रवों और स्रावों में भी एचआईवी विषाणु मौजूद हो सकते हैं और ये संचरण के खतरे बन सकते हैं।

शरीर के सभी द्रव जिनमें एचआईवी मौजूद हों, सैद्धांतिक रूप से खतरे उत्पन्न कर सकते हैं, किन्तु कुछ पदार्थ (जैसे अश्रु, पेशाब और मल) संक्रमण के खतरे नहीं उत्पन्न करते। एचआईवी संचरण के लिए विषाणु की पर्याप्त मात्रा और संक्रमणवाहक कोशिकाओं के प्रवेश के लिए मार्ग का होना आवश्यक है। जिन तीन सर्वस्वीकृत माध्यमों/तरीकों से एचआईवी संचरण होते हैं, वे नीचे दिए गए हैं :

1. एचआईवी संक्रमित माता से नवजात शिशु को – गर्भावस्था, प्रसव या स्तनपान के दौरान,

25 http://lawmin.nic.in/legislative/Art1-242%20(1-88).doc पर उपलब्ध (जुलाई 2006 में डाउनलोड किया)

26 यूएन एड्स, (2000 ए), पृ 7

27 सीडीसी फैक्टशीट : एचआईवी और उसका संक्रमण, जुलाई 1999 http://www.cdc.gov/hiv/resources/factsheets/print/tansmission.htm पर उपलब्ध (जुलाई 2006 में डाउनलोड किया)

28 अमेरिकन एकेडमी आफ पीडिएट्रिक्स (1999), स्कूलों, बाल देखभाल, चिकित्सा परिसरों, घरों और समाज में एचआईवी संचरण संबंधी मामले, पीडिएट्रिक्स, खंड 104, संख्या 2, अगस्त 1999, पृ. 318–324

29 पीडिएट्रिक्स, खंड 104, संख्या 2, अगस्त 1999, पृ. 318–324 से लिया गया

2. संक्रमित रक्त या रक्त युक्त ऊतकों के प्रत्यक्ष संचारण (इनोकुलेशन), जिनमें रक्त चढ़ाना, अंगों या ऊतकों का प्रत्यारोपण, और संक्रमित सुइयों का प्रयोग आदि शामिल हैं;
3. सेक्स पार्टनरों के बीच – संक्रमित वीर्य, योनि या सर्विकल स्रावों या श्लेष्मा झिल्ली वाले रक्त के साथ संपर्क होने पर।

विषाणुओं की अधिक मात्रा होने से एचआईवी संक्रमण की आशंका में वृद्धि होती है इसलिए संचारित सामग्रियों में एचआईवी की उपस्थिति, संचारित द्रव्य या रक्त की मात्रा और संपर्क के मार्ग (इंट्रावेनस बनाम त्वचा या श्लेष्मल झिल्ली संपर्क) रोग संचरण के खतरे में योगदान कर सकते हैं। खतरे का अधिक या कम होना संपर्क के प्रकार पर निर्भर होता है। संक्रमित रक्त के संचारित किये जाने पर संक्रमण होने का खतरा अनुमानतः 95 प्रतिशत माना गया है। संक्रमित माता, जो एंटीरेट्रोवायरल थेरेपी नहीं ले रही हो, से उसके नवजात शिशु को रोग संचरण का खतरा अमेरिका और यूरोप में 15 से 30 प्रतिशत के बीच आंका गया है। एचआईवी संक्रमित रक्त से एक बार परक्युटेनियस एक्सपोजर होने के बाद संचरण के खतरे की संभावनाओं के अध्ययन पर यह 0.2 प्रतिशत (95 प्रतिशत कान्फिडेन्स इन्टरवल (सीआई), 0.1 प्रतिशत – 0.5 प्रतिशत) और म्यूकस मेम्ब्रेन (श्लेष्मा झिल्ली) एक्सपोजर पर 0.1 प्रतिशत (95 प्रतिशत सीआई, 0.01 प्रतिशत – 0.5 प्रतिशत) पाया गया है।

घर की देखभाल जैसी सामान्य रोजमर्रा की गतिविधियों के जरिए संक्रमित बच्चों या वयस्कों से किसी स्वस्थ्य व्यक्ति को एचआईवी संक्रमण होने की आशंका नगण्य है और ऐसी हालत में एचआईवी संक्रमण होने का संबंध अनजाने में संक्रमित रक्त या संक्रमित शारीरिक द्रवों के संपर्क में आना हो सकता है।

एचआईवी संचरण से संबंधित आम अवधारणाएं

एचआईवी संचरण से संबंधित सामान्य गलतफहमियों को समझने की दिशा में रोग नियंत्रण केन्द्र (सीडीसी) निम्नलिखित मुद्दों के बारे में जानकारियां उपलब्ध कराते हैं[30]:

घर-परिवार

घरेलू परिवेश में परिवार के सदस्यों के बीच हालांकि एचआईवी संचरण के मामले हुए हैं किंतु ये नगण्य ही हैं। ऐसा माना जाता है कि यह संचरण त्वचा या श्लेष्मा झिल्ली और संक्रमित रक्त के बीच संपर्क के परिणामस्वरूप होता है। कभी–कभार होने वाली ऐसी घटनाओं की रोकथाम के लिए घरेलू परिवेश सहित सभी परिवेशों में सावधानियां बरती जानी चाहिए ताकि एचआईवी संक्रमित या संक्रमण के खतरे वाले लोगों और ऐसे लोगों के रक्त के संपर्क में आने से बचाया जा सके जिनके एचआईवी संक्रमण या खतरे की स्थिति अज्ञात है।

व्यापार और अन्य परिवेश

खाद्य सेवा प्रतिष्ठानों जैसे उद्योगों में संपर्क के जरिये सहकर्मियों, ग्राहकों या उपभोक्ताओं को एचआईवी संचरण का कोई खतरा नहीं होता है। ऐसे उद्योगों में खाद्य सेवा प्रदान करने वाले एचआईवी संक्रमित कर्मचारियों को तब तक काम करने से नहीं रोका जाना चाहिये जब तक कि उन्हें अन्य प्रकार के संक्रमण या रोग नहीं हो (जैसे दस्त या हेपेटाइटिस ए) जिसके कारण काम करने से रोका जा सकता है, भले ही उन्हें एचआईवी संक्रमण हो या नहीं। सीडीसी की अनुशंसा है कि सभी खाद्य कर्मी व्यक्तिगत साफ–सफाई और खाद्य शुद्धता के स्थापित मानदंडों और प्रक्रियाओं का पालन करें।

वर्ष 1985 में सीडीसी ने सभी व्यक्तिगत सेवा कर्मियों (जैसे नाइयों, केश विन्यासकर्मियों, सौंदर्यकर्मियों, और मालिश करने वालों) के लिये सामान्य सावधानियां जारी की हैं, हालांकि ऐसे किसी कर्मी से ग्राहक को या किसी ग्राहक से कर्मी को एचआईवी संचरण का कोई प्रमाण अभी तक नहीं मिला है।

---

30 सीडीसी फैक्टशीट : एचआईवी और उसका संचरण, जुलाई 1999

सीडीसी को गोदने या छेदने के जरिये एचआईवी संचरण के किसी मामले की कोई जानकारी नहीं है, हालांकि ऐसे कामों के दौरान हेपेटाइटिस बी विषाणुओं का संक्रमण हुआ है। एक्यूपंक्चर से एचआईवी संचरण का एक मामला प्रकाश में आया है।

चुम्बन

बंद मुंह से या शिष्टाचार के साथ "सामाजिक" चुंबन के जरिये कभी–कभार होने वाले संपर्क से एचआईवी संचरण का खतरा नहीं होता है। "फ्रेंच" या खुले मुंह से चुंबन लेने के दौरान रक्त से संपर्क की संभावना के चलते सीडीसी ने किसी संक्रमित व्यक्ति के साथ ऐसी गतिविधि में लिप्त होने से बचने की सलाह दी है। सीडीसी ने एचआईवी संक्रमण के एक ऐसे मामले की जांच की है जिसके बारे में खुले मुंह से चुंबन लेने के दौरान रक्त से संपर्क होने की बात कही गयी थी।

दांत से काटना

वर्ष 1997 में सीडीसी ने राज्य स्वास्थ्य विभाग की ओर से की गयी जांच के निष्कर्षों को प्रकाशित किया जिसमें एक आदमी को काटने से एचआईवी के संक्रमित रक्त से संचरण की ओर इशारा किया गया था। चिकित्सीय साहित्य में ऐसी कुछ रिपोर्टें हैं जिनमें दांत से काटने के कारण एचआईवी संक्रमण की संभावना के कुछ मामलों का जिक्र है। इन घटनाओं में से प्रत्येक में ऊतक के व्यापक रूप से कटने–फटने और रक्त निकलने जैसी स्थितियां उत्पन्न हुयी थीं। दांत से काटना एचआईवी के संक्रमण का सामान्य माध्यम नहीं है। दरअसल काटने के ऐसे बहुत सारे मामले हैं जिनमें एचआईवी संक्रमण नहीं हुआ।[31]

थूक, आंसू और पसीना

कुछ संक्रमित लोगों के थूक और आंसूओं में बहुत कम मात्रा में एचआईवी विषाणु पाये गये हैं। यह समझना महत्वपूर्ण हैं कि कम मात्रा में एचआईवी विषाणुओं का पाया जाना उसके शारीरिक द्रव के जरिये एचआईवी के संचरण की सीधी संभावना की ओर इशारा नहीं करता है। संक्रमित लोगों के पसीने में एचआईवी विषाणु नहीं पाये गये हैं। थूक, आंसू या पसीने से संपर्क के जरिये एचआईवी संक्रमण का कोई मामला नहीं पाया गया है।

खेल[32]

खेल–कूद के दौरान एचआईवी के संचरण का कोई दस्तावेजी मामला उपलब्ध नहीं है। खेल–कूद के दौरान एचआईवी संचरण का बहुत कम खतरा होता है। इस तरह का खतरा तब होता है जब खून बहा हो और खून से प्रत्यक्ष शारीरिक संपर्क हुआ हो। यदि किसी खिलाड़ी के शरीर से खून निकल रहा हो तो उसे तब तक खेलने से रोका जाना चाहिये जब तक खून बहना बंद नहीं हो जाता और जख्म को एंटीसेप्टिक से साफ करके और सुरक्षित पट्टी नहीं बांध दी जाती। जिस खेल–कूद में खून बहने की आशंका नहीं हो उस खेल–कूद के दौरान एचआईवी संचरण का कोई खतरा नहीं होता है।

एचआईवी संचरण के तरीकों और सार्वभौम सावधानियों के परिणाम

जैसा कि ऊपर स्पष्ट किया गया है, कभी–कभार के संपर्क से एचआईवी संक्रमण का खतरा नहीं होता है, यानी कि ऐसा संपर्क जिनमें शारीरिक द्रवों का आदान–प्रदान न हो। न ही थूक, आंसुओं और पसीने जैसे

31 काटने और एचआईवी संचरण पर अधिक सामग्री शैक्षिक भेदभाव और कानून के खंड में देखी जा सकती है।

32 http://www.cdc.gov/hiv/resources/qa/qa33.htm पर उपलब्ध (जुलाई 2006 में डाउनलोड किया)

शारीरिक द्रवों के जरिये संपर्क से एचआईवी संचरण का कोई मामला है।[33] संक्रमण का खतरा केवल तभी होता है जब यौन क्रिया, माता से नवजात को, या संक्रमित रक्त से सीधे संपर्क के जरिये एचआईवी का संचार हो।

यह तथ्य एचआईवी वाले लोगों के विरुद्ध भेदभाव के औचित्य को गलत साबित करने के लिये महत्वपूर्ण है। किसी घर, कार्यस्थल, कक्षा या किसी अन्य स्थान पर एचआईवी वाले व्यक्ति के साथ एक ही कमरे में रहने मात्र से एचआईवी संक्रमण का कोई खतरा नहीं है और न ही बर्तनों के साझे इस्तेमाल, हाथ मिलाने या एक ही शौचालय का इस्तेमाल करने से कोई खतरा है।[34]

लेकिन स्वास्थ्य रक्षा प्रतिष्ठानों में विशेष तौर पर थोड़ी चिंता की बात है क्योंकि ऐसी जगहों पर रक्तजनित उत्पादों से संपर्क स्वभाविक है। इन चिंताओं को दूर करने के लिये रोग नियंत्रण केन्द्र ने 'सार्वभौम सावधानियां' नाम से संक्रमण नियंत्रण उपाय विकसित किये हैं, जो स्वास्थ्य सेवा प्रदान करने वाले लोगों को सभी शारीरिक द्रवों[35] को संभावित खतरों के तौर पर मानने के जरिये सुरक्षा प्रदान करते हैं और उनसे उच्च श्रेणी के संक्रमण नियंत्रण उपायों को लागू करने की उम्मीद करते हैं।

सार्वभौम सावधानियों को हालांकि शुरू में स्वास्थ्य रक्षा प्रतिष्ठानों में रक्त जनित उत्पादों के जरिये संक्रमण संबंधी चिंताओं को दूर करने के लिये विकसित किया गया था, किन्तु यह सिद्धांत ऐसे सभी स्थानों के लिये उपयुक्त है जहां रक्त से संपर्क संभव हो, जैसे कार्यस्थल एवं स्कूल। सभी उपयुक्त परिवेश में सार्वभौम सावधानियों के क्रियान्वयन से बहुत से मामलों में एचआईवी संक्रमित लोगों के विरुद्ध भेदभावकारी कार्रवाई के कारणों को दूर किया जा सकता है।

मुकेश मित्तल बनाम सीमा मित्तल (2005) दिल्ली उच्च न्यायालय

इस मामले में, प्रतिवादी और उसकी अवयस्क बेटी दोनों एचआईवी संक्रमित थे और उन्हें दिल्ली के अतिरिक्त जिला न्यायाधीश ने 10,000 रुपये प्रतिमाह का अंतरिम गुजारा भत्ता प्रदान किया था। इस निर्णय के विरुद्ध प्रतिवादी के पति (वादी) ने अपील दायर की, जिसके साथ तलाक का मुकदमा चल रहा था। इस मामले में उभरे मुख्य प्रश्नों में से एक एचआईवी संक्रमित पत्नी को गुजारा भत्ता दिये जाने पर था।

न्यायालय ने कहा कि वादी की पत्नी और बेटी के एचआईवी संक्रमित होने मात्र से उन्हें गुजारे भत्ते से वंचित नहीं किया जा सकता है। इस बारे में वादी के एचआईवी संक्रमित नहीं होना भी कोई कारक नहीं हो सकता है। अमरजीत कौर बनाम हरभजन सिंह व अन्य मामले का उल्लेख करते हुये न्यायालय ने निर्णय दिया कि अंतरिम गुजारा भत्ते के मामलों में एकमात्र संदर्भित कसौटी यह है कि पत्नी की कोई स्वतंत्र आय नहीं थी जो उन पति–पत्नी से उत्पन्न बेटी और पत्नी के लिए पर्याप्त हो।

पूर्व कांस्टेबल बदन सिंह बनाम भारत सरकार व अन्य, 97 (2002) डीएलटी 986

इस मामले में वादी बीएसएफ का पूर्व कर्मचारी था जिसे चिकित्सीय परीक्षण के दौरान पता चला कि वह एचआईवी संक्रमित है। इसके बाद उसे सेवा के अयोग्य घोषित कर दिया गया। उसे 70 प्रतिशत विकलांगता के साथ सेवा से निकाल दिया गया जबकि वह यह कहता रहा कि वह सेवा के लिये पूरी तरह फिट है। वादी ने कहा कि चिकित्सा परीक्षण के बाद उसे फिटनेस श्रेणी ईईई (जिसका अर्थ है कि वह पूरी तरह

33 सीडीसी फैक्टशीट : एचआईवी और उसका संचरण, जुलाई 1999

34 सीडीसी रेजरों के साझा इस्तेमाल के विरुद्ध राय देती है (देखें सीडीसी फैक्टशीट : एचआईवी और उसका संचरण, जुलाई 1999, पृ. 2)

35 या सिर्फ यहः "रक्त और प्रत्यक्ष रक्त, वीर्य और यौनिक स्राव, साइनोवायल, प्ल्यूरल, पेरिटोनियल, पेरिकार्डियल और एमनियोटिक फ्लुइड वाले अन्य शारीरिक द्रव

अक्षम है) में रखा गया था, इसलिये इसका अर्थ यह नहीं कि उसकी विकलांगता को केवल 70 प्रतिशत ही आंका जाये।

न्यायालय ने निर्णय दिया कि अक्षमता पेंशन इस बात पर निर्भर नहीं करती कि शारीरिक अथवा मानसिक अक्षमता, जिसने उस व्यक्ति को स्थायी रूप से अक्षम बना दिया, उस व्यक्ति के सेवा में रहते हुये उत्पन्न हुयी। इसमें केवल यह महत्त्वपूर्ण है कि वह व्यक्ति सेवा के लिये उपयुक्त नहीं रहा था। न्यायालय ने वादी के पक्ष में निर्णय सुनाते हुये कहा कि सरकार के अनिवार्य कर्तव्यों में एक यह भी है कि वह बीमार व्यक्तियों को चिकित्सीय सहायता उपलब्ध कराये और अशक्तता पेंशन दिया जाना इस जवाबदेही का एक हिस्सा है।

बम्बई का एमएक्स, भारत का निवासी बनाम जेडवाई व अन्य (एआईआर 1997 बाम्बे 406)

इस मामले में वादी को प्रतिवादी निगम द्वारा कई वर्षों तक अस्थायी श्रमिक के रूप में रखा गया था और फिर उसका नाम नियमित रोजगार दिये जाने वाले लोगों की सूची में शामिल किया गया। वादी एक चिकित्सा जांच के लिये प्रस्तुत हुआ और हालांकि उसमें कहा गया कि वह अन्य सभी प्रकार से फिट था, लेकिन रिपोर्ट में उसके एचआईवी से संक्रमित होने की बात कही गयी थी। चिकित्सा परीक्षण के परिणामों के तुरंत बाद वादी का नाम नियमित रोजगार के लिये चुने जा सकने वाले लोगों की सूची से हटा दिया गया। इस मामले में उठाये गये मुख्य प्रश्न में से यह था कि क्या किसी नियोक्ता को अनुच्छेद 14 और 21 के संदर्भ में नियुक्ति पूर्व फिटनेस परीक्षण कराने का अधिकार है, क्या वादी अपनी पहचान को छिपाकर मुकदमा लड़ सकता है और एचआईवी संक्रमित लोगों के संदर्भ में चिकित्सीय फिटनेस का स्तर क्या होना चाहिये?

न्यायालय ने कहा कि जहां नियोक्ताओं के पास नियुक्ति पूर्व फिटनेस परीक्षण कराने के अधिकार है, वहां मुख्य सवाल यह है कि आवश्यक फिटनेस के स्तर को जांचते समय किन बातों पर विचार किया जाना जाये। न्यायालय का मत था कि मेडिकल फिटनेस कार्य की आवश्यकताओं और कार्यक्षेत्र के लोगों और संपत्ति के हित से संबंधित होनी चाहिये। जैसा कि अमेरिका के चॉक बनाम यूनाइटेड स्ट्रेटस डिस्ट्रिक्ट कोर्ट ऑव कैलिफोर्निया मामले में दिए निर्णय में कहा गया है कि व्यक्ति को किये जाने वाले कार्य की 'अनिवार्य गतिविधियों'' को पूरा करने में सक्षम होना चाहिये। कोई मरीज जो अपनी गतिविधियों के निष्पादन में सक्षम हो और कार्यस्थल पर अन्य लोगों के लिये कोई खतरा उत्पन्न नहीं करता हो तो उसके विरुद्ध कोई भेदभाव नहीं हो सकता है। अतः रोजगार के मामले में केवल एचआईवी संक्रमित होने पर किसी के खिलाफ भेदभाव नहीं होना चाहिये। ऐसा करना संविधान के अनुच्छेद–14 और 21 का उल्लंघन होगा। यदि वह व्यक्ति अपने रोग के कारण बाधित हो तो कोई औचित्यपूर्ण विकल्प दिया जाना चाहिये। साथ ही राज्य और सार्वजनिक नियोक्ता यह रुख अख्तियार नहीं कर सकते कि वे किसी स्थायी पद पर किसी को तब तक नहीं रखेंगे जब तक कि वे उस व्यक्ति के द्वारा अपने पूरे सेवा काल के दौरान नौकरी करने के प्रति आश्वस्त न हों। न्यायालय ने आगे कहा कि उच्च न्यायालय अपने समक्ष प्रस्तुत होने वाले एक या दोनों पक्षों को अपनी पहचान छिपाने की अनुमति दे सकता है, यदि उसे लगे कि ऐसा करना न्याय के हक में होगा।

एक्स बनाम बैंक ऑव इंडिया (2002) बम्बई उच्च न्यायालय

इस मामले में वादी ने बैंक ऑव इंडिया में नौ वर्ष तक सफाईकर्मी के रूप में कार्य किया था। उसे बताया गया कि एक साक्षात्कार उत्तीर्ण करने पर उसे पदोन्नत कर दिया जायेगा। साक्षात्कार के बाद हुये चिकित्सीय परीक्षण में वादी को एचआईवी संक्रमित पाया गया। उसमें एड्स के हालांकि कोई लक्षण नहीं पाये गये थे लेकिन उसे बताया गया कि उसे पदोन्नति नहीं मिलेगी। यही नहीं बैंक में उसकी नौकरी भी खत्म कर दी गई। वह तभी दोबारा नौकरी पर आ सकता था जब वह एचआईवी संक्रमण से मुक्त हो जाये। वादी ने

रोजगार के लिये बार–बार प्रतिवादियों से गुहार लगाई मगर उसे बताया गया कि उसे अधिक चिकित्सीय परीक्षणों से गुजरना होगा। उसे कभी भी सही स्थिति नहीं बतायी गयी।

अपने फैसले में न्यायालय में बम्बई के एम एक्स, भारत के निवासी बनाम जेडवाई और अन्य मामले में पहले दिये गये निर्णय का संदर्भ लिया, जिसमें यह कहा गया था कि अगर कोई व्यक्ति किसी रोजगार के लिये योग्य हो तो उसे केवल एचआईवी संक्रमित होने के आधार पर ही रोजगार से वंचित नहीं किया जा सकता है। प्रतिवादी हालांकि इस बात पर विचार कर सकता है कि उसके काम करने की क्षमता पर चिकित्सीय राय के आधार पर उसे स्थायी तौर पर रखा जाये या नहीं और यह भी कि वह अपने सहकर्मियों के स्वास्थ्य के लिये कोई खतरा तो नहीं है।

छोटूलाल श्यामभाई साल्वे बनाम गुजरात राज्य (2000) अहमदाबाद उच्च न्यायालय

इस मामले में वादी का चयन निशस्त्र पुलिस कांस्टेबल के पद पर हुआ था और उसका नाम चयनित अभ्यर्थियों की सूची में शामिल था। वह चिकित्सीय फिटनेस टेस्ट के लिये प्रस्तुत हुआ और सर्जन ने उसके वरिष्ठ अधिकारियों को पत्र लिखकर सूचित किया कि वह मेडिकल तौर पर फिट नहीं था क्योंकि उसके रक्त में एचआईवी के विषाणु पाये गये। इसके आधार पर वादी का नाम चयन सूची से काट दिया गया और उक्त पद के लिये उसके नाम पर विचार नहीं किया गया। यही नहीं अपनी रिट याचिका के पैरा 7 (सी) में उसने बताया कि दो अन्य एचआईवी संक्रमित व्यक्तियों, जिनके पिता पुलिस सेवा में थे, को नियुक्ति दी गयी।

न्यायालय ने इस मामले में निर्णय दिया कि यह स्पष्ट है कि एड्स पीड़ित होने के आधार पर वादी का नाम चयनित उम्मीदवारों की सूची में से हटा दिया गया है। कुछ अमेरिकी निर्णयों का उल्लेख करते हुये न्यायालय ने कहा कि एचआईवी संक्रमित लोगों को सरकारी नौकरियों या सेवाओं से वंचित नहीं किया जा सकता। न्यायालय ने आगे कहा कि प्रतिवादियों का एकतरफा रुख इस तथ्य से स्पष्ट देखा जा सकता है कि उन्होंने वादी द्वारा पैरा 7 (सी) में लगाये गये आरोपों को चुनौती देने का कोई प्रयास नहीं किया। अतः चयनित उम्मीदवारों की सूची में से वादी का नाम काटना संविधान के भाग 14 और 16 का उल्लंघन है।

जी, मुंबई का भारतीय निवासी बनाम न्यू इंडिया इंश्योरेंस कंपनी लिमिटेड (2004), बम्बई उच्च न्यायालय

इस मामले में वादी के पति की मृत्यु प्रतिवादी की नौकरी में रहते हुये हुयी थी। उसने प्रतिवादी को दया के आधार पर रोजगार के लिये आवेदन किया। नियुक्ति से पूर्व चिकित्सीय परीक्षण में उसे एचआईवी संक्रमित पाया गया और तत्पश्चात् प्रतिवादी ने उसके आवेदन को निरस्त कर दिया, जब कंपनी के चिकित्सक ने वादी को काम के लिये अयोग्य घोषित कर दिया तो कंपनी ने एक विशेषज्ञ से दूसरी राय मांगी, जिसने वादी को चिकित्सीय दृष्टि से फिट, पूरी तरह लक्षणरहित और वादी की रोग प्रतिरोधक क्षमता को अक्षुण्ण पाया।

न्यायालय ने पूर्व में बम्बई के एम एक्स, भारत के निवासी बनाम मैसर्स जेडवाई, वीपीजीएसपी मंडल बनाम महाराष्ट्र राज्य और बलबीर कौर व अन्य बनाम भारतीय इस्पात निगम व अन्य मामलों में स्थापित बातों को दोहराया। उसने स्पष्ट तौर पर कहा कि केवल एचआईवी संक्रमित होने से ही किसी व्यक्ति को रोजगार से वंचित नहीं किया जा सकता है, बशर्ते की वह अन्य सेवाओं के लिये सर्वथा उपयुक्त हो, क्योंकि ऐसा करना भेदभावपूर्ण और संविधान के अनुच्छेद–14, 16 और 21 में निहित सिद्धांतों का उल्लंघन होगा।

लूसी आर डिसूजा बनाम गोवा राज्य व अन्य (एआईआर 1990 बाम्बे 355)

इस मामले में वादी ने गोवा, दमन और दीव जन स्वास्थ्य अधिनियम 1985 के भाग 53 (1) (VII) को चुनौती दी जिसमें राज्य सरकार को एड्स पीड़ित व्यक्तियों को अपनी मर्जी की अवधि तक और अपनी मर्जी की

शर्तों के साथ संस्थानों और वार्डों में पृथक रखने का अधिकार दिया गया था। वादी का कहना था कि यह प्रावधान भारत के संविधान के भाग 14, 19 (1) (डी) एवं 21 का उल्लंघन करते हैं।

न्यायालय ने इस बात पर सहमति जतायी कि एड्स पीड़ितों को अलग रखने को व्यक्तिगत आजादी और सार्वजनिक हित की तुलना के परिप्रेक्ष्य में देखा जाना चाहिये। इन दोनों के बीच टकराव की स्थिति में सार्वजनिक हित को व्यक्तिगत आजादी पर वरीयता दी जायेगी। उसने कहा कि एड्स रोगियों को पृथक करने का फैसला राज्य का नीतिगत मामला है और न्यायालय विधायी निर्णयों की व्याख्या करने के लिये सक्षम नहीं है। यह माना जा सकता है कि विधायिका लोगों की जरूरतों को जानती और समझती है। न्यायालय ने उस समय राज्य सभा में प्रस्तुत किये गये एड्स रोकथाम अधिनियम 1989 का हवाला दिया जिसमें एचआईवी/एड्स के फैलाव को रोकने या किसी व्यक्ति के हित में आवश्यक माने जाने पर अधिकारियों द्वारा उस एड्स रोगी को विशेष उपचार के लिये अस्पताल में भर्ती कराने का प्रावधान था।

न्यायालय ने कहा कि विवेकाधीन शक्तियां भेदभावपूर्ण हों यह आवश्यक नहीं है और इनके दुरुपयोग होने पर संदर्भित आदेश को वापस लिया जा सकता है। उसने आगे कहा कि ऑडी ऑल्टेरम पार्टेम के सिद्धांत का अनुप्रयोग और विस्तार प्रत्येक मामले में अलग–अलग हो सकता है और जरूरत महसूस होने पर इसे छोड़ा जा सकता है। पृथक करने का निर्णय लिये जाने के बाद हालांकि उसकी वैधता तय करने के लिये सुनवाई की जा सकती है। इन आधारों पर न्यायालय ने निर्णय दिया कि उक्त प्रावधान अनुच्छेद–14, 19 (1) (डी) एवं 21 का उल्लंघन नहीं करते हैं।

आरआर बनाम पुलिस अधीक्षक व अन्य, कर्नाटक प्रशासनिक न्यायाधिकरण (2005)

इस मामले में वादी ने पुलिस कांस्टेबल के पद के लिए आवेदन किया था। साक्षात्कार के पश्चात् उसका नाम तदर्थ चयनित उम्मीदवारों की सूची में शामिल किया गया। इसके बाद वादी का मेडिकल परीक्षण हुआ जिसमें यह पता चला कि वह एचआईवी पॉजिटिव है। एचआईवी संक्रमण के आधार पर उसकी नियुक्ति रद्द कर दी गयी। ऐसा पुलिस महानिदेशक और महानिरीक्षक के उस निर्देश के अनुसरण में किया गया जिसमें एचआईवी पॉजिटिव लोगों को भर्ती नहीं करने को सुनिश्चित करने को कहा गया था। तब वादी कोर्ट के सम्मुख प्रस्तुत हुआ और अपनी नियुक्ति के निरस्तीकरण को इस आधार पर रद्द करने की मांग की कि ऐसा करना संविधान के अनुच्छेद–14 और 16 के अंतर्गत उसके अधिकारों का उल्लंघन है।

न्यायालय ने पूर्व में निर्णित मामलों में कही गयी बातों को दोहराया और कहा कि कोई व्यक्ति, जो किसी रोग से पीड़ित है, अपनी नौकरी से संबंधित सामान्य कार्यों को करने में सक्षम है और अपने सहकर्मियों के स्वास्थ्य और सुरक्षा के लिए खतरा नहीं है तो उसे ऐसी बीमारी से पीड़ित होने के कारण नौकरी के लिए मना नहीं किया जा सकता है। न्यायालय ने कहा कि यह स्पष्ट है कि वादी का नाम चयनित लोगों की सूची में से काटने का एक ही कारण था और वह यह कि वादी एचआईवी पॉजिटिव था। उसे नौकरी पर रखने से इंकार करने का राज्य का निर्णय इसलिए एकतरफा, अवैध और अनुच्छेद–14 और 16 का उल्लंघन है। न्यायालय ने पुलिस महानिदेशक व महानिरीक्षक के एचआईवी पॉजिटिव व्यक्तियों की नियुक्ति संबंधी निर्देश को निरस्त कर दिया और प्रतिवादी को आदेश दिया कि वादी को तुरंत नौकरी पर रखा जाये।

मणिपुर मामला (2005)

इस मामले में एक एचआईवी संक्रमित महिला को, उसके पति की मृत्यु के बाद, उसके ससुराल वालों ने घर से निकाल दिया। वह मणिपुर नेटवर्क ऑव पॉजिटिव पीपुल के एक सदस्य से मिली जिसने उसके मामले को एचआईवी/एड्स ग्रस्त लोगों के लिये निःशुल्क कानूनी सहायता सेल के पास भेज दिया। यह सेल ह्यूमन

राइट्स लॉ नेटवर्क (एचआरएलएन) और एमएनपी प्लस का संयुक्त प्रयास था। एचआरएलएन की टीम ने उसके ससुराल वालों के खिलाफ मुकदमा दायर किया। न्यायालय ने महिला के पक्ष में निर्णय सुनाया और उसके ससुराल वालों को उसे घर में रहने देने का आदेश दिया।

जब इस मामले की सुनवाई चल रही थी, एनएनपीपी के सदस्य महिला के घर गए और उसके ससुराल वालों को एचआईवी/एड्स संबंधी विभिन्न मुद्दों की जानकारी दी। जिससे उन्हें एचआईवी पॉजिटिव बहू के प्रति व्यवहार और दृष्टिकोण को बदलने के बारे में सलाह मिली।

तमिलनाडु में मानसिक रुग्णालय की आग में जंजीर से बंधे 25 रोगियों की मृत्यु का मामला बनाम भारत सरकार व अन्य, एआईआर 2002 एससी 979

इस मामले में समाचार पत्रों में छपी खबर के आधार पर न्यायालय ने स्वतः संज्ञान लिया। इस मामले में मानसिक रुग्णालय में आग लगने पर मरीज जंजीरों से बंधे होने के कारण भागने में असफल रहे और 25 मरीज जल कर राख हो गये। न्यायालय द्वारा नियुक्त एमिकस क्यूरी ने कहा कि केन्द्र और राज्य स्तर पर सरकारें मानसिक स्वास्थ्य अधिनियम 1987 को ठीक तरह से लागू करने में असफल रही हैं। न्यायालय ने केन्द्र व राज्य सरकार को इस अधिनियम को लागू करने में कई उपायों को अपनाने का निर्देश दिया। प्रत्येक राज्य को मानसिक स्वास्थ्य देखभाल उपलब्ध कराने का दावा करने वाली सभी पंजीकृत/अपंजीकृत संस्थाओं का जिलावार सर्वेक्षण करना था। निर्धारित न्यूनतम मापदंडों को पूरा करने के आधार पर ऐसी संस्थाओं को लाइसेंस दिया जाना या इंकार किया जाना था। मानसिक रूप से कमजोर लोगों के अधिकारों के तहत उन्हें जंजीर से बांध कर रखना गैर कानूनी है। मानसिक स्वास्थ्य संबंधी कानून के प्रावधानों और मानसिक रूप से कमजोर लोगों के ऐसे अधिकारों, के बारे में लोगों को शिक्षित करने के लक्ष्य से विशेषकर ग्रामीण क्षेत्रों में एक समग्र जागरूकता अभियान चलाया जाना था।

खंड-चार

नैतिकता, मानवाधिकार एवं एचआईवी/एड्स

अध्याय 7 : चिकित्सा नैतिकता - निजता, सहमति और मानवाधिकार

7

चिकित्सा नैतिकता
निजता, सहमति और मानवाधिकार

एचआईवी/एड्स के बारे में नीति बनाते समय जटिल विवादों के पैदा होने की आशंका होती है और इस क्षेत्र में होने वाली मुकदमेबाजी के दौरान एक ओर निजता और गोपनीयता वाद–विवाद का विषय होता है, वहीं मामले को उजागर करना बहस का दूसरा मुद्दा होता है। मोटे तौर पर इस बहस को राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय कानून द्वारा प्रत्येक व्यक्ति को प्रदत्त मानवाधिकारों और व्यापक लोकहित के बीच विवाद के रूप में चिन्हित किया गया है। इस अध्याय की प्रमुख तार्किक विषयवस्तु निजता का अधिकार और जन कल्याण के लिए गोपनीयता पर केन्द्रित है।

यह बात चौंकाने वाली हो सकती है कि एचआईवी/एड्स के आंकड़ों एवं रोग विज्ञान का फौरीतौर पर अध्ययन करने से यह निष्कर्ष निकल सकता कि एचआईवी/एड्स से ग्रस्त लोगों (पीएलएचए) को निजता एवं सहमति के अधिकार की गारंटी देने से यह महामारी और बढ़ सकती है, क्योंकि जानबूझकर युवक–युवतियों के जोड़ों को एक साथ नशीली दवायें लेने वालों और यौन संबंधरत जोड़ों को तथा इसी प्रकार की अन्य गतिविधियों में लिप्त सहभागियों को एक साथ रहने की अनुमति देने से संक्रमण का खतरा और भी ज्यादा बढ़ जाता है।[1] इससे यह भी निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि इस तरह के सुरक्षा उपायों को अपनाने से खतरे के दायरे वाले समूहों को इस महामारी से बचाया जा सकता है और गुपचुप तरीके से फैल रही बीमारी का प्रसार भी रुक सकता है।[2] यद्यपि इस तरह के निष्कर्ष के साथ स्वप्रेरित अपील, शोध और इस महामारी के सामाजिक पहलुओं से जुड़े विश्लेषण शामिल हैं– लेकिन खासकर रोग ग्रस्त होने से इनकार, महामारी से जुड़े लांछन और भेदभाव जैसे पहलुओं से पता चलता है कि निजता, गोपनीयता एवं सहमति का संरक्षण एचआईवी/एड्स के फैलाव की गति को धीमा करने में महत्वपूर्ण हैं।[3]

एचआईवी/एड्स के संबंधी कार्यक्रमों के महत्वपूर्ण घटक के रूप में लगातार बढ़ती मान्यता के बावजूद गोपनीयता और निजता की समस्या पर अभी भी उतना अधिक ध्यान नहीं दिया गया है जितना ध्यान इसके बचाव, इलाज और मसलों को जरूरी समझते हुए दिया गया। इतना ही नहीं, मूलभूत मानवाधिकारों की रक्षा,

---

1 ओपनिंग अप द एचआईवी/एड्स एपीडेमिक(यू.एन एड्स बेस्ट प्रैक्टिस कलेक्शन यूएनएड्स8 (2000)
2 वही
3 वही

एचआईवी/एड्स मरीजों की प्रतिष्ठा और इस महामारी के प्रति प्रभावी नजरिया विकसित करने के लिए निजता और नैतिकता का सम्मान करने वाले कानूनों का होना अपरिहार्य है।

यह भी ध्यान देने योग्य बात है कि निजता, गोपनीयता और स्वयं की सहमति से व्यक्तिगत, स्वायत्तता और व्यक्तिवादी अवधारणा को महत्व मिल सकता है। कुछ लोग हालांकि इस आवधारणा को ऐसी आंग्ल–अमेरिकी नैतिकतावादी संकल्पना मानते हैं जिसका दुनिया की अन्य संस्कृतियों में जिक्र किया जाना जरूरी ही नहीं समझा गया है।[4] उदाहरण के तौर पर कई अफ्रीकी समुदाय कहीं ज्यादा समूहवादी हैं अर्थात इनमें व्यक्ति से ज्यादा समुदाय को महत्व दिया जाता है। सही मायने में नैतिकता को स्थानीय परिस्थितियों को ध्यान में रख कर देखा जाना चाहिये। इसके बावजूद अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर व्यक्तिवादी स्वायत्तता और निजता के सिद्धांत के साथ जुड़े नैतिकतावादी दिशानिर्देशों को व्यापकता के साथ स्वीकार किया गया है और इसीलिए इससे जुड़े नैतिकतावादी कवायद पर वैश्विक सर्वानुमति कायम हो पायी है।[5]

नैतिकता और निजता के दायरे में यद्यपि कई बातें समाहित हैं जिनमें परीक्षण के तौर पर किया जाने वाला टीकाकरण चिकित्सा अनुसंधान और एचआईवी/एड्स पीड़ितों का इलाज करने से मना करने जैसे विषय प्रमुख हैं। इस अध्याय की विषय वस्तु निजता, गोपनीयता और सूचित सहमति पर अंतर्राष्ट्रीय विधि और भारतीय विधि में इससे जुड़े प्रमुख मुकदमों पर न्यायालय के फैसलों के आलोक में विचार–विमर्श किया जायेगा।

गोपनीयता और रोग को उजागर करना : निजता और जन स्वास्थ्य

एचआईवी/एड्स के बारे में प्रभावी कार्रवाई के मामले में एचआईवी और स्वास्थ्य के प्रति गोपनीयता महत्वपूर्ण लेकिन समस्या वाला पहलू भी है। क्या एक डॉक्टर को किसी व्यक्ति के एचआईवी/एड्स से पीड़ित होने की बात उसकी पत्नी से छुपानी चाहिये? क्या रक्तदाताओं का एचआईवी परीक्षण अनिवार्य रूप से किया जाना चाहिये? क्या उन लोगों की पहचान की जानी चाहिये जो एचआईवी संक्रमित (पॉजिटिव) हैं और जिनके बीच यौन संबंध भी हैं। गोपनीयता की गारंटी देने से एक साथ कई मकसद पूरे हो सकते हैं। उदाहरण के तौर पर एचआईवी परीक्षण के लिये यह जरूरी है कि परीक्षण करवाने वाले को परिणाम संबंधी गोपनीयता बरते जाने का पूरा विश्वास हो। भारत जैसे देश में जहां एचआईवी परीक्षण के कराने वाली महिला को हिंसा या बिना परिणाम जाने पति द्वारा छोड़े जाने की आशंका के मद्देनजर इस बारे में गोपनीयता और भी जरूरी हो जाती है। इसी तरह इलाज के समय भी चिकित्सक या सलाहकार में रोग की जांच करने, परामर्श देने और इलाज करने के बारे में पूरा आत्मविश्वास होना जरूरी है। हो सकता है कि मरीज प्रयुक्त दवाओं, यौन सक्रियता और एचआईवी की वस्तुस्थिति के बारे में डाक्टर द्वारा पूरी गोपनीयता बरते जाने की गारंटी मिले बिना कोई बातचीत न करना चाहे। कुल मिलाकर इस मामले में भी मानवीय गरिमा और निजता के लिहाज से गोपनीयता आधारभूत बात है।

गोपनीयता के बिना एचआईवी एड्स के साथ रह रहे मरीजों और शेष समाज के बीच लगातार चौड़ी और जटिल होती खाई को पाटना असंभव है। महज चुप्पी साधकर या भेदभाव बरते जाने के भय के कारण इन मरीजों से न मिलना इस समस्या का समाधान नहीं बल्कि समस्या को छुपाना है। कुछ ही लोग हैं जो परिणाम के उजागर होने की परवाह किये बिना एचआईवी का परीक्षण या एड्स का इलाज कराने में पीछे नहीं रहेंगे। ऐसे में स्वास्थ्य और सामाजिक सेवा के मामले में अविश्वास इस समस्या को अंदरूनी तौर पर और

---

4 लेसली ई. वॉल्फ, जेडी, एमपीएच और बर्नार्ड लो, एमडी इथिकल डायमेंशन आफ एचआईवी/एड्स, एचआईवी इनसाइट नॉलेज बेस चैप्टर, अगस्त 2001 जिसमें मार्शल पी ए का उल्लेख है। द रैलिवेंस ऑव कल्चर फॉर इन्फॉर्म्ड कंसेंट इन यूएस फंडेड इंटरनेशनल हेल्थ रिसर्च, इथिकल एंड पॉलिसी इश्यूज इन इंटरनेशनल रिसर्च: क्लिनिकल ट्रॉयल इन डेवलपिंग कंट्रीज, खंड 2, बेथेस्दा, एमडी

5 लेसली ई. वॉल्फ, जेडी, एमपीएच और बर्नार्ड लो, एमडी इथिकल डायमेंशन ऑव एचआईवी/एड्स, एचआईवी इनसाइट नॉलेज बेस चैप्टर, अगस्त 2001

गंभीर बनायेगा तथा सार्वजनिक हस्तक्षेप की गुंजाइश को भी बढ़ावा देगा। इस प्रकार भारत जैसे रूढ़िवादी देशों में गोपनीयता और भी ज्यादा जरूरी हो जाती है। इसके बिना सामाजिक असमानता और एचआईवी संक्रमण बढ़ने की आशंका बलवती हो जाती है।

निजता एक मानवाधिकार है जो व्यक्तिगत स्वायत्तता और चयन की आजादी पर आधारित है। निजता के अधिकार की स्वतंत्रता एचआईवी एड्स पीड़ितों को यह आजादी देती है कि वे कब, किससे, कहां, क्यों और कैसे इस बारे में खुलासा करें।[6]

गोपनीयता का पालन या संरक्षण का मतलब सिर्फ जानकारी का खुलासा करने से बचना ही नहीं है बल्कि अनपेक्षित, अवांछित और अनाधिकृत खुलासे के प्रभाव से बचना है। इस तरह का बचाव न होने पर पीड़ित या संक्रमित व्यक्ति पर गंभीर प्रभाव पड़ सकते हैं।

गोपनीयता संबंधी उपाय अपनाने और एचआईवी एड्स पीड़ित की देखभाल करने वाले के साथ बेबाक बातचीत करने से रोगी को सामाजिक कलंक और असमानता से बचाने में प्रभावी मदद मिलती है। इसके अलावा यह भी साफ है कि गोपनीयता के नियम का सख्ती से पालन करने पर लोक स्वास्थ्य नीति पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ सकता है। इसलिये इस बारे में पारंपरिक विचार के मद्देनजर भी एचआईवी एड्स पीड़ित की गोपनीयता की जरूरत न सिर्फ सामाजिक कलंक और असमानता से बचने के लिये जरूरी है बल्कि संक्रमण के प्रसार को रोकने और सार्वजनिक सुरक्षा के लिहाज से भी जरूरी है। निष्कर्ष के तौर पर पारंपरिक विचार निजता और लोक कल्याण के बीच सीधे तौर पर विरोधाभास उपन्न करने का खतरा पैदा करता है।

पहली नजर में तो यह विचार निजी और लोकहित के बीच जरूरी और सामान्य संतुलन बनाने वाला तर्कसंगत विचार लगता है। जैसा कि पहले भी इंगित किया जा चुका है कि प्रभावी तौर पर हालांकि सार्वजनिक स्वास्थ्य में हस्तक्षेप का विचार निजी सुरक्षा के बिना सफल नहीं हो सकता है और यह धारणा पहले से ज्यादा बलवती हुयी है। लोकहित के प्रमुख तत्व के रूप में व्यक्तिगत अधिकारों के बारे में नयी समझ पैदा हुयी है और यह धीरे–धीरे व्यापक भी होती जा रही है जबकि लोकहित के मकसद को पाने के लिये निजी और व्यक्तिगत अधिकारों को पाने की उत्कंठा जरूरी हो गयी है। इसलिये हितों के बीच संतुलन के लिये दो सार्वजनिक हितों के बीच संतुलन कायम करना जरूरी है। इस क्रम में सबसे पहले सार्वजनिक हित को निजी गोपनीयता बरकरार रखने वाला होना चाहिये, जिससे कि सिर्फ प्रभावी हस्तक्षेप हो सके; दूसरा पारंपरिक लोकहितों का खुलासा करने से संबद्ध है और यह सहभागी की सूचना, अदालती कार्यवाही, प्रेस के माध्यम से, जनसांख्यकीय या योजनागत तरीके से हस्तक्षेप के द्वारा हो सकता है। यह कवायद इस तरह की समस्याओं को ध्यान में रखते हुये पुरानी अदालती कार्यवाहियों के आकलन के समय मददगार हो सकती है।

आधुनिक गोपनीयता और कानून

अंतर्राष्ट्रीय मामलों में आमतौर पर बिना मर्जी के खुलासा करने के परिणामों और गोपनीयता के अधिकार के बारे में मान्यता दी गयी है। इस प्रकार की गोपनीयता संबंधी विधिशास्त्र में गोपनीयता से जुड़े पारंपरिक विचार के बीच सामान्य स्तर पर संतुलन कायम करने वाले सूत्र की चर्चा की गयी है। इस मामले में अदालतें सार्वजनिक स्वास्थ्य, न्यायिक पारदर्शिता और अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता जैसी लोक कल्याण से जुड़ी बातों की बजाय निजता से जुड़े व्यक्तिगत अधिकार को अधिक महत्व देती हैं। इसी कारण से विवादित हितों के बीच सामंजस्य न बिठा पाने के कारण को नजरंदाज करने के गोपनीयता के स्वरूप तथा इसके उल्लंघन से जुड़े कानूनी मामले अदालतों में बहुतायत में आते हैं।

6 अ लांग वे फ्रॉम देयर टु हेयर: ह्यूमन राईट्स अप्रोचेज टु एचआईवी एड्स इन ए लोकल सेटिंग; कनेडियन एचआईवी एड्स लॉ रिव्यू अप्रैल 2005

विदेशी अदालतों के क्षेत्राधिकार संबंधी सामान्य कानूनों की व्याख्या तथा सामान्य विधायी प्रक्रिया के जरिए निजता और गोपनीयता से संबद्ध कई कानून बने हैं। कुछ कानूनों में पक्षकारों के संबंधों पर जोर दिया जाता है।[7] कुछ में संविदा कानून के तहत गोपनीयता के करार पर जोर दिया जाता है जबकि कुछ कानून उजागर की जाने वाली सूचना की प्रकृति पर निर्भर होते हैं। अमेरिका में गोपनीयता को भंग किये बिना संविदा की अवधि समाप्त होने संबंधी सिद्धांतों का हवाला देकर निजता को भंग करने और दायित्व की पूर्ति न करने का मुकदमा किया जा सकता है। इसी तरह के जटिल मामलों में पर्याप्त रूप से विकसित सामान्य कानूनों के बावजूद इसी प्रक्रिया का पालन किया जाता है।

उदाहरण के तौर पर ब्रिटेन में निजता संबंधी कोई कानून नहीं होने के बावजूद गोपनीयता भंग करने संबंधी पूर्ण विकसित कानून मौजूद हैं।[8] जबकि अमेरिका में निजता संबंधी कानून पूर्ण विकसित हैं हालांकि गोपनीयता भंग करने के बारे में अभी भी पूरी तरह से विकसित कानून नहीं है। इसी प्रकार गोपनीयता संरक्षण निजता के महत्व से आगे है और निजता तथा गोपनीयता भंग से संबद्ध कानूनों के बीच अंतर्संबंध है। चिकित्सकीय शपथ में कुछ अतिरिक्त मानक भी तय किये जा सकते हैं। डाक्टरों को इस बारे में हालांकि शपथ दिलाना और अन्य नैतिक मानक अपनाने को कहना अधिक उपयोगी नहीं है, खासकर उन मामलों में जहां डॉक्टर समुदाय जाने–अनजाने गोपनीयता का उल्लंघन करते हों। कानून से हटकर प्रयुक्त होने वाली प्रणाली हालांकि कारगर और गोपनीयता सहायक भी हो सकती है लेकिन चिकित्सक मरीजों को उनकी निजी जानकारी उजागर न करने की गारंटी न दे पाने के कारण आमतौर पर गोपनीयता का संरक्षण कर पाने में सक्षम नहीं होते हैं। इसे देखते हुये कानूनी मानकों में दंड की व्यवस्था को प्रभावी तौर पर लागू करना जरूरी है।

गोपनीयता संबंधी सामान्य कानूनों में हालांकि निजी जानकारियों के अनैच्छिक तौर पर उजागर करने के खिलाफ संरक्षण दिया जा सकता है परंतु इस बारे में मौजूदा कानूनों में बदलाव या काट–छांट की बजाय व्यवस्थित तथा योजनाबद्ध तरीके से कानून बनाना ही कारगर हो सकता है। संयुक्त राष्ट्र संघ ने भी सभी देशों को यही सलाह दी है।[9] कई अमीर देश एचआईवी से जुड़ी जानकारियों के संबंघ में निजता और गोपनीयता कानून पारित कर चुके हैं।[10]

इस बारे में प्रभावी परिणाम न मिल पाने के बाद इससे जुड़ी मुकदमेबाजी से निजता संबंधी प्रावधानों को मानवाधिकार से जुड़े संयुक्त राष्ट्र मानवाधिकार उद्‌घोषणा (अनुच्छेद–12) अंतर्राष्ट्रीय नागरिक सांस्कृतिक और राजनीतिक अधिकार संधि. (अनुच्छेद–17) तथा यूरोपीय मानवाधिकार संधि जैसे अहम समझौतों के करीब लाने में मदद मिल सकती है। भारतीय संविधान में भी यद्यपि निजता अधिकार इतने सुस्पष्ट रूप में नहीं दिया गया है और न्यायपालिका अनुच्छेद–21 में ही इसे समाहित कर इससे जुड़े मामलों का निपटारा करती है। परिणामस्वरूप यह अधिकार अभी भी सीमित है और गोपनीयता से जुड़ा संरक्षण भी कम ही प्राप्त है।[11] आगामी विवरण में

7 मेककॉर्मिक बनाम इंग्लैंड. 494 एस ई 2 डी 43 : (एससी सीटी. एपीपी. 1997) (यूके); प्रिंस अल्बर्ट वर्सेज स्ट्रेंज, 41 अंग्रेजी में पुनःमुद्रित 1171 (चैप्टर : 1849 (यूके); बेरी वर्सेज मोएंच 331. पृ . 2 डी 814 (1958) (यूएस)

8 ब्रिट डॉलन डिस्क्लोजिंग कोन्फीडेंशियल क्लिनिकल इंफोर्मेशन साइकेट्रिक बुलेटिन 28, 53.2004

9 ऑफिस आफ द यूनाईटेड नेशंस हाइ कमिश्नर फॉर ह्यूमन राइट्स एंड द ज्वाइंट यूएन प्रोग्राम ऑन एचआईवी/एड्स। एचआईवी/एड्स एंड ह्यूमन राइट्स, इंटरनेशनल गाइडलांइन्स यूनाईटेड नेशन्स, न्यूयॉर्क एंड जिनेवा 1998 एट 39 (एचआर/पीयूबी/98/1

10 रीसेंट डेवलपमेंटस इन प्राइवेसी लेजिस्लेशन, कनेडियन एचआईवी/एड्स पॉलिसी एंड ला रिव्यू, अगस्त 2003। बेल्जियम पेटेंट राइट्स एक्ट, बेल्जियम प्राइवेसी प्रोटेक्शन एक्ट 1998; एचआईवी/एड्स प्रिवेंशन मेजर्स एक्ट 1993। (तस्मानिया, ऑस्ट्रेलिया), हेल्थ इंफॉर्मेशन एक्ट 2000 (अल्बर्टा, कनाडा), मेडिकल स्कीम्स एक्ट 1998 (साउथ अफ्रिका), फिलीपीन्स एड्स प्रीवेन्शन एंड कंट्रोल एक्ट 1998, एक्सेस टु हेल्थ रिकार्डस एक्ट 1990(यूके) पब्लिक हेल्थ एक्ट 1991 (न्यू साउथ वेल्स आस्ट्रेलिया) हेल्थ प्रोफेशन्स एक्ट 1974। (साउथ अफ्रीका), मेडिकल पेशेंट्स राइटस एक्ट (इलिनाइस यूएस) इन्फेक्शन डिजीज एक्ट (सिंगापुर) इलिनॉइस एड्स कॉन्फीडेंशिलिटी एक्ट, 1998 (यूएस), देखें, फेडरल प्रोटक्शन अगेन्स्ट इंफेक्शन एक्ट (Infectionsschutzgesetz) (प्रयोगशालाओं से अपेक्षा है कि वह सही नतीजे और एचआईवी के संकेत अनाम लोगों के आधार पर दें)

11 डा तोकूगा येपथोमी बनाम अपोलो हॉस्पिटल एंटरप्राइजेज लि एंड एनदर, एआईआर 1999 एससी 495। खड़ग सिंह बनाम उ प्र राज्य एआईआर 1963 एससी 1295। गोविंद बनाम मप्र राज्य 2 एससीसी 148। (1975), फूलन देवी बनाम शेखर कपूर 1995 पीटीसी 46

गोपनीयता और निजता को अंतर्राष्ट्रीय कानूनों और वाद निर्णयों के संदर्भ में विवेचन किया जायेगा। इनमें सर्वाधिक गंभीर समझे जाने वाले विषयों, खासकर अदालतों, प्रेस, चिकित्सा देखभाल और आपसी रिश्तों को शामिल किया जायेगा।

गोपनीयता और उन्मुक्त समाज : अदालतें और प्रेस

कानूनी प्रक्रिया में गोपनीयता विशेष रूप से महत्वपूर्ण हैं क्योंकि यही वह हथियार है जिसकी मदद से एचआईवी एड्स पीड़ित विश्वास भंग होने सहित अन्य कानूनी शिकायतें कर सकता है। हालांकि उन्मुक्त और खुले समाज में जब एचआईवी की स्थिति का खुलासा करना न्याय प्रशासन के लिये जरूरी हो गया हो ऐसी स्थिति में अदालतें पूरी पारदर्शिता के साथ काम करने की कोशिश करना जरूरी समझती हैं।

मामला तब और जटिल हो जाता है, जब प्रेस भी विचार अभिव्यक्ति के अपने अधिकार के तहत अदालती कार्यवाहियों की रिपोर्टिंग की बात करता है। ऐसी स्थिति में हालांकि शिकायतकर्ता का नाम और एचआईवी संबंधी स्थिति को उजागर करना सही नहीं है। कुल मिलाकर सवाल यह है कि क्या व्यक्ति की गोपनीयता के अधिकार को न्याय प्रशासन, अभिव्यक्ति की आजादी और प्रेस की तुलना में वरीयता दी जा सकती है?

री डब्ल्यू[12] के मामले में ब्रिटिश अदालत में इन दोनों मामलों को उठाया गया था। इसमें निजी और पारिवारिक जीवन से जुड़े अनुच्छेद–8 और अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता से संबद्ध अनुच्छेद–10 को लेकर विवाद था। इसमें सवाल उठाया गया था कि क्या प्रेस एचआईवी पॉजिटिव माता–पिता के साथ उनके बच्चों की पहचान उजागर कर सकती है? इन अनुच्छेदों से जुड़े अधिकारों के बीच संतुलन कायम करते हुये अदालत ने फैसला दिया कि ऐसे बच्चों की पहचान गोपनीय रखने से अभिव्यक्ति के अधिकार में हस्तक्षेप नहीं होता है, क्योंकि पहचान को दबाना इस बारे में की जाने वाली चर्चा के अधिकार को प्रभावित नहीं करता है। इसी क्रम में जैसा कि पूर्व फैसलों में भी निर्धारित किया जा चुका है कि सभी संबद्ध पक्षकारों की पहचान उनके नाम उजागर न करने के लिये छुपायी जानी चाहिये।

मानवाधिकार संबंधी यूरोपीय अदालत ने जेड बनाम फिनलैंड[13] के मामले में आपराधिक मामलों में गोपनीयता उजागर किया जाने के प्रश्न पर विचार किया था। इसके फैसले में अदालत ने कहा कि साक्ष्य संबंधी प्रक्रिया में चिकित्सकीय साक्ष्यों के परीक्षण के दौरान एचआईवी पॉजिटिव प्रतिवादी और उसकी पत्नी का मामला अपवाद है और इस आधार पर न्याय के हित में तथ्यों को उजागर किये जाने की जरूरत है। अदालत ने हालांकि ऐसे मामलों में इस अपवाद का उपयोग बहुत ही सीमित अर्थों में जरूरत पड़ने पर और अदालती प्रक्रिया तक ही सीमित रखने की बात भी कही। इससे जुड़े अन्य सभी मामलों में गोपनीयता का संरक्षण किये जाने की अदालत ने पैरवी की। अमरीकी अदालतों ने इस दिशा में कुछ कारगर कदम भी उठाये हैं। न्यायिक प्रक्रिया में इस अपवाद को मान्यता मिलने के बावजूद अमरीकी अदालतों ने इसका दायरा और कम किया है। यहां तक कि एचआईवी के मामलों में आय क्षमता और भविष्य की पीड़ा से जुड़े हर्जाने के आकलन में भी गोपनीयता का संरक्षण किया गया है।[14]

पहचान के प्रकाशन की पूर्ण स्वतंत्रता से जुड़े ए बनाम बी और अन्य[15] के मामले में एक ब्रिटिश अदालत ने एचआईवी पॉजिटिव दो डाक्टरों की पहचान को लोकहित में उजागर किये जाने संबंधी तमाम मजबूत दलीलों को नजरंदाज करते हुये इनकी पहचान का खुलासा नहीं होने दिया। न्यायालय ने कहा कि अस्पताल के दस्तावेजों के आधार पर इन दोनों की पहचान को उजागर करने की बजाय इसे गोपनीय रखना लोकहित

12 री डब्ल्यू (2005) ईडब्ल्यूएचसी 1564

13 जेड बनाम फिनलैंड (1997) ईसीएचआर 22009/93

14 अगस्तो बनाम ट्रसवाल सिस्टम्स कॉर्प. 142 एफआरडी 118 (ईडी पा 1992)

15 एक्स बनाम वाई एंड अदर्स (1988) 2 आल ईआर 648

के ज्यादा करीब है। इसी प्रकार एनएम बनाम दक्षिण अफ्रीका के स्मिथ के मामले में अदालत ने प्रकाशन और उजागर करने के बाद भी गोपनीयता बरते जाने की बात कही।

अदालत ने एचआईवी एड्स पीड़ितों को अपनी निजी जानकारियों के जनता के बीच प्रकाशन और उजागर किये जाने के बाद भी इसका हश्र स्वयं तय करने और इसे उजागर करने की सीमा भी निर्धारित करने का अधिकार दिया।[16]

गोपनीयता : रोजगार और व्यक्तिगत संबंध

इसमें कोई शक नहीं है कि यौन संबंधरत साथी या पत्नी से एचआईवी की स्थिति को उजागर न करने से इस रोग के प्रसार में दिनों–दिन बढ़ोत्तरी हो रही है। इसके अलावा कम से कम स्थायी साथी को इस बारे में बताया जाना जरूरी किये जाने पर भी कोई इस पर ध्यान नहीं देता। नीति निर्माता हालांकि पशोपेश में हैं कि एचआईवी की स्थिति को उजागर करना जरूरी बनाया जाये या ऐच्छिक लेकिन यह मतभिन्नता भी इसे लागू किये जाने के तरीकों को लेकर है, इसके परिणाम पर नहीं। इसका आदर्श तरीका तो यह होगा कि अपने साथी को एचआईवी की स्थिति के बारे में बताना ऐच्छिक किया जाना चाहिये लेकिन इसके पहले इस वायरस से बचने के उपाय के तरीकों और इससे जुड़ी शिक्षा का प्रसार किये जाने की तात्कालिक जरूरत है। क्योंकि सच्चाई इतनी आसान भी नहीं है।

एक मत कानूनी तौर पर एचआईवी की स्थिति को उजागर करना जरूरी बनाने यानी बाध्यकारी करने की वकालत करता है। इसका तरीका जानबूझकर अपने साथी तक इस रोग को पहुंचाने या इसे न बताने को अपराध घोषित कर दंड का प्रावधान किया जाना है, साथ ही एचआईवी से पीड़ितों और इनकी सेवा तथा इलाज में लगे चिकित्सकों को इनके संभावित यौन साथियों को इस तथ्य से अवगत कराना बंधनकारी बनाया जाना भी है।

आलोचकों ने इस तरह से उजागर किये जाने को हालांकि निजी रिश्तों के लिये घातक और रोग के प्रसार को रोकने के इस तरीके को निष्प्रभावी बताया है। उनका मानना है कि इस तरह की नीति को प्रभावी रूप से लागू करने में काफी समय लग सकता है साथ ही रोग से जुड़ी जानकारी को उजागर करने के तरीकों को निजी स्वायत्तता में कटौती कर ही खोजा जा सकता है। इस तरह की किसी भी जानकारी को उजागर करने की जरूरत एचआईवी पीड़ितों की पहले से ही प्रतिकूल परिस्थितियों से निपटने में अक्षम साबित होगी, खासकर भारत जैसे पुरुष प्रधान देशों में, जहां प्रसव पूर्व लिंग परीक्षणों की संख्या काफी ज्यादा है, महिलाओं को गोपनीयता की कानूनी बाध्यता और हिंसा तथा पति द्वारा त्यागे जाने के बीच पिसने के लिये नहीं छोड़ा जाना चाहिये। ये महिलायें न तो इस संक्रमण की संभावना का पता लगा पाती हैं और न ही इससे बचने के तरीके जानती हैं। इसके अलावा संसाधनों का अभाव और रूढ़िवादी समाज होने के कारण इससे जुड़ी मुकदमेबाजी और गोपनीयता कानूनों को लागू करना जटिल काम हैं।

इसी तरह से कई बार अदालतों ने अपने फैसलों में कहा है कि अपने मरीज के साथ संबंधों की मर्यादा का पालन करते हुये डॉक्टर रोगी के एचआईवी पीड़ित होने की जानकारी उसकी पत्नी को नहीं दे सकते।[17] इस बारे में यद्यपि विवाद यह है कि एचआईवी पॉजिटिव रोगी पर भी उदासीनता, लापरवाही और संवेदनहीनता न बरतने की भी जिम्मेदारी डाली गयी है।

---

16 एनएम एसवी एंड एलवी बनाम चार्लीन स्मिथ, पेट्रीशिया डी लिले एंड न्यू अफ्रीका बुक्स, (2005) 02/24948 (हाई कोर्ट आफ साउथ अफ्रीका, वि. टवाटर्सरैंड लोकल डिवीजन)

17 रेस बनाम यूनाइटेड स्टेट्स ऑव अमेरिका, 770 एफ सप्लायर्स 58 डी प्योर्टो रिको 1991; एनओएल बनाम डिस्ट्रिक्ट आफ कोलंबिया, 674 ए 2डी 498 (डीसी 1995)

जबकि कुछ अन्य मामलों में अदालत ने इससे भिन्न मत व्यक्त किया है। इनमें अदालत ने डाक्टर पर रोगी के पति या पत्नी को एचआईवी से ग्रसित होने की जानकारी देने की जरूरत बतायी है, हालांकि यह तभी किया जायेगा जब रोगी स्वयं ऐसा न कर पाया हो।[18] राष्ट्रीय मानसिक स्वास्थ्य एवं स्नायु विज्ञान संस्थान (निमहांस) ने एचआईवी से पीड़ित व्यक्ति की कांउसिलिंग के लिये एक नीति तैयार की है। इसके तहत रोगी को उसका रोग साथी तक पहुंचाने से रोकने के उपायों के बारे में शिक्षित किया जायेगा। ऐसे व्यक्ति को हर हाल में अपने रोग की जानकारी पत्नी या पति को देने तथा किसी भी प्रकार की यौन गतिविधि में संलग्न होते समय कंडोम का इस्तेमाल करने की सलाह दी जाती है। इसके अलावा काउंसलिंग के अगले सत्र में रोगी को अपने साथ पति/पत्नी को साथ लाने को भी कहा जाता है। मरीज अगर ऐसा नहीं करता है तो उससे फिर यही अनुरोध किया जाता है और फिर भी न करने पर अस्पताल की ओर से उसके पति/पत्नी को रोग की जानकारी दे दी जाती है।[19] अमेरिका में स्थित रोग निदान केन्द्र भी इसी प्रक्रिया का पालन करता है।[20] इसमें भी डाक्टर द्वारा रोगी के रोग के बारे में उसके पति/पत्नी को बताने की बात पर जोर दिया जाता है। इसे उजागर करते समय हालांकि गोपनीयता बरते जाने संबंधी हर संभव उपाय भी अपनाये जाते हैं।[21]

इस नीति को मौजूदा कानूनों के अंतर्गत लागू कर पाना जटिल हो सकता है। उदाहरण के तौर पर क्या इस स्थिति में डाक्टर को यह जानकारी रोगी के पति/पत्नी को न दे पाने के लिये कानूनी तौर पर दोषी ठहराया जा सकता है? यह स्थान विशेष की कानूनी स्थिति पर निर्भर करेगा। इस बारे में एक प्रमुख अमरीकी मुकदमे टेरेसॉफ बनाम द रीजेंट्स ऑव द यूनीवर्सिटी ऑव केलीफोर्निया में केलीफोर्निया सुप्रीम कोर्ट ने रोगी से होने वाले खतरों के प्रति तीसरे पक्ष को आगाह करने की जिम्मेदारी मनोचिकित्सक पर डाली है। इस मामले में एक मनोरोगी ने एक महिला की हत्या कर दी थी जबकि डाक्टर ने महिला को बता दिया था कि यह रोगी उसे नुकसान पंहुचा सकता है।[22]

एचआईवी एडस के मामले में टेरेसऑव के दायित्व को कुछ हद तक कम किया जा सकता है। अपने मरीज को संक्रमण के खतरे और इससे बचाव के तरीकों से अवगत कराये जाने के बाद तीसरे पक्ष को सूचित करने की जिम्मेदारी से डाक्टर को मुक्त किया जा सकता है।[23]

यह नियम आस्ट्रेलिया के एक मुकदमे में फैसले के बाद जटिल बन गया। हार्वी बनाम पीडी[24] के मामले में एक डॉक्टर पर उसके एचआईवी रोगी मरीज की पत्नी को इसकी जानकारी न देने की कानूनी बाध्यता थी और बाद में पत्नी ने पति के साथ संयुक्त काउंसलिंग में भी यह जानकारी न दिये जाने पर डाक्टर पर मुकदमा कर दिया। अदालत ने निर्णय में कहा कि यद्यपि डाक्टर ने गोपनीयता बरकरार रख रोगी के प्रति अपने दायित्व को निभाया, लेकिन उसने रोगी की पत्नी के प्रति अपने दायित्व को नहीं निभाया जबकि ऐसा करने के लिये उसे महज पति की सहमति लेने की जरूरत थी। इस आधार पर डाक्टर को कर्तव्य भंग का दोषी ठहराया गया। ऐसा लगता है कि इस निर्णय में हालांकि एचआईवी के बारे में गोपनीयता का संरक्षण किया गया लेकिन इस दायित्व के भविष्य में क्या परिणाम होंगे, ये भी अस्पष्ट है।

---

18 द सिंगापुर इंफेक्सियस डिजीज एक्ट 1976; पब्लिक हेल्थ कंट्रोल डिजीज एक्ट 1984

19 सुनील कुमार पाण्या; पेशेंट्स टेस्टिंग पॉजिटिव फॉर एचआईवी–एथिकल डायलेमाज इन इंडिया; डिपार्टमेंट ऑव न्यूरोसर्जरी; सेठ जी एस मेडीकल कॉलेज

20 केनेथ ई लोबोविट्जः बियोंड टेरेसॉफ। एड्स एंड द ऑब्लीगेशन टु ब्रीच कॉन्फीडेंशिएलिटी। सेंट लुइस यूनीवर्सिटी पब्लिक लॉ रिव्यू 1990, 9.495 515

21 वही

22 टेरसॉफ बनाम द रीजेंट्स ऑव द यूनीवर्सिटी ऑव कैलीफोर्निया। 551 पी. 2डी. 334 (कैलीफोर्निया 1976)

23 डेनियल रैसनर बनाम रीजेंट्स ऑव द यूनीवर्सिटी ऑव कैलीफोर्निया, 31 केल. एपीपी चौथा, 1195, केल 1995

24 हार्वी बनाम पीडी (2004) एनएसडब्ल्यूसीए 97

इसके अलावा इससे जुड़ी कुछ अन्य गैरजरूरी बातों को उजागर किया जाना गोपनीयता भंग करने के लिये कानूनी कार्रवाई का आधार गठित कर सकता है। मिसाल के तौर पर अमेरिकी अदालतों ने कहा है कि किसी बच्चे के एचआईवी पीड़ित होने की बात को उसके सहपाठियों या सहकर्मियों के बीच उजागर किये जाने को उसके कानूनी हित में न्यायोचित नहीं ठहराया जा सकता।[25] नियोक्ताओं द्वारा भी इस बात को उजागर किया जाना कानूनी कार्रवाई और इसकी जिम्मेदारी निर्धारित करने के लिये पर्याप्त होगी। किसी डाक्टर द्वारा अपने मरीज की एचआईवी से जुड़ी जानकारी उसके नियोक्ता[26] या कर्मचारी क्षतिपूर्ति बोर्ड को देने पर भी उसे गोपनीयता भंग करने का दोषी ठहराया जायेगा।[27] (विस्तृत विवरण के लिये रोजगार भेदभाव अध्याय देखें) अगर रोग से होने वाले तत्काल नुकसान की संभावना नहीं है तो रोग के बारे में गोपनीयता बरकरार रखी जा सकती है।

जानकारी पर आधारित सहमति : एचआईवी परीक्षण

पिछले 20 सालों में एचआईवी से जुड़ी तकनीकी और नीति का जिस तरह से विकास हुआ है उसी तरह से एचआईवी परीक्षण से जुड़े मामलों में भी नये आयाम जुड़े हैं। इस समस्या के शुरुआती दिनों में खासकर अमीर देशों में एचआईवी का परीक्षण कराने को इसके खतरे की सर्वाधिक आशंका वाली आबादी में भी हतोत्साहित किया गया। उस समय एचआईवी पॉजिटिव रोगियों को खोजने के बहुत कम प्रयास किये गये। इसके बजाय रोगियों के प्रति असमानता और कलंकित करने का काम जोरों से किया गया। उस दौरान इस बारे में चिकित्सा सुविधाएं वजूद में ही नहीं थीं और इस कारण रोगियों के सामने अपने मित्र, रोजगार, स्वास्थ्य की देखभाल और अन्य अवसरों से हाथ धो बैठने का खतरा बढ़ गया।[28] लेकिन इसके इलाज की ओआई और एआरवी थेरेपी के ईजाद होने के साथ ही रोगियों के साथ असमानता और कलंकित करने जैसी प्रवृत्तियों में कमी आयी, साथ ही एचआईवी परीक्षण की शुरुआत से सामाजिक व्यवहार में बदलाव आया और माता–पिता से बच्चों में यह रोग पंहुचने के प्रति जागरूकता बढ़ी तथा रोगियों को भी इसका निजी तौर पर फायदा मिला।

एड्स की समस्या के शुरुआती चरण में अमीर देशों में ही रोगियों को बुरी नजर से देखने और इनके साथ असमान व्यवहार करने की प्रवृत्ति देखने को मिली। इसी तरह के हालात बाद में निर्धन देशों में देखने को मिले। इन देशों में बहुत से मरीज चिकित्सा सुविधा से वंचित हैं और इन्हें परीक्षण की मामूली सुविधायें ही मिल पा रही हैं। साथ ही इन देशों में मरीज अपने निजी रिश्ते और रोजगार भी खो बैठते हैं।

इतना ही नहीं गरीब देशों में एचआईवी परीक्षण की मूलभूत सुविधायें भी काफी कम मात्रा में मिल पा रही हैं। आंकड़ों के अनुसार गरीब दशों में एचआईवी परीक्षण की वास्तव में जितने लोगों को जरूरत है उनमें से महज दस फीसदी लोगों को ही परीक्षण की सुविधा मिल पाती है।[29] परीक्षण की सुरक्षित सुविधा मुहैया करा पाने की समस्या लोगों की सहमति और गोपनीयता संरक्षण की समस्या से भी ज्यादा गंभीर है।

सैद्धांतिक तौर पर संसूचित सहमति का मतलब है संबद्ध व्यक्ति को इस रोग के बारे में जानकारी है और इसके प्रभावों को जानता है तथा अपनी इच्छानुसार उचित कार्रवाई का चयन कर सकता है। आमतौर पर संसूचित सहमति की जरूरत शल्य क्रिया जैसी जोखिमभरी चिकित्सा प्रक्रियाओं में पड़ती है। लेकिन इसकी जरूरत अब एचआईवी परीक्षण में भी पड़ने लगी है, हालांकि इस परीक्षण से कोई शारीरिक

25 डिस्ट 27 काम एससीएच बीडी. बनाम बीडी. ऑफ एजुकेशन, 502 एन.वाई.एस.2 डी 325 (न्यूयॉर्क 1986)
26 फ्रांसिस बनाम कापला; 127 केलीफोर्निया एपीपी चौथा 1381 (2005)
27 डोए बनाम रोए, 155 मिस. 2डी 392 (न्यूयॉर्क एसयूपी. सीटी. 1992, अर्बानियक बनाम न्यूटन 226 केलिफोर्निया एपीपी. 3डी 1128 (1991)
28 एचआईवी टेस्टिंग फैक्ट शीट, बेनेफिट्स फ्रॉम टेस्टिंग कनेडियन एचआईवी/एड्स लीगल नेटवर्क 2000
29 यूएनएड्स/डब्ल्यूएचओ पॉलिसी स्टेटमेंट ऑन एचआईवी टेस्टिंग, यूएनएड्स एंड द डब्ल्यूएचओ पेज 1 जून 2004

या चिकित्सकीय जोखिम नहीं जुड़ा है। इसके साथ ही यह जरूरी जोखिम एचआईवी पॉजिटिव होने की संभावना से जुड़ा है।

व्यावहारिक रूप में एचआईवी परीक्षण के लिये संसूचित सहमति में दो अलग तत्व मौजूद हैं, पहला परीक्षण और इसकी प्रक्रिया के बारे में पर्याप्त जानकारी और दूसरा परीक्षण का पूरी तरह से अपनी मर्जी से कराया जाना है। परीक्षण के समय पर्याप्त जानकारी में कम से कम परीक्षण से चिकित्सकीय और सुरक्षा संबंधी फायदे; परीक्षण न कराने से होने वाले नुकसान तथा परीक्षण कराने के बाद मिलने वाली सुविधायें; इसमें पॉजिटिव पाये जाने के बाद के परिणाम; यौन साथियों को इसकी सूचना और यह सब जानकारी देने का मकसद आदि बताया जाना अपेक्षित है।[30] संबद्ध व्यक्ति को इस जानकारी को समझने की क्षमता होनी चाहिये। ऐसा इसलिये जरूरी है क्योंकि यह सवाल अवयस्क या मानसिक रूप से अक्षम लोगों के मामले में उठाया जा सकता है।

ऐच्छिक सहमति में सभी मरीजों को परीक्षण कराने से इनकार करने का अधिकार शामिल हैं और ये लोग इसके परिणाम से वाकिफ होते हुये भी किसी भी समय परीक्षण कराने का विकल्प चुन सकते हैं।[31] हालांकि किसी व्यक्ति के इस बारे में बेपरवाह हो जाने या आपात स्थिति में किसी अवयस्क के साथ अभिभावक या माता–पिता मौजूद नहीं होने या उपयुक्त इलाज के लिये एचआइवी से ग्रसित होने की जानकारी देना जरूरी हो जाने जैसी आपवाद की स्थितियों में ऐच्छिक सहमति जरूरी नहीं है।[32] एक अन्य अपवाद दान में दिये गये रक्त, वीर्य, अंग और एचआईवी के वाहक बन सकने वाले अन्य अंगों के परीक्षण से संबंधित है। आमतौर पर हालांकि इसे अपवाद नहीं माना जाता क्योंकि अंग दान करते समय अंगदाता को एचआईवी परीक्षण कराने की सूचना पहले ही दे दी जाती है।[33] साथ ही इस महामारी से जुड़ी नीतियों की रूपरेखा भी विवादों से परे नहीं है। इसमें एचआईवी एड्स के संक्रमण से संबंधित शोध तथा सार्वजनिक स्वास्थ्य के हितों की जानकारियों को शामिल किया जाता है। यह स्वास्थ्य संबंधी देखभाल में समस्या के निदान के रूप में प्रभावी हो सकता है। इस बीच कुछ आलोचकों का इस बारे में तर्क है कि किसी व्यक्ति के एचआईवी से संक्रमित होने के बारे में पता करना और संक्रमित लोगों को सामान्य लोगों के बीच बिना कोई जानकारी दिये साथ में ही रहने की अनुमति देना दोनों ही समान रूप से अनैतिक है। परिणामस्वरूप इस बारे में स्क्रीनिंग के जरिये भी जानकारियां जुटाना दोधारी तलवार पर चलने के समान है।

इससे बहुत करीब से जुड़ा मसला यह है कि क्या किसी व्यक्ति को एचआईवी परीक्षण के लिये खासतौर पर संसूचित सहमति देनी पड़ेगी या फिर इस परीक्षण के दौरान भी रक्त परीक्षण की ही तरह सामान्य सहमति लेना पर्याप्त होगा। एचआईवी परीक्षण के बारे में अधिकतर मत विशेष सहमति (स्पेसफिक कंसेंट) लेने का है। कई डाक्टरों ने हालांकि प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से इसकी शुरुआत भी कर दी है लेकिन फिलहाल डाक्टर एचआईवी परीक्षण के लिये या तो अंतर्निहित सहमति (इंप्लाइड कंसेट) लेते हैं या फिर उनके माता–पिता की अनुमति के बिना ही परीक्षण कर देते हैं। यद्यपि मरीजों की इच्छा के बिना उनका एचआईवी परीक्षण करने वाले डाक्टरों की सही संख्या का कोई पता नहीं है लेकिन भारत में एक अनुमान के मुताबिक 95 प्रतिशत से अधिक मरीजों का शल्य क्रिया के दौरान उनकी मर्जी के बिना ही एचआईवी परीक्षण किया जाता है।[34]

30 यूएनएड्स/डब्ल्यूएचओ पॉलिसी एट 2, एचआईवी टेस्टिंग फैक्ट सीट, कंसेंट टु टेस्टिंग एट1

31 यूएनएड्स/डब्ल्यूएचओ पॉलिसी एट 2

32 यूएनएडस/डब्ल्यूएचओ पालिसी एन 1 एट 2

33 राल्फ जर्गन्स एचआईवी टेस्टिंग एंड कांफीडेंशिएलिटी, फाइनल रिपोर्ट–कंसेंट, कनेडियन एचआईवी/एड्स लीगल नेटवर्क एंड कनेडियन एड्स सोसायटी 2001, http://www.aidslaw.ca/maincontent/issues/testing/01introe.html

34 मालावडे जे.ए.बी. एवं अन्य (2002) 'एथिकल एंड लीगल इश्यूज इन एचआईवी/एड्स काउंसलिंग एंड टेस्टिंग, Abstract ThpeE 7902 चौदहवीं अंतर्राष्ट्रीय एड्स कांफ्रेंस

एचआईवी परीक्षण के त्वरित परिणाम के बढ़ने के कारण मरीजों का गुप्त रूप से परीक्षण कराना काफी आसान हो गया है, जिससे कई नैतिक सवाल पैदा होते हैं।

इस मामले में निजता और गोपनीयता संबंधी कानूनी और सामाजिक नियमों का उल्लंघन के अलावा एचआईवी परीक्षण से पहले सुरक्षा उपायों के बारे में मरीज की कांउसलिंग तथा सहमति लेने जैसी जरूरतों की भी अनदेखी की जाती है। आमतौर पर डाक्टर मरीज के एचआईवी पॉजिटिव पाये जाने की जानकारी सीधे तौर पर देकर उसका इलाज शुरू कर देते हैं। जबकि मरीज को यह जानकारी देने के तरीके के बारे में डाक्टर के सामने एक नैतिक जिम्मेदारी से जुड़ी दुविधा पेश आती है। इस नैतिक दुविधा को दूर करने का प्रयास किया जाना चाहिये। व्यक्ति विशेष के मानवाधिकारों, निजता, गोपनीयता, स्वायत्तता और सार्वजनिक स्वास्थ्य के हित में यही सर्वोत्तम तरीका है कि कुछ विशेष अपवादों को छोड़कर एचआईवी परीक्षण के मामले में संसूचित सहमति का प्रयोग किया जाना चाहिये।

अनिवार्य एचआईवी परीक्षण

इस समय भारतीय सशस्त्र सेवाओं के लिये अनिवार्य एचआईवी परीक्षण की जरूरत होती है। गोवा सरकार भी इन दिनों विवाह पूर्व अनिवार्य एचआईवी परीक्षण कराने का प्रावधान बनाने के बारे में विचार कर रही है। अनिवार्य एचआईवी परीक्षण के मुद्दे पर एड्स आगमन के आरंभिक दिनों से ही निरंतर विवाद छिड़ा हुआ है। यह परीक्षण सरल होने के कारण आकर्षक प्रतीत होता है, लेकिन जागरुक सहमति न लिए जाने के कारण यह जटिल मुद्दा है। जानकार लोग रोग फैलने की आशंका वाले चुने हुये स्थानों तथा लक्षित समूहों के लिये अनिवार्य परीक्षण का समर्थन करते हैं। ये समूह निम्नलिखित हैं।

- सेक्स वर्कर
- इंजेक्शन से मादक द्रव्य लेने वाले लोग
- समलैंगिक
- जेल बंदी
- गर्भवती महिला/नवजात शिशु
- विवाह करने वाले युगल
- हीमोफीलिया से ग्रस्त लोग
- स्वास्थ्यकर्मी
- प्रवासी
- यौन हमले/अपराध के शिकार तथा यौन अपराधी
- पुलिस अधिकारी
- संपूर्ण आबादी

अनिवार्य एचआईवी परीक्षण के जरिये सरकार को अधिक से अधिक एचआईवी संक्रमित लोगों का पता लगाने तथा उच्च खतरे वाले समूहों के जांच–परीक्षण पर अधिक ध्यान देने में मदद मिलेगी। हालांकि यह मान लेने पर कि इस महामारी की सम्पूर्ण तस्वीर अनिवार्य परीक्षण से ही संभव है, फिर भी इस महामारी को समाप्त करने की समस्या बनी रहेगी। किसी व्यक्ति द्वारा उठाये गये स्वैच्छिक कदमों से उसके व्यवहार में वांछित परिवर्तन हो सकता है।[35] व्यवहार में यह परिवर्तन लोगों में व्यक्तिगत उत्तरदायित्व की भावना को कायम करके ही लाया जा सकता है, न कि सुरक्षा के मिथ्या अहसास को कायम करने से, जैसा कि सरकार करना चाहती है।"

35 यूएन एड्स/डब्ल्यू एच ओ पॉलिसी स्टेटमेंट ऑन एचआईवी टेस्टिंग एट 3

इसलिये शिक्षा एवं रोकथाम कार्यक्रम सार्वजनिक स्वास्थ्य की दृष्टि से बेहतर कदम हैं जिनके दीर्घकालिक असर होते हैं, क्योंकि ये कदम व्यक्ति को स्वयं उपाय करने के लिये प्रेरित करते हैं। परीक्षण की तुलना में रोकथाम और जागरुकता कायम करने को अधिक कारगर माना गया है। इन कार्यक्रमों के कारण स्वैच्छिक परीक्षण की दर में वृद्धि हो सकती है। सवाल यह है कि एचआईवी परीक्षण एड्स शिक्षा तथा रोकथाम के कार्यक्रम चलाये जाने से पहले ही या बाद में किये जायें। इसी तरह से क्या शिक्षा तथा रोकथाम के कार्यक्रम परीक्षण से पहले चलाये जायें या परीक्षण के बाद चलाये जायें। हालांकि सभी काम जरूरी हैं, लेकिन आम सहमति यह है कि बेहतर यह होगा कि हमारे पास जो संसाधन हैं उनके ज्यादातर हिस्से का उपयोग रोगियों की पहचान करने के बजाय रोग के खात्मे के लिये हो।

अनिवार्य परीक्षण की अन्य खामियां नीचे दी गयी हैं :

- एचआईवी/एड्स के संबंध में किसी भी योजना के तहत मानवाधिकारों का सम्मान होना चाहिये तथा इन योजनाओं को कारगर बनाने के लिये एचआईवी/एड्स ग्रस्त एवं सामान्य आबादी को स्वैच्छिक सहयोग देने के लिये आमंत्रित किया जाना चाहिये।[36]
- अनिवार्य एचआईवी परीक्षण अपर्याप्त तथा अनैतिक है और किसी भी तरीके से इसे एचआईवी संक्रमित लोगों द्वारा अन्य लोगों को होने वाले एचआईवी फैलाने को रोकने के लिये आसान रास्ता नहीं समझा जाना चाहिये। एचआईवी परीक्षण को सहयोग एवं सुश्रुषा योजना का ही एक हिस्सा बनाया जाना चाहिये। इसकी शुरुआत अस्पताल से होनी चाहिये और बाद में इसे समुदाय पर लागू किया जाना चाहिये।
- अनैच्छिक तरीके से परीक्षण किये जाने से व्यक्ति के मन में यह भावना घर कर सकती है कि परीक्षण संबंधी सूचना को उसकी इच्छा के विरुद्ध सार्वजनिक कर दिया जायेगा जिससे उसे महत्वपूर्ण सुविधाओं से वंचित होना पड़ेगा।
- बलपूर्वक एचआईवी परीक्षण निजता एवं स्वायत्तता का उल्लंघन हैं।[37]
- उच्च खतरे वाले समूहों में अनिवार्य परीक्षण करने से सामाजिक बदनामी एवं भेदभाव की भावना घर कर सकती है, क्योंकि सरकार कुछ समुदायों के बीच अंतर करने के अलावा चिकित्सा सेवा और सामाजिक सहयोग की मौजूदा व्यवस्था में एचआईवी से संक्रमित होने के सर्वाधिक खतरे से ग्रस्त लोगों के बीच का प्रावधान करती है।
- अनिवार्य परीक्षण व्यक्ति को एचआईवी परीक्षण कराने के तरीके एवं स्थितियों के बारे में योजना बनाने की क्षमता पर रोक लगाता है तथा अत्यंत संवेदनशील मुद्दे को व्यक्ति की परिस्थितियों तथा संदर्भों के प्रति किसी संवेदना बगैर सबके सामने ला देता है।
- अनिवार्य परीक्षण खर्चीला होने के साथ–साथ इसे क्रियान्वित करना कठिन है। इस कारण एड्स की रोकथाम के लिए अधिक कारगर कदम पर लगने वाले संसाधन दूसरे कामों में खर्च हो जाते हैं।
- अनिवार्य परीक्षण लोगों तथा स्वास्थ्यकर्मियों में सुरक्षा का मिथ्या अहसास भर कर सकता है और इससे विश्व स्तर पर एहतियात बरतने तथा व्यक्तिगत स्तर पर रोकथाम के कदम उठाने जैसे उपायों को पूरी तरह से लागू करने की अनिवार्यता में ढील आ सकती है।[38]

दुनिया के ज्यादातर हिस्सों में ये आलोचनायें सामान्य हैं और आमतौर पर सभी अनिवार्य परीक्षण कार्यक्रमों को लेकर होती हैं, चाहे परीक्षण जेलबंदियों के बीच हो या अधिक खतरे वाले समूहों के बीच हो। जब खर्च लाभ तथा व्यावहारिकता संबंधी आकलन के आधार एवं मूलभूत मानवाधिकारों की रक्षा की दृष्टि से विचार किया जाये तो अनिवार्य परीक्षण सतही एवं निरर्थक तरीका प्रतीत होगा।

---

36 विश्व स्वास्थ्य संगठन, स्टेटमेंट फ्रॉम द कंसल्टेशन ऑन टेस्टिंग एंड काउंसलिंग फॉर एचआईवी इंफेक्शन, डब्ल्यूएचओ ग्लोबल प्रोग्राम ऑन एड्स, 1992

37 एचआईवी टेस्टिंग फैक्ट शीट्स – फोर्सड एचआईवी टेस्टिंग टू एवॉयड इंफेक्शन? टेस्टिंग ऑव पेशेंट्स, हेल्थ केयर वर्कर्स, एंड प्रिजनर्स, कनेडियन एचआईवी/एड्स लीगल नेटवर्क, 1 (2000)

38 एचआईवी टेस्टिंग फैक्ट शीट्स – फोर्स्ड एचआईवी टेस्टिंग टू एवॉयड इंफेक्शन? टेस्टिंग ऑव पेशेंट्स, हेल्थ केयर वर्कर्स, एंड प्रिजनर्स, कनेडियन एचआईवी/एड्स लीगल नेटवर्क, 1 (2000)

सहमति एवं एचआईवी परीक्षण मामले

एचआईवी परीक्षण एवं रक्त परीक्षणों के संदर्भ में अंतर्राष्ट्रीय कानून जानकारी पर आधारित सहमति के सिद्धांत को मान्यता देता है। मानवाधिकारों पर अंतर्राष्ट्रीय समझौतों[39], निजता के संवैधानिक संरक्षण, या कानूनी सहमति के तहत निजी जीवन के सम्मान के अधिकार के आधार पर न्यायालयों ने निजी स्वास्थ्य सूचना की सत्यनिष्ठता को बरकरार रखने तथा अपने शरीर के उत्पादों पर नियंत्रण रखने के व्यक्ति के अधिकार को मान्यता दी है। इस बारे में सबसे प्रासंगिक मामले एक्स बनाम कमीशन ऑव यूरोपियन कम्युनिटीज[40] में यह फैसला दिया गया कि व्यक्ति के निजी स्वास्थ्य की स्थिति को गोपनीय रखने के अधिकार सहित निजी जीवन के सम्मान का पालन किया जाना चाहिये।

अदालत ने हालांकि चिकित्सकीय जांच, जिसमें एचआईवी की नहीं बल्कि लिम्फोसाइट्स की गणना (एड्स का पता लगाने के लिये) के लिये परीक्षण शामिल है, को भी एचआईवी परीक्षण की तरह मानते हुये कहा कि इसमें भी अपने निजी जीवन के प्रति सम्मान के एक्स के अधिकार का उल्लंघन हुआ है। हालांकि यह स्वीकार करते हुये कि चिकित्सकीय जांच जरूरी हो सकती है, अदालत ने कहा कि इनकार करने के अधिकार का पूरा सम्मान किया जाना चहिये तथा अन्य जरूरतों को भी महत्व दिया जाना चाहिये।

आर बनाम डायमेंट[41] का मामला हालांकि सीधे तौर पर एचआईवी से जुड़ा हुआ नहीं है, कनाडा की एक अदालत ने कहा कि किसी बेहोश व्यक्ति के जख्म से बहते हुये रक्त को उसकी सहमति के बगैर लेकर उसका परीक्षण करना कनाडा के संविधान में निहित निजता के अधिकार का उल्लंघन है। अदालत ने इस बात की दृढ़ता के साथ घोषणा की कि यह कार्रवाई किसी व्यक्ति की निजता पर कानूनी एवं नैतिक तौर पर अतिक्रमण है और मानवीय प्रतिष्ठा के लिये निजता का अधिकार आवश्यक है।

ब्रिटिश, कनाडियाई और अमरीकी अदालतों में जानकारी पर आधारित सहमति को महत्व दिये जाने के बावजूद ब्रिटिश और भारतीय अदालतों ने इस मामले में कम उदार – 'चिकित्सक उन्मुख'' रुख अपनाया है जबकि अमेरिका और कनाडा की अदालतों ने ''मरीज उन्मुख'' रुख अपनाया है।[42] दोनों तरह के रुखों में यह अंतर इस बात से परिलक्षित होता है कि जागरुक सहमति की अमरीकी अवधारणा के तहत सभी भौतिक सबूतों को उजागर करने की जरूरत होती है जबकि ब्रिटिश रुख के तहत यह पता लगाने के लिये कि चिकित्सक ने एक विवेकशील चिकित्सक होने के अपने कर्तव्य का उल्लंघन तो नहीं किया, लापरवाही के मानदंड का इस्तेमाल किया जाता है।[43] दूसरे शब्दों में अमेरिका/कनाडा में जागरुक सहमति की जरूरत अधिक कठोर है और इसके लिये मरीज को अधिक से अधिक जानकारियां देने की जरूरत होती है। सभी मामलों में हालांकि इनकार करने के अधिकार तथा जागरुक सहमति को महत्वपूर्ण माना गया है।

दूसरे देशों में एक अन्य रुख अर्द्ध न्यायिक प्रकृति का है। इसमें चिकित्सक समुदाय द्वारा स्वःनियोजन को महत्व दिया गया है। अमेरिका और कनाडा जैसे देशों में पेशेगत आचरण संहिता एवं नैतिकता के तहत जानकारी पर आधारित सहमति के बगैर एचआईवी परीक्षण करने पर चिकित्सक के खिलाफ अनुशासनात्मक कार्रवाई हो सकती हैं।[44] इसके कारण चिकित्सक का लाइसेंस रद्द हो सकता है या उसे गैर पेशेवर आचरण

39 यूडीएचआर का अनुच्छेद–12

40 एक्स बनाम कमीशन ऑव द यूरोपियन कम्युनिटीज (1995) आईआरएलआर 320 (मुकदमा संख्या – सी 404/92 पी) (यूरोपियन कोर्ट ऑव जस्टिस)

41 आर बनाम डायमेंट, 88 सी आर (3डी) 348, 10 एम.वी.आर. (2डी) 1

42 अरुण बाल, इंफार्म्ड कंसेंट – लीगल एंड एथिकल आस्पेक्ट्स : ए रिव्यू आफ द केस लॉ, इंडियन जर्नल ऑव मेडिकल इथिक्स, अप्रैल–जून, 1999 –7 (2) http://www.issuesinmedicalethics.org/072mi056.html

43 वही

44 एचआईवी टेस्टिंग फैक्ट शीट्स : कंसेंट टु टेस्टिंग एट 2

के लिये दंडित होना पड़ सकता है। एक और संभावना यह हो सकती है कि चिकित्सक का पेशेगत आचरण संहिता को कानूनी स्वरूप प्रदान किया जाये। इस तरह चिकित्सक अगर अपने पेशेगत आचारण संहिता का उल्लंघन करता है तो एक मरीज की देखभाल एवं चिकित्सक के संबंध में जो संहिता उस पर लागू की गई है उसका उल्लंघन माना जायेगा।

ऐसे उपाय उन देशों में हालांकि अधिक उपयोगी हैं जहां अत्यंत नियंत्रित चिकित्सकीय प्रणाली है, लेकिन हो सकता है कि ये उपाय संसाधनों के अभाव से जूझ रहे गरीब देशों में पर्याप्त रूप से मददगार साबित न हों जहां आमतौर पर सामाजिक कार्यकर्ता या लेबोरेट्री तकनीशियन ही परीक्षण करते हैं। इसके अलावा जानकार सहमति के स्व–नियमन के साथ उसी तरह की खामियां हैं जिस तरह की खामियां गोपनीयता के संरक्षण के स्व–नियमन के साथ हैं। इस तरह से निजता, गोपनीयता एवं जानकार सहमति से जुड़े मुद्दों के बारे में सर्वोत्तम समाधान सुव्यवस्थित एवं अधिकारोन्मुख कानून में निहित हो सकता है।

भारत में गोपनीयता एवं निजता

दूसरे देशों की तुलना में भारत में गोपनीयता एवं जागरुक सहमति के उल्लंघन संबंधी विधि शास्त्र अभी ठीक से विकसित नहीं हुआ है। इसके अलावा खासतौर पर एचआईवी/एड्स के संबंध में गोपनीयता एवं निजता के बारे में व्यापक कानूनी अनुक्रिया अभी तक विकसित नहीं हो पायी है। इसके बजाय चिकित्सकीय नैतिकता एवं जानकारियों की निजता संबंधी कानून जैसे निजता एवं गोपनीयता कानूनों का कामचलाऊ तंत्र मौजूद है जो एचआईवी/एड्स से ग्रस्त मरीजों के लिये पर्याप्त सुरक्षा मुहैया नहीं करता है। इसलिये अदालतों को घिसे–पिटे सामान्य कानूनों के ढांचे और उपायों के सामने छोड़ दिया गया है। भारतीय संविधान चूंकि निजता अथवा गोपनीयता के बारे में कोई स्पष्ट अधिकार मुहैया नहीं करता है, इसलिये न्यायपालिका को भारतीय संविधान के अनुच्छेद–21 का सहारा लेने को विवश होना पड़ता है, जिसमें निजता के अधिकार को जीवन एवं स्वतंत्रता के अधिकार के तहत शामिल किया गया है।[45] निजता के भारतीय मामलों के दो उदाहरणों में उच्चतम न्यायालय का यह फैसला शामिल है कि लोगों को परिवार, विवाह, शिक्षा जैसे निजी मामलों में 'सहमति के बगैर उजागर किये जाने' के विरुद्ध अपनी निजता को सुरक्षित रखने का अधिकार है चाहे उसका सच जो भी हो[46] तथा वह जानकारी जिसके लिये किसी महिला के जीवन से जुड़े निजी मामलों को उजागर करने की जरूरत पड़ती हो, नहीं मांगी जा सकती है।[47]

कानूनी प्रक्रियाओं में एचआईवी/एड्स के संदर्भ में बम्बई उच्च न्यायालय ने अन्य अंतर्राष्ट्रीय फैसलों की तरह अपने फैसले में कहा कि एचआईवी/एड्स से ग्रस्त लोग अपनी पहचान को उजागर करने से बचने के लिये एक छद्म नाम के तहत अपने अधिकार पाने के लिये मुकदमा लड़ सकते हैं।[48]

भारत में निजता के संवैधानिक अधिकार को हालांकि मौलिक अधिकारों की श्रेणी में रखा गया है, लेकिन इसके दायरे को किसी भी तरह से सीमित नहीं किया गया है। मिसाल के तौर पर अनुच्छेद–21 से निजता के अधिकार की व्युत्पत्ति हुई है जिसका अर्थ यह है कि यह अधिकार किसी व्यक्ति के खिलाफ नहीं बल्कि राज्य के खिलाफ प्रयुक्त हो सकता है।[49] संविधान के मूल पाठ में निजता के अधिकार को स्पष्ट तौर पर सुनिश्चित नहीं किया गया है और इस तथ्य से अनुच्छेद–21 में निहित निजता संबंधी कानून के लिये एक और सीमा तय हो जाती है। इसके परिणामस्वरूप, निजता एवं गोपनीयता के अधिकार को परम अधिकारों

45 पीयूसीएल बनाम भारत सरकार संघ एवं अन्य (एआईआर 1997 एससी 568)
46 ऑटो शंकर 1994
47 नीरा माथुर बनाम एलआईसी एआईआर 1992 एस सी 392
48 एमएक्स आफ बम्बई इंडियन इनहैबिटेंट बनाम जेडवाई एवं अन्य, एआईआर 1997 बम्बई 406 (1997)
49 खड़क सिंह बनाम उत्तर प्रदेश सरकार, 1 एससीआर 332 (1964)

के रूप में नहीं माना जाता है, बल्कि इसे वैसे अधिकारों के तहत माना जाता है जिन्हें जनता के हितों के अनुसार संतुलित किया जा सके और इसके अनुसार घटाया जा सके।[50] इसलिये अन्य मौलिक अधिकारों एवं अन्य हितों के साथ टकराव होने की स्थिति में निजता के अधिकार को दरकिनार कर दिया जाता है।

गोपनीयता

एचआईवी/एड्स से ग्रस्त लोगों की गोपनीयता के बारे में अन्य न्यायिक फैसलों की तरह भारतीय कानून में आम लोगों या खास व्यक्ति को उत्पन्न होने वाले खतरे की गंभीरता तथा गोपनीयता के अधिकार के बीच संतुलन कायम किया गया है, हालांकि संविधान या कानून की किताबों में निजता संरक्षण की स्पष्ट कमी को देखते हुये भारतीय न्यायपालिका निजता एवं गोपनीयता के अधिकार को हालांकि महत्वपूर्ण मानती है लेकिन इन अंतर्निहित अधिकारों का संरक्षण कम कर पाती है। ऐसा करते हुये भारतीय न्यायपालिका ने आमतौर पर गोपनीयता के अधिकार की तुलना में सार्वजनिक हितों को ज्यादा महत्व दिया है। दोनों मूल्यों के बीच टकराव की स्थिति में अदालत लगातार गोपनीयता के अधिकार की कीमत पर उस अधिकार को महत्व देती है जिससे सार्वजनिक नैतिकता अथवा सार्वजनिक हित (परंपरागत अर्थों में) को बढ़ावा मिले।[51]

येप्थोमी बनाम अपोलो अस्पताल[52] के मामले में अदालत के सामने एक ऐसी स्थिति उत्पन्न हुयी जब अनुच्छेद–21 के दो स्वतंत्र घटकों निजता के अधिकार तथा जीवन के अधिकार के बीच सीधे टकराव था। अदालत ने पाया कि एचआईवी से संक्रमित पुरुष की प्रेमिका को अनुच्छेद–21 के तहत स्वस्थ जीवन का अधिकार दिया गया है लेकिन इस अधिकार का अनुच्छेद–21 में एचआईवी संक्रमित पुरुष को प्रदत्त निजता के अधिकार (जीवन के अधिकार से व्युत्पन्न) से सीधा टकराव होता है। अदालत ने दोनों व्यक्तियों के अधिकारों के टकराव के मामले में व्यापक जनहित के घटक – स्वस्थ्य जीवन के अधिकार को वरीयता दी। अदालत ने फैसला सुनाया कि चूंकि प्रेमिका के जीवन का अधिकार सार्वजनिक नैतिकता अथवा सार्वजनिक हित को बढ़ावा देगा इसलिये उसके अधिकार के समक्ष एचआईवी संक्रमित व्यक्ति के निजता के अधिकार से ऊपर है।

यह मामला दो विशिष्ट जनहितों के बीच टकराव के संबंध में उभरते विचारों के उलट निजी हितों बनाम जनहितों के परंपरागत प्रतिमानों को सामने लाता है। अदालत ने हालांकि एचआईवी/एड्स से ग्रस्त लोगों की जरूरतों को महसूस किया लेकिन उसने मौजूदा समय की स्वीकार्य नैतिकता के दबाव से बाध्य हो कर किसी उत्तरदायित्व के बगैर गोपनीयता के उल्लंघन को होने दिया। इसी तरह से मिस्टर एक्स बनाम अस्पताल जेड के मामले में उच्चतम न्यायालय ने कहा कि किसी एचआईवी संक्रमित व्यक्ति का गोपनीयता का अधिकार बीमारी के संक्रमण की घातक प्रकृति के कारण अपवाद का विषय है।[53] उच्चतम न्यायालय ने गोपनीयता के मूल्य को स्वीकार किया है, लेकिन आज तक वह लगातार यह मानता रहा है कि एचआईवी संक्रमण की प्रकृति, महामारी तथा सहवर्ती सार्वजनिक हित अपवाद हैं।

जानकारी पर आधारित सहमति

अदालतों ने जानकारी पर आधारित सहमति, जो अनुच्छेद–21 के निजी स्वतंत्रता के अधिकार से ही व्युत्पन्न हुआ है, के लिये भी कम संरक्षित रुख अपनाया है। एचआईवी/एड्स महामारी के विरुद्ध संघर्ष में सार्वजनिक

---

50 दीपिका जैन एवं विक्रमादित्य राय, एचआईवी/एड्स बिल : रे ऑव होप एट लास्ट – कंसेंट एंड कंफिडेंशियलिटी, कॉम्बैट लॉ, 46 (अप्रैल–मई 2006) जिसमें शारदा बनाम धर्मपाल, एआईआर 2003 एस सी 3450 मामले का उल्लेख किया गया है

51 डॉ. टोकुघा येप्थोमी बनाम अपोलो हॉस्पिटल इंटरप्राइजेज लिमिटेड एवं अन्य, एआईआर 1999 एससी 495

52 वही

53 मिस्टर एक्स बनाम हॉस्पिटल जेड (एआईआर 2003 एससी 664)

हित के लिए जानकार सहमति के आधार पर इनकार करने के अधिकार को अक्सर अदालतों द्वारा दरकिनार किया जाता रहा है। गोपनीयता के मामलों में अदालत ने निजता तथा जानकार सहमति के व्यक्ति के अधिकारों को जनहित के घटक के रूप में स्वीकार करने के बजाय सार्वजनिक एवं निजी क्षेत्रों के बीच स्पष्ट रूप से अंतर किया है।

आम जनता बनाम महाराष्ट्र सरकार[54] के मामले में सैकड़ों लड़कियों एवं बाल वेश्याओं को वेश्यावृति के धंधे से निकालने के बाद उनकी एचआईवी की जांच की गई। बम्बई हाई कोर्ट ने इस घटना का स्वयं संज्ञान लेते हुये यह पाया कि अनिवार्य परीक्षण सही था, क्योंकि अगर वेश्यालय चलाने वालों को चेतावनी देने के लिये कोई कदम नहीं उठाया जाता तो पूरे देश में भयावह स्थिति उत्पन्न हो सकती थी।

अदालत में बहस दो स्तरों पर आगे बढ़ी– पहला, अदालत ने कहा कि सरकार को आम लोगों तथा सेक्स वर्करों को शिक्षित करने के लिये "समुचित कदम" उठाने चाहिये। दूसरा, अदालत ने यह उल्लेख किया कि चूंकि संविधान के अनुच्छेद 21 के तहत एचआईवी संक्रमित लोगों को अलग रखा जाना असंवैधानिक नहीं है, इसलिये उनका बलपूर्वक एचआईवी परीक्षण भी असंवैधानिक नहीं है। इन सभी को सम्मिलित रूप में लेते हुये अदालत ने अंतिम तौर पर फैसला सुनाया कि अनिवार्य परीक्षण से अनुच्छेद–21 का उल्लंघन नहीं होता है और एचआईवी एवं एड्स के संबंध में शिक्षा एवं सूचना से संबद्ध नीतियां महत्वपूर्ण हैं। अदालत ने कभी भी एचआईवी परीक्षण की भूमिका पर विचार नहीं किया, उसने केवल प्रथम दृष्टि में यह माना कि अनिवार्य परीक्षण एचआईवी की रोकथाम के लिये एक "उचित कदम" है। इस मामले में अनिवार्य परीक्षण के सार्वजनिक स्वास्थ्य संबंधी फायदों अथवा परीक्षण से इनकार करने के अधिकार के बारे में बहस को शामिल नहीं किया गया। व्यापक दृष्टिकोण से अनुच्छेद–21 में सामान्य सार्वजनिक स्वास्थ्य सरोकारों के जरिये जागरुक सहमति के वैयक्तिक अधिकार को अनिवार्य तौर पर दबाया गया है। इसलिये आम जनता मामला निजी बनाम सार्वजनिक के बीच एक और टकराव को प्रस्तुत करता है।

एचआईवी/एड्स के निजी और सार्वजनिक पहलुओं के बीच के टकराव को सीधे तौर पर एम विजय बनाम एससीसीएल[55] के तहत विचार किया गया जहां हैदराबाद स्थित आंध्र प्रदेश उच्च न्यायालय ने कहा कि अनुच्छेद–47 (जन स्वास्थ्य में सुधार के लिये दिशानिर्देशक सिद्धांत) के अनुसार एचआईवी संक्रमित लोगों की पहचान करने की जिम्मेदारी सरकार पर है और इसलिये अनुच्छेद–47 में सरकार को सौंपी गई जिम्मेदारी के कारण एचआईवी संक्रमित व्यक्ति की पहचान के लिये उठाया गया "कोई भी कदम" संवैधानिक है। इसलिये एचआईवी संक्रमित लोगों की पहचान के उद्देश्य से बनाया जाने वाला कोई कानून अगर 'तर्कसंगत एवं समुचित' है तो वह कानून संवैधानिक है और उससे अनुच्छेद–21 का उल्लंघन नहीं होता है। उच्चतम न्यायालय ने शारदा बनाम धर्मपाल[56] में इसी विचार को आगे बढ़ाया और फैसला दिया कि अदालत को यह अधिकार है कि वह किसी व्यक्ति को उसकी इच्छा के बगैर कोई चिकित्सकीय जांच कराने का आदेश दे और ऐसा करने से अनुच्छेद–24 में निहित निजी स्वतंत्रता के अधिकार तथा निजता के अधिकार का उल्लंघन नहीं होता है। उच्चतम न्यायालय ने इस बात को दोहराया कि अनुच्छेद–21 के तहत निजता के संबंध में कोई स्पष्ट अधिकार की व्याख्या नहीं की गयी है और निजता का कोई भी अधिकार ""निजी स्वतंत्रता' की व्यापक व्याख्या में ही अंतर्निहित है। एम विजया सहित अन्य मामलों में दिये गये पूर्ववर्ती फैसलों के आलोक में उच्चतम न्यायालय ने एक बार फिर यह फैसला दिया कि महत्वपूर्ण सार्वजनिक हितों के लिये निजता को सीमित किया जा सकता है और मौलिक अधिकारों के बीच टकराव की स्थिति में, "उन्हीं अधिकारों को प्राथमिकता दी जायेगी जिनसे सार्वजनिक नैतिकता को कायम रखने में मदद मिलती हो।"

54 आम जनता बनाम महाराष्ट्र सरकार एवं अन्य, 1997(4) बम्बई सीआर 171
55 एम विजय बनाम अध्यक्ष एवं प्रबंध निदेशक सिंगरेनी कोयलरीज कम्पनी लि. एवं अन्य, 2002 एसीजे 32
56 शारदा बनाम धर्मपाल एआईआर 2003 एससी 3450

निष्कर्ष

भारत में निजता, सहमति एवं गोपनीयता के बारे में व्यापक कानून आदर्श समाधान है। अभी ऐसे कानून के बगैर हालांकि उच्चतम न्यायालय के फैसले न तो अकाट्य होते हैं और न ही अनिवार्य रूप से ऐसे संरक्षणों के लिये निर्णायक होते हैं। जब परंपरा के जरिये निजता के अधिकारों का संरक्षण नहीं हो रहा हो, जैसा अभी तक हुआ है, तो इन अधिकारों के बारे में फैसले देनें के लिये कोई व्यवस्था होने से वैयक्तिक अधिकारों को बरकरार रखा जा सकता है। एचआईवी/एड्स के प्रति कारगर रुख अपनाने में अदालत का न्यायशास्त्र प्रतिबद्ध प्रतीत होता है। इन फैसलों की यही ताकत है। इन फैसलों की ख़ामी यह है कि वे एचआईवी/एड्स से ग्रस्त लोगों के अधिकारों को व्यापक सार्वजनिक हितों के लिये अवरोधक मानते हैं।

सार्वजनिक कल्याण एवं जनहित को बढ़ावा देने वाले मौजूदा ढांचे के मद्देनजर निजता एवं गोपनीयता के मानवाधिकारों की रक्षा करने वाली न्याय व्यवस्था के लिये नयी अवधारणाओं के तहत इन टकरावों पर पुनर्विचार करने की जरूरत है। इसलिये "दो सार्वजनिक हितों से जुड़े दो मौलिक अधिकारों" (एचआईवी/एड्स से ग्रस्त लोगों की पहचान एवं संक्रमण की रोकथाम बनाम महामारी की रोकथाम के लिये व्यापक हस्तक्षेप और वैयक्तिक प्रतिष्ठा की रक्षा के बीच समायोजन) के टकराव से जुड़े मामलों का नीति निर्माण, न्यायप्रक्रिया और सामाजिक सुधार के सभी स्तरों पर समाधान होना चाहिये।

विश्वास जरूरी है। अगर पीएलएचए अपने चिकित्सकों, सलाहकारों, सरकारों और उन्हें बचाने वाले कानूनों पर विश्वास नहीं करेंगे तो इस महामारी से मुकाबले के मामले में उन पर भी विश्वास नहीं किया जा सकता है। गोपनीयता के उल्लंघन, निजी स्वास्थ्य के मामले में जबरन हस्तक्षेप और अन्य गोपनीय आचरणों के उल्लंघन को अनुमति देने वाली पितृसत्तात्मक नीतियां एक–दूसरे से अलग करेंगी तथा लोगों की जरूरतों का दमन करेंगी। सरकारी अधिकारियों की पूरी मंशा हालांकि जनकल्याण की हो सकती है, लेकिन उन्हें इस बात को समझना होगा कि जन कल्याण व्यक्तियों से शुरू होता है और ऐसे में एचआईवी/एड्स जैसी महामारी से निबटने के मामले में वैयक्तिक सहयोग ही दीर्घकालिक समाधान के लिये एकमात्र रास्ता बचता है। इस धारणा की पुनर्विचार और पुनर्समीक्षा जरूरी है कि लाखों लोगों के मौलिक मानवाधिकारों की रक्षा करना जन कल्याण के मार्ग में बाधा है। आम लोगों के सभी हितों की शुरुआत व्यक्ति के कल्याण से होती है।

अधिक जानकारी के लिये कृपया निम्नलिखित देंखे-

- अरुण बाल, इन्फार्मड् कंसेंट – लीगल एंड एथिकल आस्पेक्ट्स : ए रिव्यू ऑव द केस लॉ, इंडियन जर्नल आफ मेडिकल एथिक्स, अप्रैल–जून, 1999– 7 (2) http://www.issuesinmedicalethics.org/072mi056.html
- राल्फ जर्गेन्स, *एचआईवी टेस्टिंग एंड कांफिडेंशियलिटी : फाइनल रिपोर्ट*, कनेडियन एड्स लीगल नेटवर्क एंड कनेडियन एड्स सोसायटी, 2001 http://www.aidslaw.ca/maincontent/issues/testing/01introe.html
- लेस्ली ई वॉल्फ, जेडी, एमपीएच, और बर्नार्ड लो, एमडी, इथिकल डायमेंशन्स ऑव एचआईवी/एड्स, एचआईवी इंसाइट नॉलेज बेस चैप्टर, अगस्त 2001
- ओपनिंग अप द एचआईवी/एड्स इपिडेमिक,. यूएनएड्स बेस्ट प्रैक्टिस कलेक्शन, यूएन एड्स, 8 (2000)
- ए लांग वे फ्रॉम देयर टु हेयर : ह्यूमन राइट्स एप्रोचेज टु एचआईवी/एड्स इन ए लोकल कनेडियन एचआईवी/एड्स लॉ रिव्यू, अप्रैल 2005
- एचआईवी टेस्टिंग फैक्ट शीट्स: बैनिफिट्स फ्रॉम टेस्टिंग, कनेडियन एचआईवी/एड्स लीगल नेटवर्क, 2000

खंड-पांच

जोखिम की संभावना और अनदेखी/उपेक्षा

अध्याय 8	:	महिलायें और एचआईवी
अध्याय 9	:	बच्चे एवं एचआईवी
अध्याय 10	:	कैदी एवं एचआईवी
अध्याय 11 (ए)	:	व्यावसायिक यौनकर्मी और एचआईवी/एड्स
अध्याय 11 (बी)	:	एमएसएम और एचआईवी/एड्स
अध्याय 11 (सी)	:	सुई द्वारा मादक द्रव्यों का सेवन और एचआईवी/एड्स
अध्याय 12	:	खाद्य सुरक्षा तथा एचआईवी/एड्स
अध्याय 13	:	शरणार्थी और एचआईवी/एड्स

8

महिलायें और एचआईवी

महामारी का नारीकरण

पूरे विश्व की महिलाओं के लिए सुरक्षा (अर्थात् शारीरिक, यौन, मौखिक, मनोवैज्ञानिक एवं अन्य प्रकार की हिंसा तथा आर्थिक स्वतंत्रता की कमी से मुक्ति) ऐसा मसला है, जो उनके जीवन में अन्य सभी मसलों से अधिक महत्वपूर्ण होता है।[1] यूएनएड्स ने जुलाई 2006 की अपनी रिपोर्ट में बताया कि आज एचआईवी और एड्स के साथ जी रहे वयस्कों में लगभग आधी महिलायें हैं। विगत दो वर्षों में विश्व के प्रत्येक क्षेत्र में एचआईवी से संक्रमित महिलाओं और लड़कियों की संख्या बढ़ी है, विशेषकर पूर्वी यूरोप, एशिया और लैटिन अमेरिका में इसकी दर बेहद तेजी से बढ़ रही है। अफ्रीका के उप सहारा क्षेत्र में एचआईवी से ग्रस्त वयस्कों में 60 प्रतिशत महिलायें और लड़कियां हैं। दुनिया भर में एचआईवी/एड्स से ग्रस्त व्यक्तियों में महिलाओं का अनुपात लगातार बढ़ रहा है। दुनिया भर में एचआईवी संक्रमित वयस्कों में महिलाओं की संख्या 1997 में 47 प्रतिशत थी, जो 2002 में बढ़कर 50 प्रतिशत हो गयी। युवाओं में यह अंतर तेज़ी से बढ़ा है। एचआईवी से ग्रस्त सभी युवाओं में 75 प्रतिशत महिलायें हैं।[2]

एचआईवी/एड्स से ग्रस्त अधिकतर महिलायें उम्र के उस दौर में हैं जब वे अधिक से अधिक प्रजनन कर सकती हैं। एचआईवी से ग्रस्त होने की बात का केवल पता चलते ही भेदभाव, लिंग आधारित हिंसा, बेरोजगारी, बेसहारा होना और लगभग सभी मानवाधिकारों का हनन होता है। यह महामारी युवाओं और बूढ़ों पर समान रूप से मार करती है, उनको भी शिकार बनाती है जो बीमार हो जाते हैं और उन्हें भी जो स्वस्थ रहते हैं, चाहे एक किशोरी हो, जो स्कूल की फीस जमा करने के लिए यौन संबंध बनाती है और चाहे बूढ़ी दादी हो जो अपने अनाथ पोतों की देखभाल के लिए संघर्ष करती है। महामारी के नारीकरण से वह असमानता और भेदभाव खुलकर सामने आ गया है, जिसके कारण महिलाओं के सामने अपनी रक्षा के विकल्प सीमित हो जाते हैं। कई महिलायें हालांकि अत्यधिक खतरे वाला आचरण नहीं करती हैं, तो भी उनके एचआईवी से ग्रस्त होने की आशंका बहुत अधिक होती है। कुछ स्थानों पर तो विवाह ही खतरे का कारण होता है।[3]

इस खतरनाक रुझान के बावजूद महिलायें अब भी मूलभूत तथ्यों जैसे एचआईवी/एड्स कैसे फैलता है और उसके संक्रमण से कैसे बचा जा सकता है, के बारे में पुरुषों की अपेक्षा कम जानती हैं। जितनी कम जानकारी उनके पास होती है, वह उनके साथ हो रहे भेदभाव और हिंसा तथा विशेषकर विवाह की स्थिति

1 रीड एलिज़ाबेथ, एंड बेली माइकल, "यंग वीमेन : साइलेंस, ससेप्टीबिलिटी एंड द एचआईवी ऐपिडेमिक", इश्यूज पेपर 12, यूएनडीपी एचआईवी एंड डेवलपमेंट प्रोग्राम

2 "इम्पैक्ट ऑव एचआईवी/एड्स ऑन जेंडर, ऑर्फन्स एंड चिल्ड्रन", डिस्कशन आउटकम्स ऑव कमीशन ऑव एचआईवी/एड्स एंड गवर्नेंस इन अफ्रीका (सीजीएचए) इंटरएक्टिव, कैमरून, नवंबर 2004, इकॉनोमिक कमीशन फॉर अफ्रीका

3 http://www.unfpa.org/hiv/women.htm

में यौन संबंधों से इंकार करने या सुरक्षित सेक्स के लिए आग्रह करने के मामले में उनकी अक्षमता के कारण बेकार हो जाती है।

यूएनएफपीए के अनुसार ताजा प्रमाण बताते हैं कि विभिन्न दिशाओं में किये जा रहे सतत् और सघन प्रयासों से व्यवहार में परिवर्तन, जैसे कंडोम के अधिक इस्तेमाल, देर से यौन संबंध स्थापित करना और यौन संबंधों के मामले में कम से कम साथी बनाना आदि के जरिये एचआईवी संक्रमण के मामले कम हुए हैं। लेकिन वैश्विक स्तर पर संक्रमण की दर अब भी बढ़ रही है।[4]

पुरुषों और महिलाओं को एचआईवी/एड्स से ग्रस्त बनाने में लैंगिक असमानता एक प्रमुख कारण है। विभिन्न एचआईवी रणनीतियों में एक ऐसी आदर्श दुनिया की कल्पना की गयी है, जिसमें माना जाता है कि सभी लोग समान हैं, अपनी पसंद चुनने के लिए स्वतंत्र हैं, सेक्स से इंकार कर सकते हैं, अपने साथी के प्रति वफादार हैं अथवा सुरक्षा के लिए कंडोम का इस्तेमाल करते हैं। लेकिन वास्तविक तस्वीर अलग है – महिलायें और लड़कियां एचआईवी से संबंधित ऐसे कई खतरों का सामना करती हैं, जिनका सामना पुरुषों और लड़कों को नहीं करना पड़ता। इनमें से कुछ तो सामाजिक संबंधों और उनकी आर्थिक वास्तविकताओं में निहित हैं और उन्हें आसानी से बदला नहीं जा सकता। कई स्थानों पर पुरुषों की पहचान ही सीधे यौन क्षमता से जुड़ी होती है और ऐसे में सुरक्षित सेक्स को पुरुषत्व के लिए खतरा माना जा सकता है। विशेषकर युवा पुरुषों पर अपना पौरुष साबित करने के लिए खतरे उठाने का दबाव हो सकता है। लड़कियों और युवा महिलाओं द्वारा उठाये जाने वाले यौन खतरे असमान लैंगिक संबंधों, संसाधनों, संपत्ति, आय के अवसरों और सामाजिक शक्ति तक असमान पहुंच के कारण होते हैं। महिलाओं और लड़कियों, खासतौर पर महिला प्रधान परिवारों में रहने वाली महिलाओं और लड़कियों को एचआईवी के संक्रमण से बचाने और उसके प्रभाव से निपटने में सक्षम बनाने के लिए सतत् आजीविका सुनिश्चित करने हेतु आधारभूत ढांचागत सहायता मुहैया करायी जानी चाहिये।[5]

लिंग को अब एचआईवी/एड्स समीकरण का एक अभिन्न अंग माना जाता है।[6] युवा महिलायें संक्रमण से अधिक प्रभावित होती हैं, प्रौढ़ महिलाओं और युवा लड़कियों पर देखभाल करने का बेजा बोझ पड़ता है। लैंगिक विषमता और महिलाओं तथा लड़कियों के मानवाधिकारों का कम सम्मान एचआईवी/एड्स महामारी में प्रभावी क्षमता के नजरिये से और सामाजिक न्याय के तकाजे के कारण मुख्य कारक हैं।

लिंग, स्वास्थ्य, विकास और सामाजिक–आर्थिक स्थिति के बीच जटिल समीकरण का अर्थ है कि लिंग और महिलाओं तथा पुरुषों की एचआईवी/एड्स से संक्रमित होने की आशंका को महत्वपूर्ण मसला मानकर स्वास्थ्य क्षेत्र के साथ–साथ शिक्षा, मीडिया और सार्वजनिक नीति के जरिये निपटना चाहिये।

मानवाधिकार और एचआईवी/एड्स

मानवाधिकारों के प्रति कम सम्मान से एचआईवी/एड्स का प्रभाव बढ़ रहा है और गंभीर भी हो रहा है। जिन लोगों की सूचना, शिक्षा और स्वास्थ्य सेवाओं तक पहुंच नहीं है अथवा कम पहुंच है, उनके एचआईवी से संक्रमित होने का खतरा बढ़ा है। अपने मानवाधिकारों के इस्तेमाल की किसी भी व्यक्ति की क्षमता एचआईवी/एड्स के प्रसार और दुनिया भर में लोगों तथा समुदायों पर उसके प्रभाव से जुड़ी होती है। एचआईवी/एड्स के प्रसार से मानवाधिकारों के क्रियान्वयन में होने वाली प्रगति पर भी बुरा असर पड़ता है, क्योंकि इससे देश

4 http://www.unfpa.org/hiv/index.htm

5 http://www.unfpa.org/gender/aids.htm

6 http://www.genderandaids.org/downloads/events/Fact%20Sheets.pdf page 5. यूएनएड्स इंटर–एजेंसी टास्क टीम ऑन जेंडर एंड एचआईवी/एड्स

के संसाधनों पर जोरदार दबाव पड़ता है और सभी नागरिकों को अधिकारों के तौर पर गारंटी की गयी सभी सेवायें मुहैया कराने के प्रयास भी धूमिल होते हैं। कई देशों में कुछ निश्चित समूहों जैसे गरीबी में जीवन काट रही महिलाओं और लड़कियों में एचआईवी/एड्स की विषम दर मौलिक अधिकारों तक पहुंच और यौन अपराधों तथा एचआईवी/एड्स के खतरों के बीच व्यापक संबंध प्रदर्शित करती है।[7] महिलाओं और लड़कियों की एचआईवी/एड्स से ग्रस्त होने की आशंका मानवाधिकार संबंधी अन्य मसलों से और भी बढ़ जाती है, जैसे जानकारी, शिक्षा और यौन स्वास्थ्य सुनिश्चित करने के लिए जरूरी सेवाओं की अपर्याप्त उपलब्धता, यौन हिंसा, महिलाओं और बच्चों के प्रजनन स्वास्थ्य पर असर डालने वाली हानिकारक परंपराओं और रीति रिवाजों (जैसे बाल एवं जबरन विवाह) पारिवारिक मामलों में कानूनी क्षमता तथा समानता का अभाव।

एचआईवी/एड्स के साथ जुड़े हुए भेदभाव से पूर्वाग्रहों, भेदभाव और लिंग, गरीबी, यौनत्व, अक्षमता तथा जातीयता से संबंधित असमानताओं को बल मिलता है। इससे अल्पवयस्क तथा अपेक्षाकृत कमजोर तबकों के संक्रमण से ग्रस्त होने की आशंका को बढ़ावा मिलता है, क्योंकि एचआईवी और एड्स से पीड़ित सदस्य स्वास्थ्य तथा सामाजिक सेवाओं से संपर्क करने में हिचकिचाते हैं। नतीजा यह होता है कि जानकारी, शिक्षा और सलाह की सबसे अधिक आवश्यकता वालों को इन सेवाओं के उपलब्ध होने पर भी लाभ नहीं हो पाता।[8]

अंतर्राष्ट्रीय मानवाधिकार कानून समान सुरक्षा के अधिकार की गारंटी देने के साथ–साथ लिंग, नस्ल, रंग, भाषा, धर्म, राजनीतिक अथवा अन्य विचार धारा, राष्ट्रीय अथवा सामाजिक उत्पत्ति, सम्पत्ति, जन्म अथवा अन्य स्थितियों के आधार पर भेदभाव से छुटकारे पर बल देता है। समानता और भेदभाव से मुक्ति तथा सभी प्रकार के मानवाधिकारों के संवर्द्धन और संरक्षण से संबंधित अनेक अंतर्राष्ट्रीय संधियों में राज्यों के कर्तव्य के बारे में बताया गया है। ये संधियां एचआईवी/एड्स के संबंध में अधिकार आधारित दृष्टिकोण के लिए कानूनी ढांचा मुहैया कराती हैं, जो एचआईवी/एड्स की रोकथाम और एचआईवी/एड्स से संक्रमित तथा पीड़ित सभी व्यक्तियों को समान देखभाल, उपचार और सहायता सुनिश्चित करने के लिहाज से महत्वपूर्ण है। समानता और भेदभाव से मुक्ति सभी मानवाधिकार संधियों और ढांचों के लिए आधारशिला का काम करती है। एचआईवी/एड्स की दर कम करने में सफल रहे देश लैंगिक असमानता से लड़कर, यौनत्व, वैवाहिक स्थिति अथवा लिंग की परवाह किये बिना सभी को अधिकार के रूप में सूचना तथा सेवाएं सुलभ कराकर ही यह कर सके हैं।[9] एचआईवी/एड्स के संबंध में जून 2001 की संयुक्त राष्ट्र महासभा संकल्प घोषणा में मानवाधिकारों को इस महामारी के जवाब में की जा रही अंतर्राष्ट्रीय कार्यवाही के केंद्र में रखा गया है और एचआईवी/एड्स से ग्रस्त लोगों तथा संक्रमण की आशंका वाले समूहों के सदस्यों के साथ भेदभाव खत्म करने के लिए देशों से पर्याप्त उपाय अपनाने की अपील करते हुए विभिन्न क्षेत्रों में मानवाधिकार कानूनों पर आधारित लक्ष्य तय किये गये हैं।[10]

एचआईवी/एड्स से निपटने में पुरुषों और महिलाओं को नागरिक के तौर पर उनके सभी अधिकारों तक समान पहुंच की गारंटी देने के लिए, शिक्षा, राजनीतिक अधिकार, विवाह एवं परिवार, सम्पत्ति, बेरोजगारी, स्वास्थ्य एवं हिंसा से बचाव जैसे क्षेत्रों में समानता दिलाने तथा भेदभाव से मुक्ति दिलाने के लिए रणनीतियां होनी चाहिये।[11] एचआईवी/एड्स और मानवाधिकारों पर अंतर्राष्ट्रीय दिशानिर्देश[12] एचआईवी/एड्स के संदर्भ में लागू होने वाले मानवाधिकार मानदंडों को रेखांकित करके और राष्ट्रीय स्तर पर किये जाने वाले कानूनी

7 http://www.genderandaids.org/downloads/events/Fact%20Sheets.pdf page9

8 http://www.genderandaids.org/downloads/events/Fact%20Sheets.pdf page10

9 http://www.genderandaids.org/downloads/events/Fact%20Sheets.pdf page10

10 द यूएन जेनरल असेम्बली डिक्लेरेशन ऑव कमिटमेंट ऑन एचआईवी/एड्स ऑव जून 2001

11 http://www.genderandaids.org/downloads/events/Fact%20Sheets.pdf page11

12 इंटरनेशनल गाइडलाइन्स ऑन एचआईवी/एड्स एंड ह्यूमन राइट्स, यूएनसीएचआर रेस 1997/33, यू.एन. डॉक्यू ई/सीएन.4/1997/150 (1997)

एवं अन्य राजनीतिक उपायों की सलाह देकर एचआईवी/एड्स महामारी के प्रति अधिकार आधारित जवाब के लिए ढांचा मुहैया कराते हैं। दिशानिर्देश–8 सलाह देता है कि 'राज्य को समुदाय के माध्यम और सहयोग से, विशेष तौर पर तैयार की गयी सामाजिक एवं स्वास्थ्य सेवाओं के जरिये एवं सामुदायिक समूहों की सहायता करके पूर्वाग्रहों और विषमताओं को दूर कर महिलाओं, बच्चों और अन्य संवेदनशील समूहों के लिए सहायक एवं सक्षम वातावरण को बढ़ावा देना चाहिये।'

दिशानिर्देशों के अनुरूप एचआईवी/एड्स के विरुद्ध लिंग–संवेदी मानवाधिकार दृष्टिकोण में निम्नलिखित बातों का ध्यान रखा जाना चाहिये :

- लिंग, गरीबी और एचआईवी/एड्स के संबंध में भेदभाव और पूर्वाग्रहों से निपटना। इसमें लिंग और एचआईवी/एड्स से संबंधित भेदभाव तथा पूर्वाग्रहों का मुकाबला करने के लिए शिक्षा तथा प्रशिक्षण कार्यक्रमों को बढ़ावा देना शामिल है।
- परिवार के भीतर कानूनी अधिकारों तक समान पहुंच और विशेषकर उत्तराधिकार, तलाक, बच्चे की रक्षा, संपत्ति का स्वामित्व, रोजगार अधिकार आदि में समान स्थिति समेत महिलाओं के मानवाधिकारों को बढ़ावा देना।
- कानून, नीतियों, रणनीतियों के विकास तथा क्रियान्वयन के जरिये महिलाओं और लड़कियों के यौन एवं आर्थिक शोषण पर लगाम लगाना।
- लिंग के वर्गीकरण के बगैर ही प्रत्येक व्यक्ति के लिए उपयुक्त जानकारी तक पहुंच समेत मानसिक एवं शारीरिक स्वास्थ्य के सर्वोच्च प्राप्य मानदंड का अधिकार सुनिश्चित करना, महिलाओं को यौन एवं प्रजनन स्वास्थ्य के बारे में निर्णय लेने का अधिकार देना, हिंसा एवं भेदभाव से मुक्ति दिलाना, वीसीटीसी तक पहुंच दिलाना, मां से बच्चे तक संक्रमण के प्रसार को रोकने के लिए गर्भवती महिलाओं हेतु सफल रणनीतियों का क्रियान्वयन और एचआईवी/एड्स से प्रभावित महिलाओं तथा लड़कियों, शिशुओं और उनके परिवारों को देखभाल, उपचार तथा सहायता मुहैया कराना।[13]

महामारी के नारीकरण को बढ़ावा देने वाले कारक

यूएनएड्स ने इस वर्ष भारत को दुनिया में सर्वाधिक एचआईवी से ग्रस्त व्यक्तियों वाला देश घोषित किया है। तेजी से बढ़ने के कारण अब यह महामारी केवल पुरुषों एवं संक्रमण की जबरदस्त आशंका वाली आबादी तक ही सीमित नहीं रह गयी है। नये संक्रमित वर्ग में महिलाओं की संख्या सबसे तेजी से बढ़ रही है। अनुमान बताते हैं कि भारत में एचआईवी संक्रमित वयस्कों में 39 प्रतिशत महिलायें हैं[14] और एचआईवी/एड्स से ग्रस्त 15 से 24 वर्ष के आयुवर्ग में युवा महिलाओं की संख्या युवा पुरुषों के मुकाबले दोगुनी है।[15] भारत जैसे विकासशील देशों में महिलायें जैविक और सामाजिक रूप से संक्रमण के प्रति अधिक संवेदनशील होती हैं। देखभाल करने वाली, घर चलाने वाली और बच्चों का पालन–पोषण करने वाली के तौर पर एक पत्नी अक्सर सुरक्षित सेक्स की बात करने में असमर्थ होती है और उसके विषाणु से संक्रमित होने के खतरे बढ़ जाते हैं। उसे अपने संक्रमित पति की देखभाल भी करनी होती है और पति की आय के अभाव में अपने बच्चों का पालन–पोषण भी करना होता है। परिवारों में देखभाल करने वाली ज्यादातर महिलायें होती हैं। जब माता–पिता अथवा अभिभावक की मौत हो जाती है और दादी और बहनों को बच्चों की देखभाल करनी पड़ती

---

13 http://www.genderandaids.org/downloads/events/Fact%20Sheets.pdf page11

14 कैसर फैमिली फाउंडेशन, "एचआईवी/एड्स इन इंडिया, "सितंबर 2005" http://www.gatesfoundation.org/nr/downloads/global-health/aids/aids_in_india_kff.pdf, नाको से उद्धृत

15 कैसर फैमिली फाउंडेशन, "एचआईवी/एड्स इन इंडिया, "सितंबर 2005" http://www.gatesfoundation.org/nr/downloads/global-health/aids/aids_in_india_kff.pdf यूएनएड्स से उद्धृत "यूथ एंड एचआईवी/एड्स ऑपर्चुनिटी इन क्राइसिस," 2002

है। अनाथ बच्चों को स्कूलों और समुदायों में भेदभाव का सामना करना पड़ता है। जिस समय एचआईवी संक्रमित लोगों में महिलाओं की बढ़ती संख्या और उनमें संक्रमण का खतरा बढ़ रहा है, ऐसे समय में महिलाओं की ही अक्सर अनदेखी कर दी जाती है।

महिलाओं में एचआईवी संक्रमण का खतरा बढ़ाने वाले कई जैविक कारक हैं। महिला के रूप में उसकी शारीरिक संरचना के कारण उसकी संवेदनशीलता बढ़ जाती है। किसी महिला को पुरुष से एचआईवी संक्रमण होने की आशंका पुरुष को महिला से संक्रमण होने की आशंका की तुलना में चार गुना है।[16] महिलाओं के जननांगों में काफी क्षेत्र में म्यूकोसा अर्थात् झिल्ली होती है, जो संभोग के दौरान काफी देर तक वीर्य के संपर्क में रहती है[17] और वीर्य में एचआईवी का स्तर योनि स्राव की अपेक्षा बहुत ज्यादा होता है।[18]

एचआईवी/एड्स के लैंगिक आयामों में कई मसले शामिल हैं, जैसे समाज में महिलाओं की आर्थिक, कानूनी, सांस्कृतिक और सामाजिक स्थिति। पहले से ही व्याप्त लैंगिक असमानता के कारण एचआईवी/एड्स महिलाओं की स्थिति को और खराब कर देता है, जिससे मौजूदा अंतर महिलाओं के लिए हालात को और मुश्किल बना देते हैं और महामारी भी फैल जाती है। इससे कई गतिविधियां शुरू होती हैं, जिनसे महिलाओं में जैविक रूप से ही एचआईवी संक्रमण का खतरा उत्पन्न नहीं होता, बल्कि उससे प्रभावित लोगों की देखभाल और मदद करने से भी उनमें संक्रमण की आशंका बढ़ जाती है। इनसे न केवल संक्रमण की आशंका के बारे में पता चलता है, बल्कि यह एचआईवी/एड्स के प्रसार को बढ़ाने में भी भूमिका निभाते हैं। एचआईवी/एड्स संक्रमण का निर्धारण करने वाले कारकों को वृहद् स्तर, सूक्ष्म स्तर, सांस्कृतिक एवं जैविक कारकों में बांटा जा सकता है और निम्न तालिका विभिन्न जटिल अंतरसंबद्ध कारकों को दर्शाती है जो व्यक्तिगत स्तर पर संक्रमण की आशंका और ढांचागत स्तर पर एचआईवी/एड्स के प्रसार पथ का निर्माण करते हैं।[19]

लिंग और एचआईवी महामारी के केंद्रीय निर्धारक[20]

वृहद् वातावरण	सूक्ष्म वातावरण	सांस्कृतिक कारक	जैवचिकित्सकीय
धन	गतिशीलता	यौन व्यवहार	विषाणु सब
संपत्ति	शहरीकरण	साथी बदलने की दर	संक्रमण की स्थिति
आय	स्वास्थ्य सेवाओं की सुलभता	समवर्ती साथी	अन्य यौन संक्रमित-- रोगों की उपस्थिति
वितरण	हिंसा के स्तर	यौन संबंध बनाने के तरीके	बड़ा म्यूकोसा सतह क्षेत्र
कानूनी	अन्य	यौन आदतें	संभोग के दौरान छोटी खरोंचें
ढांचा		कंडोम का प्रयोग	
धर्म			
प्रशासन			
अन्य			

संक्रमण

एड्स

16 एमनेस्टी इंटरनेशनल, "एचआईवी/एड्स, वुमेन एंड ह्यूमन राइट्स", http://www.amnestyusa.org/stopviolence/factsheets/hivaids.html.

17 "इंपैक्ट ऑव एचआईवी/एड्स ऑन जेंडर, ऑर्फन्स एंड चिल्ड्रेन", डिस्कशन आउटकम्स ऑव सीएचजीए इंटरैक्टिव, कैमरून, नवंबर 2004, इकॉनोमिक कमीशन फॉर अफ्रीका, पेज–6

18 यूएनएड्स, "एड्स फाइव इयर्स सिन्स आईसीपीडीः इमर्जिंग इश्यूज एंड चैलेंजिंग फॉर वीमेन, यंग पिपुल, एंड इन्फैंट्स"http://www.un-aids.org/publications/documents/human/gender/newsletter.pdf vkSj http://data.unaids.org/publications/IRC-pub01/JC150-ICPD_en.pdf.

19 'इंपैक्ट ऑव एचआईवी/एड्स ऑन जेंडर, ऑर्फन्स एंड चिल्ड्रन", डिस्कशन आउटकम्स ऑव सीएचजीए इंटरैक्टिव, कैमरून, नवंबर 2004, इकॉनोमिक कमीशन फॉर अफ्रीका, पेज–6

20 'इंपैक्ट ऑव एचआईवी/एड्स ऑन जेंडर, ऑर्फन्स एंड चिल्ड्रन", डिस्कशन आउटकम्स ऑव सीएचजीए इंटरैक्टिव, कैमरून, नवंबर 2004, इकॉनोमिक कमीशन फॉर अफ्रीका, पेज–7–10

लैंगिक हिंसा, अनाथों और एचआईवी/एड्स के बीच जटिल अंतर्संबंध

चुनौतियां और लिंग आधारित विषमता विभिन्न तरीकों से एक दूसरे को मजबूत करते हैं। सबसे पहले अनाथ लड़कियों को लड़की और अनाथ दोनों होने के कारण दोहरा खतरा रहता है और वे यौन हिंसा अथवा शोषण का शिकार हो सकती हैं। लड़कियां शिक्षा तथा स्वास्थ्य सेवाओं तक कम पहुंच पाती हैं और यह माना जाता है कि सभी अनाथों को उनके घरों, समुदायों में हाशिये पर डाल दिया जाता है और वे गरीबी का अधिक शिकार होते हैं।

दूसरी बात यह कि महिलायें देखभाल के काम में बड़ी भूमिका निभाती हैं, जहां वे बीमार, बूढ़े और अनाथों की देखभाल करती हैं। महिला प्रधान परिवार पुरुष प्रधान परिवारों की अपेक्षा अधिक गरीब होते हैं और अफ्रीका के मामले में तो यह देखा गया है कि महिलाओं के लिए अनाथों को पालना पहले से ही बढ़े हुए देखभाल के बोझ को और बढ़ा देता है।[21] इससे खर्च बढ़ते जाते हैं और गरीबी का भी नारीकरण होने लगता है। यह बेहद भयावह है क्योंकि आज सब स्वीकार करते हैं कि इस महामारी को बढ़ावा देने वाले कारकों में गरीबी मुख्य है।

तीसरा, महिलाओं और अनाथों दोनों को ही पुरुषों की अपेक्षा भेदभाव, हीनता और दरकिनार किये जाने की समस्या से ज्यादा जूझना पड़ता है, जिससे घरों, समुदायों और समाज में पहले से ही खराब उनकी स्थिति और बदतर हो जाती है।

चौथा, महिलाओं के अपने शरीर और यौनत्व पर नियंत्रण को रोकथाम की कुंजी माना जाता है और संयुक्त राष्ट्र सम्मेलनों तथा घोषणाओं[22] में इसका संरक्षण किया गया है। आज तक एचआईवी की रोकथाम के प्रयास व्यक्तिगत व्यवहार परिवर्तन और शुचिता पर केंद्रित रहे हैं और 'एबीसी' संदेश को बढ़ावा दिया गया है।[23] आज यह माना जाता है कि विवाहित और वफादार महिलायें, जो सेक्स से दूर रहती हैं, उनके भी बलात्कार अथवा यौन शोषण के शिकार होने की संभावनायें हैं और जब उन्हें अपने एकल साथी द्वारा ही संक्रमित किया जाता है, तब भी उन पर बहुपुरुषगमन अथवा विवाहेत्तर संबंधों का आरोप लगाया जा सकता है। अनाथ लड़कियों को ज्यादा खतरा होता है क्योंकि उनके सामने हिंसा तथा यौन शोषण की अधिक आशंका होती है तथा अक्सर उनका पता नहीं चलता, उनका लेखा–जोखा नहीं रखा जाता और उन्हें हाशिये पर डाल दिया जाता है।[24]

पांचवां, लड़कियों और महिलाओं के साथ हिंसा के मौजूदा स्तर खासकर यौन हिंसा समुदाय में महिलाओं की दोयम दर्जे की स्थिति को और भी बुरा बना देते हैं तथा ऐसे हालात भी पैदा कर देते हैं कि हिंसा करने वाले व्यक्ति के संक्रमित होने पर विषाणु के प्रसार की आशंका और भी बढ़ जाती है। हिंसा अजनबियों के साथ ही नहीं होती है, बल्कि रिपोर्ट बताती हैं कि बेहद अंतरंग साथी के साथ सबंधों में भी हिंसा हो जाती है। महिलाओं और बच्चों के साथ हिंसा के प्रति सामाजिक सहिष्णुता और स्वीकार्यता से उनके लिए एचआईवी का खतरा चरम पर पहुंच जाता है और वे उस चक्र का हिस्सा बन जाते हैं, जिससे एचआईवी का संक्रमण तेज होता है।

---

21 यूनिसेफ 2004

22 यूनाइटेड नेशन्स जनरल असेम्बली स्पेशल सेशन ऑन एचआईवी/एड्स, 25–27 जून 2001

23 ए–एब्सटेन फ्रॉम सेक्स बिफोर मैरिज; बी–बी फेथफुल; सी–यूज कंडोम्स

24 टाड्रिया, हिल्डा, द जेंडर डायमेंशन्स ऑव एचआईवी/एड्स इन अफ्रीका. अफ्रीकन सेंटर फॉर जेंडर एंड डेवलपमेंट (सीएचजीए), इकॉनोमिक कमीशन फॉर अफ्रीका (ईसीए), एडिस अबाबा, 2004

लिंग एवं हिंसा

"यौन हिंसा एचआईवी/एड्स को बढ़ाती है और महिलाओं के साथ भेदभाव करने और उन्हें दोयम दर्जे का बनाने से स्थिति और भी खराब हो जाती है। यह हमारे समाजों में एचआईवी/एड्स की महामारी से अभिन्न तरीके से जुड़ा हुआ है और यदि हम एचआईवी/एड्स से अच्छी तरह से निपटना चाहते हैं, तो हमें इस मसले को भी देखना होगा।" – एस्थर ऐंडेल, एसोसिएशन दी ल्यू कांट्रे लेस वॉयलेंसेज फेट्स ऑक्स

सीएचजीए सम्मेलन में फेम्स[25] वक्ता-"यौन हिंसा और एचआईवी/एड्स"

महिलाओं के साथ जबर्दस्त अन्याय के संबंध में अध्ययनों ने दिखाया है कि ज्यादातर मामलों में पुरुष हिंसा करते हैं और महिलायें शिकार होती हैं। महिलाओं के खिलाफ हिंसा मानवाधिकार उल्लंघन है, जिसे अक्सर लंबे समय से चल रहे सामाजिक और सांस्कृतिक नियम बढ़ावा देते हैं और इसे स्वीकार्य बनाते हैं।[26] बलात्कार और यौन हिंसा एचआईवी संक्रमण का खतरा बढ़ाते हैं। आंकड़ों से स्पष्ट है कि ऐसी हिंसा का स्तर घटता हुआ नहीं दिख रहा है, क्योंकि कुछ मामलों में मिथकों और गलतफहमियों के कारण संक्रमित पुरुष मानते हैं कि कुंवारी लड़की के साथ यौन संबंध बनाने (चाहे जबरन ही संबंध क्यों न बनाये जायें) से वे स्वच्छ हो जायेंगे और उनका उपचार हो जायेगा।[27] महिलाओं के साथ हिंसा के स्तर के संबंध में आंकड़े बेहद शर्मनाक हैं, लेकिन उनके बारे में लोग कम ही जानते हैं।[28]

दुनिया भर से बढ़ रहे प्रमाणों से पता चलता है कि महिलाओं और लड़कियों का बड़ा हिस्सा हिंसा का शिकार होता है। महिलाओं के साथ हिंसा, जिसमें यौन हिंसा भी शामिल है, के कई रूप हैं, जिसमें खुद को बड़ा दिखाना, अपमान और शारीरिक तथा मौखिक हिंसा सम्मिलित है। हिंसा के कृत्य अंतरंग साथी, परिजन अथवा किसी अजनबी द्वारा किये जा सकते हैं। जबरन अथवा कम उम्र के विवाह भी महिलाओं के साथ हिंसा के ही रूप होते हैं और बच्चों खासकर लड़कियों के साथ दुर्व्यवहार भी यौन हिंसा का रूप हैं, जिसके शिकार अक्सर अनाथ होते हैं क्योंकि वे माता–पिता से आमतौर पर मिलने वाली सुरक्षा से वंचित होते हैं।

विश्व स्वास्थ्य संगठन के ताजा अनुसंधान में पता चलता है कि कुछ देशों में आधे से अधिक महिलायें अपने अंतरंग साथी के हाथों यौन हिंसा का शिकार हुई हैं। हिंसा और हिंसा के खतरे से महिलाओं में एचआईवी संक्रमण का खतरा बढ़ जाता है, जिससे उनके लिए सेक्स से दूर रहना, अपने साथियों से वफादारी की मांग करना अथवा कंडोम के प्रयोग की जिद करना मुश्किल और अव्यावहारिक हो जाता है। इस प्रकार की हिंसा के कारण भी महिलायें एचआईवी की रोकथाम, देखभाल एवं उपचार सेवाओं तक नहीं पहुंच पाती हैं।[29]

महिलाओं के साथ हिंसा का अध्ययन किया गया है और इसे पितृप्रधान समाज का परिणाम माना गया है। भारत में घरेलू हिंसा का आमतौर पर लेखा–जोखा नहीं रखा जाता जबकि यह बेहद व्यापक मानी जाती है। दक्षिण एशिया में 50 प्रतिशत महिलायें घरेलू हिंसा की शिकार बनती हैं।[30] यदि कोई महिला अपने पति की बेवफाई से खुद को बचाने के लिये कंडोम के इस्तेमाल की मांग करती है, तो उस पर बेवफा होने का

25 "'इंपैक्ट ऑव एचआईवी/एड्स ऑन जेंडर, ऑर्फन्स एंड चिल्ड्रन", डिस्कशन आउटकम्स ऑव कमीशन ऑव एचआईवी/एड्स एंड गवर्नेंस इन अफ्रीका (सीजीएचए), इंटरैक्टिव, कैमरून, नवंबर 2004, इकॉनोमिक कमीशन फॉर अफ्रीका, पेज–16

26 http://womenandaids.unaids.org/issues_violence.html

27 सीजीएचए इंटरैक्टिव, कैमरून, नवंबर 2004, पेज–18

28 हीज, लोरी. "वायलेंस अगेंस्ट वीमेन : द मिसिंग एजेंडा" इन वीमेन हेल्थ : ए ग्लोबल पर्सपेक्टिव. मार्ग कोबलिंस्की, जूडिथ टिम्यान एंड जिल गे (इडीएस). वेस्टव्यू प्रेस, 1992

29 सीजीएचए इंटरैक्टिव, कैमरून, नवंबर 2004, पेज–18

30 ऑक्सफैम, "टुवर्ड्स एंडिंग वायलेंस अगेंस्ट वीमेन इन साउथ एशिया," http://www.oxfam.org.uk/what_we_do/issues/gender/bp66_evaw.htm

अथवा सेक्स के बारे में जरूरत से ज्यादा जानने का आरोप लगाया जाता है।[31] इस हिंसा के कारण भी महिलाओं में एचआईवी तेजी से फैल रहा है क्योंकि विवाहेत्तर संबंध रखने वाले और यौन संक्रमित रोगों से ग्रस्त पुरुष अपनी पत्नियों को प्रताड़ित करते हैं।[32] वैवाहिक बलात्कार आम है और पुरुषों को प्रभुता संपन्न बनाने वाले सांस्कृतिक नियमों से भी महिलाओं की स्थिति कमजोर हो जाती है, जो स्वयं को हिंसक पुरुषों से बचा नहीं पातीं। एचआईवी तब आसानी से फैलता है, जब सेक्स हिंसक अथवा बलात् होता है, क्योंकि ऐसी स्थितियों में जननांगों को चोट पहुंचना और सदमा लगना आम बात होती है। यदि कोई महिला एचआईवी संक्रमित होती है तो भी उसे अपने पति की हिंसा का शिकार होना पड़ता है।[33] महिलाओं और पत्नियों को एचआईवी के वाहक के रूप में देखा जाता है और यदि उसके पति ने ही उसे संक्रमित किया हो तो भी वह उस पर आरोप लगाता है और उसे बाहर निकाल देता है। महिलाओं को तिरस्कार, हिंसा, परित्याग, बेचारगी और बहिष्कार का खतरा उठाना पड़ता है।[34] समुदाय की ओर से तिरस्कार भी अक्सर उन्हें समुदाय से बाहर जाने पर विवश करता है और उनके बच्चे स्कूल में भेदभाव सहते हैं। एचआईवी महिलाओं और उनके परिवारों के साथ हिंसा का कारण बनता है।

घटता लिंग अनुपात

पुरुषों की अपेक्षा महिलाओं के घटते लिंग अनुपात वाले देश में इस बात के पर्याप्त प्रमाण हैं कि भारतीय समाज पितृ प्रधान है। 2001 की जनगणना में पता चलता है कि छह वर्ष की उम्र तक के प्रत्येक 1000 बालकों पर 927 बालिकायें हैं, जो 1991 की जनगणना से काफी कम है। (उसमें प्रत्येक 1000 बालकों पर 954 बालिकायें थीं)[35]

जानकारी एवं लिंग से संबंधित मसले

सामाजिक प्रतिबंध महिलाओं को सेक्स और यौनत्व के बारे में बात करने से रोकते हैं और ज्यादातर महिलाओं को अपने शरीर और प्रजनन तंत्र के बारे में काफी कम जानकारी होती है। शिक्षा की इस कमी का नतीजा अनभिज्ञता और शक्तिहीनता के रूप में सामने आता है, जिससे वे एचआईवी/एड्स के खतरे के दायरे में आ जाती हैं। परिणामस्वरूप अनेक महिलायें यही नहीं जानती हैं कि एचआईवी कैसे फैलता है और उससे कैसे बचा जा सकता है। कई संस्कृतियों में लड़कियों को यौन मसलों से अनभिज्ञ माना जाता है और यदि वे यौन संक्रमित रोगों और एचआईवी/एड्स समेत यौनत्व के मसलों में दिलचस्पी दिखाती हैं अथवा उनके बारे में जानकारी रखती हैं तो उन्हें कामुक माना जा सकता है।[36] दुनिया के कुछ हिस्सों में महिलायें और लड़कियां सेक्स शुरू करते ही एचआईवी का शिकार बन जाती हैं। लगभग प्रत्येक जगह परंपरायें पुरुषों के मामले में अनेक यौन साथियों को सहन करती हैं और कहीं–कहीं तो इसे बढ़ावा ही देती हैं। दूसरी ओर महिलाओं से सेक्स से दूर रहने अथवा वफादारी बरतने की उम्मीद की जाती है। कई स्थानों पर उनका सेक्स अथवा यौनत्व के बारे में बेहद कम जानना या खतरनाक तरीके से कुछ भी नहीं जानना ही अच्छा माना जाता है।[37]

---

31 यूएन एड्स टेक्नीकल अपडेट, जेंडर एंड एचआईवी/एड्स, सितंबर 1998, पृष्ठ 5

32 गुप्ता, गीता राव "जेंडर, सेक्सुअलिटी एंड एचआईवी/एड्स : द व्हाट, द व्हाई एंड द हाऊ" आईसीआरडब्ल्यू 2000, http://www.icrw.org/docs/Durban_HIVAIDS_speech700.pdf

33 यूएनडीपी. "ह्यूमन राइट्स, वीमेन एंड एचआईवी", htp://www.Youandaids.org/Themes/HumanRights.asp

34 यूएनडीपी. "ह्यूमन राइट्स, वीमेन एंड एचआईवी", http://www.Youandaids.org/Themes/HumanRights.asp

35 गुरूंग, मधु "द टू–चाइल्ड नॉर्म ओन्ली लीड्स टु फीमेल फोटिसाइड", 2004, http://www.infochangeindia.org/analysis47.isp

36 http://www.genderandaids.org/downloads/events/Fact%20Sheets.pdf page 19.

37 http://womenandaids.unaids.org/issues_preventing.html

जानकारी की कमी के कारण भी पुरुषों की तुलना में महिलाओं और लड़कियों के एचआईवी से संक्रमित होने की आशंका ज्यादा होती है क्योंकि कुछ समाजों में बच्चों को विशिष्ट सांस्कृतिक लैंगिक रिवाजों के अनुरूप ढाला जाता है। कुल मिलाकर लड़कियों को यौन जानकारी से अनभिज्ञ रहने पर जोर दिया जाता है और विवाह तक उनके कौमार्य को सुरक्षित रखने की बात कही जाती है, जबकि लड़कों से यौन मसलों के बारे में ज्यादा जानने और अनुभवी होने की अपेक्षा की जाती है।[38] कई संस्कृतियों में यौन मसलों के बारे मे महिलाओं की अनभिज्ञता को यौन गरिमा और शुचिता का प्रतीक माना जाता है और इससे महिलायें तथा लड़कियां सही जानकारी प्राप्त करने से वंचित रह जाती हैं।[39] इसके परिणामस्वरूप महिलायें और लड़कियां मानने लगती हैं कि ऐसी जानकारी हासिल कर लेने भर से भी उनके कौमार्य पर प्रश्न खड़ा हो सकता है।[40] ब्राजील, भारत, मॉरीशस और थाईलैंड में देखा गया कि युवतियां अपने शरीर, गर्भावस्था, गर्भनिरोध और यौन संक्रमित रोगों के बारे में बहुत कम जानती हैं।

इस मानसिकता का कारण यह भी है कि अविवाहित महिलाओं के लिए परिवार नियोजन की सेवायें अथवा यौन संक्रमित रोगों के उपचार केंद्र सुलभ नहीं होते हैं, जिसके कारण उन्हें अपनी सुरक्षा की जानकारी नहीं मिल पाती।[41] अविवाहित महिलायें अपने कौमार्य को 'सुरक्षित' रखने का भी प्रयास करती हैं और सेक्स के असुरक्षित विकल्प ढूंढकर अनजाने में खुद को एचआईवी का शिकार बना लेती हैं।[42]

जानकारी मिलने पर भी महिलायें अपना व्यवहार नहीं बदल सकतीं, क्योंकि सदियों से सामाजिक ढांचे में उनका काम पुरुषों को प्रसन्न करना और विशेष तौर पर यौन मामलों में उनका प्रभुत्व स्वीकार करना रहा है। अध्ययन बताते हैं कि महिलायें एचआईवी संक्रमण के खतरे वाली कई क्रियाओं में जानबूझकर भी साथ देती हैं, क्योंकि वे अपने पुरुष साथियों को प्रसन्न करना चाहती हैं।[43] कई संस्कृतियों में यह माना जाता है कि यौन मामलों में पुरुष निर्णय लेते हैं[44] और यदि कोई पुरुष सेक्स की शुरुआत करता है तो महिला उसे मना नहीं कर सकती।[45] इस प्रकार कई विवाहित महिलायें एचआईवी के बारे में जानते हुए भी अपने साथियों से सुरक्षित सेक्स के बारे में बात नहीं कर पातीं।[46]

इसके विपरीत कई संस्कृतियों में लड़कों को बचपन से ही सिखाया जाता है कि पुरुषों को सेक्स के बारे में अनुभव और जानकारी होनी चाहिये, जिससे उन्हें कई साथियों के साथ असुरक्षित संभोग करने के लिए बढ़ावा मिलता है। इस रवैये के कारण पुरुष एचआईवी संक्रमण को घर पर अपनी पत्नियों के लिए ले आते हैं और विवाह करते ही महिलायें एचआईवी के खतरे तक पहुंच जाती हैं। अध्ययनों से पता चला है कि भारत में एचआईवी संक्रमित 90 प्रतिशत महिलाओं का एक ही साथी है और वे उच्च खतरे वाले व्यवहार में लिप्त नहीं हैं।[47]

---

38 यूएनएड्स, "जेंडर एंड एचआईवी/एड्स: टेकिंग स्टॉक ऑव रिसर्च एंड प्रोग्राम्स", एट 8–9 (मार्च 1999) http://www.unaids.org/en/in+focus/topic+areas /gender+and+hiv-aids.asp?StartRow=60 11 अक्टूबर, 2003 को दर्ज

39 यूएनएड्स, "जेंडर एंड एचआईवी/एड्स : टेकिंग स्टॉक ऑव रिसर्च एंड प्रोग्राम्स"

40 वही, पेज 9

41 यूएनएड्स, टेक्निकल अपडेट, जेंडर एंड एचआईवी/एड्स, सितंबर 1998, पृष्ठ 5

42 यूएनएड्स, टेक्निकल अपडेट, जेंडर एंड एचआईवी/एड्स, सितंबर 1998, पृष्ठ 5

43 यूएनएड्स, "जेंडर एंड एचआईवी/एड्स : टेकिंग स्टॉक ऑव रिसर्च एंड प्रोग्राम्स", पृष्ठ 10

44 काथी एल्बर्टिन एंड मार्क हेवुड, "ह्यूमन राइट्स एंड एचआईवी/एड्स इन द कॉमनवेल्थ", 7 पर (अप्रैल 30, 2001) http://www.alp.org.za/view.php?file=resctr /rpaprs/index.xml 13 जनवरी, 2004 को दर्ज पृष्ठ 13–14

45 कनाडियन एचआईवी/एड्स लीगल नेटवर्क, "यूजिंग राइट्स एंड द लॉ टु रिड्यूस वीमेंस वल्नरैबिलिटी टु एचआईवी/एड्स : ए डिस्कशन पेपर", काथी एल्बर्टिन द्वारा तैयार, 1 (2000) http://www.aidslaw.ca/Maincontent/reports.htm 23 सितंबर, 2003 को दर्ज, पेज 4

46 यूएनएड्स, "उगांडा: एचआईवी/एड्स–रिलेटेड डिस्क्रिमिनेशन, स्टिग्मैटाइजेशन एंड डिनायल" ऐट 9, (अगस्त 2001), ऐट http://www.unaids.org/en/in+focus/hiv_aids_human_rights/related+publications+.asp

47 यूएनएफपीए : स्टेट ऑव द वर्ल्ड पॉपुलेशन 2005; रिप्रोडक्टिव हेल्थ : अ मेजर ऑव इक्विटी, अध्याय 4 http://www.unfpa.org/swp/2005/english/ch4/chap4_page1.htm.

संक्रमण की सर्वाधिक आशंका वाले युवा व्यक्ति स्वयं और अपने यौन साथियों को बचाने के लिए केवल सुरक्षित रास्ते अपना सकते हैं। वे एचआईवी/एड्स के बारे में मौलिक जानकारी रखते हैं। बच्चों और युवाओं को ध्यान में रखकर बनायी गयी नीतियों को आबादी के उन हिस्सों के अनुपात के बारे में भी सोचना पड़ेगा जो औपचारिक शिक्षा व्यवस्था से बाहर रहते हैं।

माता-पिता से बच्चे को संक्रमण

यूनिसेफ ने वर्ष 2002 में जारी अपनी रिपोर्ट में कहा कि 7 लाख 20 हजार बच्चे माता के गर्भ में, जन्म के दौरान अथवा स्तनपान कराते समय विषाणु से संक्रमित हो गये। दुनिया भर में तकरीबन एक प्रतिशत गर्भवती महिलायें एचआईवी संक्रमित हैं। उनमें से 90 प्रतिशत महिलायें और 95 प्रतिशत एचआईवी संक्रमित बच्चे विकासशील देशों में रहते हैं।[48] यदि कोई एचआईवी संक्रमित महिला गर्भवती होती है तो ऐहतियात नहीं बरतने पर उसके बच्चे में संक्रमण होने की आशंका 35 प्रतिशत होती है। प्रतिवर्ष सात लाख बच्चे अपने माता–पिता से एचआईवी संक्रमित हो जाते हैं। इनमें से 15–20 प्रतिशत गर्भावस्था के दौरान, 50 प्रतिशत प्रसव के दौरान और 33 प्रतिशत स्तनपान के दौरान संक्रमित होते हैं। भारत, दक्षिण पूर्व एशिया, मध्य एवं पूर्वी यूरोप और मध्य एशिया तथा बाल्टिक देशों समेत दुनिया के कई अन्य भागों में ये मामले बढ़ रहे हैं।[49] एचआईवी ग्रस्त गर्भवती महिलाओं की सबसे बड़ी आबादी अफ्रीका में रहती है और महाद्वीप के सर्वाधिक प्रभावित देशों में हाल के वर्षों में शिशु मृत्यु दर दोगुनी हो गयी है। भारत, दक्षिण पूर्व एशिया, मध्य एवं पूर्वी यूरोप और मध्य एशिया तथा बाल्टिक देशों समेत दुनिया के कई अन्य भागों में ये मामले बढ़ रहे हैं।

महिलाओं के सामने भी गर्भावस्था, प्रसव अथवा स्तनपान के दौरान अपने बच्चों को संक्रमित कर देने का खतरा है। उपचार के बगैर माता से बच्चे में संक्रमण जाने का खतरा 35 प्रतिशत होता है।[50] आदर्श स्थितियों में समुचित देखभाल, उपचार, औषधियों और व्यवहार से खतरा काफी कम हो जाता है। चूंकि महिलाओं में संक्रमण की दर लगातार बढ़ रही है और एचआईवी के बारे में अनभिज्ञता भी बरकरार है, इसलिए यह संख्या बढ़ती रहेगी। स्तनपान के दौरान भी माता से बच्चे में संक्रमण पहुंचने की 15 प्रतिशत संभावना होती है।[51] लेकिन वित्तीय तंगी, उपलब्धता और सामाजिक सीमाओं के कारण परिवारों के लिए इससे बचना मुश्किल होता है। महिलायें अपने बच्चों के लिए कुछ भी कर जायेंगी, लेकिन अपने बच्चों को संक्रमण से बचाने के बारे में उन्हें जानकारी ही नहीं होती।[52] देखभाल, सलाह और सहायता की कमी इसे कई गुना बढ़ा देती है। एचआईवी/एड्स से पीड़ित लगभग 40 लाख लोग भारत में रहते हैं और प्रतिवर्ष एचआईवी से संक्रमित 30 हजार बच्चे जन्म लेते हैं। कई क्लिनिकों पर हालांकि उपचार उपलब्ध है, लेकिन कई महिलायें एचआईवी/एड्स के साथ जुड़ी बदनामी के डर से उनका इस्तेमाल नहीं कर पातीं।[53]

बाल विवाह

कुछ आर्थिक तबकों और भौगोलिक क्षेत्रों में अब भी प्रचलित बाल विवाह से महिलाओं को संक्रमण का खतरा होता है। अक्सर धन की कमी के कारण किशोरियों का विवाह उम्रदराज पुरुषों से कर दिया जाता हैं।

48 http://www.unicef.org/aids/index_preventionMTCT.html?q=printme

49 यूनीसेफ, "प्रीवेंशन ऑव पैरेंट–टु–चाइल्ड ट्रांसमिशन ऑव एचआईवी/एड्स", http://www.unicef.org/aids/index_prevention-MTCT.html.q=printme

50 यूनीसेफ, "प्रीवेंशन ऑव पैरेंट–टु–चाइल्ड ट्रांसमिशन ऑव एचआईवी/एड्स", http://www.unicef.org/aids index_prevention-MTCT.html?q=printme

51 यूनीसेफ, "होप–गिविंग ट्रीटमेंट– पीपीटीसीटी प्रोग्राम इन आंध्रप्रदेश", http://www.unicef.org/india/hiv_aids_277.html?q=printme

52 डब्ल्यूएचओ "ह्यूमन राइट्स, वीमेन एंड एचआईवी/एड्स", 2006 http://www.who.int/mediacentre/factsheets/fs247/en/print.html

53 http://www.unicef.org/infobycountry/india_2044.html

उम्रदराज पुरुष अक्सर विवाहेत्तर संबंध बनाते हैं अथवा विवाह पूर्व यौन संबंध बनाते हैं, जिससे उनमें संक्रमण का खतरा बढ़ जाता है।[54] आयु में अंतर होने से भी प्रभुत्व, अनुभव और आर्थिक स्वायत्तता के मामले में पति तथा पत्नी के बीच असंतुलन पैदा हो जाता है। उम्रदराज पुरुषों से विवाह करने वाली युवा लड़कियां अक्सर स्कूल छोड़ देती हैं और जल्द ही मां बन जाती हैं, जिससे असमानता जारी रहती है और बाद के जीवन में आर्थिक रूप से स्वावलंबी बनने की उनकी क्षमता भी खत्म हो जाती है।[55] ये सभी कारक कम उम्र में शादी करने वाली महिलाओं के लिए खतरा बढ़ा देते हैं। बाल विवाह से जुड़ा एक मसला वह उम्र भी है जब लड़की यौन संबंध शुरू करती है। अठारह वर्ष से कम उम्र में विवाह करने वाली महिलाओं के अधिक बच्चे होने की संभावना होती है। अध्ययनों के अनुसार वर्ष 1992–93 में भारत में सर्वेक्षण में शामिल 97 प्रतिशत महिलाओं ने पहली संतान होने तक गर्भनिरोधक का इस्तेमाल ही नहीं किया।[56]

एचआईवी/एड्स से बचाव भी बाल विवाह के लिए एक नासमझी भरा कारण है, क्योंकि लड़कियों के माता–पिता उनके स्वास्थ्य और प्रतिष्ठा के बचाव के लिए उनका विवाह करा देते हैं। पुरुष भी कम उम्र की महिलाओं को ही पत्नी बनाना चाहते हैं, क्योंकि उनके अनुसार यह संक्रमण से बचने का तरीका है। कुछ संदर्भों में यह बेमेल लगता है कि भारत में एचआईवी/एड्स से पीड़ित 75 प्रतिशत व्यक्ति विवाहित हैं। वास्तव में संतान उत्पत्ति का सामाजिक दबाव और सुरक्षित सेक्स के तरीकों से जुड़ी बदनामी के कारण दुनिया भर में दंपति कंडोम का बेहद कम इस्तेमाल करते हैं और अपने पतियों के साथ ही यौन संबंध बनाने वाली विवाहित महिलायें भी अब एचआईवी/एड्स से पीड़ित हो रही हैं।[57]

आर्थिक कारक

महिलाओं की आर्थिक और कानूनी विषमता भी एचआईवी संक्रमण के खतरे को बढ़ाती है।[58] देश में भेदभावपूर्ण आर्थिक नीतियां और कानून महिलाओं को भूमि, संपत्ति, ऋण, रोजगार और शिक्षा जैसे संसाधनों को इस्तेमाल करने का समान अधिकार प्राप्त नहीं करने देतीं, जिसके कारण ये आर्थिक रूप से आश्रित और संक्रमण के प्रति संवेदनशील होती हैं।[59] आर्थिक रूप से अधिक स्वतंत्र महिलायें एचआईवी संक्रमण के खतरे को कम कर सकती हैं।[60] पिता से पुत्र को उत्तराधिकार मिलने की परंपरा वाले देशों में अक्सर महिलाओं को अपने पति की मौत के बाद घर, भूमि और आजीविका से वंचित होना पड़ता है।[61] महिलाओं को विवाहोपरांत समान संपत्ति के अधिकार अथवा तलाक की प्रक्रिया शुरू करने अथवा उसका विरोध करने के समान अधिकार से वंचित करने वाले कानून भी महिलाओं को पुरुष से कमतर बनाते हैं और वे हिंसा तथा जबरन सेक्स की शिकार हो जाती हैं।[62] गरीबी उन्हें स्वयं तथा अपने परिवार के भोजन और खर्च के लिए यौन संबंध बनाने

---

54 ग्लोबल कोएलिशन ऑन वीमेन एंड एड्स : प्रीवेंटिंग एचआईवी इन वीमेन एंड यंग गर्ल्स, पृष्ठ 2 http://www.data.unaids.org/GCWA/GCWA_BG_prevention_en.pdf

55 यूनीफेम; टर्निंग द टाइड : सीईडीएडब्ल्यू एंड द जेंडर डायमेंशन्स ऑव द एचआईवी/एड्स पैंडेमिक, 2001, पृष्ठ 15

56 भट्टाचार्य, जी., "सोशियोकल्चरल एंड बिहेवियरल कॉंटेक्स्ट्स ऑव कंडोम यूज इन हेटेरोसेक्सुअल मैरिड कपल्स इन इंडिया : चैलेंजेज टु एचआईवी प्रीवेंशन प्रोग्राम्स", हेल्थ एजुकेशन एंड बिहेवियर, खंड, 31, संख्या 1, 2004, पृष्ठ 101–117

57 http://www.childinfo.org/areas/childmarriage???

58 यूएनएड्स, "एक्सिलरेटिंग एक्शन अगेंस्ट एड्स इन अफ्रीका", एक्जेक्युटिव समरी, 4 (सितंबर, 2003)

59 यूएनएड्स, "जेंडर एंड एचआईवी/एड्स : टेकिंग स्टॉक ऑव रिसर्च एंड प्रोग्राम", 8–9 पर (मार्च 1999)

60 कनाडियन एचआईवी/एड्स लीगल नेटवर्क, "यूजिंग राइट्स एंड द लॉ टु रिड्यूस वीमेन्स वल्नरैबिलिटी टु एचआईवी/एड्स : अ डिस्कशन पेपर" काथी एल्बर्टिन द्वारा तैयार, 7 पर (2000)

61 कनाडियन एचआईवी/एड्स लीगल नेटवर्क, "यूजिंग राइट्स एंड द लॉ टु रिड्यूस वीमेन्स वल्नरैबिलिटी टु एचआईवी/एड्स : अ डिस्कशन पेपर" काथी अल्बर्टिन द्वारा तैयार, 7 पर (2000)

62 कनाडियन एचआईवी/एड्स लीगल नेटवर्क, "यूजिंग राइट्स एंड द लॉ टु रिड्यूस वीमेन्स वल्नरैबिलिटी टु एचआईवी/एड्स : अ डिस्कशन पेपर" काथी एल्बर्टिन द्वारा तैयार, 6 पर (2000)

पर विवश करती है।[63] महिलायें और युवतियां नौकरी, प्रोन्नति, अनुमति और स्कूल में फीस तथा अंक प्राप्त करने के लिए भी सेक्स का सहारा लेती हैं।[64] गरीबी किसी महिला की एचआईवी संक्रमित होने की आशंका को बढ़ाती है और महिलायें आर्थिक रूप से अपने पतियों पर निर्भर होती हैं, जिससे स्वयं जीवन निर्वाह की क्षमता उनमें नहीं होती। यदि उनके पति उन्हें संक्रमित करते हैं अथवा उनके साथ दुर्व्यवहार करते हैं तो प्रस्ताव रखे जाने पर भी अक्सर महिलायें तलाक और एचआईवी के साथ जुड़ी बदनामी के डर से अपने पतियों को छोड़कर जाने को तैयार नहीं होतीं हैं। समुचित शिक्षा अथवा संपत्ति के अभाव में महिलायें काम की तलाश में घूमती–फिरती हैं, जिसके कारण शहरी क्षेत्रों में महिलाओं की तादाद बढ़ जाती है।

प्रभावित घरों की इन महिलाओं के सामने सबसे बड़ी परेशानी संपत्ति के अधिकार से वंचना है। जिन संक्रमित महिलाओं को उनके पति छोड़ देते हैं और समुदाय जिनका बहिष्कार कर देता है और जिनके पतियों की मौत एचआईवी के कारण होती है उन्हें अक्सर उनके पति की संपत्ति में अधिकृत हिस्सा देने से इंकार कर दिया जाता है। यदि एचआईवी को छोड़ दें तो भी घर में विधवा का परंपरागत महत्व न के बराबर होता है और उसे उसकी अथवा उसके पति की संपत्ति में से अधिकृत हिस्सा कभी–कभार ही दिया जाता है। "तस्वीर में एचआईवी/एड्स के जुड़ने से महिला के बचे हुए अधिकार अथवा स्थिति भी छिन जाती है।"[65] एड्स के कारण अनाथ हुई लड़कियों की संपत्ति भी उनके माता–पिता के मरने के बाद छीन ली जाती है और उनके पास कोई सहारा नहीं रह जाता है।[66]

घुमंतू पुरुषों की बड़ी आबादी ऐसी ही गतिशील महिलाओं के लिए एचआईवी का खतरा बढ़ा देती है। इसके अलावा गरीबी के कारण भी फर्क पड़ता है, क्योंकि महिलायें उन हालात से भी नहीं निकल पातीं जिनमें उनकी अस्मिता खतरे में होती है।[67] जब आर्थिक मुश्किलों के कारण महिलाओं को धन के लिए यौन संबंध बनाने पड़ते हैं तो सेक्स के मामले में वे कोई शर्त रखने की स्थिति में नहीं होतीं। महिलायें और किशोरियां, दलालों द्वारा रेडलाइट क्षेत्रों में भी धकेल दी जाती हैं। इन लड़कियों के पास तो शर्त रखने की ताकत ही नहीं होती। एचआईवी के डर से ये दलाल कम उम्र की लड़कियों को निशाना बनाते हैं। उनमें से कुछ तो महज सात वर्ष की होती हैं। दलालों को विश्वास होता है कि उनकी कम उम्र और कौमार्य के कारण वे एचआईवी से बची हुई होती हैं।[68] जहां कंडोम उपलब्ध होता है वहां भी पुरुष कंडोम के बगैर सेक्स करने के लिए अधिक रकम खर्च करते हैं।[69]

जिन महिलाओं के साथी एड्स से संबंधित बीमारियों से मर जाते हैं उन्हें भेदभाव, परित्याग और हिंसा तक का शिकार होना पड़ता है। कुछ स्थानों पर पति की मौत होने पर महिलाओं के घर, उत्तराधिकार, संपत्ति, आजीविका और उनके बच्चे तक छिन जाते हैं। इस असुरक्षा के कारण कई महिलायें जीवित रहने के लिए वे तरीके अपनाती हैं जिनसे एचआईवी संक्रमित होने की आशंका बढ़ जाती है। अनुसंधान बताते हैं कि जिन महिलाओं के पास स्वामित्व, भूमि और अन्य संपत्तियों का अधिकार होता है वे एचआईवी की आशंका वाले रिश्तों से खुद को अच्छी तरह बचा ले जाती हैं और एड्स के प्रभाव से बच जाती हैं। अनुसंधान के अनुसार एचआईवी संक्रमित महिलायें एवं लड़कियां परिवारों और स्वास्थ्य सेवा संस्थाओं में पुरुषों की अपेक्षा भेदभाव

---

63 वही, 7 पर

64 जनरल असेंबली ऑव द यूनाइटेड नेशन्स, प्रोग्रेस टुवर्ड्स इम्प्लीमेंटेशन ऑव द डिक्लेरेशन ऑव कमिटमेंट ऑन एचआईवी/एड्स, रिपोर्ट ऑव द सेक्रेटरी–जनरल, ए/58/184

65 यूएनएड्स, यूनिफेम, एंड यूएनएफपीए; वीमेन एंड एचआईवी/एड्स : कन्फ्रंटिंग द क्राइसिस, 2004, चैप्टर 7

66 एचआरडब्ल्यू : अ डोज ऑव रियेलिटी : वीमेन्स राइट्स इन द फाइट अगेंस्ट एचआईवी/एड्स", 2003, http://www.hrw.org/english/docs/2005/03/21/africa10357_txt.htm

67 यूनीफेम, "वीमेन, जेंडर एंड एचआईवी/एड्स", 2001, http://www.unifem-eseasia.org/Resources/GenderAids/genderaids9a.htm

68 यूनीफेम, "वीमेन, जेंडर एंड एचआईवी/एड्स", 2001, http://www.unifem-eseasia.org/Resources/GenderAids/genderaids9a.htm

69 वाल्डमैन, ऐमी "ऑन इंडियाज रोड्स, कार्गो, एंड अ डेडली पैसेंजर, "न्यूयॉर्क टाइम्स, 6 दिसंबर 2005

की अधिक शिकार होती हैं।[70] परिवारों में एचआईवी/एड्स से पीड़ित महिलायें, पुत्रियां, पत्नियां और बहुएं पुत्रों, पतियों और दामादों की अपेक्षा भेदभाव की अधिक शिकार होती हैं।[71] विवाहित महिलायें संकेत देती हैं कि दुर्व्यवहार का शिकार होने अथवा निकाले जाने के डर से वे अपने पतियों को अपने एचआईवी संक्रमित होने की बात कभी नहीं बतायेंगी।[72] पतियों के संक्रमित होने पर ससुराल वाले महिला को ही दोषी ठहराते हैं और उन्हें संक्रमण का वाहक माना जाता है, चाहे परिवार यह जानता हो कि पति यौनकर्मियों के पास जाता था। परिवार मानता है कि महिला पति को यौन संतुष्टि नहीं दे पाती थी, जिसके कारण वह वेश्यालय जाता था। दिलचस्प बात है कि इसके बाद उन महिलाओं से ही पति की देखभाल की अपेक्षा भी की जाती है।[73] लेकिन पति की मौत के बाद अक्सर परिवार पति की संपत्ति अथवा पेंशन में पत्नी को हिस्सा देने से इंकार कर देते हैं।

अस्पतालों में और चिकित्सकों के बीच भी एचआईवी संक्रमित महिला की बदनामी इतनी ज्यादा होती है कि वे उपचार ही नहीं करातीं। यदि वे जाती भी हैं तो अक्सर उन्हें दूर हटा दिया जाता है।[74] कई महिलायें एचआईवी का परीक्षण कराने अथवा अपने संक्रमित होने की बात का खुलासा करने से भी हिचकिचाती हैं। उन्हें परीक्षण के प्रति अपने साथी की प्रतिक्रिया का डर होता है और वही डर उन्हें परीक्षण कराने, उसका परिणाम जानने, उपचार शुरू कराने और लगातार कराते रहने से दूर रखता है, क्योंकि महिलायें अपनी गलतियां छिपाने का प्रयास करती हैं।[75] विभिन्न रिपोर्टों में उस भेदभाव का खुलासा किया गया है, जो एचआईवी/एड्स से संक्रमित लोगों को स्वास्थ्य सेवा तंत्र में झेलना पड़ा, जैसे कि उपचार से इंकार, सहमति के बिना एचआईवी परीक्षण और गोपनीयता का उल्लंघन।[76] एचआईवी/एड्स से ग्रस्त महिलाओं को स्वास्थ्य सेवा तंत्र में दोगुना भेदभाव झेलना पड़ता है। अस्पताल के कर्मचारी आये दिन गोपनीयता का उल्लंघन भी करते हैं और एचआईवी परीक्षण के परिणाम के बारे में अन्य कर्मचारियों तथा रोगी के परिजनों या साथियों को बता देते हैं।[77]

यह देखा गया है कि "भारत में एचआईवी/एड्स से संक्रमित 29 प्रतिशत, इंडोनेशिया में 38 प्रतिशत, थाइलैंड में 40 प्रतिशत से अधिक लोगों की एचआईवी संक्रमण स्थिति के बारे में उनकी सहमति के बगैर अन्य लोगों को बता दिया गया।"[78] महिलाओं खासतौर पर गर्भवती महिलाओं के लिए गोपनीयता के सिद्धांत का अक्सर पूरी तरह उल्लंघन कर दिया जाता है।[79] कभी–कभी महिलाओं को उनकी अपनी एचआईवी स्थिति के बारे में नहीं बताया जाता; परिणाम उनके पति अथवा सास को बता दिया जाता है। परिवारों में महिलाओं के साथ होने वाले भेदभाव को देखते हुए ऐसे खुलासों से महिलायें गंभीर दुर्व्यवहार जैसे घर से निकाला जाना और हिंसा की शिकार हो सकती हैं। गोपनीयता के उल्लंघन और उसके बाद होने वाले भेदभाव के डर से लोग एचआईवी/एड्स के परीक्षण और उपचार से बचते हैं।[80]

70 यूएनएड्स, "कम्पेरेटिव एनालिसिस : रिसर्च स्टडीज फ्रॉम इंडिया एंड युगांडा, एचआईवी एंड एड्स–रिलेटेड डिस्क्रिमिनेशन, स्टिगमेटाइजेशन एंड डिनायल", 14 पर (जून 2000)

71 यूएनएड्स, "इंडिया: एचआईवी एंड एड्स–रिलेटेड डिस्क्रिमिनेशन, स्टिगमैटाइजेशन एंड डिनायल", (अगस्त 2001)

72 यूएनएड्स, "युगांडा: एचआईवी एंड एड्स–रिलेटेड डिस्क्रिमिनेशन, स्टिगमेटाइजेशन एंड डिनायल", 9 पर (अगस्त 2001)

73 यूएनएड्स, "इंडिया: एचआईवी एंड एड्स–रिलेटेड डिस्क्रिमिनेशन, स्टिगमेटाइजेशन एंड डिनायल", (अगस्त 2001)

74 एचआरडब्ल्यू : "अ डोज ऑफ रियेलिटी : वीमेन्स राइट्स इन द फाइट अगेंस्ट एचआईवी/एड्स" 2003, http://hrw.org/english/docs/2005/03/21/africa10357_txt.htm

75 यूएनएड्स, यूनीफेम, यूएनएफपीए; वीमेन एंड एचआईवी/एड्स : कन्फ्रंटिंग द क्राइसिस 2004, चैप्टर 6

76 यूएनएड्स, "कम्पेरेटिव एनालिसिस : रिसर्च स्टडीज फ्रॉम इंडिया एंड युगांडा, एचआईवी एंड एड्स–रिलेटेड डिस्क्रिमिनेशन, स्टिगमैटिजेशन एंड डिनायल", 14 पर (जून 2000)

77 यूएनएड्स, "इंडिया : एचआईवी एंड एड्स–रिलेटेड डिस्क्रिमिनेशन, स्टिगमेटाइजेशन एंड डिनायल", (अगस्त 2001) पेज 23–24

78 ज्वाइंट यूनाइटेड नेशन्स प्रोग्राम ऑन एचआईवी/एड्स (यूएनएआईडीएस) एंड व वर्ल्ड हेल्थ ऑर्गनाइजेशन (डब्ल्यूएचओ), "एड्स एपिडेमिक अपडेट", 4 पर (दिसंबर 2003) http://www.who.int/hiv/pub/epidemiology/epi2003/en

79 यूएनएड्स, "इंडिया : एचआईवी एंड एड्स–रिलेटेड डिस्क्रिमिनेशन, स्टिगमेटाइजेशन एंड डिनायल", (अगस्त 2001) पेज –24

80 ज्वाइंट यूनाइटेड नेशन्स प्रोग्राम ऑन एचआईवी/एड्स (यूएनएआईडीएस) एंड द वर्ल्ड हेल्थ ऑर्गनाइजेशन (डब्ल्यूएचओ), "एड्स एपिडेमिक अपडेट", 4 पर (दिसंबर 2003)

जब महिलायें उपचार कराना चाहती हैं तो आवागमन और गरीबी उनके आड़े आ जाती है।[81] उपचार केंद्रों को औषधियों के साथ यह भी सुनिश्चित करना चाहिये कि महिलाओं के पास पोषण और लगातार औषधियां लेने के साधन हों। एचआईवी/एड्स के उपचार को प्रभावी बनाने के लिए पर्याप्त पोषण की जरूरत होती है और यदि महिला इससे वंचित हैं तो उपचार का कोई अर्थ नहीं।[82] पर्दे में रहने वाली महिलाओं, जिन्हें सार्वजनिक स्थलों से दूर रखा जाता है, को जानकारी नहीं मिल पाती, वे महिला स्वास्थ्यकर्मी के संपर्क से दूर रहती हैं और उपचार केंद्रों तक जाने में उन्हें कठिनाई होती है।[83] उपचार दिये जाने पर भी महिला परीक्षण से पूर्व और उसके बाद पर्याप्त सलाह नहीं लेतीं।[84] अक्सर एचआईवी परीक्षण उसकी सहमति के बिना ही कर लिया जाता है। परीक्षण के परिणाम उसके बजाय उसके पति को बताये जाते हैं, जिसके कारण घर पर हिंसा हो सकती है। हिंसा के अलावा परीक्षण में संक्रमित पाये जाने पर मनोवैज्ञानिक दुष्प्रभाव भी होता है। उपचार में महिलाओं पर औषधियों के कुछ ही परीक्षण किये जाते हैं और उनके प्रभाव पर भी ज्यादा ध्यान नहीं दिया जाता।[85]

महिलाओं और लड़कियों पर उनकी देखभाल करने का भी बोझ होता है, जो बीमार होते हैं अथवा एचआईवी/एड्स के कारण अनाथ हो जाते हैं।[86] उप–सहारा अफ्रीका के संदर्भ में जहां एक करोड़ 10 लाख बच्चे अनाथ हुए हैं,[87] और स्वास्थ्य सेवा अक्सर घरों पर ही दी जाती है, ये जिम्मेदारियां काफी मुश्किल हो सकती हैं। इसमें से ज्यादातर काम महिलायें और लड़कियां करती हैं। देखभाल करने का बोझ लड़कियों की शैक्षिक और आर्थिक समानता पर गहरा प्रभाव डालती है। जब घर का पुरुष मुखिया बीमार पड़ जाता है, तो वे दोहरी प्रभावित होती हैं क्योंकि उन्हें आय के अन्य स्रोत भी तलाशने पड़ते हैं और देखभाल भी करनी पड़ती है। काम के इस बोझ से वे महिलायें भी एचआईवी से संक्रमित हो सकती हैं और उनकी सेहत भी खराब हो सकती है।

घरों पर स्वास्थ्य की देखभाल करने वाली के तौर पर लड़कियों को कभी–कभी उपचार में मदद के लिए स्कूलों से निकाल लिया जाता है।[88] महिलाओं को बीमारों की देखभाल करने, एड्स के कारण अनाथ हुए बच्चों को पालने और परिवार को सहायता देने के लिए धनार्जन की जिम्मेदारियां निभाने के लिए कई तरह की परेशानियां उठानी पड़ती हैं। देखभाल करने वाली की महत्वपूर्ण भूमिका के लिए उन्हें कोई पहचान या सहारा नहीं मिलता है। अक्सर शहरी क्षेत्रों में पलायन करने और एचआईवी से संक्रमित होने वाले पुरुष मरने के लिए गांवों में अपने घर लौटते हैं, जहां महिलायें अपने बीमार पड़े प्रियजनों की देखभाल का जिम्मा उठाती हैं, जबकि उनके पास कोई आर्थिक सहारा नहीं होता। "काम का बढ़ा हुआ बोझ, पारिवारिक आय की हानि और लगातार बढ़ती गरीबी से महिलायें अन्य लोगों पर ज्यादा निर्भर हो जाती हैं और लैंगिक असमानता बढ़ जाती है।"[89]

81 यूएनएड्स, यूनीफेम, यूएनएफपीए; वीमेन एंड एचआईवी/एड्स : कन्फ्रंटिंग द क्राइसिस 2004, चैप्टर– 3

82 यूएनएड्स, यूनीफेम, यूएनएफपीए; वीमेन एंड एचआईवी/एड्स : कन्फ्रंटिंग द क्राइसिस 2004, चैप्टर–3

83 यूनीफेम; टर्निंग द टाइड : सीईडीएडब्ल्यू एंड द जेंडर डायमेंशन्स ऑव द एचआईवी/एड्स पैंडेमिक, 2001, पृष्ठ 20

84 एचआरडब्ल्यू : "अ डोज ऑव रियेलिटी : वीमेन्स राइट्स इन द फाइट अगेंस्ट एचआईवी/एड्स" 2003, http://hrw.org/english/docs/2005/03/21/africa10357_txt.htm

85 यूनीफेम; टर्निंग द टाइड : सीईडीएडब्ल्यू एंड द जेंडर डायमेंशन्स ऑव द एचआईवी/एड्स पैंडेमिक, 2001, पृष्ठ 20

86 कनाडियन एचआईवी/एड्स लीगल नेटवर्क, "यूजिंग राइट्स एंड द लॉ टु रिड्युस वीमेन्स वल्नरैबिलिटी टु एचआईवी/एड्स : अ डिस्कशन पेपर" कैथी एल्बर्टिन द्वारा तैयार, (2000)

87 यूएनएड्स, "एजेंसिज कॉल फॉर अ क्वांटम लीप ऑव एफर्ट्स टु एड्रेस द स्पाइरलिंग ऑर्फन क्राइसिस", (सितंबर 25, 2003) http://www.unaids.org/en/media/press+releases.asp पर।

88 यूएनएड्स, टेक्निकल अपडेट, जेंडर एंड एचआईवी/एड्स, सितंबर 1998, पृष्ठ 6

89 यूएनएड्स, यूनीफेम एंड यूएनएफपीए; वीमेन एंड एचआईवी/एड्स : कन्फ्रंटिंग द क्राइसिस 2004, चैप्टर–4

अक्सर महिलायें नहीं जानती हैं कि गर्भधारण के अलावा किसी अन्य चीज को रोकने के लिए कंडोम का इस्तेमाल होना चाहिये अथवा कंडोम के इस्तेमाल की जिद करने लायक शक्ति उनके पास नहीं होती। विवाहों में कंडोम का इस्तेमाल बहुत कम होता है, क्योंकि यह गर्भधारण की प्रक्रिया को रोकता है और इसे बेवफाई का संकेत भी समझा जाता है। अक्सर परिवार में एचआईवी लाने वाले पुरुष ही कंडोम के इस्तेमाल की सलाह देने वाली महिला पर बेवफाई का आरोप लगाते हैं। भारतीय संस्कृति में पुंसत्व को महत्व दिया जाता है और महिलायें गर्भवती होना चाहती हैं, जिससे उनका महत्व बढ़ जाता है।[90] पुरुष प्रधानता के कारण महिलायें हिंसा के डर से सेक्स को मना नहीं कर पातीं और सुरक्षित सेक्स की बात भी नहीं कह पातीं।[91] जानकारी और सशक्तिकरण के जरिये इसमें से काफी कुछ बदला जा सकता है, खासकर महिला नियंत्रित रोकथाम, जो अभी विकसित ही हो रही है, के माध्यम से ऐसा हो सकता है। महिला कंडोम, जिसका इस्तेमाल एक महिला उस समय कर सकती है जब पुरुष गर्भ निरोधक के इस्तेमाल से इंकार कर दे, फिलहाल महिला के नियंत्रण वाले रोकथाम का एकमात्र उपाय है। पुरुष कंडोम की अपेक्षा वे अधिक महंगे हैं और इसे प्राप्त करना अधिक मुश्किल है। लेकिन अध्ययन बताते हैं कि यौनकर्मियों के बीच ये कंडोम खासे सफल हैं, यौनकर्मियां अपने साथियों को उनके इस्तेमाल के लिए मनाने में कामयाब रही हैं और साथी की जानकारी के बिना भी उन्हें अपनी योनि में डाल लेती हैं।[92] महिला कंडोम बनाने वाली पहली कंपनी द फीमेल हेल्थ कंपनी के एक अध्ययन के अनुसार सही तरीके से इस्तेमाल करने पर महिला कंडोम 97 प्रतिशत तक प्रभावी है।[93] सूक्ष्मजीवनाशक, जो संपर्क में आने पर जीवाणुओं को समाप्त कर देते हैं, महिला नियंत्रित निरोधक के तौर पर सर्वाधिक प्रभावी हैं, क्योंकि महिलायें यौन संबंध बनाने से घंटों पहले अपने साथी की जानकारी के बिना भी उनका प्रयोग कर सकती हैं। उन पर अनुसंधान किया जा रहा है और उन्हें कई रूपों में बनाया जा रहा है, जैसे फिल्म, ज्यल, स्पंज, सपॉजिट्री और ल्युब्रिकेंट।[94] महिला नियंत्रित निरोधकों से महिलाओं के अधिकारों और लैंगिक समानता को बढ़ावा मिलता है। उन्हें सभी महिलाओं को मुहैया कराना एचआईवी की रोकथाम के प्रयास का अनिवार्य अंग है और संक्रमण की दर को घटाने में वे मदद कर सकते हैं।[95]

शिक्षा

शिक्षा महिलाओं और लड़कियों की सुरक्षा के लिए महत्वपूर्ण अधिकार है और सदैव रहेगी। इसके अलावा यह मौलिक मानवाधिकार और एचआईवी/एड्स के खिलाफ लड़ाई में महत्वपूर्ण हथियार भी बनी रहेगी। कई स्थानों पर कई बच्चों विशेषकर लड़कियों को यह अधिकार मुहैया कराने से इंकार किया जाता है, जबकि वैश्विक समुदायों ने स्वीकार किया है कि लिंग, विकास और शिक्षा के मसलों पर समग्र प्रयास के बिना विभिन्न सरकारों द्वारा उठाये जा रहे कदम पूरी तरह सफल नहीं होंगे। सफल कार्यक्रम के तौर पर जब इन्हें जोड़ा जायेगा, तो अगले दशक में वे करोड़ों महिलाओं का जीवन और भविष्य बदल देंगे। जब वर्ष 2000 में 189 राष्ट्राध्यक्षों ने सहस्त्राब्दी घोषणापत्र पर हस्ताक्षर किये तो उन्होंने माना कि लड़कियों को शिक्षित करना गरीबी हटाने ही नहीं बल्कि मानवाधिकार प्राप्त करने की दिशा में भी शक्तिशाली और आवश्यक पहला कदम है। उन्होंने लैंगिक समानता को सभी सहस्राब्दी विकास लक्ष्यों में पहला स्थान दिया और संकल्प लिया कि 2005 तक वे लड़कों के बराबर संख्या में लड़कियों को भी स्कूल भेज देंगे। लिंग के विषय में सहस्त्राब्दी विकास

90 हैम्बलिन, जूली एंड एलिजाबेथ रीड, वीमेन, द एचआईवी एपिडेमिक एंड ह्यूमन राइट्स : अ ट्रैजिक इम्परेटिव, यूएनडीपी, नवंबर 1993

91 यूएनएड्स, टेक्निकल अपडेट, पृष्ठ 5

92 फीमेल कंडोम : द इंडियन एक्सपीरियेंस, पब्लिकेशन एचएलएल एंड एफएचसी (2004)

93 यूएनएड्स यूनीफेम एंड यूएनएफपीए; वीमेन एंड एचआईवी/एड्स : कन्फ्रंटिंग द क्राइसिस 2004, चैप्टर 2

94 यूएनएड्स युनीफेम एंड यूएनएफपीए; वीमेन एंड एचआईवी/एड्स : कन्फ्रंटिंग द क्राइसिस 2004, चैप्टर 2

95 यूएनएड्स, युनीफेम एंड यूएनएफपीए; वीमेन एंड एचआईवी/एड्स : कन्फ्रंटिंग द क्राइसिस 2004, चैप्टर 2

लक्ष्य को केवल लैंगिक समानता का उपाय ही नहीं माना जाता बल्कि उसे समान अवसरों और स्वास्थ्य, शिक्षा, संस्कृति और अर्थशास्त्र समेत सभी क्षेत्रों में मानवाधिकारों की रक्षा का प्रयास भी माना जा रहा है।

लड़कों और लड़कियों के लिए शिक्षा की सुलभता पिछले 50 वर्षों में लगातार बढ़ी है और 1980 के दशक में इस मामले में पिछड़ गये कुछ विकासशील देश लगातार आगे बढ़ रहे हैं, लेकिन परिणाम हासिल करने के मामले में रफ्तार काफी कम है। एक अनुमान के मुताबिक नाटकीय प्रगति के बिना 40 प्रतिशत देश 2015 तक भी लैंगिक समानता का लक्ष्य प्राप्त नहीं कर पायेंगे।[96]

वर्ष 2005 में लड़कियों की शिक्षा के मामले में संयुक्त राष्ट्र का लक्ष्य हासिल करने में नाकामी से 10 लाख से ज्यादा बच्चों और माताओं की मौत हो गयी होगी, जो एक दशक से ज्यादा के समय में एक करोड़ का आंकड़ हो जायेगा।[97] एचआईवी/एड्स के संक्रमण की दर उन युवाओं में दोगुनी है, जिन्होंने प्राथमिक शिक्षा भी पूरी नहीं की। यदि प्रत्येक लड़की और लड़के ने अपनी प्राथमिक शिक्षा पूरी की होती, तो एक दशक में एचआईवी के कम से कम 70 लाख नये मामलों से बचा जा सकता था।[98] देखा गया है कि लड़कियों और महिलाओं को शिक्षित करने में नाकामी से गैरजरूरी अभाव बढ़ता है और महिला शिक्षा में बढ़त हासिल करने से 1970 से 1995 के बीच कुपोषण कम हुआ और उससे खाद्य उपलब्धता भी बढ़ी।[99] भारत में उन गांवों में रहने वाली लड़कियां, जहां स्कूलों में मुफ्त भोजन दिया जाता है, अन्य लड़कियों की अपेक्षा प्राथमिक शिक्षा पूरी करने के लिए ज्यादा इच्छुक होती हैं।[100]

यह समझना चाहिये कि केवल शिक्षा ही एकमात्र उपचार नहीं हो सकता है और वह महिलाओं को वंचना और प्रताड़ना के विभिन्न कारणों से बचाने के लिए स्वयं ही कारगर नहीं हो सकती है। शिक्षा प्राप्त कर चुकी महिलाओं को भी कभी–कमार संपत्ति के स्वामित्व, श्रम बाजार, और यौन तथा प्रजनन चुनाव के मामले में हानि उठानी पड़ती है। महिलाओं को सशक्त बनाने के लिए साहसिक कदमों की जरूरत है, लेकिन इस बात में भी कोई शक नहीं कि लगातार भेदभाव के बीच शिक्षा महिलाओं और लड़कियों को उनके अधिकारों, क्षमताओं और धनार्जन की क्षमता बढ़ाने वाली जानकारी प्राप्त करने में विश्वास से भर देती है।

एचआईवी और एड्स 2005 तक प्राथमिक और माध्यमिक शिक्षा में लैंगिक असमानता समाप्त करने, 2015 तक शिक्षा में लैंगिक समानता हासिल करने और 2015 तक विशेषकर महिलाओं के लिए प्रौढ़ शिक्षा के स्तरों में 50 प्रतिशत तक प्रगति हासिल करने जैसे लक्ष्यों की प्राप्ति को लगातार चुनौती दे रहे हैं। एचआईवी की महामारी स्कूली छात्रों और शिक्षकों को भी विचलित कर रही है, लेकिन यह देखा गया है कि औपचारिक, गैर औपचारिक अथवा अनौपचारिक शिक्षा एक "सामाजिक टीका" है, जो महामारी के और प्रसार को रोकने में मददगार साबित हो सकता है। यदि राष्ट्रीय नीतियों तथा कार्यक्रमों में उपयुक्त बदलाव करने हैं तो एचआईवी और एड्स का शिक्षा पर प्रभाव और इनकी रोकथाम में शिक्षा की भूमिका दोनों को लैंगिक नजरिये से सावधानीपूर्वक देखा जाना चाहिये।[101]

एचआईवी/एड्स शिक्षा को विभिन्न प्रकार से प्रभावित करते हैं[102]

- **एचआईवी/एड्स शिक्षा की आपूर्ति को कम करता है :** एचआईवी और एड्स शिक्षकों की अस्वस्थता और मृत्यु के जरिये शिक्षा के प्रसार को प्रभावित करते हैं। उदाहरण के लिए जाम्बिया में 2001 और

96 यूनेस्को ईएफए ग्लोबल मॉनिटरिंग रिपोर्ट 2003/4, पेरिस, यूनेस्को, पृष्ठ 18

97 डी अबू घेडा एंड एस. क्लैसेन, 'द इकॉनोमिक एंड ह्यूमन डेवलपमेंट कॉस्ट्स ऑव मिसिंग द मिलेनियम डेवलपमेंट गोल ऑन जेंडर इक्विटी', वर्ल्ड बैंक डिस्कशन पेपर, 29710 (वाशिंगटनः वर्ल्ड बैंक, 2004)

98 जीसीई, 'लर्निंग टु सर्वाइवः हाऊ एजुकेशन फॉर ऑल वुड सेव मिलियन्स ऑव यंग पीपुल फ्रॉम एचआईवी/एड्स', लंदन, जीसीई, 2004

99 स्मिथ एल. एंड हद्दाड एलः 'एक्सप्लेनिंग चाइल्ड मैलन्यूट्रीशन इन डेवलपिंग कंट्रीज', इंटरनेशनल फूड पॉलिसी रिसर्च इंस्टीट्यूट, रिसर्च रिपोर्ट नंबरः 111, वाशिंगटन डीसी.

100 ड्रेज जे., एंड किंग्डन जी., 'स्कूल पार्टिसिपेशन ऑन रूरल इंडिया' डेवलपमेंट इकॉनोमिक्स डिस्कशन पेपर, लंदन स्कूल ऑव इकॉनोमिक्स, 1999

101 http://www.genderandaids.org/downloads/events/Fact%20Sheets.pdf पृष्ठ 14

102 http://www.genderandaids.org/downloads/events/Fact%20Sheets.pdf पृष्ठ 14

2002 में एचआईवी/एड्स के कारण क्रमशः 1,967 और 2,000 शिक्षकों की मृत्यु हो गयी, जबकि शिक्षकों के कॉलेजों से प्रतिवर्ष 1,000 से भी कम प्रशिक्षित शिक्षक निकल रहे हैं।

- **एचआईवी/एड्स शिक्षा की मांग को कम करते हैं** : एचआईवी और एड्स बच्चों और घरों पर अपने प्रभाव के जरिये प्राथमिक रूप से शिक्षा की मांग पर असर डालते हैं। जैविक और सामाजिक कारणों से किशोरियों में ही संक्रमण की दर ज्यादा होती है। 2001 तक विकासशील देशों में 15 वर्ष से कम उम्र के 1.34 करोड़ बच्चे एड्स के कारण अपनी मां, पिता अथवा दोनों को खो चुके थे और उनमें से 82 प्रतिशत उप–सहारा, अफ्रीका में थे। एचआईवी/एड्स से ग्रस्त लोगों और अनाथ बच्चों की देखभाल का ज्यादातर बोझ महिलाओं और लड़कियों पर आया और इन भूमिकाओं को निभाने के लिए सबसे पहले उन्हें स्कूल छोड़ना पड़ा।
- **एचआईवी/एड्स से शिक्षा की गुणवत्ता प्रभावित होती है** : एचआईवी/एड्स शिक्षकों, विद्यार्थियों और शिक्षा मुहैया कराने वालों को तनावग्रस्त बनाकर शिक्षा के विकास, सामग्री एवं निर्णय करने की क्षमता पर प्रभाव डालता है। तनाव, संकट, आक्रोश, हिचकिचाहट, एकाकीपन उनके साथ कक्षा में प्रवेश कर जाते हैं और उससे निपटने के लिए शिक्षा के माहौल को बढ़ावा देने वाले सकारात्मक तरीके ही अपनाने पड़ते हैं। लेकिन सहायक तंत्र के बिगड़ने अथवा उसके न होने पर इसकी गारंटी नहीं दी जा सकती और ऐसे में शिक्षा की गुणवत्ता पर नकारात्मक प्रभाव पड़ेगा।

  गरीबी अथवा महिलाओं की सीखने की क्षमताओं और जरूरतों के संबंध में रूढ़िवादी नजरिये के कारण शैक्षिक प्रक्रियाओं और सामग्री में व्याप्त लिंगभेद और गंभीर हो जाते हैं।

इस तथ्य से कि दूसरों की देखभाल के लिए अक्सर लड़कियों को स्कूल से जल्द ही निकाल लिया जाता है यह निष्कर्ष सही साबित होता है कि लड़कियां लड़कों के मुकाबले अपनी शिक्षा पूरी करने में नाकाम रहती हैं।

प्रभावी लिंग संवेदी शिक्षा कार्यक्रमों के लिए मुख्य मुद्दे[103]

- संक्रमण, मिथकों और अंधविश्वासों का स्वरूप, जिनका महिला और पुरुषों पर प्रभाव पड़ता है।
- यौन व्यवहारों पर प्रभाव डालने वाला और एचआईवी/एड्स संक्रमण का खतरा बढ़ाने वाला लैंगिक पक्षपात।
- व्यवहार, जो खतरा कम करने के लिए महिलाओं और पुरुषों को अपनाना चाहिये।
- महिलाओं और पुरुषों के मानवाधिकारों और गरिमा के सम्मान को बढ़ावा देना।
- अंधविश्वासों और लैंगिक रूढ़ियों समेत लैंगिक संबंधों का स्वरूप और गतिशीलता।
- प्रभावित/संक्रमित बच्चों, युवाओं, वयस्कों और उनके परिवारों के सामने आने वाली बदनामी और भेदभाव।
- समझ, अनुकंपा और जानकारी को व्यवहार में लाने के कौशल।

युवाओं को एचआईवी/एड्स से बचाने के लिए सेवायें सुलभ कराने और जरूरी जानकारी, जीवन कौशल देने के लिए सक्षम वातावरण तैयार करने की जरूरत है और सभी युवाओं को यह प्रदान करना मौलिक भी है। इसमें युवा महिलाओं और लड़कियों, युवा पुरुषों और लड़कों के नजरिए में लचीलापन लाना, असमान लैंगिक नियमों को चुनौती देना और सकारात्मक लैंगिक संबंधों को बढ़ावा देना, परिवार, स्कूल और समुदाय में प्रभावी सामाजिक सहायता तंत्र सुनिश्चित करना और समाज के लिए उपयोगी होने की भावना को बढ़ावा देना, सकारात्मक नियमों और अपेक्षाओं को अपनाना और भविष्य के प्रति आशावान रहना आदि शामिल हैं।[104]

---

103 http://www.genderandaids.org/downloads/events/Fact%20Sheets.pdf पृष्ठ 15

104 http://www.genderandaids.org/downloads/events/Fact%20Sheets.pdf

स्कूलों में आमतौर पर एड्स संबंधी शिक्षा नहीं दी जाती है और जहां दी जाती है वहां 15 वर्ष और अधिक उम्र के युवाओं को ही यह मिलती है। फिर भी 15 से 17 वर्ष की उम्र वाले 42 प्रतिशत लड़के और 69 प्रतिशत लड़कियां स्कूलों में नहीं हैं।[105] दुनिया में निरक्षरों में दो तिहाई महिलायें हैं,[106] और एक अध्ययन से पता चलता है कि निरक्षर महिलाओं में यह धारणा चार गुना ज्यादा होती है कि एचआईवी के संक्रमण से बचने का कोई तरीका नहीं है।[107] वैश्विक स्तर पर 80 प्रतिशत से अधिक युवा महिलाओं को एचआईवी/एड्स के संबंध में पर्याप्त जानकारी नहीं है।[108] अपने साथी के अलावा किसी अन्य के साथ पिछले यौन संपर्क के दौरान 51 प्रतिशत महिलाओं ने कंडोम का प्रयोग किया, जबकि पुरुषों में कंडोम के प्रयोग की दर 59 प्रतिशत थी।[109] यह अनभिज्ञता विशेषकर महिलाओं के बीच लक्षित शिक्षा के जरिये दूर की जा सकती है। एक बार शिक्षा की दर बढ़ेगी तो गर्भधारण, बाल विवाह और एचआईवी संक्रमण आदि की दरें कम होती जायेंगी। महिलाओं को जानकारी प्राप्त करने का अधिकार है, जिससे उनमें जीवन कौशल का विकास होगा और खुद को बेहतर बनाने तथा एचआईवी तथा उसके साथ जुड़ी बदनामी से लड़ने के लिए उन्हें विश्वास तथा आर्थिक क्षमता मिलेगी। जानकारी के साथ सशक्तिकरण होता है, जो एचआईवी के प्रसार के कुछ कारणों का सफाया कर सकता है। शिक्षा गरीबी और आर्थिक अवलंबन को कम कर सकती है, स्वास्थ्य को सुधार सकती है, विवाह में देर कर सकती है और महिलाओं का आत्मविश्वास तथा निर्णय लेने की क्षमता बढ़ा सकती है।[110]

विश्व के अधिकतर युवा व्यक्ति (10–24 वर्ष आयुवर्ग) विशेषकर एचआईवी/एड्स के संक्रमण के खतरे से जूझ रहे हैं। एचआईवी/एड्स से पीड़ित 4.2 करोड़ लोगों में चौथाई से भी अधिक की उम्र 15 से 24 वर्ष के बीच है। अब वयस्कों में होने वाले नये संक्रमणों में आधे 15 से 24 वर्ष के आयुवर्ग वालों में ही होते हैं (यूएनएड्स 2002)। लड़कियां तथा युवा महिलायें एचआईवी/एड्स महामारी का चेहरा हैं। एचआईवी/एड्स से ग्रस्त युवाओं में 62 प्रतिशत युवतियां हैं (यूएनएड्स 2002)[111]। महिलाओं को पुरुषों की अपेक्षा एचआईवी संक्रमण का खतरा अधिक होता है, लेकिन युवा महिलायें और लड़कियां अपने अपरिपक्व जननांगों के कारण इस खतरे के अधिक करीब होती हैं। निम्न सामाजिक स्तर और लैंगिक विषमता एचआईवी संक्रमण के खतरे को बढ़ाते हैं। युवा महिलायें और लड़कियां लिंग आधारित हिंसा, दुर्व्यवहार, बलात् अथवा किसी वस्तु या धन के बदले सेक्स का शिकार बन सकती हैं और अक्सर वे खतरे के इन स्रोतों से खुद को बचाने में पर्याप्त रूप से सक्षम नहीं होती हैं। जहां उम्रदराज पुरुष और कम उम्र महिला के बीच संबंधों को सामाजिक मान्यता मिली हुई है वहां उम्रदराज पुरुष सेक्स के मामले में युवकों की अपेक्षा अधिक अनुभवी होते हैं और अधिक उम्र वाले पुरुष से विवाह करने वाली युवती अविवाहित युवतियों की अपेक्षा एचआईवी संक्रमण के खतरे के ज्यादा करीब होती है। पुरुष प्रभुत्व वाले रूढ़िवादी नियमों से पुरुष और लड़के कभी–कभी खतरनाक और आक्रामक यौन व्यवहार में लिप्त रहते हैं और दोनों लिंगों में संक्रमण की आशंका बन जाती है। लड़कों और युवकों को एचआईवी संक्रमण से बचने, एचआईवी/एड्स से ग्रस्त होने पर भी सकारात्मक तरीके से जीवन–यापन करने, देखभाल करने और पालन–पोषण करने की नयी भूमिकाओं के साथ तालमेल बिठाने के लिए कौशल और जानकारी की आवश्यकता है। इसमें लिंग आधारित हिंसा को बढ़ावा देने और

105 यूनिसेफ/यूएनएड्स/डब्ल्यूएचओ "यंग पीपुल एंड एचआईवी/एड्स : अपॉर्चुनिटी इन क्राइसिस", जून 2002, इंटरनेशनल वीमेन्स हेल्थ कोएलिशन फैक्ट शीट : www.iwhc.org/resources/hivaidsfactsheet.cfm

106 यूएनएफपीए "जेंडर इक्वलिटी फैक्टशीट", http://www.unfpa.org/swp/2005/presskit/factsheets/facts_gender.htm

107 यूएनएड्स, यूनीफेम, यूएनएफपीए; वीमेन एंड एचआईवी/एड्सः कन्फ्रंटिंग द क्राइसिस 2004, चैप्टर 5

108 यूएनएड्स, यूनीफेम, यूएनएफपीए; वीमेन एंड एचआईवी/एड्स : कन्फ्रंटिंग द क्राइसिस 2004, चैप्टर 5

109 यूएनएड्स, यूनीफेम, यूएनएफपीए; वीमेन एंड एचआईवी/एड्स : कन्फ्रंटिंग द क्राइसिस 2004, चैप्टर 5

110 यूएनएड्स, यूनीफेम, यूएनएफपीए; वीमेन एंड एचआईवी/एड्स : कन्फ्रंटिंग द क्राइसिस 2004, चैप्टर 5

111 http://www.genderandaids.org/downloads/events/Fact%20Sheets.pdf पृष्ठ 17

एचआईवी/एड्स के संक्रमण को बढ़ावा देने वाले रिवाजों तथा परंपराओं को एक साथ बदलने के लिए काम करने हेतु कौशल भी शामिल है।

लिंग एवं इंट्रावेनस नशे के प्रयोगकर्ता

इंट्रावेनस नशे का इस्तेमाल करने वाले (आईडीयू)[112] एक ही सुई का इस्तेमाल करने के कारण एचआईवी के संक्रमण के सबसे ज्यादा करीब होते हैं। लेकिन नशेड़ी पुरुषों की अपेक्षा नशेड़ी महिलाओं के बारे में जानकारी काफी कम हैं और अधिकतर अध्ययनों में महिला नशेड़ियों को अलग वर्ग के रूप में नहीं लिया गया है। नशे से मुक्ति दिलाने वाली कई संस्थायें महिलाओं को भर्ती नहीं करतीं, खासतौर पर यदि वे गर्भवती अथवा एचआईवी संक्रमित हों। इस प्रकार की प्रतिबंधात्मक प्रवेश नीतियों के बारे में जो कारण दिये जाते हैं उनमें लिंग के आधार पर विभाजित आवास की कमी और गर्भवती नशेड़ियों से निपटने के कौशल की कमी से लेकर अन्य रोगियों तथा कर्मचारियों में एचआईवी के संक्रमण का डर शामिल हैं। परिणामस्वरूप ज्यादातर स्वास्थ्य संस्थानों के आंकड़ों में महिला नशेड़ियों का सही ब्यौरा नहीं है। चूंकि नशे पर संयुक्त राष्ट्र की आधिकारिक वार्षिक रिपोर्ट के लिए यही आंकड़े मुख्य स्रोत हैं इसलिए महिलाओं के बारे में आंकड़े कम ही मिलते हैं।[113] भारत में नशीले पदार्थों का इस्तेमाल करने वालों के बारे में यूएनओडीसी के एक नवीनतम सर्वेक्षण में पाया गया कि शहरी इलाकों में नशीले पदार्थों का इस्तेमाल करने वाली महिलायें पहले की तुलना में अधिक युवा और शिक्षित थीं और वे सुइयों के असुरक्षित प्रयोग और असुरक्षित यौन व्यवहार में शामिल हो रही थीं। हैदराबाद में सर्वेक्षण में पाया गया कि नशीले पदार्थों का इस्तेमाल करने वाली महिलाओं ने पुरुषों की तुलना में यौन संबंधों की पहले शुरुआत की थी, उनके पुरुषों की तुलना में ज्यादा यौन साथी थे और वे कंडोम का कम इस्तेमाल कर रही थीं। तिरुवनंतपुरम में जिन आईडीयू महिलाओं का सर्वेक्षण किया गया उन सभी ने साझी सुइयों का प्रयोग किया था।[114] सर्वेक्षणों से पता चलता है कि नशीले पदार्थों का इस्तेमाल करने वाली महिलायें अपनी पृष्ठभूमि, नशीले पदार्थों के इस्तेमाल के कारण, अपनी मनोवैज्ञानिक–सामाजिक समस्याओं और उन्हें समाज में किस तरह देखा जाता है आदि मामलों में अपने पुरुष साथियों से अलग हो सकती थीं। आईडीयू महिलाओं पर उनके पुरुष साथियों की तुलना में कलंक लगाये जाने का ज्यादा अंदेशा होता है, क्योंकि नशीले पदार्थ लेने और महिला के पत्नी, मां और परिवार का पालन–पोषण वाली की परंपरागत अपेक्षाओं से हटने की वजह से समाज उनकी गतिविधियों को "सामान्य सामाजिक व्यवहार से भटका हुआ" करार देता है। यह देखा गया है कि आईडीयू महिलायें पारिवारिक जीवन में ज्यादा व्यवधान पैदा करती हैं, क्योंकि कानूनी और सामाजिक सजायें ज्यादा गंभीर होती हैं, अक्सर समुदायों या देशों में गर्भवती या एचआईवी पॉजीटिव महिलाओं के लिये नशीले पदार्थों से छुटकारा दिलाने के इलाज की सुविधाएं नहीं होतीं और सामुदायिक संस्थाएं जो अकेली माताओं को शरण और वित्तीय सहायता देते हैं वे इन महिलाओं को नहीं मिलतीं। महिलायें चिकित्सा प्रशासन की ओर से खराब व्यवहार और अपने बच्चों को छीन लिये जाने के भय से कई बार इलाज भी नहीं कराना चाहती हैं।[115]

112 कृपया आईडीयू पर चैप्टर देखें

113 यूनिफेम ईस्ट एंड साउथईस्ट एशिया रीजनल ऑफिस, "वीमेन एंड ड्रग: फ्रॉम हार्ड रियलिटीज टु हार्ड सोल्यूशन्स", 9 जनवरी 2001, http://www.unifem-eseasia.org/resources/factsheets/Gendis6.htm

114 यूएनडीओसी, " द रैपिड एसेसमेंट सर्वे: जेंडर कम्पैरिजन ऑव ड्रग यूजर्स," 2003, http://www.unodc.org/pdf/india/publications/women_book-6-5-03/15_theras-gendercomparisonsofdrugusers.pdf

115 यूनीफेम ईस्ट एंड साउथईस्ट एशिया रीजनल ऑफिस, "वीमेन एंड ड्रग्स: फ्रॉम हार्ड रिएलिटीज टु हार्ड साल्यूशंस," 9 जनवरी, 2001, http://www.unifem-eseasia.org/resources/factsheets/Gendis6.htm

इंजेक्शन के जरिये नशीले पदार्थ लेना और यौनकार्य का आपस में निकट संबंध है और ये आपस में एक दूसरे को एचआईवी के खतरे में डाल देते हैं। मणिपुर में एक अध्ययन में पाया गया कि 20 प्रतिशत महिला यौनकर्मियों का कहना था कि उन्होंने इंजेक्शन के जरिये नशीले पदार्थ लिये हैं। इसके अलावा नशीले पदार्थ लेने वाले ऐसे लोगों की संख्या भी बहुत अधिक थी जो सुइयों को आपस में बांटते थे और जिन्होंने यौनकर्मियों के साथ संबंध बनाये थे। दिल्ली में इनमे से 20 प्रतिशत ने किसी यौनकर्मी के साथ असुरक्षित संबंध बनाये थे, इसकी तुलना में कंडोम का इस्तेमाल करने वालों की संख्या 5 प्रतिशत थी।[116]

एड्स की महामारी की शुरुआत के बाद से यौनकार्य में लिप्त लोगों में अन्य जन समूहों की तुलना में एचआईवी संक्रमण की उच्च दर पाई गई है[117] और हाल के अध्ययनों में महिला, पुरुष और पारलैंगिक यौनकर्मियों में इसकी पुष्टि हुई है। बहुत से देशों में यौनकर्मियों को एचआईवी संक्रमण होने का खतरा ज्यादा रहता है। यौनकर्मियों को एचआईवी संक्रमण के ज्यादा खतरे के कारणों में निम्नलिखित शामिल हैं :

- कलंक लगना और हाशिये पर कर दिया जाना
- सीमित आर्थिक विकल्प, विशेषकर महिलाओं के लिये
- स्वास्थ्य, सामाजिक और कानूनी सेवाओं तक सीमित पहुंच
- सूचना और रोकथाम के तरीकों तक सीमित पहुंच
- लिंग आधारित भिन्नताएं और असमानताएं
- यौन उत्पीड़न और तस्करी
- हानिकारक या कम संरक्षण देने वाला कानून और नीतियां
- जीवन शैली (उदाहरण के लिये हिंसा, मादक पदार्थों का इस्तेमाल, आने जाने) से जुड़े खतरे[118]

महिलाओं के संपत्ति अधिकार : कानूनी संदर्भ

एचआईवी/एड्स से पीड़ित या प्रभावित महिलाओं को अक्सर वित्तीय सुरक्षा और आर्थिक अवसरों से वंचित कर दिया जाता है। सबूत बताते हैं कि महिलाओं की अगर आर्थिक सुरक्षा सुनिश्चित की जाये तो वे एचआईवी/एड्स के प्रभाव को बेहतर तरीके से संभालती हैं और एचआईवी/एड्स को और बढ़ने से रोकती हैं।[119] बहुत से देशों में हालांकि उनकी आर्थिक सुरक्षा को बाधित कर दिया जाता है और भेदभाव वाले कानूनों, परंपराओं और रीति रिवाजों से एचआईवी/एड्स का प्रभाव बढ़ जाता है।[120]

भारत

विश्व के अन्य भागों की तरह भारत में भी महिलाओं का संपत्ति पर अधिकार पुरुषों के बराबर नहीं है। महिलाओं के संपत्ति अधिकारों को नकारने और उनके उल्लंघन से पुरुषों और महिलाओं के बीच आर्थिक असमानता बढ़ती है। महिलाओं के संपत्ति अधिकारों पर वैधानिक कानूनों, व्यक्तिगत कानूनों और समाजिक चलन और परंपराओं के जटिल तानेबाने का प्रभाव पड़ता है। व्यक्तिगत कानून पारिवारिक कानूनी मामलों पर लागू होते हैं और ये महिला के माता–पिता की या वैवाहिक संपत्ति में उसके हिस्से का निर्धारण करते

116 एड्स ऐपीडैमिक अपडेट, यूएनएड्स/डब्ल्यूएचओ, दिसंबर 2005, पृष्ठ 34, एमएपी रिपोर्ट 2005 से लिया गया, "सेक्स वर्क एंड एचआईवी/एड्स इन साउथ एशिया"

117 कृपया जानकारी के लिये यौनकर्मियों पर लिखा अध्याय देखें

118 http://data.unaids.org/publictaions/IRC-pub02/JC705-SexWork-TU_en.pdf

119 टु हैव एंड टु होल्डः वीमेन्स प्रॉपर्टी एंड इनहैरिटेंस राइट्स इन द कॉन्टेक्स्ट ऑव एचआईवी/एड्स इन सब–सहारन, इंटरनेशनल सेंटर फॉर रिसर्च ऑन वीमेन, जून 2004

120 वही

है। व्यक्तिगत कानूनों का क्रियान्वयन व्यक्ति की धार्मिक सम्बद्धता पर निर्भर करता है। हिंदुओं, ईसाइयों और पारसियों के मामले में तो कुछ व्यक्तिगत कानून संहिताबद्ध भी हैं। आदिवासी महिलाओं के संपत्ति अधिकार उनकी जनजाति के रिवाजों और चलनों द्वारा नियंत्रित होते हैं।

भारतीय महिलाओं की संपत्ति को नियंत्रित करने वाली कोई एक कानूनी संस्था मौजूद नहीं है। एक भारतीय महिला के संपत्ति अधिकार उसके धर्म, उसकी वैवाहिक स्थिति, वह देश के किस भाग की है, उसकी जनजाति और ऐसे कई कारकों पर निर्भर करते हैं।

हिंदू, सिख, बौद्ध और जैन महिलायें

हिंदुओं, सिखों और जैनियों पर हिंदू विवाह कानून, 1955 और हिंदू उत्तराधिकार कानून, 1956 लागू होता है।[121] हिंदू, सिख, बौद्ध और जैन महिलाओं के संपत्ति अधिकार न केवल उनके धर्म और क्षेत्र बल्कि परिवार में उनकी स्थिति; क्या महिला एक पुत्री, मां, विवाहिता या अविवाहित या परित्यक्ता या विधवा है, यह इस बात पर भी निर्भर करता है कि जिस संपत्ति के बारे में उसके अधिकार की बात की जा रही है वह किस प्रकार की है? क्या संपत्ति पैतृक/स्वंय हासिल की हुई है या भूमि, मकान या वैवाहिक संपत्ति है।

हिंदू उत्तराधिकार कानून के तहत एक संयुक्त परिवार के सदस्य की मत्यु होने पर उसके पुत्र के साथ उसकी विधवा, मां और पुत्री, संपत्ति का समान हिस्सा पाने के हकदार होते हैं।[122] इस तरह एक पुत्री को जन्म से ही उसके भाइयों की तरह ही परिवार का हिस्सा माना जाता है और वह पारिवारिक संपत्ति में समान अधिकार रखती है। इसके साथ ही हिंदू उत्तराधिकार कानून में पहले विधवा की संपत्ति के मामले में "सीमित अधिकार" अब "पूर्ण अधिकार" बन गये हैं, जिससे अब वह उत्तराधिकार संपत्ति की पूर्ण हकदार हो गई है।[123]

हिंदू उत्तराधिकार कानून के तहत हालांकि एक पुत्री के पैतृक संपत्ति में अभी भी सीमित अधिकार हैं। उदाहरण के लिये नरसिम्हा मूर्ति बनाम सुशीलाबाई (श्रीमती) और अन्य[124] के मामले में भारतीय उच्चतम न्यायालय ने हिंदू उत्तराधिकार कानून की धारा–23 के तहत फैसला दिया कि जहां एक हिंदू निर्वसीयती एक रहने वाला मकान छोड़कर जाता है जिसमें महिला और पुरुष वारिस रहते हैं, तो महिला वारिस का विभाजन का दावा पुरुष वारिसों के अधिकार पर निर्भर करता है। महिला वारिस तब तक विभाजन की मांग नहीं कर सकती जब तक पुरुष वारिस मकान के विभाजन का फैसला न करें। और एक पुत्री को मकान में रहने का अधिकार उसकी स्थिति पर निर्भर करता है "जब वह अविवाहित हो या उसे पति ने छोड़ दिया हो या वह अलग हो गई हो और विधवा हो।"[125] इसके अतिरिक्त वसीयती प्रबंध से एक पुत्री को माता–पिता की संपत्ति के सभी अधिकारों से मना किया जा सकता है, क्योंकि हिंदू माता–पिता को स्वयं हासिल की गई संपत्ति की वसीयत के अधिकार पर कोई प्रतिबंध नहीं है और इसलिए वे ऐसी संपत्ति केवल अपने पुत्रों को दे सकते हैं।[126]

इसके साथ ही हिंदू उत्तराधिकार कानून " कृषि भूमि के विखंडन या सीमा को तय करने और ऐसी भूमि के संबंध पर काश्तकारी के अधिकारों के विखंडन को रोकने वाले किसी भी कानून के प्रावधानों" को

121 हिंदू विवाह कानून, 1955, संख्या 25, 2(1) (ए), (बी); हिंदु उत्तराधिकार कानून, 1956, संख्या 30, 2 (1) (ए), (बी)
122 हिंदू उत्तराधिकार कानून, 1956, 6, 10
123 हिंदू उत्तराधिकार कानून, 1956, 14
124 नरसिम्हा मूर्ति बनाम सुशीलाबाई (श्रीमती) और अन्य, (1996) 3 एससीसी 644
125 वही
126 नरेन्द्र सुब्रमण्यम्, फैमिली लॉ एंड कल्चरल प्लूरेलिज्म, 2004 http://www.profs-polisci.mcgill.ca/subramanaian/papers/familylawand-culturalpluralism.pdf#search=%22.Family%Law%20and%20Cultural%20Pluralism%20by% 20narendra%22

प्रभावित नहीं करता।[127] इस तरह से एक ग्रामीण महिला के संपत्ति अधिकार सीमित हैं, क्योंकि ज्यादातर कानून कृषि भूमि से संबंधित हैं और वे महिलाओं को उत्तराधिकार का अधिकार नहीं देते।[128] संपत्ति अधिकारों की समानता से एक महिला और उसके परिवार की आर्थिक सुरक्षा सुनिश्चित होती है और उसे सामाजिक और राजनीतिक अन्याय से लड़ने के लिये बल मिलता है।[129]

आदिवासी महिलायें

किसी जनजाति के परंपरागत कानून न केवल जनजाति की संस्कृति बल्कि उत्तराधिकार, विरासत और विवाह को भी नियंत्रित करते हैं। भारत में ज्यादातर भूमि कृषि भूमि है और एक आदिवासी की भूमि उसकी "सबसे महत्वपूर्ण प्राकृतिक संपदा होती है जिससे आदिवासी अपनी जीविका, सामाजिक स्तर और कार्य करने के स्थान आदि को हासिल करते हैं।"[130] एक आदिवासी व्यक्ति के जीवन में कृषि भूमि की महत्वपूर्ण भूमिका के बावजूद "ज्यादातर काश्तकारी कानून महिलाओं को कृषि भूमि के उत्तराधिकार और विभाजन से वंचित करते हैं।"[131]

मधु किश्वर एवं अन्य बनाम बिहार राज्य एवं अन्य[132] के मामले में याचिकाकर्ताओं ने दावा किया कि छोटा नागपुर काश्तकारी प्रावधान 7, 8 और 76 कानून, 1908 भारत के संविधान के अनुच्छेद–14, 15 और 21 का उल्लंघन है। याचिकाकर्ताओं ने यह भी आरोप लगाया कि बिहार और अन्य राज्यों में परंपरागत कानून आदिवासी महिलाओं को उनके पिता, पति और माता से संबंधित भूमि के उत्तराधिकार से रोकते हैं जबकि ऐसे उत्तराधिकार पुरुष आदिवासी सदस्यों को देना भेदभावपूर्ण है।[133] उच्चतम न्यायालय ने कानून के विरासत के प्रावधानों को संविधान का उल्लंघन करने वाले घोषित करने से बचते हुए[134], अपने फैसले में कहा कि कानून की धारा–7 और 8 को तब तक निलंबित किया जाना चाहिये जब तक एक आदिवासी महिला की जीविका अपने पुरुष काश्तकार की भूमि पर निर्भर करती हो।[135] इस तरह आदिवासी महिलाओं के पास पुरुष आदिवासी की मृत्यु के बाद भूमि को रखने का संविधान द्वारा संरक्षित अधिकार है जब तक उनकी आजीविका इस पर निर्भर है। अगर ऐसा नहीं होगा तो वे अभाव में आ जायेंगी।

अंततः न्यायालय ने यह मानने से इंकार कर दिया कि निर्वसीयती उत्तराधिकार से संबंधित परंपरागत कानून असंवैधानिक है। न्यायालय ने व्यक्तिगत कानून के सिद्धांतों को आदिवासी लोगों पर लागू करने से मना कर दिया, क्योंकि ऐसा करने से न्यायिक सक्रियता हावी होगी जो आदिवासी लोगों के "स्वंय के रीति रिवाजों परंपराओं और चलनों" का शोषण होगा।[136] न्यायालय ने हिंदू उत्तराधिकार कानून, 1956 या भारतीय उत्तराधिकार कानून, 1925 के न्याय और समानता के सिद्धांतों को भी लागू नहीं किया क्योंकि अपनी शर्तों के अनुसार ये कानून अनुसूचित जनजाति और आदिवासी लोगों पर लागू नहीं होते।[137] न्यायालय ने कहा "उत्तराधिकार के नियम भिन्न व्यवहार की अनुमति दे सकते हैं, ऐसा जरूरी नहीं कि इनके जरिये समान

---

127 हिंदू उत्तराधिकार कानून, 1956, 4
128 बीना अग्रवाल, आर वी नॉट पीजेंटस टू लैंड राइटस एंड वीमेन्स क्लेम्स इन इंडिया, द पॉपुलेशन कांउसिल, इंक, संख्या 21, 2002, पृष्ठ 14
129 वही, 7 पर
130 मधु किश्वर और अन्य बनाम बिहार राज्य और अन्य (1996) 5 एससीसी 125
131 वही
132 वही
133 वही
134 वही
135 वही
136 वही
137 वही

व्यवहार ही हो।"[138] इसके साथ ही न्यायालय ने भारत की केन्द्रीय सरकार से सिफारिश की कि यह देखा जाये कि "क्या हिंदू उत्तराधिकार कानून और भारतीय उत्तराधिकार कानून के तहत बिहार राज्य की अनुसूचित जनजातियों को दी गई छूटों को वापिस लेना न्यायोचित या जरूरी है।"[139]

मुस्लिम महिलायें

हिंदू पर्सनल लॉ की तुलना में मुस्लिम पर्सनल लॉ कम संहिताबद्ध है। मुस्लिम पर्सनल लॉ के संहिताबद्ध कानूनों में मुस्लिम पर्सनल लॉ (शरीयत) क्रियान्वयन कानून, 1937 और मुस्लिम महिला (तलाक पर अधिकारों का संरक्षण) कानून, 1986 हैं। पहला कानून महिलाओं को इस्लाम के अनुसार संपत्ति का अधिकार देता है।[140]

महिलाओं के संपत्ति अधिकारों से संबंधित इस्लामी उत्तराधिकार कानून के मुख्य सिद्धांत इस प्रकार हैं: "(1) पति या पत्नी को उत्तराधिकारी बनाया गया है (2) महिलाओं और बंधुओं को उत्तराधिकार के काबिल बनाया गया है (3) माता–पिता और पूर्वजों को उस स्थिति में भी उत्तराधिकार का अधिकार दिया गया है जब पुरुष वंशज मौजूद हों और (4) एक सामान्य नियम के तहत एक महिला को पुरुष के हिस्से का आधा हिस्सा दिया गया है।"[141]

इस्लामी कानून में प्रावधान है कि एक मुस्लिम अपनी संपत्ति का एक तिहाई से अधिक वसीयत नहीं कर सकता इस तरह यह परिवारजनों को निराश्रित होने से भी रोकता है। हालांकि अगर वह अपने वर्तमान विवाह को विशेष विवाह कानून, 1954 के प्रावधानों के तहत पंजीकृत करा लेता है तो उसके पास भारतीय उत्तराधिकार कानून, 1925 के तहत एक वसीयतकर्ता की सभी शक्तियां होंगी।[142]

ईसाई और पारसी महिलायें

भारतीय उत्तराधिकार कानून, 1925 ईसाई और पारसी महिलाओं के उत्तराधिकार अधिकारों का संरक्षण करता है।[143]

ईसाई : जहां एक ईसाई की मृत्यु बिना वसीयत किये हो जाती है और उसके पीछे वंशज होते हैं तो उसकी विधवा को एक–तिहाई संपत्ति मिलती है और उसके वंशजों को बाकी की दो–तिहाई संपत्ति में से बराबर का हिस्सा मिलता है।[144] अगर वंशज नहीं होते हैं, लेकिन अन्य परिवारजन होते हैं तो विधवा को आधी संपत्ति मिलती है, नहीं तो उसे पूरी संपत्ति हासिल होती है।

ईसाई उत्तराधिकार का मामला मैरी रॉय बनाम केरल राज्य में उठाया गया था।[145] श्रीमति रॉय ने त्रावणकोर ईसाई कानून की संवैधानिकता को चुनौती दी थी जिसमें पुत्रियों को पुत्रों के हिस्से का केवल एक चौथाई ही वसीयत में मिलता है और प्रत्येक पुत्री के हिस्से का एक भाग ईसाई चर्च को जाता है। भारतीय उच्चतम न्यायालय ने श्रीमति रॉय के पक्ष में फैसला देते हुए कहा कि त्रावणकोर ईसाई कानून की जगह भारतीय उत्तराधिकार कानून ने ले ली है जो पुत्रों और पुत्रियों को समान अधिकार देता है।

---

138 वही
139 वही
140 मुस्लिम पर्सनल लॉ (शरीयत) एप्लिकेशन कानून, 1937, संख्या 26, 2
141 अनुभा रस्तोगी, वीमेन, प्रॉपर्टी राइट्स एंड एचआईवी/एड्स, कॉम्बैट लॉ, खंड 5, संस्करण 2, मई 2006, पृष्ठ 34
142 श्रुति पांडे, प्रॉपर्टी राइट्स ऑव इंडियन वीमेन
143 भारतीय उत्तराधिकार कानून, 1925, संख्या 13
144 वही 33 पर
145 मैरी रॉय और अन्य बनाम केरल राज्य और अन्य, (1986) 2 एससीसी 209

पारसी : पारसी कानून पुरुषों और महिलाओं को सबसे अधिक समानता देता है। भारतीय उत्तराधिकार कानून, 1925 में संहिताबद्ध किये गये पारसी उत्तराधिकार कानून के तहत पुत्रों और पुत्रियों को, चाहे उनकी कैसी भी वैवाहिक स्थिति हो, माता–पिता की संपत्ति के समान हिस्से मिलते हैं।[146] जहां किसी बिना वसीयत वाले व्यक्ति के पीछे उसके पति या पत्नी और बच्चे होते हैं तो प्रत्येक को उस व्यक्ति की संपत्ति का समान हिस्सा मिलता है। अगर कोई पारसी की मृत्यु बिना वसीयत किये होती है और उसके पीछे माता–पिता और एक बच्चा होता है तो माता और पिता दोनों को हर बच्चे के हिस्से का आधा मिलता है।

मणिपुर पॉजिटिव पीपुल नेटवर्क द्वारा दायर एक मामले में एक एचआईवी पॉजिटिव महिला श्रीमती एक्स और उनके बच्चों को ससुराल वालों ने घर से निकाल दिया। न्यायालय ने उन्हें उनके ससुराल के घर में वापिस भेजा। न्यायालय ने उनके ससुराल वालों को यह भी आदेश दिया कि वे उनकी चिकित्सा और बच्चों की शिक्षा के खर्च का भुगतान करें। अंततः क्योंकि श्रीमती एक्स को सुरक्षा की चिंता थी इसलिए न्यायालय ने मामले पर विचार के लिए एक कमेटी का गठन किया।[147]

एक अंतर्राष्ट्रीय उदाहरण

जांबिया

जांबिया में दोहरी कानून व्यवस्था है, जिसमें परंपरागत और वैधानिक कानून दोनों लागू हैं। परंपरागत कानून के तहत भूमि अधिकारों पर पुरुषों का नियंत्रण है। इस तरह से महिलायें तभी भूमि की स्वामी हो सकती हैं जब कोई ग्राम प्रमुख, पति, या अन्य पुरुष रिश्तेदार उन्हें भूमि आवंटित करने का फैसला करता है। जबकि उत्तराधिकार से संबंधित कुछ वैधानिक प्रावधानों में विधवाओं और पुत्रियों को भूमि देने के साधन उपलब्ध कराये गये हैं, ये प्रावधान जांबिया की केवल 20 प्रतिशत भूमि पर ही लागू हैं। पतियों की मृत्यु के बाद अक्सर महिलाओं को उनके ससुराल के घर से निकाल दिया जाता है और उन्हें अपने मायके जाने पर बाध्य होना पड़ता है।

मविया बनाम मविया, एक तलाक के मामले में पक्षों ने लोजी परंपरागत कानून के तहत विवाह किया था।[148] पत्नी ने अपनी वैवाहिक संपत्ति के आधे हिस्से और जीवन पर्यन्त वित्तीय सहायता की मांग की। जांबिया उच्च न्यायालय ने पाया कि लोजी परंपरा में यह जरूरी नहीं है कि तलाक के बाद पति वैवाहिक संपत्ति में से पत्नी को हिस्सा दे। जबकि एक पति स्वेच्छा से ऐसी संपत्ति में से अपनी पत्नी को हिस्सा दे सकता है। लोजी परंपरा के अनुसार उसे ऐसा करना जरूरी नहीं था और न्यायालय ने भी उसे ऐसा करने के लिए बाध्य नहीं किया। न्यायालय ने यह भी पाया कि लोजी परंपरा में यह भी जरूरी नहीं है कि पति तलाक के बाद अपनी पत्नी को सहायता दे।

रोजमैरी चिब्वे बनाम ऑस्टिन चिब्वे का मामला उशी परंपरागत कानून के तहत हुए विवाह के टूटने के बाद संपत्ति के विभाजन को लेकर था।[149] श्रीमती चिब्वे ने जांबिया के उच्चतम न्यायालय में अपील कर दावा किया कि निचली अदालतों ने उनके लिए अपर्याप्त संपत्ति भत्ते दिये हैं। उच्चतम न्यायालय ने माना कि उशी परंपरागत कानून के तहत पति और पत्नी वैवाहिक संपत्ति में हिस्से का अधिकार रखते हैं। उच्चतम न्यायालय ने इस तथ्य के बावजूद कि विवाह परंपरागत कानून के तहत हुआ था इंगलिश कानून का सिद्धांत लागू करते हुए फैसला दिया कि अगर पति या पत्नी ने प्रत्यक्ष या किसी अन्य तरीके से संपत्ति बनाने में योगदान दिया

146 भारतीय उत्तराधिकार कानून, 1925, संख्या 13, 51(1)
147 अनुभा रस्तोगी, वीमेन, प्रॉपर्टी राइट्स एंड एचआईवी/एड्स, कॉम्बैट लॉ, खंड 5, संस्करण 2, मई 2006, पृष्ठ 34
148 मार्था मविया बनाम एलेक्स मविया, एचपीए/1/1977
149 रोजमैरी चिब्वे बनाम ऑस्टिन चिब्वे, एससीजेड/38/2000

है तो वे वित्तीय प्रावधानों का अधिकार रखते हैं; प्रत्येक पक्ष को हिस्से का अनुपात न्यायालय के विवेक पर छोड़ा गया। इस तरह श्रीमती चिब्वे को 'वैवाहिक कारण कानून' और इंगलिश कानून के सिद्धांतों के आधार पर संपत्ति दी गई जबकि उनका विवाह परंपरागत कानून के तहत हुआ था। उच्चतम न्यायालय का फैसला हालांकि सामान्यतः महिलाओं के संपत्ति अधिकारों के संरक्षण में असफल होता है। यह इस कारण है कि न्यायालय का फैसला उशी परंपरागत कानून से निर्देशित है, जिसके तहत पत्नी "विवाहित समय के दौरान हासिल की गई संपत्ति में यथोचित हिस्से का अधिकार रखती है।" जहां परंपरागत कानून इस बारे में कुछ नहीं कहता वहां चिब्वे बनाम चिब्वे में एक महिला को संरक्षण नहीं मिलता।

हाल ही में एक स्थानीय न्यायालय के निर्णय से हालांकि जांबिया में महिलाओं को संपत्ति अधिकारों के बारे में फायदा हुआ है। मार्था केम्बो म्वानावाल्ये बनाम कोलिंस म्वानावाल्ये के तलाक के मामले में न्यायालय ने परंपरागत कानून के तहत विवाहित महिलाओं के संपत्ति अधिकारों को सुरक्षित किया है। न्यायालय ने फ़ैसला दिया "इसके बावजूद कि इस मामले में दोनों पक्षों ने परंपरागत कानून के तहत विवाह किया था, न्याय की मांग है कि जब एक विवाह टूट जाता है तो दोनों पक्षों को समान स्थिति में रखना चाहिए, जिससे उनमें से कोई भी अभाव में न रहे।"[150]

अंतर्राष्ट्रीय कानून के तहत महिलाओं के अधिकार

मानवाधिकारों के सार्वभौमिक घोषणापत्र में लिंग के आधार पर समानता को मान्यता दी गई है कि महिलायें पुरुषों के समान आधार पर मूलभूत अधिकारों और स्वतंत्रताओं का अधिकार रखती हैं। इसमें कहा गया है "प्रत्येक व्यक्ति बिना किसी भेदभाव जैसे जाति, रंग, लिंग, भाषा, धर्म, राजनीतिक या अन्य विचार, राष्ट्रीयता या सामाजिक मूल, सम्पत्ति, जन्म या किसी अन्य दर्जे के घोषणापत्र में तय की गई सभी स्वतंत्रताओं और अधिकारों को हासिल करने का अधिकार रखता है।"[151] जो अधिकार इसमें दिए गये उनमें जीने का अधिकार, स्वतंत्रता और व्यक्ति की सुरक्षा; कानून के समक्ष समानता; संपत्ति हासिल करने का अधिकार; काम करने और काम के समान वेतन का अधिकार; स्वास्थ्य और कल्याण के लिए पर्याप्त जीवन स्तर का अधिकार जिसमें खाना, कपड़ा, मकान और चिकित्सा सहायता शामिल है; शिक्षा का अधिकार, और महिला को मां की भूमिका के लिए विशेष सहायता है।[152] इसके नतीजे में संयुक्त राष्ट्र के सभी सदस्य महिलाओं के सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक और सांस्कृतिक अधिकारों को मान्यता देते हैं।

मानवाधिकारों के सार्वभौमिक घोषणापत्र को लागू करने वाली दो बड़ी संधियां आर्थिक, सामाजिक, और सांस्कृतिक अधिकारों पर अंतर्राष्ट्रीय संधि(आईसीईएससीआर) और नागरिक और राजनीतिक अधिकारों की अंतर्राष्ट्रीय संधि (आईसीसीपीआर) हैं।[153] आईसीईएससीआर के तहत् देश "संधि में तय किये गये सभी आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक अधिकारों को पुरुषों और महिलाओं को समान अधिकार से देने की शपथ लेते हैं।"[154] आईसीईएससीआर शिक्षा के अधिकार, एक "पर्याप्त जीवन स्तर जिसमें शामिल है। पर्याप्त खाना,

150 आईआरआईएन न्यूज, ओआरजी, जाम्बिया : लैण्डमार्क जजमेंट फॉर वीमेन इन कस्टमरी मैरिजेज, इन्टेग्रेटेड रीजनल इन्फॉर्मेशन नेटवर्क (यूएन ऑफिस फॉर द कोऑर्डिनेशन ऑव ह्यूमेनिटेरियन अफेयर्स, दिसम्बर 21, 2005 http://www.irinnews.org/report.asp?ReportID=50812&SelectRegion= Southern.Africa&select Country=Zambia.

151 मानवाधिकारों पर सार्वभौमिक घोषणापत्र, जीए आरईएस. 217ए, संयुक्त राष्ट्र दस्तावेज ए/810, अनुच्छेद–2 (दिसंबर 10, 1948)

152 वही, अनुच्छेद–3, 7, 17, 23, 25, 26, 25(2)

153 नागरिक और राजनीतिक अधिकारों पर अंतर्राष्ट्रीय कोवेनैंट, दिसंबर 16, 1966, जीए. आरईएस. 2200ए (21), संयुक्त राष्ट्र दस्तावेज ए/6316, (23 मार्च, 1976 को अमल में आया) (इसके बाद से आईसीसीपीआर) ; आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक अधिकारों पर अंतर्राष्ट्रीय कोवेनैंट, 16 दिसंबर, 1966, जीए. आरईएस. 2200ए (21), संयुक्त राष्ट्र दस्तावेज ए/सीओएनएफ 157/24, (3 जनवरी, 1976 को अमल में आया) (इसके बाद से आईसीईएससीआर).

154 आईसीईएसआर, अनुच्छेद–3

कपड़ा और मकान और जीने की स्थितियों में लगातार सुधार," और "शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्य को हासिल कर सकने वाले सबसे ऊंचे स्तर को मान्यता देता है।"[155] शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्य के अधिकार के लिए संधि में यह जरूरी किया गया है कि इसमें शामिल पक्ष "जन्मदर को कम करें और बच्चे के स्वस्थ विकास पर जोर दें।"[156] ये सभी प्रावधान एक साथ "महिलाओं को स्वास्थ्य सेवाओं और महिला के शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्य को खतरे में डालने वाले अनचाहे गर्भ को रोकने का अधिकार देते हैं।"[157]

आईसीसीपीआर यह सुनिश्चित करता है कि "पुरुषों और महिलाओं को संधि में तय किये गये सभी नागरिक और राजनीतिक अधिकार एक समान समान मिलें,"[158] आईसीसीपीआर महत्वपूर्ण अधिकारों जैसे सूचना का अधिकार, राजनीति भागीदारी, साहचर्य और संचालन का अधिकार उपलब्ध कराता है।[159] ये अधिकार महिलाओं को स्वास्थ्य, चिकित्सा सहायता तक पहुंच और आर्थिक सुरक्षा के लिए जरूरी बहुत से अधिकारों का आधार उपलब्ध कराते हैं। इसके अलावा प्रजनन के अधिकार के स्व निर्धारण को भी जीने, स्वतंत्रता, निजता, विवाह और परिवार बनाने के अधिकार के साथ सीधे जोड़ा गया है।[160]

आईसीसीपीआर की तरह ही महिलाओं के राजनीतिक अधिकारों पर संधि महिलाओं को समान राजनीतिक अधिकार, जिनमें चुनाव में मतदान करने का अधिकार, सार्वजनिक रूप से चुनी जाने वाली संस्थाओं में निर्वाचित होने का अधिकार, और पुरुषों की तरह समान शर्तों पर सार्वजनिक कार्यालय में पद हासिल करने का अधिकार शामिल है।[161] इसके अतिरिक्त महिलाओं के खिलाफ हिंसा पर संयुक्त राष्ट्र के घोषणापत्र में देशों से आह्वान किया गया है कि वे महिलाओं के खिलाफ हिंसा को समाप्त करने के लिये सभी जरूरी कदम उठायें।[162] इसमें महिलाओं के खिलाफ हिंसा की परिभाषा एक ऐसी "लिंग आधारित हिंसक गतिविधि के रूप में की गई है जिसके नतीजे, या जिसके नतीजे की संभावना, महिलाओं को शारीरिक, यौन, या मानसिक हानि या महिलाओं की पीड़ा की हो, जिसमें ऐसी गतिविधियों का खतरा, जबरदस्ती या जानबूझ कर स्वतंत्रता का हनन शामिल है चाहे वो सार्वजनिक या निजी जीवन में हो।[163] महिलाओं के खिलाफ हिंसा को समाप्त करना विशेष रूप से महत्वपूर्ण है, क्योंकि ऐसी हिंसा महिलाओं को एचआईवी संक्रमण के खतरे में योगदान होता है। एचआईवी के फैलने से प्रभावी रूप से लड़ने के लिये "इस बात की जरूरत है कि महिलायें खुद का सभी प्रकार की हिंसा, जिसमें घरेलू हिंसा, बलात्कार, और यौन शोषण शामिल है, से बचाव करने में सक्षम हों।"[164]

महिलाओं के खिलाफ सभी प्रकार के भेदभावों को समाप्त करने के बारे में संधि

महिलाओं के खिलाफ सभी प्रकार के भेदभावों को समाप्त करने के बारे में संधि (सीईडीएडब्ल्यू) एक व्यापक कानूनी साधन है, महिलाओं के अधिकारों का एक अंतर्राष्ट्रीय विधेयक है, जो महिलाओं के अधिकारों पर केन्द्रित

155 वही., अनुच्छेद–13, 11, 12(1)

156 वही. अनुच्छेद–12(2)(ए)

157 हान्ना ए. साओना, द प्रोटेक्शन ऑफ रिप्रोडक्टिव राइट्स अंडर इंटरनेशनल लॉः द बुश एडमिनिस्ट्रेशन्स पॉलिसी शिफ्ट एंड चाइनीज फैमिली प्लानिंग प्रैक्टिसिज, 13 पैसिफिक रिम लॉ एंड पॉलिसी जर्नल 229, 243–244 (जनवरी 2004)

158 आईसीसीपीआर, अनुच्छेद–3

159 वही. अनुच्छेद–19, 2, 25, 22, 12

160 रेबेका जे. कुक, इंटरनेशनल प्रोटेक्शन ऑफ वीमेन्स रिप्रोडक्टिव राइट्स, 24 न्यूयॉर्क यूनिवर्सिटी जर्नल इंटरनेशनल लॉ एंड पॉलिटिक्स 645, 698 (1992)

161 महिलाओं के राजनीतिक अधिकारों पर समझौता, 31 मार्च, 1953, अनुच्छेद–1, 2, 3 (सात जुलाई, 1954 को लागू हुआ)

162 महिलाओं के खिलाफ हिंसा को समाप्त करने पर संयुक्त राष्ट्र का घोषणापत्र, ए/आरईएस/48/104, 20 दिसंबर, 1993

163 वही अनुच्छेद–1

164 अलेक्जैंड्रा एरिआगा, एचआईवी/एड्स एंड वायलेंस अगेंस्ट वीमेन, 29 ह्यूमन राइट्स 18 (समर 2002)

है और मानता है कि महिलाओं के अधिकारों को वंचित करना एक गंभीर अंतर्राष्ट्रीय चिंता का विषय है।[165] यह 3 सितंबर, 1981 को लागू हुआ और यह आईसीसीपीआर और आईसीईएससीआर के भेदभाव निरोधक प्रावधानों को पूरा करता है। संयुक्त राष्ट्र के लगभग सभी सदस्य देश सीईडीएडब्ल्यू के पक्ष में हैं, जिससे यह बच्चों के अधिकारों पर संधि के बाद दूसरी सबसे व्यापक रूप से मानी जाने वाली मानवाधिकार संधि है।[166] इसमें कहा गया है कि देश "पुरुषों और महिलाओं की समानता के सिद्धांत को शामिल करें और कानून और अन्य उपयुक्त तरीकों के जरिये इस सिद्धांत का व्यवहारिक रूप से पालन निश्चित करें।"[167] इसके सदस्य देश महिलाओं के खिलाफ सभी प्रकार के भेदभावों की निंदा करते हैं और महिलाओं के खिलाफ किसी व्यक्ति या अन्य द्वारा भेदभाव को समाप्त करने के लिये सभी उपयुक्त साधनों द्वारा एक नीति पर तुरंत अमल करने के लिये सहमत हैं।[168] भेदभाव को इस तरह परिभाषित किया गया है "लिंग के आधार पर की गई कोई भी भिन्नता, रुकावट या प्रतिबंध जिसका प्रभाव या प्रयोजन राजनीतिक, आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृतिक, नागरिक या किसी अन्य क्षेत्र में महिलाओं की पहचान, अधिकार आदि को बाधित करना या समाप्त करना है, चाहे उनकी कैसी भी वैवाहिक स्थिति हो।"[169]

सीईडीएडब्ल्यू के सदस्य देशों ने उपयुक्त कानूनों को बनाकर या समाप्त कर और राष्ट्रीय ट्रिब्यूनलों और अन्य सार्वजनिक संस्थानों के जरिये कानूनी संरक्षण स्थापित करने की शपथ ली है।[170] इसमें सदस्यों को कहा गया है कि वे "सभी क्षेत्रों विशेषकर राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक और सांस्कृतिक क्षेत्रों में महिलाओं के पूरे विकास और आगे बढ़ने को सुनिश्चित करने के लिये सभी उपयुक्त कदम उठायें, जिससे महिलाओं को पुरुषों के समान मानवाधिकार और मूलभूत स्वतंत्रता सुनिश्चित की जा सके।"[171] पुरुषों और महिलाओं के बीच समानता बनाने के लिये सदस्य अस्थायी विशेष कदम उठाने के लिये भी स्वतंत्र हैं।[172]

सदस्य देशों ने स्वास्थ्य देखभाल तक महिलाओं की पहुंच, शिक्षा और रोजगार के क्षेत्र में लिंग समानता, और आर्थिक एवं सामाजिक फायदों तक समान पहुंच सुनिश्चित करने का वायदा किया है।[173] वे आर्थिक और सामाजिक जीवन में महिलाओं के खिलाफ भेदभाव समाप्त करने, "महिलाओं की तस्करी और वेश्यावृति जैसे शोषण का दमन करने," और "पुरुषों एवं महिलाओं की समानता के आधार पर ग्रामीण क्षेत्रों में महिलाओं के खिलाफ भेदभाव को समाप्त करने पर सहमत हुए हैं, जिससे यह सुनिश्चित किया जा सके कि वे ग्रामीण विकास में भाग लेकर उससे फायदा उठायें।"[174] सदस्य देश "व्यवहार के सामाजिक और सांस्कृतिक तरीकों में भी बदलाव" करेंगे, जिससे महिलाओं और पुरुषों की स्थिति और भूमिका को खतरा पैदा करने वाले परंपरागत रवैयों, मान्यताओं और तरीकों को समाप्त किया जा सके।[175] सीईडीएडब्ल्यू के तहत सदस्यों को यह भी सुनिश्चित करना होगा कि महिलाओं की परिवार नियोजन से जुड़ी स्वास्थ्य सेवाओं और जानकारी

165 महिलाओं के खिलाफ सभी प्रकार के भेदभाव को समाप्त करने पर समझौता, 18 दिसंबर, 1979, जीए आरईएस. 34/180 (3 सितंबर, 1981 को लागू हुआ) (इसके बाद से सीईडीएडब्ल्यू)

166 एलिजाबेथ इवैट, फांइडिंग ए वॉइस फार वीमेन्स राइट्सः द अर्ली डेज ऑव सीईडीएडब्ल्यू, 34 जिओ. वाश इंटरनेशनल एलआरईवी. 515, 516 (2002)

167 सीईडीएडब्ल्यू, अनुच्छेद–2(ए)

168 वही. अनुच्छेद–2

169 वही. अनुच्छेद–1

170 वही. अनुच्छेद–2

171 वही. अनुच्छेद–3

172 वही. अनुच्छेद–4

173 वही. अनुच्छेद–10, 11, 14

174 वही. अनुच्छेद–13, 6, 14

175 वही. अनुच्छेद–5

तक पहुंच हो।[176] समग्र रूप से सीईडीएडब्ल्यू महिलाओं के खिलाफ भेदभाव को समाप्त करने और पुरुषों तथा महिलाओं की मूलभूत समानता को सुनिश्चित करने के लिये राष्ट्रीय दायित्वों को बढ़ावा देता है।

वैकल्पिक मूलपत्र

महिलाओं के खिलाफ सभी प्रकार का भेदभाव समाप्त करने के समझौते का वैकल्पिक मूलपत्र 22 दिसंबर, 2000 को लागू हुआ।[177] सीईडीएडब्ल्यू प्रोटोकॉल का प्रयोजन सदस्य देशों द्वारा सीईडीएडब्ल्यू को लागू करने में समस्याओं का समाधान निकालना है। इस तरह ये सीईडीएडब्ल्यू के तहत अधिकारों को प्रभावी बनाने की नई प्रक्रिया है और सीईडीएडब्ल्यू के संरक्षणों को बढ़ाती है।

इसके तहत व्यक्ति या दल महिलाओं के खिलाफ भेदभाव को समाप्त करने के लिए बनी कमेटी (सीईडीएडब्ल्यू कमेटी) को संधि में सुनिश्चित किये गये अधिकारों के उल्लंघन के खिलाफ शिकायत कर सकते हैं।[178] कमेटी हालांकि तभी शिकायतों पर विचार करेगी जब सभी घरेलू उपाय समाप्त हो चुके हों।[179] मूलपत्र को मानने वाले सदस्य देशों ने सीईडीएडब्ल्यू कमेटी को अपने एक या उससे अधिक नागरिकों द्वारा उनके खिलाफ दावों को स्वीकार करने की अनुमति दी है। वैकल्पिक मूलपत्र सीईडीएडब्ल्यू कमेटी को उसके अपने प्रयास के गंभीर या व्यवस्थित उल्लंघनों की जांच करने की भी अनुमति देता है।[180] इसके नतीजे में वैकल्पिक मूलपत्र एक ऐसी प्रक्रिया उपलब्ध कराता है जो उस स्थिति में महिलाओं के अधिकारों की क्षतिपूर्ति करती है जब सदस्य देश सीईडीएडब्ल्यू के तहत अपने दायित्वों को पूरा करने में असफल रहते हैं और जब वे अप्रभावी साबित होते हैं। मूलपत्र की क्षतिपूर्ति उपलब्ध कराने की क्षमता हालांकि सीमित है: ये तभी उपलब्ध हैं जब किसी देश ने इसे और सीईडीएडब्ल्यू दोनों को स्वीकार किया हो और कमेटी के निर्णय केवल सलाह के लिये हैं।

एचआईवी/एड्स को लेकर प्रतिबद्धता पर संयुक्त राष्ट्र महासभा का घोषणापत्र

संयुक्त राष्ट्र महासभा के 2001 के विशेष सत्र में सदस्य देशों ने एचआईवी/एड्स के संकट से निपटने के लिये एचआईवी/एड्स की महामारी के खिलाफ एक व्यापक, गंभीर और लंबी अवधि की कार्रवाई का संकल्प लिया।[181] विश्व भर की सरकारों ने माना कि इससे विकासशील देशों के लोग सबसे अधिक प्रभावित हैं और महिलाओं, युवाओं और बच्चों, विशेषकर लड़कियों, को इससे सबसे अधिक खतरा है।[182] इसी के अनुसार इसमें "जोर दिया गया कि लिंग समानता और महिलाओं का सशक्तिकरण महिलाओं और लड़कियों के लिये एचआईवी/एड्स का खतरा कम करने हेतु मूलभूत तत्व हैं।"[183]

पेइचिंग सम्मेलन

संयुक्त राष्ट्र की महिलाओं का चौथा सम्मेलन चीन के पेइचिंग में 1995 में हुआ। यह सम्मेलन पेइचिंग घोषणापत्र और कार्रवाई मंच के साथ समाप्त हुआ जिसने महिलाओं के अधिकारों को सुरक्षित करने के लिए

176 अनुच्छेद–10(एच), 12, 14(2)(बी)

177 महिलाओं के खिलाफ सभी प्रकार के भेदभाव को समाप्त करने पर समझौते के लिए वैकल्पिक मूलपत्र, 10 दिसंबर, 1999, जीए आरईएस. 54/4 (22 दिसंबर, 2000 को लागू हुआ)

178 वही, अनुच्छेद–1, 2; सीईडीएडब्ल्यू कमेटी की स्थापना 1982 में हुई और इसमें महिलाओं के विषयों पर विश्व भर के विशेषज्ञ शामिल थे। कमेटी सदस्य देशों द्वारा सीईडीएडब्ल्यू को लागू करने की निगरानी करती है

179 वही. अनुच्छेद–4

180 वही, अनुच्छेद–8

181 संयुक्त राष्ट्र महासभा "एचआईवी/एड्स को लेकर प्रतिबद्धता पर घोषणापत्र" 27 जून, 2001, संयुक्त राष्ट्र दस्तावेज ए/आरईएस/एस–26/2

182 वही, अनुच्छेद–4

183 वही, अनुच्छेद–14

नीतियों की सिफारिश की। पेइचिंग घोषणापत्र ने सदस्य देशों का ध्यान संयुक्त राष्ट्र के चार्टर, मानवाधिकारों का सार्वभौमिक घोषणापत्र, अन्य अंतर्राष्ट्रीय मानवाधिकार दस्तावेजों विशेषकर महिलाओं के खिलाफ सभी प्रकार के भेदभाव को मिटाने पर संधि, बच्चों के अधिकारों पर संधि, महिलाओं के खिलाफ हिंसा को समाप्त करने पर संधि और विकास के अधिकार पर संधि के तहत उनके दायित्वों और जिम्मेदारियों की ओर खींचा।[184] इसने नैरोबी में 1985 में महिलाओं, न्यूयार्क में 1990 में बच्चों, पर्यावरण और विकास पर 1992 में रियो डि जेनेरियो में, मानवाधिकारों पर 1993 में विएना में, जनसंख्या और विकास के बारे में 1994 में काहिरा में और 1995 में कोपेनहेगन में सामाजिक विकास पर हुए संयुक्त राष्ट्र के सम्मेलनों और शिखर सम्मेलनों पर सर्वसम्मति और प्रगति का भी उल्लेख किया।[185] कार्रवाई मंच एक "महिलाओं के सशक्तिकरण का एजेंडा है" जो जोर देकर कहता है कि महिलाओं और पुरुषों के बीच समानता मानवाधिकारों का एक मामला है और सामाजिक न्याय की एक शर्त है और समानता, विकास और शांति के लिये भी एक जरूरी और मूलभूत पूर्वशर्त है।"[186] हालांकि कार्रवाई मंच कोई बाध्यकारी कानूनी दस्तावेज नहीं है, यह महिलाओं के सशक्तिकण के लिये एक वैश्विक एजेंडे का प्रतिनिधित्व करता है।

कार्रवाई मंच ने महिलाओं से संबंधित गंभीर चिंता के 12 क्षेत्रों की पहचान की है, जो कि इस प्रकार हैं: गरीबी, शिक्षा और प्रशिक्षण, स्वास्थ्य देखभाल और संबंधित सेवाएं, महिलाओं के खिलाफ हिंसा, सशस्त्र और अन्य विवादों का महिलाओं पर प्रभाव, आर्थिक ढांचा और नीतियां, अधिकार और फैसले लेना, महिलाओं की उन्नति के लिये संस्थागत प्रक्रिया, मानवाधिकार, संचार माध्यमों तक महिलाओं की पहुंच और उनकी भागीदारी, प्राकृतिक संसाधन/पर्यावरण, कन्या शिशु के अधिकार।[187]

मंच एचआईवी/एड्स के महिलाओं के जीवन पर विनाशकारी प्रभाव और महिलाओं में एचआईवी संक्रमण की बढ़ती दर को स्वीकार करता है।[188] सरकारों, शिक्षण प्रशासनों और अन्य शैक्षणिक तथा अकादमिक संस्थानों का आह्वान किया गया है कि वे बच्चों को एचआईवी/एड्स के बारे में जागरूक करें।[189] कार्रवाई मंच युवा लड़कियों को एचआईवी संक्रमण के बढ़ते खतरे की तरफ भी ध्यान दिलाता है।[190] यह एचआईवी/एड्स के "महिलाओं के स्वास्थ्य पर विनाशकारी प्रभाव" और अंततः उनकी "माताओं और देखभाल करने वालों की भूमिका और अपने परिवारों को आर्थिक मदद में योगदान" को भी स्वीकारता है।[191] यह आगे स्वीकार करता है कि कम उम्र में विवाह, जिसमें बाल विवाह शामिल है, महिलाओं के खिलाफ हिंसा, यौन शोषण भी कई बार एचआईवी/एड्स संक्रमण के सहायक कारण बनते हैं।"[192]

इन सबको देखते हुए सरकारों और अंतर्राष्ट्रीय संस्थाओं से आह्वान किया गया है कि वे एचआईवी/एड्स की महामारी से निपटने के लिये लिंग संवदेनशील कदमों की शुरुआत करें। जो कदम उठाये जाने हैं वे हैं: विशेषकर महिलाओं पर प्रभाव को ध्यान में रखते हुए अपने देशों में एचआईवी/एड्स के असर की पहचान करना, बच्चों सहित समाज के सभी सदस्यों के लिये शिक्षा और जागरूकता कार्यक्रमों को शुरू करना, महिलाओं को एचआईवी/एड्स के संक्रमण में योगदान करने वाले सामाजिक एवं सांस्कृतिक प्रचलनों और

184 पेइचिंग घोषणापत्र और कार्रवाई के लिये मंच, महिलाओं पर संयुक्त राष्ट्र का चौथा विश्व सम्मेलन (पेइचिंग, 4–15 सितंबर, 1995), संयुक्त राष्ट्र दस्तावेज ए/कान्फ. 177/20 (1995), पैरा 8
185 वही, पैरा 9
186 वही, पैरा 1
187 वही, पैरा 46
188 वही, पैरा 39
189 वही, पैरा 85
190 वही, पैरा 95
191 वही, पैरा 99
192 वही, पैरा 108

एचआईवी/एड्स संबंधित भेदभाव के खिलाफ कानून बनाना, गैर–भेदभाव वाली एचआईवी/एड्स संबधित नीतियों और तरीकों को प्रोत्साहन देना, महिलाओं को एचआईवी से बचाने के लिये सामुदायिक रणनीतियों का विकास करना, संक्रमित व्यक्तियों को देखभाल और मदद उपलब्ध कराना, निवारक सेवाओं को सुनिश्चित करना, महिलाओं के लिये सलाह और जांच सेवाओं का विस्तार और महिलाओं में एचआईवी संक्रमण पर शोध को मदद देना।[193]

पेइचिंग +5

संयुक्त राष्ट्र के वर्ष 2000 के महिला सम्मेलन में सरकारों ने पेइचिंग मंच के प्रति अपनी प्रतिबद्धता को दोबारा जाहिर किया औरे पेइचिंग सम्मेलन के बाद के पांच वर्षों में उभरे नये मामलों और प्रचलनों को पहचाना। इनमें एचआईवी/एड्स महामारी की गंभीरता और एचआईवी/एड्स का विशेषकर महिलाओं पर विनाशकारी प्रभाव शामिल है। सम्मेलन के बाद महासभा ने सर्वसम्मति से राजनीतिक घोषणापत्र और "पेइचिंग मंच को अमल में लाने के लिये आगे के कदमों और प्रयासों" को स्वीकारा।[194] इसने माना कि "एचआईवी/एड्स महामारी का विकासशील विश्व में फैलने का महिलाओं पर गहरा प्रभाव पड़ा है।"[195] अन्य चीजों के बीच, सरकारों और अंतर्राष्ट्रीय संस्थाओं से सुरक्षित यौन संबंध के तरीकों को सुनिश्चित करने के लिये उपाय करने, "एचआईवी/एड्स और महिलाओं के स्वास्थ्य पर दुष्प्रभाव डालने वाले अन्य संक्रमणों के लिंग संबंधी पहलुओं के निदान के लिये नीतियां और उपायों को लागू करने", एचआईवी/एड्स के महिलाओं पर प्रभाव के बारे में शोध और आंकड़े एकत्र करने, "महिलाओं के स्वास्थ्य को प्रभावित करने वाले परंपरागत या रीति–रिवाज के तरीकों, जिनमे से कुछ उन्हें एचआईवी/एड्स के खतरे में भी डाल देते हैं, के हानिकारक प्रभावों के बारे में जागरूकता को प्रोत्साहन", "सभी उम्र की महिलाओं को एचआईवी के बारे में शिक्षा, सेवाओं ओर समुदाय आधारित रणनीतियों में तेजी लाने" का आह्वान किया गया।[196] अंत में, देशों ने महिलाओं के प्रजनन अधिकारों, परिवार नियोजन के सुरक्षित और प्रभावी तरीकों के प्रावधान, और महिलाओं एवं किशोरियों के लिये प्रजनन स्वास्थ्य सेवाओं को सुनिश्चित और संरक्षित करने की अपनी प्रतिबद्धता की दोबारा पुष्टि की।[197]

पेइचिंग +10

महिलाओं पर चौथे विश्व सम्मेलन की दसवीं वर्षगांठ पर भाग लेने वाली सरकारों ने पेइचिंग घोषणापत्र और कार्रवाई मंच तथा महासभा के तेइसवें विशेष सत्र के नतीजों के दस्तावेजों के लिये अपनी प्रतिबद्धता को दोहराया।[198] महिलाओं की स्थिति पर संयुक्त राष्ट्र के आयोग ने इसके बाद महिलाओं, कन्या शिशु और एचआईवी/एड्स पर एक प्रस्ताव को स्वीकार किया।[199] प्रस्ताव में एचआईवी/एड्स के महिलाओं और लड़कियों पर प्रभाव पर अंतर्राष्ट्रीय समुदाय के ध्यान को विशेष रूप से केन्द्रित किया गया। प्रस्ताव में महिलाओं और लड़कियों को असमानुपाती रूप से प्रभावित करने वाली एचआईवी/एड्स की वैश्विक महामारी पर आयोग की

193 वही, पैरा 109

194 महासभा द्वारा स्वीकार किया गया प्रस्ताव, पेइचिंग घोषणापत्र को लागू करने के लिए आगे के कदम और प्रयास और कार्रवाई का मंच, एस–23/3, 10 जून, 2000

195 वही, पैरा 44

196 वही, पैरा 72, 79, 67, 88, 103

197 वही, पैरा 79

198 पेइचिंग समीक्षा पर महासभा का प्रस्ताव, महिलाओं पर चौथे विश्व सम्मेलन, पेइचिंग घोषणापत्र तथा कार्रवाई के मंच को पूरी तरह लागू करने पर आगे कार्रवाई और महासभा के तेइसवें विशेष सत्र के नतीजे; महिलाओं की स्थिति पर आयोग द्वारा घोषणापत्र को स्वीकार करने की समीक्षा, 49 वां सत्र, 3 मार्च, 2005, ई/सीएन.6/2005/एल.1

199 महिलाओं की स्थिति पर आयोग, पचासवें सत्र पर रिपोर्ट, ई/2006/27–ई/सीएन.6/2006/15, प्रस्ताव 50/2, 2006

चिंता और एचआईवी/एड्स से लड़ने के लिये सरकार और नागरिक समाज द्वारा सभी क्षेत्रों और स्तरों पर आपात कदम उठाये जाने की जरूरत का जिक्र किया गया है।[200] प्रस्ताव में अन्य विषयों के साथ सरकारों का आह्वान किया गया कि है वे महिलाओं के सशक्तिकरण और उनकी आर्थिक स्वतंत्रता को मजबूत करने, स्वास्थ्य देखभाल और स्वास्थ्य सेवाओं को मजबूत करने, चिकित्सा तक पहुंच को बढ़ाने, और महिलाओं तथा लड़कियों के खिलाफ एड्स से संबधित भेदभाव को समाप्त करने के लिये सभी जरूरी कदम उठायें।[201]

वैवाहिक अधिकार

विवाह करने का अधिकार अंतर्राष्ट्रीय मानवाधिकार कानून और स्तरों द्वारा संरक्षित है। उदाहरण के लिये मानवाधिकारों के सार्वभौमिक घोषणापत्र के अनुच्छेद–16(1) में कहा गया है : "पूरी आयु के पुरुषों और महिलाओं को विवाह करने का अधिकार है।"[202]

इसी तरह नागरिक और राजनीतिक अधिकारों की अंतर्राष्ट्रीय संधि के अनुच्छेद–23 में कहा गया है: "विवाह की उम्र वाले पुरुषों और महिलाओं के विवाह और परिवार बनाने के अधिकार को स्वीकारना चाहिए।" इन अंतर्राष्ट्रीय कानूनों के बावजूद एचआईवी पॉजीटिव व्यक्तियों को अपने विवाह के अधिकार को लेकर खतरों का सामना करना पड़ता है।

श्री एक्स बनाम सुश्री वाई[203] के मामले में भारतीय उच्चतम न्यायालय ने एचआईवी/एड्स से पीड़ित व्यक्तियों के वैवाहिक अधिकारों को निलंबित कर दिया।[204] जांच में श्री एक्स के पॉजिटिव पाये जाने के बाद अस्पताल के एक कर्मचारी ने उनकी मंगेतर के परिवार को उनकी पॉजिटिव स्थिति के बारे में सूचित कर दिया। इस खुलासे के बाद सगाई तोड़ दी गई। श्री एक्स ने विश्वास को तोड़ने और उनके विवाह के अधिकार में हस्तक्षेप करने को लेकर हर्जाने की मांग करते हुए मुकदमा किया। न्यायालय ने उनके हर्जाने के दावे को नकारते हुए कहा कि खुलासा "विश्वास के नियम या वादी के निजता के अधिकार का उल्लंघन नहीं है, क्योंकि सुश्री वाई जिनसे वादी विवाह करने जा रहे थे, वे इस खुलासे के कारण समय रहते बच गई नहीं तो अगर विवाह हो जाता तो वह भी संक्रमण से पीड़ित हो जाती।" न्यायालय ने यहां तक कहा कि "जब तक कोई व्यक्ति किसी संक्रामक यौन संक्रमण से ठीक नहीं हो जाता, उसका विवाह का अधिकार न्यायालय के जरिये लागू नहीं किया जा सकता और यह एक निलंबित अधिकार की तरह माना जायेगा।" न्यायालय ने टिप्पणी की कि एचआईवी/एड्स से पीड़ित व्यक्ति का यह कर्तव्य है कि वह विवाह न करे।

इसके बाद श्री एक्स बनाम डा. जेड के मामले में, श्री एक्स ने एक आईए 2/1999 दाखिल करते हुए प्रश्न किया कि क्या एचआईवी/एड्स से पीड़ित व्यक्ति के लिये ऐसे व्यक्ति से विवाह करना उस दशा में कानूनी होगा जब साथी को व्यक्ति के पॉजीटिव होने की स्थिति की जानकारी से अवगत करा दिया जाये।[205] उच्चतम न्यायालय ने हालांकि इस मामले में फैसला देने से इंकार कर दिया। न्यायालय ने कारण बताया कि क्योंकि न्यायालय ने पिछले मामले में पाया था कि श्री एक्स के एचआईवी होने के बारे में खुलासा गैरकानूनी नहीं था, उस मामले के अनुसार चलते हुए उसे पॉजिटिव व्यक्ति के विवाह के अधिकार के बारे में फैसला नहीं देना चाहिये। न्यायालय ने पाया कि व्यक्ति के विवाह के अधिकारों को लेकर टिप्पणियां गैरजरूरी हैं और उसने इन टिप्पणियों वाले आवदेनों को खारिज कर दिया।

---

200 वही
201 वही
202 मानवाधिकारों पर सार्वभौमिक घोषणापत्र, अनुच्छेद–16 (10 दिसंबर, 1948 को लागू हुआ)
203 एआईआर 1999 एससी 495
204 डा. टोकुघा येप्थोमी बनाम अपोलो हॉस्पिटल इंटरप्राइजेज लि. एवं अन्य (1998) 8 एससीसी 296
205 मिस्टर एक्स बनाम डॉ. जेड, (2003) एआईआर एससी 664

पॉजिटिव व्यक्तियों पर वैवाहिक प्रतिबंधों को संहिताबद्ध करने का भी प्रयास किया गया है। अमेरिका में उटाह के जिला न्यायालय ने उटाह के एक कानून पर रोक लगा दी जो एड्स से पीड़ित लोगों के विवाह को रोकता था और उसे अमान्य करार देता था।[206] टीईपी बनाम लिआविट के मामले में न्यायालय ने फैसला दिया कि उटाह का कानून अमरीकियों के विकलांगता कानून (एडीए) का उल्लंघन करता है। एडीए शारीरिक विकलांगता के आधार पर भेदभाव को रोकता है। इसमें शारीरिक विकलांगता की व्याख्या ऐसी बीमारी के रूप में की गई है जो किसी व्यक्ति के जीवन की बड़ी गतिविधियों को सीमित कर देती है। क्योंकि संघीय कानून राज्य के कानून से बड़ा होता है इसलिए राज्य का कानून नहीं चल पाया।

वर्ष 2004 में अल्बानिया ने अपने देश की परिवार संहिता में संशोधन करने का प्रस्ताव दिया जो एचआईवी/एड्स सहित विशेष विकलांगताओं वाले लोगों के विवाह के अधिकार को नकारती थी। चीन में कुछ स्थानीय कानून पॉजिटिव लोगों के विवाह करने पर रोक लगाते हैं जबकि कुछ अन्य यौन संबंधों के जरिये फैलने वाले संक्रमणों से पीड़ित व्यक्तियों को विवाह का लाइसेंस लेने से तब तक रोकते हैं जब तक उनका इलाज हो रहा है।[207]

संरक्षण और अभिरक्षा अधिकार

एचआईवी/एड्स से संबंधित जटिलताओं के कारण किसी एक अभिभावक की मृत्यु या तलाक या अलगाव से बच्चे के संरक्षण और अभिरक्षा के मामलों पर गहरा प्रभाव पड़ता है। एचआईवी/एड्स से पीड़ित ज्यादातर भारतीय 15 से 49 की आयु के बीच के हैं, यह एक ऐसा समय है जिसमें बहुत से लोग बच्चों का पालन–पोषण करते हैं।[208] पॉजिटिव व्यक्तियों के लिये यह बहुत जरूरी है कि वे असमर्थता या मृत्यु के बाद अपने बच्चों की देखभाल के लिये योजना बनायें। इसके अलावा भारत में विवाहित महिलाओं की संख्या एचआईवी/एड्स से पीड़ित जनसंख्या में तेजी से बढ़ रही है।[209] वर्ष 2004 में राष्ट्रीय एड्स नियंत्रण संगठन ने अनुमान लगाया कि भारत में एचआईवी/एड्स से पीड़ित लगभग 56 लाख लोगों में से 39 प्रतिशत महिलायें थी।[210] एक एचआईवी/एड्स पीड़ित महिला को लिंग आधारित बाधाओं का सामना करना पड़ता है जो उसके बच्चों के लिये योजना और देखभाल करने की उसकी क्षमता को प्रभावित करती हैं। उसकी स्थिति भेदभाव वाले कानूनों, परंपराओं और तरीकों से और भी खराब हो जाती है। अक्सर उसके पति की मृत्यु के बाद एक महिला को अपने बच्चों के संरक्षण और अभिरक्षा के लिये अपने ससुरालवालों से लड़ना पड़ता है। महिलाओं के ऐसे यौन संबंधों में शामिल होने की संभावना होती है, जिससे उन्हें एचआईवी होने का ज्यादा खतरा रहता है। क्योंकि वे अपने बच्चों का संरक्षण और अभिरक्षा खोना नहीं चाहती हैं।

भारत में कानूनी परिदृश्य

एक अवयस्क के प्राकृतिक अभिभावक का अवयस्क के अभिभावक के रूप में कर्तव्य करने का कानूनी अधिकार होता है। एक अभिभावक के रूप में व्यक्ति के पास अवयस्क के व्यक्तिगत और संपत्ति के बारे में निर्णय लेने और उन पर नियंत्रण करने का कानूनी अधिकार होता है। एक प्राकृतिक अभिभावक का किसी न्यायालय के

206 टी.ई.पी. बनाम लीविट, 840 एफ. एसयूपीपी. 110 (डी. सीटी. उटाह 1993)

207 इंटरनेशनल फेडरेशन फॉर ह्यूमन राइट्स, ऑल्टरनेटिव रिपोर्ट टु द कमेटी ऑन इकॉनोमिक, सोशल एंड कल्चरल राइट्स; पृष्ठ 17, 2.2.3, अप्रैल 2005 http://www.fidh.org/IMG/pdf/cn413a.pdf

208 ह्यूमन राइट्स वॉच, फ्यूचर फॉरसेकन: एब्यूजिज अगेन्स्ट चिल्ड्रन एफेक्टिड बाय एचआईवी/एड्स इन इंडिया, पृष्ठ 7, जून 2004, http://hrw.org/reports/2004/india0704.htm#_ftn344

209 डारा मायर्स, अवर बॉडीज, अवर लाइव्ज, फोर्ड फांउडेशन रिपोर्ट, समर 2004. http://www.fordfound.org/publications/ff_report/view_ff_report_detail.cfm?report_index=501

210 राष्ट्रीय एड्स नियंत्रण संगठन, एचआईवी/एड्स एपीडेमिओलॉजिकल सर्वीलेंस एंड एस्टीमेशन रिपोर्ट फॉर द इयर 2005, अप्रैल 2006. http://www.nacoonline.org

आदेश के बिना अपने अधिकार के कारण एक कानूनी अभिभावक के रूप में तब तक कर्तव्य निभाता है जब तक न्यायालय अभिभावक और संरक्षित व्यक्ति कानून, 1890 (जीडब्ल्यूए) के तहत प्राकृतिक अभिभावक को उसके अधिकारों से वंचित नहीं करता या एक वसीयती अभिभावक की नियुक्ति नहीं की जाती।[211] अभिरक्षा से अर्थ "अवयस्क की शारीरिक देखभाल और अवयस्क के नियंत्रण" से है।[212] अभिरक्षा करने वाला अभिभावक बच्चे की "शिक्षा, इलाज, और आने–जाने" के बारे में निर्णय ले सकता है।[213] अभिरक्षा करने वाला अभिभावक बच्चे के व्यक्तिगत निर्णय ले सकता है लेकिन वह अवयस्क की संपत्ति पर नियंत्रण नहीं रख सकता।[214] भारत में अवयस्क बच्चे का संरक्षण और अभिरक्षा जीडब्ल्यूए, पक्षों के व्यक्तिगत कानून, और विभिन्न धार्मिक समुदायों के विवाह और तलाक कानूनों से निर्देशित होते हैं।[215]

जीडब्ल्यूए सभी अवयस्क बच्चों पर लागू होता है चाहे वह किसी भी धर्म से संबंध रखते हों।[216] जीडब्ल्यूए प्राकृतिक या वसीयती अभिभावक के असफल होने पर लागू होता है। न्यायालय अवयस्क की संपत्ति या उसके व्यक्ति के रूप में या दोनों के लिए, जब ये अवयस्क के सर्वश्रेष्ठ हित में हो, एक अभिभावक को नियुक्त कर सकता है।[217] अभिभावक नियुक्त करते समय न्यायालय बच्चे की आयु, लिंग, और उसकी इच्छाओं के साथ अवयस्क के व्यक्तिगत कानून पर भी विचार करता है।[218]

जब जीडब्ल्यूए लागू नहीं होता तो पक्षों के व्यक्तिगत कानून और विवाह तथा तलाक कानून लागू होते हैं। सभी धार्मिक समुदायों के व्यक्तिगत कानून एक अवयस्क बच्चे का संरक्षण पिता को सौंपते हैं।[219]

हिंदू अवयस्क और संरक्षण कानून

हिंदुओं, सिक्खों, बौद्धों और जैनियों पर लागू होने वाले हिंदू अवयस्क और संरक्षण कानून(एचएमजीए) में प्रावधान है कि "एक लड़के और अविवाहित लड़की" का प्राकृतिक अभिभावक "पिता और उसके बाद माता" है।[220] मुस्लिम पर्सनल लॉ की तरह एचएमजीए के तहत जहां माता अभिरक्षा का अधिकार रखती है, जैसे किसी बहुत छोटे बच्चे के मामले में, पिता प्राकृतिक अभिभावक बना रहता है।

वर्ष 1999 में उच्चतम न्यायालय ने हालांकि फैसला दिया कि माता अवयस्क के प्राकृतिक अभिभावक के रूप में कर्तव्य निभा सकती है। गीता हरिहरन बनाम भारतीय रिजर्व बैंक के मामले में गीता हरिहरन ने वित्तीय बांडों के एक आवेदन पर अपने बच्चे के प्राकृतिक अभिभावक के रूप में हस्ताक्षर की अनुमति नहीं दिये जाने पर भारतीय रिजर्व बैंक के खिलाफ मुकदमा किया।[221] एचएमजीए की धारा–6(ए) जिसमें यह प्रावधान है कि अवयस्क का प्राकृतिक अभिभावक "पिता और उसके बाद माता" है, पर प्रश्न किया गया था। बैंक का कहना था कि एचएमजीए के तहत पिता के जीवित रहते हुए, पिता ही बच्चे का प्राकृतिक अभिभावक है और इसी के अनुसार श्रीमती हरिहरन के पास बच्चे के कानूनी अभिभावक के रूप में हस्ताक्षर करने का अधिकार नहीं है। उच्चतम न्यायालय ने फैसला दिया कि दोनों में से कोई भी अभिभावक एचएमजीए के तहत अवयस्क के

211 आशा बाजपेई, कस्टडी एंड गार्जियनशिप ऑव चिल्ड्रन इन इंडिया, 39 फैमिली लॉ क्वार्टर्ली 441, 443 (समर 2005)
212 वही, 442
213 वही
214 वही
215 वही,. 443
216 अभिभावक एवं संरक्षित कानून, 1890, संख्या 8, 1(1)
217 वही, 11(7)
218 वही, 11(17)
219 एसोसिएशन फॉर एडवोकेसी एंड लीगल इनीशिएटिव्स, बेसलाइन रिपोर्ट: राइट्स ऑव वीमेन इन रिलेशन टु मैरिज इन इंडिया, पेज 53; आशा बाजपेई, कस्टडी एंड गार्जियनशिप ऑव चिल्ड्रन इन इंडिया, 39 फैमिली लॉ क्वार्टर्ली 441, 443 (समर 2005)
220 हिंदू अल्पवयस्क और संरक्षण कानून, 6(ए).
221 गीता हरिहरन बनाम भारतीय रिजर्व बैंक, (1999) 2 एससीसी 228

अभिभावक के रूप में कर्तव्य कर सकता है। न्यायालय ने धारा–6(ए) में "बाद" शब्द को दोबारा परिभाषित किया, जिसका अर्थ था "गैरमौजूदगी" की जगह "गैरमौजूदगी में" जिसका जिक्र किसी भी कारण से अवयस्क की देखभाल से पिता की गैरमौजूदगी, बच्चे के मामलों से पिता का अलग–थलग रहना, संरक्षण को लेकर पिता और मां के बीच में कोई समझौता(जुबानी या लिखित), या अवयस्क की देखभाल करने में पिता की किसी भी कारण से अक्षमता, के रूप में था। ऊपर दी गई परिस्थितियों में से किसी के भी तहत पिता को गैरमौजूद माना गया है और मां को प्राकृतिक अभिभावक के रूप में मान्यता दी जा सकती है। यह निर्णय पिता को अपनी मृत्यु के बाद वसीयत के जरिए मां को अभिभावक बनने से वंचित करने से रोकता है।[222]

वर्ष 2006 में उच्चतम न्यायालय ने दोबारा माना कि दोनों में से कोई भी अभिभावक, यदि वह वित्तीय रूप से सक्षम हो और बच्चे की देखभाल के लिये उपयुक्त हो, तो वह बच्चे के प्राकृतिक अभिभावक का कर्तव्य निभा सकता है। शीला बी. दास बनाम पीआर सुगाश्री के मामले में शीला दास ने त्रिशूर के पारिवारिक न्यायालय द्वारा उनकी पुत्री के पिता "प्राकृतिक अभिभावक" को पुत्री की अभिरक्षा देने के निर्णय के खिलाफ अपील की।[223] उच्चतम न्यायालय ने बच्चे के सर्वश्रेष्ठ हितों को देखते हुए पिता को संरक्षण देने के निर्णय को बहाल रखा। बच्चे के सर्वश्रेष्ठ हितों के बारे में निर्णय लेने के लिये न्यायालय ने अवयस्क से बात करके उसकी प्राथमिकताओं की जानकारी ली।

मुस्लिम पर्सनल लॉ

मुस्लिम पर्सनल लॉ (शरीयत) संरक्षण के उन मामलों पर लागू होता है जहां पक्ष मुस्लिम हो।[224] मुस्लिम पर्सनल लॉ के सभी सिद्धांतों के तहत पिता संरक्षण का अधिकार बरकरार रखता है।[225] उल्फत बीबी बनाम बफाती के अनुसार मुस्लिम लॉ के तहत पिता ही तब तक प्राकृतिक अभिभावक होता है जब तक कोई सक्षम न्यायालय कोई अन्य आदेश न दे।[226]

सुलाइका बीबी और छह अन्य बनाम रमीजा बीबी और 10 अन्य के मामले में दिवंगत सुल्तान माराकयार ने अपनी एक तिहाई से अधिक संपत्ति की वसीयत की थी।[227] हनाफी कानून के तहत ऐसी वसीयत तभी वैध होती है जब वसीयतकर्ता की मृत्यु के बाद उसके उत्तराधिकारियों की सहमति ली जाये। अपीलकर्ता ने दावा किया कि वसीयत कानूनी है क्योंकि कानूनी अभिभावक के रूप में उसने अपने अवयस्क बच्चों की ओर से सहमति दी है। लेकिन मद्रास उच्च न्यायालय ने फैसला दिया कि माता अपने अवयस्क बच्चों के "कानूनी अभिभावक के रूप में कर्तव्य करने के लिए पूरी तरह अक्षम है"। न्यायालय ने कहा कि "इस संबंध में कानून पूरी तरह स्पष्ट है कि माता अपने अवयस्क बच्चों की ओर से प्राकृतिक अभिभावक के रूप में कर्तव्य नहीं निभा सकती है।" न्यायालय ने इमाम बांदी बनाम मुक्सदी का उदाहरण दिया जहां प्रिवी कांउसिल ने कहा था कि "मुस्लिम लॉ में यह पूरी तरह स्पष्ट है कि माता अपने बच्चों के धर्म के अनुसार एक विशेष आयु तक ही उनकी अभिरक्षा के योग्य है, लेकिन वह प्राकृतिक अभिभावक नहीं है। केवल पिता और यदि उनकी मृत्यु हो गई है तो उनकी वसीयत को अमल में लाने वाला (सुन्नी कानून के तहत) कानूनी अभिभावक है।"[228]

222 आशा बाजपेई, कस्टडी एंड गार्जियनशिप ऑव चिल्ड्रन इन इंडिया, 39 फैमिली लॉ क्वार्टर्ली 441, 444 (समर 2005)
223 शीला बी. दास बनाम पी. आर. सुगाश्री, एआईआर 2006 एससी1343
224 मुस्लिम पर्सनल लॉ (शरीयत) एप्लिकेशन कानून, 1937, संख्या 26, 2
225 आशा बाजपेई, कस्टडी एंड गार्जियनशिप ऑव चिल्ड्रन इन इंडिया, 39 फैमिली लॉ क्वार्टर्ली 441, 445 (समर 2005)
226 मोहतरमा उल्फत बीबी बनाम बफाती, एआईआर 1927 इलाहाबाद 581
227 सुलइका बीबी और छह अन्य बनाम रमीजा बीबी, 2000 (4) सीटीसी 454
228 इमाम बांदी बनाम मुक्सदी, 1918 (5) आईए 73

पिता हालांकि प्राकृतिक कानूनी अभिभावक है लेकिन यह जरूरी नहीं कि वह अभिरक्षण अभिभावक भी हो। महिलाओं को बेहतर देखभाल करने वाला मानते हुए मुस्लिम लॉ बहुत कम उम्र के बच्चों की अभिरक्षा माता को देने के पक्ष में है। इस तरह से माता एक अवयस्क लड़की की तब तक अभिरक्षा के योग्य है जब तक वह यौवनारंभ की आयु तक नहीं पहुंचती और एक अवयस्क लड़के की तब तक अभिरक्षा के योग्य है जब तक वह सात वर्ष की आयु का नहीं हो जाता। हालांकि इस स्थिति में भी पिता ही कानूनी अभिभावक होगा।[229] अगर माता तलाक लेती है और फिर दूसरे व्यक्ति से विवाह करती है तो वह पिता के पक्ष में अभिरक्षा के अधिकारों को खो देगी, चाहे पिता कैसा भी अयोग्य अभिभावक क्यों न हो।[230]

शमा बेग बनाम ख्वाजा मोहिउद्दीन अहमद के मामले में शमा बेग ने अपने दोबारा विवाह के कारण अपने छह वर्षीय पुत्र की अभिरक्षा के अधिकार से वंचित किये जाने के निचली अदालतों के फैसले के खिलाफ दिल्ली उच्च न्यायालय में अपील की।[231] उच्च न्यायालय ने फैसला दिया कि अभिरक्षा के मामलों में न्यायालय बच्चे के कल्याण पर सबसे अधिक विचार करता है। उच्च न्यायालय ने न्यायालय के बहुत से फैसलों का उदाहरण देते हुए कारण दिया कि "अवयस्क की अभिरक्षा से संबधित मामलों में न्यायालय को अवयस्क के हित और कल्याण के सिद्धांत पर विचार करना चाहिये। इसे देखते हुए कानून की इस बाध्यता को कम कर दिया गया है कि दोबारा विवाह करने पर एक महिला अपने बच्चे की अभिरक्षा का अधिकार खो देती है।" यह पता चलने पर कि बच्चा कभी अपने पिता के साथ नहीं रहा और न ही वह उससे हिला–मिला है, न्यायालय ने बच्चे के सर्वश्रेष्ठ हित को देखते हुए उसकी अभिरक्षा माता को सौंप दी। वह हालांकि केवल पुत्र के सात वर्ष का होने तक ही अभिरक्षा के योग्य होगीं।

अंतर्राष्ट्रीय कानूनी परिदृश्य

सामान्यतः बच्चे के संरक्षण और अभिरक्षा को लेकर न्यायालय की प्राथमिक चिंता बच्चे के सर्वश्रेष्ठ हितों को लेकर होती है। इसी के अनुसार न्यायालय अभिभावकों के स्वास्थ्य पर भी विचार कर सकता है। ऑस्ट्रेलिया के बी और सी के विवाह के मामले में न्यायालय ने विचार किया कि क्या एड्स से पीड़ित पिता अपने तीन वर्षीय बच्चे की अभिरक्षा दोबारा हासिल कर सकता है।[232] न्यायालय ने पिता को अभिरक्षा देने से इंकार कर दिया। न्यायालय ने कारण बताया कि एड्स से पीड़ित किसी व्यक्ति से जुड़ने से बच्चे के कल्याण को खतरा होगा।

अमेरिका में स्टीवन एल. बनाम डॉन जे. के मामले में आपसी सहमति से हुए समझौते के तहत माता को बच्चे की अभिरक्षा सौंपी गयी।[233] माता के एचआईवी पॉजिटिव पाये जाने पर पिता ने मुकदमा दायर किया कि एचआईवी से पीड़ित होने के बाद परिस्थिति में बदलाव हुआ है और इसलिए बच्चे की अभिरक्षा अब उसे मिलनी न्यायोचित्त है। न्यायालय ने अभिरक्षा के आदेश के नवीनीकरण के लिये इस दलील को नकार दिया। न्यायालय ने कहा कि हालांकि मां एचआईवी से पीड़ित है लेकिन वह अभी तक पूरी तरह से एड्स से पीड़ित नहीं है और ऐसा कोई सबूत नहीं है कि वह निकट भविष्य में एड्स से पीड़ित हो जायेगी।

इसी तरह सामाजिक सेवा विभाग बनाम काराहेर मामले में नेबरास्का उच्चतम न्यायालय ने फैसला किया कि बच्चे के सर्वोत्तम हित उसके पालक माता–पिता के साथ ही सुरक्षित हैं और उनका इस बात से कोई

229 मीर मोहम्मद बहाउद्दीन बनाम मुजीबुन्निसा बेगम ए साहिबा, एमएएनयू/टीएन/0174/1952
230 मोहतरमा उल्फत बीबी बनाम बफाती, एआईआर 1927 इलाहाबाद 581
231 शमा बेग बनाम ख्वाजा मोहिउददीन अहमद, एमएएनयू/डीई/0214/1971
232 बी एवं सी की शादी में (1989) एफएलसी 92–043
233 स्टीवन एल. बनाम डॉन जे., 148 एमआईएससी. 2डी 779 (न्यूयॉर्क फैमिली कोर्ट 1990)

सरोकार नहीं कि उसकी पालक मां को एड्स है। जॉन टी. के अभिभावकों ने साढ़े तीन वर्ष के इस बच्चे को उसके पालक माता–पिता से अलग करने के सामाजिक सेवा विभाग (डीएसएस) के निर्णय को मंजूरी देने के बाल न्यायालय के फैसले के खिलाफ अपील की।[234] डीएसएस ने यह निर्णय जॉन टी. की पालक मां को एड्स होने के कारण लिया था। वह पालक मां की मृत्यु से जॉन टी. पर पड़ने वाले प्रभाव को लेकर चिंतित था, विशेषकर बच्चे में सीजोफ्रेनिया रोग के आनुवंशिक रिकॉर्ड को लेकर वह फिक्रमंद था। किशोर न्यायालय ने पाया कि जॉन का सर्वाधिक हित अन्य पालक माता–पिता के साथ रखे जाने में ही है। अपील किये जाने पर नेबरास्का उच्चतम न्यायालय ने जॉन को उसके पालक माता–पिता के पास लौटाये जाने का आदेश दिया। न्यायालय ने देखा कि जॉन और उसकी पालक मां के बीच मजबूत रिश्ते को देखते हुए उसे पालक मां को लौटाये जाने में ही उसका हित है। न्यायालय ने कहा कि किसी भी बच्चे के पास उसके अभिभावक के जीवन की गारंटी नहीं होती और जॉन को उसकी मां जीबी, जिसे वह अपनी एकमात्र मां के रूप में जानता था, की संभावित मृत्यु की त्रासदी से बचाने के लिए डीएसएस या अदालत ने उसे दूसरी त्रासदी में डालने का काम किया यानि कि डीएसएस की योजनानुसार, जॉन अपनी मां ही नहीं बल्कि अपने पिता को भी खोने वाला था।"

कम से कम एक अदालत ने कहा है कि "जब बच्चे की अभिरक्षा था उससे मिलने के संदर्भ में एड्स का सवाल उठाया जाये तो अदालतों को इस बात पर गौर करना चाहिये, लेकिन अदालतों को अभिरक्षा और मुलाकातों के मामले में स्थापित सिद्धांतों और उदाहरणों का इस्तेमाल जारी रखना चाहिये।"[235] शर्मन बनाम शर्मन मामले में टेनेसी अपीलीय अदालत के अनुसार एचआईवी से संक्रमण का खतरे के कारण मौजूदा कानूनी सिद्धांतों और उदाहरणों से हटा जा सकता है। शर्मन में मां ने पिता के मुलाकात के अधिकार को खत्म करने की अपनी अपील को खारिज करने के निचली अदालत के फैसले के खिलाफ अपील की थी। उसका कहना था कि पिता अपने एचआईवी संक्रमित भाई के साथ रहता है, इसलिए उसे बच्चे से मुलाकात की अनुमति नहीं मिलनी चाहिये। अदालत ने कहा, "एड्स के खतरे के बावजूद यह अपील दरअसल मुलाकात के अधिकार को लेकर तलाकशुदा माता और पिता के बीच का विवाद है।"

गोद लेने का अधिकार

गोद लेना एक प्रक्रिया है, जिसके जरिये किसी बच्चे और उसके जन्मदाता माता–पिता के बीच कानूनी संबंध खत्म हो जाता है और उसके स्थान पर बच्चे तथा उसे गोद लेने वाले माता–पिता के बीच नया संबंध स्थापित हो जाता है।[236]

भारत में दत्तक अर्थात गोद लेने की कार्यवाही व्यक्तिगत क़ानून द्वारा संचालित होती है। इस समय गोद लेने के बारे में एकमात्र मौजूद कानून हिंदू दत्तक एवं भरण–पोषण अधिनियम, 1956 है। हिंदू दत्तक एवं भरण– पोषण अधिनियम केवल हिंदुओं, सिक्खों, बौद्धों और जैनों पर ही लागू होता है। गैर हिंदुओं के व्यक्तिगत कानून चूंकि गोद लेने को मान्यता नहीं देते, इसलिए गैर हिंदू अभिभावक एवं संरक्षित व्यक्ति अधिनियम 1890 का ही सहारा ले सकते हैं, जो केवल अभिभावक एवं पाल्य के संबंध की बात कहता है।[237] लेकिन बम्बई उच्च न्यायालय ने कहा है कि गोद लिये जाने की अनुमति देने वाले कानून के अभाव में

234 सामाजिक सेवा विभाग बनाम कैराहेर (जॉन टी के संदर्भ में), 4 एनईबी. एपीपी. 79 (एनईबी. सीटी. एपीपी. 1995)

235 शर्मन बनाम शर्मन, 1994 डब्ल्यूएल 649146 (टेनेसी अपीलीय अदालत 1994)

236 हिंदू दत्तक एवं भरण पोषण अधिनियम, 1956, धारा–7

237 अजित दत्त बनाम श्रीमती एथेल वाल्टर्स, एमएएनयू/यूपी/0850/2000; महरुख अदनवाला, चाइल्ड राइट्स एंड द लॉ : ए गाइड फॉर लीगल इंटरवेंशन्स, पेज 95 (चाइल्डलाइन इंडिया फाउंडेशन 2002)

जीडब्ल्यूए के तहत अभिभावकत्व का अधिकार प्राप्त व्यक्ति बच्चे को गोद लेने के लिए अदालत में याचिका दायर कर सकता है।[238]

केंद्रीय दत्तक संसाधन एजेंसी (सीएआरए) सामाजिक न्याय एवं आधिकारिता मंत्रालय के तहत स्थापित स्वायत्तशासी संस्था है। सीएआरए भारत में सभी दत्तक संबंधी मामलों के लिए जिम्मेदार है।[239] सीएआरए के दिशानिर्देशों के तहत गोद लेने के इच्छुक माता–पिता को अपने स्वास्थ्य की स्थिति से संबंधित दस्तावेज प्रस्तुत करने होते हैं। एक अनिवार्य चिकित्सा रिपोर्ट, जिसमें शारीरिक जांच और और चिकित्सा इतिहास शामिल होते हैं, में संभावित माता–पिता की एचआईवी स्थिति की पड़ताल की जाती है।[240] ये दिशानिर्देश किसी शारीरिक रोग से ग्रस्त व्यक्तियों को बच्चा गोद लेने के लिए आवेदन करने से नहीं रोकते, लेकिन विचार विमर्श का सबसे अहम मसला बच्चे का कल्याण है। इस प्रकार सीएआरए के दिशानिर्देश इस बारे में कुछ भी स्पष्ट नहीं करते कि संभावित माता–पिता में से किसी की मौत बच्चे को सदमा देने वाली होगी या नहीं। इसलिए यह निर्णय करना अदालत का अधिकार है कि एचआईवी/एड्स से प्रभावित व्यक्ति को बच्चा गोद लेने दिया जाये अथवा नहीं।

अमेरिका में जॉनसन को गोद लेने के मामले में इंडियाना अपीलीय अदालत ने निचली अदालत के एक फसले की ही पुष्टि की थी। इसमें अदालत ने ग्रेशेन जॉनसन की जैविक मां को अपना बच्चा गोद लेने का फैसला बदलने की अनुमति इस आधार पर दे दी थी कि उसे गोद लेने वाले माता–पिता दोनों ही एचआईवी संक्रमित थे।[241] श्री एवं श्रीमती निकोलस दोनों को ही एचआईवी का संक्रमण हो चुका था और निकट भविष्य में उनके एड्स से पीड़ित होने की पूरी संभावना थी। ग्रेशेन जॉनसन ने दावा किया कि गोद लिया जाना और उसके बाद अपने माता–पिता को गंवा देना बच्चे के हित में नहीं होगा। अपीलीय अदालत इससे सहमत हो गयी और उसने जॉनसन को इस संबंध में अपनी सहमति वापस लेने की अनुमति दे दी। इसके बाद बच्चे को पालन केंद्र में रखा गया।

बच्चे की भावी देखभाल की योजना

भारत

हिंदू अवयस्क एवं अभिभावकत्व कानून, 1956 के तहत किसी बच्चे का पिता हलफनामे के जरिये किसी को अभिभावक नियुक्त कर सकता है।[242] लेकिन पिता द्वारा की गई नियुक्ति अमान्य हो जाती है यदि उस बच्चे की मां जीवित होती है।[243] यदि पिता की मृत्यु के बाद मां जीवित रहती है तो 'हिंदू विधवा को अपने अवयस्क कानूनी बच्चे का प्राकृतिक अभिभावक माना जाता है और यदि पिता का अभिभावकत्व अमान्य करार दिया जाता है अथवा वह अवयस्क की संपत्ति आदि के लिए किसी को उसका अभिभावक नियुक्त करता है तो ऐसी स्थिति में अवयस्क की मां को ही उसका प्राकृतिक अभिभावक माना जाता है।'[244] इस प्रकार कोई पिता अपनी वसीयत के जरिये मां को अभिभावकत्व से वंचित नहीं कर सकता। हिंदू, सिख, बौद्ध और जैन माता–पिता भी अपने बच्चों को गोद देने के बारे में फैसला कर सकते हैं।

मुस्लिम पर्सनल लॉ पिता को प्रभावी स्थिति में रखता है। सुन्नी कानून के अंतर्गत पिता हलफनामे के जरिये किसी की नियुक्ति कर सकता है। यदि पिता किसी अभिभावक की नियुक्ति में नाकाम रहता है, तो

238 मैनुएल थियोडोर डीसूजा के मामले में
239 केंद्रीय दत्तक ग्रहण संसाधन एजेंसी के दिशानिर्देश, धारा–2, http://www.adoptionindia. nic.in/ carahome.html पर उपलब्ध
240 वही, धारा–4 (ix)
241 जॉनसन को गोद लेने के संदर्भ में, 612 एनई 2डी 569, 573 (इंडियाना अपीलीय अदालत 1993)
242 हिंदू अवयस्क एवं अभिभावकत्व अधिनियम, 1957, संख्या 32, 9(1)
243 वही, 9(2)
244 वही, 9(3),(4)

बच्चे के पितामह अर्थात् दादा को अभिभावकत्व मिल जाता है। शिया कानून के तहत पिता की मृत्यु के बाद अभिभावकत्व दादा पक्ष को मिल जाता है। इसमें पिता को वसीयत के जरिये दादा को इस अधिकार से वंचित करने की अनुमति नहीं है। इस प्रकार दोनों समुदायों के कानूनों में अवयस्क के पिता की मौत के बाद मां को अभिभावक बनने की अनुमति नहीं है। लेकिन पिता अपनी वसीयत के जरिये मां को अभिभावक नियुक्त कर सकता है। चूंकि मुस्लिम पर्सनल लॉ दत्तक मामलों को मान्यता नहीं देता इसलिए भावी देखभाल की योजना में गोद दिये जाने का विकल्प नहीं है। इसके बजाय जीडब्ल्यूए के पालन में अभिभावक–पाल्य संबंध अपनाया जा सकता है।

जहां माता–पिता वसीयत के जरिये अभिभावक नियुक्त करने में नाकाम रहते हैं अथवा प्राकृतिक या नियुक्त अभिभावक कसौटी पर खरे नहीं उतरते हैं, तो अदालत अभिभावक एवं संरक्षित व्यक्ति अधिनियम के तहत अभिभावक की नियुक्ति कर सकती है। लेकिन जीडब्ल्यूए माता–पिता के अधिकारों को ही सबसे ऊपर रखता है।

अंततः अभिभावकत्व और अभिरक्षा के मामले बाल न्याय अधिनियम, 1986 के अंतर्गत भी आ सकते हैं।[245] यह अधिनियम देखभाल और सुरक्षा की जरूरत वाले बच्चों पर लागू होता है। जरूरतमंद बच्चे की परिभाषाओं के अनुसार ये वे बच्चे हैं, "जिनके पास कोई घर अथवा आश्रय स्थल नहीं होता और न ही उनके पास जीविकोपार्जन का कोई साधन होता है।" "जो गंभीर संक्रमण अथवा उपचार के दायरे से बाहर वाले संक्रमणों से पीड़ित होते हैं और उनके पास कोई सहारा नहीं होता।" "जिनके माता–पिता अथवा अभिभावक तो हैं लेकिन ऐसे माता–पिता अथवा अभिभावक बच्चे पर नियंत्रण करने में अक्षम हैं।" "जिनके माता–पिता नहीं होते और कोई भी जिनकी चिंता करने को तैयार नहीं अथवा जिनके माता–पिता उन्हें बेसहारा छोड़ गये हैं।[246] बाल न्याय अधिनियम जरूरतमंद बच्चों के संदर्भ में राज्य सरकारों को प्रत्येक जिले अथवा जिलों के समूह में बाल कल्याण समितियों (सीडब्ल्यूसी) के गठन का अधिकार देता है।[247] सीडब्ल्यूसी जरूरतमंद बच्चों की देखभाल, सुरक्षा, उपचार और पुनर्वास के संबंधित मसले सुलझाती है। बच्चे की मूलभूत आवश्यकतायें पूरी करने और मानवाधिकारों का संरक्षण करने की जिम्मेदारी के साथ सीडब्ल्यूसी बच्चे को बाल संरक्षण गृह में रखने, उसके माता–पिता के पास पहुंचाने, किसी को गोद देने अथवा किसी पालक के पास रखने के बारे में फैसला कर सकती है। व्यावहारिक रूप से स्वस्थ छोटे बच्चे को गोद देना ही इकलौता विकल्प होता है और देखभाल केन्द्र जैसी कोई व्यवस्था नहीं की गई है।[248] इस प्रकार ऐसा प्रतीत होता है कि राज्य एवं राष्ट्रीय दोनों ही स्तरों पर सरकारी अधिकारी उन बच्चों के लिए जिनका परिवार उनकी देखभाल नहीं कर पाता, संस्थाओं को ही पहला और लगभग इकलौता समाधान मानते हैं। जबकि बाल अधिकार संधि के अनुसार हालांकि बच्चों को सबसे पहले पारिवारिक देखभाल में ही रखा जाना चाहिये और संस्थागत देखभाल को अंतिम उपाय माना जाना चाहिये।

संयुक्त राज्य अमेरिका

अमेरिका में एचआईवी/एड्स से प्रभावित परिवारों के पास अपने बच्चों के भविष्य के लिए योजना बनाने के कई विकल्प होते हैं। उदाहरण के लिए माता–पिता स्वयं के विकलांग होने की स्थिति में अपने बच्चों की देखभाल

---

245 बाल न्याय एवं कल्याण अधिनियम, 2000, संख्या 56

246 वही, चैप्टर 1(2)(डी)

247 वही, चैप्टर तीन

248 ह्यूमन राइट्स वॉच, फ्यूचर फॉरसेकन : एब्यूजेज अगेंस्ट चिल्ड्रन अफेक्टेड बाई एचआईवी/एड्स इन इंडिया, पेज 12, जून 2004, http://hrw.org/reports/2004/ india0704/6.htm#_ftn344

के कानूनी अभिभावक नियुक्त कर सकते हैं।[249] कानूनी अभिभावक के पास बच्चों के संबंध में महत्वपूर्ण निर्णय करने का अधिकार होता है, जिनमें उनके स्वास्थ्य, शिक्षा और आवास के अधिकार भी शामिल हैं। लेकिन अभिभावक का पद त्यागने का मतलब बच्चे के संबंध में निर्णय लेने का अधिकार भी त्यागना होता है। इस अधिकार से वंचित होने से बचने के लिए कई बार माता–पिता अपने बच्चों के अतिरिक्त अभिभावक भी बन जाते हैं। अतिरिक्त अभिभावकत्व से माता–पिता को बच्चों के बारे में तब तक निर्णय लेने का अधिकार मिल जाता है जब तक बच्चे स्वयं ऐसा करने के योग्य नहीं हो जाते।[250] जब माता–पिता अपने बच्चे की देखभाल करने में अक्षम हो जाते हैं, तो अस्थायी अभिभावक को अभिभावक के अधिकारों का इस्तेमाल करने का कानूनी अधिकार मिल जाता है। संयुक्त अभिभावकत्व माता–पिता को विधिमान्य अभिभावक नियुक्त करने का अधिकार देता है, जिसके साथ वे कानूनी अभिभावकत्व साझा करते हैं।[251] जब माता–पिता की मृत्यु हो जाती है, तो संयुक्त अभिभावक को ही बच्चे की पूरी जिम्मेदारी मिल जाती है।[252] कुछ राज्य माता–पिता को भी अभिरक्षा की कार्यवाही के जरिये अपने बच्चों के भविष्य के लिए योजना बनाने का अधिकार देते हैं। कैलिफोर्निया में अभिरक्षा के अधिकार केवल माता–पिता के बीच ही हस्तांतरित हो सकते हैं; माता–पिता से इतर किसी अन्य व्यक्ति को अधिकार अभिभावकत्व की कार्यवाही के जरिये ही दिये जा सकते हैं। लेकिन न्यूयॉर्क में अभिरक्षा के अधिकारों में बच्चे की शारीरिक अभिरक्षा और उसके जीवन के संबंध में निर्णय लेने का कानूनी अधिकार शामिल होता है। अंतिम वसीयत अथवा हलफनामे के जरिये भी अभिभावक की नियुक्ति की जा सकती है। लेकिन इस प्रकार की नियुक्ति को मानने के लिए अदालत किसी भी प्रकार से बाध्य नहीं होती। ऐसा इसलिए है क्योंकि अदालत बच्चे के सर्वोत्तम हित को ध्यान में रखते हुए ही अभिभावकत्व का निर्णय लेती है।[253] माता–पिता गोद देने के विकल्प पर भी विचार कर सकते हैं। गोद दिये जाने के बाद बच्चे का अपने जन्म देने वाले माता–पिता के साथ माता–पिता और संतान का संबंध खत्म हो जाता है; ऐसे माता–पिता के पास अभिरक्षा अथवा मुलाकात के कानूनी अधिकार भी नहीं रह जाते। गोद लेने वाले माता–पिता को सभी कानूनी अधिकार और जिम्मेदारियां स्वीकार करनी होती हैं। अंत में कुछ अमरीकी राज्य अतिरिक्त दत्तक मामलों को भी मान्यता देते हैं, जिसमें गोद लेने वाले माता–पिता को जन्म देने वाले माता–पिता की मृत्यु अथवा अक्षमता की स्थिति में अभिभावकत्व के अधिकार मिल जाते हैं।

कुछ मानवाधिकार संधियां एवं संकल्प

महिलाओं के साथ सभी प्रकार के भेदभाव के उन्मूलन की 1979 की संधि (सीईडीएडब्ल्यू): अनुच्छेद–10 कहता है कि राज्यों को शिक्षा के मामले में महिलाओं के लिए भी पुरुषों के ही समान अधिकार सुनिश्चित करने हेतु सभी उपाय करने चाहिये। अनुच्छेद–12 के प्रावधानों में स्वास्थ्य सेवा के क्षेत्र में महिलाओं के साथ सभी प्रकार के भेदभाव समाप्त करने के लिए समुचित उपाय अपनाने की बात कही गयी है, ताकि परिवार नियोजन समेत सभी प्रकार की स्वास्थ्य सेवाओं की सुलभता पुरुषों के ही समान महिलाओं के लिए भी सुनिश्चित की जा सके। अनुच्छेद–16 के अनुसार राज्यों को विवाह और पारिवारिक संबंधों के संदर्भ में भी महिलाओं के साथ भेदभाव समाप्त करना होता है।

249 केली सी. रोजमुस, रिप्रेजेंटिंग फैमिलीज अफेक्टेड बाइ एचआईवी/एड्स : हाउ द प्रपोज्ड फेडरल स्टैंडबाई गार्जियनशिप एक्ट फेसिलिटेट्स फ्यूचर प्लानिंग इन-द बेस्ट इंट्रेस्ट्स ऑव द चाइल्ड ऐंड फेमिली, 6 अमेरिकन यूनिवर्सिटी जर्नल ऑव जेंडर एंड द लॉ 299, 304 (स्प्रिंग 1998)

250 वही, 312

251 सनी रोजेनफेल्ड, डेवलपमेंट्स इन कस्टडी ऑप्शंस फॉर एचआईवी पॉजिटिव पैरेंट्स, 11 बर्कले विमेंस लॉ जर्नल 194, 196 (1996)

252 वही

253 केली सी. रोजमुस, रिप्रेजेंटिंग फेमिलीज अफेक्टेड बाई एचआईवी/एड्स : हाउ द प्रपोज्ड फेडरल स्टैंडबाइ गार्जियनशिप एक्ट फेसिलिटेट्स फ्यूचर प्लानिंग इन द बेस्ट इंट्रेस्ट्स ऑव द चाइल्ड ऐंड फेमिली, 6 अमेरिकन यूनिवर्सिटी जर्नल ऑव जेंडर ऐंड द लॉ 299,303 (स्प्रिंग 1998)

मानवाधिकार, घोषणा एवं कार्य योजना पर वैश्विक सम्मेलन 1993 (वियना घोषणा): अनुच्छेद–41 अपने पूरे जीवनकाल में सर्वोच्च स्तर के शारीरिक एवं मानसिक स्वास्थ्य का आनंद लेने के महिलाओं के अधिकार को मान्यता देता है। पूरे दस्तावेज में महिलाओं के मानवाधिकारों और महिलाओं के साथ हिंसा के बारे में महत्वपूर्ण बातें कही गयी हैं।

महिलाओं के विरुद्ध हिंसा के उन्मूलन की 1993 की घोषणा : अनुच्छेद–4 राज्यों को महिलाओं के साथ हिंसा की निंदा करने को कहता है और उसके उन्मूलन की अपनी जिम्मेदारी से बचने के लिए किसी रीति–रिवाज, परंपरा अथवा धार्मिक मान्यता का सहारा नहीं लेने का निर्देश देता है।

अंतर्राष्ट्रीय जनसंख्या एवं विकास संगोष्ठी, कार्ययोजना 1994: अनुच्छेद–सी, चैप्टर 7 एड्स महामारी की चपेट में आने की महिलाओं की आशंका के परिप्रेक्ष्य में उन्हें एचआईवी से बचाने और यौन संक्रमित रोगों से निपटने की बात करता है तथा प्रजनन स्वास्थ्य सेवाओं के जरिये एचआईवी से निपटने के लिए महत्वपूर्ण सिफारिशें करता है।

महिलाओं पर चौथी विश्व संगोष्ठी (पेइचिंग), घोषणा एवं कार्य मंच 1995: रणनीतिक उद्देश्य सी–3 "यौन संक्रमित रोगों, एचआईवी/एड्स तथा यौन एवं प्रजनन स्वास्थ्य के मसलों के संदर्भ में लिंग संवेदी पहल करने की बात करता है।"

सहस्त्राब्दी घोषणा एवं विकास लक्ष्य 2000: लक्ष्य 3 राष्ट्रों से "लिंग समानता को बढ़ावा देने और महिलाओं को सशक्त बनाने" तथा लक्ष्य 6 "एचआईवी/एड्स, मलेरिया और अन्य रोगों से लड़ने" की बात कहता है।

एचआईवी/एड्स पर संयुक्त राष्ट्र महासभा का विशेष सत्र (यूएनजीएएसएस), संकल्प की घोषणा 2001: घोषणापत्र का अनुच्छेद–14 जोर देता है कि "महिलाओं और लड़कियों में एचआईवी/एड्स के संक्रमण की आशंका कम करने के लिए मूलभूत तत्वों में लैंगिक समानता और महिला सशक्तिकरण भी शामिल है।"

स्रोत : http://genderandaids.org/downloads/conference/308_filename_women_aids1.pdf

प्रमुख अंतर्राष्ट्रीय मानवाधिकार उपाय

- अंतर्राष्ट्रीय आर्थिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक अधिकार कोवेनेंट
- अंतर्राष्ट्रीय नागरिक एवं राजनीतिक अधिकार कोवेनेंट
- महिलाओं के साथ सभी प्रकार के भेदभावों के उन्मूलन पर कन्वेंशन
- बाल अधिकार पर कन्वेंशन

अन्य महत्वपूर्ण दस्तावेज

- एचआईवी/एड्स पर महासभा का संकल्प घोषणापत्र
- महिलाओं के विरुद्ध हिंसा पर महासभा का घोषणापत्र
- महिलाओं के साथ भेदभाव के उन्मूलन पर समिति, आम सिफारिश संख्या–24, 'महिला एवं स्वास्थ्य'
- आर्थिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक अधिकारों पर समिति, 'स्वास्थ्य के सर्वोच्च प्राप्य मानक का अधिकार' पर आम टिप्पणी संख्या–14
- बाल अधिकार पर समिति, आम टिप्पणी संख्या–3, 'एचआईवी/एड्स और बाल अधिकार'
- एचआईवी/एड्स और मानवाधिकारों पर अंतर्राष्ट्रीय दिशानिर्देश

संक्षिप्त न्यायिक मामले

गीता हरिहरन बनाम भारतीय रिजर्व बैंक (1999) 2 एससीसी 228

भारतीय रिजर्व बैंक ने गीता हरिहरन के मामले में वित्तीय बंधपत्र के लिए एक आवेदन पर अपने बच्चे के कानूनी अभिभावक के तौर पर हस्ताक्षर करने की अनुमति देने से मना कर दिया। बैंक ने दलील दी कि हिन्दू अल्पवय एवं अभिभावकता अधिनियम (एचएमजीए) की धारा–6 (ए) के अनुसार पिता के जीवनकाल के दौरान वही बच्चे का स्वाभाविक अभिभावक माना जाएगा। यह धारा व्यवस्था देती है कि नाबालिग का स्वाभाविक अभिभावक पिता है और उसके बाद यह स्थान माता का होगा। बैंक ने कहा कि श्रीमती हरिहरन तब तक बच्चे के कानूनी अभिभावक के तौर पर हस्ताक्षर नहीं कर सकतीं जब तक वह किसी सक्षम प्राधिकार से अभिभावकता का अधिकार देने का आदेश हासिल नहीं कर लेती है। इस पर श्रीमती हरिहरन ने इस धारा को संविधान के अनुच्छेद–14 और 15 का उल्लंघन करने वाला बताते हुए इसे हटाने की मांग को लेकर उच्चतम न्यायालय का दरवाजा खटखटाया। उनकी याचिका पर न्यायालय ने व्यवस्था दी कि हिन्दू अल्पवय एवं अभिभावकता अधिनियम के तहत माता या पिता कोई भी नाबालिग का अभिभावक हो सकता है लेकिन न्यायालय ने इस अधिनियम की धारा–6 (ए) को संविधान का उल्लंघन करने वाला मानने से इंकार कर दिया। इसके बजाय उसने इस धारा के शब्द 'बाद' की पुनर्व्याख्या करते हुए कहा कि इसका मतलब 'अनुपस्थिति में' से है। उसने 'अनुपस्थिति में' के अर्थ में किसी भी कारण से नाबालिग की देखरेख करने में पिता की गैर मौजूदगी, नाबालिग के मामले में पिता की उदासीनता या उसकी देखभाल करने में उसकी अक्षमता का उल्लेख किया। न्यायालय ने कहा कि उपरोक्त किसी भी परिस्थिति में पिता को अनुपस्थित माना जाएगा और माता को स्वाभाविक अभिभावक के तौर पर स्वीकार किया जा सकता है।

शीला बी. दास बनाम पीआर सुगाश्री, एआईआर 2006 एससी 1343

शीला दास ने अपनी पुत्री का संरक्षण उसके पिता को देने के एक पारिवारिक अदालत के फैसले के खिलाफ अपील की। उसने इस संदर्भ में कई मामलों का हवाला दिया जिनमें पिता के होने के बावजूद अदालत ने माता को बच्चे का संरक्षण प्रदान किया था। उच्चतम न्यायालय ने बच्चे के सर्वोत्तम हित को ध्यान में रखते हुए और इस संदर्भ में उसकी देखभाल करने में माता–पिता दोनों के रिश्तेदारों की क्षमताओं का आकलन करने के बाद निर्णय दिया। उसने बच्चे से बात करने और उसके झुकाव का पता लगाने के बाद पिता को संरक्षण का अधिकार प्रदान किया क्योंकि वह अनुपयुक्त अभिभावक नहीं था।

मोहतरमा उल्फत बीवी बनाम बफाती, एआईआर 1927 इलाहाबाद 581

जब तक कोई अदालत भिन्न फैसला नहीं करती मुस्लिम कानून में पिता ही बच्चे का प्राकृतिक अभिभावक माना जाता है। वह स्वतः अपनी अभिभावकता के अधिकार का इस्तेमाल करने के लिए अधिकृत है और उसे इसके लिए किसी अदालत के फैसले का मुंतजिर नहीं होना पड़ता है। मुस्लिम कानून के तहत पिता को अभिभावकता का वैध अधिकार है जबकि माता को सात वर्ष तक की उम्र के बच्चे के संरक्षण का अधिकार प्राप्त है। लेकिन यदि वह तलाक के बाद फिर शादी कर लेती है तो वह संरक्षण के अपने अधिकार को खो देती है और पिता को यह अधिकार मिल जाता है।

सुलेखा बीवी और छह अन्य बनाम रमीजा बीवी और 10 अन्य, 2000 (4) सीटीसी 454

मरहूम मोहम्मद सुल्तान मराकयार ने अपनी एक तिहाई संपत्ति की वसीयत कर दी। प्रचलित हनफी कानून के तहत वसीयत करने वाले की एक तिहाई से अधिक परिसंपत्ति की वसीयत उसी स्थिति में वैध मानी जाएगी जब वसीयत करने वाले की मौत के बाद उसके उत्तराधिकारियों की रजामंदी ले ली जाती है। इस मामले में उत्तराधिकारियों की मां ने वसीयत को अपनी स्वीकृति दी। उसने दरख्वास्त की कि चूंकि वह उत्तराधिकारियों के विधिसम्मत अभिभावक के तौर पर काम कर रही है इसलिए उसकी स्वीकृति वैध है। लेकिन मद्रास उच्च न्यायालय ने व्यवस्था दी कि मुस्लिम पर्सनल लॉ के तहत माता अपने नाबालिग बच्चों के अभिभावक के तौर पर सक्षम नहीं मानी जाती है, इसलिए वह उनकी तरफ से स्वीकृति नहीं दे सकती। उसने कहा कि पिता की मौत के बाद पिता का निवाहक (सुन्नी कानून के तहत) बच्चे का वैध अभिभावक है।

इमाम बांदी बनाम मुत्सदी, 1918 (5) आईए 73

प्रिवी काउंसिल ने कहा था कि, "यह पूरी तरह स्पष्ट है कि मुस्लिम कानून के तहत माता बच्चे के संप्रदाय के अनुसार एक निश्चित उम्र तक ही अपने नाबालिग बच्चे के संरक्षण की हकदार है, लेकिन वह स्वाभाविक अभिभावक नहीं है। सिर्फ पिता ही, या यदि उसकी मौत हो जाती है तो उसका निष्पादक (सुन्नी कानून के तहत) बच्चे का कानूनी अभिभावक है।"

शमा बेग बनाम ख्वाजा मोहिउद्दीन अहमद, एमएएनयू/डीई/0214/1971

शमा बेग ने निचली अदालतों के इस फैसले के बाद उच्च न्यायालय में अपील की कि वह अपने छह वर्ष के पुत्र का संरक्षण बच्चे के पिता को सौंप दे, क्योंकि दोबारा निकाह करने के कारण वह इसकी हकदार नहीं रही। न्यायालय ने व्यवस्था दी कि उसका सबसे ज्यादा सरोकार बच्चे का हित है। उसने कहा कि कानूनन एक महिला दोबारा निकाह कर बच्चे के संरक्षण का हक खो देती है, लेकिन इसके बावजूद न्यायालय का मुख्य सरोकार नाबालिग की भलाई से है। इसी के मुताबिक न्यायालय ने इस आधार पर शमा बेग को बच्चे का संरक्षण प्रदान कर दिया कि बच्चे को अचानक माता से अलग करना उसके हित में नहीं होगा। लेकिन साथ ही उसने कहा कि शमा बेग सात वर्ष की उम्र तक ही बच्चे के संरक्षण की हकदार होगी। इसके बाद मुस्लिम पर्सनल लॉ के तहत बच्चे का पिता उसके संरक्षण का हकदार बन जाएगा। न्यायालय ने बच्चे के सात वर्ष की उम्र का होने के बाद उसका संरक्षण देने की शमा बेग की मांग को ठुकरा दिया, क्योंकि इस उम्र के बाद पिता के संरक्षण से बच्चे के हित को कोई खतरा या विपरीत प्रभाव नहीं पड़ने वाला था।

मीर मोहम्मद बहाउद्दीन बनाम मुजी बुन्निसा बेगम ए साहिबा, एमएएनयू/टीएन/0174/1952

बच्चे का पिता मां से बच्चे का संरक्षण उसे दिलाने की दरख्वास्त लेकर मद्रास उच्च न्यायालय में पहुंचा। पिता ने पहले मां को बच्चे का संरक्षण देने पर स्वीकृति जतायी थी, लेकिन बाद में उसने कहा कि वह दोबारा निकाह करने के बाद बच्चे के संरक्षण की हकदार नहीं रह गयी है। न्यायालय ने इस पर टिप्पणी की कि अभिभावकता एवं संरक्षता कानून के तहत उसका निर्णय बच्चे के सर्वोत्तम हित से निर्देशित होता है जिसमें पक्षकारों के पर्सनल लॉ को ध्यान में रखा जाता है। उसने व्यवस्था दी कि मुस्लिम कानून के तहत दूसरा निकाह करने पर मां का बच्चे पर अभिभावकता का अधिकार खत्म हो जाता है। न्यायालय ने कहा कि पिता कानूनी रूप से अभिभावकता का हकदार है और वह उपयुक्त अभिभावक है। इसलिए उसने मां से बच्चे का संरक्षण लेकर उसे पिता को सौंप दिया।

स्टीवन एल. बनाम डॉन जे., 148 मिस्लेनियस 2 डी 779 (एनवाई फैम सीटी 1990)
इस मामले में भी बच्चे का पिता मां से संरक्षण लेकर उसे देने की दरख्वास्त लेकर न्यायालय के दरवाजे पर पहुंचा। हालांकि पहले उसने इसके लिए स्वीकृति दी थी। पिता ने अनुरोध किया कि चूंकि मां एचआईवी संक्रमित है और उसका पुरुष मित्र सप्ताहांत में उसके पास रुकता है इसलिए बच्चे के संरक्षण के आदेश में परिवर्तन किया जाए। न्यायालय ने इससे असहमति जतायी और कहा कि मां के संरक्षण में रहना बच्चे के सर्वोत्तम हित में है। उसने व्यवस्था दी कि बच्चे का संरक्षण करने वाले अभिभावक का एचआईवी से संक्रमित होना चिंता की बात है लेकिन इसी आधार पर संरक्षण देने के आदेश में बदलाव तब तक उचित नहीं है जब तक ऐसा नहीं लगता कि इस तरह की स्थिति से बच्चे को कोई खतरा हो सकता है। न्यायालय ने कहा कि एचआईवी आकस्मिक रूप से नहीं फैल सकता और मां अपनी स्थिति में अक्षम नहीं है। साथ ही उसने कहा कि मां को एड्स नहीं है।

समाज सेवा विभाग बनाम कैराहर (जॉन टी. के संदर्भ में) 4 नेब.एप.79 (नेब सीटी एप. 1995)
जॉन टी. को उसके माता–पिता के अभिभावक का अधिकार छोड़ने के बाद पालक माता–पिता के सुपुर्द कर दिया गया। पालक माता को एचआईवी संक्रमण है, यह जानने के बाद समाज सेवा विभाग ने जॉन को दूसरे पालक माता–पिता का सौंपने की योजना का अनुमोदन कर दिया। लेकिन न्यायालय ने व्यवस्था दी कि यह जॉन के सर्वोत्तम हित है कि वह अपने मौजूदा पालक माता–पिता के पास रहे। न्यायालय को पता चला कि बच्चा न सिर्फ अपने पालक माता–पिता के साथ आत्मीय हो गया है बल्कि उनके विस्तृत परिवार के साथ भी उसका आत्मीय रिश्ता बन गया है और वे उसे स्नेह देने के साथ उसकी देखभाल भी करेंगे। न्यायालय ने व्यवस्था दी कि किसी भी बच्चे को यह गारंटी नहीं मिल सकती कि बच्चे या बच्ची के माता–पिता स्वस्थ जीवन व्यतीत करेंगे। यदि जॉन को अपनी पालक माता या पिता को खोना पड़ता है तो उनका विस्तृत परिवार इस पीड़ा को सहने की ताकत देने के लिये मौजूद होगा।

जॉनसन को गोद लेने का मामला, 612 एनई 2 डी 569 (इंड सीटी एपीसी 1993)
एक बच्चे की जन्म देने वाली माता ने पालक माता–पिता के एचआईवी पॉजिटिव होने की बात जानने के बाद बच्चे को गोद देने की अपनी सहमति वापस लेने के संबंध में निचली अदालत में याचिका दाखिल की। अदालत ने उसके अनुरोध को स्वीकार कर लिया तो पालक माता–पिता ने अपील दायर कर दी। लेकिन अपीलीय अदालत ने निचली अदालत के फैसले की पुष्टि की। अदालत ने कहा कि निचली अदालत ने यह व्यवस्था देने में कोई गलती नहीं की है कि बच्चे को जन्म देने वाली माता का सहमति वापस लेना बच्चे के सर्वोत्तम हित में है क्योंकि पालक माता–पिता को आगे चलकर एड्स होने की संभावना है और इसके बाद वे बच्चे की देखभाल नहीं कर पायेंगे।

शर्मन बनाम शर्मन, 1994 डब्ल्यू एल 649148 (टेन. सीटी एप. 1994)
एक मां ने निचली अदालत में याचिका दाखिल की थी कि बच्चे के पिता को घर में आने से मना किया जाए क्योंकि वह अपने एचआईवी पॉजिटिव भाई के साथ एक मकान में रहता है, लेकिन अदालत के उसके अनुरोध को अस्वीकार करने के बाद उसने ऊपरी अदालत में अपील दाखिल की। न्यायालय ने व्यवस्था दी कि एड्स का मुद्दा होने के बावजूद विवाद मूल रूप से पिता के घर आने के अधिकार को लेकर है। इसलिए न्यायालय को बच्चे के संरक्षण और माता या पिता के घर आने के बारे में सामान्यतया विचारित स्थापित सिद्धांतों और पूर्व उदाहरणों का पालन करना चाहिए। एड्स के कारण मौजूदा नियम से हटना जरूरी नहीं है। न्यायालय ने कहा कि मां यह साबित करने में नाकाम रही है कि बच्चे को पिता से मिलने की अनुमति देने से उसे

एचआईवी होने का खतरा बढ़ सकता है। इसलिए न्यायालय ने बच्चे से पिता के मिलने पर पाबंदी न लगाने के निचली अदालत के फैसले की पुष्टि की।

मैनुएल थियोडोर डिसूजा के मामले में

दो भारतीय ईसाई बच्चे को गोद लेना चाहते थे, लेकिन भारत में गोद लेने का एकमात्र कानून हिन्दू दत्तक एवं अनुरक्षण अधिनियम, 1956 है जो भारतीय ईसाइयों पर लागू नहीं होता। इसलिए गैर हिन्दू अभिभावकता एवं संरक्षण अधिनियम, 1890 के तहत ही इस काम को कर सकते हैं। यह अधिनियम सिर्फ अभिभावक–संरक्षित संबंध की ही अनुमति देता है। लेकिन बम्बई उच्च न्यायालय ने व्यवस्था दी कि बच्चे के जीवन के मौलिक अधिकार में इच्छुक माता–पिता द्वारा गोद लिए जाने का अधिकार शामिल है। इसलिए न्यायालय ने कहा कि किसी कानून की अनुपस्थिति में अभिभावकता एवं संरक्षता अधिनियम के तहत किसी बच्चे का अभिभावक बनने वाले व्यक्ति को बच्चे को गोद लेने के लिए न्यायालय में याचिका दाखिल करने का अधिकार है।

डा. तोकुघा येपथोमी बनाम अपोलो एंटरप्राइजेज लिमिटेड एवं अन्य (1998) 8 एससीसी 296

अपोलो अस्पताल के एक कर्मचारी को एचआईवी पॉजिटिव पाये जाने के बाद डा. येपथोमी ने उसकी मंगेतर के परिवार को इसकी सूचना दे दी। इसका परिणाम यह हुआ कि उसकी मंगनी टूट गयी। इस कर्मचारी ने गोपनीयता भंग करने और विवाह के अपने अधिकार में हस्तक्षेप करने के कारण हुए नुकसान की क्षतिपूर्ति के लिए डॉ. येपथोमी पर मुकदमा कर दिया। लेकिन उच्चतम न्यायालय ने उसके दावे को यह कहते हुए खारिज कर दिया कि यह खुलासा गोपनीयता के नियम का उल्लंघन या निजता के अधिकार का उल्लंघन नहीं है। न्यायालय ने व्यवस्था दी की जब तक किसी व्यक्ति को एचआईवी जैसा कोई संक्रामक यौन रोग है तब तक उस पुरुष या महिला के विवाह का अधिकार स्थगित रहता है।

श्री एक्स बनाम डॉ. जेड (2003) एआईआर एससी 664

श्रीमान एक्स ने उच्चतम न्यायालय में इस सवाल को लेकर याचिका दाखिल की कि क्या एचआईवी/एड्स पीड़ित किसी व्यक्ति के लिए किसी ऐसे व्यक्ति से विवाह करना विधि सम्मत है जो इससे प्रभावित नहीं है और जिसे इस बारे में बता दिया गया हो। न्यायालय ने इस मामले में निर्णय देने से यह कहते हुए इंकार कर दिया कि चूंकि उसने पिछले मामले में यह पाया था कि श्रीमान एक्स का एचआईवी के बारे में खुलासा गैर कानूनी नहीं है इसलिए उस मामले को निपटाते हुए एचआईवी पॉजिटिव व्यक्ति के विवाह के अधिकार पर फैसला नहीं देना चाहिए था। न्यायालय ने कहा कि किसी व्यक्ति के वैवाहिक अधिकार के बारे में टिप्पणियां अनावश्यक और अप्रासंगिक हैं। उसने ये व्यवस्थाएं देते हुए याचिका खारिज कर दी।

टीईपी बनाम लेविट, 840 एफ सप्लीमेंट. 110 (डीसीटी उटाह 1993)

उटाह के गर्वनर और राज्य के एटॉर्नी जनरल ने जिला अदालत में उटाह के एक कानून की वैधता के बारे में दरख्वास्त की, जिसमें एड्सग्रस्त व्यक्तियों द्वारा विवाह करने को निषिद्ध और अमान्य करार दिया गया है। अदालत ने व्यवस्था दी कि यह कानून अमरीकियों के अशक्तता अधिनियम और पुनर्वास अधिनियम का उल्लंघन करता है। उसने राज्य को एचआईवी/एड्स पीड़ित व्यक्तियों के खिलाफ इस कानून को लागू करने से मना कर दिया।

नरसिम्हा मूर्ति बनाम श्रीमती सुशीला बाई और अन्य, (1996) 3 एससीसी 644

नरसोजी राव की बिना वसीयत किए मौत होने जाने के बाद उनके एक पुत्र और तीन पुत्रियों को उनका रिहायशी मकान मिला लेकिन पुत्रियां उस मकान का बंटवारा चाहती थीं। इस पर पुत्र ने उच्चतम न्यायालय

में मुकदमा दायर किया जिसमें दलील दी गयी कि हिन्दू उत्तराधिकार अधिनियम की धारा–23 के तहत उसकी सहमति के बिना बंटवारा गैरकानूनी है। न्यायालय ने पुत्र के पक्ष में फैसला देते हुए व्यवस्था दी कि हिन्दू उत्तराधिकार अधिनियम की धारा–23 के तहत यदि कोई हिन्दू बिना वसीयत किए मर जाता है और रिहायशी मकान छोड़ जाता है जो महिला और पुरुष उत्तराधिकारियों को मिलता है, उस स्थिति में महिला उत्तराधिकारी का बंटवारे का दावा पुरुष उत्तराधिकारी के अधिकार से सीमित हो जाता है। महिला उत्तराधिकारी उस समय तक बंटवारे के लिए नहीं कह सकती जब तक पुरुष उत्तराधिकारी रिहायशी मकान के बंटवारे का फैसला नहीं करता है। इसके अलावा जहां महिला उत्तराधिकारी पुत्री है, वह उसी स्थिति में उस मकान में रह सकती है जब तक उसकी शादी नहीं हो जाती है या उसे पति छोड़ नहीं देता या वह अलग नहीं हो जाती अथवा वह विधवा हो जाती है।

मधु किश्वर और अन्य बनाम बिहार राज्य और अन्य, (1996) 5 एससीसी 125

याचिकाकर्ताओं ने उच्चतम न्यायालय में दलील दी कि छोटा नागपुर काश्तकारी अधिनियम 1908 (अधिनियम) का सातवां, आठवां और छिहत्तरवां प्रावधान भारतीय संविधान के अनुच्छेद–14, 15 और 21 का उल्लंघन करता है। याचिकाकर्ताओं ने यह आरोप भी लगाया कि बिहार राज्य और अन्य राज्यों में प्रथागत कानून जनजातीय महिलाओं को उनके पिता, पति और माता की जमीन का उत्तराधिकार हासिल करने से रोकता है, जबकि जनजातीय पुरुष सदस्य को उत्तराधिकार का ऐसा अधिकार देना भेदभावपूर्ण है। उच्चतम न्यायालय ने हालांकि अधिनियम के उत्तराधिकार प्रावधानों को संविधान का उल्लंघन करने वाला घोषित नहीं किया लेकिन व्यवस्था दी कि अधिनियम की धारा–7 और 8 को इतने लंबे समय तक स्थगित रखना पड़ा क्योंकि जनजातीय महिला सदस्य की जीविका उसके पुरुष काश्तकार पर निर्भर थी। आखिर में न्यायालय ने यह मानने से इंकार कर दिया कि बिना वसीयत के उत्तराधिकार से संबंधित परंपरागत कानून असंवैधानिक है। उसने इस निष्कर्ष पर पहुंचते हुए पर्सनल लॉ के सिद्धांतों को जनजातीय लोगों पर लागू करने से मना कर दिया। न्यायालय का कहना था कि पर्सनल लॉ जनजातीय लोगों पर लागू नहीं किया जा सकता क्योंकि वे परंपराओं से संचालित होते हैं। लेकिन उसने सिफारिश की कि केंद्र सरकार को विचार करना चाहिए कि क्या बिहार राज्य में अनुसूचित जनजाति को हिन्दू उत्तराधिकार अधिनियम और भारतीय उत्तराधिकार अधिनियम के तहत दी गयी छूट वापस लेना उचित और जरूरी है।

मेरी रॉय और अन्य बनाम केरल राज्य और अन्य, (1986) 2 एससीसी 209

श्रीमती राय ने उच्चतम न्यायालय में त्रावणकोर ईसाई अधिनियम की संवैधानिकता को चुनौती दी जिसके तहत पुत्रियों को पुत्रों के हिस्से का सिर्फ एक चौथाई हिस्सा ही मिलता है। इसमें से भी कुछ हिस्सा ईसाई गिरजाघर में जाता है। न्यायालय ने श्रीमती राय के पक्ष में फैसला देते हुए कहा कि त्रावणकोर ईसाई अधिनियम द्वारा महिलाओं के उत्तराधिकार पर लगायी गयी पाबंदियों को भारतीय उत्तराधिकार अधिनियम ने हटा दिया है। भारतीय उत्तराधिकार अधिनियम पुत्रों और पुत्रियों को बराबर हिस्सा देता है।

मार्था मविया बनाम एलेक्स मविया, एचपीए/1/1977

मार्था मविया ने जाम्बिया के उच्च न्यायालय में तलाक की प्रक्रिया के तहत अपने पति एलेक्स मविया से अपने बाकी जीवन के लिए आधी वैवाहिक संपत्ति और आर्थिक सहायता की मांग की। न्यायालय ने कहा कि लोजी प्रथा के अंतर्गत, जिसके तहत दोनों दाम्पत्य सूत्र में बंधे थे, पति तलाक के बाद वैवाहिक संपत्ति का बंटवारा करने के लिए बाध्य नहीं है। इसलिए न्यायालय उसे ऐसा करने के लिए बाध्य नहीं कर सकता।

न्यायालय ने यह भी कहा कि लोजी प्रथा में तलाक के बाद पति के लिए पत्नी का भरण–पोषण करना और सहायता देना जरूरी नहीं है।

रोजमैरी चिबवे बनाम आस्टिन चिबवे, एससीजेड/38/2000

श्रीमती चिबवे ने जाम्बिया के उच्चतम न्यायालय में अपील की कि निचली अदालतों ने 'उशी परंपरा' के कानून के तहत विवाह भंग हो जाने के बाद उसे पर्याप्त संपत्ति भत्ते नहीं दिए। न्यायालय ने व्यवस्था दी कि उशी प्रथागत कानून के तहत पति और पत्नी वैवाहिक संपत्ति में हिस्सेदारी कर सकते हैं। चूंकि विवाह परंपरागत कानून के तहत हुआ था इसलिए न्यायालय ने इंग्लिश कानून के नियमों को लागू करते हुए व्यवस्था दी कि जहां तक दंपत्ति ने संपत्ति जोड़ने में योगदान किया है, वे वित्तीय प्रावधानों के अधिकारी हैं। प्रत्येक पक्ष को आवंटित संपत्ति का अनुपात न्यायालय के विवेक पर छोड़ दिया गया है।

बी और सी के विवाह के मामले में, (1989) एफएलसी 92-043

ऑस्ट्रेलिया की एक अदालत ने पिता को तीन साल के बच्चे से मिलने से मना कर दिया। उसने दलील दी कि एड्सग्रस्त व्यक्ति से बच्चे के मिलने पर उसका संभावित सामाजिक बहिष्कार हो सकता है, जो बच्चे के हित में नहीं है।

9

बच्चे एवं एचआईवी

यह अब प्रमाणित और स्थापित तथ्य है कि एचआईवी उन्हीं स्थानों में फलता–फूलता है, जहां गरीबी, भेद–भाव, अज्ञानता, सूचनाओं और स्वास्थ्य सुविधाओं का अभाव, शोषण, हिंसा और महामारी के फैलने के खतरनाक कारक मौजूद होते हैं। सामाजिक–आर्थिक परिस्थितियां वर्तमान स्थितियों को बढ़ाती हैं और एचआईवी एवं एड्स की महामारी ढांचे को और कमजोर करती हैं जिससे समुदाय, परिवार एवं व्यक्ति उन संसाधनों एवं बुनियादी सामाजिक सुविधाओं से वंचित हो जाते हैं, जो महामारी की सफल रोकथाम एवं उपचार के लिये जरूरी होते हैं। एचआईवी एड्स का प्रभाव व्यक्ति विशेष से परे पूरे समाज, समुदाय और मित्रों पर भी पड़ता है। इसके प्रभाव में एचआईवी/एड्स से संक्रमित लाखों–करोड़ो लागों का जीवन समाहित है। इनमें से कुछ इस महामारी के साथ जी रहे हैं और कुछ मौत के ग्रास बन चुके हैं। इससे सबसे ज्यादा बच्चे प्रभावित होते हैं– बेसहारा, नाजुक एवं शोक संतप्त।[1]

एचआईवी/एड्स एक समय में केवल उप– सहारा अफ्रीका तक ही सीमित था, परन्तु अब इसकी कोई सीमायें नहीं है। यह विश्व के हर कोने में फैल चुका है और इसने उम्र, लिंग, आर्थिक स्थिति या भौगोलिक स्थित या यौन रुचियों से परे हर इंसान को प्रभावित किया है। एचआईवी/एड्स दुनिया में मौत का चौथा सबसे बड़ा कारण है। विभिन्न क्षेत्रों में इस महामारी का प्रकोप हालांकि अलग–अलग है लेकिन इसकी एक सामान्य पहचान है : एचआईवी/एड्स तेजी से युवा और अति संवेदनशील वर्ग, खासकर युवतियों को अपनी चपेट में लेता जा रहा है।[2] पहले यह समझा जाता था कि बच्चे इससे कम प्रभावित हैं, किंतु अब लोगों को यह अहसास हुआ है कि बच्चे इससे सबसे ज्यादा प्रभावित होने वाले वर्गों में से एक हैं।

एचआईवी प्रतिदिन, 15 वर्ष से कम उम्र के करीब 1800 बच्चों को संक्रमित करती है। वर्ष 2003 तक 18 वर्ष से कम उम्र के डेढ़ करोड़ बच्चे इस बीमारी के कारण अपने मां या पिता या दोनों को खो चुके थे।[3] वर्ष 2004 में एचआईवी/एड्स से संक्रमित लोगों की संख्या तीन करोड़ 94 लाख थी जिनमें से 22 लाख 15 से कम उम्र के बच्चे थे।[4] वर्ष 2005 में एचआईवी/एड्स के कारण मौत का ग्रास बनने वाले 28 लाख लोगों में से पांच लाख 15 साल से कम उम्र के बच्चे थे। वर्ष 2005 के अंत तक, अनुमानतः 23 लाख बच्चे विश्व भर में एचआईवी/एड्स से संक्रमित हो चुके थे।[5]

---

1 मिरियम लायंस, "द इम्पैक्ट ऑव एचआईवी एंड एड्स ऑन चिल्ड्रन, फैमिलीज एंड कम्युनिटीज : रिस्क एंड रियेलिटीज ऑव चाईल्डहुड ड्यूरिंग द एचआईवी एपिडेमिक" यूएनडीपी एचआईवी एंड डेवलपमेंट प्रोग्राम," प्रपत्र संख्या 30 http://www.undp.org/hiv/publications/issues/english/issue30e.html

2 यूनिसेफ, "एचआईवी/एड्स एंड चिल्ड्रन," http://www.unicef.org/aids

3 यूनिसेफ, द स्टेट ऑव द वर्ल्डस चिल्ड्रन 2006: एक्सक्लुडेड एवं इनविजिबल, संपादक – मैसिया, पैट्रिसिया, न्यूयॉर्क, एन वाई, पृष्ठ 16

4 शौकत, डॉ. एम. नेशनल कंसल्टेशन ऑन चिल्ड्रन अफेक्टेड ऑर वल्नरेबल टु एचआईवी/एड्सः करेंट स्टेटस ऑव एचआईवी/एड्स एपिडेमिक इन इंडिया, पृष्ठ 3

5 एवर्ट, "चिल्ड्रन, एचआईवी एंड एड्स", 29/6/2006; http://www.avert.org/children.htm

केवल 2005 में, 3 लाख 80 हजार बच्चों की एड्स से मौत हो गई और 5 लाख 40 हजार बच्चे एचआईवी/एड्स के नये संक्रमणों के शिकार हुये।[6] नए संक्रमणों से ग्रस्त होने वालों में से एक बड़ा भाग 15 से 24 वर्ष के बीच के युवकों का है[7] जिनकी संख्या एचआईवी के नये संक्रमण से प्रभावित लोगों की करीब 50 प्रतिशत है।[8] एचआईवी/एड्स के नए रोगियों में 10 प्रतिशत रोगी 15 वर्ष से कम उम्र के बच्चे हैं।[9] विश्व भर में एड्स से संक्रमित होने वाले हर सात लोगों में एक व्यक्ति तथा एड्स से मरने वाले हर छह लोगों में एक रोगी 15 वर्ष से कम उम्र का होता है। हर 15 सेकेंड में, 15–24 वर्ष का एक युवा एचआईवी से संक्रमित होता है।[10] बीस साल से अधिक समय के उपरांत भी एड्स से ग्रस्त अथवा एड्स के कारण अनाथ हो चुके बच्चों में से 10 प्रतिशत से भी कम को सामाजिक सहायता या सेवाएं मिलती है।[11]

एशिया प्रशांत महाद्वीप में इस महामारी को केवल इसकी प्रारंभिक अवस्था में माना जाता है। वर्ष 2004 में दक्षिणी और दक्षिण–पूर्व एशिया में एचआईवी के नये संक्रमणों की संख्या 8 लाख थी। इस कारण दक्षिण और दक्षिण–पूर्व एशिया में एचआईवी से प्रभावित लोगों की कुल संख्या 71 लाख हो गई। युवा आबादी में इसका विस्तार तकरीबन 0.6 प्रतिशत है जो कि कुछ उप–सहारा देशों से कम है। (यूएन एड्स 2004) वर्ष 2003[12] में एशिया में एचआईवी/एड्स के कारण 8 करोड़ 76 लाख बच्चे अनाथ हुए।[13] एशिया में औसतन 72 लाख लोग एचआईवी संक्रमित हैं। उप–सहारा अफ्रीका के बाहर दक्षिणी और पूर्वी एशिया में एड्स से प्रभावित होने वाले तथा इसके कारण मौत का ग्रास बनने वाले लोगों में 15 वर्ष से कम उम्र के बच्चों का भाग सबसे बड़ा है।[14]

सामाजिक और आर्थिक संदर्भ : एचआईवी संक्रमण तथा एड्स के प्रति संवेदनशीलता

जब बच्चे एड्स तथा एचआईवी से प्रभावित होते हैं तो उनका बचपन बाधित होता है और सुखी तथा स्वस्थ जीवन के विकल्प सीमित हो जाते हैं। बालकों एवं बालिकाओं की सामाजिक, पारिवारिक तथा सामुदायिक स्थितियां भी इस बात की निर्णायक होती हैं कि बच्चे एचआईवी/एड्स के प्रति कितना अधिक संवेदनशील हैं। अगर एचआईवी विषाणुओं तथा एचआईवी/एड्स संक्रमण की रोकथाम तथा उसके विरोध के लिये समुचित रूप से कारगर वातावरण का विकास करना है तब बचपन के अधिकार तथा हकीकतों पर पर्याप्त ध्यान देना आवश्यक है।[15]

एचआईवी और एड्स उन अन्य कटु सच्चाइयों को बढ़ाते हैं जिन्हें दुनिया भर के बच्चे रोज झेलते हैं और इनके साथ जीने को विवश हैं। द हंगर प्रोजेक्ट की रिपोर्ट के अनुसार हर साल भूख तथा अभाव के कारण 80 लाख लोगों की मौत होती है। अंतर्राष्ट्रीय श्रम संगठन (आईएलओ) के अनुसार, 5 से 14 वर्ष की उम्र के 12 करोड़ से ज्यादा बच्चे उन स्थितियों में काम करते हैं जो उनके स्वस्थ विकास एवं जीवन के

6 यूनिसेफ, एचआईवी/एड्स एंड चिल्ड्रन; http://www.unicef.org/aids

7 कमिटि ऑन द राइट्स ऑव द चाइल्ड, जनरल कमेंट संख्या 3, (2003) एचआईवी/एड्स एंड द राइट्स ऑव द चाइल्ड पृष्ठ 1

8 यूएनएड्स; "फोकसः एचआईवी एंड यंग पीपुलः द थ्रेट फॉर टुडेज यूथ," 2004 रिपोर्ट ऑन द ग्लोबल एड्स एपिडेमिक, 2004, http://www.unaids.org/bangkok2004/GAR2004_html/GAR2004_07_en.htm P935_193845

9 लायंस मिरियम, यूएनडीपी, द इम्पैक्ट ऑफ एचआईवी एंड एड्स ऑन चिल्ड्रन, फैमिली एंड कम्युनिटीजः रिस्क एंड रियलिटीज ऑफ चाइल्डहुड ड्यूरिंग द एचआईवी एपिडेमिक http://www.undp.org/hiv/publications/issues/english/issue30e.html

10 यूनिसेफ एवं यूएनएड्स, ए कॉल टु एक्शनः चिल्ड्रन, द मिसिंग फेस ऑफ एड्स, पृष्ठ 4

11 यूनिसेफ एवं यूएनएड्स, ए कॉल टु एक्शनः चिल्ड्रन, द मिसिंग फेस ऑफ एड्स, पृष्ठ 2

12 यूएन एड्स, यूनिसेफ एवं यूएस एड्स, नेशनल कंसल्टेशन ऑन चिल्ड्रन अफेक्टेड ऑर वलनरेबल टु एचआईवी/एड्सः चिल्ड्रन ऑन द ब्रिंक 2004, पृष्ठ 3

13 यूनिसेफ, "एचआईवी/एड्स एंड चिल्ड्रन", http://www.unicef.org/aids

14 यूनिसेफ, एंड यूएनएड्स, ए कॉल टु एक्शन, चिल्ड्रन, द मिसिंग फेस ऑव एड्स, पृ. 4

15 http://www.undp.org/hiv/publications/issues/english/issue30e.html

लिये खतरनाक हैं। "बच्चों पर सशस्त्र युद्ध के प्रभाव" पर यूनाइटेड नेशंस एक्सपर्ट रिपोर्ट[16] के अनुसार युद्ध से विस्थापित होने वाले करीब छह करोड़ लोगों में से आधे से ज्यादा परिवार से बिछुड़े हुए बच्चे होते हैं। इनमें से बहुतेरे बाल सैनिक बना लिये जाते हैं और कुछ की तस्करी की जाती है, कुछ को देह बाजार में बेच दिया जाता है और कुछ का घर–जैसे तथाकथित "सुरक्षित एवं संरक्षित" वातावरण में शारीरिक, यौन तथा मानसिक शोषण किया जाता है।

गरीबी तथा विकास के साधनों का अभाव महामारी को बढ़ाने में आग में घी का काम करते हैं। गरीबी लोगों को स्वास्थ्य सुविधाओं, स्कूल, सूचना और शिक्षा से वंचित करती है और गरीबी से ग्रस्त परिवार के लोग अक्सर बच्चों को काम करने के लिए दूर–दराज के क्षेत्रों में भेजने के लिए बाध्य हो जाते हैं, जहां ये बच्चे या तो देह व्यापार के शिकार हो जाते हैं या किसी तरह की 'दासता' के लिये बाध्य कर दिए जाते है।[17] एक बार जब किसी गरीब परिवार में एचआईवी का आविर्भाव हो जाता है तो इस महामारी से मुकाबला करने की उनकी सीमित क्षमता के कारण इसका प्रभाव बड़ा गंभीर होता है – मृत्यु दर बहुत अधिक होती है तथा परिवार की गरीबी और बढ़ती है क्योंकि इस महामारी से प्रभावित या संक्रमित लोग काम करने योग्य नहीं रह जाते हैं और संबंधित समुदाय भी अपने उन सक्रिय सदस्यों को खो देता है जो अर्थव्यवस्था की मांग एवं आपूर्ति में अपना योगदान दे सकते थे।[18]

एचआईवी/एड्स के कारण अक्सर बच्चे तथा किशोर अपनी पढ़ाई छोड़ कर एचआईवी संक्रमित अपने मां–बाप की देखभाल के लिए बाध्य हो जाते हैं। देखभाल एवं जिम्मेदारियां उठाने का बोझ अभिभावकों के बजाय बच्चों पर आ जाता है।[19] बड़ों की भूमिका का निर्वाह करने के कारण बेटे या बेटी का बचपन कहीं खो जाता है।[20] परिवार की बचत जब मरीज बन चुके माता–पिता या अभिभावक की देखभाल पर खर्च होने लगती है तो बच्चों की बुनियादी जरुरतों को पूरा करने के लिए बहुत कम पैसे बचते हैं। इस कारण परिवार की आर्थिक स्थिति भी प्रभावित होती है।[21] एचआईवी/एड्स पीड़ित माता–पिता या अभिभावक की मृत्यु होने पर पारिवारिक संसाधन पर दबाव बढ़ता है जिससे बच्चे एवं किशोर अधिक गरीबी की चंगुल में फंस जाते हैं।[22] अनाथ बच्चों एवं युवाओं को खुद अपने तथा अपने भाई–बहनों के भरण–पोषण के लिए काम तलाशना पड़ता है।[23] अनेक बच्चे पढ़ाई छोड़ देते हैं और अपने स्वास्थ्य को खतरे में डालकर घर को चलाने के लिए[24] काम की तलाश करते हैं।[25] इससे एचआईवी के संक्रमण का जोखिम और बढ़ जाता है, क्योंकि उन्हें स्कूल में बतायी जाने वाली एचआईवी/एड्स से संबंधित जरूरी सूचना भी नहीं मिल पाती है।[26]

---

16 ग्रॉका मशेल, "प्रोमोशन एंड प्रोटेक्शन ऑव द राइट्स आफ चिल्ड्रन – इम्पैक्ट ऑव आर्म्ड कॉनफ्लिक्ट ऑन चिल्ड्रन, gopher://gopher.un.org /00/ga/docs/51/plenary/A51-306.EN

17 http://www.unicef.org/protection/index_exploitation.html
www.ilo.org/public/english/standards/ipec/publ/childtraf/combat.pdf

18 http://www.undp.org/hiv/publications/issues/english/issue30e.html

19 यूनिसेफ, "द स्टेट ऑव वर्ल्ड्स चिल्ड्रन 2005, चाइल्डहुड अंडर थ्रेट, न्यूयॉर्क, पृष्ठ 71

20 यूनिसेफ; द स्टेट ऑव वर्ल्ड चिल्ड्रन 2006 , एक्सक्लूडेड एंड इनविजिबल, संपादन – मैसिया पैट्रिसिया, न्यूयार्क, एनवाई, पृष्ठ 43

21 यूनिसेफ एंड यूएन एड्स, नेशनल कंसल्टेशन ऑन चिल्ड्रन अफेक्टेड और वलनरेबल टु एचआईवी/एड्स : द फ्रेमवर्क फॉर द प्रोटेक्शन, केयर एंड सपोर्ट ऑव ऑर्फन एंड वल्नरेबल चिल्ड्रन इन ए वर्ल्ड विद एचआईवी/एड्स, पृष्ठ 9

22 यूनिसेफ, "एचआईवी/एड्स एंड चिल्ड्रन," http://www.unicef.org/aids
* इस व्याख्या के उद्देश्य से, अनाथ की परिभाषा 18 वर्ष से कम उम्र के उस बच्चे के रूप में की जाती है जिसने अपने माता – पिता में से किसी एक को या दोनों को खो दिया है।

23 यूएनएड्स, यूनिसेफ एंड यूएसएड्स, नेशनल कंसल्टेशन ऑन चिल्ड्रन अफेक्टेड और वलनरेबल टु एचआईवी/एड्स, चिल्ड्रन ऑन द ब्रिंक, 2004, पृष्ठ 18

24 लायंस मिरियम, यूएनडीपी, द इम्पैक्ट ऑव एचआईवी एंड एड्स ऑन चिल्ड्रन, फैमिलीज एंड कम्युनिटीजः रिस्क एंड रियेलिटीज ऑव चाइल्डहुड ड्यूरिंग द एचआईवी एपिडेमिक http://www.undp.org/hiv/publications/issues/english/issue30e.html

25 यूनिसेफ, "एचआईवी/एड्स एंड चिल्ड्रन," http://www.unicef.org/aids

26 यूनिसेफ, "द स्टेट ऑव द वर्ल्ड चिल्ड्रन," 2005, चाइल्डहुड अंडर थ्रेट न्यूयॉर्क, एन वाई; पृष्ठ 72

घर चलाने के बोझ एवं दबाव को झेलने के साथ–साथ ये बच्चे और युवा कई मानसिक परेशानियों का भी सामना करते हैं। माता–पिता या अभिभावक की बीमारी या मृत्यु के कारण वे भयानक मानसिक संत्रास में घिर जाते हैं और उनमें भाग्यवादी सोच बढ़ती है।[27] छह वर्ष से कम उम्र के बच्चे मृत्यु को नहीं समझते और उन्हें इस बात की उम्मीद होती है कि उनके मृत माता–पिता कभी भी वापस आ जायेंगे। मध्य बाल्यावस्था में अनाथ होने वाले बच्चे हालांकि मृत्यु के अर्थ को समझते हैं और इस कारण वे दोबारा परित्यक्त होने तथा इसी तरह की क्षति को दोबारा सहने की आशंका एवं भय से ग्रस्त रहते हैं। वे व्याकुल हो सकते हैं। किशोर भी मृत्यु की प्रकृति को समझते हैं, किंतु वे अपनी चिंता या आशंकाओं को व्यक्त नहीं करते पर वे अपने माता–पिता की मृत्यु को लेकर विक्षोभ या विद्रोह जाहिर कर सकते हैं। ऊपर से देखने पर हालांकि ऐसा प्रतीत होता है कि किशोर स्थितियों का मुकाबला कर रहे हैं, परंतु वे निराशा, उदासी और आशंकाओं से घिरे रहते हैं। ये ऐसे बच्चों तथा किशोरों द्वारा झेली जाने वाली मानसिक परेशानियों में से कुछ हैं।[28]

अगर बच्चे अपने माता–पिता को खो दें तो उन्हें देखभाल करने वाले व्यक्ति की जरूरत होती है चाहे वे चाचा–चाची या दादा–दादी हों, क्योंकि उनकी देखभाल करने वाले वयस्क उन्हें या तो अपने घर में शरण दे सकते हैं या उन्हें अपने परिवार में शामिल कर सकते हैं। जब संक्रमण की दर बहुत ज्यादा हो या जब कठोर सामाजिक व आर्थिक परिस्थितियां हों तो वयस्क लोग ऐसे बच्चों की जिम्मेदारी लेने में असमर्थ या अनिच्छुक होते हैं। इस महामारी का सामना करने के लिये बाहर से मदद लेने के बजाय इस सच्चाई को अपने घर के भीतर ही छिपाये रहने के लिये अज्ञानता, सामाजिक सोच, भय और भेदभाव महत्वपूर्ण कारक होते हैं।[29] एचआईवी संक्रमित बच्चे अक्सर परिवार, समुदाय तथा समाज से परित्यक्त हो सकते हैं।[30] संक्रमित बच्चे और अनाथ को अपने ही परिवार से सहायता नहीं मिलती और इस कारण वे पूरी तरह सरकार पर निर्भर हो जाते हैं, लेकिन दुर्भाग्य से सरकारी संस्थाओं में भी ऐसे बच्चों के लिये पर्याप्त जगह नहीं होती। परिवार के लोग भी आर्थिक कारणों से एचआईवी संक्रमित बच्चों का बोझ उठाने में सक्षम नहीं होते हैं और अपने बच्चों को अपने से दूर कर देते हैं।[31]

एचआईवी/एड्स की मार झेलने वाले परिवारों को जब मदद की जरूरत होती है, तब उन्हें तिरस्कार एवं बदनामी का सामना करना पड़ता है, जो अपने–आप में त्रासदीपूर्ण होता है। एचआईवी/एड्स से संक्रमित बच्चे दुःख और पीड़ा का सामना करते हुए अपने माता–पिता व किसी अन्य प्रियजन को मौत का ग्रास बनते हुये और अपने परिवार को दाने–दाने को मोहताज होते हुये देखते हैं।[32]

जब एचआईवी/एड्स संक्रमित बच्चे बेसहारा और अकेले छोड़ दिये जाते हैं, जबकि उनकी जिंदगी एचआईवी/एड्स के कारण पहले से ही समस्याग्रस्त एवं कष्टप्रद बन चुकी होती है, तो उनके नये खतरों के शिकार होने की आशंका और बढ़ जाती है। जिन परिवारों के वयस्क रोगग्रस्त हो जाते हैं उन परिवारों में बच्चों को बड़ों की जिम्मेदारियां निभानी पड़ती हैं और काम करके परिवार के लिये आमदनी का जरिया बनना पड़ता है। बच्चे, विशेषकर लड़कियां, पढ़ाई छोड़ कर घर का काम करती हैं, बीमार माता–पिता की देखभाल

---

27 यूनिसेफ एंड यूएन एड्स, नेशनल कंसल्टेशन ऑन चिल्ड्रन अफेक्टेड और वल्नरेबल टु एचआईवी/एड्स : द फ्रेमवर्क फॉर द प्रोटेक्शन, केयर एंड सपोर्ट ऑव आर्फन एंड वल्नरेबल चिल्ड्रन इन ए वर्ल्ड विद एचआईवी एंड एड्स, पृष्ठ 9

28 यूएन एड्स, यूनिसेफ, यू एस एड्स, नेशनल कंसल्टेशन ऑन चिल्ड्रन अफेक्टेड और वल्नरेबल टु एचआईवी/एड्स, चिल्ड्रन ऑन द ब्रिंक, 2004, पृष्ठ 15–18

29 देखें www.popcouncil.org/hivaids/stigma.html
http://psychology.ucdavis.edu/rainbow/html/aids.html

30 कमेटी ऑन द राइट्स ऑव द चाइल्ड, जनरल कमेंट सं. 3 (2003): एचआईवी एड्स एंड राइट्स ऑव द चाइल्ड, पृष्ठ 3

31 एच आर डब्ल्यू, "फ्यूचर फॉरसेकेनः अब्यूज अगेंस्ट चिल्ड्रन अफेक्टेड बाइ एचआईवी/एड्स इन इंडिया," 7/2004, http://www.hrw.org/reports/2004/india0704

32 http://www.undp.org/hiv/publications/issues/english/issue30e.html

करती हैं और खाना बनाने में मदद करती है। एचआईवी से प्रभावित लोग जिस भेदभाव एवं प्रताड़ना का सामना करते हैं, उनके बच्चों को भी वही सब सहना पड़ता है जिससे उनका जीवन संघर्ष और भी कठिन हो जाता है।[33] बहुत से परिवार में तो निर्णय लेने की जिम्मेदारी भी इन बच्चों के कंधों पर आ जाती है, जो निर्णय बड़ों को करना होता है, उसे ये बच्चे करते हैं, रुग्ण मां–बाप और भाई–बहनों की देखभाल करते हैं और परिवार चलाते हैं।[34]

घर–परिवार की देखभाल की जिम्मेदारी संभालने वाले प्रभावित बच्चे के आसपास का वातावरण भी उनके लिये खतरा बढ़ाता है। परिवार–विहीन बड़े बच्चों के पास अपनी बुनियादी जरूरतों को समझने के लिए पर्याप्त अनुभव नहीं होते हैं। उस संसार में जहां लाखों बच्चे भूख, अमानवीय व्यवहार, शोषण, उपेक्षा और दुर्व्यवहार के शिकार हों वहां उनके माता–पिता एवं अभिभावकों की मौत का लाभ उठाकर इन बच्चों का दुरुपयोग किये जाने की आशंका भी बहुत अधिक होती है। एचआईवी/एड्स से पीड़ित माता–पिता के बच्चे चाहे वे एचआईवी संक्रमित हो या नहीं, अपने माता–पिता की मौत के कारण बुरी तरह प्रभावित होते हैं। अनाथ हो चुके असंक्रमित बच्चे एचआईवी संक्रमण के प्रति ज्यादा संवेदनशील होते हैं, क्योंकि मानसिक त्रासदी तथा आर्थिक परेशानियों के कारण वे जोखिम भरे काम करने को मजबूर होते हैं और मादक द्रव्यों का सेवन करने लगते हैं।[35] ये बच्चे और किशोर यौन तथा आर्थिक शोषण के शिकार होते हैं और जोखिम भरे कार्य करने या यौन शोषण के बदले उन्हें पैसे[36] सामान या सुरक्षा मिलती है।[37] अनाथ होने वाले बच्चे और किशोरों के लिये बलपूर्वक अपहरण या तस्करी किये जाने का बहुत अधिक खतरा होता है। कई बच्चे पैसों के लिये अपना शोषण या अपनी तस्करी होने देते हैं। युवा लड़के या लड़कियां सड़कों की कठिन जिंदगी की तुलना में शोषण से भरपूर दुर्व्यवहारपूर्ण स्थितियों को चुनते हैं और विकल्पों के अभाव में उनके लिये संक्रमण तथा खतरों में घिरने की आशंका कई गुना बढ़ जाती है।[38] दक्षिण एशिया में बच्चों को वेश्यावृति, कालीन और वस्त्र उद्योगों और निर्माण परियोजनाओं तथा भिक्षावृत्ति में धकेल दिया जाता है।[39]

आमतौर पर एचआईवी/एड्स से ग्रस्त माता–पिता के साथ रह रहे बच्चे को भी संक्रमित मान लिया जाता है तथा उन्हें सूचना, शिक्षा, स्वास्थ्य सेवायें और सामाजिक देखभाल जैसी सामुदायिक सेवाओं से वंचित कर दिया जाता है।[40] तिरस्कार एवं भेदभाव के बहुत अधिक होने के कारण एचआईवी/एड्स संक्रमित माताओं को उनके बच्चों से अलग कर दिया जाता है और रिश्तेदार उनके बेसहारा बच्चों को अपनाने से इंकार कर देते हैं भले ही वे बच्चे एचआईवी संक्रमण से मुक्त हों।[41] निम्न जातियों के अनाथ बच्चे, सड़कों पर पलने वाले बच्चे, वेश्यावृति करने वाले बच्चे और वेश्यायें ज्यादा कष्ट झेलते हैं, क्योंकि वे दूसरे प्रकार के भेदभाव के भी शिकार होते हैं।[42] एचआईवी/एड्स से जुड़ी हुई दुर्भावनाओं के कारण अनाथ बच्चों को संपत्ति और

---

33 http://www.unicef.org/aids/index_orphans.html

34 http://www.undp.org/hiv/publications/issues/english/issue30e.html

35 यूनिसेफ, द स्टेट ऑव वर्ल्ड चिल्ड्रन, 2005: चाइल्डहुड अंडर थ्रेट न्यूयॉर्क, एन वाई पृष्ठ 74

36 कमिटी ऑन द राइट्स ऑव द चाइल्ड; जनरल कमेंट सं. 3 (2003): एचआईवी/एड्स एंड राइट्स ऑव द चाइल्ड; पृष्ठ 11

37 रिवर्स, किम एवं एग्लेटन, पीटर, यूएनडीपी, "एडोलसेंट सेक्सुएलिटि, जेंडर एंड द एचआईवी एपिडेमिक" http://www.undp.org/hiv/publications/gender/adolesce.htm

38 http://www.undp.org/hiv/publications/issues/english/issue30e.html

39 यूनिसेफ; द स्टेट ऑव द वर्ल्ड्स चिल्ड्रन 2006:, एक्सक्लूडेड एंड इन्विजिबल, संपादन – मैसिया, पैट्रिसिया, न्यूयॉर्क, एनवाई, पृष्ठ 49–50

40 कमिटी ऑन द राइट्स ऑव द चाइल्ड, जनरल कमेंट सं. 3, एचआईवी/एड्स एंड द राइट्स ऑफ द चाइल्ड, पृष्ठ 3

41 राव, डा अशोक के एवं ली, हसेन जे, "अ रिसर्च स्टडी ऑव स्ट्रेटजी एंड डिटरमिनेंट्स आफ केयर फॉर एचआईवी पॉजिटिव ऑरफन चिल्ड्रन इन इंडिया, फ्रीडम फाउंडेशन एवं ड्यूक यूनिवर्सिटी, 5/2005, पृष्ठ 12

42 मोतिहार, रेणुका एवं भगत, अचल, " नेशनल कंसल्टेशन ऑन चिल्ड्रन अफेक्टेड ऑर वल्नरेबल टु एचआईवी/एड्स : बैकग्राउंड एनालिसिस, सिच्युएशन एंड रिस्पॉन्स, पृष्ठ 4

रुपये–पैसों से भी वंचित कर दिया जाता है जिन पर उनका अधिकार होना चाहिये था।[43] भारत में सरकारी और गैर–सरकारी, दोनों ही चिकित्सा संस्थाओं के डॉक्टर एचआईवी संक्रमित बच्चों की चिकित्सा करना तो दूर उन्हें छूने से भी मना कर देते हैं।[44]

माता–पिता के पर्याप्त संरक्षण से वंचित असुरक्षित लड़कियां– एचआईवी पॉजिटिव माता–पिता की बेटियों को शादी के लिए बाध्य किया जाता है और विकल्पों के अभाव में कम उम्र की लड़कियों की शादी हो जाती है।[45] लेकिन खासतौर पर युवा लड़कियों के लिये विवाह एचआईवी से बचाव नहीं करता है[46], क्योंकि इस बात की संभावना होती है कि उनके उम्रदराज पति को पहले से ही संक्रमण हो।[47] कम उम्र में विवाह से बच्चों और युवाओं के अधिकार का हनन होता है। मानवाधिकारों का सार्वभौम घोषणापत्र स्वतंत्र तथा सहमतिपूर्ण विवाह के पूर्ण अधिकारों की मान्यता देता है तथा महिलाओं के विरुद्ध सभी तरह के भेदभाव के उन्मूलन संबंधी समझौते के अनुच्छेद–16 में कहा गया है कि 18 वर्ष से कम उम्र के लड़के/लड़कियों के विवाह कानूनी तौर पर मान्य नहीं हैं। समय पूर्व विवाह के कारण बच्चों और युवाओं के भविष्य के विकास एवं उनकी शिक्षा पर विराम लग जाता है।[48]

हर दिन 25 वर्ष से कम उम्र के संक्रमित होने वाले 7000 नए मरीजों में से अधिकतर लड़कियां होती हैं।[49] लड़कों की तुलना में लड़कियों के एचआईवी से संक्रमित होने की आशंका बहुत अधिक होती है, क्योंकि उनकी शारीरिक संरचना एचआईवी संक्रमण से बचाव करने में सक्षम नहीं होती है। शारीरिक रूप से विकसित औरतों की तुलना में लड़कियों की योनि झिल्ली पतली होती है और संक्रमण के प्रति ज्यादा संवेदनशील होती है।[50] औरतें जैविक, सामाजिक, सांस्कृतिक और आर्थिक कारणों से पुरुषों की तुलना में संक्रमण के प्रति ज्यादा संवेदनशील होती हैं, लेकिन किशोरियों और युवतियों को अतिरिक्त खतरों का सामना करना पड़ता है। उदाहरण के तौर पर 14 वर्ष से कम उम्र की लड़कियों के प्रजनन अंगों के कटने–फटने की आशंका अधिक होती है, क्योंकि ये पूर्ण रूप से विकसित नहीं होते हैं। इसके कारण उनके लिये एचआईवी संक्रमण तथा अन्य यौन संचारित रोगों का खतरा बढ़ जाता है।

ऐसा माना जाता है कि युवा लड़कियों और सामान्य रूप से सभी लड़कियों को स्वास्थ्य, स्कूल, शिक्षा, सूचना आदि की जरूरत लड़कों की तुलना में कम होती है। गृह कार्य या बीमार परिवारजनों की देखभाल के लिए मुख्य तौर पर लड़कियों को ही स्कूल से हटाया जाता है और एचआईवी संक्रमण की स्थिति में उन्हें सबसे आखिर में चिकित्सा उपलब्ध करायी जाती है।[51] अनेक समाजों में यह माना जाता है कि लड़कियों को यौन विषयों में अबोध रखना ही उचित है।[52] अंनेक लोगों का मानना है कि यौन संबंधी विषयों मे लड़की

43 यूनिसेफ एंड यूएनएड्स; नेशनल कंसल्टेशन ऑन चिल्ड्रन अफेक्टेड और वल्नरेबल टु एचआईवी/एड्स :द फ्रेमवर्क फॉर द प्रोटेक्शन, केयर एंड सपोर्ट ऑव आर्फन एंड वल्नरेबल चिल्ड्रन इन ए वर्ल्ड विद एचआईवी एंड एड्स, पृष्ठ 9

44 एच आर डब्ल्यू, "फ्यूचर फॉरसेकन, एब्यूजेज अगेंस्ट चिल्ड्रन अफेक्टेड बाइ एचआईवी/एडस इन इंडिया",7/2004 इंडिया 0704

45 लायंस मिरियम; यूएनडीपी; "द इम्पैक्ट ऑव एचआईवी एंड एड्स ऑन चिल्ड्रन, फैमिलीज एंड कम्युनिटीजः रिस्क्स एंड रियेलिटीज ऑव चाइल्डहुड ड्यूरिंग द एचआईवी एपिडेमिक http://www.undp.org/hiv/publications/issues/english/issue30e.html

46 यूनिसेफ; "एचआईवी/एड्स एंड चिल्ड्रन" http://www.unicef.org/aids

47 यूएनएड्स; "फोकसः एचआईवी एंड यंग पीपुलः द थ्रेट फॉर टुडेज यूथ" 2004, एड्स की विश्व महामारी पर रिपोर्ट; 2004 http://www.unaids.org/bangkok2004/GAR2004_html/GAR2004_07_en.htm#P935_193845

48 यूनिसेफ; द स्टेट ऑव द वर्ल्ड्स चिल्ड्रन 2006 : एक्सक्लूडेड एंड इन्विजीबल, संपादित मैसिया पैट्रिसिया; न्यूयॉर्क, एन वाई; पृष्ठ 46

49 यूथ एंड एचआईवी; "द फेस ऑव एचआईवी/एड्स हैज बिकम, परवर्सली, एवर मोर यूथफुल"; 2003 http://www.youthandhiv.org

50 यूनिसेफ, डब्ल्यूएचओ, यूनेस्को, यूएनएफपीए, यूएनडीपी, यूएनएड्स, डब्ल्यूएफपी, एंड वर्ल्ड बैंक, फैक्ट्स फॉर लाइफः तीसरा संस्करण, न्यूयॉर्क, एन वाई; 2002; पृष्ठ 121

51 मोतिहर, रेणुका एवं भगत, अचल; नेशनल कंसल्टेशन ऑन चिल्ड्रन अफेक्टेड ऑर वल्नरेबल टु एचआईवी/एड्सः बैकग्राउंड एनालिसिस, सिचुएशन एंड रिस्पॉन्स; पृष्ठ 4

52 यूनिसेफ, "एचआईवी/एड्स एंड चिल्ड्रन" http://www.unicef.org/aids

की अज्ञानता उसकी पवित्रता और मासूमियत के लक्षण हैं। अबोधता पर यह जोर लड़कियों को यौन संबंधों या यौन स्वास्थ्य संबंधी सेवाओं के बारे में जानकारी लेने से रोकता है।[53] अपनी मासूमियत और शुचिता को बचाने के लिए कई लड़कियां असुरक्षित गुदा संभोग जैसी असुरक्षित यौन गतिविधियों में लिप्त हो जाती हैं।[54] यौन सक्रिय युवा लड़कियों को अपने साथी (पार्टनर) के साथ सेक्स संबंधी बातें न करने के लिए प्रोत्साहित किया जाता है। इस कारण वे सुरक्षित यौन व्यवहार की अपनी जरूरत के बारे में बताने से हिचकती हैं और न ही अपनी यौन क्रिया पर उनका नियंत्रण रहता है। लड़कियों को यह बताया जाता है कि सेक्स ऐसी चीज है जो अपने–आप हो जाती है और इसके लिये किसी सक्रिय सहभागिता की आवश्यकता नहीं होती है।[55] लड़कियां आमतौर पर अपने–आप को यौन कुचेष्टाओं से बचाये रखने में असमर्थ होती हैं।[56] उनमें यौन संबंधों के विकल्प चुनने की कुशलता या क्षमता नहीं होती है और इस कारण उनमें एचआईवी संक्रमण के जोखिम बढ़ जाते हैं।[57]

अक्सर युवतियों और लड़कियों को आर्थिक सहारे के लिए उम्रदराज पुरुषों के साथ संबंध स्थापित करने के लिये मजबूर किया जाता है।[58] उम्रदराज पुरुष भी यौन संबंधों के लिये उन लड़कियों को प्राथमिकता देते हैं जिन्हें सेक्स का कोई अनुभव या अल्प अनुभव होता है, क्योंकि ऐसी लड़कियों से उनके लिये संक्रमण के खतरे कम हो जाते हैं।[59] उम्रदराज पुरुष सेक्स के लिए लड़कियों को इस तरह फंसाते हैं कि लड़कियों के लिये ऐसे जाल से बच निकलना मुश्किल होता है।[60] उम्रदराज पुरुषों के साथ यौन संबंध होने की स्थिति में कम उम्र की लड़कियों के लिये असुरक्षित यौन व्यवहार के लिये तैयार होने के अलावा कोई और चारा नहीं होता है।[61] एचआईवी संक्रमित पुरुष इस खतरनाक मिथक पर विश्वास करते हैं कि अक्षत (वर्जिन) लड़कियों के साथ संभोग करने पर एचआईवी/एड्स ठीक हो जाता है।[62]

विश्व स्तर पर, लड़कियों एव महिलाओं के शक्तिहीन, गरीब, कम शिक्षित, भूमिहीन, धनहीन, पैसों की मोहताज और सामाजिक सेवाओं से वंचित होने की संभावना अधिक होती है। प्रायः औरतों या युवा लड़कियों के तलाक लेने, संपत्ति और उत्तराधिकार के अधिकारों को या तो माना ही नहीं जाता या उनका सही तरीके से क्रियान्वयन नहीं होता। इन सभी कारणों से युवा औरतें और लड़कियां आर्थिक सम्बल के विकल्पों से वंचित रह जाती हैं। गरीबी और अशिक्षा उन्हें आर्थिक आमदनी के लिए देह बेचने को मजबूर करती है। जीविकोपार्जन के लिए किये जाने वाले सेक्स से एचआईवी संक्रमण का खतरा होता है।[63] इस बात के सबूत

---

53 रिवर्स, किम एंड एग्लेटन, पीटर; यूएनडीपी; "एडोलसेंट सेक्सुएलिटी, जेंडर एंड द एचआईवी एपिडेमिक"; http://www.undp.org/hiv/publications/gender/adolesce.htm

54 यूनिसेफ; "एचआईवी/एड्स एंड चिल्ड्रन"; http://www.unicef.org/aids

55 रिवर्स, किम एंड एग्लेटन, पीटर; यूएनडीपी; "एडोलेसेंट सेक्सुएलिटी, जेंडर एंड द एचआईवी एपीडिक"; http://www.undp.org/hiv/publications/gender/adolesce.htm

56 यूनिसेफ, डब्ल्यूएचओ, यूनेस्को, यूएनएफपीए, यूएनडीपी, यूएनएड्स, डब्ल्यूएफपी, एंड वर्ल्ड बैंक; फैक्ट्स फॉर लाइफः तीसरा संस्करण; न्यूयॉर्क, एन वाई; 2002; पृष्ठ 121

57 यूनिसेफ एंड यूएनएड्स; नेशनल कंसल्टेशन ऑन चिल्ड्रन अफेक्टेड ऑर वल्नरेबल टु एचआईवी/एड्सः द फ्रेमवर्क फॉर द प्रोटेक्शन, केयर एंड सपोर्ट ऑव आर्फंस एंड वल्नरेबल चिल्ड्रन इन ए वर्ल्ड विद एचआईवी एंड एड्स, पृष्ठ 29

58 इंजेंडरहेल्थ; "रिस्क एंड वल्नरेबिलिटि फॅार चिल्ड्रन एंड यूथ"; 2005; http://www.engenderhealth.org/res/onc/hiv/transmission/hiv3p7.html

59 यूनिसेफ, डब्ल्यूएचओ, यूनेस्को, यूएनएफपीए, यूएनडीपी, यूएनएड्स, डब्ल्यूएफपी, एंड वर्ल्ड बैंक, फैक्ट्स फॉर लाइफः तीसरा संस्करण; न्यूयॉर्क, एन वाई; 2002; पृष्ठ 121

60 रिवर्स, किम एंड एग्लेटन, पीटर; यूएनडीपी; "एडोलसेंट सेक्सुएलिटी, जेंडर एंड द एचआईवी एपिडेमिक"; http://www.undp.org/hiv/publications/gender/adolesce.htm

61 यूएनएड्स; "फोकसः एचआईवी एंड यंग पीपुलः द ग्रेट फॉर टुडेज यूथ," 2004 रिपोर्ट ऑन द ग्लोबल एड्स एपिडेमिक; 2004; http://www.unaids.org/bangkok2004/GAR2004_html/GAR2004_07_en.htm#P935_193845

62 यूनिसेफ; "एचआईवी/एड्स एंड चिल्ड्रन"; http://www.unicef.org/aids

63 यूनिसेफ; "एचआईवी/एड्स एंड चिल्ड्रन"; http://www.unicef.org/aids

हैं कि बड़ी संख्या में युवा औरतें और लड़कियां घरों, स्कूलों, कार्यस्थलों और अन्य सामाजिक परिवेशों में लैंगिक हिंसा के कारण एचआईवी से संक्रमित होती हैं। बल पूर्वक या जबरन बनाये जाने वाले यौन संबंधों के कारण औरतों और लड़कियों के एचआईवी से संक्रमित होने के खतरे बढ़ते हैं। लड़कियां जितनी कम उम्र की होती हैं उन्हें एचआईवी संक्रमण के खतरे उतने ही ज्यादा होते हैं।[64]

युवकों एवं कम उम्र के लड़कों को भी संक्रमण का जोखिम होता है। मर्दानगी के स्थापित प्रतिमान युवकों को अनेक लड़कियों के साथ यौन संबंध बनाने को प्रोत्साहित करते हैं।[65] युवाओं पर यौन–सक्रिय रहने का तीव्र दबाव होता है और इस कारण अपने को अथवा अपनी यौन सहकर्मी को संक्रमण से बचाने के बारे में वे जानकारियां हासिल नहीं करते, क्योंकि ऐसा करने से उन्हें सेक्स के बारे में अनुभवहीन साबित हो जाने का भय होता है।[66]

एचआईवी संक्रमण का दूसरा सामान्य कारण असुरक्षित यौन व्यवहार है। आमतौर पर यद्यपि वयस्क ही जोखिम भरी यौन गतिविधियों में लिप्त रहते हैं किन्तु ये गतिविधियां बच्चों और युवाओं खास कर 15 वर्ष या उससे अधिक उम्र के बच्चों के लिए भी खतरनाक हैं। बढ़ते शहरीकरण, गरीबी, सेक्स के बारे में प्रतिकूल भ्रांतियां, सही सूचनाओं के सुलभ नहीं होने जैसे कारणों से विवाह–पूर्व यौन गतिविधियों को बढ़ावा मिलता है।[67] बहुत सारे युवक परस्पर सहमति से अनेक लड़कियों के साथ संभोग करते हैं। यौन तथा एचआईवी संबंधी शिक्षा से महरूम रहने के कारण वे असुरक्षित एवं खतरनाक यौन गतिविधियों में संलग्न हो जाते हैं।[68]

मादक द्रव्यों तथा शराब के सेवन के कारण युवकों में अपने यौन व्यवहारों पर नियंत्रण रखने तथा सही यौन आचरण करने की क्षमता कम हो जाती है। इस कारण उनमें एचआईवी/एड्स संक्रमण का खतरा बढ़ जाता है।[69] बड़े बच्चे तथा युवा यौन गतिविधियों के समान ही मादक द्रव्यों के इस्तेमाल के बारे में नये–नये प्रयोग करते हैं। उनमें मादक पदार्थों के सेवन से परहेज करने की न तो उपयुक्त क्षमता होती है और न ही उनके लिये मादक पदार्थों के सेवन से बचे रहने की कोई प्रेरणा होती है। जब ये एक बार मादक द्रव्यों का सेवन करने लगते हैं तो वे शीघ्र ही मुंह से लिये जाने वाले मादक द्रव्यों के बजाय सुइयों से लिये जाने वाले मादक द्रव्यों के आदी हो जाते हैं। एक ही सुई से कई लोग मादक द्रव्य लेते हैं और यह सुई गंदी, संक्रमित एवं जीवाणुयुक्त होती है और ऐसे में एचआईवी संक्रमण का खतरा बहुत अधिक बढ़ जाता है।[70]

बहुत से बच्चे यौन दुर्व्यवहार/शोषण के शिकार होते हैं और यह एचआईवी विषाणुओं के लिये प्रवेश मार्ग का काम करता है।[71] अगर यौन शोषण करने वाला व्यक्ति एचआईवी पॉजिटिव हो तो बच्चे के एचआईवी संक्रमित होने का खतरा बढ़ जाता है।[72] हिंसा के जरिये या बलपूर्वक किये गये संभोग से संक्रमण का खतरा बढ़ जाता है, क्योंकि हिंसात्मक तरीके से संभोग करने पर योनि की दीवारों में खरोंचें आ जाती हैं, जिससे एचआईवी विषाणु योनि की झिल्ली को भेद कर शरीर में प्रवेश कर जाते हैं।[73]

भारत में बाल यौन शोषण संबंधी स्पष्ट आंकड़ों का अभाव है और बाल यौन शोषण की कोई सर्वमान्य व्याख्या भी नहीं है। किसी भी यौन शोषण का मुख्य कारण हालांकि वयस्क की दबदबे वाली स्थिति होती है, जिसके कारण वह किसी बच्चे को यौन संबंध स्थापित करने के लिये बाध्य कर सकता है।

---

64 यूनिसेफ; "एचआईवी/एड्स एंड चिल्ड्रन"; http://www.unicef.org/aids

65 रिवर्स, किम एंड एग्लेटन, पीटर; यूएनडीपी; "एडोलसेंट सेक्सुएलिटी, जेंडर एंड द एचआईवी एपिडेमिक"; http://www.undp.org/hiv/publications/gender/adolesce.htm

66 http://www.engenderhealth.org/res/onc/hiv/transmission/hiv3p7.html

67 यूएनएड्स; "फोकस: एचआईवी एंड यंग पीपुल: द ग्रेट फॉर टुडेज यूथ," 2004 रिपोर्ट ऑन द ग्लोबल एड्स एपिडेमिक; 2004; http://www.unaids.org/bangkok2004/GAR2004_html/GAR2004_07_en.htm#935_193845

68 एवर्ट; "चिल्ड्रन, एचआईवी एंड एड्स", 29/6/2006; http://www.avert.org/children.htm

69 कमिटी ऑन द राइट्स ऑव द चाइल्ड; जनरल कमेंट सं. 3 (2003): एचआईवी/एड्स एंड राइट्स ऑव द चाइल्ड; पृष्ठ 12

70 यूनिसेफ; "एचआईवी/एड्स एंड चिल्ड्रन"; http://www.unicef.org/aids

71 कमिटी ऑन द राइट्स ऑव द चाइल्ड; जनरल कमेंट सं. 3 (2003): एचआईवी/एड्स एंड राईट्स ऑव द चाइल्ड; पृ. 11

72 एवर्ट, "चिल्ड्रन, एचआईवी एंड एड्स", 29/6/2006; http://www.avert.org/children.htm

73 यूएनएड्स; "फोकस: एचआईवी एंड यंग पीपुल: द ग्रेट फॉर टुडेज यूथ," 2004 रिपोर्ट ऑन द ग्लोबल एड्स एपिडेमिक, 2004, http://www.unaids.org/bangkok2004/GAR2004_html/GAR2004_07_en.htm#P935_193845

आमतौर पर स्वीकृत आंकड़े निम्नलिखित हैं[74]

- हर 4 में से एक लड़की का 18 वर्ष से पूर्व यौन शोषण होता है।
- हर 6 में एक लड़के का 18 वर्ष से पूर्व यौन शोषण होता है।
- हर 5 में से एक बच्चे को इंटरनेट के जरिये सेक्स के लिए प्रलोभित किया जाता है।
- प्रकाश में आने वाले यौन शोषण (वयस्कों के यौन शोषण सहित) के 70 प्रतिशत मामलों में 17 वर्ष या उससे कम उम्र के बच्चे शामिल होते हैं।
- अमेरिका में ऐसे तीन करोड़ 90 लाख लोग हैं, जिनका बचपन में यौन शोषण किया गया।

घर की चारदीवारी में बच्चों के यौन शोषण का खतरा रहता है।[75]

- यौन शोषण के शिकार 30 से 40 प्रतिशत बच्चे परिजनों द्वारा शोषित होते हैं।
- करीब 50 प्रतिशत बच्चों का शोषण परिवार के बाहर के लोग करते हैं जिन्हें बच्चे जानते हैं और जिन पर विश्वास करते हैं।
- करीब 40 प्रतिशत बच्चों का शोषण वयस्क या बड़े बच्चे करते हैं जिन्हें बच्चे जानते हैं।
- केवल 10 प्रतिशत बच्चों का शोषण अनजान लोग करते हैं।

सामान्यतः योद्धा बलात्कार को एक हथियार के रूप में इस्तेमाल करते हैं। इसलिए सशस्त्र युद्ध बच्चों तथा युवाओं मे एचआईवी संक्रमण की संभावना को बढ़ाता है। युद्ध के समय भीड़–भाड़ वाले शरणार्थी शिविरों में भी औरतें और बच्चे यौन हिंसा के शिकार होते हैं।[76]

यह समझना आवश्यक है कि विभिन्न आयु वर्गों तथा लैंगिक वर्गों के बीच कई तरह की विसंगतियां होती हैं। बड़े लोगों के मुकाबले कम उम्र के बच्चों की सूचना, सेवाएं और साधनों तक कम पहुंच होती है। परिवार, शिक्षकों और अन्य लोगों द्वारा रोक–टोक किये जाने के कारण बच्चों को सही सूचनायें उपलब्ध नहीं हो पाती और इस कारण जानकारियों के अभाव, यौन शोषण, अनियंत्रित मादक द्रव्यों के सेवन और भ्रमित यौन जिज्ञासाओं के कारण बच्चों और किशोरों में संक्रमण का खतरा बढ़ जाता है।[77] स्वास्थ्य सेवाओं में उनकी जरूरतों की पूर्ति के बारे में बहुत कम ध्यान दिया जाता है और स्वास्थ्यकर्मियों को शायद ही किशोरों से संबंधित समस्याओं के बारे में विशिष्ट प्रशिक्षण दिया जाता है।[78] अनेक विकासशील देशों एवं उन्नतशील अर्थव्यवस्थाओं और खासतौर पर भारत में एचआईवी/एड्स के संदर्भ में लड़कियों को परिवार में सबसे आखिर में चिकित्सा सुविधायें प्राप्त होती है।[79] घर के बीमार सदस्यों की देखभाल या गृह कार्य के लिए सबसे पहले लड़कियों को स्कूल से हटाया जाता है।[80] स्कूलों में भी लिंग भेद होते हैं। यूनिसेफ के

74 http://www.darkness2light.org/knowabout/statistics_2.asp

75 वही

76 यूनिसेफ; "एचआईवी/एड्स एंड चिल्ड्रन"; http://www.unicef.org/aids

77 रिवर्स, एंड एग्लेटन, 1999, एडोलसेंट सेक्सुएलिटी, जेंडर एंड द एचआईवी एपिडेमिक; http://www.undp.org/hiv/publications/gender/adolesce.htm; पर उपलब्ध

78 रिवर्स, किम एंड एग्लेटन, पीटर; यूएनडीपी; "एडोलसेंट सेक्सुएलिटी, जेंडर एंड द एचआईवी एपिडेमिक"; http://www.undp.org/hiv/publications/gender/adolesce.htm

79 एचआरडब्ल्यू; "फ्यूचर फॉरसेकन : एब्यूजेज अगेंस्ट चिल्ड्रन अफेक्टेड बाइ एचआईवी/एड्स इन इंडिया"; 7/2004 http://www.hrw.org/reports/2004/india0704

80 मोतिहर, रेणुका एवं भगत, अचल; नेशनल कंसल्टेशन ऑन चिल्ड्रन अफेक्टेड ऑर वल्नरेबल टु एचआईवी/एड्सः बैकग्राउंड एनालिसिस, सियुएशन एंड रिस्पॉन्स; पृष्ठ 4

मुताबिक इस महामारी के फैलने के पूर्व भी लड़कों की तुलना में कम लडकियां स्कूल जाती थीं।[81] प्राथमिक स्कूल छोड़ने वाले हर 100 लड़कों की तुलना में 117 लड़कियां प्राइमरी स्कूल नहीं जा पाती थीं।[82] भारत में तुलनात्मक रूप से लड़कों की तुलना में कम लड़कियां स्कूल जा पाती हैं और जो स्कूल जाती भी हैं उनके स्कूल छोड़ने की दर बहुत ज्यादा होती है।[83]

भारत

यह विवाद का विषय है कि भारत में एचआईवी संक्रमित लोगों की संख्या विश्व के अन्य देशों की तुलना में सबसे अधिक है या दूसरे नम्बर पर है– यूएन एड्स के अनुसार 2005 के अंत तक भारत में एचआईवी से संक्रमित 57 लाख लोग थे[84] जबकि नाको (राष्ट्रीय एड्स नियंत्रण संगठन) के अनुसार यह संख्या 52 लाख है।[85] इस मामले में भारत दक्षिण अफ्रीका के बाद दूसरे स्थान पर है। यद्यपि भारत में संक्रमण की दर कम है, जनसंख्या का सिर्फ एक प्रतिशत एचआईवी/एड्स संक्रमित है, लेकिन इसका मतलब यह है कि भारत में 30 से 50 लाख लोग संक्रमित हैं। इनमें से अधिकतर अपनी एचआईवी पॉजिटिव स्थिति से अनजान हैं।[86] भारत में सघन आबादी के कारण स्थिति और भी नाजुक है। अगर यहां एचआईवी प्रकोप की व्यापकता की दर सिर्फ 0.1 प्रतिशत की दर से भी बढ़ती है तो संक्रमित लोगों की अनुमानित संख्या पांच लाख बढ़ जायेगी।[87]

भारत में रह रहे 15 वर्ष से कम उम्र के 170,000 बच्चे संक्रमित हैं। दुर्भाग्य से ऐसा कोई सरकारी आंकड़ा नहीं है जिससे भारत में एचआईवी/एड्स के कारण प्रभावित हुये बच्चों की कुल संख्या का आकलन किया जा सके।[88] कुछ अनुमानों के अनुसार भारत में 15 वर्ष से कम उम्र के 12 लाख से ज्यादा बच्चों ने माता–पिता में से एक या दोनों को एड्स के कारण खो दिया है। भारत के सभी राज्यों में एड्स के मामले सामने आए हैं और रिपोर्ट बताती हैं कि अब इसका फैलाव एड्स के अधिक प्रभाव वाले शहरी इलाकों से ग्रामीण इलाकों की ओर हो रहा है।[89]

माता-पिता से बच्चों में एड्स संचरण

बच्चे जिन कारणों से एचआईवी/एड्स से संक्रमित होते हैं उनमें एक तरीका माता–पिता से संक्रमण है। गर्भावस्था, खासकर आखिरी तीन महीनों के दौरान बच्चे को मां के जरिये संक्रमण होता है।[90] नवजात बच्चे प्रसव के समय मां के शारीरिक तरल के संपर्क में आकर भी संक्रमित हो सकते हैं। इसके अलावा एचआईवी

81 यूनिसेफ, 'एचआईवी/एड्स चिल्ड्रन', http://www.unicef.org/aids

82 यूनिसेफ; द स्टेट ऑव द वर्ल्ड्स चिल्ड्रन 2006: एक्सक्लूडेड एंड इनविजिबल, संपादित मैसिया पैट्रिसिया; न्यूयॉर्क, एन वाई; पृष्ठ 23

83 एचआरडब्ल्यू, "फ्यूचर फॉरसेकन : एब्यूजेज अगेंस्ट चिल्ड्रन अफेक्टेड बाइ एचआईवी/एड्स इन इंडिया", 7/2004 http://www.hrw.org/reports/2004/india0704

84 यूएनएड्स, 2006 (बी), रिपोर्ट ऑन द ग्लोबल एड्स एपिडेमिक 2006, http://www.unaids.org/en/HIV_data/2006globalreport/default.asp; पर उपलब्ध

85 नाको, 2006, एचआईवी/एड्स एपिडेमियॉलोजिकल सर्विलेंस एंड एस्टीमेशन रिपोर्ट फॉर द ईयर 2005, http://www.nacoonline.org/finalpil06rprt.pdf; पर उपलब्ध

86 लायंस, मिरियम; यूएनडीपी; ,"द इम्पैक्ट ऑव एचआईवी एंड एड्स ऑन चिल्ड्रन, फैमिलीज एंड कम्युनिटीज: रिस्क्स एंड रियेलिटीज ऑव चाइल्डहुड ड्यूरिंग द एचआईवी एपिडेमिक" http://www.undp.org/hiv/publications/issues/english/issue30e.html

87 एवर्ट, 2007, "एचआईवी एंड एड्स इन इंडिया": http://www.avert.org/aidsindia.htm; पर उपलब्ध

88 मोतिहर, रेणुका एवं भगत, अचल; नेशनल कंसल्टेशन ऑन चिल्ड्रन अफेक्टेड ऑर वल्नरेबल टु एचआईवी/एड्स: बैकग्राउंड एनालिसिस, सिचुएशन एंड रिस्पॉन्स; पृष्ठ 2

89 एचआरडब्ल्यू, "फ्यूचर फॉरसेकन : एब्यूजेज अगेंस्ट चिल्ड्रन अफेक्टेड बाई एचआईवी/एड्स इन इंडिया"; 7/2004 http://www.hrw.org/reports/2004/india0704

90 नाको; "गाइडलाइन्स फॉर द प्रिवेंशन ऑव मदर टु चाइल्ड ट्रांसमिशन ऑव एचआईवी"; पृष्ठ 1; http://www.nacoonline.org/guidelines/guideline_9.pdf

पॉजिटिव मां का स्तनपान करने से भी बच्चे को संक्रमण हो सकता है।[91] अगर कोई महिला एचआईवी पॉजिटिव है तो उसके गर्भवती होने पर अगर वह आवश्यक सावधानियां नहीं बरतती है तो भ्रूण के संक्रमित होने की संभावना 35 प्रतिशत होती है।[92] हर दिन करीब 2000 नवजात पीटीसीटी (माता–पिता से बच्चे में संक्रमण) के जरिये संक्रमित होते हैं। इनमें से अधिकतर 5 वर्ष की आयु पूरी होने के पूर्व ही मौत के ग्रास बन जाते हैं।[93] संक्रमण की संभावना को कम करने के लिए दवाइयां और उपचार उपलब्ध हैं, लेकिन गरीबी और उपयुक्त चिकित्सा सुविधाओं के अभाव में ऐसा संभव नही हो पाता। साफ पेय जल और पाउडर दूध के अभाव में एचआईवी पॉजिटिव मातायें अपनी एचआईवी पॉजिटिव स्थिति को जानते हुए भी अपने नवजात शिशु को स्तनपान कराने को मजबूर हैं।[94] इस समस्या का दूसरा पहलू यह है कि अगर नवजात शिशु को दिन में 6 बार या उससे अधिक स्तनपान नहीं कराया जाये तो डायरिया या श्वसन समस्यायें या दूषित जल से होने वाली अन्य बीमारियों के कारण उसकी दो महीनों के भीतर मौत हो सकती है।[95]

माता-पिता से बच्चे को संक्रमण की सामान्य रोकथाम

माता–पिता से संक्रमण (पीटीसीटी) की रोकथाम के लिए कुछ रणनीतियां कार्यान्वित की जा सकती हैं – गर्भावस्था तथा उसके बाद मां की उपयुक्त चिकित्सा, प्रसवपूर्व, प्रसव के दौरान और प्रसवोपरांत समुचित चिकित्सकीय देखभाल, एचआईवी स्वैच्छिक जांच एवं परामर्श सेवाओं के जरिये माता–पिता से संक्रमण को रोकने में मदद मिल सकती है।[96] रोकथाम के अन्य संभव उपायों में एचआईवी संक्रमण और अवांछनीय गर्भावस्था को रोकने में महिलाओं की मदद, गर्भवती महिलाओं की एचआईवी संबंधित जांच ताकि एचआईवी संक्रमित होने पर उपयुक्त सहायता प्रदान की जा सके और शिशु को संक्रमण होने की आशंका कम करने के लिये सिजेरियन विधि से प्रसव कराना।[97] स्तनपान की बजाय डिब्बे का दूध देना बच्चे के लिए आदर्श स्थिति है, लेकिन अगर पीने का पानी दूषित हो तो अन्य विकल्प हैं। इसके लिये स्तनपान की अवधि कम की जा सकती है और साथ ही साथ यदि स्तन से संबंधित कोई समस्या हो या बच्चे के मुंह में घाव आदि हो तो उसकी तत्काल चिकित्सा की जानी चाहिये। बच्चे को दो साल का हो जाने तक स्तनपान कराने के बजाय उसके छह महीने का होने तक ही स्तनपान कराने से मां से बच्चे को संक्रमण होने का खतरा दो–तिहाई कम हो जाता है।[98] नाको ने भारत में माता–पिता से होने वाले संक्रमणों की रोकथाम के लिए अनेक कार्यक्रम चलाये हैं। नाको ने दिशानिर्देश प्रकाशित किये हैं, जिनके आधार पर ये कार्यक्रम चलाये जा रहे हैं।[99] भारत में विभिन्न पीटीसीटी कार्यक्रमों की वर्तमान स्थिति अन्य देशों की तुलना में बहुत अच्छी नहीं है, क्योंकि यहां प्रभावी दवाइयां, उपयुक्त उपचार, सिजेरियन सुविधाओं आदि का अभाव होने के साथ–साथ स्तनपान से जुड़ी सामाजिक मान्यतायें भी महत्वपूर्ण कारण हैं।[100]

91 एवर्ट; "चिल्ड्रन, एचआईवी एंड एड्स", 29/6/2006; http://www.avert.org/children.htm
92 यूनिसेफ; "एचआईवी/एड्स एंड चिल्ड्रन"; http://www.unicef.org/aids
93 यूनिसेफ; "फैक्ट्स ऑन चिल्ड्रन फाइटिंग एचआईवी/एड्स"; http://www.unicef.org/media/media_9473.html
94 लायंस मिरियम, यूएनडीपी ,"द इम्पैक्ट ऑव एचआईवी एंड एड्स ऑन चिल्ड्रन, फैमिलीज एंड कम्युनिटीज : रिस्क्स एंड रियेलिटीज ऑव चाइल्डहुड ड्यूरिंग द एचआईवी एपिडेमिक", http://www.undp.org/hiv/publications/issues/english/issue30e.html
95 यूनिसेफ; "एचआईवी/एड्स एंड चिल्ड्रन"; http://www.unicef.org/aids
96 कमिटी ऑन द राइट्स ऑव द चाइल्ड; जनरल कमेंट सं. 3 (2003): एचआईवी/एड्स एंड राइट्स ऑव द चाइल्ड; पृष्ठ 8
97 एवर्ट, "चिल्ड्रन, एचआईवी एंड एड्स", 29/6/2006; http://www.avert.org/children.htm
98 यूनिसेफ; "एचआईवी/एड्स एंड चिल्ड्रन"; http://www.unicef.org/aids
99 नाको; "गाइडलाइन्स फॉर द प्रिवेंशन ऑव मदर टु चाइल्ड ट्रांसमिशन ऑव एचआईवी"; पृष्ठ 1; http://www.nacoonline.org/guidelines/guideline_9.pdf
100 राव, डॉ. अशोक के. एवं ली. हुसेन–जे; अ रिसर्च स्टडी ऑव स्ट्रैटजीज एंड डिटरमिनेंट्स ऑव केयर फॉर एचआईवी पॉजिटिव ऑर्फन चिल्ड्रन इन इंडिया; फ्रीडम फाउंडेशन एंड ड्यूक यूनिवर्सिटी; 5/2005; पेज 95

बच्चों के मूल अधिकार

स्वास्थ्य का अधिकार

बच्चों और एचआईवी/एड्स के मुद्दे को सामान्यतः स्वास्थ्य संबंधी मसला माना जाता है, किंतु इसमें अनेक अन्य व्यापक मुद्दे भी जुड़े हैं। इसमें स्वास्थ्य का अधिकार सबसे महत्वपूर्ण है। भारतीय संविधान के अनुच्छेद–47 में इसे मान्यता देते हुये कहा गया है, "स्वास्थ्य में सुधार ...... (तथा) इसका सम्मान राज्य के प्राथमिक कर्तव्य हैं।"[101] सामान्यतः स्वास्थ्य सुविधाएं बच्चों और किशोरों की जरूरतों को पूरा करने के अनुरूप नहीं होती। बच्चे और किशोरों को जो सुविधायें मिलती हैं उनमें से ज्यादातर सहायक सुविधायें होती हैं, जिनके तहत जो सुविधायें एवं सूचनायें उपलब्ध करायी जाती हैं वे बच्चों एवं किशोरों की जरूरतों के हिसाब से आधी–अधूरी होती हैं। ये सेवाएं आर्थिक रूप से वहन करने योग्य, गोपनीय और भेदभाव–रहित हों तथा इनके लिये अभिभावकों की सहमति की आवश्यकता नहीं होनी चाहिए। स्वास्थ्य सेवाओं के लिये प्रशिक्षित कर्मचारियों की नियुक्ति होनी चाहिए, जो बच्चों के अधिकारों का पूरी तरह सम्मान करें तथा जो भेदभाव के बगैर एचआईवी से संबंधित जानकारियां, स्वैच्छिक परीक्षण एवं परामर्श संबंधी सेवायें, बच्चों की एचआईवी स्थिति की जानकारी, गुप्त यौन एवं प्रजनन स्वास्थ्य सेवायें, निःशुल्क या कम दाम के गर्भनिरोधक, कंडोम और अन्य सेवायें तथा जरूरत पड़ने पर एचआईवी से संबंधित देखभाल और उपचार प्रदान कर सकें।[102] किशोर एचआईवी की जांच कराने में अक्षम होते हैं। जो किशोर एचआईवी जांच कराना चाहते हैं उनमें से केवल 12 प्रतिशत ही जांच करा पाते हैं। एचआईवी/एड्स से संक्रमित बच्चे स्वस्थ रहने के लिए दवाइयां और उपचार पाने में असमर्थ रहते हैं। एचआईवी/एड्स से ग्रस्त छोटे बच्चों में से केवल पांच प्रतिशत छोटे बच्चे बाल चिकित्सा प्राप्त कर पाते हैं। अस्पताल चूंकि एड्स रोगियों के उपचार में पूरी तरह व्यस्त होते हैं इस कारण, बच्चों को समुचित चिकित्सा सेवाएं नहीं मिलतीं। अस्पतालों पर एड्स मरीजों के भारी दबाव के कारण अस्पताल जीवन को जोखिम में डालने वाली निमोनिया, डायरिया और मलेरिया जैसी बीमारियों से ग्रस्त बच्चों की उपयुक्त चिकित्सा नहीं कर पाते हैं।[103]

उपचार एवं चिकित्सकीय देखभाल की मात्रा एवं गुणवत्ता के संदर्भ में चाहे वह एंटी–रेट्रोवायरल थेरेपी हो, परामर्श सुविधाएं हों या अन्य यौन संचारित रोगों (एसटीडी) का उपचार हो – पश्चिमी देशों की तुलना में भारतीय मानदंड निम्न स्तर के हैं। भारत में एंटी–रेट्रोवायरल दवाइयों की उपलब्धता बहुत कम है। जिन्हें इस थेरेपी की जरूरत हैं उनमें से केवल 10 प्रतिशत लोगों को यह उपलब्ध हो पाती है।[104] भारत में जुलाई 2006 तक 15 वर्ष से कम उम्र के करीब 202,000 एचआईवी संक्रमित बच्चों और 56,700[105] नवजात शिशुओं में से सिर्फ 1,850 को एआरवी थेरेपी मिल रही थी।[106] दवाइयों के अभाव के कारण एचआईवी संक्रमित व्यक्ति के एड्स से ग्रस्त होने की आशंका बढ़ जाती है, जिसके कारण एचआईवी/एड्स से संबंधित मौतों की संख्या बढ़ जाती है।

---

101 एचआरडब्ल्यू, "फ्यूचर फॉरसेकन : एब्यूजेज अगेंस्ट चिल्ड्रन अफेक्टेड बाइ एचआईवी/एड्स इन इंडिया", 7/2004 http://www.hrw.org/reports/2004/india0704

102 कमिटी ऑन द राइट्स ऑव द चाइल्ड; जनरल कमेंट नं 3 (2003): एचआईवी/एड्स एंड राइट्स ऑव द चाइल्ड; पृष्ठ 6–7

103 यूनिसेफ एंड यूएनएड्स, अ कॉल टु एक्शनः चिल्ड्रन, द मिसिंग फेस ऑफ एड्स; पृष्ठ 7–8

104 डब्ल्यूएचओ, 2006, प्रोग्रेस ऑन ग्लोबल एक्सेस टु एचआईवी एंटी रेट्रोवायरल थेरेपी, http://www.who.int/entity/hiv/progreport2006_en.pdf; पर उपलब्ध

105 यूनिसेफ, 2006, 'मिसेज सोनिया गांधी एंड मिस्टर विलियम जे. क्लिंटन लॉन्च अ नेशनल पीडिएट्रिक प्रोग्राम ऑन एचआईवी/एड्स', http://www.unicef.org/india/media_2558.htm; पर उपलब्ध

106 यूनिसेफ, 2007(बी), एचआईवी/एड्स इन इंडियाः वीमेन एंड चिल्ड्रन http://www.unicef.org/india/hiv_aids_2587.htm; पर उपलब्ध

बहुत से संक्रमित बच्चों को तो चिकित्सा मिलने में बहुत कठिनाई होती है। अक्सर जब संक्रमित बच्चों को समुचित चिकित्सा नहीं मिल पाती है तो ऐसी स्थितियों में कई बार वयस्कों को दी जाने वाली दवाइयों को छोटे–छोटे टुकड़ों में तोड़कर ये टुकड़े बच्चों को दिये जाते हैं। इस प्रकार यह पता नहीं चल पाता है कि बच्चे को दवाई की सही खुराक मिल रही है या नहीं और हर बार समान खुराक मिल रही है या नहीं। ऐसे में संक्रमित बच्चों में ड्रग रजिस्टेंस पैदा हो सकता है अथवा उनकी मौत हो सकती है।[107] बच्चों को दी जाने वाली दवाइयां आमतौर पर वयस्कों की दवाइयों से दस गुना या उससे भी अधिक मंहगी होती है।[108] बच्चों को कम सांद्रता वाली दवाइयों की जरूरत होती है और जो सिरप के रूप में होती है। भारत सरकार ने 2006 से इन दवाइयों की आपूर्ति शुरू की।[109]

जीवन का अधिकार

एक और परस्पर–संबंधित अधिकार जीवन का अधिकार है। भारतीय संविधान जीवन के अधिकार को मूल अधिकार के रूप में मान्यता देता है और यह संविधान के अनुच्छेद 21 में वर्णित है।[110] पर्याप्त चिकित्सा सुविधाओं और संक्रमण की रोकथाम के साधनों के अभाव में बच्चे एचआईवी रहित जीवन जीने के अवसर से वंचित हैं। हर साल 5 वर्ष से कम उम्र के औसतन 300,000 बच्चे एड्स संबंधित बीमारियों के कारण मौत के ग्रास बनते हैं।[111] बाल अधिकार की समिति के अनुसार, "बच्चों को यह अधिकार है कि उन्हें उनके जीवन से मनमाने तरीके से महरूम नहीं किया जा सकता है। साथ ही उन्हें उन आर्थिक और सामाजिक नीतियों का पूरा लाभ उठाने का अधिकार है जो उन्हें वयस्क बनने तथा विश्व के व्यापक संदर्भ में विकसित होने के मौके प्रदान करती है।[112]

शिक्षा का अधिकार

शिक्षा का अधिकार एक अन्य मौलिक अधिकार है। एचआईवी/एड्स के कारण बच्चों की शिक्षा छूट जाती है। एचआईवी से प्रभावित शिक्षक काम पर नहीं जा पाते, इस कारण बच्चों की पढ़ाई भी प्रभावित होती है।[113] बीमार रिश्तेदारों अथवा घर–परिवार के निर्वाह के लिए अक्सर बच्चों की पढ़ाई छुड़ा दी जाती है।[114] भारतीय संविधान के तहत शिक्षा को एक मौलिक अधिकार माना गया है और सभी राज्य सरकारों पर यह दायित्व सौंपा गया है कि 6 से 14 वर्ष के सभी बच्चों को निःशुल्क और अनिवार्य शिक्षा उपलब्ध करायी जाये। वर्ष 2003 के राष्ट्रीय बाल चार्टर के अनुसार प्राथमिक शिक्षा निःशुल्क दी जानी चाहिए और इस बात की कोशिश की जानी चाहिये कि वंचित सामाजिक वर्गों के बच्चों को स्कूलों में प्रवेश दिया जाये, वे अपनी पढ़ाई जारी रखें तथा स्कूली शिक्षा में भागीदार बन सकें। राज्य सरकारों को माध्यमिक स्तर की शिक्षा सर्वसुलभ करानी चाहिये तथा वंचित वर्गों के लिए सहायक सुविधाएं उपलब्ध करानी चाहिए।" बाल अधिकार समिति ने इस बात पर ज़ोर दिया है कि एचआईवी/एड्स से प्रभावित बच्चों को अन्य बच्चों के समान शिक्षा उपलब्ध हो।[116]

107 एवर्ट, "चिल्ड्रन, एचआईवी एंड एड्स", 29/6/2006; http://www.avert.org/children.htm
108 थॉम्सन फाउंडेशन, 2007, 'चैप्टर 5: चिल्ड्रन एट रिस्क' एचआईवी/एड्स मीडिया मैनुअल इंडिया 2007 से, http://www.aidsandmedia.net/manual07/ch05-Children%20at%20Risk.pdf; पर उपलब्ध
109 http://www.aidsandmedia.net/manual07/ch05-children%20at%20Risk.pdf;
110 एचआरडब्ल्यू, "फ्यूचर फ़ॉरसेकन; एब्यूजेज अगेंस्ट चिल्ड्रन अफेक्टेड बाइ एचआईवी/एड्स इन इंडिया",7/2004; http://www.hrw.org/reports/2004/india0704
111 यूनिसेफ एंड यूएनएड्स; अ कॉल टु एक्शनः चिल्ड्रन, द मिसिंग फेस ऑव एड्स; पृष्ठ 6
112 कमिटी ऑन द राइट्स ऑव द चाइल्ड; जनरल कमेंट सं: 3 (2003): एचआईवी/एड्स एंड द राइट्स ऑव द चाइल्ड; पृष्ठ 4
113 यूनिसेफ एंड यूएनएड्स; अ कॉल टु एक्शनः चिल्ड्रन, द मिसिंग फेस ऑव एड्स; पृष्ठ 9
114 यूनिसेफ; द स्टेट ऑव वर्ल्ड्स चिल्ड्रन 2005: चाइल्डहुड अंडर थ्रेट; न्यूयॉर्क, एन वाई; पृष्ठ 69
115 एचआरडब्ल्यू; "फ्यूचर फॉरसेकन, एब्यूजेज अगेंस्ट चिल्ड्रन अफेक्टेड बाइ एचआईवी/एड्स इन इंडिया; 7/2004; http://www.hrw.org/reports/2004/india0704

पोषण का अधिकार

पोषण का अधिकार चौथा मौलिक अधिकार है। भारत जैसे देशों में एचआईवी/एड्स से प्रभावित बच्चों को साफ एवं सुरक्षित जल, स्वच्छ वातावरण और समुचित पोषण नहीं मिलता। एचआईवी प्रभावित बच्चों की पोषण संबंधित जरूरतें अन्य लोगों से ज्यादा होती हैं। कुपोषण के कारण शरीर की रोग प्रतिरोधी क्षमता और भी कमजोर हो जाती है तथा एचआईवी संक्रमण अधिक तेजी से एड्स में तब्दील होता है।[116] एचआईवी/एड्स के कारण माता–पिता की बीमारी या मृत्यु के कारण बच्चे को उपयुक्त पोषण मिलने के अवसर और भी कम हो जाते हैं।

परिवार का अधिकार

परिवार का अधिकार बच्चे का पांचवा सबसे प्रमुख मौलिक अधिकार है। संयुक्त राष्ट्र बाल अधिकार कन्वेंशन की उद्घोषणा के अनुसार परिवार समाज की बुनियादी इकाई है, जो बच्चों को विकास एवं तंदुरुस्ती के लिए वातावरण प्रदान करती है। इसमें कहा गया है कि परिवारों को उपयुक्त सहायता और सुरक्षा दी जानी चाहिए, ताकि वे समाज का एक जिम्मेदार हिस्सा बन सकें।[117] एक सकारात्मक व्यक्तित्व तथा स्वाभिमान के विकास के लिए पारिवारिक वातावरण आवश्यक होता है। एचआईवी/एड्स के कारण ऐसी स्थितियां उत्पन्न होती हैं जिसके कारण बच्चे सड़कों पर पलते–बढ़ते हैं या बाल मजदूर बन जाते हैं। इस तरह से बच्चे के परिवार के अधिकार का हनन होता है।[118]

अधिकार और सुरक्षा के बीच तालमेल – बच्चों के बीच व्यापक विषमताओं को खत्म करने की कोशिश करते समय सशक्तिकरण की ओर ध्यान दिया जाना आवश्यक है, ताकि बच्चों को सुरक्षित एवं स्वस्थ विकास के उनके अधिकार के रूप में जरूरी संरक्षण एवं मार्गदर्शन मिल सके। यह याद रखना चाहिये कि कई बार वयस्कों के निर्णय महत्वाकांक्षी, भ्रांतिपूर्ण और काल्पनिक होते हैं। बच्चों के बारे में लिये गये वयस्कों के निर्णय बच्चों के हित में नहीं होते हैं। मिसाल के तौर पर अनके समाजों में यह मान्यता है कि बच्चों को सेक्स तथा यौनत्व की जानकारियों से तब तक दूर रखा जाना चाहिए जब तक कि वे बड़े नहीं हो जाते। "बचपन की मासूमियत" को बचाने का यह प्रयास इस वास्तविकता के परिप्रेक्ष्य में देखा जा सकता है कि इन बच्चों को खतरों, आशंकाओं एवं रोगों का सामना करना पड़ता है। बच्चे जब यौन अनुभव शुरू करते हैं उससे पूर्व उन्हें सेक्स, यौनत्व, यौन संचारित संक्रमणों (एसटीआइ) या एचआईवी/एड्स के बारे में सही एवं समुचित जानकारी नहीं होती है। कई विशेषज्ञों के अनुसार जब बच्चों को जानकारियों का अभाव होता है तो उनके सामने कई बार ऐसी स्थितियां या घटनायें उत्पन्न हो जाती हैं जिन पर वे केवल इस कारण नियंत्रित नहीं कर पाते कि उन्हें इस बारे में जानकारी नहीं होती है।[119]

औरतों को होने वाले नए संक्रमण में से पांच में से चार बार संक्रमण पति या पहले सहभागी के साथ संभोग करने के कारण होते हैं।[120] भारत में 50 प्रतिशत लड़कियों का विवाह 18 वर्ष या उससे कम उम्र में ही कर दिया जाता है।[121] भारत में वेश्याओं के पास जाने वाले 27 प्रतिशत पुरुष या तो विवाहित होते हैं या किसी महिला के साथ रह रहे होते हैं।[122] भारत में 25 वर्ष की उम्र तक पहुंचने तक 91 प्रतिशत महिलाएं

---

116 यूनिसेफ एंड यूएनएड्स, अ कॉल टु एक्शन : चिल्ड्रन, द मिसिंग फेस ऑव एड्स; पृष्ठ 9

117 लायंस मिरियम; यूएनडीपी; "द इम्पैक्ट ऑव एचआईवी एंड एड्स ऑन चिल्ड्रन, फैमिलीज एंड कम्युनिटीज : रिस्क्स एंड रियेलिटीज ऑव चाइल्डहुड ड्यूरिंग द एचआईवी एपिडेमिक"; http://www.undp.org/hiv/publications/issues/english/issue30e.html

118 यूनिसेफ; द स्टेट ऑव वर्ल्ड्स चिल्ड्रन 2005: चाइल्डहुड अंडर थ्रेट; न्यूयॉर्क, एन वाई; पृष्ठ 68–69

119 http//www.undp.org /hiv/publication /issues /english/issue30e.html

120 यूएनएफपीए, "स्टेट ऑव वर्ल्ड पॉपुलेशन: द प्रौमिस ऑव ईक्वलिटी : जेंडर इक्विटी, रिप्रोडक्टिव हैल्थ एंड द एमडीजीस," 2005

121 डॉन ऑन्टेरियो, "वीमेन्स वल्नरेबिलिटी टु एचआईवी/एड्स" 26 जुलाई 2006

122 यूएनएड्स, 2004 रिपोर्ट ऑन द ग्लोबल एड्स एपिडेमिक: जुलाई 2004

अपने पति के साथ रहने लगती हैं। यह तथ्य एचआईवी–1 के प्रकोप के तौर– तरीकों में आये अंतर को समझने का विश्वसनीय आधार है।[123]

युवा और बच्चों को एचआईवी शिक्षा

शिक्षा का प्रभाव

विश्व के एक अरब युवकों में से केवल उसके एक छोटे से हिस्से के पास एचआईवी संक्रमण से बचने का ज्ञान या कुशलता है।[124] जिन 20 देशों में एचआईवी/एड्स की बहुत अधिक व्यापकता है उन देशों के आंकड़े बताते हैं कि यद्यपि अधिकतर युवाओं ने एचआईवी/एड्स के बारे में सुना होता है किंतु वे एचआईवी से जुड़े तीन मिथकों और एचआईवी/एड्स के बचने के दो तरीकों के बारे में नहीं जानते हैं।[125]

इंटरनेशनल वीमेंस हेल्थ कोएलिशन इन इंडिया के अनुसार भारत के स्कूलों में अगर एड्स की शिक्षा दी भी जाती है तो यह शिक्षा 15 वर्ष या उससे अधिक उम्र के बच्चों को दी जाती है। भारत में 15 से 17 वर्ष आयु वर्ग के 42 प्रतिशत लड़के और 69 प्रतिशत लड़कियां[126] स्कूलों में नहीं होते हैं।[127] आज एचआईवी/एड्स से ग्रस्त महिलाओं में से 62 प्रतिशत महिलायें 15 से 24 वर्ष आयु वर्ग की हैं।[128] अध्ययनों से यह भी पता चला है कि भारत में 15 से 44 वर्ष के बीच के यौन सक्रिय युवा वर्ग के लिये एचआईवी/एड्स का सबसे अधिक खतरा होता है और एचआईवी संक्रमण के 87.7 प्रतिशत संक्रमण इसी वर्ग से होते हैं। इसके अलावा एचआईवी/एड्स संक्रमित लोगों में से 51 प्रतिशत गांवों में रहते हैं जहां एचआईवी/एड्स के बारे में न तो जानकारी है और न ही इसकी चिकित्सा उपलब्ध है।[129]

एचआईवी/एड्स के बारे मे प्रासंगिक और उपयुक्त जानकारी देने वाली शिक्षा बच्चों में बेहतर जागरूकता और समझ पैदा करती है। ऐसी शिक्षा के कारण एचआईवी/एड्स पीड़ितों के प्रति नकारात्मक धारणा पैदा नहीं हो पाती है। बाल अधिकार समिति के अनुसार, "बच्चों को एचआईवी/एड्स की रोकथाम एवं इसकी चिकित्सा संबंधी उपयुक्त शिक्षा पाने का अधिकार होना चाहिए।[130] शिक्षा का व्यक्ति के व्यवहार पर बहुत गहरा असर पड़ता है।[131] उत्तर अमेरिका में चलाये गये 150 कार्यक्रमों के अध्ययन से यह पता चला है कि यौन सक्रिय युवाओं के बीच एड्स शिक्षा कार्यक्रम यौन सहभागियों (सेक्सुअल पार्टनर्स) की संख्या घटाने तथा कंडोम के इस्तेमाल को बढ़ाने में प्रभावी होते हैं। इस बात के भी प्रमाण मिले हैं कि जो लड़कियां लम्बे समय तक स्कूल में पढ़ती हैं उनका यौन संबंध देर से होता है, उन्हें एचआईवी संक्रमण की रोकथाम की ज्यादा जानकारी होती है और उन्हें एचआईवी परीक्षण की बेहतर समझ होती है। एचआईवी संक्रमणों की रोकथाम के बारे में जानकारियां प्रदान करने तथा संक्रमण से बचने की कुशलता विकसित करने के लिए स्कूल सर्वोत्तम माध्यम हैं। शिक्षा वह कुशलता भी प्रदान करती है जो आत्मविश्वास बढ़ाने तथा सही निर्णय लेने में सहायक होती है। यूएन एड्स के एक अध्ययन से पता चला है कि जब किशोरों को यौन गतिविधियों

123 www.boloji.com नितिन जुगराण, "पॉजिटिव ब्लिप ऑन एचआईवी राडार"; 30 अप्रैल 2006

124 यूनिसेफ; "एचआईवी/एड्स एंड चिल्ड्रन"; http://www.unicef.org/aids

125 यूएनएड्स; "फोकसः एचआईवी एंड यंग पीपुलः द ग्रेट फॉर टुडेज यूथ;" 2004 रिपोर्ट ऑन द ग्लोबल एड्स एपिडेमिक, 2004, http://www.unaids.org/bangkok2004/GAR2004_html/GAR2004_07_en.htm#P935_193845

126 यूनिसेफ, यूएनएड्स एंड डब्ल्यूएचओ, "यंग पीपुल एंड एचआईवी/एड्सः ऑपर्चुनिटी इन क्राइसिस", जून 2002

127 www.iwhc.org/resources/hivaidsfactsheet.cfm

128 यूएनएड्स, एड्स एपिडेमिक अपडेट 2004: दिसंबर 2004

129 रॉयटर्स/अदनान आबिदी, www.newswatch.in

130 कमिटी ऑन द राइट्स ऑव द चाइल्ड; जनरल कमेंट सं. 3 (2003): एचआईवी/एड्स एंड राइट्स ऑव द चाइल्ड; पृष्ठ 5

131 यूएनएड्स; "फोकसः एचआईवी एंड यंग पीपुलः द ग्रेट फॉर टुडेज यूथ"; 2004 रिपोर्ट ऑन द ग्लोबल एड्स एपिडेमिक; 2004; http://www.unaids.org/bangkok2004/GAR2004_html/GAR2004_07_en.htm#P935_193845

और एचआईवी/एड्स के बारे में उपयुक्त जानकारियां दी जाती हैं तो एचआईवी संक्रमण का विस्तार या तो धीमा पड़ जाता है या घटने लगता है।[132]

युवा वर्ग और जोखिम – एचआईवी/एड्स ने युवा वर्ग को सबसे बुरी तरह प्रभावित किया है। हर दिन एचआईवी/एड्स से प्रभावित होने वाले 14,000 नए लोगों में से आधे से ज्यादा 25 वर्ष से कम आयु के होते हैं, जिनमें से ज्यादातर लड़कियां होती हैं। किंतु इस तथ्य के बावजूद कि युवा वर्ग को एचआईवी/एड्स का सबसे अधिक खतरा झेलना पड़ता है तथा वे वयस्कों की तुलना में अधिक सुरक्षित व्यवहार अपना सकते हैं, उन्हें एचआईवी/एड्स की रणनीतियों, नीतियों की जानकारी नहीं दी जाती और बजट के निर्माण के दौरान उन्हें आमतौर पर नजरअंदाज किया जाता है।[133] सूचना तंत्रों, अनुसंधानों एवं चिकित्सा क्षेत्र में विकास के बावजूद एचआईवी/एड्स आज के युवा के लिए खतरा बना हुआ है। वस्तुतः यूएन एड्स के अनुमानों के अनुसार 35 प्रतिशत नए संक्रमण 15–49 आयु वर्ग में होते हैं और प्रकाश में आने वाले एड्स के मामलों में से 37 प्रतिशत मामले 30 वर्ष से कम उम्र के लोगों के होते हैं। युवा वर्ग को एचआईवी संक्रमण से बचाने के लिये साधनों की आवश्यकता है।[134] जनसंख्या के आधार पर भारत आज युवाओं का देश है, क्योंकि इसकी 70 प्रतिशत से अधिक की आबादी 35 साल से कम उम्र के लोगों की है।[135] इनमें से 33.8 प्रतिशत आबादी 15–34 वर्ष आयु वर्ग के बीच की है। किशोरों (10–19) की संख्या 23 करोड़ को पार कर चुकी है। अतः भारत में हर दूसरा नागरिक युवा है। अकेले चिकित्सा क्षेत्र इस महामारी पर काबू नहीं पा सकता। यही वह समय है जब इसके लिये जो भी संभव है किया जाना चाहिये, हालांकि इस कार्य के लिये पहले से ही बहुत देर हो चुकी है। यदि एचआईवी संक्रमण के खतरों को 2015 तक आधा कर दिया जाये तब भी कुछ देशों में आज 15 वर्ष के बच्चों में से 20 प्रतिशत से 80 प्रतिशत बच्चे एड्स से मर जाएंगे। कुछ स्थानों पर तो जीवित बचे युवाओं का भविष्य अंधेरे में होगा, क्योंकि शिक्षकों एवं अन्य नेताओं की मौत हो चुकी होगी और उत्पादकता कम हो रही होगी। एचआईवी की रोकथाम के लिए आज लिए गए कठोर निर्णय ही यह सुनिश्चित कर पाएंगे कि आज के युवा एक वयस्क के रूप में अपना भविष्य देख पायेंगे या नहीं।[136]

भारत में पढ़ाया जाने वाला अल्पज्ञान

भारत में ऐसा पाया गया है कि युवा वर्ग, विशेषकर लड़कियों में सेक्स और प्रजनन के बारे में अल्पज्ञान होता है। एचआईवी संचरण के तरीकों और उससे बचाव के लिए कंडोम का उपयोग भी इसमें शामिल है। माता–पिता बच्चों से यौन संबंधों के बारे में बात करने से कतराते हैं, क्योंकि सेक्स और प्रजनन को अश्लील और शर्म का विषय माना जाता है। वहीं दूसरी ओर युवाओं को यौन सक्रिय होने के लिए प्रोत्साहित किया जाता है, लेकिन सही सूचनाओं के भरोसेमंद स्रोत नहीं के बराबर हैं।[137] यद्यपि स्कूलों में सेक्स और एड्स की शिक्षा दी जाती है किंतु कुछ राज्यों में अधिकारियों ने उन जानकारियों को हल्का कर दिया है जिससे वे असहमत हैं। शिक्षक उन विषयों को नहीं पढ़ाते जिन्हें पढ़ाने में उन्हें असुविधा होती है। जब युवा और बच्चे जानकारियां चाहते हैं तो उन्हें डांटा भी जाता है।[138]

---

132 यूनिसेफ: "एचआईवी/एड्स एंड चिल्ड्रन"; http://www.unicef.org/aids

133 www.youthandhiv.org/

134 www.heroesprojectindia.org/youth_hivaids/youth_hivaids.htm

135 www.yuva.nic.in/AboutYUVA.aspx

136 www.infoforhealth.org/pr/112edsum.shtml

137 रिवर्स, किम एंड एग्लेटन, पीटर; यूएनडीपी; "एडोलसेंट सेक्सुएलिटी, जेंडर एंड द एचआईवी एपिडेमिक"; http://www.undp.org/hiv/publications/gender/adolesce.htm

138 यूएनएड्स; "फोकसः एचआईवी एंड यंग पीपुलः द थ्रेट फॉर टुडेज यूथ"; 2004 रिपोर्ट ऑन द ग्लोबल एड्स एपिडेमिक; 2004 http://www.unaids.org/bangkok2004/GAR2004_html/GAR2004_07_en.htm#935_193845

बाल विवाह विश्व के अन्य देशों की तरह भारत में भी एक चिंता का विषय है, खासकर एचआईवी महामारी के मद्देनजर। विश्वस्तर पर 20–24 वर्ष की 36 प्रतिशत औरतों का या तो विवाह हो गया है या 18 वर्ष की आयु से पूर्व ही उनका यौन संबंध हो चुका है।[139] विश्व के कई हिस्सों में, जहां लड़कियों को आर्थिक बोझ माना जाता है, उनका विवाह परिवार को चलाने की नीति का हिस्सा होता है। अनुसंधानों से पता चला है कि बांगलादेश, नाईजीरिया और कांगो गणराज्य में दो–तिहाई से ज्यादा किशोरियों की तथा अफगानिस्तान, भारत और नाईजीरिया में आधी से ज्यादा किशोरियों की शादी कर दी जाती है।[140] कुछ देशों में, 18 वर्ष से कम उम्र की आधी से ज्यादा लड़कियां विवाहित हैं। खासतौर पर 18 वर्ष[141] की उम्र तक (15–19) विवाहित होने वाली लड़कियों का प्रतिशत भारत में 50 और बांग्लादेश में 51 है।

वर्ष 2001 की जनगणना के आंकड़ों के अनुसार 15 वर्ष से कम उम्र की 15 लाख लड़कियां विवाहित हैं। इनमें से 20 प्रतिशत या करीब 300,000 लड़कियां कम से कम एक बच्चे की मां भी बन चुकी हैं। स्पष्टतः लड़कियों के लिए विवाह की निम्नतम उम्र 18 वर्ष निर्धारित करने वाले, "बाल विवाह प्रतिबंध अधिनियम", 1929 का बाल विवाह रोकने के मामले में सीमित प्रभाव रहा है।[142] देश भर में किए गए एक गृह सर्वेक्षण के अनुसार 18 वर्ष की आयु से पूर्व 58.9 प्रतिशत औरतें बिहार में, 55.5 प्रतिशत राजस्थान में, 54.9 प्रतिशत पं. बंगाल में, 53.8 प्रतिशत उत्तर प्रदेश में, 53.2 प्रतिशत मध्य प्रदेश में और 39.3 प्रतिशत औरतें कर्नाटक में ब्याह दी जाती हैं। जम्मू–कश्मीर में यह प्रतिशत सबसे कम 3.4 है। इसके बाद हिमाचल प्रदेश में यह 3.5 प्रतिशत और गोआ में यह 4.1 प्रतिशत है। केरल में उच्च साक्षरता दर के बावजूद दस में से एक औरत का विवाह 18 वर्ष की कानूनी उम्र होने के पूर्व हो जाता है।[143]

बहुत सी लड़कियों के लिए विवाह भय और अनिश्चितता से भरा होता है : लड़कियों की जानकारी एवं सहमति के बगैर उनके विवाह के बारे में निर्णय ले लिए जाते हैं और उनकी शादी तय हो जाने की सूचना भी उन्हें बहुत देर से दी जाती है। कई बार शादी के दिन से एक दिन पूर्व ही उन्हें बताया जाता है। विवाह की रस्म के बाद विवाहित लड़की को उसके पति के घर भेज दिया जाता है जो कई बार दूसरे गांव में, जो परिवार और जाने–पहचाने वातावरण से बहुत दूर होता है, जहां उन पर बच्चे पैदा करने का दबाव होता है। आमतौर पर वे शादी के बाद के अपने पहले यौन संबंध को अरुचिपूर्ण या दर्दनाक मानती हैं और कई बार इसे बलपूर्वक बनाया गया संबंध बताती हैं।[144]

लड़कियों के लिये एकाकीकरण तथा बलहीनता भी अन्य अतिरिक्त समस्याएं हैं। युवा पत्नियों को बहुत कम स्वतंत्रता या घूमने की बहुत कम छूट मिलती है। स्वास्थ्य केन्द्रों की दूरी, खर्च और इन सबके लिये पति या ससुराल वालों की इजाजत जैसी समस्याओं के कारण उन्हें समुचित स्वास्थ्य सुविधायें नहीं मिल पाती हैं। ऐसे में उनके किशोरावस्था में गर्भवती होने पर प्रसव संबंधी मौत का खतरा बढ़ जाता है।[145] बाल विवाह के कारण लड़कियों की शिक्षा के अधिकार का हनन होता है तथा उन्हें पूर्ण रूप से विकसित होने का अवसर नहीं मिलता। किशोरावस्था में ब्याही गई लड़कियां बच्चे पैदा करने अथवा गर्भनिरोधकों के इस्तेमाल

139 चाइल्ड प्रोटेक्शन इंफॉर्मेशन शीट, चाइल्ड मैरिज, द स्टेट ऑव द वर्ल्ड्स चिल्ड्रन 2006, यूनिसेफ, न्यूयॉर्क, 2005, पृष्ठ 131

140 www.unfpa.org/swp/2005/english/notes/page5.htm#90

141 यूएनएड्स, यूनिसेफ एंड डब्ल्यूएचओ, यंग पीपुल एंड एचआईवी/एड्स: ऑपर्चुनिटी इन क्राइसिस; पॉपुलेशन डिवीजन 2000. वर्ल्ड पॉपुलेशन प्रास्पेक्ट्स, द 2000 रिवीजन. न्यूयॉर्क : यूनाइटेड नेशन्स http://www.unfpa.org/swp/2005/presskit/factsheets/facts_child_marriage.htm#ftn4

142 http://www.yrshr.org/yrshr_news.asp?id=4

143 चाइल्ड मैरिजेज एंड द लॉज इन इंडिया, "चाइल्ड मैरिज मीन्स चाइल्ड लेबर फॉर डॉटर्स, सुधा रामाचन्द्रन द्वारा, http://www.panos.org.uk/news-features/featuredetails.asp?id=1002

144 www.unfpa.org/swp/2005/english/notes/page5.htm#93

145 स्टेट ऑव द वर्ल्ड पॉपुलेशन 2005, यूएनएफपीए

के बारे में फैसला करने में सक्षम नहीं होतीं और जिसका असर जन्म लेने वाले नवजात शिशु के स्वास्थ्य और उनके जीवित रहने की संभावना पर पड़ता है, प्रसव संबंधी मौत, एचआईवी संक्रमण और ज्यादा बच्चों के जन्म की संभावना बढ़ जाती है और उनकी गरीबी और बढ़ती है।[146] अध्ययनों से पता चलता है कि विवाह एवं गर्भधारण को कम से कम 5 वर्ष के लिये टाले जाने पर प्रजनन दर कम हो जाती है और सभी परिवारों की गरीबी को कम करने की संभावना बढ़ती है।[147] एचआईवी संक्रमण की रोकथाम में मिली कामयाबियों तथा इस महामारी के उपचार की बढ़ती सुलभता के बावजूद यह महामारी युवा महिलाओं में बढ़ती ही जा रही है। आम धारणा है कि (यहां तक की नीति निर्धारकों और समुदायों में भी) विवाह लड़कियों को एचआईवी संक्रमण से बचाता है और यही मान्यता बाल विवाह प्रथा को और बढ़ावा देती है।[148] बाल विवाह के कारणों में एक प्रमुख कारण गरीबी भी है। जहां गरीबी बहुत अधिक है वहां लड़कियां बोझ मानी जाती हैं और उससे जल्द से जल्द मुक्ति पाना परिवार के लिये जीवन निर्वहन की रणनीति बन जाती है।[149] बाल विवाह के पक्ष में एक और तर्क जो अक्सर दिया जाता है वह यह है कि विवाह पर–पुरुषों से लड़कियों की रक्षा करता है और जब कोई लड़की ब्याह दी जाती है तो अन्य पुरुष उसे अपने लिये नहीं बल्कि उसे दूसरे की संपत्ति मानते हैं। यह आम धारणा है कोई लड़की विवाह के बगैर जवान हो जाये तो वह यौन शोषण का शिकार बन सकती है।[150]

शिक्षा के क्षेत्र में भारत क्या कर रहा है

भारत में नाको ने छात्र एड्स शैक्षणिक कार्यक्रम (एसएइपी) कार्यान्वित किया है। इस कार्यक्रम में शिक्षकों एवं छात्र प्रतिनिधियों का प्रशिक्षण, नाटक, वाद–विवाद, परिचर्चा आदि शामिल हैं। इससे छात्रों में जागरूकता का स्तर बढ़ा है, अपने सहपाठियों के दबाव का विरोध करने तथा सुरक्षित और जिम्मेदार जीवन शैली विकसित करने में सहायता मिली है।[151]

अंत में हमें यह स्वीकार करना होगा कि बहुत लंबे समय तक बच्चों की जरूरतों एवं इच्छाओं की अनदेखी की गयी है। ये बच्चे ही भावी पीढ़ी हैं, जिन्हें मशाल को आगे ले जाना है और एचआईवी/एड्स जैसे अनेक ख़तरों से जूझ रहे समाज एवं देश की जिम्मेदारियों को संभालना है। अगर विश्व भर से इस महामारी को समाप्त करने के लिये विश्वव्यापी प्रयास किये जायें तो विशेषज्ञों की राय में सभी पहलुओं पर एक साथ विचार करना होगा, सूक्ष्म सामाजिक–आर्थिक स्थितियों एवं वातावरण पर विशेष ध्यान देना होगा, गरीबी को बढ़ाने वाले विभिन्न मुद्दों को समझना होगा और दीर्घकालिक उपाय ढूंढने के लिये सभी स्तरों पर काम शुरू करना होगा। बच्चों को सुरक्षित रखने वाले उपचार, तथा संक्रमित बच्चों के जीवन में कुछ और साल जोड़ने में सहायक दवाइयां एवं आहार नई पीढ़ी के लिए उम्मीद जगाने तथा परिवारों को अक्षुण्ण एवं एकजुट रखने की दिशा में पहला कदम साबित हो सकते हैं। नए टीकों के विकास की कोशिश विकासशील देशों में कई मरीजों के लिये आशा की किरण साबित हो सकती है। अतीत को कभी मिटाया नहीं जा सकता है – अनाथ, परित्यक्त, कलंकित और प्रताड़ित होने वाले बच्चों की पीड़ा भुलायी नहीं जा सकती है। लेकिन इसी अतीत ने पूरे विश्व के बच्चों को विभिन्न संसाधनों एवं उपायों के जरिये सुरक्षित रखने की जिम्मेदारी दी है, ताकि हमारे भविष्य के सबसे कीमती धरोहर – हमारे बच्चों को सुरक्षित किया जा सके।

146 वही

147 http://www.americansforunfpa.org/site/c.enKMIRNpEkG/b:1215605/k.8D1D/Child_Marriage.htm

148 http://www.content.ippf.org/output/ORG/files/14774.pdf page12

149 अर्ली मैरिज चाइल्ड स्पाउजेज, इनोसेंटी डायजेस्ट नं. 7– मार्च 2001; http://www.unicef/icdc.org/publications/pdf/digest7e.pdf.

150 वही

151 एवर्ट; "एचआईवी एंड एड्स इन इंडिया"; 29/6/2006; http://www.avert.org/aidsindia.htm

एचआईवी/एड्स से प्रभावित बच्चों से संबंधित विभिन्न मुद्दों को समझने के लिए निम्न दस्तावेज उपयोगी हैं।[152]

उप–सहारा अफ्रीका, जहां एचआईवी/एड्स की महामारी सबसे गंभीर है, ये समुदाय उन बच्चों की देखभाल की जिम्मेदारी लेता है जिन्होंने अपने मां–बाप या संरक्षकों को खो दिया है। लेकिन यह पारंपरिक सुरक्षा व्यवस्था एचआईवी/एड्स संकट के दबाव में आकर टूट रही है। ज्यादा से ज्यादा संख्या में अनाथ हो रहे बच्चे ही घर–परिवार की जिम्मेदारी संभालने को मजबूर हैं। स्वाजीलैंड में 10 में से एक घर अनाथ बच्चों द्वारा चलाया जा रहा है। अनेक बच्चों का जीवन सड़कों पर खत्म हो जाता है। एक अनुमान के अनुसार 2010 तक 12 अफ्रीकी देशों में 15 वर्ष से कम उम्र के 15 प्रतिशत बच्चे अनाथ होंगे।

स्रोत : यूनिसेफ

152 यूनिसेफ एंड यूएन एड्स; नेशनल कंसल्टेशन ऑन चिल्ड्रन अफेक्टेड ऑर वल्नरेबल टु एचआईवी /एड्सः द फ्रेमवर्क फॉर द प्रोटेक्शन, केयर एंड सपोर्ट ऑव ऑर्फन्स एंड वल्नरेबल चिल्ड्रन इन अ वर्ल्ड विद एचआईवी एंड एड्स

10

कैदी एवं एचआईवी

यदि एचआईवी/एड्स की महामारी दुनिया भर में खतरनाक तरीके से बढ़ रही है, तो कारागारों में यह और भी तेजी से पनप रही है। नशीले पदार्थों का सेवन, भीड़–भाड़, असुरक्षित सेक्स, कारागारों में बलात्कार, हिंसा, स्वच्छता की खस्ता हालत, टैटू गुदवाना, रक्त संबंध और अन्य कई कारक एचआईवी के लगातार प्रसार के लिए कारागारों में अनुकूल स्थितियां मुहैया कराते हैं।[1] केवल उच्च आयवर्ग वाले देशों में ही कारागारों में एचआईवी/एड्स के प्रसार के बारे में विश्वसनीय आंकड़े उपलब्ध हैं। इनके मुताबिक वहां 10 से 25 प्रतिशत कैदियों में इसका संक्रमण पाया गया, जो राष्ट्रीय औसत से बहुत ज्यादा है।[2] प्रमाणों से संकेत मिलता है कि कारागारों में एचआईवी/एड्स की दर के मामले में विकासशील अर्थव्यवस्थाओं में काफी विभिन्नतायें हैं, लेकिन वहां भी आम जनता के मुकाबले कारागारों में एचआईवी/एड्स के मामले हमेशा ज्यादा मिलते हैं। कारागारों में एचआईवी की मौजूदगी के बारे में वर्तमान आंकड़े इन दावों की पुष्टि करते हैं, जैसा कि नीचे दिया गया है[3]:

- दक्षिण अफ्रीका : 40 प्रतिशत
- पुर्तगाल : 20 प्रतिशत
- स्पेन : 16 प्रतिशत
- ब्राजील : 10.9–21.5 प्रतिशत
- लिथुआनिया : 15 प्रतिशत
- स्विट्जरलैंड : 4–12 प्रतिशत
- इटली : 7 प्रतिशत
- यूक्रेन : 7 प्रतिशत
- होंडुरास : 7 प्रतिशत
- अमेरिका : 1–15 प्रतिशत से ज्यादा

अनुसंधान बताते हैं कि एचआईवी/एड्स से पीड़ित यदि ज्यादातर नहीं तो भी कई व्यक्ति अपनी रिहाई से पहले कारागारों में ही इस वायरस से संक्रमित हुए थे। इस बात की पुष्टि इस तथ्य से भी होती है कि ज्यादातर बंदी एचआईवी के जबरदस्त संक्रमण वाले समुदायों जैसे नसों के जरिए (इंट्रावेनस) नशीले

---

1 प्रिजन्स एंड एड्स, यूएनएड्स बेस्ट प्रैक्टिस कलेक्शन, जॉइंट यूनाइटेड नेशंस प्रोग्राम ऑन एचआईवी/एड्स, पृष्ठ 3, अप्रैल 1997

2 प्रिजनर्स हेल्थ एंड ह्यूमन राइट्स इन द एचआईवी/एड्स पैन्डेमिक, ड्राफ्ट बैकग्राउंड पेपर फॉर ह्यूमन राइट्स ऐट द मार्जिंस: एचआईवी/एड्स, प्रिजनर्स, ड्रग यूजर्स एंड द लॉ। कनाडियन एचआईवी/एड्स लीगल नेटवर्क, पृष्ठ 6 जुलाई 2004

3 एचआईवी/एड्स एंड हेपेटाइटिस सी इन प्रिजंस एट 2

पदार्थ लेने वाले (आईडीयू) और गरीब देशों से आते हैं।[4] एचआईवी की बढ़ती महामारी के साथ ही क्षय रोग, सिफिलिस और वायरल हेपेटाइटिस खासतौर पर हेपेटाइटिस 'सी' के मामले भी लगातार बढ़ रहे हैं।[5] हेपेटाइटिस 'सी' की दर तो आमतौर पर एचआईवी से भी अधिक होती है, जैसे भारत में 4.2 प्रतिशत और स्पेन के कुछ कारागारों में 92 प्रतिशत।[6] कुछ रिपोर्टों के अनुसार तो क्षय रोग के मामले कारागारों में आम जनता के मुकाबले 100 गुना ज्यादा होते हैं।[7] इन रोगों के संक्रमण में आसानी के कारण कारागारों में एचआईवी के संक्रमण और एचआईवी से संबंधित जटिलताओं के खतरे भी बढ़ जाते हैं।

कारागारों में महामारी के मुख्य कारण

कारागार के जीवन में एचआईवी संक्रमण के खतरे नशीले पदार्थों के इस्तेमाल, हिंसा, यौन तनाव और यौन आक्रामकता के कारण और भी बढ़ जाते हैं। ये तमाम गतिविधियां भय और ऊब के माहौल से मुक्ति दिलाती हैं। नसों के जरिए नशीले पदार्थों का इस्तेमाल कारागारों में खतरे का प्राथमिक कारण है। रूसी अध्ययनों के अनुसार बंदियों में 20 प्रतिशत ने कारागार में रहते समय नसों के जरिए नशे का इस्तेमाल किया और उनमें 64 प्रतिशत ने नशा लेने के लिए उसी उपकरण का इस्तेमाल किया जिसे पहले कोई और प्रयोग कर चुका था। मेक्सिको की जेलों के अध्ययन में नसों के जरिए नशे के इस्तेमाल की दर 24–37 प्रतिशत बतायी गयी है।[8]

नसों के जरिए इंट्रावेनस (अंतः–शिरा) नशीले पदार्थ लेने को कारागारों में संक्रमण का प्राथमिक माध्यम बनाने के पीछे दो मुख्य कारक हैं। पहला, इंट्रावेनस नशे के इस्तेमाल से संक्रमण का खतरा सबसे अधिक होता है, क्योंकि रक्त प्रवाह से खून सीधे सिरिंज में लिया जाता है और उसे वापस शरीर में प्रविष्ट करा दिया जाता है। नशे के इस्तेमाल से संक्रमण के प्रसार की व्यापकता के बारे में बताते हुए रिपोर्ट कहती हैं कि 40–60 प्रतिशत आईडीयू हेपेटाइटिस 'बी' और 60–70 प्रतिशत हेपेटाइटिस 'सी' से पीड़ित होते हैं।[9] दूसरा कारक नशे के खिलाफ वैश्विक युद्ध है, जिसका मतलब नशे के इस्तेमाल और नशीले पदार्थ रखने की गतिविधियों का अपराधीकरण है। दुनिया भर में नशीले पदार्थों के अपराधीकरण से खासतौर पर नशेड़ियों और नशे की आपूर्ति करने वालों को बंदी बनाये जाने के मामले बढ़े हैं, जिनके कारण जेलों में खतरनाक आईडीयू की भीड़ बढ़ी है और कारागारों में एचआईवी संक्रमण भी बढ़ा है।[10] एक बार जेल के अंदर जाने के बाद नशे से संबंधित नीतियां अक्सर कैदियों के पुनर्वास में बाधा पैदा करती हैं और इंजेक्शन का इस्तेमाल करते समय कैदी एहतियात भी नहीं बरत पाते। रिपोर्टों के अनुसार कैदी अक्सर कठोर प्लास्टिक और बॉलपेन के प्वायंट की मदद से अपने आप सिरिंज बना लेते हैं, जिससे संक्रमण और चोट के खतरे बढ़ जाते हैं।[11] मौजूदा नशा संबंधी नीतियां और कारागारों की स्थिति एचआईवी/एड्स की महामारी के मामले में अवांछित हैं। आईडीयू संक्रमण और नशे के इस्तेमाल के अपराधीकरण की व्यापकता वाले क्षेत्रों में अध्ययनों से पता चला है कि एचआईवी पीड़ित व्यक्तियों में से बहुतों को यह संक्रमण कारागारों में ही हुआ। उदाहरण के लिए आयरलैंड के एक अध्ययन के अनुसार देश में एचआईवी/एड्स से पीड़ित 20 से 30 प्रतिशत व्यक्तियों में

4 प्रिजंस एंड एड्स एट 2

5 प्रिजंस एंड एड्स; एट 2, एचआईवी/एड्स एंड हेपेटाइटिस सी इन प्रिजन्सः इन प्रिजंसः द फैक्ट्स। कनाडियन एचआईवी/एड्स लीगल नेटवर्क, पृष्ठ 2, 2004–05

6 एचआईवी/एड्स एंड हेपेटाइटिस सी इन प्रिजंस एट 2

7 प्रिजनर्स हेल्थ एंड ह्यूमन राइट्स एट 9

8 एचआईवी/एड्स इन प्रिजंसः हाइ–रिस्क बिहेवियर बिहाइंड बार; कनाडियन एचआईवी/एड्स लीगल नेटवर्क, पृष्ठ 2, 2004–05

9 ग्लोरिया जे. बैसाइविच, एमडी, इंजेक्टिंग ड्रग यूज, रोचेस्टर विश्वविद्यालय, जून 2006, http://www.emedicine.com/med/topic586.htm

10 प्रिजनर्स हेल्थ एंड ह्यूमन राइट्स एट 8

11 प्रिजनर्स हेल्थ एंड ह्यूमन राइट्स एट 7

इस संक्रमण का जिम्मेदार कारागार तंत्र ही है। कारागारों में संक्रमण के प्रसार की ऊंची दर और खतरनाक व्यवहार के कारण वहां एचआईवी/एड्स से पीड़ित व्यक्तियों की संख्या ज्यादा होने से एचआईवी के संक्रमण का खतरा भी बढ़ जाता है।

कारागारों में सेक्स हालांकि इंट्रावेनस नशे की तरह घातक नहीं है, फिर भी एचआईवी के प्रसार में इसका भी बड़ा हाथ है क्योंकि वहां समुचित एहतियात नहीं बरते जाने और गुदा मैथुन तथा सहमति के बिना सेक्स जैसी गतिविधियां ज्यादा होती हैं। कारागारों में यौन संपर्क की दर एक जैसी नहीं है और प्रत्येक कारागार तथा प्रत्येक देश में इसकी दर अलग–अलग है। एक रूसी सर्वेक्षण के मुताबिक 85 से 90 प्रतिशत कैदियों ने कारागारों में यौन संबंध बनाये थे। ब्राजील के एक अध्ययन के अनुसार 70 प्रतिशत से अधिक पुरुष बंदी अन्य पुरुष बंदियों के साथ यौन संबंधों में लिप्त थे, जबकि कनाडा और जाम्बिया के कुछ अध्ययनों में पुरुषों के बीच गुदा मैथुन के मामलों की दर 10 प्रतिशत से भी कम थी।[12] कारागार के पुरुष कर्मचारियों और महिला बंदियों के बीच यौन संबंधों का भी एक पहलू है। हालांकि इसके आंकड़े उपलब्ध नहीं हैं, लेकिन इससे एचआईवी संक्रमण का प्रसार कारागार के बाहर होने की आशंका भी बनी रहती है। यह समस्या उन देशों में विकराल रूप धारण कर चुकी है जहां समलैंगिक सहवास और इंट्रावेनस नशे का अपराधीकरण हो चुका है। ऐसी परिस्थितियों में कंडोम के इस्तेमाल अथवा साफ सुइयों के इस्तेमाल की उम्मीद खत्म हो जाती है और सरकारी कानूनों की वजह से कारावास नीति में फेर–बदल नहीं किया जाता हैं।[13] परिणामस्वरूप संक्रमण की अधिक आशंका वाले कैदियों में संक्रमण की अधिक दर के कारण कारागार में इंट्रावेनस नशे और सेक्स की कम दर का फायदा नहीं मिल पाता है।

कई अन्य कारक भी कारागारों में एचआईवी/एड्स की ऊंची दर में योगदान करते हैं, हालांकि वे इंट्रावेनस नशे और सेक्स के मुकाबले काफी कम महत्व वाले होते हैं। इनमें से एक कारक कारागारों में टैटू गुदवाना है, जो असुरक्षित और कामचलाऊ तरीके से किया जाता है। कनाडा में एक अध्ययन के अनुसार वहां की जेलों में 45 प्रतिशत तक कैदियों ने बंदी रहते हुए ही टैटू गुदवाये।[14] एक अन्य बड़ा कारण एचआईवी के बारे में जानकारी, शिक्षा, रोकथाम के तरीकों और समुचित चिकित्सकीय देखभाल का अभाव है। यदि यौन संबंधों से होने वाले संक्रमण जैसे सिफिलिस, गोनोरिया और हर्पीज को इलाज के बिना ही छोड़ दिया जाता है तो कैदियों में एचआईवी के संक्रमण की आशंका बढ़ जाती है, चाहे वह संक्रमित द्रव्य की मौजूदगी के कारण हो अथवा खुले हुए घावों के कारण। सिद्धांत रूप में कारागारों में हिंसा से भी एचआईवी संक्रमण हो सकता है, हालांकि इस बारे में ठीक से आंकड़े इकट्ठा नहीं किये गये हैं। कारागारों में भीड़–भाड़ बढ़ने से भी तनाव और हिंसा बढ़ती है, जिससे मौजूदा समस्याएं भीषण होती जाती हैं।

संक्रमण के मसले के अलावा कारागारों में आमतौर पर स्वास्थ्य की खस्ता सेवाओं के कारण भी एचआईवी से संबंधित बीमारी की घटनाओं में बढ़ोत्तरी होती है। कारागारों में आमतौर पर आधारभूत ढ़ांचा ही नहीं होता, कोठरियों में जरूरत से ज्यादा भीड़ होती है, पोषण नहीं मिलता, चिकित्सा की सुविधा नहीं होती और स्वच्छता तो सपना ही होती है। उसके अलावा आपराधिक गतिविधियों और कैद से जुड़े सामाजिक–आर्थिक कारण भी संक्रमण, खासतौर पर यौन संक्रमण, हेपेटाइटिस और क्षय रोग के प्रसार के खतरे से जुड़े होते हैं। कोठरियों में भीड़–भाड़, कम पोषण और रहने के अयोग्य हालात में संक्रमण लगातार बने रहने से कारागारों में एचआईवी/एड्स पीड़ितों के स्वास्थ्य के लिए खतरे और भी बढ़ जाते हैं।

सर्वाधिक विकसित अर्थव्यवस्थाओं में भी कारागार व्यवस्थाएं क्षय रोग, हेपेटाइटिस 'सी' और एचआईवी के खिलाफ जंग हार रही हैं। समय से रोग की देखभाल और पहचान तथा कैदियों के लिए समुचित उपचार

12 हाइ रिस्क बिहेवियर्स बिहाइंड बार्स एट 2; प्रिजंस एंड एड्स एट 1
13 प्रिजंस एंड एड्स एट 2
14 हाइ रिस्क बिहेवियर्स बिहाइंड बार्स एट 2

तथा औषधियों के अभाव में हालात और भी बिगड़ रहे हैं। उदाहरण के लिए अमरीकी कारागारों में उपचार नाकाम रहने से क्षय रोग के कई ऐसे विषाणु पैदा हो गये जिन पर दवायें काम नहीं करतीं और इस कारण कैदियों में क्षय रोग के मामले राष्ट्रीय औसत से 20 गुना ज्यादा हो गये हैं। एचआईवी और हेपेटाइटिस 'सी' जैसे संक्रमणों में चिकित्सा विशेषज्ञता, उपचार संबंधी जागरूकता और व्यापक संसाधनों की भी जरूरत होती है और कारागारों में इनमें से कुछ भी उपलब्ध नहीं है। कुल मिलाकर कारागार व्यवस्था में एचआईवी के पूर्ण जीवन चक्र की पूरी संभावना होती है : कारागार की स्थितियां एचआईवी के संक्रमण की ऊंची दर सुनिश्चित करती हैं, उनसे एचआईवी संबंधित रोग बार–बार होते हैं और स्थिति बेहतर करने के लिए जरूरी स्वास्थ्य सेवा भी वहां नहीं होती है। आरंभ से अंत तक कारागार की स्थितियां और नीतियां एचआईवी संक्रमण तथा महामारी को बढ़ावा देती हैं।

कारागार व्यवस्था में एचआईवी के प्रभाव

कारागार व्यवस्था में एचआईवी संक्रमण की मौजूदगी का एचआईवी संक्रमित कैदियों, अन्य कैदियों तथा आम जनता पर खासा प्रभाव पड़ता है। मानवाधिकारों के लिहाज से सबसे बड़ा दुष्प्रभाव कारागार में बंद एचआईवी/एड्स पीड़ितों की गरिमा पर पड़ता है। बंदियों के स्वास्थ्य की बात की जाये तो गंदगी, पर्याप्त चिकित्सा सुविधाओं की कमी, कैदियों के स्वास्थ्य की अनदेखी, भीड़–भाड़ और आसानी से फैलने वाले संक्रमणों की मौजूदगी से एचआईवी/एड्स पीड़ित बंदियों के लिए हालात दुश्वार हो जाते हैं। संक्रमण के कारण एचआईवी विषाणु के दोबारा सक्रिय होने और दोबारा संक्रमण के संपर्क में आने पर बीमारियां फिर उभर आती हैं और रोग प्रतिरोधक क्षमता कमजोर हो जाती है, जिसके कारण स्वास्थ्य बेहद खराब हो जाता है और कैदी को जरूरी देखभाल नहीं मिल पाती। संक्रमण मुक्त कैदियों के मामले में भी एचआईवी से जुड़े हुए संक्रमणों जैसे क्षय रोग और हेपेटाइटिस का समूचे कैदियों पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ सकता है। मूलभूत मानवीय गरिमा इससे खतरे में पड़ती है।

इसका और भी बड़ा दुष्प्रभाव यह है कि कारागार भी समुदाय का हिस्सा होते हैं। आमतौर पर धारणा है कि समाज से दूर चारदीवारी में बंद किये गये अपराधियों की कोई देखभाल नहीं होनी चाहिये और कैदी के जीवन का समुदाय के जीवन से कोई संबंध नहीं होता। वास्तविकता यह है कि कुछ कैदी ही अपना पूरा जीवन कारागार में बिताते हैं, जबकि ज्यादातर कैदियों को कभी न कभी रिहा कर समुदाय में भेज दिया जाता है। आंकड़े और उदाहरण बताते हैं कि कई कैदी नियमित अंतराल पर पकड़े और रिहा किये जाते हैं, जिससे वे कैदियों और आम आबादी के लगातार संपर्क में रहते हैं। वास्तव में ज्यादातर कैदी आमतौर पर साल भर के अंदर ही समाज की मुख्यधारा में लौट आते हैं। आधुनिक कैदियों की संख्या बढ़ने के कारण ही आम जनता के लिए भी खतरा काफी बढ़ गया है। चूंकि नशे से संबंधित छोटे–मोटे अपराधों में बार–बार और कम अवधि के लिए सजा होती है इसलिए कैदियों में इंट्रावेनस नशे का इस्तेमाल करने वालों की संख्या ज्यादा होती है। कारागारों में मानवाधिकारों की रक्षा और अपराधों पर नियंत्रण बढ़ाने के लिए कारागारों में एचआईवी/एड्स की समस्या से निपटना ही चाहिये।

एचआईवी/एड्स कारागार नीति और कानून : अंतर्राष्ट्रीय परिदृश्य

व्यापक कारागार सुधार बेहद व्यापक और जटिल मसला है और इस पुस्तक के संदर्भ में इस पर चर्चा करना भी कठिन है। इसमें विभिन्न मुद्दे जैसे पोषण, हिंसा, भ्रष्टाचार, भीड़–भाड़ और कारागार में हिंसा/बलात्कार शामिल हैं, जो संसाधनों की कमी, राजनीतिक प्राथमिकताओं और आंतरिक नीतियों के कारण अक्सर अनछुए ही रह जाते हैं। इन मुद्दों का हालांकि एचआईवी/एड्स पर प्रभाव होता है और इन पर निर्णयात्मक कार्रवाई

की जरूरत है, लेकिन वे हमारी मौजूदा पहुंच से बाहर हैं। कारागारों में चूंकि एचआईवी/एड्स की बढ़ती समस्या को ज्यादा बड़ी समस्या का संकेत माना जा सकता है, इसलिए यह चर्चा एचआईवी से संबंधित मसलों पर सीमिति रहेगी, जिन पर बड़े उद्देश्यों और नीतियों को किनारे रखकर कानूनी कार्रवाई करने से काफी प्रभाव पड़ सकता है। इसलिए प्राथमिक ध्यान बंदियों को मौलिक मानवाधिकार मुहैया कराने के लिए जरूरी सुधारात्मक उपायों पर केंद्रित रहेगा।

संक्रमण में कमी

एचआईवी संक्रमण के सीमित माध्यमों के कारण कारागारों में एचआईवी की रोकथाम न केवल संभव है, बल्कि सफल भी साबित हुई है। कंडोम और स्वच्छ सुई कार्यक्रम जरूर चलाने चाहिये क्योंकि वे सुरक्षा की पहली दीवार हैं और इस दिशा में पहला कदम भी। उसके बाद एचआईवी संबंधित शिक्षा और जानकारी बढ़ाने की भी जरूरत है, इसके साथ आईडीयू के लिए पुनर्वास कार्यक्रम भी बेहतर किया जाना चाहिये। संक्रमण के तरीकों और खतरनाक व्यवहार के कारण विशेषतौर पर एचआईवी शिक्षा के कारागार में स्पष्ट लाभ हैं। सक्षम शिक्षक के द्वारा विकसित और क्रियान्वित होने पर यह शिक्षा सर्वाधिक प्रभावी होती है। लेकिन इसमें एक बड़ी बाधा है : एचआईवी की रोकथाम करने वाली तकनीकों के प्रभावी इस्तेमाल के लिए यौनेच्छा और नशे की आदत खत्म करने वाली कुछ अनखोजी तकनीकों अथवा स्वच्छ सुई और कंडोम अभियानों के क्रियान्वयन की जरूरत है।

इंट्रावेनस नशे का इस्तेमाल करने वाले (आईडीयूएस)

सकारात्मक परिणामों के लिए दुनिया भर के कई कारागारों में स्वच्छ सुई कार्यक्रम चलाये गये हैं। स्विट्जरलैंड के एक महिला कारागार में नशे से संबंधित मामलों में सजा काट रही कैदियों के लिए 1994 में स्वच्छ सुई परियोजना चलायी गयी।[15] विभिन्न स्थानों पर साफ सुइयां मुहैया करायी गयीं और प्रत्येक कैदी को केवल एक ही सुई रखने की अनुमति दी गयी। इस प्रकार सुइयों के आदान– प्रदान की बातों की जमकर आलोचना करने वालों के मुंह पर ताला जड़ते हुए वहां नशीले पदार्थों की खपत में बढ़ोत्तरी नहीं हुई और सुइयों का हथियार के तौर पर इस्तेमाल भी नहीं हुआ। इसके बजाय सुइयों का आदान–प्रदान कम हो गया, एचआईवी और हेपेटाइटिस के नये मामले सामने नहीं आये और कारागार में स्वास्थ्य की स्थिति भी सुधर गयी। ये परिणाम आशाजनक थे और इससे कामचलाऊ सुइयों के साझे इस्तेमाल में भी नाटकीय कमी आयी।[16] स्पष्ट तौर पर स्वच्छ और जेल से मिली सुइयों वाले कैदियों को छिपकर सुइयां साझा करने की जरूरत ही महसूस नहीं हुई। सकारात्मक लाभों का अक्सर कारागार कर्मचारी भी समर्थन करते हैं, जिन्हें कोठरियों की तलाशी के दौरान सुइयों से चोट खाने का डर नहीं रह जाता।[17] दूसरे सर्वश्रेष्ठ विकल्प के तौर पर कारागारों में सुइयों को संक्रमण मुक्त अथवा विसंक्रमित करने के लिए ब्लीच भी उपलब्ध कराया जा सकता है। लेकिन ब्लीच से सुइयां विसंक्रमित करने के लिए तैयारी, समय और उचित तरीका अपनाने की जरूरत होती है, इसलिए यह कम प्रभावी होता है।[18] कारागारों में संक्रमण का प्राथमिक माध्यम होने के कारण वहां विसंक्रमित सुइयों की उपलब्धता और नशे के इस्तेमाल में कमी को प्राथमिकता दी जानी चाहिये।

स्वच्छ सुई और ब्लीच कार्यक्रमों का एक विकल्प आईडीयू के लिए पुनर्वास कार्यक्रम है। शानदार सफलता वाला एक तरीका मीथेडोन उपचार[19] है, जिसका इस्तेमाल अफीम के नशे के उपचार में किया जाता है।

15 प्रिजंस एंड एड्स एट 5
16 प्रिजंस एंड एड्स एट 3
17 एचआईवी/एड्स इन प्रिजंस: प्रिवेंशन: स्टेराइल नीडल्स, कनाडियन एचआईवी/ एड्स लीगल नेटवर्क, पृष्ठ 3, 2004–05
18 एचआईवी/एड्स इन प्रिजंस: प्रिवेंशन: ब्लीच, कनाडियन एचआईवी/एड्स लीगल नेटवर्क, पृष्ठ 3, 2004–05
19 मीथेडोन फैक्टशीट, एक्जिक्यूटिव ऑफिस ऑव द प्रेसिडेंट ऑफिस ऑव नेशनल ड्रग कंट्रोल पॉलिसी। अप्रैल 2000, http://www.whitehousdrugpolicy.gov

मीथेडोन को दिन में एक बार लिया जाता है और वह 24 से 36 घंटों के लिए हेरोइन/अफीम की तलब मिटा देता है। इसमें मुश्किल यह है कि मीथेडोन एक मायने में अफीम के नशे की ही तरह है। इसलिए नशे की आदत कम करने के लिए लगातार और समुचित देखभाल के साथ इसका इस्तेमाल होना चाहिये। उपचार की सफलता सुनिश्चित करने के लिए उपचार के दौरान और उसके बाद मनो–सामाजिक समर्थन तथा पुनर्वास सेवाओं की जरूरत पड़ती है। इस प्रकार कारागारों में इंट्रावेनस नशे के इस्तेमाल और नशे से संबंधित अपराधों को रोकने में यह रवैया कारगर साबित हो सकता है। ऑस्ट्रेलिया और कनाडा में हुए अध्ययन इस निष्कर्ष का समर्थन करते हैं।[20]

कानूनी रूप से, जैसा कि स्ट्राइकिवस्की बनाम मिल्स[21] मामले में कहा जा सकता है कि सिरिंज और मीथेडोन जैसे पुनर्वास कार्यक्रम उपलब्ध कराने से इंकार करना अनिवार्य स्वास्थ्य सेवा मुहैया कराने तथा गैर अनिवार्य स्वास्थ्य सेवा सुलभ कराने में विफलता है, जिसका रिहाई के समय बंदी के पुनर्वास और पुनःएकीकरण पर प्रभाव पड़ेगा।[22] इसके अलावा जिरह में व्यक्ति के जीवन, स्वतंत्रता और सुरक्षा के अधिकार, निर्दयी और असामान्य व्यवहार तथा असामान्य दंड से बचाव के अधिकार और समानता के अधिकार की बात भी कही गयी। कनाडा की नीति का सौभाग्य था और भविष्य के याचियों का दुर्भाग्य था कि इस मामले को अदालत के बाहर निपटाना पड़ा और इस मसले पर कोई ठोस दस्तावेज और फैसला उपलब्ध नहीं है।

कंडोम

दुनिया भर में कई कारागारों में कंडोम कार्यक्रम भी चलाये गये हैं, हालांकि कारागारों में बलात्कार और सेक्स के बारे में आधिकारिक आंकड़ों की कमी के कारण इन कार्यक्रमों की सफलता जानना बहुत मुश्किल है। जबरन सेक्स संबंधों अथवा बलात्कार के समय कंडोम कैदियों को संक्रमण से चाहे न बचा सकें, लेकिन सहमति से सेक्स के समय वे संक्रमण पर काफी प्रभाव डाल सकते हैं। कंडोम, डेंटल डैम और जल आधारित ल्यूब्रिकेंट्स के प्रयोग कम से कम उन कैदियों में संक्रमण की दर कम करने में महत्वपूर्ण हैं जो एहतियात बरतना चाहते हैं। कैदियों के समूहों और याचिकाओं से स्पष्ट पता चलता है कि कैदी कारागार में कंडोम की सुलभता चाहते हैं।

कारागारों में कंडोम के अधिकार की मांग करने वाले दो महत्वपूर्ण मामले ब्रिटेन[23] और ऑस्ट्रेलिया[24] में हुए हैं। दोनों ही मामलों में सरकार पर बहुत जिरह हुई। ब्रिटेन में याची ने कहा कि कारागार में कंडोम की सुविधा नहीं होना यूरोपीय मानवाधिकार संधि के अंतर्गत निजी जीवन के अधिकार का अतिक्रमण है और याची को यौन तरजीह तथा उसके व्यावहारिक परिणामों के सम्मान का अधिकार प्राप्त है, जिसमें यौनत्व की अभिव्यक्ति का अधिकार भी शामिल है। महत्वपूर्ण यह है कि इसमें केंद्रीय मुद्दा स्वास्थ्य का अधिकार और कारागारों में स्वास्थ्य की सुरक्षा के लिए कंडोम की जरूरत था। ऑस्ट्रेलियाई अदालत ने कहा कि कंडोम उपलब्ध कराने से कारागार का इंकार बंदियों की देखभाल के उसके कर्तव्य का उल्लंघन है, इस आधार पर कर्तव्य के प्रति लापरवाही का दावा किया जा सकता है। दुर्भाग्य से इस मामले का गुणदोष के आधार पर निर्णय नहीं किया जा सका और लापरवाही के दावे के बारे में अदालत की टिप्पणी महज टिप्पणी बनकर रह गयी। लेकिन आंशिक रूप से याचिका के कारण ही कारागार ने बाद में कंडोम मुहैया कराने का प्रावधान कर दिया।

20 प्रिजनर्स हेल्थ एंड ह्यूमन राइट्स एट 13

21 स्ट्राइकिवस्की बनाम मिल्स एंड कनाडा (कनाडाई सुधार एवं सुधार सेवा आयुक्त), कनाडा संघीय न्यायालय, अदालती फाइल संख्या टी–389–00 (2000) (कनाडा)

22 कोर्टिंग राइट्स..... 118

23 आर बनाम सेक्रेटरी ऑव स्टेट फॉर द होम डिपार्टमेंट एक्स पार्ट ग्लेन फील्डिंग (1999) ईडब्ल्यूएचसी ऐडमिन 641

24 प्रिजनर्स ए–एक्सएक्स बनाम न्यू साउथ वेल्स प्रशासन, 38 एनएसडब्ल्यूएलआर 622 (1999)

पीडब्ल्यू बनाम दक्षिण अफ्रीका सुधार सेवा विभाग मामले में एचआईवी संक्रमित व्यक्ति के साथ सहमति से यौन संबंध बनाकर संक्रमित हुए बंदी ने कारागार के खिलाफ याचिका दायर की थी। वकील ने कहा कि कंडोम पर प्रतिबंध होने और कारागार में सेक्स के बारे में जागरूकता नहीं होने के कारण बंदी को एचआईवी का संक्रमण हुआ और इस तरह की नीतियां उसकी स्वतंत्रता तथा सुरक्षा के अधिकार, जीवन के अधिकार और मूलभूत मानवीय गरिमा के अनुकूल नहीं हैं। यह मामला अंत में हालांकि बिना अदालती हस्तक्षेप के निपटा दिया गया, लेकिन कारागार पर दबाव डालकर बंदी को मुआवजा दिलाने में और कारागार नीति में बदलाव कर कारागारों में एचआईवी शिक्षा तथा कंडोम का प्रावधान शामिल कराने में वकील सफल रहा।

विभिन्न देशों ने हालांकि कारागारों में कंडोम कार्यक्रम शुरू किये हैं, लेकिन आमतौर पर फैसले न्यायपालिका के दायरे से बाहर प्रशासनिक एवं विधि निर्माता संस्थाओं द्वारा किये जाते हैं। विवाद वाले मामलों में भी नीतियों में बदलाव करने और कंडोम का प्रावधान उसमें शामिल करने के बारे में अंतिम फैसला न्यायपालिका ने नहीं बल्कि स्वयं कारागार ने लिया। हालांकि जीवन के अधिकार, व्यक्तिगत सुरक्षा के अधिकार और अन्य अंतर्राष्ट्रीय मानवाधिकार सिद्धांतों की ओर से सुविधानुसार कई प्रकार के तर्क दिये जा सकते हैं, लेकिन याचिका के अलावा इस संबंध में वकालत के वैकल्पिक मार्ग भी सोचे जाने चाहिये।

रोकथाम संबंधी नीतियों के बारे में की गई उपरोक्त चर्चा विभिन्न देशों में नशे के इस्तेमाल के अपराधीकरण और समलैंगिक सेक्स तथा निजता के मुद्दों की एकदम विरोधाभासी है। नीतिगत दृष्टिकोण से उच्चतम खतरे वाले व्यवहार का अपराधीकरण अक्सर अनुत्पादक होता है और उसमें नशे के सुरक्षित इस्तेमाल तथा सुरक्षित सेक्स की क्षमता कम हो जाती है। दूसरी ओर यह समझना बेहद आवश्यक है कि ज्यादातर तानाशाही प्रतिबंध और निगरानी न तो इंट्रावेनस नशे का इस्तेमाल रोकने में सक्षम साबित हुए हैं और न ही सेक्स को रोकने में सफल हुए हैं। आपराधिक गतिविधियों में कथित सरकारी सहभागिता के पीछे उद्देश्य यह है कि कारावासों में अपरिहार्य, खतरनाक व्यवहार की पहचान करते हुए गैर–कानूनी गतिविधियों को माफ किए बिना ऐसे व्यवहार से होने वाले नुकसान को कम किया जाए। उदाहरण के लिए स्वच्छ सुई कार्यक्रम वाले कारागार अवैध नशीले पदार्थों का इस्तेमाल और वितरण रोकने के लिए हरसंभव उपाय करते हैं, लेकिन कैदियों और कर्मचारियों की सुरक्षा के लिए स्वच्छ सुइयां उपलब्ध कराते हैं। किसी भी आपराधिक वस्तु के इस्तेमाल के तरीकों के बजाय विशेष तौर पर आपराधिक पदार्थों पर ध्यान देने से व्यावहारिक संतुलन प्राप्त किया जा सकता है।

कारागार, एचआईवी और मानवाधिकार कानून

मानवाधिकार कारागार के दरवाजे पर ही खत्म नहीं हो जाते। किसी अपराध के लिए सजा का मतलब अपराधी को मूलभूत गरिमा और मानवता से वंचित करना नहीं होता। वैसे बंदियों के अधिकारों में उपचार की सुलभता, भेदभाव और आव्रजन नीतियों जैसे विभिन्न मानवाधिकार संबंधी मुद्दे शामिल होते हैं। जैसा कि अंतर्राष्ट्रीय मानवाधिकार दस्तावेजों और राष्ट्रीय संविधानों में उल्लिखित है, बंदियों को भी मौलिक स्वतंत्रता तथा मानवीय गरिमा प्राप्त है, हालांकि स्पष्ट कारणों से उन पर कुछ बंदिशें लगायी जाती हैं। बंदियों के लिए मानवाधिकारों पर आवश्यक प्रतिबंध को "सीमित अपवाद"[25] भी कहा जाता है, जिसमें उन्हीं अधिकारों पर अंकुश लगाया जाता है जिन्हें कैद के दौरान प्रतिबंधित किया जाता है, जैसे घूमने अथवा यात्रा करने की आजादी। मानवाधिकारों के सामान्य तौर पर लागू होने वाले स्रोतों के अलावा कुछ खास सिद्धांत भी हैं, जो कैदियों के साथ व्यवहार के मामले में लागू होते हैं और सामान्य तौर पर मौलिक अधिकारों से संबंधित होते हैं, जैसे निर्दयी, अमानवीय अथवा अपमानजनक व्यवहार अथवा सजा।[26]

25 प्रिजनर्स हेल्थ एंड ह्यूमन राइट्स एट 16
26 प्रिजनर्स हेल्थ एंड ह्यूमन राइट्स एट 18

नागरिक एवं राजनीतिक अधिकारों पर अंतर्राष्ट्रीय कोवेनेंट और प्रताड़ना एवं अन्य निर्दयी, अमानवीय अथवा अपमानजनक व्यवहार एवं दंड के विरुद्ध समझौता दो प्राथमिक अंतर्राष्ट्रीय मानवाधिकार दस्तावेज हैं जो प्रताड़ना, निर्दयता, अमानवीय अथवा अपमानजनक व्यवहार या दंड पर रोक लगाते हैं। सीमित अपवाद के अनुसार अधिकारों पर लगने वाले अंकुशों के उलट संयुक्त राष्ट्र अधिकार समिति ने पाया कि कैदी आजादी की कमी के कारण वास्तव में संक्रमण का शिकार होने वाले समूह हैं, जिन्हें राज्य की ओर से सकारात्मक सहायता मिलनी चाहिये।[27] कारागार के हालात से संबंधित अन्य दस्तावेजों में कैदियों के साथ व्यवहार के लिए संयुक्त राष्ट्र के मानक न्यूनतम नियम, किसी भी प्रकार की हिरासत अथवा कैद से सभी व्यक्तियों को बचाने के लिए सिद्धांतावली और बंदियों के साथ व्यवहार के मौलिक सिद्धांत शामिल हैं।[28]

स्वास्थ्य सेवा एवं जीवन यापन की पर्याप्त स्थितियां

जीवन का अधिकार एवं स्वास्थ्य के सर्वोच्च प्राप्य मानदंड का अधिकार पर्याप्त स्वास्थ्य सेवाओं एवं जीवन की परिस्थितियां मुहैया कराने में नाकामी से प्रभावित होते हैं। इसे हालांकि किसी भी न्यायिक संहिता में कानून के तौर पर शामिल नहीं किया गया है लेकिन समता का सिद्धांत कहता है कि कैदियों को भी उसी स्तर की चिकित्सा सुविधा एवं स्वास्थ्य प्राप्त हो जो समुदाय में अन्य लोगों को मिलता है। संसाधनों के मामले में हालांकि गरीब देशों के लिए यह बहुत मुश्किल दिखता है लेकिन समता के सिद्धांत में केवल सबसे मूलभूत मानवाधिकारों की बात होती है और उसके अनुसार सीमित अपवाद से मूलभूत स्वास्थ्य एवं सुरक्षा बाधित नहीं होती हैं। समता का सिद्धांत खासतौर पर एचआईवी/एड्स से पीड़ित व्यक्तियों के लिए महत्वपूर्ण है, क्योंकि कारागार में स्वास्थ्य की स्थितियां समुदाय के मुकाबले बेहद खराब हैं; यदि स्वास्थ्य सेवा और जीवन यापन की परिस्थितियां पर्याप्त रूप से सुलभ न करायी जायें तो भी उन्हें बराबरी पर तो लाना ही चाहिये।

कारागारों में स्वास्थ्य सेवा तथा स्थितियों में सुधार के लिए कानूनी लड़ाई आमतौर पर सफल रही हैं, लेकिन बदलावों का क्रियान्वयन कानूनी जीत के मुताबिक हो ऐसा भी जरूरी नहीं। वान बिल्जन बनाम सुधार सेवा मंत्री[29] मामले में अदालत ने कहा कि दक्षिण अफ्रीकी संविधान और आईसीईएससीआर के अनुच्छेद–12 के अनुसार बंदियों को भी सरकारी खर्च पर चिकित्सा उपचार तथा देखभाल प्राप्त करने का अधिकार है। (चिकित्सा के सरकारी प्रावधान पर अधिक चर्चा के लिए "एंटीरेट्रो वायरल चिकित्सा पद्धति एवं इलाज की सुलभता" देखें)। महत्वपूर्ण बात यह है कि अदालत ने यह पाया कि वादी को बंदी बनाने का मतलब स्वास्थ्य सेवा की जरूरत में कमी नहीं है बल्कि उसने पाया कि कारागार की स्थितियों में ऊंचे मानकों वाली स्वास्थ्य सेवा की जरूरत है। यूबेक बनाम निदेशक, नेशनल मॉडल प्रिजन[30] मामले में भी यही निष्कर्ष निकला, जिसमें कोलंबिया की संवैधानिक अदालत ने निर्णय लिया कि कारागारों में बंद एचआईवी/एड्स पीड़ित व्यक्तियों को भी अन्य व्यक्तियों के समान ही अधिकार प्राप्त हैं। उसने यह भी कहा कि एचआईवी/एड्स की विशिष्ट प्रकृति होने के कारण जीवन, स्वास्थ्य और गरिमा की गारंटी के लिए सरकार की ओर से विशेष सुरक्षा की आवश्यकता होती है।

कारागारों में पर्याप्त स्थितियों और चिकित्सा सुविधाओं के अधिकार पर एक रोचक विविधता डी बनाम ब्रिटेन[31] मामले में दिखी। कारावास की सजा पाने वाले एक विदेशी एचआईवी/एड्स पीड़ित व्यक्ति ने इस मामले में तर्क दिया कि उसे उसके गृहदेश में प्रत्यर्पित नहीं किया जा सकता है, बल्कि उसके स्थान पर उसे ब्रिटेन के कारागार में ही रहने की अनुमति दी जानी चाहिये। यूरोपीय मानवाधिकार अदालत ने मानवाधिकार

27 संयुक्त राष्ट्र मानवाधिकार समिति, आम टिप्पणी 21, पैराग्राफ 3

28 बंदियों के साथ व्यवहार के संबंध में अंतर्राष्ट्रीय मानवाधिकार मानदंड, ह्यूमन राइट्स वॉच, 2006, http://hrw.org/prisons/standards.html

29 वान बिल्जन एवं अन्य बनाम सुधार सेवा मंत्री एवं अन्य (1997) 50 बीएमएलआर 206, उच्च न्यायालय (केप ऑव गुड होप प्रॉविंशियल डिविजन)

30 पेड्रो ओरलैंडो यूबेक बनाम निदेशक, नेशनल मॉडल प्रिजन, कोलंबिया संवैधानिक अदालत, निर्णय संख्या टी–502/94 (1994)

31 डी बनाम ब्रिटेन, 30240/96 (1997) ईसीएचआर 25

एवं मौलिक स्वतंत्रता की रक्षा संबंधी संधि का इस्तेमाल करते हुए कहा कि बंदी के देश सेंट किट्स में चिकित्सा की अच्छी सुविधायें उपलब्ध नहीं हैं, इसलिए उसे ब्रिटेन से बाहर नहीं भेजा जा सकता। यूरोपीय मानवाधिकार अदालत ने प्रताड़ना पर अंतर्राष्ट्रीय नियमों का सहारा लिया और संकेत दिया कि कारागार और स्वास्थ्य सेवा में कमी प्रताड़ना तथा अमानवीय व्यवहार के ही समान होती है।

ज्यादातर मौकों पर स्वास्थ्य सेवा के अधिकार और जीवन के अधिकार के संबंध में बंदियों के अधिकार न्यायपालिका की दूरदर्शिता पर निर्भर करते हैं, जैसा कि पूर्ववर्ती अध्यायों 'एंटीरेट्रो वायरल चिकित्सा पद्धति एवं इलाज की सुलभता' में चर्चा की जा चुकी है। सही मायनों में जब तक अदालतों ने यह नहीं कहा है कि बंदी स्वास्थ्य और जीवन के अधिकार के योग्य नहीं हैं, तब तक कानूनी मामलों में गैर–बंदी मामलों के तर्क काम आ सकते हैं, हालांकि उनमें कुछ बदलाव तो जरूर ही होगा।

अनुकंपा के आधार पर निलंबन

स्वास्थ्य, जीवन और गरिमा के अधिकार से संबंधित एक अन्य दस्तावेज अनुकंपा के आधार पर निलंबन है, जिसके तहत बीमारी, कष्ट अथवा अन्य विशेष स्थितियों के कारण अनुकंपा के आधार पर कारावास की अवधि में कटौती कर दी जाती है। कारावास के दंड को अनुकंपा के आधार पर निलंबित करने के कई कारण हो सकते हैं, जिनमें जरूरी चिकित्सा सेवा मुहैया कराने में कारागार की असमर्थता से लेकर बेहद बीमार व्यक्ति से समाज को खतरा न होना अथवा मानवीय गरिमा और सम्मान के संदर्भ में विशुद्ध मानवीय आधार पर कारावास की अवधि कम करना शामिल हैं। प्रभावित अधिकारों और नियमों में निर्दयी, अमानवीय अथवा अपमानजनक व्यवहार से बचाव का अधिकार और विशेषकर जीवन के अंतिम दिनों में जरूरी देखभाल समेत शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्य के सर्वोच्च स्तर का अधिकार शामिल हैं।[32]

फेफड़ों के भीषण और लाइलाज कैंसर जैसे कई मामलों, जैसे दक्षिण अफ्रीका में स्टैनफील्ड बनाम सुधार सेवा मंत्री[33] मामले, में अनुकंपा के आधार पर निलंबन सफलतापूर्वक प्राप्त किया गया है। गरिमा के साथ मरने के बंदी के अधिकार को सही ठहराते हुए और कारागार में स्वास्थ्य सेवाओं की खस्ता हालत को देखते हुए अदालत ने स्टैनफील्ड की सजा अनुकंपा के आधार पर निलंबित कर दी। लेकिन कारागार में एचआईवी/एड्स से पीड़ित अन्य व्यक्तियों (कुल बंदियों के 41 प्रतिशत तक) पर होने वाले संभावित प्रभाव को ध्यान में रखते हुए अदालत ने ऐसे व्यक्तियों के लिए अनुकंपा के आधार पर सजा कम करने के लिए व्यक्तिगत संदर्भ को आधार बनाया, जिसमें एड्स की बीमारी का अंतिम चरण अर्थात् लाइलाज हालत शामिल थी। लेकिन चिकित्सा, उपचार में आयी प्रगति और एचआईवी/एड्स पीड़ितों की लंबे समय तक जीने की क्षमता, स्वस्थ जीवन तथा कारागार में महामारी की विभीषिका को ध्यान में रखते हुए अदालत ने भविष्य में एचआईवी/एड्स पीड़ित बंदियों के मामलों को स्टैनफील्ड की भीषण स्थिति के समान मानने से इंकार कर दिया और कहा कि इस मामले पर न्यायालय बाद में फैसला दे सकते हैं।

अन्य मामलों में भी समान रुख अपनाया गया, जैसे हांगकांग में कारावास की अवधि में अनुकंपा के आधार पर कटौती का अनुरोध करने वाले दो अलग–अलग मामले अदालत ने खारिज कर दिये।[34] लेकिन हांगकांग की अदालतों ने दो महत्वपूर्ण बातें कहीं। अदालत ने एचआईवी/एड्स से पीड़ित ऐसे व्यक्तियों के लिए अनुकंपा की बात से साफ इंकार कर दिया जिनमें बीमारी के लक्षण नहीं दिखते और जो बीमारी के अंतिम चरण के पास नहीं पहुंचे हैं। इसके अलावा अदालत ने अनुकंपा के आधार पर कारावास के निलंबन की

32 प्रिजनर्स हेल्थ एंड ह्यूमन राइट्स एट 27

33 स्टैनफील्ड बनाम सुधार सेवा मंत्री एवं अन्य (2003) 12 बीसीएलआर 1384 (उच्च न्यायालय – केप ऑव गुड होप प्रॉविंशियल डिविजन)

34 आर बनाम लो ची क्युंग, (1996) 3 एचकेसीए 155; एचकेएसएआर बनाम वास्केज टैरजोना जीसस जुआन, (2001) 941 एचकेसीयू 1

मांग कर रहे अपराधी को हो रहे कष्टों की जांच और संभावित संतुलन परीक्षण का भी संकेत दिया, जिसमें जनहित को देखते हुए संतुलन बनाने की बात है, जैसे अपराध की गंभीरता आदि। हालांकि अदालतों ने आमतौर पर एचआईवी संक्रमित बंदियों के लिए अनुकंपा के आधार पर निलंबन के प्रयासों को खारिज ही किया है, लेकिन इन मामलों में एड्स के अंतिम चरण से जूझ रहे बंदियों के मामले शामिल नहीं है और इसी कारण भविष्य में अलग–अलग मामलों के आधार पर फैसला देने का विकल्प खुला हुआ है।

भेदभाव एवं अलगाव

कारागारों में भेदभाव वाले व्यवहार जैसे एचआईवी/एड्स पीड़ित बंदियों को जबर्दस्ती अलग करना अथवा एकांत में रखना आदि ऐसी बातें हैं जो समुदाय की व्यवस्था में नहीं दिखतीं क्योंकि वहां अलगाव अथवा एकांत में रखना अधिकारों का अन्यायपूर्ण उल्लंघन होता है। उदाहरण के लिए कोई बंदी अपने स्वास्थ्य को ध्यान में रखते हुए स्वयं को अलग–थलग रखने की मांग कर सकता है, लेकिन जबर्दस्ती अलग करना भेदभाव से बचाव के उसके अधिकार, समानता के अधिकार और सम्मान तथा गरिमापूर्ण व्यवहार के अधिकार का उल्लंघन माना जायेगा।[35] लेकिन एचआईवी को खतरे के रूप में अनदेखा नहीं किया जा सकता। सभी बंदियों को भावी नुकसान से बचाना कारागार प्रशासन का कानूनी कर्तव्य है और एचआईवी से पीड़ित हिंसक अथवा मानसिक रूप से अस्थिर बंदी इसी प्रवृत्ति वाले एचआईवी नेगेटिव बंदियों के मुकाबले ज्यादा खतरा पैदा कर सकते हैं।[36] ऐसी स्थिति में एचआईवी नेगेटिव हिंसक और मानसिक रूप से अस्थिर बंदियों की अपेक्षा एचआईवी/एड्स पीड़ित बंदियों पर ज्यादा ध्यान दिये जाने को भेदभाव माना जाये अथवा नहीं यह सवाल अब भी सामने है।[37]

एचआईवी/एड्स से पीड़ित बंदियों और उनसे संक्रमण की आशंका वाले बंदियों दोनों ने ही कारागारों के विरुद्ध भेदभाव के आरोप लगाये हैं। आमतौर पर इन मामलों में भेदभाव से बचाव के अधिकार पर अंकुश लगाने के लिए सीमित अपवाद को अधिकार मानने से इंकार कर भेदभाव करने वाले पक्ष को ही दोषी ठहराया गया है। परिणामस्वरूप अदालतों ने गैर बंदियों से संबंधित मामलों के अनुरूप यहां भी भेदभाव विरोधी न्यायिक दूरदर्शिता का इस्तेमाल किया है। अमेरिका में ग्लिक बनाम हेंडरसन[38] जैसे मामलों में अनिवार्य परीक्षण और बंदियों को अलग–थलग करने की मांग को खारिज कर दिया गया, क्योंकि उसमें बताये गये खतरे महज महत्वहीन डर और अनभिज्ञता के कारण थे। अदालतों ने पाया कि कारागार जब तक चिकित्सकीय पेशेवरों के निर्देशों के मुताबिक चिकित्सा नियमों का पालन करते हैं और जब तक एचआईवी से जबर्दस्त खतरा नहीं होता है, तब तक ऐसे उपायों को लागू करना कार्रवाई का कारण नहीं बनता। कुल मिलाकर कहा जाये तो अदालतों ने चिकित्सकीय समर्थन के बिना महत्वहीन भेदभाव को सीधे तौर पर खारिज किया है। इस प्रकार जब तक एचआईवी से पीड़ित का अन्य बंदियों के साथ केवल संपर्क के अलावा विशिष्ट चिकित्सकीय अथवा सामाजिक आधार नहीं होता तो कारागार में एचआईवी/एड्स पीड़ित बंदियों को अलग करने का कोई कानूनी आधार नहीं होता। कोलंबिया में एचआईवी से संक्रमित एक बंदी ने एचआईवी पॉजिटिव बंदियों को अलग करने के फैसले को खासतौर पर इस आधार पर चुनौती दी कि एचआईवी/एड्स विंग कारागार में ऐसे स्थान पर था जहां बीमारी फैलने और नयी बीमारियां पनपने का डर था।[39] मूलभूत मानवीय गरिमा के सिद्धांत और भेदभाव से बचाव के अधिकार का हवाला देकर कोलंबियाई संवैधानिक अदालत ने निर्णय दिया कि एचआईवी/एड्स से पीड़ित व्यक्तियों को भी अन्य व्यक्तियों के समान अधिकार प्राप्त हैं और

35 प्रिजनर्स हेल्थ एंड ह्यूमन राइट्स एट 22
36 प्रिजनर्स हेल्थ एंड ह्यूमन राइट्स एट 22
37 देखें उदाहरण, प्रिजनर्स हेल्थ एंड ह्यूमन राइट्स एट 22
38 ग्लिक बनाम हेंडरसन, 855 एफ. 2डी 536 (1988)
39 पेड्रो ओरलैंडो यूबेक बनाम निदेशक, नेशनल मॉडल प्रिजन, कोलंबिया संवैधानिक अदालत, निर्णय संख्या टी–502/94 (1994)

एचआईवी/एड्स की गंभीरता को देखते हुए पीड़ित व्यक्तियों और उनकी स्वास्थ्यगत जरूरतों का विशेष ध्यान रखना चाहिये। अदालत ने हालांकि अलग–थलग करने का मसला अंत में कारागार के विवेक पर ही छोड़ दिया लेकिन भेदभाव के खिलाफ दिशानिर्देश और विशेष सुरक्षा के सिद्धांत से कारागार की भेदभावपूर्ण नीतियों पर अंकुश लगता है।

नीति-शास्त्र, गोपनीयता और निजता

कारागार में गोपनीयता और निजता का हनन आम बात है। ऐसी नीतिगत चिंता केवल शर्मिंदगी और गरिमा तथा निजता की पारंपरिक परिभाषा से भी आगे है क्योंकि एचआईवी संक्रमण के परिणामस्वरूप बंदियों को कारागार प्रशासन और अन्य बंदियों की ओर से भेदभावपूर्ण व्यवहार अर्थात् नकारात्मक परिणाम झेलने पड़ सकते हैं। संभावित परिणामों में एकांतवास, अलगाव, कारगार में गतिविधियों पर प्रतिबंध, भेदभाव और अन्य बंदियों से हिंसक व्यवहार शामिल हैं।[40] इसके अलावा चूंकि ज्यादातर बंदियों को वापस समाज में भेजना होता है इसलिए उन्हें और उनके समुदायों को एचआईवी संक्रमण के परीक्षण से पहले और उसके बाद की उनकी स्थिति के बारे में सलाह दी जानी चाहिये। जानकारी दे कर ली गई सहमति के साथ स्वैच्छिक, समुचित परीक्षण को बढ़ावा देना बंदियों के लिए ज्यादा महत्वपूर्ण है। इसके अलावा उन्हें समुचित शिक्षा देकर और उनमें विश्वास भरकर यह सुनिश्चित करना चाहिये कि भविष्य में वे संक्रमण से बचे रहें और कम से कम देखभाल करने वालों के साथ मैत्रीपूर्ण माहौल में रह सकें। जबर्दस्ती उनका रक्त लेने और उनके एचआईवी संक्रमण के बारे में खुलासा करने से समाज में उनके भावी सहयोग पर असर नहीं पड़ेगा। हालांकि सबसे आम उल्लंघन जबर्दस्ती है, जैसे अनिवार्य एचआईवी परीक्षण, लेकिन निजता संबंधी ऐसी चिंतायें सुई के आदान–प्रदान और कंडोम वितरण के कार्यक्रमों से भी हो सकती हैं। उदाहरण के लिए सार्वजनिक वितरण मशीन के जरिये वितरण करने से किसी बंदी को समलैंगिक अथवा नशेड़ी कहा जा सकता है।

कानून कहता है कि कारागार में गोपनीयता और निजता के मानदंड बाहरी दुनिया में लागू मानदंडों के ही समान हैं, जिन्हें अदालत निजता अथवा गोपनीयता के मामले में व्यक्तिगत हित को जनहित से संतुलित करती है। प्रताड़ना के एक दिलचस्प मामले फैरोज–शेली बनाम आर में कारागार की एक ही कोठरी में कैद दो बंदियों के बीच झगड़ा हुआ था, जिसके बाद एक बंदी ने कारागार पर लापरवाही बरतने का मुकदमा दायर कर दिया, क्योंकि उसे डर था कि लड़ाई के दौरान उसे भी एचआईवी का संक्रमण हो गया होगा। लेकिन अदालत ने देखा कि कोठरी में बंद दूसरे कैदी के एचआईवी संक्रमित होने का कोई प्रमाण नहीं था और न ही वह हिंसक प्रवृत्ति का था, इसलिए उसने फैसला किया कि न तो कारागार और न ही प्रशासन के पास आने वाले कैदी के स्वास्थ्य की पड़ताल करने और उसका खुलासा करने का कोई कारण होता है। अन्य मामलों जैसे ग्लिक बनाम हेंडरसन में कहा गया कि एचआईवी/एड्स संक्रमण के कारण ही कोई बंदी अन्य बंदियों के लिए खतरा खड़ा नहीं करता। इस प्रकार अपवाद वाली परिस्थितियों को छोड़कर न्यायपालिका ने निजता और गोपनीयता बरकरार रखने के एचआईवी/एड्स पीड़ितों के अधिकार की रक्षा की है।

भारत में एचआईवी और कारागार

कारागारों की स्थिति

भारतीय कारागारों में वास्तविक एचआईवी दर के बारे में कोई ब्यौरा उपलब्ध नहीं है, हालांकि भारतीय कारागारों की हालत और देश में एचआईवी/एड्स की भीषण महामारी को देखते हुए यह असंभव है कि

40 प्रिजनर्स हेल्थ एंड ह्यूमन राइट्स एट 21

भारतीय कारागार व्यवस्था जेलों में बढ़ती महामारी से बच पायी हो। परिणामस्वरूप महामारी और भारतीय कारागारों की हालत को देखते हुए भारतीय बंदीगृहों में एचआईवी/एड्स महामारी के बारे में अनुमान ही लगाया जा सकता है।

एचआईवी/एड्स को फिलहाल अनदेखा भी कर दिया जाये, तो भारतीय जेलों की खस्ता हालत से ही कई मानवाधिकारों का उल्लंघन होता है। गृह मंत्रालय और न्यायपालिका ने इस स्थिति को लगभग अमानवीय ही कहा है।[41] कई मामलों में भारतीय कारागार कानून और सुविधायें ब्रिटिश औपनिवेशिक काल की हैं, जिनमें मानवीय गरिमा और मानवाधिकारों की अमानवीय और घृणित परिभाषायें दी गयी हैं।[42] संक्रमण, गलत उपचार, भ्रष्टाचार और जबरदस्त मानवीय कष्ट को हालांकि सभी जानते हैं, लेकिन उनका इलाज नहीं किया जाता। भारत की विशाल आबादी के कारण हालांकि यहां अन्य सभी देशों की अपेक्षा कारावास की दर काफी कम है लेकिन एशिया में बंदियों की संख्या के मामले में भारत चोटी के देशों में शामिल है।[43] भारतीय कारागारों में भी बेहद भीड़–भाड़ है और आंकड़े बताते हैं कि कारागारों में क्षमता से लगभग 31 प्रतिशत अधिक बंदी हैं,[44] जबकि कुछ कारागारों में तो क्षमता से 300 प्रतिशत तक अधिक बंदी हैं।[45] कारागारों के निरीक्षण के दौरान मिले प्रमाण बताते हैं कि भीड़–भाड़ इतनी ज्यादा है कि जगह की कमी के कारण बंदियों को 3–4 घंटों की पाली में सोना पड़ता है।[46]

कारागार में स्वास्थ्य की स्थिति खासतौर पर खतरनाक और अस्वच्छ है। पानी की कमी, खुले शौचालयों, भीड़–भाड़ और लापरवाही के कारण स्वास्थ्य के प्रति खतरे बेरोकटोक तरीके से बढ़ सकते हैं।[47] उदाहरण के लिए राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग के अनुसार भारत में कैदियों की मौत में से 70 प्रतिशत के लिए क्षय रोग जिम्मेदार होता है।[48] क्षय रोग से होने वाली इन मौतों में हालांकि एचआईवी/एड्स की भूमिका स्पष्ट नहीं है लेकिन एचआईवी संक्रमित बंदियों के प्रतिशत में बढ़ोत्तरी का मतलब है कि एचआईवी/एड्स से पीड़ित बंदियों का स्वास्थ्य बीमारी और मौत के खतरे से ज्यादा प्रभावित हो सकता है। क्षय रोग से होने वाली मौतों के मामले में भारत सबसे आगे है और देश में संक्रमण के कारण होने वाली मौतों का सबसे बड़ा कारण क्षय रोग ही है,[49] इससे पता चलता है कि यदि कारागार में पहले से कोई महामारी नहीं है तो भी एचआईवी/एड्स पीड़ित व्यक्तियों के लिए कारागारों की खस्ता व्यवस्था ज्यादा बड़ा खतरा है। खराब स्वास्थ्य के हालात पैदा करने की बात छोड़ दीजिये भारतीय कारागार तो बीमारी और चिकित्सकीय जटिलता पर ध्यान ही नहीं देते और उससे निपटने के लिए उनके पास उपकरण भी नहीं हैं। अस्पताल में शैयाएं, स्ट्रेचर, चिकित्सा उपकरण और ऐम्बुलेंस भी उपलब्ध नहीं हैं।[50] चिकित्साकर्मियों की समस्या तो और भी गंभीर है। उदाहरण के लिए एक कारागार को 1956 में 600 कैदियों के लिए तीन चिकित्सक दिये गये थे, जो कैदियों की संख्या को देखते हुए बेहद अपर्याप्त थे। हालिया आंकड़ों के अनुसार उसी कारागार में अब बंदियों की संख्या 4000 हो गयी

41 इंडियाः ऐन ओवरव्यू, गृह मंत्रालय, http://mha.nic.in/cs-division.htm, अंतिम बार 12 जुलाई 2006 को देखी गयी।

42 ह्यूमन राइट्स वॉच वर्ल्ड रिपोर्ट 1999: प्रिजंस, ह्यूमन राइट्स वॉच, 1999, http:// www.hrw.org/worldreport99/special/prisons.html

43 प्रिजंस इन एशिया, ह्यूमन राइट्स वॉच, http://www.hrw.org/prisons/asia.html

44 कारागार संबंधी आंकड़े, कॉमनवेल्थ ह्यूमन राइट्स इनीशिएटिव, जून 2003, http:// www.humanrightsinitiative.org/programs/aj/prisons/statistics/stat_2002.htm

45 निंगथी मंगसताबाम, इंडियन प्रिजंस – रेटरिक एंड रिएलिटी, कॉमनवेल्थ ह्यूमन राइट्स इनीशिएटिव नयी दिल्ली, द हिंदू, 20 अप्रैल 2004

46 प्रिजंस एंड ह्यूमन राइट्स, फ्रॉम प्रिजंस एंड ह्यूमन राइट्स वर्कशॉप, कॉमनवेल्थ ह्यूमन राइट्स इनीशिएटिव और मध्य प्रदेश मानवाधिकार आयोग, 1996

47 वही

48 ह्यूमन राइट्स वॉच वर्ल्ड रिपोर्ट 1999: प्रिजंस, ह्यूमन राइट्स वॉच, 1999, http:// www.hrw.org/worldreport99/special/prisons.html

49 क्षयरोग नियंत्रण परियोजनाः परियोजना का संक्षेप, विश्व बैंक समूह, मार्च 2004

50 प्रिजंस एंड ह्यूमन राइट्स, फ्रॉम प्रिजंस एंड ह्यूमन राइट्स वर्कशॉप, कॉमनवेल्थ ह्यूमन राइट्स इनीशिएटिव एवं मध्य प्रदेश मानवाधिकार आयोग, 1996

है, लेकिन चिकित्सक अब भी तीन ही हैं।[51] अनुसंधान बताते हैं कि पर्याप्त चिकित्सा सुविधा के अभाव में बंदी चिकित्सा संबंधी आपात स्थिति में बच नहीं पाते हैं।[52]

भारतीय कारागार बंदियों की आवाजाही की दर और बंदियों की आबादी के स्वरूप के मामले में भी बिल्कुल अलग हैं। तिहाड़ जेल, जहां लगभग 12 हजार बंदी हैं, में प्रतिवर्ष लगभग 60 हजार बंदी लाये और रिहा किये जाते हैं।[53] इसके अलावा भारत में ऐसे बंदियों की संख्या भी सबसे ज्यादा है, जिन्हें अभी तक अपराधों के लिए सजा नहीं दी गयी है और उनकी सुनवाई चल रही है। वर्ष 2002 के आंकड़े बताते हैं कि भारतीय जेलों में कारावास की सजा काट रहे कुल बंदियों में 74 प्रतिशत विचाराधीन हैं।[54] तिहाड़ जेल में कुल बंदियों में से 80.5–85 प्रतिशत 'विचाराधीन' हैं।[55] इसके अलावा लाये गये सभी बंदियों में लगभग 8 प्रतिशत माने हुए नशेड़ी हैं[56] और इन नशेड़ियों में 75 प्रतिशत हेरोइन का इस्तेमाल करने वाले हैं।[57]

वैसे भारत में सकारात्मक कारागार सुधार भी हुए हैं। दिल्ली में तिहाड़ कारागार में पिछले एक दशक में क्रांतिकारी सुधार हुए हैं। इन सुधारों में पोषण, स्वच्छता, चिकित्सा सेवा और नशेड़ियों के लिए पुनर्वास शामिल हैं।[58] नशीले पदार्थों के इस्तेमाल में जबर्दस्त कमी आयी है, संयुक्त राष्ट्र नशा नियंत्रण कार्यक्रम ने भी नशा मुक्ति कार्यक्रम की प्रशंसा की है और कारागार को अब अंतर्राष्ट्रीय मॉडल के तौर पर मान्यता मिल गयी है।[59] यह परिवर्तन नाटकीय और अविश्वसनीय है, लेकिन इसे व्यापक तौर पर अपनाये जाने की जरूरत है। इसके अलावा तिहाड़ कारागार में बड़े स्तर पर हुए बेहद चर्चित सुधारों के कारण कई भारतीय कारागारों की असली हालत का ब्यौरा रखना मुश्किल है क्योंकि तिहाड़ कारागार ने अन्य कारागारों की व्यवस्था में व्याप्त कठिनाइयों को काफी हद तक ढक लिया है। भारतीय संविधान में चूंकि कारागार का प्रशासन राज्य सरकारों के हाथों में दिया गया है इसलिए विभिन्न राज्यों के कारागारों की व्यवस्था में भी भिन्नता है। स्थानीय महामारी की परिस्थिति में जबर्दस्त विभिन्नता के कारण भी समस्या और विकराल हो जाती है, क्योंकि स्थानीय कारागारों में भिन्न लिंग वालों के बीच सेक्स से संबंधित महामारी के मुकाबले नशे से संबंधित महामारी को काबू करने के लिए ज्यादा गंभीर उपाय करने पड़ते हैं।

भारतीय कारागार कानून

कारागार व्यवस्था के मामले में कथनी और करनी में बहुत फर्क है। राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग कहता है कि बंदियों के मानवाधिकारों की रक्षा "बहुत बड़ी चिंता"[60] है, जबकि उच्चतम न्यायालय ने कहा है कि भारतीय कारागार व्यवस्था का लक्ष्य पुनर्वास है, अपराध का बदला लेना नहीं।[61]

51 वही
52 रसिका धावसे, अनसेफ कस्टडी इन पंजाब्स प्रिजंस, इंडिया टुगेदर, जुलाई 2003, http://www.indiatogether.org/2003/jul/hrt-prison.htm, अंतिम बार 12 जुलाई 2006 को देखी गयी।
53 डॉ. एच. एस. सेठी एवं अन्य, ड्रग एब्यूज एमंग प्रिजन पॉपुलेशन्स : ए केस स्टडी ऑव तिहाड़ जेल, सामाजिक न्याय एवं आधिकारिता मंत्रालय एवं संयुक्त राष्ट्र अंतर्राष्ट्रीय मादक पदार्थ नियंत्रण कार्यक्रम, पृष्ठ 16, 2002
54 कारागार संबंधी आंकड़े, कॉमनवेल्थ ह्यूमन राइट्स इनीशिएटिव, जून 2003, http:// www.humanrightsinitiative.org/programs/aj/prisons/statistics/stat_2002.htm
55 वही अ केस स्टडी ऑव तिहाड़ जेल एट 16
56 अ केस स्टडी ऑव तिहाड़ जेल एट 16
57 वही एट 17
58 मीनाक्षी गांगुली, अ प्लेस टु कॉल होम, टाइम एशिया, 11 दिसंबर 2000
59 वही
60 वार्षिक रिपोर्ट 2003–2004, राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग, नयी दिल्ली
61 मोहम्मद गयासुद्दीन बनाम आंध्र प्रदेश राज्य, (1977) 3 एससीसी 287

फिर भी भारतीय न्यायपालिका और कारागार सुधार आंदोलन जहां बंदियों के अधिकारों की रक्षा करते हैं, वैधानिक नियम और कारागार कानून 19वीं शताब्दी की औपनिवेशिक व्यवस्था से ही बंधे हुए हैं। ये कानून 1894 का कारागार अधिनियम और 1900 का बंदी अधिनियम हैं।[62] इस प्रकार भारतीय दंड संहिता के कानूनों में ही टकराव दिखता है क्योंकि 1894 के कारागार अधिनियम के अंतर्गत कारावास का प्राथमिक उद्देश्य नियंत्रण, अंकुश और दंड है, जबकि सुधार आंदोलन और न्यायपालिका कारागारों को पुनर्वास की संस्था मानते हैं। टकराव की बात इससे स्पष्ट होती है कि संविधान कारागार अधिनियम के लगभग 60 वर्ष बाद बनाया गया था और उसमें समकालीन मानवाधिकारों अथवा भारतीय संवैधानिकता के मूल्य नहीं दिखते।

कारागार सुधार आंदोलन, जो मानवाधिकार केंद्रित है, ने भारतीय कारागारों को जकड़ने वाले कई मसलों को उठाने का प्रयास किया है, लेकिन बड़े बदलाव लाने में वह आमतौर पर नाकाम ही रहा है। उदाहरण के लिए 1980–83 की अखिल भारतीय कारागार सुधार समिति (मुल्ला समिति), राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग और गृह मंत्रालय सभी ने 1894 के कारागार अधिनियम का स्थान लेने के लिए आदर्श कारागार विधेयक का मसौदा तैयार किया, लेकिन किसी को भी पूरे तौर पर लागू नहीं किया गया। एक बड़ी बाधा यह है कि वास्तविक महत्वपूर्ण कारागार सुधार पूरी तरह राज्य सरकार के अधिकार क्षेत्र में आता है और उसके लिए राज्य सरकार की स्वतंत्र पहल तथा कार्रवाई की जरूरत होती है।[63] इसलिए ऐसे राष्ट्रीय प्रयास राज्य स्तर पर राजनीतिक इच्छा की कमी से बाधित होते हैं और राष्ट्रीय सरकार के संवैधानिक नियंत्रण में भी नहीं आते। जिन राज्यों ने इन सुधार उपायों पर ध्यान दिया है उनमें कुछ राज्यों जैसे राजस्थान ने ही अपने कारागार विधान में उनके महत्वपूर्ण भाग को शामिल किया है।[64] इन मुद्दों पर सभी स्तरों पर ध्यान दिया जाना चाहिये, चाहे वह उच्चतम न्यायालय के सामने सबसे मूलभूत अधिकारों का मामला हो अथवा जेल नियमावली का संपादन।

बंदियों के अधिकारों पर भारतीय निर्णय विधि[65]

खासतौर पर कारागार में एचआईवी से संबंधित मसलों पर भारतीय निर्णय विधि उतनी विकसित नहीं हैं, जितने अंतर्राष्ट्रीय और विदेशी न्यायिक क्षेत्रों के हैं। लेकिन भारतीय न्यायपालिका ने एचआईवी से संबंधित कारागार के कई मामले निपटाये हैं और अन्य संदर्भों में भी बंदियों के अधिकारों से संबंधित न्यायिक दूरदर्शिता दिखायी है। कारागार सुधार में न्यायपालिका की सटीक भूमिका निर्धारित करने में एक महत्वपूर्ण आरंभ बिंदु 1977–78 के तीन मामलों में उच्चतम न्यायालय के फैसलों में दिखता है। चार्ल्स शोभराज बनाम केंद्रीय जेल अधीक्षक[66] मामले में न्यायालय ने संवैधानिक एवं विधायी अधिकारों के उल्लंघन के बारे में फैसला करने के अपने अधिकार का प्रयोग किया। न्यायालय ने बंदियों के अधिकारों की रक्षा सुनिश्चित करने के लिए कारागार प्रशासन में हस्तक्षेप करने के अपने अधिकार को पहचाना। मोहम्मद गयासुद्दीन बनाम आंध्र प्रदेश राज्य[67] मामले में अदालत ने अपना नजरिया स्पष्ट किया कि कारागारों को सुधार एवं पुनर्वास का माध्यम बनाना चाहिये,

62 निंगथी मंग्सताबाम, इंडियन प्रिजंस – रेटरिक एंड रिएलिटी, कॉमनवेल्थ ह्यूमन राइट्स इनीशिएटिव नयी दिल्ली, द हिंदू; 20 अप्रैल 2004; कारागार अधिनियम, 1894, http://punjablaws.gov.pk/laws/13.html http://www.hindu.com/op/2004/04/20/stories/2004042000251700.htm पर उपलब्ध

63 आरके राघवन, द इयल दैट इज प्रिजन, फ्रंटलाइन, वॉल्यूम 21, अंक 26, 18–31 दिसंबर, 2004

64 वही

65 रामभूर्ति बनाम कर्नाटक राज्य के संदर्भ में लिखित, एआईआर 1997 एससी 1739

66 चार्ल्स शोभराज बनाम अधीक्षक, केंद्रीय कारागार, तिहाड़, नयी दिल्ली, एआईआर 1978 एससी 1514 (जे. कृष्ण अय्यर: "जब भी किसी बंदी के प्रति पूर्वाग्रह रखते हुए मौलिक अधिकारों का उल्लंघन होगा अथवा विधिक सुरक्षा को नजरअंदाज किया जायेगा, तो गलत को सही करने तथा कानून व्यवस्था को बहाल करने के लिए पत्थर की दीवारों और लोहे की सलाखों को तोड़कर इस अदालत का फैसला वहां पहुंच जायेगा।")

67 मोहम्मद गयासुद्दीन बनाम आंध्र प्रदेश राज्य, (1977) 3 एससीसी 287

सजा एवं बदले का माध्यम नहीं। अंत में शोभराज मामले के साथ सुने गये मामले सुनील बत्रा बनाम दिल्ली प्रशासन एवं अन्य[68] में न्यायालय ने निर्णय लिया कि बंदियों के लिए भी संवैधानिक संरक्षण होना चाहिये और उसने मौजूदा दंड संहिता को बर्बर और घृणास्पद औपनिवेशिक कानून कहकर उसकी निंदा की। न्यायालय ने सावधानी के साथ स्वयं पर नियंत्रण रखते हुए कहा कि संवैधानिक अधिकारों अथवा निर्दिष्ट कार्यवाही के उल्लंघन एक अभिशाप है और कारागार प्रशासन में हस्तक्षेप कानूनी तौर पर जरूरी है।[69] अमरीकी कानूनों का सहारा लेते हुए अदालत ने कहा कि बंदियों को भी संवैधानिक अधिकारों की गारंटी दी जाती है और उल्लंघन की स्थिति में उनका संरक्षण किया जाना चाहिये। उसने वर्तमान मानवाधिकारों तथा मूल्यों के अनुरूप नये कानून बनाने की भी सलाह दी। ये मामले हालांकि विशेष रूप से एचआईवी/एड्स से संबंधित मसलों पर ही लागू नहीं होते हैं, लेकिन एचआईवी/एड्स पीड़ित बंदियों और सामान्य कैदियों के लिए अधिकार केंद्रित न्यायिक शास्त्र के निर्माण के लिए वे आवश्यक आधारशिला तैयार करते हैं। निम्नलिखित धारायें कुछ प्रासंगिक मामलों पर संक्षिप्त टिप्पणी करती हैं और स्वास्थ्य, समय से पहले रिहाई/अनुकंपा के आधार पर सजा के निलंबन, भेदभाव और निजता के संबंध में एचआईवी/एड्स पीड़ित व्यक्तियों के लिए वर्तमान कानूनी परिदृश्य का विश्लेषण करती हैं।

स्वास्थ्य, चिकित्सा सेवा और अनुकंपा के आधार पर निलंबन

न्यायालयों के सामने आये कुछ मामलों में भारतीय न्यायपालिका ने बेहद गंभीर रूप से बीमार बंदियों और एचआईवी/एड्स पीड़ितों की समय से पहले रिहाई अथवा अनुकंपा के आधार पर निलंबन के दावों पर अनुकूल और प्रतिकूल दोनों ही प्रकार के निर्णय लिये हैं। वकील चंद बनाम हरियाणा राज्य[70] मामले में पंजाब एवं हरियाणा उच्च न्यायालय ने निर्णय लिया कि व्यक्ति के अपराध की प्रकृति, खासतौर पर घृणास्पद, जघन्य अथवा बर्बर प्रकृति, समय से पहले रिहाई का अनुरोध ठुकराने के लिए अपर्याप्त आधार है, जैसा कि निम्न स्तर की एक समिति ने किया था। न्यायालय ने यह निर्णय भी दिया कि चूंकि कारागार एचआईवी/एड्स के लिए समुचित चिकित्सा सुविधाएं मुहैया नहीं करा सकता इसलिए समय से पहले रिहाई की बंदी की याचिका को खारिज करना "पक्षपातपूर्ण" है और संविधान के अनुच्छेद–14 तथा अनुच्छेद–21 के विरुद्ध है। इसमें कहा गया कि अनुच्छेद–21 और अनुच्छेद–14 के अनुसार कारागार या तो चिकित्सा उपचार एवं औषधियां सुलभ कराये अथवा अन्य नीतियां बनाते समय कम से कम ये जरूरतें पूरी करने में अपनी नाकामी का खयाल तो रखे।

समय से पहले रिहाई के मसले पर भिन्न रुख सुरला उर्फ सुदलईमुथु एवं अन्य बनाम राज्य[71] मामले में दिखा, जहां मद्रास उच्च न्यायालय ने दो एचआईवी पॉजिटिव विचाराधीन बंदियों की अपने गृहनगरों में मरने के लिए जमानत की याचिका ठुकरा दी। अदालत ने देखा कि विचाराधीन कैदियों को जरूरी चिकित्सा सुविधा दी जा रही थीं और मरने के लिए उन्हें जमानत देना व्यर्थ होगा और इसीलिए अदालत ने याचिका ठुकरा दी। मामलों का विश्लेषण दिखाता है कि अदालत ने इस मामले को वकील चंद मामले से बिल्कुल अलग मसलों के साथ देखा। एक अंतिम भिन्न रुख वर्नली मनोनिका बारबरा बनाम राज्य[72] मामले में दिखा, जिसमें एचआईवी से संक्रमित एक विदेशी नागरिक शामिल थी, जिसका सहयात्री नशीले पदार्थों को अवैध रूप से रखने के मामले में दोषी था। इस मामले में हालांकि तथ्य विशिष्ट थे क्योंकि उसका कारावास पूरी

68 सुनील बत्रा बनाम दिल्ली प्रशासन एवं अन्य एआईआर 1978 एससी 1675

69 सुनील बत्रा बनाम दिल्ली प्रशासन एवं अन्य एआईआर 1978 एससी 1675 पैरा 6

70 वकील चंद बनाम हरियाणा राज़्य, हरियाणा सरकार के सचिव, गृह मंत्रालय एवं अन्य के माध्यम से, 1996, सीआरएलजे 1461

71 सुरला उर्फ सुदलईमुथु एवं अन्य बनाम राज्य, 1997 (2) सीटीसी 7

72 वर्नली मनोनिका बारबरा बनाम राज्य, 121 (2005) डीएलटी 420

तरह उसके सहयात्री के अपराधों पर आधारित था। अदालत ने कहा कि जमानत ऐसी मानवीय चिंताओं के आधार पर दी जा सकती है यदि 1. अनुकंपा के आधार पर निलंबन का अनुरोध करने वाले व्यक्ति को सजा मिलने की संभावना न हो और 2. यदि जमानत पर रिहा होने के बाद व्यक्ति द्वारा कोई अन्य अपराध करने की आशंका नहीं हो। भारतीय कारागार व्यवस्था में विचाराधीन बंदियों का अनुपात देखते हुए न्यायालय का फैसला खासतौर पर एचआईवी/एड्स पीड़ित बंदियों पर लागू होता है और इससे सुनवाई से पूर्व कारावास की उनकी अवधि कम हो सकती है।

भेदभाव एवं अलगाव

भारतीय कारागारों में आमतौर पर संस्थागत भेदभाव एवं अलगाव की व्यवस्था होती है। 1894 के कारागार अधिनियम में कुछ परिस्थितियों में बंदियों की छंटनी अथवा अलगाव की व्यवस्था दी गयी है, जिनमें पुरुष और महिला, अवयस्क और वयस्क, सजायाफ्ता और विचाराधीन, दीवानी और फौजदारी तथा मृत्युदंड प्राप्त बंदियों को अलग करना शामिल है।[73] लेकिन संक्रमण अथवा किसी अन्य आवश्यकता के कारण बंदियों को अलग करने का अधिनियम में कोई प्रावधान नहीं है, हालांकि कारागार नियमावली में फैलने वाले संक्रमण की आशंका वाले बंदियों को अलग करने की बात कही गयी है।[74]

यह बंदियों से हालांकि सीधे संबंधित नहीं है, लेकिन एचआईवी/एड्स से पीड़ित व्यक्तियों के अलगाव और उनके साथ भेदभाव पर सबसे प्रासंगिक भारतीय मामला लूसी आर. डीसूजा बनाम गोवा राज्य[75] है, जिसमें बम्बई उच्च न्यायालय ने देखा कि संस्थाओं में एचआईवी/एड्स पीड़ितों के अलगाव का प्रावधान संविधान के अनुच्छेद–14, 19 और 21 के अंतर्गत किया गया है। दिलचस्प तरीके से न्यायालय ने दोनों बातें कहीं। उसने कहा कि व्यक्तिगत अधिकारों का अतिक्रमण हुआ है और कहा कि जनहित को देखते हुए अधिकारों का हनन नहीं हुआ है। एचआईवी/एड्स से संबंधित कई अन्य मामलों के समान अदालत ने यह संकेत दिया है कि जनहित के लिए व्यक्तिगत अधिकारों के साथ समझौता कर लिया जाना चाहिये। डीसूजा मामले में यह संतुलन पराकाष्ठा पर पहुंच गया और अदालत ने संकेत दिया कि स्वतंत्रता के अतिक्रमण जैसा गंभीर हनन भी जनहित और नीति के लिए मान्य हो सकता है। यह कल्पना करना कठिन नहीं है कि कारागार में पायी जाने वाली भीषण हिंसा, सेक्स, नशे के इस्तेमाल और उच्च तनाव जैसे हालात दिखने पर भी न्यायालय का फैसला समान ही होता। डीसूजा मामले में जिस विधान पर विचार किया गया था, उसे तो वापस ले लिया गया, लेकिन फैसले को नहीं बदला गया और वह कानून बन गया।

निजता, गोपनीयता और सहमति

भारतीय कारागार व्यवस्था में अनिवार्य, जबरन और अगोपनीय परीक्षणों से किसी प्रकार की संवैधानिक अथवा कानूनी सुरक्षा नहीं दी गयी है। (गहन चर्चा के लिए "चिकित्सा नैतिकता – निजता, सहमति और मानवाधिकार" अध्याय देखें)। कारागार अधिनियम 1894 की धारा–24(2) में कारागार में दाखिले के समय बंदी की चिकित्सा जांच की बात कही गयी है और इसमें इस बात का निर्धारण नहीं है कि किस बीमारी को लक्षित किया जाये।[76] जैसा कि "चिकित्सा नैतिकता – निजता, सहमति और मानवाधिकार" अध्याय में विस्तार से चर्चा की गयी

73 कारागार अधिनियम 1894, 27–30

74 कामायनी बाली महाबल, राइट टु हेल्थ विशाईड बार्स, एक्सप्रेस हेल्थ केयर मैनेजमेंट, 15 मार्च, 2004

75 लूसी आर. डीसूजा बनाम गोवा राज्य (1990) एमएच. एल. जे. 713

76 कारागार अधिनियम, 1894, धारा–24(2) ("प्रत्येक अपराधी बंदी को जेल में लाये जाने के बाद उसकी जल्दी से जल्दी चिकित्सा अधिकारी के सामान्य अथवा विशेष आदेशों के अंतर्गत जांच होनी चाहिये, जिसे जेलर द्वारा रखी जाने वाली किसी पुस्तक में दर्ज किया जाना चाहिये, जिसमें बंदी के स्वास्थ्य, उसकी किसी चोट अथवा चिह्न, उसके लिए उपयुक्त श्रमिक वर्ग तथा चिकित्सा अधिकारी की राय में उचित अन्य विवरणों का ब्यौरा रखा जाना चाहिये।")

है, भारतीय अदालतों ने एचआईवी/एड्स के संदर्भ में निजता के अधिकार पर ज्यादा ध्यान नहीं दिया है और महामारी से लड़ने के मामले में किसी भी व्यक्तिगत अधिकार को व्यापक जनहित में बलिदान कर दिया है। इस प्रकार जब तक एचआईवी/एड्स के मामलों में "निजता का व्यक्तिगत अधिकार बनाम जनहित" को कुंजी माना जायेगा, एचआईवी/एड्स से पीड़ित व्यक्तियों को अवांछित खुलासे या जबरन परीक्षण का खतरा झेलना पड़ सकता है। बंदियों के अधिकारों के प्रति आम रवैये को देखते हुए बंदियों की निजता की रक्षा करने से पहले स्वतंत्र व्यक्तियों की सुरक्षा के लिए निजता संबंधी न्याय विकसित करना पड़ेगा।

जैसा कि अनिवार्य एचआईवी परीक्षण के संदर्भ में चर्चा की जा चुकी है, एम. विजय बनाम अध्यक्ष, सिंगरेनी कोयला खदान एवं अन्य[77] मामले में अदालत ने देखा कि कारागार कानूनों के अनुसार बंदी के जेल में आते समय चिकित्सा जांच और उसके स्वास्थ्य के बारे में ब्यौरा तैयार करना जरूरी होता है। उच्चतम न्यायालय ने शारदा बनाम धर्मपाल[78] मामले में इसी तर्क का अनुकरण किया और अंत में कहा कि बंदियों की पहचान के अनिवार्य उपायों से संबंधित बंदियों की पहचान अधिनियम 1920 की धारा–3 संवैधानिक है। कम से कम एक अन्य अदालत ने उच्चतम न्यायालय के फैसले को संकेत मानते हुए कहा कि कुछ प्रकार के अनिवार्य परीक्षण असंवैधानिक नहीं हैं।[79]

अंतिम टिप्पणी

यह ध्यान रखा जाना चाहिये कि कारागार सुधारों की जटिलता और व्यवस्थागत समस्याओं का समाधान मुकदमों के जरिए ही नहीं हो सकता है। अक्सर बाहरी नजरिये से नहीं दिखने वाली एचआईवी निरोध, उपचार और शिक्षा से संबंधित व्यक्तिगत नीतियां कारागार प्रशासन एवं नीति निर्माताओं पर छोड़ देना ही बेहतर होता है। लेकिन मानवाधिकार हनन और उसके परिणामस्वरूप पैदा होने वाली गंभीर स्थितियों को देखते हुए नीतियां तैयार करने और देश में पहले से ही स्थापित नीतियों तथा सिद्धांतों का क्रियान्वयन सुनिश्चित करने के लिए मौलिक आधारभूत ढांचा मुहैया करने के लिए न्यायिक मशीनरी का सहारा लिया जाना चाहिये। इन सिद्धांतों में जीवन, स्वास्थ्य, गरिमा, समता के अलावा निर्दयी, अमानवीय तथा अपमानजनक व्यवहार से बचाव के अधिकार शामिल हैं।

फिलहाल एचआईवी/एड्स से पीड़ित बंदियों के अधिकारों से संबंधित घरेलू कानूनों के लिए सर्वश्रेष्ठ स्रोत गैर बंदियों के मामलों में इस मसले पर फैसले हुए हैं। चूंकि एचआईवी/एड्स के मामले में भारतीय कारावास विधि शास्त्र अपने शुरुआती चरण में है और कम विकसित है, इसलिए कारागार में मानवाधिकारों के संरक्षण के लिए कारावास विधि शास्त्र के साथ–साथ अदालत के आम मानवाधिकार फैसलों की जरूरत पड़ती है। इस प्रकार के मामले हालांकि अभी तक सफल नहीं दिखे हैं, लेकिन बंदियों के संवैधानिक, कानूनी और अंत में मानवाधिकारों के संरक्षण के न्यायपालिका के संकल्प से एक आधार मिलता है, जहां से अधिक मानवीय और अधिकार केंद्रित कारागार विधि शास्त्र विकसित हो सकता है। इसके अलावा उच्चतम न्यायालय की ओर से कारागार विधि शास्त्र के सर्वेक्षण से विदेशी और अंतर्राष्ट्रीय विशेषकर अमेरिकी विधि शास्त्र के प्रति रुझान और खुलेपन के संकेत मिलते हैं। इससे अंतर्राष्ट्रीय मानवाधिकार मानदंडों के अनुरूप कारागारों में एचआईवी/एड्स विधि शास्त्र के विकास में मदद मिल सकती है।

77 एम विजय बनाम अध्यक्ष सिंगरेनी कोयला खदान एवं अन्य, एससीसीएल, एआईआर 2001 (आंध्र प्रदेश) 502 (पूरा ब्यौरा "चिकित्सा नीति शास्त्र" के परिशिष्ट में उपलब्ध)

78 शारदा बनाम धर्मपाल, एआईआर 2003 एससी 3450 (पूरा ब्यौरा "चिकित्सा नीति शास्त्र" के परिशिष्ट में उपलब्ध)

79 एच. एम. प्रकाश उर्फ डाली बनाम कर्नाटक राज्य, 2004 (3) कर्नाटक एलजे 584

इसी प्रकार संबंधित कानूनों के व्यापक सर्वेक्षण से पता चलता है कि मानवाधिकार मसलों से जूझ रहे कारागार भी व्यापक संदर्भ वाले मसलों से संबंधित कानूनों से भिन्न नहीं होते हैं। मानवाधिकार मानवाधिकार ही रहते हैं और सीमित अपवाद के प्रावधान से व्यवस्था का हमेशा उल्लंघन नहीं होता है। गतिशीलता और स्वायत्तता पर प्रतिबंधों को छोड़ दिया जाये, तो विदेशी और अंतर्राष्ट्रीय न्यायालय इस बात पर सहमत हैं कि एचआईवी/एड्स से पीड़ित बंदियों के मौलिक अधिकारों की रक्षा होनी चाहिये और सीमित अपवाद का इस्तेमाल करते समय मौलिक मानवाधिकार सिद्धांत और कानूनों का उल्लंघन नहीं होना चाहिये।

मानवाधिकार से संबंधित विभिन्न मामलों में सिद्धांतों की स्थापना और मानवाधिकारों के क्रियान्वयन की मांग के बावजूद कारागार में उन सिद्धांतों का समुचित क्रियान्वयन नहीं हो पाता है और न ही उससे व्यापक परिणाम मिलते हैं। कानून के लिए सम्मान और अदालत के आदेशों का अनुपालन करने की प्रशासकों की इच्छा अब भी आवश्यक परिवर्तनों के लिए जरूरी शर्तें हैं और परिणामस्वरूप हुए परिवर्तन व्यापक नीति के बजाय व्यक्तिगत स्थितियों पर ही केंद्रित होते हैं। सौभाग्य से औपचारिक न्यायिक प्रक्रिया और अदालती आदेश ही हमेशा सुधारात्मक उपाय लेकर नहीं आते हैं, क्योंकि कई याचिकाओं में कारागारों के मामले अदालत के बाहर निपटाने पड़े और उन्होंने अपनी इच्छा से जरूरी कार्यक्रम तथा नीतियों को अपनाया। कारागार में नीतिगत सुधार का मसला इस प्रकार बहुआयामी समर्थन अभियान का इकलौता लेकिन जरूरी पहलू है, जिसे समाज, सरकार और अंतर्राष्ट्रीय प्रशासन के सभी स्तरों पर सभी मसलों ओर सभी पक्षों पर दबाव डालने के लिए जारी रहना चाहिये।

अधिक जानकारी के लिए कृपया निम्न स्रोत देखें

- प्रिजंस एंड एड्स, यूएनएड्स बेस्ट प्रैक्टिस कलेक्शन, ज्वायंट यूनाइटेड नेशंस प्रोग्राम ऑन एचआईवी/एड्स, अप्रैल 1997
- प्रिजनर्स हेल्थ एंड ह्यूमन राइट्स इन द एचआईवी/एड्स एपिडेमिक, ड्राफ्ट बैकग्राउंड पेपर फॉर ह्यूमन राइट्स ऐट द मार्जिन्स : एचआईवी/एड्स, प्रिजनर्स; ड्रग यूजर्स एंड द लॉ। कनाडियन एचआईवी/एड्स लीगल नेटवर्क। जुलाई 2004
- एचआईवी/एड्स इन प्रिजंस : इन्फो शीट्स, कनाडियन एचआईवी/एड्स लीगल नेटवर्क, 2004–05, http://www.aidslaw.ca/maincontent/infosheets.htm#isohaap.
- देखें कारागारों में एचआईवी/एड्स पर कनाडियन एचआईवी/एड्स लीगल नेटवर्क का वेबपेज, http://www.aidslaw.ca/maincontent/issues/prisons.htm.

कैदी और एचआईवी

1. **ग्लिक बनाम हेंडरसन, 855 एफ. 2डी 536 (1988) (अमेरिका):** एक जेल के बंदियों ने कुछ अन्य बंदियों के जांच में पॉजिटिव पाये जाने के बाद यह दावा किया कि बंदियों की एचआईवी/एड्स से सुरक्षा के लिये कुछ नहीं किया गया है। उन्होंने मांग की कि सभी बंदियों और कर्मचारियों की जांच कराई जाये, एचआईवी/एड्स से पीड़ित सभी को अस्पताल में भर्ती कराया जाये, एचआईवी/एड्स से पीड़ित बंदियों को अलग रखा जाये, एचआईवी/एड्स से पीड़ित कर्मचारियों को निकाला जाये और एचआईवी/एड्स के मामलों की रिपोर्ट अमेरिकी स्वास्थ्य विभाग को दी जाये।
न्यायालय ने प्रतिवादियों के खिलाफ मामला खारिज कर दिया, लेकिन वादी को सही पक्षों के नाम और कार्रवाई के सही कारण के साथ एक वर्ष के अंदर दोबारा मुकदमा दाखिल करने की अनुमति दी। मामले को खारिज करते हुए न्यायालय ने कहा कि जिस खतरे का आरोप लगाया गया है वह ग़ैरवाजिब भय और अज्ञानता पर आधारित है और इस बात का कोई संकेत नहीं है कि अधिकारी जो कर रहे थे या नहीं कर रहे थे, वह उपयुक्त चिकित्सा दिशानिर्देशों के अनुसार नहीं था। वादियों को यह दिखाने की जरूरत है कि अगर अधिकारियों ने उचित कार्रवाई नहीं की तो एचआईवी/एड्स से संक्रमित होने के व्यापक खतरे हैं। न्यायालय ने यह भी कहा कि वह उस क्षेत्र में चिकित्सा प्रक्रियाओं और दिशानिर्देशों को निश्चित नहीं करेगा जहां चिकित्सा व्यवसाय खुद भी यह पता नहीं लगा पाया है कि क्या किया जाना चाहिये। न्यायालय की यह राय थी कि एचआईवी/एड्स से संक्रमित बंदियों द्वारा यौन उत्पीड़न के आधार पर मुकदमा दाखिल किया जा सकता है। न्यायालय ने माना कि एचआईवी/एड्स की आवश्यक जांच की अनुमति दिये जाने पर खतरे की संभावना होगी। आवश्यक जांच की अनुमति गैरवाजिब भय और बिना साबित हुए चिकित्सा तथ्यों पर नहीं दी जा सकती।

2. **फैरोस–शैली बनाम आर, 2003 एफसीटी 415 (कनाडा):** वादी एक जेल के बड़े कमरे में अपने एक साथी के साथ रहता था जिस पर उसे शक था कि वह एचआईवी पॉजीटिव है। उसकी अपने साथी के साथ लड़ाई हुई जिसमे उसे जख्म आये, वादी ने लापरवाही के लिये जेल के खिलाफ मुकदमा किया क्योंकि उसे डर था कि उसे एचआईवी का संक्रमण हो सकता है। न्यायालय ने वादी से कहा कि वह यह साबित करे कि जेल का यह कर्तव्य था कि वह उसे संभावित हिंसा और स्वास्थ्य संबंधी खतरों की चेतावनी दे और यह भी साबित करे कि कर्तव्य का वास्तविक उल्लंघन हुआ है। न्यायालय ने कहा कि चेतावनी देने का कोई कर्तव्य नहीं था क्योंकि वादी यह साबित करने में असफल रहा है कि उसके कमरे का साथी संक्रमित था या उसकी हिंसक प्रवृत्ति थी। न्यायालय ने आगे कहा कि किसी बंदी की चिकित्सा जानकारी एक निजी और व्यक्तिगत जानकारी है और जेल के पास कोई कारण या अधिकार नहीं है कि वह किसी आने वाले कैदी की स्वास्थ्य जानकारी की जांच या खुलासा करे।

3. **डी बनाम यूनाइटेड किंगडम, 30240/96 (1997) ईसीएचआर 25 (मानवाधिकारों का यूरोपीय न्यायालय):** वादी सेंट किट्स का नागरिक था और यूनाइटेड किंगडम में प्रवेश करते समय उसके पास कोकीन बरामद की गई। उसे प्रवेश करने की अनुमति नहीं दी गई लेकिन उसे सात वर्ष की कैद की सजा सुनाई गई। जेल में उसके एड्स से पीड़ित होने का पता चला। इसके बाद उसने अपना इलाज जारी रखने के लिये दया के आधार पर देश में रहने का आवेदन किया।
न्यायालय ने फैसला दिया कि वादी को देश से निकालना मानवाधिकारों और मूलभूत स्वतंत्रता की संधि के अनुच्छेद–3 का उल्लंघन होगा क्योंकि इससे वादी के साथ सेंट किटस में खराब और अमानवीय व्यवहार होगा क्योंकि वहां जरूरी चिकित्सा सुविधाएं उपलब्ध नहीं हैं और उसकी देखभाल करने वाला

कोई नहीं है। इस तरह ऊपर उल्लेखित संधि के आधार पर एक व्यक्ति को उसके स्वदेश उस स्थिति में प्रत्यर्पित नहीं किया जा सकता जिससे उस देश में निम्न स्तर की चिकित्सा सुविधाओं के कारण उसकी स्थिति बिगड़ जाये।

4. **स्टिंसन बनाम गेलजा, 73 फेड. एपीपीएक्स 312 (2003) (अमेरिका):** स्टिंसन एक एचआईवी पॉजीटिव कैदी था। उसे उसके डॉक्टर ने दर्द के उपचार के लिये बर्फ के इस्तेमाल को कहा था लेकिन जेल ने उसे बर्फ देने से मना कर दिया। स्टिंसन ने अमेरिका के संविधान के आठवें संशोधन के तहत नागरिक अधिकार मामला दाखिल करते हुए दावा किया कि जेल ने उसके इलाज में हस्तक्षेप कर उसकी चिकित्सा जरूरतों के प्रति "जानबूझकर उदासीन रवैया" अपनाया है। इस अपील पर न्यायालय ने कहा "जेल के एक अधिकारी ने कैदी का इलाज कर रहे डॉक्टर के निर्देशों को अनदेखा कर जानबूझ कर उदासीन कार्रवाई की है" और न्यायालय ने मामले पर सुनवाई की सिफारिश कर दी।

5. **स्टैनफील्ड बनाम सेवा सुधार मंत्री और अन्य, (2003) 12 बीसीएलआर 1384 (उच्च न्यायालय–केप ऑव गुड होप प्रोविन्शियल डिवीजन) (दक्षिण अफ्रीका):** स्टैनफील्ड दक्षिण अफ्रीका की जेल में छह वर्ष की सजा काट रहा एक गंभीर रूप से बीमार कैदी था। ऐसा अनुमान था कि उसका जीवन केवल एक वर्ष ही और बचा है। उसने अपने परिवार के साथ समय बिताने के लिये पैरोल पर रिहाई की मांग को लेकर मामला दायर किया। स्टैनफील्ड ने सुधार सेवा कानून, 1959 के तहत मामला दाखिल किया। इस कानून के तहत चिकित्सा के आधार पर न्यायोचित पैरोल की अनुमति है। उसने दलील में दावा किया कि उसे सम्मानपूर्वक मरने का अधिकार है और जेल में स्थितियां स्वास्थ्य के लिये काफी खराब हैं जिनसे संक्रमण होने का खतरा है और जेल गंभीर रूप से बीमार कैदियों को स्तरीय देखभाल उपलब्ध कराने में सक्षम नहीं है।

   न्यायालय ने अपने फैसले में कहा :

   1) अपीलकर्ता को सम्मान के साथ मरने का संवैधानिक अधिकार है,
   2) कैदी को उसकी हालत बहुत ज्यादा बिगड़ने और मरणासन्न होने तक जेल में रहने की शर्त न ही मानवीय है और न ही यह सम्मानजनक है,
   3) जेल में स्वास्थ्य के लिये खराब और संक्रमण के खतरे वाली स्थितियां स्टैनफील्ड के स्वास्थ्य को और खराब कर सकती हैं।

   इसी के अनुसार स्टैनफील्ड को पैराल दे दी गई।

6. **आर बनाम गृह विभाग का राज्य मंत्री एक पक्षीय ग्लेन फीलिंडग (1999) ईडब्ल्यूएचसी एडमिन 641 (हाई कोर्ट ऑव जस्टिस, क्वींस बेंच डिवीजन) (यूनाइटेड किंगडम):** सरकारी जेल में बंद एक समलैंगिक व्यक्ति को कंडोम नहीं मिल पा रहे थे और जो कंडोम उसे बाहर से मिलते थे उन्हें जेल जब्त कर लेता था। गृह विभाग की नीति थी कि केवल "चिकित्सीय फैसले के जरिये" ही जेल में कंडोम के इस्तेमाल की अनुमति दी जाये, जो कि एचआईवी/एड्स के खतरे की ओर इशारा करता है। इस विशेष मामले में दलील दी गई कि जेल का डॉक्टर जरूरत से ज्यादा सख्त है।

   न्यायालय ने नीति और स्पष्ट बनाने की जरूरत बताते हुए फैसला दिया कि गृह विभाग की नीति स्वीकार्य है। न्यायालय की दलील थी कि जेल में कंडोम उपलब्ध कराने से समलैंगिकता को बढ़ावा मिलेगा और इससे जेलों को बचाना जरूरी है। न्यायालय ने कहा कि कंडोम का इस्तेमाल यौन संबंध बनाने के अलावा अन्य कामों के लिए भी किया जा सकता है, इसलिए जेल प्रशासन द्वारा अधिक नियंत्रण रखना जरूरी है।

7. **कैदी ए–एक्सएक्स इन्क्लूसिव बनाम स्टेट ऑव न्यू साउथ वेल्स, (1995) 38 एनएसडब्ल्यूएलआर 622. (आस्ट्रेलिया):** न्यू साउथ वेल्स की जेल की नीति जेल के अंदर कंडोम के वितरण के खिलाफ थी और एचआईवी की रोकथाम के प्राथमिक कदम के रूप में एचआईवी से बचने की शिक्षा दी जाती थी। वादियों ने कंडोम को जेल में उपलब्ध न कराने और उनके पास कंडोम रखने की अनुमति न दिये जाने को लेकर तीन दावे किये: 1) यह अधिकार का गलत इस्तेमाल है, 2) बंदी प्रत्यक्षीकरण की याचिका को बल देता है, 3) कैदियों के प्रति कर्तव्य का उल्लंघन (लापरवाही) है। न्यायालय ने हालांकि तीनों दावों को खारिज कर अपील को नकार दिया लेकिन इसके साथ ही संकेत दिया कि लापरवाही का कारण राहत दिये जाने के लिये पर्याप्त हो सकता है।
8. **स्ट्राइकिवस्की बनाम मिल्स और कनाडा, फेडरल कोर्ट ऑव कनाडा–ट्रायल डिवीजन, कोर्ट फाइल संख्या. टी–389–00 (कनाडा):** संघीय जेल में बंद स्ट्राइकिवस्की नशीले पदार्थ लेने का आदी था और उसने इस लत से छुटकारा पाने के लिये मीथेडोन के उपचार की मांग की थी। प्रतिवादियों ने इलाज उपलब्ध कराने से मना कर दिया, हालांकि सरकार संघीय जेलों में बंद कैदियों के नियंत्रण और उपचार के लिये जिम्मेदार थी। न्यायालय के सामने यह तथ्य पेश किया गया कि कनाडा के कैदियों में आईडीयू की दर बहुत अधिक है जो कि संघीय जेलों में एचआईवी की बढ़ी संख्या से भी जुड़ी है। सुधार एवं सशर्त रिहाई कानून के तहत सरकार को कैदियों को जरूरी स्वास्थ्य देखभाल और गैर जरूरी स्वास्थ्य देखभाल तक पर्याप्त पहुंच उपलब्ध करानी जरूरी है जिससे कैदी भविष्य में कनाडा के समाज में दोबारा शामिल हो सकें। स्ट्राइकिवस्की ने इसी कानून के आधार पर प्रतिवादियों को समझौता करने के लिये बाध्य किया। जिसके नतीजे में मीथेडोन उपचार कार्यक्रम का विस्तार किया गया और पुराने प्रतिबंधात्मक दिशानिर्देशों में संशोधन किया गया।
9. **पेड्रो ओरलैंडो यूबेक बनाम डायरेक्टर, नेशनल मॉडल प्रिजन, कान्स्टीटयूशनल कोर्ट ऑव कोलंबिया, फैसला संख्या, टी–502/94 (1994) कोलंबिया :** यूबेक जेल के "एचआईवी/एड्स खंड" का एक एचआईवी पॉजीटिव कैदी था। यूबेक ने दावा किया कि उसका खंड जेल के पानी के स्रोत के पास होने के कारण कक्षों की हालत खराब है, सांस संबंधी बीमारियां हो रही हैं और आर्द्रता के अन्य विपरीत प्रभाव हो रहे हैं और इसी वजह से वह स्वास्थ्य के लिए हानिकारण स्थितियों में जी रहा है। एक निचली अदालत द्वारा उसकी दलीलों को अस्वीकार करने के बाद संवैधानिक न्यायालय ने अपने फैसले में कहा कि पीएलएचए के पास अन्य सभी व्यक्तियों की तरह ही अधिकार हैं और एचआईवी/एड्स की प्रकृति और गंभीरता की वजह से सरकारी प्रशासन को उनके मानवाधिकार और सम्मान को सुनिश्चित करने के लिये विशेष संरक्षण देने और उनके खिलाफ भेदभाव को रोकने या उससे बचाने की जरूरत है। हालांकि एचआईवी से पीड़ित कैदियों को अलग रखने पर आधारित मामला पेश किया गया था लेकिन न्यायालय ने मामले की तार्किक आधार पर समीक्षा की और निर्णय को जेल के विवेक पर छोड़ दिया।(पूरा विवरण उपलब्ध नहीं)
10. **पीडब्ल्यू बनाम दक्षिण अफ्रीका सुधार सेल विभाग (1997–2003) (दक्षिण अफ्रीका):** दक्षिण अफ्रीका की जेलों में एचआईवी की अनुमानित दर 3 से 45 प्रतिशत के बीच है और जेल की नीति कैदियों की कंडोम तक पहुंच पर प्रतिबंध लगाती है। पी डब्ल्यू के एक एचआईवी पॉजीटिव पुरुष (जिसके एचआईवी होने के बारे में उसे पता नहीं था) से यौन संबंध थे और उसे जेल में एचआईवी हो गया। पीडब्ल्यू ने सुधार सेवा विभाग के खिलाफ मुकदमे में आरोप लगाया कि वह यौन संबंधों को तो सहन करता है लेकिन कंडोम तक पहुंच पर रोक लगाता है और इस तरह उसका एचआईवी संक्रमण में योगदान है। पीडब्ल्यू ने दलील दी कि जेल की नीतियां, संविधान और विशेषकर सुरक्षा और मानव सम्मान के

उसके अधिकार का उल्लंघन करती हैं जिसके तहत उसे पर्याप्त चिकित्सा, स्वतंत्रता, सुरक्षा और जीने का अधिकार है। मामले का निपटारा बिना न्यायिक निर्णय के अदालत के बाहर ही हो गया। जिसके नतीजे में पी डब्ल्यू को हर्जाना मिला और जेल की नीतियों में कैदियों को एचआईवी से संबंधित शिक्षा और कंडोम देने के बारे में प्रतिबद्धता व्यक्त की गई। (पूरा विवरण उपलब्ध नहीं)

11. **आर बनाम लो चि क्युंग,(1996) 3 एचकेसीए 155 (हांगकांग) एचकेएसएआर बनाम वास्केज टैरजोना जीसस जुआन, (2001) 941 एचकेसीयू 1 (हांगकांग):** हांगकांग की जेलों में बंद कैदियों ने अपने एचआईवी पॉजिटिव होने के तथ्य की वजह से दया के आधार पर अपनी कैद घटाने की मांग को लेकर मामले दाखिल किये। न्यायालय ने उनकी वर्तमान स्थिति को देखते हुए इस मांग को नकार दिया क्योंकि कोई भी कैदी गंभीर रूप से बीमार नहीं था। न्यायालय ने संकेत दिया कि कैदियों के स्वास्थ्य की निगरानी के साथ कैदी का स्वास्थ्य ज्यादा बिगड़ने की स्थिति में एक विशेष प्रक्रिया की अनुमति दी जा सकती है। अपने फैसले में न्यायालय ने जनहित (सामान्यतः अपराध की गंभीरता से जुड़ा हुआ) और कैदी की "असाधारण दिक्कतों" के बीच संतुलन बनाए रखते हुए जांच के बारे में चर्चा की। एचकेएसएआर बनाम त्सांग वाइ केई, (2003) एचकेईसी 1056 भी देखें। (जिसमे कैदी की सजा पर थॉयराइड कैंसर के प्रभाव की चर्चा की गई है)। (पूरा विवरण उपलब्ध नहीं)।

12. **वान बिल्जन और अन्य बनाम सुधार सेवा मंत्री और अन्य (1997) 50 बीएमएलआर 206, उच्च न्यायालय (केप ऑव गुड होप प्रोविंशियल डिवीजन) (दक्षिण अफ्रीका):** 1997 में मामला दाखिल करने के समय दक्षिण अफ्रीका सरकार देश में एआरवी के किसी प्रावधान को मदद नहीं देती थी, दवाएं केवल निजी क्लीनिकों में ही उपलब्ध थी। वादियों ने यह घोषणा करने की मांग की कि वे सरकार द्वारा उपलब्ध कराई जाने वाली एंटीरेट्रोवायरल दवाओं के हकदार हैं। कैदियों को चिकित्सा और देखभाल देश के खर्च पर उपलब्ध कराने के स्थापित संवैधानिक अधिकार पर उनकी दलील को आधारित करते हुए न्यायालय ने कहा कि एआरवी संविधान द्वारा सुनिश्चित की गई "पर्याप्त चिकित्सा" के दायरे में है। न्यायालय ने इस दलील से इंकार कर दिया कि कैदी समुदाय को सामान्य नागरिकों के लिए उपलब्ध सुविधा से ज्यादा पाने का हक नहीं होना चाहिये।

भारतीय मामले

1. **पीएन स्वामी, लेबर लिबरेशन फ्रंट, महबूबनगर, बनाम थानेदार, हैदराबाद और अन्य, 1998 (1) एएलडी 755 :** तेलुगु समाचारपत्र "इनाडू" में एक लेख छपने के बाद याचिकाकर्ता ने हैदराबाद के महबूब की मंडी जिले में जबरदस्ती वेश्यावृत्ति में धकेली गयी महिलाओं की दशा पर चिंता व्यक्त करते हुए एक पत्र लिखा। इस पत्र को न्यायालय ने एक रिट याचिका की तरह माना और पुलिस से इसकी जांच करने को कहा। वेश्यालयों से 65 महिलायें छुड़ायी गईं और न्यायालय ने उनकी चिकित्सा जांच कराने का आदेश दिया। जांच के बाद 21 महिलाओं को एचआईवी पॉजिटिव पाया गया। महिलाओं को पहले सुधार गृह और फिर चंचलगुडा जेल के महिला वार्ड में रखा गया। न्यायालय ने बीमारियों से पीड़ित महिलाओं को छोड़कर ज्यादातर को रिहा करने के निर्देश दे दिये।

न्यायालय द्वारा सहायता के लिये नियुक्त वकील ने दलील दी कि इन महिलाओं को सुधार गृहों में रखना संविधान के अनुच्छेद–14, 19 और 21 में दिये उनके मौलिक अधिकारों का उल्लंघन है। न्यायालय ने हालांकि इस पर सहमति नहीं जताई। न्यायालय ने कहा कि महिलाओं को सुधार गृह में रखने का अर्थ है कि उनकी बीमारियों का उपचार हो सके और उनके पुनर्वास के लिये व्यावसायिक प्रशिक्षण मिले। इसके साथ ही एचआईवी के फैलने को भी रोका जा सके। महिलाओं को सुधार गृह में रखना

अनुच्छेद–14, 19 और 21 का उल्लंघन नहीं होगा। न्यायालय ने लूसी डिसूजा बनाम गोवा सरकार का उदाहरण दिया और कहा कि समाज के व्यापक हितों को देखते हुए व्यक्तिगत अधिकारों को दबा दिया जाना जरूरी है, विशेषकर उस समय जब सामाजिक कल्याण के साथ जनता के स्वास्थ्य और नैतिकता का मामला हो।

अनुच्छेद–19, 21, 23, 39(ई) और (एफ) और 47 को एक साथ पढ़ते हुए न्यायालय ने यहां तक कहा कि यह जाहिर है कि राज्य के पास पर्याप्त कदम उठाकर जनता के स्वास्थ्य को बरकरार रखने की संवैधानिक अनुमति है। दिशा–निर्देशक सिद्धांतों को अदालत द्वारा लागू नहीं कराया जा सकता, लेकिन इसके बावजूद वे शासन के लिये महत्वपूर्ण हैं। इसलिए राज्य को ऐसी महिलाओं को ऊपर उठाने और उनके पुनर्वास के लिये चिकित्सा सहित सभी सुविधाएं उपलब्ध करानी होंगी।

2. **वर्नली मनोनिका बारबरा बनाम राज्य, 121 (2005) डीएलटी 420 :** इस मामले में याचिकाकर्ता एक एचआईवी पॉजीटिव विदेशी नागरिक थी जिसके साथ यात्रा करने वाले साथी को गिरफ्तार कर लिया गया था। उसने अपना अपराध स्वीकार किया और उसे अवैध रूप से हेरोइन और हशीश रखने के लिये सजा सुनाई गई। उसने कहा कि वह इस अपराध के लिये अकेला जिम्मेदार है और याचिकाकर्ता इसमें बिल्कुल भी शामिल नहीं है। याचिकाकर्ता ने कहा कि उसे इस आधार पर जमानत दी जानी चाहिये कि उसके साथी ने अपना जुर्म स्वीकार किया है और मानवीय आधार पर थी क्योंकि वह गंभीर रूप से बीमार है।

न्यायालय ने कहा कि जमानत तभी दी जा सकती है जब न्यायालय सबूतों के आधार पर संतुष्ट हो कि निबदेन करने वाले व्यक्ति के दोषी पाये जाने की संभावना नहीं है। न्यायालय ने यहां तक कहा कि उसे इस बात से भी संतुष्ट होना होगा कि जमानत मिलने के बाद आरोपी के इसी कानून के तहत अन्य अपराध करने की संभावना नहीं है। न्यायालय ने महसूस किया कि इस मामले में दोनों ही मापदंडों को पूरा किया गया है और मानवीय चिंताओं तथा सह–आरोपी के अकेले पूरे अपराध की जिम्मेदारी लेने को देखते हुए आदेश दिया कि याचिककर्ता को एक लाख रूपये के बौंड पर जमानत पर रिहा किया जाये। बौंड के दो जमानती भी जरूरी होंगे और स्विट्जरलैंड के दूतावास को यह सुनिश्चित करना होगा कि याचिकाकर्ता देश छोड़कर न जाये।

3. **वकील चंद बनाम हरियाणा राज्य हरियाणा सरकार के सचिव, गृह मंत्रालय और अन्य के जरिए 1996 सीआरआईएलजे 1461 :** इस मामले में याचिकाकर्ता एक एचआईवी पॉजीटिव अभियुक्त था जो जेल में सजा काट रहा था। उसने राज्य द्वारा संविधान के अनुच्छेद–161 के तहत प्रतिपादित की गई अनुलग्नक पी1 की धारा–2(डी) के तहत समय से पूर्व रिहाई के लिये आवदेन किया। यह अनुलग्नक उन अभियुक्तों की समय से पूर्व रिहाई की अनुमति देता है जो गंभीर रूप से बीमार हों और आजीवन कारावास की सजा काट रहे हों। उसका आवेदन इस आधार पर खारिज कर दिया कि उसने एक जघन्य अपराध किया है, अगर उसे रिहा कर दिया गया तो वह अन्य नागरिकों को संक्रमित कर सकता है और उसके इलाज के लिये जरूरी सभी सुविधाएं जेल में उपलब्ध हैं।

वकील चंद ने इस निर्णय के खिलाफ अपील की और न्यायालय ने उसके पक्ष में फैसला दिया। न्यायालय ने कहा कि अनुलग्नक पी1 की धारा–2(डी) के तहत दिये गये आवेदन को इस आधार पर अस्वीकार नहीं किया जा सकता कि आवेदनकर्ता द्वारा किया गया अपराध जघन्य है। ऐसे मामलों में कैदी का अपराध और उसे दी गई सजा प्रासंगिक नहीं है। न्यायालय ने यहां तक कहा कि अगर ऐसी आशंका है कि रिहा किये जाने पर याचिकाकर्ता अन्य नागरिकों को संक्रमित कर सकता है तो यह भी

ध्यान में रखना चाहिये कि ऐसा ही नतीजा उसके साथी कैदियों के संदर्भ में भी आ सकता है। इसके साथ संबद्ध जेल और यहां तक कि राज्य की किसी अन्य जेल में भी एचआईवी/एड्स के उपचार के लिये उपयुक्त चिकित्सा सुविधाएं उपलब्ध नहीं हैं। इस तरह न्यायालय ने कहा कि प्रतिवादियों ने याचिकाकर्ता के समय से पूर्व रिहाई के आवदेन को मनमाने तरीके से लिया जो कि संविधान के अनुच्छेद–14 और 21 का उल्लंघन है।

4. **सुरला उर्फ सुदलाइमुथु और अन्य बनाम राज्य, मद्रास उच्च न्यायालय (1997):** इस मामले में याचिकाकर्ता एक आईएएस अधिकारी के चेहरे और शरीर पर तेजाब फेंककर हत्या का प्रयास करने के मामले में मुख्य आरोपी थे। उन्होंने एकमात्र दलील दी कि क्योंकि वे एचआईवी पॉजीटिव हैं इसलिए उन्हें मानवीय आधार पर जमानत की अनुमति मिलनी चाहिये, जिससे वे मरने के लिये अपने गृहनगर जा सकें। अपने फैसले में न्यायालय ने विभिन्न न्यायिक अधिकारियों द्वारा और दंड प्रक्रिया संहिता में दी गई जमानत की परिभाषाओं का जिक्र किया। न्यायालय ने कहा कि इनमें से किसी भी परिभाषा में यह प्रावधान नहीं है कि गृहनगर में मरने के लिये जमानत दी जा सकती है। इसके अलावा अभियुक्तों को जेल प्रशासन वह चिकित्सा दे रहा है जिसकी उन्हें जरूरत है। न्यायालय ने यह भी कहा कि अभियुक्तों को मरने के लिये गृहनगर जाने की अनुमति दिये जाने का यह नतीजा होगा कि वे मुकदमे का सामना करने के लिये वापिस नहीं आयेंगे और इससे जमानत के आवेदन का कोई मतलब नहीं रह जाएगा।

11 ए

व्यावसायिक यौनकर्मी

एचआईवी तथा एड्स के संक्रमण के खतरे का विशेष तौर पर सामना कर रहे समूह होने के बावजूद यौनकर्मी उन स्वास्थ्य, सामाजिक तथा अन्य सेवाओं का समुचित फायदा नहीं उठा पाते हैं जो ऐसे खतरों को कम करने तथा संक्रमण के परिणामों का सामना करने के लिए आवश्यक हैं। इस सर्वाधिक महत्वपूर्ण मुद्दे के संदर्भ में यौनकर्मियों की अब तक स्पष्ट तौर पर उपेक्षा होती आ रही है। सत्ताधारियों, नीति–निर्धारकों तथा साधारण जनता द्वारा की जाने वाली इस उपेक्षा के साथ उनके मूलभूत अधिकारों तथा स्वतंत्रताओं के प्रति हमेशा से अस्वीकृति का भाव जुड़ा हुआ है। इस स्थिति के लिए एक हद तक एचआईवी के प्रसार में उनके पेशे के साथ सदियों से गहरे तौर पर जुड़ा हुआ कलंक का भाव जिम्मेदार है।

एचआईवी तथा एड्स का मुकाबला करने के लिए बनाई जाने वाली किसी भावी नीति के संदर्भ में अपनी अहमियत के बावजूद इस समूह को आज तक नीति निर्धारण प्रक्रिया में समुचित प्रतिनिधित्व नहीं मिल पाया है। लेकिन अगर समाज एड्स की महामारी पर काबू पाने के प्रति गंभीर है तब उसे किनारे कर दी गई इन औरतों को इस प्रक्रिया में शामिल करना होगा। यह कार्य आसान नहीं है क्योंकि ऐसा करने के दौरान औरतों से संबंधित प्रथाओं तथा यौनभाव के प्रति दृढ़ सांस्कृतिक धारणाओं को चुनौती देनी पड़ेगी। इसके बावजूद इस प्रक्रिया से गुजर कर ही औरतों को वैसा प्रतिनिधित्व प्रदान किया जा सकता है जो नीति को समुचित दिशा प्रदान करने में सहायक होगा। इसके अलावा इससे उन्हें वह मार्गदर्शन मिलेगा जिसकी आवश्यकता बहुत पहले से महसूस की जा रही है।

इस संदर्भ में अगले अध्याय में वर्तमान समय में यौनकर्मियों पर लागू होने वाले कानून की समीक्षा की जायेगी। इस समूह के अधिकारों तथा एचआईवी और एड्स के संदर्भ में इन अधिकारों के हनन के विभिन्न तरीकों पर रोशनी डाली जायेगी। इस विषय के संदर्भ में भारतीय तथा अंतर्राष्ट्रीय क्रियाकलाप का वर्णन भी होगा।

भाग II में इस बात का वर्णन है कि कानून यौनकर्मियों के साथ किस तरह पेश आता है। इसमें यौनकार्य तथा एड्स के प्रसार के बीच निकाले गए संबंधों को भी सम्मिलित किया गया है। इसके अलावा इसमें यौनकार्य के अपराधीकरण तथा इससे स्वयं यौनकर्मियों पर पड़ने वाले बुरे प्रभावों और एचआईवी तथा एड्स के प्रसार को रोकने के प्रयत्नों पर पड़ने वाले नकारात्मक प्रभावों को सम्मिलित किया गया है। भाग III में अंतर्राष्ट्रीय कानून के अंतर्गत एचआईवी के संदर्भ में यौनकर्मियों के अधिकारों पर प्रकाश डाला जाएगा। इसमें देह व्यापार विरोधी कानून से लेकर अधिक सामान्य मानव अधिकार कानून के अलावा इन अधिकारों के हनन के विभिन्न तरीकों का भी वर्णन होगा।

भाग IV में इस कार्यक्षेत्र में उठने वाले कुछ मुद्दों के प्रति अन्य न्याय व्यवस्थाओं की प्रतिक्रियाओं की प्रकृति का विशिष्ट और तुलनात्मक वर्णन किया जाएगा। इसके बाद भाग V में इस समूह पर लागू होने वाले भारतीय कानून का संक्षिप्त विवरण दिया जाएगा। लेकिन सबसे पहले हम यौनकार्य के अर्थ तथा एचआईवी/एड्स के प्रसार के संदर्भ में इस समूह की असुरक्षित स्थिति पर विचार करते हैं।

यौनकार्य की परिभाषा

ऐसा कोई पारिभाषिक शब्द या परिभाषा नहीं है जो दुनिया भर में यौनकार्य से संबंधित लेन–देन के प्रकारों को भली–भांति व्यक्त कर सके। वर्ष 2006 में पूर्वी यूरोप तथा मध्य एशिया के यौनकर्मियों पर तैयार किए गए यूएनएड्स रिपोर्ट में की गई टिप्पणी के अनुसार इसकी सबसे सटीक परिभाषा इसके स्थानीय कार्यक्षेत्र के संदर्भ में दी जा सकती है तथा समाज के बदलते दृष्टिकोणों के साथ इस परिभाषा के भी बदलने की संभावना होती है।[1] साधारणतया वेश्या के स्थान पर 'यौनकर्मी' शब्द का प्रयोग किया जाता है क्योंकि इससे नकारात्मक भाव का संकेत नहीं मिलता है और यह तुलनात्मक रूप से कम लांछन लगाने वाला शब्द है। इसके अलावा यह शब्द इस कार्य की ओर संकेत करते हुए उन लोगों के अनुभव को बेहतर ढंग से व्यक्त करता है। परन्तु यह बात ध्यान देने योग्य है कि अधिकतर यौनकर्मी अपने आप को इस रूप में नहीं देखते हैं क्योंकि वह अपनी इस अवस्था को अस्थायी व्यवस्था के रूप में देखते हैं।[2]

आमतौर पर यौनकार्य को औपचारिक (संगठित) या अनौपचारिक (असंगठित) रूपों में वर्गीकृत किया जाता हैं। इसका औपचारिक रूप प्रायः संस्थागत होता है तथा यह उन मैनेजरों या दलालों की देखरेख में होता है जो ग्राहक तथा यौनकार्य के बीच की कड़ी के रूप में कार्य करते हैं।

रिपोर्टों में प्रयोग के लिए यूएनएड्स द्वारा स्वीकार की गई यौनकर्मी की परिभाषा की परिधि में "ऐसे वयस्क तथा अल्पवयस्क स्त्री, पुरुष तथा किन्नर आते हैं जो नियमित रूप से या कभी–कभार यौन सेवाओं के बदले धन या वस्तु प्राप्त करते हैं, और जो उन गतिविधियों को सचेत तौर पर आय प्राप्ति का साधन मान सकते या नहीं मान सकते हैं।"[3] निःसंदेह वास्तविकता यह है कि इनमें से अधिकतर औरतें हैं तथा इन औरतों को इस उद्योग की ओर ले जाने वाली वजहों तथा यहां उन्हें घेरे रहने वाले लिंग–विशेष मानवाधिकार हननों को इस विषय के हर प्रकार के विश्लेषण में अवश्य सम्मिलित किया जाना चाहिए। पुरुष तथा स्त्री – दोनों प्रकार के यौनकर्मियों के लगभग सभी ग्राहक पुरुष होते हैं।[4] यौनकर्मी सड़कों पर तथा वेश्यालयों, डांस बार, रेड लाइट इलाकों तथा पड़ोस में मौजूद होते हैं। बहुतों को उनके घरों से जबरदस्ती लाया जाता है तथा अन्य इस व्यावसायिक यौन उद्योग में गरीबी, प्राकृतिक तबाही, युद्ध, राजनीतिक संघर्ष, अपर्याप्त शिक्षा, सांस्कृतिक रिवाज तथा मान्यताओं या किसी स्पष्ट आर्थिक विकल्प के अभाव में आते हैं। इसके अलावा अन्य लोग स्वेच्छा से इस उद्योग को वैध व्यापार या पेशा के रूप में चुन सकते हैं।

---

1 एचआईवी एंड सेक्सुअली ट्रांसमिटेड इन्फेक्शन प्रिवेन्शन अमांग सेक्स वर्कर्स इन ईस्टर्न यूरोप एंड सेन्ट्रल एशिया, यूएनएड्स बेस्ट प्रैक्टिस कलेक्शन, पृ.8, यूएनएड्स/06.10 इ (मूल अंग्रेजी, मई 2006) http://www.unaids.org/en/Publications/default.asp पर उपलब्ध (अंतिम बार देखने की तिथि 27 अक्टू. 08) {'यूएनएड्स इन ईस्टर्न यूरोप'}

2 वही पृ. 8, सेक्स वर्क एंड एड्स, यूएनएड्स टेक्निकल अपडेट, 2002, पृ.3 {आगे 2002 अपडेट} इस पूरे अध्याय में जहां संभव होगा वहां "वेश्या" के स्थान पर "यौनकर्मी" का प्रयोग किया जाएगा। वैसे, वेश्यावृत्ति का प्रयोग ऐसे मामले के कानून या कानूनी पाठ के संदर्भ में किया जा सकता है जिसमें इस शब्द को स्वीकार कर लिया गया है।

3 वही

4 वैश्विक एड्स महामारी पर 2006 में प्रकाशित यूएनएड्स रिपोर्ट, "चैप्टर 6: एट रिस्क एंड नेग्लेक्टेड: फोर की पोपुलेशन्स," पृ.105 http://www.unaids.org/en/Publications/default.asp पर उपलब्ध (अंतिम बार देखने की तिथि 27 अक्टू. 08) { आगे 2006 एड्स महामारी रिपोर्ट}

भारत में यौनकार्य

यौनकार्य में अपने स्वरूप को लगातार बदलते रहने की प्रवृत्ति होती है जिसके कारण किसी देश में इसकी वर्तमान स्थिति का सही अंदाजा लगाना मुश्किल हो जाता है। वैसे इसमें कोई शंका नहीं है कि अन्य देशों की तरह भारत में भी काफी बड़ा यौन उद्योग है। भारत में एचआईवी सबसे पहले 1986 में यौनकर्मियों में पाया गया था तथा इस देश में अधिकतर एचआईवी संक्रमण यौन संबंध से होते हैं।[5] भारत के अधिकतर हिस्सों में एचआईवी महामारी को फैलाने में व्यावसायिक यौनकार्य की बहुत बड़ी भूमिका रही है।[6] हाल में संक्रमित होने वालों में बहुत बड़ी संख्या उन समर्पित विवाहित स्त्रियों की होती है जिनके पति यौनकर्मियों के नियमित ग्राहक होते हैं।[7]

राष्ट्रीय एड्स नियंत्रण संगठन (नाको) द्वारा 2003 में किए गए अध्ययन से यह पता चला कि कर्नाटक तथा आंध्र प्रदेश में क्रमशः 14 प्रतिशत तथा 19 प्रतिशत यौनकर्मी एचआईवी से प्रभावित थे।[8] मैसूर तथा कर्नाटक में इसके बाद किए गए अध्ययन में यह पाया गया कि 26 प्रतिशत यौनकर्मी संक्रमित थे। उनमें से केवल 14 प्रतिशत ने अपने ग्राहकों के साथ हमेशा कंडोम का प्रयोग किया था तथा 90 प्रतिशत ने अपने नियमित ग्राहकों के साथ कंडोम का प्रयोग कभी नहीं किया था।[9]

यौनकर्मी : असुरक्षित समूह के रूप में

यूएनएड्स ने अपनी या किसी अन्य व्यक्ति की हरकतों से जाने या अनजाने एचआईवी से संक्रमित होने की संभावना के रूप में एचआईवी खतरे को परिभाषित किया है।[10] संक्रमण के प्रति असुरक्षित स्थिति से इस खतरे को नियंत्रित करने में असमर्थता का पता चलता है।[11] कैदियों, आपस में यौन संबंध स्थापित करने वाले पुरुषों, तथा इंजेक्शन का प्रयोग करने वाले नशेड़ियों के महत्त्वपूर्ण समूहों की तरह यौनकर्मियों के समूह के लिए एचआईवी संक्रमण का खतरा आम जनता की तुलना में अधिक है क्योंकि ये ऐसी गतिविधियों में हिस्सा लेते हैं जो उन्हें इस खतरे के और समीप लाती हैं। इसकी एक वजह यह भी है कि इन समूहों के सदस्यों को समाज में किनारे या बहिष्कृत कर दिया जाता है। इससे उन सेवाओं तक इनकी पहुंच बहुत सीमित हो जाती है जो इस संक्रमण के प्रसार को रोकने में अत्यधिक महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं। इन समूहों के मूलभूत अधिकारों को सम्मान नहीं दिए जाने की स्थिति ने इस मामले को और अधिक गंभीर बनाने में अपना योगदान दिया है। इसके अलावा साधनों का अत्यधिक कुप्रबंधन भी इस स्थिति के लिए जिम्मेदार है। इस कुप्रबंधन में संक्रमण की व्यापकता से बेमेल एचआईवी फंड प्रदान करना शामिल है।[12]

यौन संपर्क एचआईवी संक्रमण के फैलने का सामान्य तरीका है और ऐसे वातावरण में इस संक्रमण के फैलने का खतरा अधिक होता है जहां लोग एक से अधिक व्यक्तियों के साथ यौन संबंध स्थापित करते हैं। ऐसा वातावरण इस संक्रमण को फैलाने में सहायक होता है। अतः यौनकर्मी अपने कार्य की प्रकृति तथा कार्यस्थितियों के कारण इस संक्रमण से विशेष तौर पर प्रभावित होते हैं।

---

5 एवर्ट "एचआईवी/एड्स इन इंडिया" http://www.avert.org/aidsindia.htm पर उपलब्ध (अंतिम बार देखने की तिथि 27 अक्टू. 06)

6 यूएन एड्स/डब्ल्यूएचओ "एड्स महामारी अपडेट", दिसम्बर 2005, पृ.33. http://data.unaids.org/Publications/IRC-pub06/epi_update2005_en.pdf पर उपलब्ध (अंतिम बार देखने की तिथि 27 अक्टू. 06) [आगे यूएनएड्स/डब्ल्यूएचओ अपडेट]

7 वही

8 नाको, 2004बी इन यूएनएड्स/डब्ल्यूएचओ अपडेट, वही, पृ.34

9 रजा–पॉल, 2005 इन यूएनएड्स/डब्ल्यूएचओ अपडेट, वही, पृ.34

10 2006, एड्स महामारी रिपोर्ट, पूर्वोक्त टिप्पणी 4, अध्याय 5, पृ.105

11 वही

12 वही

इस समूह की असुरक्षित स्थिति को और अधिक गंभीर बनाने वाले अन्य कारक हैं – इनका यौन शोषण, कानूनी, स्वास्थ्य तथा सामाजिक सेवाओं तक सीमित पहुंच, लैंगिक अंतर या असमानता, हानिकारक निवारक कानून तथा नीतियां या इनकी अपर्याप्त उपस्थिति, सूचना तथा रोकथाम के साधनों तक सीमित पहुंच, कलंक तथा अलगाव और हिंसा, गतिशीलता तथा मादक द्रव्यों का प्रयोग जैसे जीवन शैली से जुड़े खतरों से सामना होना।[13] इनके लिए खतरे के बढ़ जाने तथा इनकी असुरक्षित स्थिति की पुष्टि इस तथ्य से होती है कि कई देशों में यौनकर्मियों में संक्रमण की ऊंची दरें पायी गई हैं।[14]

औरतों की असुरक्षित स्थिति को और अधिक गंभीर करने में लैंगिक अंतर तथा असमानताओं का हाथ रहा है। इसमें लैंगिक मर्यादा तथा यौनभाव और यौनक्रिया से संबंधित गलत धारणाएं शामिल हैं। यौनकार्य से जुड़े कलंक से पृथकता तथा भेदभाव की स्थिति पैदा होती है तथा इससे यौनकर्मी उन सेवाओं को अच्छी तरह प्राप्त नहीं कर पाते हैं जो दूसरे लोगों के लिए आसानी से उपलब्ध होती हैं।[15]

यौनकर्मियों में सीमित कौशल तथा लेन–देन क्षमता होने की संभावना होती है। इसके अलावा ये रोकथाम के साधन प्राप्त करने में असमर्थ हो सकते हैं। प्रायः अपर्याप्त शिक्षा तथा जागरूकता के अभाव के कारण यह स्थिति और अधिक बिगड़ जाती है। शिक्षा के अभाव के कारण लोग यौनकार्य की शुरुआत करते हैं तथा यही वह कारक है जो यौनकर्मियों को इस कार्य में लगातार सक्रिय रखता है।[16] यौनकर्मियों को एचआईवी के बारे में कम जानकारी होती है। ऐसा खासतौर पर इनकी गतिशील जनसंख्या के संदर्भ में देखा गया है। एक अध्ययन के अनुसार सड़क पर कार्य करने वाले यौनकर्मियों में से 30 प्रतिशत को यह नहीं मालूम था कि कंडोम एचआईवी संक्रमण से बचाते हैं। हरियाणा में वेश्यालयों के गतिशील तथा अगतिशील यौनकर्मियों में आधे से कम लोगों को यह मालूम था कि कंडोम एचआईवी की रोकथाम करते हैं। पूरे देश में 42 प्रतिशत यौनकर्मियों का यह मानना था कि वे व्यक्ति की शक्ल सूरत देखकर उसके एचआईवी से ग्रस्त होने का अंदाजा लग सकते हैं।[17]

यद्यपि अन्य कारक यौनकर्मियों के लिए एचआईवी के खतरे को बढ़ाते हैं लेकिन इस समूह में एचआईवी के प्रसार की रोकथाम को असंभव मान लेना गलत होगा। अगर दुनिया के विभिन्न देश अपनी भौगोलिक सीमाओं में यौनकार्य उद्योग की उपस्थिति को स्वीकार कर लें तब इस समूह में एचआईवी के प्रसार को सीमित करने तथा इसकी रोकथाम की दिशा में बहुत कुछ किया जा सकता है। इसके बाद वे उपयुक्त कार्ययोजना पर अमल करने की शुरुआत करते हुए प्रभावित लोगों को उपचार तथा देखभाल की सुविधा प्रदान कर सकते हैं। वास्तविकता तो यह है कि इस उद्योग के साथ प्रायः बहुत बड़ा कलंक या उससे पैदा होने वाला सामाजिक बहिष्कार जुड़ा होता है। यहां तक कि इसके अस्तित्व को भी नकार दिया जाता है। इसका परिणाम यह होता है कि समाज में विशेष तौर पर असुरक्षित इस समूह को आवश्यक सेवाएं उपलब्ध नहीं कराई जाती हैं।

---

13 पूर्वी यूरोप में यूएनएड्स, पूर्वोक्त टिप्पणी 1, पृ.8.

14 उदाहरण के तौर पर, वियतनाम की स्त्री यौनकर्मियों में व्यापकता दर में 1994 के 0.06% से 2002 के 6% के साथ वृद्धि देखने को मिली। 2006 के आंकड़ों के अनुसार इस वर्ग में सूरीनाम में 21% व्यापकता थी, जबकि गुआना में 2004 के आंकड़ों के अनुसार व्यापकता दर 27% था। रूस में 19 वर्ष से कम आयु के यौनकर्मियों पर 2005 में तैयार किए गए रिपोर्ट में यौनकर्मियों में 33% व्यापकता पाई गयी। देखें सेंट्रल तथा इस्टर्न यूरोपियन हार्म रिडक्शन नेटवर्क/ओएसआई, 2005, 2006 में प्रकाशित एड्स महामारी रिपोर्ट के अनुसार, पूर्वोक्त टिप्पणी 4 अध्याय 5, पृ.106. जाम्बिया तथा इथोपिया में क्रमशः 68% तथा 73% जैसी ऊंची व्यापकता दरों के बारे में पता चला है। देखें 2003 में प्रकाशित यूएनएड्स रिपोर्ट, 2006 में प्रकाशित एड्स महामारी रिपोर्ट के उद्धरणानुसार, वही, पृ.107। इन आंकड़ों से यह साफ पता चलता है कि संक्रमण के संदर्भ में पहले से अधिक असुरक्षित स्थिति में होने तथा खतरों के बढ़ने की परिणति ऊंची व्यापकता दरों में हो सकती है।

15 2002 अपडेट, पूर्वोक्त टिप्पणी 2, पृ.8

16 वही

17 एमएपी 2005बी इन यूएनएड्स/डब्ल्यूएचओ अपडेट, पूर्वोक्त टिप्पणी, 6, पृ.34

वेश्यावृत्ति तथा यौनकर्मी कानून और एचआईवी का प्रसार

यौनकार्य तथा एचआईवी के प्रसार के बीच संबंध

इतिहास के सभी कालों में यौनकर्मियों को न केवल समाज के लिए अनिष्टकारी तत्व बल्कि संक्रमण तथा बीमारी के वाहक के रूप में देखा गया है। एचआईवी तथा एड्स के प्रसार के संदर्भ में यह बात साफ तौर पर देखने को मिलती है। बहुत सारे लोगों का यह मानना है कि इनका प्रसार सबसे पहले यौनकार्य उद्योग तथा इंजेक्शन का प्रयोग करने वाले नशेड़ियो जैसे अन्य असुरक्षित समूहों में हुआ तथा उसके बाद ये साधारण जनता के बीच फैले। उदाहरण के तौर पर संयुक्त राज्य अमेरिका ने एचआईवी/एड्स पर काम कर रहे समूहों को मिलने वाली वित्तीय सहायता पर कुछ विवादास्पद पाबंदियां लगायी हैं। ऐसी एक पाबंदी यह है कि उन्हें वेश्यावृत्ति के प्रति अपने विरोध को प्रमाणित करना होगा।[18] हम इस विषय पर आगे चर्चा करेंगे। इस कानून को लागू करते हुए कांग्रेस ने इसका तार्किक आधार स्पष्ट करते हुए कहा कि वेश्यावृत्ति तथा यौन व्यापार "एचआईवी/एड्स की महामारी के फैलने के पीछे छिपे कारण तथा कारक हैं"[19] तथा वेश्यावृत्ति और एचआईवी/एड्स के बीच संबंध दिखाने के लिए आंकड़े प्रस्तुत किए गए।[20]

हाउस ऑव दि रिप्रेजेन्टेटिव में रिपब्लिक दल के सदस्य क्रिस स्मिथ ने इस मुद्दे पर प्रेस के सामने वक्तव्य देते हुए कहा कि संयुक्त राज्य के लिए यह बिल्कुल गलत बात होगी अगर वह ऐसे संगठनों को वित्तीय सहायता दे जो वैध वेश्यावृत्ति तथा 'सुरक्षित सहवास' की गलत धारणा में यकीन रखते हैं और ऐसा करना देह व्यापारियों तथा दलालों को सुविधा प्रदान करने का माध्यम बन जाने के समान होगा।[21]

नीति निर्माताओं तथा मीडिया में इस बात को लेकर बहुत विवाद रहा है कि यौनकार्य उद्योग द्वारा एचआईवी तथा एड्स के प्रसार तथा इन दोनों के बीच संबंध को देखने का कौन–सा तरीका सही है। संक्रमण के खतरे का समीप से सामना कर रहे अन्य समूहों की तरह इस उद्योग के सदस्यों तक इस संक्रमण को सीमित कर देने की बात इस विषय से संबंधित हर नीति के लिए बिना किसी विवाद के महत्वपूर्ण होगी। मगर इस बात को लेकर अभी तक मतभेद बना हुआ है कि समाज के इस विशेष रूप से असुरक्षित तबके को इस प्रक्रिया में किस तरह सक्रिय किया जाना चाहिए। जहां कुछ लोग यौनकार्य को समस्या की तरह देखते हैं, वहीं ऐसे लोग भी हैं जो यौनकर्मियों के लिए ऐसी संभावित भूमिका देख चुके हैं जो उन्हें समस्या के समाधान के अंग के रूप में सक्रिय कर सकती है। इस बारे में निःसन्देह लम्बी–चौड़ी दलील दी जा सकती है कि एचआईवी/एड्स के विरुद्ध संघर्ष में इस लक्ष्य समूह को प्राथमिक भूमिका निभानी चाहिए। इस संघर्ष में उनके शामिल होने से इस व्यवसाय तथा संक्रमण से जुड़े भय तथा कलंक को कम किया जा सकता है। इस समूह से जुड़े कलंक तथा भेदभाव के कारण इसके सदस्यों के मुख्यधारा से कट जाने का खतरा रहता है और ये रोकथाम तथा उपचार के कार्यक्रमों की पहुंच से दूर हो जाते हैं। इस तरह ये अपने तथा अपने

---

18 देखें एचआईवी/एड्स, टीबी तथा मलेरिया के विरुद्ध संयुक्त राज्य अमेरिका नेतृत्व अधिनियम, 2003, 22 यूएससी § 763 (एफ), तथा नीचे परिचर्चा, भाग IV बी {आगे { एड्स के विरुद्ध यूएस नेतृत्व अधिनियम}

19 वही, एट 22 यूएससी 7601 (23)

20 उदाहरण के तौर पर, यह बताया गया कि थाईलैंड में बर्मा की वेश्याओं में 50 से 70 प्रतिशत वेश्याएं एचआईवी पॉजिटिव हैं तथा मुंबई के रेड लाइट इलाकों में 60 प्रतिशत वेश्याएं यौन संपर्क से होने वाले रोगों या एड्स से ग्रस्त हैं। देखें सीनेटर सैम ब्रॉनबैक का वक्तव्य, ट्रैफिकिंग विमेन एंड चिल्ड्रन इन ईस्ट एशिया एंड बियॉन्ड : ए रिव्यू ऑव यूएस पॉलिसी, हियरिंग बिफोर द सबकॉम ऑन ईस्ट एशियन एंड पैसिफिक अफेयर्स ऑव द कमि. ऑन फॉरेन रिलेशंस 108वीं कांग्रेस 18 (2003), ओपन सोसाइटी इंटरनेशनल एट आल बनाम यूनाइटेड स्टेट्स एजेंसी फॉर इंटरनेशनल डेवलपमेंट के मामले में मारेरो जे. अलायन्स का निर्णय, यूनाइटेड स्टेट्स डिस्ट्रिक्ट कोर्ट, एफ.सप. 2डी 222 एट 232, मई 8 2006, 430

21 ऑफिस ऑव यूएस रिप्रेजेन्टेटिव, क्रिस स्मिथ। 'हाउस कमेटी ने देह व्यापार तथा वेश्यावृत्ति पर महत्वपूर्ण स्मिथ संशोधन के साथ एड्स विधेयक पारित कर दिया।' समाचार जारी, 2 अप्रैल 2003, जे. सेटे, एमसेशु, 'स्टिल अंडरग्राउंड : सर्चिंग फॉर प्रोग्रेस इन रियलाइजिंग द ह्यूमन राइट्स ऑव वीमेन इन प्रॉस्टिट्युशन', एचआईवी/एड्स पॉलिसी एंड लॉ रिव्यू, अंक 9, प्रति 3, 2004, पृ.1 एट 8

ग्राहकों के लिए संक्रमण के खतरे को बढ़ा देते हैं। नीति निर्माण तथा कार्यान्वयन में उनकी साझेदारी से संदेश को भी विश्वसनीयता मिलेगी और इससे इस प्रक्रिया में समाज के सभी तबकों की भागीदारी सुनिश्चित होगी। इसके अलावा इस प्रक्रिया से इन कर्मियों को तथा खासतौर पर औरतों को अपनी, अपने ग्राहकों तथा अपने परिवारों की सुरक्षा के साधन प्राप्त होंगे। यह सब देखते हुए वेश्यावृत्ति का अपराधीकरण तथा इस पर कड़े दंड तथा जुर्माना लगाना इस व्यवसाय तथा साधारण जनता दोनों के आदर्श व्यवहार तथा हितों के विरुद्ध होगा। इसके बावजूद एचआईवी तथा एड्स के प्रसार के साथ यौनकार्य के संबंध तथा स्वास्थ्य की रक्षा करने की आवश्यकता को मीडिया तथा नीति निर्माताओं, दोनों ने कई मामलों में कठोर कानूनी कार्यवाही, लांछन तथा नैतिक असहिष्णुता को न्यायोचित ठहराने के लिए किया है। एचआईवी/एड्स के विरुद्ध किए जा रहे संघर्ष में ऐसे प्रयत्नों से मदद मिलने के बदले बाधा उत्पन्न होती है और ये न केवल यौनकर्मियों बल्कि साधारण जनता के स्वास्थ्य के लिए भी अहितकर साबित होते हैं।

अपराधीकरण के नकारात्मक परिणाम

यौनकार्य या इससे संबंधित तत्त्वों के अपराधीकरण से इस व्यवसाय से जुड़े लोगों के लिए एचआईवी प्रसार तथा संक्रमण का बढ़ा हुआ खतरा समेत अन्य कई नकारात्मक तथा गंभीर परिणाम हो सकते हैं।[22] विशेष कर यौनकर्मी के हित तथा सुरक्षा के साथ बड़ा समझौता कर लिया जाता है[23] यौनकर्मियों में अपने ग्राहकों के साथ सौदा करने की सीमित क्षमता होती है क्योंकि उन्हें कानून तथा अधिकारों से यह सुनिश्चित करने में कोई मदद नहीं मिलती है कि उनके हितों का ध्यान रखा जाएगा और कर्मी तथा ग्राहक के बीच शक्ति का समान संतुलन रहेगा। इससे अपने ग्राहकों के साथ कंडोम का प्रयोग करने जैसे आवश्यक उपायों पर जोर देने की उनकी क्षमता महत्वपूर्ण रूप से सीमित हो जाती है। यहां साक्ष्य से संबंधित मुद्दे भी उठते हैं क्योंकि अपने पास कंडोम रखने को वेश्यावृत्ति के साक्ष्य के रूप में भी देखा जा सकता है।[24] इसके अलावा अपराधीकरण से इस बात की संभावना कम हो जाती है कि व्यावसायिक यौनकर्मी बलात्कार तथा दुर्व्यवहार के बारे में अधिकारियों को सूचित करेंगे। उनके लिए प्रायः यह रास्ता बंद हो जाता है क्योंकि उनका कार्य अवैध होता है। इससे दुर्व्यवहार की समस्या की जड़ें मजबूत होती हैं तथा यह ऐसी हरकतों तथा संबंधित स्वास्थ्य खतरों को दंड के अभाव में समाज में बनाए रखता है।

अपराधीकरण तथा कठोर दंड के साथ एक और बात जुड़ी है कि यौनकर्मियों द्वारा इस उद्योग को छोड़ने की इच्छा रखने की स्थिति में अपने आपराधिक रिकॉर्ड के कारण उनके पास रोजगार के सीमित अवसर रहते

---

22 यौनकार्य के अपराधीकरण, वैधीकरण या विनियमन पर विवाद से संबंधित अधिक जानकारी के लिए देखें 'प्रिपेयरिंग फॉर सिविल डिसओबिडिएन्स : इंडियन सेक्स वर्कर्स एंड द लॉ', बॉस्टन कॉलेज थर्ड वर्ल्ड लॉ जर्नल, अंक 21, 2001, पृ.161; जैनेट हाली एट आल 'फ्रॉम द इंटरनेशनल टु द लोकल इन फेमिनिस्ट लीगल रिस्पॉन्सेज टु रेप, प्रॉस्टिट्युशन/सेक्स वर्क, एंड सेक्स ट्रैफिकिंग : फोर स्टडीज इन कंटेम्परारी गवर्नेंस फेमिनिज्म', हार्वर्ड जर्नल ऑव लॉ एंड जेंडर, अंक 29, 2006, पृ.335; तथा सिल्विया ए. लॉ, 'कॉमर्शियल सेक्स : बियॉन्ड डिक्रिमिनलाइजेशन', साउथर्न कैलिफोर्निया लॉ रिव्यू, अंक 73, 2000, पृ.523

23 कर्मियों के कल्याण पर अपराधीकरण के नकारात्मक प्रभाव से संबंधित विवाद के बारे में और अधिक जानने के लिए देखें, द यूरोपियन इंटरवेन्शन प्रोजेक्ट्स, एड्स प्रीवेन्शन फॉर प्रॉस्टिट्युट्स, http://users.ugent.be/~rmark/europap/index.html पर उपलब्ध (अंतिम बार देखने की तिथि 27 अक्टू. 06)

24 यहां सैन फ्रांसिस्को में वेश्यावृत्ति के मुद्दे पर काम करने के लिए गठित कार्य दल द्वारा तैयार की गई रिपोर्ट प्रासंगिक है। इस रिपोर्ट में मेयर, जिला एटॉर्नी तथा पुलिस चीफ से' अनुरोध किया गया कि वे कंडोम रखने के तथ्य का उपयोग जांच अथवा अदालती साक्ष्य में जब्ती या फेरबदल के लिए नहीं करें।' इसका परिणाम यह हुआ कि 1995 में सैन फ्रांसिस्को में जिला एटॉर्नी के कार्यालय से यह सूचना प्रसारित हुई कि कंडोम का उपयोग स्वामित्व के साक्ष्य रुप में नहीं किया जाएगा। देखें सैन फ्रांसिस्को कार्यदल द्वारा वेश्यावृत्ति पर तैयार अंतिम रिपोर्ट (मार्च, 1996 में सैन फ्रांसिस्को के पर्यवेक्षक बोर्ड के समक्ष प्रस्तुत हुआ), कारोल लेघ के 'ए फस्ट हैंड लुक एट द सैन फ्रांसिस्को टास्क फोर्स रिपोर्ट ऑन प्रॉस्टिट्युशन', में हुई चर्चा के अनुसार, हैस्टिंग्स वीमेन्स लॉ जर्नल, अंक 10, 1999, पृ.59 एट 78.

है। यौनकार्य से जुड़े कलंक और इस स्थिति को पहले से अधिक बिगाड़ने वाले कठोर कानूनी प्रावधान तथा इन कर्मियों के अधिकारों को नहीं मानने के कारण एक ऐसी समस्या उठ खड़ी है जिसके कारण यौनकर्मियों के लिए आवश्यक स्वास्थ्य देखभाल, मदद तथा शिक्षा की सेवाएं प्राप्त करना बहुत मुश्किल हो गया है।

वेश्यावृत्ति या इसके अन्य पहलुओं जैसे वेश्यावृत्ति से जीवन–यापन करना या वेश्यालय चलाना आदि को आपराधिक गतिविधि मानने वाली नीति का घोषित उद्देश्य यौन उद्योग में भागीदारी को हतोत्साहित करना, देह व्यापार पर रोक लगाना या समाज के लिए स्वास्थ्य के खतरों को कम करना हो सकता है। अधिकतर व्यक्ति इसे अच्छा कार्य मानते हैं।[25] परन्तु वास्तविकता तो यह है अधिक कठोर कानूनों से बहुत कम वेश्याओं पर रोक लग पाएगी। विभिन्न सामाजिक, आर्थिक तथा अन्य कारणों से इनकी मांग तथा पूर्ति में कमी देखने को नहीं मिलती है। इस तथ्य को नहीं समझ पाने तथा नीति के मसौदों तथा कार्यान्वयन में इसका ध्यान नहीं रख पाने के नकारात्मक प्रभाव होंगे, इसका परिणाम यह होगा कि यौनकर्मियों, उनके ग्राहकों तथा उनके परिवारों के लिए पहले से अधिक असुरक्षित स्थिति पैदा होगी।

यौनकर्मियों के मानव अधिकार

ऊपर वर्णित आपराधिक कानूनी पाबंदियों से उपजी स्थितियों के अलावा इस उद्योग से जुड़ी अन्य अपमानजनक परिस्थितियों की वजह से यौनकर्मियों के अधिकारों तथा सम्मान का निरन्तर हनन होता है। इसमें देह व्यापार, बलपूर्वक श्रम कराना तथा औरतों और बच्चों को गुलाम बनाना; उनकी स्वतंत्रता, निजता तथा दैहिक समग्रता को नकारना; भेदभाव तथा रोजगार की असंतोषजनक दशाएं शामिल हैं। सैद्धान्तिक रूप से यौनकर्मियों को ऐसे सभी मानव अधिकार तथा स्वतंत्रता प्राप्त है जो पूरी मानव जाति के संदर्भ में अहरणीय तथा अन्तर्निहित हैं। राज्यों का यह विशेष कर्तव्य है कि वे समाज के सर्वाधिक असुरक्षित तबकों के इन अधिकारों की रक्षा तथा पूर्ति करें। यौनकार्य के प्रति राज्य के दृष्टिकोण से इस कर्तव्य पर कोई अंतर नहीं पड़ता है। अलग–थलग पड़ते जा रहे समूह के तौर पर यौनकर्मियों के लिए एचआईवी संक्रमण का विशेष खतरा है, मगर प्रायः इनके पास अपनी सुरक्षा के लिए संघर्ष करने तथा जोर डालने लायक हैसियत तथा आवाज नहीं होती है। ऐसी स्थिति में सरकार की यह जिम्मेदारी बनती है कि वह उनकी आवश्यकताओं को अच्छी तरह पूरा करे। लेकिन अधिकतर यौनकर्मियों की वास्तविक स्थिति कुछ और ही बताती है। इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए यह आवश्यक है कि उन्हें सेवाएं, शिक्षा तथा अवसर प्रदान किए जाएं और निर्णयन–कार्य तथा नीति निर्धारण में उनकी वास्तविक भागीदारी सुनिश्चित की जाए। इसके अलावा उनके संवैधानिक तथा मूलभूत अधिकारों को लागू करना भी इस संदर्भ में महत्त्वपूर्ण है। इन व्यक्तियों को सुरक्षा प्रदान करने तथा एचआईवी के प्रसार के विरुद्ध संघर्ष को अधिक व्यापक सन्दर्भों में ले जाने के लिए इन व्यक्तियों के मानव अधिकारों की रक्षा करना आवश्यक है।

जहां एक ओर यौनकर्मियों के अधिकारों को स्थानीय तथा राष्ट्रीय पहलों में सम्मिलित करने के प्रयत्न हुए हैं,[26] वहीं दूसरी ओर हाल में समीक्षकों ने यौनकार्य से जुड़े लोगों के स्वास्थ्य तथा अधिकारों से संबंधित

25 यौन व्यवसाय में औरतों की भागीदारी के संदर्भ में इस विषय पर स्त्रीवादी विवाद होता आया है कि क्या इसमें औरतों का उत्पीड़न अनिवार्य रूप से मौजूद होता है तथा इसे हमेशा नकारात्मक मानकर चलना चाहिए, या क्या यह वास्तविकता में औरतों द्वारा अपनी जीविका चुनने के अधिकार का प्रदर्शन करने वाली स्वैच्छिक गतिविधि है। अधिक जानने के लिए देखें, बेर्टा ई. हेरनानडेज–ट्रुयोल व जेन ई. लार्सन,' सेक्सुअल लेबर एंड ह्यूमन राइट्स', कोलम्बिया ह्यूमन राइट्स लॉ रिव्यू', अंक 37, 2006, पृ.391; तथा मिकलो बिंघम, 'नवेदा सेक्स ट्रेड : ए गैम्बल फॉर द वर्कर्स', येल, जर्नल ऑव लॉ एंड फेमिनिज्म, अंक 10, 1998, पृ.69.

26 उदाहरण के तौर पर, भारत के संदर्भ में 'संग्राम' (संपदा ग्रामीण महिला संस्थान) जैसी संस्थाएं स्थानीय स्तर पर 'पीपीएस' (पीपुल एन प्रॉस्टीच्युशन एंड सेक्स वर्क – वेश्यावृत्ति तथा यौनकार्य में सक्रिय जनता) के साथ पिअर एजुकेशन मॉडलों के माध्यम से उनके साथ काम करते हुए उन्हें उनके अधिकारों तथा पात्रताओं के बारे में बताने के साथ–साथ उन्हें अपने आप को सुरक्षित रखने में समर्थ बना रही हैं। देखें http://www.com-minit.com/experiences/pds92004/experiences-2059.html. (अंतिम बार देखने की तिथि 27 अक्टू. 06)

नीतियों तथा कार्यक्रमात्मक मदद की पहलों के कम हो जाने के 'चिंताजनक बदलाव'[27] को रेखांकित किया है। इस स्थिति के लिए कुछ हद तक अमेरिका की उस शक्तिशाली देह व्यापार विरोधी लॉबी को जिम्मेदार बताया जाता है जिसने ऊपर रेखांकित की गई नीतियों के द्वारा वेश्यावृत्ति के साथ–साथ देह व्यापार के दानवीकरण को बढ़ावा देते हुए इन दो विशिष्ट गतिविधियों के बीच के अंतर को अस्पष्ट बनाया है।[28] इस दानवीकरण ने ऐसे विचार–क्षेत्र में अपनी जगह शीघ्रतापूर्वक बना ली है जहां आज भी विमर्श के लिए नैतिक तथा धारणात्मक भाषा का प्रयोग होता है।[29]

अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर मानव अधिकार से संबंधित ऐसे अनेक रिवाज, मानदंड, घोषणाएं तथा अनुमोदन हैं जो लागू किए जाने पर इन स्त्रियों के अधिकारों की रक्षा में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभा सकते हैं। इस समूह की सुरक्षा के लिए बनाई जा रही किसी फ्रेमवर्क में मानव अधिकारों की वैश्विक उद्घोषणा (यूडीएचआर)[30] महिलाओं के प्रति हर तरह के भेदभाव के उन्मूलन के लिए कन्वेंशन,[31] नागरिक तथा राजनीतिक अधिकारों पर अंतर्राष्ट्रीय समझौता[32] तथा आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक अधिकारों पर अंतर्राष्ट्रीय समझौता[33] का केन्द्रीय महत्व होगा। दासता तथा देह व्यापार से विशेष तौर पर संबंधित समझौतों को भी ध्यान में रखना चाहिए।[34] अंतर्राष्ट्रीय श्रम संगठन (आईएलओ) द्वारा श्रम तथा रोजगार अधिकारों के पक्ष में किया जा रहा कार्य भी यहां प्रासंगिक है।[35] इसके अलावा, सुरक्षा के कार्य को आगे बढ़ाने में उन दिशानिर्देशों की भी भूमिका रही है जो हाल के वर्षों में सहस्त्राब्दी विकास लक्ष्य,[36] एचआईवी/एड्स पर संयुक्त राष्ट्र साधारण सभा का विशेष सत्र,[37] बीजिंग उद्घोषणा और विकास का मंच और जनसंख्या तथा विकास[38] पर अंतर्राष्ट्रीय सम्मेलन[39] जैसी पहलों के माध्यम से अस्तित्व में आए हैं।

यहां यह प्रस्तावित किया जाता है कि एचआईवी तथा एड्स के प्रसार के संदर्भ में यौनकर्मियों की सुरक्षा के लिए अंतर्राष्ट्रीय कानून में किसी फ्रेमवर्क का निर्देश होना चाहिए।

---

27 जे सेटे, एम सेशु, पूर्वोक्त टिप्पणी 21, एट 8

28 वही, एट 8

29 देह व्यापार और वेश्यावृत्ति पर अमरीकी नीति के प्रभाव पर अतिरिक्त विमर्श के लिए देखें, 'जैक्वेलिन बेरमैन, 'द लेफ्ट, द राइट एंड द प्रॉस्टिच्यूट : द मेकिंग ऑव यूएस एंटी ट्रैफिकिंग इन पर्सन्स पॉलिसी' टूलेन जर्नल ऑव इंटरनेशनल एंड कम्पेरेटिव लॉ, अंक 14, 2006, पृ.269; तथा लॉरिन ई बेयर, 'मेकिंग ऐनेमिज फ्रॉम एलाइस : हाउ द ग्लोबल एड्स एक्ट अंडरमाइन्स पार्टनरशिप्स टू कॉम्बैट एड्स एंड सेक्स ट्रैफिकिंग', येल जर्नल ऑव इंटरनेशनल लॉ, अंक 31, 2006, पृ.513.

30 जीए रेस 217 ए (III) ऑव 10 दिसंबर, 1948 यूएनजीएओआर, यूएन डॉक ए/810, 171 (1948) {आगे यूडीएचआर}

31 18 दिसं. 1974,1249 यूएनटीएस 13, 19, 19 आईएलएम 33

32 16 दिसं., 1966, 999 यूएनटीएस 171, 6 आईएलएम 368 (1967) {आगे आईसीसीपीआर}

33 16 दिसं., 1966, 993 यूएनटीएस 3, 6, आईएलएम 360 (1967) {आगे आईसीईएससीआर}

34 देखें, फुटनोट 41 तथा संबंधित पाठ

35 देखें, फुटनोट. 59–64 तथा संबंधित पाठ

36 लक्ष्य संख्या 6 के अनुसार एचआईवी/एड्स के प्रसार को रोककर इसको पूरी तरह समाप्त करने की प्रक्रिया का आरम्भ करना है। अधिक जानकारी के लिए देखें http:/www.un.org/millenlumgoals/index.html (अंतिम बार देखने की तिथि 27 अक्टू. 06)

37 2001 में बुलाए गए इस सत्र में संयुक्त राष्ट्र की साधारण सभा ने एड्स पर 'वैश्विक संकट वैश्विक संघर्ष ' नामक प्रतिबद्धता घोषणा पारित की। कलंक तथा लैंगिक भेदभाव जैसे मुद्दों की प्रासंगिकता को स्वीकार करते हुए इसमें इन विषयों पर ध्यान केन्द्रित किया गया : नेतृत्व; रोकथाम, देखभाल, सहायता तथा उपचार; एचआईवी/एड्स तथा मानव अधिकार; संक्रमण के खतरे को कम करना, अनाथ बच्चे; सामाजिक तथा आर्थिक प्रभाव कम करना; शोध तथा विकास; संघर्ष तथा प्राकृतिक विनाश से प्रभावित इलाकों में एचआईवी/एड्स; तथा साधन। http://www.un.org/ga/aids/coverage/FinalDeclarationHIVAIDS.html (अंतिम बार देखने की तिथि 27 अक्टू. 06)

38 सैद्धान्तिक लक्ष्य 3सी के अनुसार लिंग के प्रति ऐसे संवेदनशील कदम उठाने हैं जो यौन संसर्ग से पैदा होने वाली एचआईवी/एड्स जैसी बीमारियों तथा यौन व प्रजनक स्वास्थ्य से जुड़े मुद्दों पर केन्द्रित हो तथा सैद्धान्तिक लक्ष्य। स्त्रियों के अधिक सामान्य अधिकारों से संबंधित है http://www.un.org/womenwatch/daw/beijing/platform/ पर उपलब्ध (अंतिम बार देखने की तिथि 27 अक्टू. 06)

39 कैरो, मिस्र में 1994 में आयोजित। अंतिम सर्वसम्मत कार्यक्रम, http://www.iisd.ca/Cairo/program/p00000.html पर उपलब्ध (अंतिम बार देखने की तिथि 27 अक्टू. 06)

अंतर्राष्ट्रीय कानून में यौनकर्मियों के अधिकार

देह व्यापार कानून[40]

1949 में देह व्यापार तथा वेश्यावृत्ति में अन्य व्यक्तियों द्वारा शोषण के दमन के लिए संयुक्त राष्ट्र समझौता हुआ था। वर्ष 1951 से यह यौनकर्मियों से जुड़े मामलों के लिए मूलभूत अंतर्राष्ट्रीय समझौता के रूप में लागू है।[41] यह कन्वेंशन ऐसे अन्य अंतर्राष्ट्रीय कन्वेंशनों पर आधारित थी जो औरतों या बच्चों के व्यापार या अक्सर श्वेत दास व्यापार के रूप में वर्णित गतिविधि के दमन के लिए पहले से लागू थी।[42] देह व्यापार "मानव अधिकारों के सबसे उग्र उल्लंघनों में से एक" माना जाता है क्योंकि इससे "स्त्रियों की व्यक्तिगत पहचान धीरे धीरे खत्म हो जाती है और सभ्य समाज में स्वतंत्र व्यक्ति की तरह जीने के अधिकार से वे वंचित हो जाती हैं। उत्पीड़ित व्यक्ति को हिंसा तथा सम्पूर्ण अवमानना का सामना करना पड़ता है तथा उनके व्यक्तित्व की समग्रता का उल्लंघन होता है।"[43] इन्हीं कारणों से सर्वोच्च न्यायालय की न्यायाधीश सुजाता मनोहर ने देह व्यापार को दासता का आधुनिक रूप बताया है।[44]

कन्वेंशन की प्रस्तावना में यह स्वीकार किया गया है कि वेश्यावृत्ति तथा इसके साथ होने वाले देह व्यापार नामक बुराइयां व्यक्ति की गरिमा तथा महत्ता के विरुद्ध होती हैं तथा इनसे व्यक्ति, परिवार तथा समुदाय का अहित होता है। इसी प्रकार धारा–(1) के अनुसार, वेश्यावृत्ति के लिए किसी व्यक्ति को खरीदना, प्रलोभन देना या बाध्य करना या फिर उसकी स्वीकृति से उसे इस कार्य में लगाना या (2) वेश्यावृत्ति की सेवा का ग्राहक बनना अपराध है, भले ही यह सेवा स्वैच्छिक रूप से दी जा रही हो। आगे धारा–(2) में सदस्य राज्य ऐसे किसी व्यक्ति को दंडित करने पर अपनी स्वीकृति देते हैं जो (1) वेश्यालय का स्वामी या प्रबंधक है, या इसमें अपनी जानकारी से धन लगाता है या इसकी वित्तीय आवश्यकताओं को पूरा करने वालों में सम्मिलित होता है या जो दूसरों के द्वारा की जा रही वेश्यावृत्ति के लिए जानबूझकर अपना भवन या दूसरी जगह देता या किराए पर लगाता है। धारा–6 के अनुसार, सदस्य राज्यों को ऐसे मौजूदा कानून, नियम या व्यवस्था को निरस्त या समाप्त करना होगा जिसमें वेश्यावृत्ति में संलग्न या संदेहात्मक रूप से सक्रिय व्यक्तियों के लिए विशेष पंजीकरण या अपवादात्मक परिस्थितियों में पर्यवेक्षण या अधिसूचना की व्यवस्था है। धारा–16 के अनुसार कन्वेंशन के पक्षों ने यह स्वीकार किया कि वे व्यक्तिगत तथा सरकारी शैक्षणिक, स्वास्थ्य, सामाजिक आर्थिक तथा अन्य संबंधित सेवाएं प्रदान करते हुए ऐसे कदम उठाएंगे या ऐसे प्रयत्नों को प्रोत्साहित करेंगे जिनसे वेश्यावृत्ति की रोकथाम और इसके शिकार लोगों का पुनर्वास तथा समायोजन हो सके। उन्होंने ऐसे नियम बनाने का भी उत्तरदायित्व लिया जिनसे आगमन के साथ–साथ प्रस्थान की जगहों में तथा यात्रा के दौरान आप्रवासियों या प्रवासियों, खासतौर पर औरतों तथा बच्चों की रक्षा की जा सके (धारा–17 (1)। इसके

40 देह व्यापार तथा इसके शिकार व्यक्तियों से संबंधित मानव अधिकारों के मुद्दे पर अधिक जानकारी के लिए देखें शेली केस इंगलिश 'एक्सपैंडिंग इंटरनेशनल एंड नेशनल प्रोटेक्शंस अगेंस्ट ट्रैफिकिंग फॉर फोर्स्ड लेबर यूजिंग ए ह्यूमन राइट्स नेटवर्क', बफैलो ह्यूमन राइट्स लॉ रिव्यू, अंक 7, 2001 पृ.55, अबिगैल स्वार्ट्स, 'सेक्स ट्रैफिकिंग इन कम्बोडिया', कोलंबिया जर्नल ऑव एशियन लॉ, अंक 17, 2004, पृ.371; तथा निलांजना रॉय, 'लुकिंग एट ट्रैफिकिंग थ्रू ए न्यू लेंस', कार्डोजो जर्नल ऑव लॉ एंड जेंडर, अंक 12, 2006, पृ.909

41 2 दिसं., 1949, 96 यूएनटीएस 271 {आगे देह व्यापार कन्वेंशन}

42 देखें श्वेत दास व्यापार के दमन पर अंतर्राष्ट्रीय समझौता, 18 मई 1904, 34 स्टेट 426, 1 एलएनटीएस 83 (दिसं. 3, 1948 के प्रोटोकॉल द्वारा संशोधित), 195 पैरीज टीएस 326 में पुनर्मुद्रित; श्वेत दास व्यापार के दमन पर अंतर्राष्ट्रीय कन्वेंशन, 4 मई, 1910, 211 कंसोल टीएस, 45 1912 जीआर ब्रिट. टीएस नं. 20 (20 अक्टू, 1947 के प्रोटोकॉल द्वारा संशोधित); तथा औरतों और बच्चों के देह व्यापार के दमन पर अंतर्राष्ट्रीय कन्वेंशन, 30 सितम्बर, 1921, 9 एलएनटीएस, 415

43 औरतों तथा लड़कियों का देह व्यापार, विशेषज्ञ संमूह बैठक, 18–22 नवम्बर 2002, ग्लेन कोव, न्यूयॉर्क, अमेरिका, न्यायमूर्ति सुजाता मनोहर द्वारा प्रस्तुत, परामर्शदाता, फोकल प्वाइंट ऑन ट्रेफिकिंग इन ह्यूमन बींग्स, नेशनल ह्यूमन राइट्स कमीशन (इंडिया), यूएन डॉक ईजीएम/टीआरएएफ/2002/डब्ल्यूपी 1 (8 नवम्बर 2002), देखें अनुच्छेद–2.1

44 वही

अलावा धारा–20 के अनुसार राज्यों की यह जिम्मेदारी बनती है कि वे रोजगार की तलाश कर रहे लोगों को वेश्यावृत्ति के खतरे से बचाने के लिए रोजगार एजेन्सियों पर निगरानी के लिए आवश्यक कदम उठाएं (धारा–20)।

इस कन्वेंशन में वेश्यावृत्ति स्वीकार करने के वयस्कों के सैद्धान्तिक अधिकार को अव्यक्त तौर पर माना गया है। लेकिन कुछ लोगों ने यह कहकर इसकी आलोचना की है कि यह कन्वेंशन यौनकर्मियों के अधिकारों का उचित सम्मान नहीं करता है क्योंकि यह इस "प्रस्तावना पर आधारित है कि यौनकार्य समाप्त होना चाहिए तथा अव्यक्त तौर पर इसका समर्थन करता है कि यौनकर्मियों को अनिवार्य रूप से उत्पीड़ित मानना चाहिए और इन्हें यौनकर्मियों को सही रास्ते पर लाना तथा उन्हें पुनर्वासित करना होगा।[45] इस हिसाब से प्रत्येक यौनकर्मी को उत्पीड़ित मानना होगा। यह मान्यता कार्य के अधिकार जैसे अधिकारों तथा स्वतंत्रताओं पर उनके वैध दावे को कमजोर करने में अपनी भूमिका निभाती है तथा ऐसी सरकारी नीतियों को औचित्य प्रदान करती है जिनके माध्यम से यौनकार्य तथा इसमें सम्मिलित व्यक्तियों का अपराधीकरण जारी है। जोआन्ने सेते तथा मीना सेशु के अनुसार इस दृष्टिकोण के कारण यौनकर्मियों के लिए गंभीर परिणाम सामने आ सकते हैं। यह निर्विवाद है कि यौनकार्य के प्रेरक–तत्त्व जटिल तथा विविध होते हैं और कुछ औरतें वेश्यावृत्ति को इसलिए स्वीकार करती है क्योंकि उनके पास जीविका के अत्यन्त सीमित साधन होते हैं। मगर वेश्यावृत्ति को इसमें सक्रिय महिला के संदर्भ में विकल्पहीन या कर्ता–भाव रहित गतिविधि मानना यौनकर्मियों के लिए अनादर तथा उनके मानव अधिकारों के उल्लंघन के समान होगा और इसकी तुलना उस कलंक से की जा सकती है जो यौनकर्मी अक्सर झेलते हैं।[46]

देह व्यापार, विशेषकर औरतों तथा बच्चों के व्यापार के दमन, रोकथाम तथा दंड पर प्रोटोकॉल इस मुद्दे पर नवीनतम अंतर्राष्ट्रीय प्रपत्र है तथा यह अंतर्देशीय संगठित अपराध के विरुद्ध यूएन कन्वेंशन का पूरक है।[47] ऊपर वर्णित स्थिति को सुधारने में इसकी भूमिका नहीं के बराबर रही है। इसमें अभी भी 1949 के पुराने कन्वेंन्शन की भाषा से मिलती जुलती अभिव्यक्ति का प्रयोग हुआ है और इस तरह इस उद्योग की औरतों के अधिकारों तथा सचेत सक्रियता में वृद्धि करने की दिशा में इसका कोई विशेष योगदान नहीं रहा है। अभी तक एक तरफ देह व्यापार और बलात् वेश्यावृत्ति तथा दूसरी तरफ स्वैच्छिक वेश्यावृत्ति के बीच के अंतर को मान्यता नहीं मिली है। यह स्थिति इन कर्मियों के अपराधीकरण तथा इनके मूलभूत अधिकारों को नकारने के लिए अतिरिक्त औचित्य प्रदान करती है।

इसी प्रकार, 1926 के दास कन्वेंशन[48] तथा 1956 के इसके पूरक कन्वेंशन[49] में यौनकर्मियों से संबंधित कुछ व्यवस्थाएं हैं। समझौता करने वाले पक्षों ने दास व्यापार को इसके हर रूप में खत्म करने पर अपनी स्वीकृति प्रदान की। पूरक कन्वेंशन की धारा–1 में इसकी परिभाषा में ऋण दासता तथा बंधुआश्रम के ऐसे अन्य प्रकारों को सम्मिलित किया गया जो देह व्यापार के शिकार यौनकर्मियों के कार्य की स्थितियों को खुद में समेट सकें।

देह व्यापार कन्वेंशन के अलावा ऐसे अनेक अपेक्षाकृत अधिक सामान्य मानव अधिकार उपकरण हैं जो यौन उद्योग में सक्रिय व्यक्तियों के लिए महत्वपूर्ण हैं। यहां हम सुरक्षा के फ्रेमवर्क में उनसे संबद्ध योगदान का संक्षिप्त विवरण प्रस्तुत करेंगे।

---

45 सेटे तथा सेशु, पूर्वोक्त टिप्पणी 21, एट 12

46 वही, पृ.9

47 जीए रेस 55/25 द्वारा अंगीकृत, यूएन जीएओआर/55 सेस. यूएन डॉक., ए/आरईएस/55/25, (2000), भारत ने अभी तक इसकी संपुष्टि नहीं की है तथा यह अभी तक प्रभावी नहीं हुआ है।

48 दास व्यापार तथा दासता के दमन के लिए अंतर्राष्ट्रीय कन्वेंशन, 25 सिंत 1926, 60 एलएनटीएस पृ. 253, 46 स्टेट. 2183 {आगे 'दासता कन्वेंशन'}

49 दासता, दास व्यापार तथा दासता से मिलती जुलती संस्थाओं तथा प्रथाओं के दमन पर पूरक कन्वेंशन, 30 अप्रैल, 1957, 266 यूएनटीएस 40, 18 यूएसटी 3201, ईएससी रेस द्वारा अंगीकृत, 608 (XXI), 30 अप्रैल 1956 {आगे 'पूरक दासता कन्वेंशन'}

सामान्य मानव अधिकार कानून

वैश्विक मानव अधिकारों की रक्षा से संबंधित हर अंतर्राष्ट्रीय फ्रेमवर्क के आधारस्तंभ के रूप में वर्णित "मानव अधिकारों की वैश्विक घोषणा"[50] में इस मुद्दे से संबंधित अनेक महत्त्वपूर्ण सिद्धांतों का उल्लेख हुआ है। इस घोषणा के अनुसार हर मनुष्य तथा हर देश के लिए उपलब्धि का समान मानक तैयार करना है ताकि हर व्यक्ति तथा समाज का हर अंग .... सीख तथा शिक्षा के माध्यम से इन अधिकारों तथा स्वतंत्रताओं के प्रति आदर में वृद्धि करे तथा उनकी सार्वभौम तथा वास्तविक मान्यता तथा पालन को सुनिश्चित करने के लिए राष्ट्रीय तथा अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर प्रगतिशील कदम उठाए।"[51] प्रस्तावना में मानव परिवार के सभी सदस्यों की अन्तर्निहित गरिमा तथा उनके अहरणीय मानव अधिकारों को मान्यता दी गई है, पुरुष तथा स्त्री के समान अधिकारों तथा सामाजिक प्रगति और बेहतर जीवनस्तर के प्रति संकल्प को स्वीकार किया गया है तथा मानव अधिकारों और मूलभूत अधिकारों के प्रति सार्वभौम आदर तथा इनके पालन को बढ़ावा देने का संकल्प लिया गया है। धारा–2 के अनुसार प्रत्येक व्यक्ति को इस घोषणा में वर्णित अधिकार तथा प्रतिष्ठा प्राप्त है। आगे धारा–3 के अनुसार प्रत्येक व्यक्ति को जीवन, स्वतंत्रता तथा रक्षा का अधिकार प्राप्त है। किसी व्यक्ति को दासता या श्रमबन्दिता की स्थिति में नहीं रखा जा सकता है तथा दासता या दास व्यापार अपने हर रूप में प्रतिबंधित है।[52] समानता का अधिकार तथा कानून के समक्ष सुरक्षा के समान अधिकार को धारा–7 में सम्मिलित किया गया है। आगे धारा–12 के अनुसार किसी व्यक्ति के जीवन में निजता, परिवार, घर या पत्राचार के संदर्भ में मनमाना हस्तक्षेप नहीं किया जाएगा। प्रत्येक व्यक्ति को प्राप्त आवागमन के अधिकार तथा राज्यक्षेत्र में निवास के अधिकार को धारा–13 (1) में रेखांकित किया गया है। धारा–20 (1) के अनुसार प्रत्येक व्यक्ति को शांतिपूर्ण सभा तथा सम्मेलन आयोजित करने का अधिकार है। सामाजिक सुरक्षा के अधिकारों की रक्षा धारा–22 में की गई है। प्रत्येक व्यक्ति को प्राप्त कार्य, रोजगार के स्वतंत्र चुनाव तथा कार्य की उचित तथा अनुकूल स्थितियों के अधिकार को रेखांकित करने वाली धारा–23 यौनकर्मियों के लिए विशेष तौर पर महत्त्वपूर्ण है। धारा–25 भी महत्त्वपूर्ण है जो प्रत्येक व्यक्ति के लिए ऐसे जीवनस्तर का अधिकार सुनिश्चित करती है जो उसके तथा उसके परिवार के स्वास्थ्य तथा कल्याण हेतु संतोषजनक है और इसमें भोजन, कपड़ा, मकान, चिकित्सा देखभाल तथा आवश्यक सामाजिक सेवाएं सम्मिलित हैं। यौनकर्मियों को जीविका के संभावित विकल्प प्रदान करने के लिए आवश्यक शिक्षा के अधिकार का वर्णन धारा–26 में है। इस प्रकार वैश्विक घोषणा पत्र में यौनकर्मियों की सुरक्षा से संबंधित अनेक महत्त्वपूर्ण अधिकारों तथा सिद्धांतों का संक्षिप्त विवरण दिया गया है और अन्य बातों के साथ उनकी शारीरिक चिकित्सा, रोजगार तथा शैक्षणिक आवश्यकताओं पर विचार किया गया है।

नागरिक तथा राजनीतिक अधिकारों पर अंतर्राष्ट्रीय समझौता (आईसीसीपीआर)[53] तथा आर्थिक, सामाजिक तथा सांस्कृतिक अधिकारों पर अंतर्राष्ट्रीय समझौता (आईसीईएससीआर)[54] इस मुद्दे से संबंधित दो अत्यन्त महत्त्वपूर्ण अंतर्राष्ट्रीय उपकरण हैं। भारत ने औपचारिक रूप से इनकी पुष्टि की है और इसलिए राज्य पर इन्हें लागू करने की बाध्यता बनती है। आईसीसीपीआर की कुछ धाराएं यौनकर्मियों तथा इनके समूह में एचआईवी के संक्रमण के मुद्दे के संदर्भ में प्रासंगिक हो सकती हैं। समझौता में यह सुनिश्चित किया गया है कि राज्यक्षेत्र में रहने वाले प्रत्येक व्यक्ति को घोषित अधिकार प्राप्त होंगे तथा इसमें किसी तरह का भेदभाव

50 यूडीएचआर, पूर्वोक्त टिप्पणी 30
51 वही, प्रस्तावना
52 वही, धारा–4
53 आईसीसीपीआर, पूर्वोक्त टिप्पणी 32
54 आईसीईएससीआर, पूर्वोक्त टिप्पणी 33

नहीं किया जाएगा (धारा–2)। पुरुष और स्त्री की समानता को धारा–3 में सुनिश्चित किया गया है। राज्य पक्षों का यह दायित्व बनता है कि वे यौनकर्मियों के जीवन के अधिकार (धारा–6) तथा स्वयं के प्रति यंत्रणा या क्रूरता, असामान्य या अवमानकारी व्यवहार नहीं किए जाने के उनके अधिकार (धारा–7) को सुनिश्चित करें। इसमें स्वतंत्र सहमति के बिना चिकित्सा प्रयोग नहीं किए जाने का उनका अधिकार सम्मिलित है। धारा–8 दासता से संबंधित है तथा इसमें दासता को इसके हर रूप में प्रतिबंधित किया गया है। किसी व्यक्ति को दास नहीं बनाया जा सकता है तथा धारा–8 (3) (ए) के अनुसार किसी को बलात् या अनिवार्य श्रम करने के लिए विवश नहीं किया जा सकता है। आवागमन की स्वतंत्रता के अधिकार तथा निवास स्थान चुनने की स्वतंत्रता के अधिकार का वर्णन धारा–12 में है। धारा–17 में प्रत्येक व्यक्ति को अपने जीवन में निजता, परिवार, घर या पत्राचार के संदर्भ में मनमाना या अवैध हस्तक्षेप नहीं किए जाने के अधिकार का वर्णन है। अन्य व्यक्तियों के साथ मिलकर संगठन बनाने की स्वतंत्रता के अधिकार का वर्णन धारा–22 में है। मगर धारा–22 (2) के अंतर्गत इसे कानून द्वारा नियम बनाकर तथा राष्ट्रीय सुरक्षा, सार्वजनिक सुरक्षा, सार्वजनिक व्यवस्था, सार्वजनिक स्वास्थ्य या नैतिकता या दूसरों के अधिकारों की सुरक्षा के लिए आवश्यक समझते हुए सीमित किया जा सकता है। धारा–26 के अनुसार भेदभाव से वास्तविक बचाव को अनिवार्य रूप से सुनिश्चित करना है।

आईसीएसईसीआर का भाग 3 कार्य के अधिकार से संबंधित है। धारा–6 में ऐसे अधिकार का वर्णन है जिसमें प्रत्येक व्यक्ति को ऐसी आजीविका प्राप्त करने का अधिकार सम्मिलित है जो वह स्वेच्छा से चुनता या स्वीकार करता है। प्रत्येक सदस्य राज्य का यह कर्तव्य बनता है कि वह धारा–6 (2) इसके अधिकार की पूर्ण प्राप्ति के लिए आवश्यक कदम उठाने के साथ मार्गदर्शन तथा प्रशिक्षण की व्यवस्था सुनिश्चित करे। धारा–7 (बी) के अनुसार प्रत्येक व्यक्ति को उचित तथा अनुकूल परिस्थितियों में काम करने का अधिकार प्राप्त है और इसमें कार्य की सुरक्षित तथा स्वास्थ्यानुकूल परिस्थितियां सम्मिलित हैं। ट्रेड यूनियन की स्थापना करना या इसमें सम्मिलित होने के अधिकार का वर्णन धारा–8 (1) में हुआ है। शिशु जन्म के पहले तथा बाद में यथोचित अवधि के दौरान माताओं को विशेष अधिकार प्राप्त है और इसमें सवेतन अवकाश तथा पर्याप्त सामाजिक सुरक्षा भुगतान सम्मिलित हैं (धारा–10 (2))। यौनकर्मियों, विशेषकर एचआईवी/एड्स से संक्रमित यौनकर्मियों के लिए अपने तथा अपने परिवार के लिए समुचित जीवन स्तर प्राप्त करने का अधिकार तथा शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्य के सर्वोच्च और प्राप्त करने योग्य मानकों तक पहुंचने का अधिकार भी महत्त्वपूर्ण हैं (धारा–12 (1))। इसमें राज्य पर यह दायित्व होता है कि वह इन अधिकारों की प्राप्ति सुनिश्चित करने के लिए आवश्यक कदम उठाए। इसमें महामारी तथा स्थानिक, व्यावसायिक तथा अन्य रोगों की रोकथाम, उपचार तथा नियंत्रण तथा ऐसी स्थितियों का निर्माण सम्मिलित हैं जिनमें प्रत्येक व्यक्ति को चिकित्सा सेवा तथा बीमारी में चिकित्सा देखभाल सुनिश्चित की जा सके (धारा–12 (2)) (सी) व (डी)। अन्त में धारा–13 में प्रत्येक व्यक्ति को प्राप्त शिक्षा के अधिकार का वर्णन हुआ है जिसमें सभी राज्य यह मानते हैं कि इसे मानव व्यक्तित्व तथा इसकी गरिमा के पूर्ण विकास पर केन्द्रित करना चाहिए और इससे मानव अधिकारों तथा मूलभूत स्वतंत्रताओं के प्रति आदर में वृद्धि होगी।

औरतों के विरुद्ध हर प्रकार के भेदभाव के उन्मूलन पर सितम्बर 1981 में लागू होने वाला औरतों के प्रति भेदभाव के उन्मूलन की समिति कन्वेंशन[56] यौनकर्मियों की सुरक्षा (विशेषकर एचआईवी/एड्स के संदर्भ में) के लिए संभवतः सर्वोत्तम आधार प्रदान करता है। इसमें महिलाओं को प्रभावित करने वाले मुद्दों पर अपेक्षाकृत गहरी जागरूकता, पुरुषों के मुकाबले उनकी खराब स्थिति के विभिन्न स्तर तथा उनकी आवश्यकताओं का ध्यान रखने का सबसे अच्छा तरीका सामने आता है। प्रस्तावना में यह चिन्ता व्यक्त की गई है कि गरीबी

---

56 पूर्वोक्त, टिप्पणी 31

से उत्पन्न स्थितियों में भोजन, स्वास्थ्य, शिक्षा, प्रशिक्षण तथा रोजगार के अवसरों तक औरतों की सबसे कम पहुंच होती है। इसमें परिवार के कल्याण तथा समाज के विकास में औरतों के उस महान योगदान को भी स्वीकार किया गया है जिसे आज तक पूरी तरह मान्यता नहीं मिली है। यह ध्यान में रखते हुए धारा–1 में भेदभाव की परिभाषा देते हुए इसे लिंग के आधार पर लागू किया जाने वाला ऐसा अंतर, बहिष्कार या पाबन्दी बताया है जिसके कारण राजनीतिक, आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृतिक, नागरिक या अन्य किसी क्षेत्र में औरतों द्वारा मानव अधिकारों तथा मूलभूत स्वतंत्रताओं की पहचान, उपभोग तथा प्रयोग नकारात्मक रूप से प्रभावित या असंभव हो जाए। सदस्य राज्यों पर यह दायित्व है कि वे उचित उपायों द्वारा औरतों के पूर्ण विकास तथा प्रगति को सुनिश्चित करे (धारा–3)। कन्वेंशन के अनुसार ऐसे उपाय करने हैं जिनसे सामाजिक तथा सांस्कृति आदर्शों में ऐसा बदलाव लाया जाए जिससे ऐसे पूर्वाग्रहों तथा प्रथाओं को समाप्त किया जा सके...। जो रूढ़ धारणाओं तथा लिंग विशेष की हीनता पर आधारित हैं (धारा–5 (ए))। धारा–6 में औरतों के देह व्यापार का विशेष रूप से उल्लेख हुआ है तथा इसके अनुसार राज्यों की यह जिम्मेदारी बनती है कि वे विधान समेत ऐसे सभी यथोचित उपाय करें जिनसे औरतों के देह व्यापार के हर रूप तथा वेश्यावृत्ति द्वारा उनके शोषण का दमन किया जा सके। भाग 3 में राज्यों के उस दायित्व का वर्णन है जिसके अनुसार उन्हें शिक्षा के क्षेत्र में स्त्रियों के साथ किए जा रहे भेदभाव को समाप्त करते हुए उनके लिए पुरुषों के समान अधिकार सुनिश्चित करने के लिए आवश्यक उपाय करने हैं (धारा–10)। इसमें परिवार के स्वास्थ्य तथा कल्याण को सुनिश्चित करने में मदद करने वाली विशिष्ट ज्ञानप्रद सूचना तक पहुंच भी सम्मिलित है और परिवार योजना से संबंधित सूचना तथा सलाह भी इसी श्रेणी में आती है (धारा–10 (एच))। धारा–11 रोजगार में भेदभाव से संबंधित है। कार्य करने के अधिकार (धारा–11 (1) (ए)) तथा व्यवसाय और रोजगार के स्वतंत्र चुनाव के अधिकार (धारा–11 (1) (सी)) को प्रत्येक मानव के अहरणीय अधिकार के रूप में विशेष तौर पर स्वीकार किया गया। यहां यह महत्त्वपूर्ण है कि धारा–11 (1) (एफ) में स्वास्थ्य की सुरक्षा तथा कार्य स्थितियों में सुरक्षा के अधिकार का वर्णन हुआ है और इसमें प्रजनन कार्य की सुरक्षा के उपाय सम्मिलित हैं। धारा–12 चिकित्सा देखभाल के क्षेत्र में भेदभाव का उन्मूलन करते हुए सेवाओं तक सबकी समान पहुंच सुनिश्चित करने से संबंधित है। धारा–15 के अनुसार कानून के समक्ष पुरुषों और स्त्रियों को समान अधिकार देने हैं तथा इसमें व्यक्तियों के आवागमन तथा निवास और स्थायी निवास को चुनने के अधिकारों के संदर्भ में समान अधिकार सम्मिलित हैं (धारा–15 (4))।

कन्वेंशन की कार्यान्वयन मॉनिटरिंग संस्था का नाम "औरतों के प्रति भेदभाव के उन्मूलन की समिति" (सीईडीएडब्ल्यू) है। इसमें यौनकर्मियों के लिए वेश्यावृत्ति से संबंधित धारा–6 के संदर्भ में 1992 में जारी साधारण संस्तुति 19 विशेष रूप से प्रासंगिक है। इसमें राज्यों को इसके लिए प्रेरित किया गया है कि कानून द्वारा वेश्यावृत्ति में सक्रिय औरतों को सुरक्षा प्रदान की जाए।

इसमें यह स्वीकार किया गया है कि गरीबी तथा बेरोजगारी अनेक औरतों को यह कार्य करने पर मजबूर कर सकती है तथा "वे हिंसा के प्रति विशेष तौर पर असुरक्षित स्थिति में हैं क्योंकि उनकी वैधानिक स्थिति, जो अवैध हो सकती है, उन्हें अक्सर किनारे कर देती है।"[56] देह व्यापार कन्वेंशन में समर्थित दृष्टिकोण के विपरीत सीईडीएडब्ल्यू आखिरकार वेश्यावृत्ति के उन्मूलन की मांग नहीं करता है। इसका लक्ष्य औरतों को प्रत्येक स्थिति में भेदभाव की हर प्रकार से सुरक्षा प्रदान करना है। एडी जॉर्डन के मतानुसार यह संस्तुति वेश्यावृत्ति में सक्रिय औरतों के अधिकारों को उस वक्त के अंतर्राष्ट्रीय कानून द्वारा दिए जा रहे समर्थन के स्तर की थी।[57]

---

56 औरतों के प्रति हर प्रकार के भेदभाव के उन्मूलन पर संयुक्त राष्ट्र समिति, यूएन डॉक./ए/47/3 बी., 1992, धारा–6 (15) {आगे सीईडीएडब्ल्यू}

57 एडी जोर्डन, 'कॉमर्शियल सेक्स वर्कर्स इन एशिया : ए ब्लाइंन्ड स्पॉट इन ह्यूमन राइट्स लॉ, इन वीमेन एंड इंटरनेशनल ह्यूमन राइट्स लॉ, आस्किन एंड केयोनिग (संस्क), अंक 2, एट 548 (आर्डस्ले, न्यूयॉर्क : ट्रांसनेशनल पब्लिशिंग, 2000) सेटे तथा सेशु में उद्धृत, पूर्वोक्त टिप्पणी 21 एट 12.

अभी तक हालांकि अंतर्राष्ट्रीय श्रम संगठन (आईएलओ) का ऐसा कोई कन्वेंशन नहीं है, जो यौनकर्मियों के अधिकारों से विशेष तौर पर संबंधित हो, ऐसे कई अपेक्षाकृत सामान्य श्रम सिद्धांत हैं जो इस मुद्दे के लिए प्रासंगिक हो सकते हैं।[58] आईएलओ ने कार्य अवधि[59] तथा मातृत्व सुरक्षा[60] जैसे मामलों का विनियमन करने वाले साधारण सिद्धांतों के अलावा रोजगार तथा व्यवसाय,[61] व्यावसायिक सुरक्षा तथा स्वास्थ्य[62], कर्मियों के स्वास्थ्य की सुरक्षा[63] तथा बलात् श्रम[64] के अंतर्गत भेदभाव पर विचार किया है।

दो अंतिम दस्तावेज उल्लेखनीय हैं। दोनों में से कोई बाध्यकारी उपकरण नहीं है, लेकिन इनसे इस विषय पर अंतर्राष्ट्रीय सहमति का पर्याप्त संकेत मिलता है और इन्हें प्रभावशाली प्रेरक सत्ताओं की भूमिका निभानी चाहिए। जैसा कि ऊपर बताया गया है, यौन व्यापार के वैधीकरण की मांग 'एचआईवी/एड्स तथा मानव अधिकारों पर यूएन अंतर्राष्ट्रीय दिशानिर्देश' में की गई थी।[65] अंतर्राष्ट्रीय विचार विमर्श के बाद विशेषज्ञों द्वारा तैयार इन दिशानिर्देशों में इस बात का संक्षिप्त विवरण है कि किस प्रकार मानव अधिकार मानक एचआईवी/एड्स के संदर्भ में प्रासंगिक हैं और किस प्रकार इन्हें व्यावहारिक उपायों में बदला जा सकता है। जैसा कि प्रस्तावना में वर्णित है, मानव अधिकारों तथा एचआईवी में अत्यन्त गहरा संबंध है। मानव अधिकार के उल्लंघनों से एचआईवी के प्रति असुरक्षित स्थिति बनी रहती है। इन उल्लंघनों में औरतों के प्रति भेदभाव तथा गरीबी की स्थितियों को बनाए रखने वाले उल्लंघन सम्मिलित हैं। अपनी जगह एचआईवी भी हिंसा तथा अन्य प्रकार के भेदभाव जैसे अन्य मानव अधिकार के उल्लंघन की स्थितियां पैदा करता है।[66] ये दिशानिर्देश यह स्वीकार करते हैं कि लोकस्वास्थ्य की योजनाओं का मानव अधिकारों से कोई विरोध नहीं है। इसके विपरीत मानव अधिकारों की सुरक्षा से कम लोग संक्रमित होते हैं तथा संक्रमित व्यक्ति अपनी स्थिति का बेहतर रूप से सामना कर सकते हैं।[67] हमारे उद्देश्य के संदर्भ में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाते हुए ये दिशानिर्देश इस बात पर जोर देते हैं कि अंतर्राष्ट्रीय मानव अधिकार प्रथाओं तथा व्यावहारिक स्वास्थ्य योजनाओं के अनुसार राज्यों की यह जिम्मेदारी बनती है कि वे यौनकर्मियों की स्थिति जैसे विवादास्पद समझे जाने वाले मुद्दों से संबंधित कदम उठाने पर विचार करें।[68]

इन दिशानिर्देशों में प्रगतिशील दृष्टिकोण अपना कर जनस्वास्थ्य की सुरक्षा, भेदभाव विरोध तथा किनारे कर दिए गए समूहों, औरतों तथा बच्चों की स्थिति को बेहतर बनाने पर ध्यान केन्द्रित करते हुए

58 श्रम अधिकारों के संदर्भ में यौनकर्मियों के मुद्दे पर अधिक जानकारी के लिए देखें कैरी बेन्सन फिशर, 'इम्प्लॉई राइट्स इन सेक्स वर्क : द स्ट्रगल फॉर डांसर्स राइट्स एज इम्प्लॉईज', लॉ एंड इनइक्वलिटी : ए जर्नल ऑव थ्योरी एंड प्रैक्टिस, अंक 14, 1996, पृ.521

59 उदाहरण के लिए देखें, कार्य अवधि (उद्योग) कन्वेंशन, सं 1, 1919, http://www.ilo.org/ilolex/english/convdisp1.htm पर उपलब्ध (अंतिम बार देखने की तिथि 27 अक्टू. 06)

60 देखें मातृत्व सुरक्षा कन्वेंशन, सं 183, 2000 http://www.ilo.org/ilolex/english/convdisp1.htm (अंतिम बार देखने की तिथि 27 अक्टू. 06)

61 देखें भेदभाव (रोजगार तथा व्यवसाय) कन्वेंशन, सं 111, 1958 http://www.ilo.org/ilolex/english/convdisp1.htm पर उपलब्ध (अंतिम बार देखने की तिथि 27 अक्टू. 06)

62 देखें व्यावसायिक सुरक्षा तथा स्वास्थ्य कन्वेंशन सी 155, 1981; व्यावसायिक सुरक्षा तथा स्वास्थ्य कन्वेंशन पर 2002 का प्रोटोकॉल, पी 155, 1981; व्यावसायिक स्वास्थ्य सेवा कन्वेंशन, सी161, 1985; व्यावसायिक सुरक्षा तथा स्वास्थ्य कन्वेंशन के लिए प्रोमोशनल फ्रेमवर्क, सी 187, 2006. सभी यहां उपलब्ध हैं http://www.ilo.org/ilolex/english/convdisp1.htm (अंतिम बार देखने की तिथि 27 अक्टू. 06)

63 देखें कर्मी स्वास्थ्य सुरक्षा संस्तुति, आर 97, 1953 http://www.ilo.org/ilolex/english/recdisp1.htm (अंतिम बार देखने की तिथि 27 अक्टू. 06)

64 देखें बलात् श्रम कन्वेंशन, सं 29, 1930; बलात् श्रम उन्मूलन कन्वेंशन, सं. 105 1957. दोनों यहां उपलब्ध हैं http://www.ilo.org/ilolex/english/convdisp1.htm इस संदर्भ में इसे भी देखें, कार्य से संबंधित मूलभूत सिद्धांतों तथा अधिकारों पर आईएलओ घोषणा पत्र, 1998, http://www.ilo.org/dyn/declaris/DECLARATIONWEB.static_jum?pvar_language=EN&var_pagename=DECLARATIONTEXT (दोनों वेबसाइटों को अंतिम बार देखने की तिथि 27 अक्टू. 06)

65 एचआईवी/एड्स तथा मानव अधिकार : अंतर्राष्ट्रीय दिशानिर्देश, एकीकृत संस्करण, संयुक्त राष्ट्र का मानवाधिकार उच्चायोग एवं यूएनएआईडीएस, 1998, एचआर/पब्लि/98/9, उपलब्ध है– www.ohchr.org/english/issues/hiv/quidelines.htm (आखिरी बार देखने की तिथि 27 अक्टूबर 06)

66 वही, पृ.6

67 वही, पृ.16, अनुच्छेद–8 (बी)

68 वही, पृ.16, अनुच्छेद–8 (डी)

कानूनों तथा कानूनी मदद की सेवाओं को सुधारने की मांग की गई है। आपराधिक कानूनों तथा सुधारक सुविधाओं पर राज्यों हेतु दिशानिर्देश 4 में यह सलाह दी गई है कि यौनकार्यो, जिनमें आपस में सहमत दो वयस्कों के बीच निजी रूप में होने वाले व्यावसायिक यौन संपर्क सम्मिलित हैं, पर प्रतिबंध लगाने वाले कानूनों की समीक्षा उन्हें निरस्त करने के उद्देश्य को ध्यान में रखकर करनी चाहिए।[69] विशेष तौर पर वयस्क यौनकार्य से संबंधित मामलों में यह दृष्टिकोण अपनाया गया है कि जहां उत्पीड़न नहीं होता है, वहां आपराधिक कानूनों की समीक्षा उनके वैधीकरण के उद्देश्य को ध्यान में रखकर करनी चाहिए। यौनकर्मियों तथा उनके ग्राहकों के स्वास्थ्य तथा सुरक्षा की स्थितियों से संबंधित नियम बनाने पर बल देना चाहिए। इसके अलावा आपराधिक कानून को यह सुनिश्चित करना होगा कि ऐसे यौनकर्मियों को यौन उद्योग के कार्य से मुक्ति मिलेगी जिनका सौदा हुआ है या जो जबरदस्ती यौनकार्य में सक्रिय किए गए हैं तथा उन्हें इस तरह की सक्रियता के लिए दंडित नहीं किया जाएगा। ऐसा करने के बजाय उन्हें यौनकार्य छोड़ने का मौका देना चाहिए तथा उन्हें चिकित्सा और मनो–सामाजिक सहायता सेवाएं प्रदान करनी चाहिए और ये सेवाएं प्राप्त करने वालों में एचआईवी से जुड़े लोग सम्मिलित हैं।[70]

पूरी दुनिया के विधायकों का प्रतिनिधित्व करने वाले अंतर संसदीय संघ (आईपीयू) ने यूएनएड्स के साथ मिलकर एचआईवी/एड्स, कानून तथा मानव अधिकारों पर विधायकों के लिए हैंडबुक तैयार की।[71] इसमें वेश्यावृत्ति से संबंधित विधान की सर्वोत्तम प्रथाओं के उदाहरण दिए गए हैं तथा यह वेश्यावृत्ति से संबंधित आपराधिक कानूनों की समीक्षा उनके वैधीकरण के उद्देश्य को ध्यान में रखकर करने की मांग करती है। यूएन अंतर्राष्ट्रीय दिशानिर्देश की तरह इस हैंडबुक में यौनकार्य तथा एचआईवी से संबंधित कई प्रगतिशील कार्यक्रम हैं। इनमें शिक्षा के कार्यक्रम, भेदभाव के विरुद्ध संघर्ष के उपाय आदि सम्मिलित हैं। वैसे यहां कानून, सुधार तथा सहायता सेवाओं से संबंधित भाग III बी विशेष रूप से प्रासंगिक है। दिशानिर्देश 4 के अंतर्गत राज्यों को आपराधिक कानूनों तथा सुधारात्मक व्यवस्थाओं की समीक्षा तथा सुधार की सलाह दी गई है ताकि यह सुनिश्चित किया जा सके कि ये अंतर्राष्ट्रीय मानव अधिकारों के दायित्वों के अनुकूल हैं तथा एचआईवी/एड्स के संदर्भ में इनका दुरुपयोग नहीं होता रहा है या इन्हें असुरक्षित समूहों के विरुद्ध इस्तेमाल में नहीं लाया जा रहा है। इस हैंडबुक में यह स्वीकार किया गया है कि वेश्यावृत्ति के क्षेत्र में आपराधिक कानून एचआईवी/एड्स की पर्याप्त रोकथाम तथा देखभाल में बाधा उत्पन्न करता है क्योंकि इसके कारण यौन उद्योग में सक्रिय व्यक्ति भूमिगत हो जाते हैं। इसमें भी ऐसे कानूनों की समीक्षा उनके वैधीकरण के उद्देश्य को ध्यान में रखते हुए करने की सलाह दी गई है जिनमें उत्पीड़न का मामला नहीं बनता है।[72]

अपराधीकरण के अलावा विनियमन से भी कर्मियों पर लांछन लगता है तथा पुनर्वास या चिकित्सा केन्द्रों में जबरदस्ती रोककर रखना, कार्यस्थल पर या निर्दिष्ट इलाकों में रहने पर मजबूर किया जाना, विशेष पहचान पत्र धारण या पंजीकृत होना जैसी कानूनी आवश्यकताएं थोपकर यह मानव अधिकारों के उल्लंघनों का कारण बनता है। इस हैंडबुक में वेश्यावृत्ति कानूनों की आलोचना करते हुए इन्हें उन्नीसवीं शताब्दी की नैतिकता की धारणाओं पर आधारित बताया गया है और कहा गया है कि ये इस उद्योग का दमन करने में उतनी ही अप्रभावी थीं जितनी वे आज हैं। अतः इसमें यौनकार्य को व्यक्तिगत सेवा उद्योग, जिसमें निंदा या उपेक्षा का भाव नहीं है, मानने के वैकल्पिक दृष्टिकोण का समर्थन किया गया है क्योंकि लोकस्वास्थ्य के

69 वही, पृ.29, अनुच्छेद–21 (बी)

70 वही, पृ.30, अनुच्छेद–21 (सी)

71 एचआईवी/एड्स पर विधायकों के लिए हैंडबुक, कानून तथा मानव अधिकार : एचआईवी/एड्स के विनाशकारी मानवीय, आर्थिक तथा सामाजिक प्रभाव के संदर्भ में इसके विरुद्ध संघर्ष की कार्यवाही, यूएनएड्स सर्वोतम व्यवहार संकलन, यूएनएड्स/99.48 ई, नवम्बर 1999 http://www.ipu.org/PDF/publications/aids_en.pdf पर उपलब्ध (अंतिम बार देखने की तिथि 27 अक्टू. 06) {आगे विधायकों के लिए हैंडबुक, 1999}

72 वही, भाग (III) बी दिशानिर्देश 4, पृ.56–57

उद्देश्यों की पूर्ति उस संदर्भ में बेहतर तरीके से हो सकती है। इस हैंडबुक में यह स्पष्ट तौर पर कहा गया है कि संक्रमण की रोकथाम को प्रभावी बनाने के लिए अनेक अपराधों के संदर्भ में पुलिस द्वारा मुकदमा चलाने या सताए जाने के भय को दूर करना आवश्यक है।[73]

यौनकर्मियों की स्थिति के संदर्भ में कानून लागू करना

उपर्युक्त साधनों को यौनकर्मियों द्वारा झेली जा रही कई अपमानजनक स्थितियों में अपनाया जा सकता है और यदि इन्हें राष्ट्रीय कानून में अच्छी तरह ग्रहण कर लिया गया तब ये इस समूह में एचआईवी तथा एड्स के प्रसार पर नियंत्रण और रोक तथा सभी अधिकारों और स्वतंत्रताओं की रक्षा सुनिश्चित करने के संदर्भ में विधानसभा, अदालतों तथा संबंधित समूहों तथा व्यक्तियों के लिए अति प्रभावी साधन हो सकते हैं।

उदाहरण के तौर पर, इनका प्रयोग यौन उद्योग से जुड़ी कड़ी दंड संहिता को चुनौती देने के लिए किया जा सकता है।

यह विवाद का विषय है कि कठोर संहिताओं के कारण कार्य का अधिकार, व्यवसाय तथा रोजगार के स्वतंत्र चुनाव का अधिकार[74] तथा उचित, अनुकूल व सुरक्षित कार्यस्थितियों का अधिकार[75] जैसे अधिकारों का उल्लंघन होता है। वेश्यालय चलाने पर मनाही तथा प्रतिबंधों से संगठन की स्वतंत्रता[76] तथा आवागमन की स्वतंत्रता के अधिकार तथा निवास के चुनाव के अधिकार[77] के उल्लंघन का तर्क दिया जा सकता है। इसके अलावा ऐसे प्रतिबंधों का अक्सर यह परिणाम होता है कि यौनकर्मियों को अकेले कार्य करना पड़ता है, और इस तरह, जैसा कि ऊपर बताया गया है, वे खतरनाक कार्य वातावरण में कार्य करने पर मजबूर हो जाते हैं। एक अतिरिक्त संभावित उल्लंघन उस सामान्य स्थिति के संदर्भ में देखने को मिलता है जब प्रतिबंधों को लगभग पूरी तरह यौनकर्मी पर लागू किया जाता है, न कि ग्राहक पर। इस स्थिति में कानून के समक्ष[78] तथा लिंगों के मध्य[79] (क्योंकि यह सर्वमान्य तथ्य है कि अधिकांश यौनकर्मी औरतें होती हैं तथा ग्राहक प्रायः पुरुष होते हैं) समानता तथा भेदभावहीनता के सिद्धांतों के उल्लंघन का तर्क दिया जा सकता है।[80]

यौनकर्मियों की दूसरी समस्या यह है कि पुलिस तथा न्यायिक अधिकारी, दोनों उनके साथ भेदभाव तथा दुर्व्यवहार करते हैं। वेश्यावृत्ति तथा ग्राहक बुलाने की प्रथा के विरुद्ध कानूनों की आड़ में गिरफ्तारी तथा मनमाने आधार पर नजरबन्दी को अक्सर धमकी, वसूली तथा दुर्व्यवहार के साधन के रूप में प्रयोग किया जाता है। जैसा कि सेते और शेसु ने बताया है,[81] जिन मामलों में राष्ट्रीय कानून वेश्यावृत्ति का प्रत्यक्ष अपराधीकरण नहीं करते हैं, उनमें पुलिस को प्रायः इतनी अधिक छूट मिलती है कि वे आवारागर्दी तथा इधर उधर निरुद्देश्य घूमने जैसे आरोपों में यौनकर्मियों को हिरासत में रख सकते हैं। ऐसे कर्मियों के कल्याण के प्रति सामाजिक दृष्टिकोण तथा गहरी उपेक्षा से इनके साथ होने वाली वसूली, अवैध हिरासत तथा दंड के भय से मुक्त दुर्व्यवहार जैसी घटनाओं को अंजाम देने के लिए दी गई छूट में और अधिक बढ़ोतरी होती

---

73 वही

74 देखें यूडीएचआर धारा–23, आईसीईएससीआर धारा–6, औरतों के साथ हर प्रकार के भेदभाव के उन्मूलन पर कन्वेंशन 11 (1) (सी)

75 देखें यूडीएचआर धारा–23, हर प्रकार के भेदभाव के उन्मूलन पर कन्वेंशन 11 (1) (एफ), तथा व्यावसायिक सुरक्षा तथा कर्मी स्वास्थ्य से संबंधित आईएलओ उपकरण, पूर्वोक्त, टिप्पणी 59–64

76 देखें यूडीएचआर धारा–20, तथा आईसीसीपीआर धारा–22

77 देखें यूडीएचआर धारा–13, तथा आईसीसीपीआर धारा–12

78 देखें यूडीएचआर धारा–7, औरतों के साथ हर प्रकार के भेदभाव के उन्मूलन पर कन्वेंशन धारा–15

79 देखें आईसीसीपीआर धारा–3 तथा 26, औरतों के साथ हर प्रकार के भेदभाव के उन्मूलन पर कन्वेंशन धारा–1 तथा 2

80 विस्तृत विश्लेषण के लिए देखें, जॉर्डन बनाम राज्य, 2002, केस सीसीटी 31/01, 2002 (6) एसए 642, http://www.constitutionalcourt.org.za/site/home.htm पर उपलब्ध (अंतिम बार देखने की तिथि 27 अक्टू. 06) आगे IV ए में इस केस पर विस्तार से विचार किया जाएगा।

81 सेटे तथा सेशु, पूर्वोक्त टिप्पणी 21, एट 9

है। समस्या को बढ़ाते हुए ऐसे दुर्व्यवहार के शिकार व्यक्तियों के लिए उन मामलों में सामान्य न्याय प्रक्रिया उपलब्ध नहीं है जिनमें न्याय लागू करने की एजेंसियां खुद एक पक्ष के रूप में सम्मिलित होती हैं। इसके अलावा, ऐसे माहौल में आपराधिक गिरोहों, ग्राहकों, दलालों तथा अप्रवासन अधिकारियों जैसे अन्य पक्षों द्वारा इनके साथ किए जाने वाले दुर्व्यवहार की प्रायः अनदेखी हो जाती है या इन्हें उपेक्षित कर दिया जाता है। यौनकर्मियों के पास इन हालातों को अपनी स्थिति का अभिन्न हिस्सा मान लेने के अलावा कोई दूसरा चारा नहीं होता है। यह तर्क दिया जा सकता है कि ऐसे व्यवहार से स्वतंत्रता, व्यक्ति की सुरक्षा तथा मनमानी हिरासत या नजरबन्दी से मुक्ति के अधिकारों का उल्लंघन होता है।[82]

अधिक सामान्य संदर्भ में, यौनकर्मियों को उस स्थिति में अनेक प्रकार के मानव अधिकार उल्लंघनों का सामना करना पड़ता है जब राज्य इन मामलों में इनकी आवश्यकताओं की पूर्ति करने में विफल रहता है : स्वास्थ्य तथा कल्याण[83], शिक्षा (इससे जीविका के वैकल्पिक साधनों[84] तक उनकी पहुंच को असंभव बना दिया जाता है), बेहतरी की संभावनाओं सहित समुचित जीवन स्तर[85] तथा देह व्यापार[86], दासता तथा अन्य प्रकार के अनिवार्य तथा बलात् श्रम से सुरक्षा।[87] इन मामलों में राज्य की विफलता से प्राथमिक स्तर पर यौनकर्मियों का जीवन खतरे में पड़ता है तथा उन्हें एचआईवी संक्रमण के खतरे का सामना करना पड़ता है।[88] यौनकर्मियों के अनिवार्य परीक्षण तथा पंजीकरण जैसी नीतियों के कारण निजता के अधिकार का निरंतर उल्लंघन हुआ है।[89] इसके अलावा, यौनकार्य को आय प्राप्ति का विधिसम्मत या वैध साधन के रूप में स्वीकार करने में विफलता से अनेक यौनकर्मियों के लिए सामाजिक सुरक्षा के अधिकार[90] तथा स्वतंत्र श्रमिक संघों की स्थापना या इनमें सम्मिलित होने के अधिकार की प्राप्ति संभव नहीं हो पाती है।[91]

अंतर्राष्ट्रीय कानून में वर्णित अधिकार अधिकतर मामलों में निरपेक्ष नहीं हैं तथा इन्हें विशेष परिस्थितियों में विधिसम्मत रूप से सीमित किया जा सकता है।

इस विषय बिन्दु पर यूडीएचआर यह घोषणा करता है कि कानून "केवल दूसरों के अधिकारों तथा स्वतंत्रताओं की यथोचित मान्यता तथा सम्मान की सुरक्षा तथा प्रजातांत्रिक समाज में नैतिकता, सार्वजनिक व्यवस्था तथा लोकमंगल के उद्देश्यों की पूर्ति के लिए" व्यक्ति के अधिकारों तथा स्वतंत्रताओं को सीमित कर सकता है।[92] प्रजातांत्रिक समाज में सार्वजनिक व्यवस्था तथा लोकमंगल पर यौनकर्मियों के ऊपर अक्सर लगाए जाने वाले प्रतिबंधों के संभावित नकारात्मक खतरों को देखते हुए यह सवाल उठता है कि क्या ये प्रतिबंध इस घोषणा में निहित आवश्यकताओं की पूर्ति करते हैं। उदाहरण के तौर पर, यौनकार्य के अपराधीकरण या इससे विनियमन से इंकार करने के कारण इस व्यवसाय की गतिविधियों का स्वरूप बिना किसी विकल्प के गोपनीय हो जाता है तथा इस तरह ये दुर्व्यवहार, देह व्यापार तथा संगठित अपराध के लिए अनुकूल स्थितियां पैदा करती हैं। ऐसी स्थिति में सार्वजनिक व्यवस्था तथा लोकमंगल पर निश्चित रूप से नकारात्मक असर पड़ता है। समानुपतिकता का सिद्धांत वह सर्वसाधारण अंतर्राष्ट्रीय सिद्धांत है जो राज्य द्वारा मूलभूत अधिकारों तथा

82 देखें आईसीसीपीआर धारा–9
83 देखें यूडीएचआर धारा–25, तथा आईसीईएससीआर धारा–12 (1)
84 देखें यूडीएचआर धारा–26; आईसीईएससीआर धारा–6 (2) तथा 13
85 देखें आईसीईएससीआर धारा–11 (1), तथा औरतों के साथ हर प्रकार के भेदभाव के उन्मूलन पर कन्वेंशन, धारा–3
86 देखें औरतों के साथ हर प्रकार के भेदभाव के उन्मूलन पर कन्वेंशन, धारा–6
87 देखें यूडीएचआर धारा–4, आईसीसीपीआर धारा–8
88 देखें यूडीएचआर की धारा–3 के अंतर्गत जीवन का अधिकार, तथा आईसीसीपीआर धारा–6
89 देखें यूडीएचआर धारा–12, आईसीसीपीआर धारा–17
90 देखें यूडीएचआर धारा–22
91 देखें आईसीईएससीआर धारा–8 (1)
92 यूडीएचआर धारा–29 (2)

स्वतंत्रताओं को सीमित करने की शक्ति को नियंत्रित तथा संतुलित करता है।[93] अगर राज्य यह जाहिर करता है कि किसी अत्यन्त महत्त्वपूर्ण सामाजिक आवश्यकता को देखते हुए कोई विशेष प्रतिबंध लगाना आवश्यक है, तब उसे यह स्पष्ट करना होगा कि यह कदम समस्या के समानुपात में है।[94] अतः राज्य का यह कहना पर्याप्त नहीं है कि मूलभूत अधिकारों पर प्रतिबंध लगाना तर्कसंगत है। उसे यह अवश्य दिखाना होगा कि प्रतिबंधों को लगाते वक्त परस्पर हितों तथा अधिकारों को सावधानीपूर्वक संतुलित रखा गया है।

समानुपातिकता के सिद्धांत को भारतीय अदालतों में स्वीकार किया गया है। अतीत में 1952 में इसे तर्कसंगतता की परीक्षा के तत्त्व के रूप में स्वीकार किया गया था।[95] अपेक्षाकृत नवीन फैसले में उच्चतम न्यायालय ने ओम कुमार बनाम यूनियन ऑव इंडिया[96] के मामले में इस बात पर गौर किया कि 1950 से मूलभूत स्वतंत्रताओं को सीमित करने के कानून बनाने के संदर्भ में राज्य की प्रत्येक कार्यवाही में इस सिद्धांत का व्यापक प्रयोग हुआ है। इस सिद्धांत के अनुसार परिणाम में समानुपातिकता को सुनिश्चित करने के लिए परस्पर हितों में संतुलन कायम करना चाहिए। मगर यही संतुलन साधनों के संदर्भ में भी कायम रखना चाहिए। इस संतुलन के लिए कानून बनाने के उद्देश्य की पूर्ति के लिए न्यूनतम प्रतिबंधात्मक उपायों का सहारा लेना चाहिए।[97] वैश्विक स्तर पर हालांकि इस सिद्धांत की व्याख्या तथा शब्दावली में थोड़ी भिन्नता है, इसके मूल्यांकन की अनिवार्य रूप से तीन कसौटियां हैं। आवश्यकता की कसौटी के अनुसार राज्य को न्यूनतम कष्टकर विधि का अनुसरण करना चाहिए तथा संबंधित उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए आवश्यकता से अधिक बड़ा कदम नहीं उठाना चाहिए। दूसरी कसौटी यह है कि उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए न्यायसंगत, तर्कसंगत तथा उपयुक्त साधनों का उपयोग किया जाए। तीसरी कसौटी के अनुसार प्रतिबंधों के कारण राज्य द्वारा आरोपित कष्टकर स्थितियों तथा इन प्रतिबंधों को लगाने के पीछे छिपे उद्देश्य के महत्त्व के बीच समानुपातिक संतुलन होना चाहिए।[98] समानुपातिकता स्थापित करने के लिए उद्देश्य को इतना महत्त्वपूर्ण होना चाहिए कि वह प्रतिबंध को न्यायसंगत साबित कर सके, उठाए गए कदमों का उद्देश्य के साथ तर्कसंगत मेल होना चाहिए तथा उद्देश्यों की प्रप्ति के लिए आवश्यकता से अधिक बड़ा कदम नहीं उठाना चाहिए।[99]

उपर्युक्त कथनों के आलोक में यह तर्क दिया जा सकता है कि कठोर दंड संहिता या यौनकार्य का अपराधीकरण समानुपातिक कदम नहीं हैं क्योंकि न केवल यौनकर्मियों बल्कि और बड़े समुदाय को इन नीतियों के कारण कष्टकर स्थितियों का सामना करना पड़ता है। जैसा कि ऊपर चर्चा की गई है, इसके कई नकारात्मक प्रभाव हो सकते हैं। यौन–कर्मियों को पहले से अधिक व्यापक स्तर पर सामाजिक बहिष्कार का सामना करना पड़ता है। न सिर्फ एचआईवी संक्रमण बल्कि हिंसा तथा दुर्व्यवहार के खतरे बढ़ जाते हैं

93 इस सिद्धांत को विभिन्न न्यायक्षेत्रों में अदालतों द्वारा समर्पित तथा अनुमोदित किया गया है। 1979 के द संडे टाइम्स मुकदमे में इसे यूरोपियन कोर्ट ऑव ह्यूमन राइट्स में स्वीकार किया गया था। इसमें यह फैसला दिया गया था कि सूचना के प्रकटन पर प्रतिबंध को तब तक राष्ट्रीय सुरक्षा के हितों के लिए "आवश्यक" नहीं माना जाएगा जब तक (क) राष्ट्रीय सत्ता द्वारा प्रतिबंध को न्यायसंगत साबित करने के लिए "प्रासंगिक और समुचित कारण" नहीं बताए जाएं, (ख) प्रकटन पर लगा प्रतिबंध "अत्यन्त महत्त्वपूर्ण सामाजिक आवश्यकता" के देखते हुए नहीं लगाया गया हो और (ग) यह "विधिसम्मत उद्देश्य के प्रति "समानुपातिक नहीं हो"। द संडे टाइम्स बनाम इंगलैंड (1979) 2 ईएचआरआर 245, अनु. 62. अमेरिका के संदर्भ में देखें, अमेरिका बनाम एस्पिनोजा, 256 एफ 3 डी 718, 725 (7 वां सर्कु. 2001)। आयरलैंड के संदर्भ में देखें, हीने बनाम आयरलैंड, (1994) 3 आइआर 593. कनाडा में इस सिद्धांत के प्रयोग के लिए देखें, चौक बनाम आर., (1990) 3 एससीआर 1303 एट 1335–36

94 उदाहरण के लिए देखें, द इंगलिश केस ऑव आर. बनाम लाम्बर्ट (2001) 3 डब्ल्यूएलआर 203, 220 एच. लॉर्ड स्टेन के अनुसार

95 देखें स्टेट ऑव मद्रास बनाम वीजी रॉ, एआइआर 1952 एससी 196

96 2000 (7) एससीएएलई 524

97 टेरी ओट एस्टेट्स प्राइ. लिमि. बनाम यूनियन टेरिटरी, चंडीगढ़, (2004) 2 एससीसी 130

98 इस सिद्धांत के प्रयोग पर अधिक चर्चा के लिए देखें, उदाहरण के तौर पर, गारेथ वांग, "टूवार्ड्स द नटक्रैकर प्रिंसिपल : रिकंसिडरिंग द ऑबजेक्शन्स टू प्रोपॉरशनलिटि", (2000) पी.एल. 92

99 देखें, उदाहरण के तौर पर, यूके हाउस ऑव लॉर्ड्स केस ऑव आर (ऑन द एप्लीकेशन ऑव डेली) बनाम सेक्रेटरी ऑव स्टेट फॉर द होम डिपार्टमेंट, (2001) 2 डब्ल्यूएलआर 1622, तथा द प्रिवी काउंसिल केस ऑव डे फ्रेटास बनाम परमानेंट सेक्रेट्री ऑव मिनिस्ट्री ऑव एग्रीकल्चर, फिशरीज, लैंड्स तथा हाउसिंग, (1999) 1 ए.सी. 69

और इस उद्योग को छोड़ने का साहस रखने वाले व्यक्तियों के लिए भविष्य की आजीविका संभावनाओं पर बुरा प्रभाव पड़ता है। ऐसा नहीं कहा जा सकता है कि इन मामलों में उपयुक्त संतुलन कायम किया गया है। इसके विपरीत, इन प्रतिबंधों से उद्देश्यों पर वास्तव में नकारात्मक प्रभाव पड़ सकते हैं क्योंकि इनसे उत्पन्न खतरों तथा कर्मियों और ग्राहकों, दोनों को समान रूप से प्रभावित करने वाले एचआईवी/एड्स के खतरों में कमी होने के बदले बढ़ोत्तरी होती है।

एचआईवी/एड्स, यौनकर्मी तथा अन्य न्यायक्षेत्र

अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर यौनकर्मियों के अधिकारों पर विचार करने के बाद इस मुद्दे पर अन्य देशों की न्यायिक व्यवस्थाओं की प्रतिक्रियाओं पर नजर डाली जाए। उनके द्वारा दिए गए कुछ फैसलों के अध्ययन से हमारी समझ का विकास होगा तथा इस क्षेत्र में कानून के प्रति हमारे अपने दृष्टिकोण बनाने में मदद मिलेगी।

दक्षिण अफ्रीका : जॉर्डन एंड अदर्स बनाम द स्टेट[100]

यह मुकदमा दक्षिण अफ्रीका की 1957 ई. की यौन अपराध अधिनियम, धारा–23, अधिनियम के तहत दोषी पाए गए एक वेश्यालय स्वामी, एक वेश्यालय कर्मी तथा एक यौनकर्मी ने दायर किया था। इस अधिनियम में पारिश्रमिक के लिए किए जाने वाले यौनकार्य के लिए दंड की व्यवस्था है और इसके सेक्शन–20 (1) (aA) में यह कहा गया है कि वह व्यक्ति अपराधी माना जाएगा जो पारिश्रमिक के लिए दूसरे व्यक्ति के साथ अवैध यौन संबंध स्थापित करता है या अमर्यादित हरकत करता है। मगर इसमें यौनकार्य के लिए पारिश्रमिक देने को अपराध नहीं माना गया है। इस मुकदमे की कार्यवाही में सेक्स वर्कर्स ऐजुकेशन तथा एडवोकेसी टास्कफोर्स, द सेन्टर फॉर एप्लाइड लीगल स्टडीज, द रिप्रोडक्टिव हेल्थ रिसर्च यूनिट तथा कमीशन फॉर जेंडर इक्वलिटि समेत कई वेश्यालय स्वामियों जैसे संबंधित पक्षों ने हिस्सा लिया। उनकी यह मांग थी कि अधिनियम के इस सेक्शन को असंवैधानिक माना जाए। अपीलकर्ताओं तथा संबंधित पक्षों ने इस बात पर जोर दिया कि सेक्शन–20 (1) (aA) केवल वेश्या के विरुद्ध कार्यवाही करता है, न कि ग्राहक के विरुद्ध, और इस प्रकार यह पक्षपातपूर्ण है तथा समानता के अधिकार का उल्लंघन करता है। व्यक्ति की गरिमा, स्वतंत्रता तथा सुरक्षा के अधिकारों, गरिमा के अधिकारों तथा आर्थिक गतिविधि में स्वतंत्रतापूर्वक सक्रिय होने के अधिकार पर आधारित तर्क प्रस्तुत किए गए।

राज्य के वकील ने यह तर्क प्रस्तुत किया कि इस अधिनियम का उद्देश्य व्यावसायिक यौनकार्य का दमन है तथा ऐसा करने के पीछे छिपी वजहों में ये तथ्य सम्मिलित हैं कि वेश्यावृत्ति से औरतों की अवमानना होती है, यह वेश्याओं के प्रति हिंसक दुर्व्यवहार का कारण बनती हैं; यह बलात्कार, मार–पीट तथा नशीली दवाओं के प्रयोग से जुड़ी हुई है, यह अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर महिलाओं के देह व्यापार से संबंधित हैं, यह बाल वेश्यावृत्ति को जन्म देती है, यह जनता के लिए प्रायः परेशानी पैदा करती है तथा इसके कारण यौन संसर्ग से होने वाले संक्रमणों, खासतौर पर एचआईवी/एड्स का खतरा बहुत बढ़ जाता है। अपीलकर्ताओं तथा संबंधित पक्षों ने इसके विरुद्ध तर्क देते हुए कहा कि यौन उद्योग के वैधीकरण तथा विनियमन से इन समस्याओं का सामना बेहतर तरीके से किया जा सकता है; तथा यह भी कहा कि वास्तविकता तो यह है इस उद्योग के अपराधीकरण से समस्याएं बढ़ती हैं। अदालत ने इस विवाद को किनारे कर दिया। सभी न्यायाधीश इस बात पर सहमत थे कि संविधान का पालन करते हुए यौन व्यापार के लिए आपराधिक दंडों या विनियमन की प्रक्रिया के निर्धारण को वैधानिक मामला माना जाए।[101]

---

100 पूर्वोक्त टिप्पणी 80

101 देखें, नकोबो जे बहुमत निर्णय, अनुच्छेद–26

उच्च न्यायालय ने इससे पहले इस अधिनियम की संवैधनिकता को दी गई चुनौती को लिंग समानता तथा कानून के समक्ष समानता के आधार पर स्वीकार कर लिया था तथा यह माना था कि वादी तथा ग्राहक के बीच अंतर निर्धारित करते हुए यह व्यवस्था लिंगों तथा व्यक्तियों के बीच अनुचित भेदभाव पैदा करती है।[102] इसको इस कारण से भी पक्षपातपूर्ण माना गया कि इसमें यौनकार्य से धनार्जन करने वालों तथा अन्य प्रकार से लाभ या पारिश्रमिक प्राप्त करने वालों के बीच अंतर का निर्धारण किया गया था।[103] मगर अदालत ने संविधान के संबंधित अनुच्छेदों का उल्लेख नहीं किया।

वेश्यालय चलाने के अपराध से संबंधित सेक्शनों 2, 3 (बी) तथा (सी) की संवैधानिकता को भी चुनौती दी गई थी। उच्च न्यायालय में इस चुनौती को अस्वीकार कर दिया गया। लेकिन इसमें यह माना गया कि संबंधित मामले में लिए जा रहे कदम वेश्याओं के शोषण तथा मानव के देह व्यापार पर रोक लगाने के उद्देश्य से उठाए जा रहे हैं। यह स्वीकार किया गया कि इस शोषण के प्रति जनसाधारण की घृणा से राज्य को ऐसी परिस्थितियों में इस व्यापार, पेशा तथा व्यवसाय के अधिकारों को सीमित करने का आधार मिल जाता है।[104] सेक्शन–20 (1) (एए) तथा सेक्शनों 2 व 3, से संबंधित उच्च न्यायालय के फैसलों को 2002 में दक्षिण अफ्रीका के संवैधानिक न्यायालय में चुनौती दी गई जिसमें न्यायालय ने असंवैधानिकता की चुनौतियों को बहुमत से अस्वीकार कर दिया, वेश्यावृत्ति के आरोपों में दोष सिद्ध किया तथा वेश्यालय चलाने के अभियोग को बरकरार रखा। सभी न्यायाधीश इस पर सहमत थे कि सेक्शन–2 और 3 की असंवैधानिकता की चुनौतियों को पुनः अस्वीकार करना है। इस पर भी उनमें एकमत था कि गरिमा, निजता, स्वतंत्रता तथा व्यक्ति की सुरक्षा तथा आर्थिक गतिविधि के आधार पर सेक्शन–20 (1) (aA) को दी गई चुनौतियों को अस्वीकृत किया जाए। मगर समानता के मुद्दे पर न्यायाधीशों में विभाजन था।

ग्यारह में से पांच न्यायाधीशों ने यह माना कि ग्राहक को छोड़कर सिर्फ यौनकर्मी को अपराधी मानने वाला कानून पक्षपातपूर्ण है तथा इसे रद्द कर देना चाहिए। अल्पमत का यह निर्णय उल्लेखनीय है। इसके अनुसार सेक्शन–20 (1) (aA) से लिंग के आधार पर अनुचित भेदभाव होता है क्योंकि अधिकांश यौनकर्मियों में औरतों की संख्या अधिक होती है तथा उनके ग्राहक प्रायः पुरुष होते हैं। लम्बे समय से ऐसा होता आया है कि वेश्या के रूप में काम करने वाली औरत समाज से बहिष्कृत कर दी जाती है, जबकि पुरुष ग्राहकों को या तो स्वीकार कर लिया जाता है या उनकी तरफ ध्यान नहीं दिया जाता है। सेक्शन–20 में निर्धारित अंतर से इस यौनिक दोहरे मानदंड को समर्थन मिलता है।[105] ओ रेगन तथा साक्स जेजे के अनुसार, इस प्रकार वेश्या तथा ग्राहक के बीच अंतर प्रदर्शित करने वाला प्रभाव उस सिलसिलेवार लैंगिक प्रतिकूलता से सीधे तौर पर जुड़ा है जिसे मिटाने के लिए हमारा संविधान प्रतिबद्ध है। इनमें से सभी परिस्थितियों में हमारा यह मानना है कि .... यह वह मामला है जिसमें स्पष्ट तौर पर निष्पक्ष और अंतर प्रदर्शित करने वाला पैमाना वर्णित आधार पर विशिष्ट अंतर प्रदर्शित करने वाला प्रभाव पैदा करता है तथा इससे उस आधार पर अप्रत्यक्ष भेदभाव होता है।[106]

---

102 उच्च न्यायालय निर्णय, एस बनाम जॉर्डन, 2002 (1) एसए 797 एट 800 ई; 2001 (10) बीसीएलआर 1055 (टी) एट 1058 ए; 2002 (1) एसएसीआर 17 (टी) एट बी

103 वही एट 800

104 पूर्वोक्त टिप्पणी 80, अनुच्छेद–35

105 ओ रेगान तथा साक्स जेजे, वही, अनुच्छेद–64

106 पूर्वोक्त टिप्पणी 80, अनुच्छेद–60

इसके अलावा अल्पमत के निर्णय के अनुसार यह निष्कर्ष स्थिति की वास्तविकता से मेल नहीं खाता है कि समस्या का कारण मांग पैदा करने वाला पुरुष न होकर वह औरत है जो इस मांग पर अपनी प्रतिक्रिया करती है। वास्तविकता में यह तथ्य इससे विपरीत स्थिति प्रदर्शित करता है कि पुरुष ग्राहक अधिकतर उस वर्ग के होते हैं जो आर्थिक तौर पर अधिक शक्तिशाली होता है। "यह कहना वास्तविक सामाजिक स्थिति को बिल्कुल उलटने के समान होगा कि औरतों पर अभियोग लगाया जा सकता है क्योंकि वे यौनकार्य का सौदा करती हैं तथा वे इसकी संरक्षिका नहीं होतीं।[107]

अन्त में अदालत में न्यायाधीशों ने बहुमत से इस बात को माना कि यह अधिनियम लिंग के आधार पर प्रत्यक्ष भेदभाव या ग्राहक को छोड़कर सिर्फ यौनकर्मी को दंड देने के कारण अप्रत्यक्ष भेदभाव नहीं करता है। यह अधिनियम ऐसे "हर व्यक्ति" को दंडित करता है जो पारिश्रमिक के लिए यौनकार्य में भागीदारी करता है और यहां यह बात स्पष्ट तौर पर लागू होती है। अधिनियम हालांकि ग्राहकों को दंडित नहीं करता है, वे अपराध में सहायता करने के कारण साधारण कानून तथा रॉयटस एसेंबलीज अधिनियम[108] के सेक्शन–18 के कानून के अनुसार अपराध के दोषी हैं तथा इन कानूनों में उन्हें यौनकर्मियों के समान दंड मिलता है।

ओ रेगन तथा साक्स जेजे ने इस दृष्टिकोण की आलोचना करते हुए यह तर्क दिया कि यह सच है कि ग्राहक की भागीदारी से उसे समान कानूनी सजा मिलेगी, लेकिन वेश्यावृत्ति के लिए मिली सजा से जुड़े सामाजिक कलंक के कारण लैंगिक रूढ़ धारणाओं तथा दोहरे मानदंडों को बल मिलता है तथा सिलसिलेवार असमानता की जड़ें और गहरी हो जाती हैं।[109] वैसे, अल्पमत का निर्णय भी किनारे कर दिए इस समूह की सुरक्षा के लिए अन्ततः अपर्याप्त साबित होता है। इसकी यह कहकर आलोचना होती है कि अनुचित भेदभाव के विश्लेषण में बहुमत के निर्णय में देखे गए नैतिकता के तत्त्व से खुद को अलग रखने में विफल रहने के कारण विरोधाभास से भरा है।[110] व्यक्ति की स्वतंत्रता तथा गरिमा के आधार पर दिए गए असंवैधानिकता के तर्कों को अस्वीकार करते हुए अल्पमत के निर्णय का यह मानना था कि वेश्याओं की गरिमा एक हद तक कम होती है, और यह कमी वेश्यावृत्ति के चरित्र से ही पैदा होती है .... वेश्याओं की गरिमा हमारे यह मानने के बावजूद कम हो जाती है कि वेश्याओं के पास वेश्यावृत्ति के अलावा बहुत कम विकल्प होते हैं। और, इस कमी की वजह सेक्शन–20 (1) (एए) नहीं, बल्कि व्यावसायिक यौनकार्य में उनकी सक्रियता है।[111] अल्पमत के निर्णय द्वारा असमान समाज, दोहरे यौनिक मानदंड तथा यौनकर्मियों के लांछनीकरण की आलोचना इस कथन को देखते हुए व्यर्थ है क्योंकि इसमें औरतों पर आरोप डाल दिया गया है। यह निर्णय निराशाजनक है, और आन्नेके मेरकोट्टर के अनुसार, "संवैधानिक न्यायालय द्वारा इस समूह की दुर्दशा को कम करने की उम्मीद के बिल्कुल विपरीत इस निर्णय से ग्राहकों, समुदायों तथा विशेषकर कानून लागू करने वाले अधिकारियों द्वारा यौनकर्मियों के शोषण को बढ़ावा मिलेगा।"[112]

---

107 ओ रेगान तथा साक्स जेजे, वही, अनुच्छेद–68

108 1956 का अधिनियम 17 सेक्शन–18 (2) के अनुसार "अगर कोई व्यक्ति : (क) अपराध में सहायता तथा इसके घटित होने या इसे करने के लिए किसी अन्य व्यक्ति के साथ मिलकर षड्यंत्र करे या (ख) दूसरे व्यक्ति को अपराध करने के लिए उकसाए, दुष्प्रेरित करे, आदेश दे या तैनात करे, तब उसे अपराध का दोषी माना जाएगा तथा दोष सिद्ध होने पर उसे उतनी सजा मिलेगी जितनी सजा सचमुच में अपराध करने वाले को सुनाई जाएगी"

109 ओ रेगान तथा साक्स जेजे, पूर्वोक्त टिप्पणी 80, अनुच्छेद–72

110 आन्नेके मेरकोट्टर, 'जॉर्डन बनाम द स्टेट : इम्पलिकेशन्स फॉर सेक्स वर्कर्स,' कम्युनिटि लॉ सेंटर, यूनिवर्सिटी ऑव द वेस्टर्न केप, http://www.communitylawcentre.org.za/gender/gendernews2002/2002_2_jordan.php पर उपलब्ध (अंतिम बार देखने की तिथि 27 अक्टू. 06)

111 ओ रेगान तथा साक्स जेजे, पूर्वोक्त टिप्पणी 80, अनुच्छेद–74

112 आन्नेके मेरकोट्टर, पूर्वोक्त टिप्पणी 110

यूनाइटेड स्टेट्स : अलायन्स फॉर ओपन सोसाइटी इंटरनेशनल इत्यादि बनाम यूनाइटेड स्टेट्स एजेंसी फॉर इंटरनेशनल डेवलपमेंट[113]

डीकेटी इंटरनेशनल बनाम यूनाइटेड स्टेट्स एजेंसी फॉर इंटरनेशनल डेवलपमेंट[114]

संयुक्त राज्य के संदर्भ में दो अलग मुकदमे महत्त्वपूर्ण हैं जो हाल में अमेरिका की संघीय अदालतों में एक कानून की उस व्यवस्था को चुनौती देते हुए दायर किए गए थे जिसके अनुसार एचआईवी/एड्स तथा मलेरिया के विरुद्ध संयुक्त राज्य अमेरिका अधिनियम, 2003 (यूएस ग्लोबल एड्स एक्ट)[115] के तहत वित्तीय सहायता प्राप्त करने की शर्त के रूप में गैर सरकारी संगठनों के लिए यह आवश्यक था कि वे "वेश्यावृत्ति का स्पष्ट रूप से विरोध करने वाली नीति" का पालन करें।

पहले मुकदमे में द अलायन्स फॉर ओपन सोसाइटी इंटरनेशनल ने 8 मई, 2008 को डिस्ट्रिक्ट ऑव न्यूयॉर्क में विवादित सेक्शन को वाक् स्वतंत्रता के आधार पर चुनौती दी। वादी लाभ निरपेक्ष संस्थाएं हैं जो एचआईवी/एड्स के प्रसार को रोकने में वैश्विक स्तर पर सक्रिय हैं और अपने कार्य के दौरान उन्हें यौनकार्य में सक्रिय लोगों समेत ऐसे समूहों के साथ मिल–जुलकर काम करना होता है जिनके लिए एचआईवी के संक्रमण का खतरा बहुत बढ़ा हुआ होता है। उन्होंने यह दावा किया कि संबंधित व्यवस्था उनकी उन गतिविधियों को भी सीमित कर देती है जो वे अपने गैर सरकारी फंडों की मदद से चलाती हैं और यह स्थिति उन्हें उन गतिविधियों में सक्रिय होने में असमर्थ बना देती हैं जिन्हें प्रतिवादी वेश्यावृत्ति के विरुद्ध अपर्याप्त संघर्ष के रूप में देखते हैं, तथा उन्हें अपने विशिष्ट दृष्टिकोणों को अभिव्यक्त करने के लिए वैकल्पिक मार्ग नहीं मिलते हैं। अतः उन्होंने ऐसे घोषणात्मक निर्णय की मांग की जिसमें इस व्यवस्था के अंतर्गत वित्तीय सहायता प्राप्त करने वालों को सिर्फ यह स्पष्ट करना पड़े कि वेश्यावृत्ति से औरतों पर बुरा असर पड़ता है, लेकिन उनकी ऐसी गतिविधियों पर किसी तरह का नियंत्रण नहीं हो जिनके लिए वे अपने प्राइवेट फंड का इस्तेमाल करते हैं। विकल्प के तौर पर उन्होंने ऐसे घोषणात्मक निर्णय की मांग रखी जिसमें प्रतिवादियों द्वारा लागू व्यवस्था को असंवैधानिक माना जाए।

पदासीन न्यायाधीश मार्रेरो जे. ने वादियों के पक्ष में फैसला सुनाया तथा उनके नुकसान को अपूरणीय होने से बचाने के लिए प्रारंभिक निषेधाज्ञा जारी की। अपने निर्णय में उन्होंने यह सुनाया कि इस व्यवस्था में वेश्यावृत्ति से उत्पन्न बुराइयों के साधारण विरोध की घोषणा मात्र से अधिक की अपेक्षा की जा रही थी। इसमें संविधान के प्रथम संशोधन की वाक् स्वतंत्रता व्यवस्थाओं का उल्लंघन करते हुए वाक् पर अंकुश लगाया गया था और संस्था के प्राइवेट फंडों पर असंवैधानिक रूप से दृष्टिकोण संबंधी भेदभाव करने वाले प्रतिबंधों को लागू किया।

दूसरे मामले में संबंधित संस्था का नाम डीकेटी इंटरनेशनल है जो विश्व के अनेक देशों में परिवार नियोजन तथा एचआईवी/एड्स की रोकथाम के कार्यक्रम आयोजित करती है। इस संस्था को यूएसएड द्वारा मिल रहे अनुदान के विस्तार को तब नामंजूर कर दिया गया जब इसने यह प्रमाणित करना नामंजूर किया कि इस संस्था की नीति वेश्यावृत्ति तथा यौनगत मानव व्यापार का स्पष्ट तौर पर विरोध करती है। संस्था ने यह दावा पेश किया कि ऐसी नीति से यौनकर्मियों समेत ऐसे अन्य लोगों के अलगाव तथा लांछनीकरण की संभावना है जो एचआईवी/एड्स के संदर्भ में विशेष रूप से असुरक्षित हैं और इससे डीकेटी की कार्यक्षमता सीमित हो सकती है। डिस्ट्रिक्ट कोर्ट ऑव कोलम्बिया में पदासीन न्यायाधीश सुल्लिवान ने यह फैसला

113 अलायन्स फॉर ओपन सोसाइटी इंटरनेशनल एट अल बनाम यूनाइटेड स्टेट्स एजेन्सी फॉर इंटरनेशनल डेवलपमेंट, पूर्वोक्त टिप्पणी 20

114 डीकेटी इंटरनेशनल बनाम यूनाइटेड एजेन्सी फॉर इंटरनेशनल डेवलपमेंट, डिस्ट्रिक्ट ऑव कोलम्बिया, मई 18 2006, 433 एफसप. 2 डी 5

115 एड्स के विरुद्ध यूएस नेतृत्व, पूर्वोक्त टिप्पणी 18, 7631 (एफ)

सुनाया कि संविधान के प्रथम संशोधन के अनुसार सरकारी कार्यक्रमों में हिस्सा लेने की शर्त के रूप में सरकार व्यक्तियों तथा संस्थाओं को इस बात पर मज़बूर नहीं कर सकती है कि वे किसी विशेष दृष्टिकोण या विषयवस्तु का अनुसरण करते हुए अपने विचारों को प्रकट करे। अगर वाक् की विषयवस्तु कानून द्वारा विनियमित होती है, तब ऐसे कानून को सावधानीपूर्वक बनाना चाहिए ताकि सरकार के अत्यन्त महत्त्वपूर्ण हितों की रक्षा हो सके और यह कम से कम प्रतिबंध लगाने वाला विकल्प होना चाहिए। इस मामले में संबंधित व्यवस्था द्वारा वाक् पर लगाया गया प्रतिबंध सरकार के हित की रक्षा के लिए कम से कम प्रतिबंध लगाने वाला साधन नहीं था। वित्तीय अनुदान प्राप्त करने वालों पर प्रतिबंध लगाने की कांग्रेस को अधिकार का विस्तार संबंधित प्रतिबंधों पर लागू नहीं होती है क्योंकि ये शक्ति अनुदान से संबंधित गतिविधियों से भिन्न गतिविधियों पर लागू होती हैं।

यह सब देखते हुए सुल्लिवान जे. ने यह फैसला सुनाया कि वादी संक्षिप्त निर्णय का हकदार है और यूएसएड्स द्वारा ऐसी नीति के पालन पर स्थायी रोक लगती है क्योंकि ऐसे वाक् पर दृष्टिकोण संबंधी प्रतिबंध लगाना असंवैधानिक है जिसमें सरकार के हितों का सावधानीपूर्वक ध्यान नहीं रखा जाता है।

ये फैसले हालांकि अलग–अलग मुकदमों के वादियों तक सीमित हैं, इस क्षेत्र में काम करने वाली अन्य संस्थाओं पर इनका व्यापक प्रभाव पड़ सकता है। सरकार की प्रतिक्रिया तथा स्थिति के विकास को देखा जाना बाकी है।

आस्ट्रेलियाः एजली बनाम फेडेरेल कैपिटल प्रेस ऑव आस्ट्रेलिया[116]

आर. बनाम डीएस[117]

2001 में ब्यूमॉन्ट एसीजे, हिगिंस तथा गाइल्स जेजे के समक्ष लड़े गए मुकदमे में यौनकर्मी के रूप में कार्य कर रही वादी की उस चुनौती पर विचार किया गया कि प्रतिवादी ने उसके साथ अवैध भेदभाव करते हुए अपने अखबारों में उसके विज्ञापनों के प्रकाशन के लिए विशेष शर्ते रखीं, जिनके अनुसार उसके विज्ञापनों को शुल्क के पूर्व भुगतान के बाद केवल वयस्क सेक्शन में प्रकाशित किया जाना था। उसने यह दावा किया कि यह व्यवहार आस्ट्रेलिया के भेदभाव अधिनियम, 1991 की धारा–8[118] का उल्लंघन करता है क्योंकि उसके यौनकर्मी होने के कारण उस पर ऐसी शर्त थोपी गई जो परिस्थिति को देखते हुए उचित नहीं थी।

प्रथम दृष्टि में न्यायाधिकरण (बेंच) का यह मानना था कि इस मामले में धारा–8 (1) (ए) के अनुसार प्रत्यक्ष भेदभाव का मामला नहीं बनता था क्योंकि प्रतिवादी यह स्थापित करने में विफल रहा था कि लगाए गए प्रतिबंध उसके व्यवसाय की वजह से लगाया गया था, न कि विज्ञापनों की विषय वस्तु के कारण। इसने यह फैसला सुनाया कि इस मामले में 8 (1) (बी) के अंतर्गत अप्रत्यक्ष भेदभाव हुआ था। मगर सेक्शन–8 (2) के अनुसार ऐसे अप्रत्यक्ष भेदभाव को उन परिस्थितियों में उचित माना गया तथा इस चुनौती को खारिज कर दिया गया।

---

116 192 एएलआर 395, 2001 डब्ल्यूएल 350260; (2001) एफसीए 397

117 2005 डब्ल्यूएल 1010005 (वीसीए); (2006); एएलएमडी 971; (2006) एएलएमडी 991, 153 ए क्रिम आर 194; 191 एफएलआर 337; (2005) वीएससीए 99

118 सेक्शन–8 (1) के अनुसार इस अधिनियम के अनुसार व्यक्ति दूसरे के प्रति भेदभाव करता है अगर वह (क) किसी व्यक्ति के साथ नकारात्मक व्यवहार करता है या करने का इरादा रखता है क्योंकि उस व्यक्ति में सेक्शन–7 में उल्लिखित विशेषता है, या (ख) वह किसी व्यक्ति में सेक्शन–7 में उल्लिखित किसी विशेषता के होने के कारण उस पर ऐसी शर्त या आवश्यकता थोपता है या थोपने का इरादा रखता है जिससे उस व्यक्ति पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है या पड़ सकता है।" खंड 8 (2) में यह स्पष्ट किया गया है कि अनुच्छेद–1 (बी) तब लागू नहीं होता है जब ऐसी शर्त या आवश्यकता परिस्थितियों को देखते हुए उचित हो। ऐसी शर्त या आवश्यकता के औचित्य के निर्धारण के लिए खंड 8 (सी) के अनुसार इन बातों को ध्यान में रखना होता है (क) व्यवहार के परिणामस्वरूप होने वाली हानि की प्रकृति तथा सीमा और, (ख) हानि से उबरने या इसके कम होने की संभाव्यता, तथा (ग) क्या हानि अपेक्षित परिणाम से मेल नहीं खाती है। सेक्शन–7 में ऐसी अनेक विशेषताओं को सूचीबद्ध किया गया है। इनमें सेक्शन–7 (1) के अंतर्गत व्यक्ति का पेशा, व्यापार या आजीविका सम्मिलित हैं।

सुप्रीम कोर्ट ऑव द ऑस्ट्रेलियन कैपिटल टेरीटरि में अपील करने पर यह निर्णय सुनाया गया कि पिछली अदालत का यह फैसला गलत था कि अपीलकर्ता के प्रति प्रतिवादी के व्यवहार के कारण अपीलकर्ता का यौनकर्मी होना नहीं था। लेकिन इस अदालत के हाथ बंधे हुए थे क्योंकि लगाई गई शर्तों के तर्कसंगत आधार का मूल्यांकन पूरी तरह से तथ्यात्मक था और इस प्रकार अदालत इसकी समीक्षा नहीं कर सकती थी। इस निर्णय के विरुद्ध फिर से अपील की गई, मगर सर्वोच्च न्यायालय ने पिछली अदालत द्वारा लिए गए तथ्यात्मक निर्णयों की समीक्षा करना अस्वीकार कर दिया। अतः यह अपील खारिज कर दी गई तथा लगाए गए प्रतिबंधों को बरकरार रखा गया। मगर यह ध्यान देने योग्य है कि अदालतें यह मानने को तैयार थीं कि वादी के प्रति भेदकारी व्यवहार की वजह यह थी कि उसका रोजगार यौन–उद्योग के अंतर्गत आता था।

वर्ष 2005 में, मेलवॉर्न में आर बनाम डीएस के मुकदमे में दास स्वामित्व का दोष सिद्ध होने पर सुनाई गई सजा की समीक्षा हुई थी। डीएस उस अंतर्राष्ट्रीय योजना का हिस्सा थी जिसके अंतर्गत थाईलैंड की औरतों को बहला फुसलाकर उनसे ऐसी परिस्थितियों में वेश्यावृत्ति कराई जाती थी जिनमें उन्हें बंद रखा जाता था तथा इस प्रकार उन पर प्रबंधकों का स्वामित्व था। उसने दास स्वामित्व के एक मामले तथा दास व्यापार में शामिल होने के दो मामलों में अपना अपराध स्वीकार किया तथा उसका यह अपराध आपरधिक संहिता अधिनियम, 1955 के विरुद्ध था।

उपर्युक्त अधिनियम के सेक्शन–270.1 में दासता की परिभाषा देते हुए इसे किसी व्यक्ति की ऐसी स्थिति बताया है जिसमें उस पर स्वामित्व के अधिकारों से जुड़ी किसी शक्ति या सारी शक्तियों को प्रयोग में लाया जाता है और इसमें वह स्थिति सम्मिलित है जो व्यक्ति द्वारा कर्ज लेने या करार करने से पैदा होती है।" सेक्शन–270.3 (3) में दास व्यापार की परिभाषा में इन गतिविधियों को सम्मिलित किया गया है (ए) दास बनाने के उद्देश्य से किसी व्यक्ति का बंदीकरण, परिवहन या विक्रय या (बी) दास का क्रय या विक्रय।

इस मामले से संबंधित थाई औरतें, जिनमें अधिकतर बेसहारा थीं, वेश्या के रूप में काम करने के लिए आस्ट्रेलिया लाई गयी थीं। यह स्पष्ट है कि प्रत्येक औरत को उसके कार्य की प्रकृति के बारे में बता कर वहां लाया गया था और उन्हें बताया जा चुका था कि उन्हें ग्राहकों की निर्धारित संख्या के साथ सोना होगा और करार के बंधनों से मुक्त होने से पहले निश्चित राशि का अर्जन करना होगा। कर्ज के बकाया होने की अवधि में वे अपने आवासों या वेश्यालय में बंद रखी जाती थीं और वे बाहर केवल अनुमति प्राप्त करने के बाद जा सकती थीं और उनके साथ किसी व्यक्ति का होना आवश्यक था। उन्हें लम्बे समय तक बिना किसी पारिश्रमिक के काम करने पर मजबूर किया जाता था। औरतों के पासपोर्टों तथा वापसी की हवाई टिकटों को इस आधार पर जब्त कर लिया गया कि उन्हें करीब 45,000 डॉलर कर्ज चुकाने के बाद वापस किया जाएगा। प्रत्येक औरत को सप्ताह में कम से कम छह दिन बिना पारिश्रमिक के पूरी रात काम करना होता था। जांच करने वाली अदालत के न्यायाधीश ने यह निर्णय सुनाया कि ऐसी स्थितियों में इनमें से प्रत्येक औरत को दास की तरह काम करना पड़ रहा था तथा डीएस को इस कारण से अपराधी ठहराया। अपील के बाद यह निर्णय बरकरार रहा तथा जेल की सजा सुनाई गई।

न्यूजीलैंडः विल्लोफोर्ड फैमिलि ट्रस्ट बनाम क्राइस्टचर्च सिटी काउन्सिल[119]

जुलाई 2005 में न्यूजीलैंड के उच्च न्यायालय ने क्राइस्टचर्च उपकानून के ऐसे कई सेक्शनों को हटा दिया जिनके कारण वेश्यालय शहर के केन्द्रीय व्यापारिक क्षेत्र में निश्चित इलाका तक सीमित थे। उस समय लागू कानून, वेश्या कानून सुधार अधिनियम, 2003 ने वेश्यावृत्ति को वैध कर दिया था तथा ऐसी व्यवस्था की थी जिसके द्वारा यौनकार्य तथा वेश्यालयों को विनियमित किया जाता था। इस व्यवस्था में शहरों को उपकानून

119 विल्लोफोर्ड फैमिलि ट्रस्ट बनाम क्राइस्टचर्च सिटी कांउसिल (29 जुलाई 2005), क्राइस्टचर्च सी.आई.वी. 2004–409–002299

द्वारा उन इलाकों को विनियमित करने की शक्ति दी गई थी जहां वेश्यालय स्थापित किए जा सकते थे। इसका अनुसरण करते हुए क्राइस्टचर्च ने एक उपकानून बनाया जिसके अनुसार एक निश्चित परिसीमित इलाके के अलावा शहर के अन्य भागों में वेश्यालय चलाना प्रतिबंधित था। यह इलाका आकार में 90 हेक्टेयर का था तथा शहर के केन्द्रीय व्यापारिक क्षेत्र में स्थित था। उपकानून के बनने से पहले परिनिश्चित इलाके से बाहर अवस्थित वेश्यालयों को तब तक चलने की अनुमति दी गई जब तक वे अपनी प्रकृति नहीं बदलें या आकार में वृद्धि नहीं करें। इस कानून की वैधता को विल्लोफोर्ड के एक पारिवारिक ट्रस्ट ने चुनौती दी। इसकी संपत्ति परिनिश्चित इलाके के बाहर थी और यह उस पर वेश्यालय चलाना चाहता था। चुनौती के पक्ष में दिए गए तर्कों में संगठन की स्वतंत्रता का अधिकार तथा कार्य का अधिकार सम्मिलित थे। यह तर्क प्रस्तुत किया गया कि इससे यौनकर्मियों के लघु स्तर पर स्वामी संचालित वेश्यालयों में काम करने के अधिकार का उल्लंघन होता है।

अदालत ने हालांकि इस तर्क को अस्वीकार कर दिया कि उपकानून का विवादित सेक्शन यौनकर्मियों के संगठन की स्वतंत्रता के अधिकार का उल्लंघन करता है, इसने यह माना कि यह कानून यौनकर्मियों को उन्हें परिसीमित इलाके से बाहर छोटे वेश्यालयों में अपना व्यापार करने से रोकता है। दूसरे शब्दों के कार्य के अधिकार के अस्तित्व को स्वीकार किया।

इसने न्यूजीलैंड प्रॉस्टिच्युट्स कलेक्टिव के इस साक्ष्य को स्वीकार कर लिया कि शहर के उपनगरीय क्षेत्र के रिहाइशी इलाकों में लघु स्तर पर स्वामी–संचालित वेश्यालय बड़ी संख्या में अवस्थित हैं। इस प्रकार उपकानून व्यावहारिक तौर पर शहर में इन वेश्यालयों के अस्तित्व को नकार रहा था। अदालत ने यह माना कि उपकानून द्वारा यौनकर्मियों पर लगाया गया वह प्रतिबंध अनुचित था जिसके कारण वे शहर के संपन्न तथा महत्त्वपूर्ण भाग में अपने व्यापार में बिल्कुल निष्क्रिय हो गए थे। इस परिणाम से वास्तविकता में वेश्या कानून सुधार अधिनियम द्वारा वेश्यावृत्ति के व्यापार के वैधीकरण का वह मकसद कमजोर हो रहा था जिसके तहत वेश्यावृत्ति के व्यापार में सक्रिय होने के यौनकर्मियों के अधिकार की रूपरेखा तैयार करनी थी और ऐसा फ्रेमवर्क तैयार करना था जिसमें उनके अधिकारों की रक्षा हो सके, शोषण से उनका बचाव हो सके तथा उनके हितों की रक्षा हो सके। लघु स्तर पर स्वामी–संचालित वेश्याओं को ऐसे किसी फ्रेमवर्क का केन्द्रीय हिस्सा माना गया।

इंगलैंड तथा वेल्स : डीपीपी बनाम बुल[120]

इस मामले में अभियोग एंड्रयू रोजर बुल पर सामान्य वेश्या होने तथा सड़क या सार्वजनिक स्थान पर स्ट्रीट आफेंस एक्ट 1959 की धारा–1(1) के तहत वेश्यावृत्ति के उद्देश्य से इधर–उधर घूमने का आरोप था। उसे लंदन के सोहा नामक रेड लाइट इलाके में पुरुषों की ओर से ध्यान केन्द्रित करते हुए देखे जाने के बाद गिरफ्तार किया गया था और उस वक्त उसके पास चार कंडोम पाए गए।

अभियोग ने यह तर्क प्रस्तुत किया कि धारा– 1 केवल औरतों पर लागू होता है और इस तरह इस मामले में कोई आरोप नहीं बनता है। अभियोगपक्ष ने इसके विरुद्ध दलील देते हुए कहा कि चूंकि कानून में सामान्य वेश्या की कोई परिभाषा नहीं थी और कानून लिंग निरपेक्ष है, इसलिए अदालत इस परिभाषा में पुरुषों को सम्मिलित करने के लिए स्वतंत्र है। बचाव पक्ष ने पुराने वैधानिक इतिहास का हवाला देते हुए यह कहा कि कानून बनाने का उद्देश्य सड़क पर औरतों की वेश्यावृत्ति की समस्या का समाधान करना था। मजिस्ट्रेट के स्तर पर यह निष्कर्ष निकाला गया यह अधिनियम केवल औरतों पर लागू होने के उद्देश्य से बनाया गया था क्योंकि समलिंगी गतिविधियां उपकानून बनाते समय पहले से ही अवैध थीं और इस अधिनियम में उनका शामिल किया जाना अनावश्यक था। अतः आरोप को खारिज कर दिया गया। क्वींस बेंच डिविजन में अपील

120 डिवीजनल कोर्ट, (1995) क्यूबी 88

होने पर इसकी पुष्टि हुई। जब अदालत ने यह निर्णय सुनाया कि अपनी सही बनावट में 'सामान्य वेश्या' शब्द औरत वेश्याओं तक सीमित है तथा लिंग निरपेक्ष भाषा में होने के बावजूद इसके अर्थ का विस्तार पुरुषों तक नहीं होता है।[121]

यूरोपियन कोर्ट ऑव जस्टिस : जेनी बनाम स्टाट्ससेक्रेटारिस वान जस्टिस[122]

यह मुकदमा पोलैंड तथा चेक गणराज्य के उन नागरिकों से संबंधित था जो नीदरलैंड में आत्मनिर्भर वेश्याओं के रूप में कार्य करने हेतु उन्हें निवास परमिट नहीं दिए जाने के निर्णय को चुनौती दे रहे थे। हॉलैंड में उनके आरंभिक विरोध को इस आधार पर खारिज कर दिया गया कि वेश्यावृत्ति प्रतिबंधित गतिविधि है, या कम से कम कार्य का यह रूप समाज में स्वीकृत नहीं है तथा इसे नियमित कार्य या पेशा नहीं माना जा सकता है।[123]

अनैतिकता के आधार पर अपीलकर्ताओं को अनुमति नहीं दिए जाने के तर्कों को अस्वीकार करते हुए अदालत ने यह फैसला सुनाया कि संबंधित सदस्य राज्य में वेश्यावृत्ति को पहले से सहन, यहां तक कि विनियमित किया जा रहा है। अधिकतर सदस्य राज्यों में वेश्यावृत्ति अलग से प्रतिबंधित नहीं है, लेकिन इससे संबंधित ग्राहकों को लुभाना, श्वेत दासता, नाबालिगों की वेश्यावृत्ति, वसूली तथा कर्मियों का गुप्त आवास आदि गतिविधियां प्रतिबंधित हैं। हॉलैंड में वेश्यावृत्ति के विशेष प्रकारों जैसे विंडो वेश्यावृत्ति तथा सड़क पर होने वाली वेश्यावृत्ति को न सिर्फ वैध बल्कि विनियमित कर दिया गया है।[124] हॉलैंड की सरकार ने यह तर्क दिया कि वेश्यावृत्ति को स्वरोजगार के अंतर्गत आने वाली आर्थिक गतिविधि के रूप में नहीं देखा जा सकता है क्योंकि इसकी प्रकृति अवैध होती है, यह सार्वजनिक नैतिकता के खिलाफ होती है तथा यह निर्धारित करना संभव नहीं है कि वेश्या स्वेच्छापूर्वक से इस कार्य में गयी है या अपनी गतिविधियों में स्वतंत्रतापूर्वक सक्रिय है। वास्तविकता में वेश्याएं आमतौर पर दलालों के अधीन होती हैं।[125] मगर अदालत ने यह निर्णय सुनाया कि वेश्यावृत्ति को उस स्थिति में स्व–रोजगार में सक्रिय व्यक्ति की आर्थिक गतिविधि का अर्थ प्रदान किया जा सकता है जब यह प्रमाणित हो जाए कि यह उस व्यक्ति द्वारा की जा रही है जो यह सेवा प्रदान करते वक्त कार्य के चुनाव, कार्य की स्थितियों तथा पारिश्रमिक की शर्तों के संदर्भ में किसी के अधीन नहीं हैं; इसे व्यक्ति अपनी जिम्मेदारी लेकर कर रहा हो तथा ऐसा उस पारिश्रमिक के लिए कर रहा हो जो उसे सीधे तौर पर तथा पूरा मिल रहा हो।[126] यह वह गतिविधि है जिसमें सेवा प्रदान करने वाला व्यक्ति भुगतान के बदले लाभग्राही की मांग की पूर्ति किसी भौतिक वस्तु के उत्पादन या हस्तांतरण के बिना करता है। इस प्रकार वेश्यावृत्ति सेवाओं की वह व्यवस्था है जो आर्थिक गतिविधियों की धारणा के अंतर्गत आती है।[127] चाहे जो भी परिस्थिति रही हो, इससे पहले एक इतालवी वेश्या को वहां कार्य करने के लिए निवास की अनुमति प्रदान की गई थी और इस प्रकार उस देश में वेश्यावृत्ति को इससे पहले आर्थिक गतिविधि के रूप में मान्यता मिल चुकी थी।

यूरोपियन कोर्ट ऑव जस्टिस के केस लॉ के अनुसार राज्य सार्वजनिक नीति के आधार पर फॉर्म ऑर्डरों को आंशिक रूप से निष्प्रभावी कर सकते हैं। मगर इसका सहारा उस स्थिति में लेने की उम्मीद की जाती है जब समाज के मूलभूत हितों में से किसी एक पर खतरा मंडरा रहा हो। मगर वेश्यावृत्ति को उस स्थिति

121 (1995) क्यूबी 88; (1994) 4 ऑल ईआर 411 (1994) 3 डब्ल्यूएलआर 1196; (1995) 1 क्र. एप. रिव. 413; (1994) क्रिम एलआर 762

122 कोर्ट ऑव जस्टिस ऑव द यूरोपियन कम्युनिटीज, केस सी–268/99, 2001 ईसीआर 1–8615

123 वही, अनुच्छेद–18

124 वही, अनुच्छेद–62

125 वही, अनुच्छेद–51–54

126 वही, अनुच्छेद–71

127 वही, अनुच्छेद–49

में व्यवस्था के प्रति वास्तविक खतरा नहीं माना जा सकता है जब सदस्य राज्य ने इस कार्य के लिए अपने नागरिक को पहले अनुमति प्रदान की हो।[128]

यौनकर्मी तथा भारत में कानून

यौनकर्मी तथा एचआईवी/एड्स के संदर्भ में अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर वर्तमान स्थिति पर विचार करने के बाद भारत में इस स्थिति पर न्यायिक तथा वैधानिक परिप्रेक्ष्य में नजर डाली जाएगी।

भारत के संविधान में यौनकर्मियों को थोड़ी सुरक्षा प्रदान की गई है जो भाग 3 में उल्लिखित मूलभूत अधिकारों की व्यवस्थाओं के अंतर्गत आती है। यहां विशेष रूप से उल्लेखनीय धाराएं हैं, धारा–14, जिसके अनुसार सभी व्यक्ति के समक्ष समान है; धारा–15, जो लिंग के आधार पर भेदभाव पर प्रतिबंध लगाती है, धारा–19 (1) जो अन्य बातों के अलावा शांतिपूर्ण सभा करने, संगठन तथा संघ स्थापित करने, भारत के राज्यक्षेत्र में कहीं भी निवास करने तथा स्वतंत्रतापूर्वक विचरण करने, तथा किसी प्रकार के पेशा, व्यवसाय, कारोबार या व्यापार में सक्रिय होने के अधिकारों को सुनिश्चित करती है; धारा–21, जो सभी नागरिकों के जीवन तथा व्यक्तिगत स्वतंत्रता को सुनिश्चित करती है; तथा धारा–23, जो देह व्यापार तथा बलात् श्रम पर प्रतिबंध लगाती है।

भाग 4 में राज्य की नीति निर्देशक तत्त्वों की धारा–39 के अनुसार राज्य की अपनी नीतियों को अन्य बातों के लिए यह सुनिश्चित करने की दिशा में मोड़ना चाहिए कि पुरुषों तथा महिलाओं, दोनों को आजीविका के पर्याप्त साधन प्राप्त होने का अधिकार प्राप्त हो (उपधारा–(ए)), कर्मियों के स्वास्थ्य तथा क्षमता का दुरुपयोग नहीं हो, नागरिकों को आर्थिक आवश्यकता के कारण ऐसा उपव्यवसाय करने के लिए विवश नहीं होना पड़े जो उनकी उम्र या क्षमता को देखते हुए उपयुक्त नहीं हो (उपधारा–(ई))। धारा–46 के अनुसार समाज के कमजोर तबकों की शैक्षणिक तथा आर्थिक प्रगति में सामाजिक अन्याय तथा शोषण से उनकी सुरक्षा सुनिश्चित करनी चाहिए तथा धारा–47 के अनुसार राज्य का यह कर्तव्य है कि वह जन स्वास्थ्य में सुधार लाए तथा पोषण के स्तर और जीवन स्तर में वृद्धि करे। धारा–51 A(e) में प्रत्येक नागरिक के लिए इस कर्तव्य का उल्लेख किया गया है कि वह ऐसी प्रथाओं को त्याग दें जो महिलाओं का अनादर करती हों। हैदराबाद में वर्ष 1997 के पीएन स्वामी ऑफिसर, हैदराबाद एंड अदर्स[129] के मुकदमे में आंध्र प्रदेश के उच्च न्यायालय ने अपने फैसले में कहा कि ये संयुक्त व्यवस्थाएं राज्य के लिए इस कर्तव्य का निर्धारण करती हैं कि वह अन्य बातों के अलावा जन स्वास्थ्य की देखभाल के लिए उचित उपाय करे तथा यौनकर्मियों समेत अन्य नागरिकों को इससे संबंधित अधिकार प्रदान करे।[130]

अनैतिक देह व्यापार (रोकथाम) अधिनियम, 1956 यौनकार्य से संबंधित प्राथमिक कानून है जो पूरी तरह संतोषजनक नहीं है। यह शीर्षक अधिनियम के नैतिक दृष्टिकोण को प्रकट करता है तथा इसमें देह व्यापार और वेश्यावृत्ति को एक समान गतिविधियां माना गया है। इसकी आलोचना इस आधार पर की जाती है कि इससे ऐसी स्थितियां उत्पन्न होती हैं जिनका पुलिस दुरुपयोग करती है। पुलिस अक्सर यौनकर्मियों को गिरफ्तार करती है तथा वेश्यालयों में बचाव तथा पुनर्वास हेतु छापे मारती है जो वास्तविकता में मनमाने और दमनकारी होते है तथा इनसे वयस्क तथा नाबालिग यौनकर्मियों, दोनों के मानव अधिकारों का घोर उल्लंघन होता है।[131] अनैतिक देह व्यापार (रोकथाम) अधिनियम, 1956 के सेक्शन–2 में वेश्यावृत्ति की परिभाषा देते

128 वही, अनुच्छेद–9 देखें संयुक्त मुकदमे 115/81 तथा 116/81 आडोई तथा कोरनुआइले, 1982 ईसीआर 1665, अनुच्छेद–8; तथा केस सी–348/96 काल्फा 1999 ईसीआर 1–11, अनुच्छेद–21

129 1998 (1) ए.एल.डी. 765, अगस्त 22, 1997

130 मगर जैसा कि बाद में विचार किया जाएगा, पीएन स्वामी के मुकदमे में अदालत ने इस बात की पुष्टि की थी कि ये संवैधानिक अधिकार निरपेक्ष नहीं हैं, तथा इन्हें समाज के व्यापाक हितों को ध्यान में रखते हुए सीमित किया जा सकता है।

131 स्पॉटलाइट ऑन मीना सेशु, संग्रामः सेक्स वर्कर राइट्स इन रूरल इंडिया, जुलाई 26, 2006 http://www.soros.org/initiatives/health/focus/sharp/articles_publications/articles/seshu_20060726 पर उपलब्ध (अंतिम बार देखने की तिथि 27 अक्टू. 06)

हुए इसे "व्यावसायिक उद्देश्य से व्यक्तियों का यौन शोषण या उनके साथ दुर्व्यवहार" बताया है तथा इसमें यौनकर्मी दुर्व्यवहार के शिकार के रूप में सामने आते हैं। यह घोषित किया जा चुका है कि वेश्यावृत्ति के आरोप को साबित करने के लिए इतना पर्याप्त है कि औरत या लड़की ने स्वच्छंद यौन संबंध के लिए अपने शरीर को भाड़े पर दिया तथा यौन संबंध स्वयं में इस गतिविधि का अनिवार्य हिस्सा नहीं है।[132] सेक्शन–3 में ऐसे किसी व्यक्ति के लिए सजा का प्रावधान है जो वेश्यालय चलाता है या इसका प्रबंधन करता है या इसे चलाने में या इसके प्रबंधन में भूमिका निभाता या सहायता करता है। ऐसे व्यक्ति के लिए भी सजा का प्रावधान है जो किसी परिसर के लिए उत्तरदायी होने पर उसका इस्तेमाल वेश्यालय की तरह करना है या जानबूझकर उसका इस्तेमाल वेश्यालय की तरह होने देता है। इस संदर्भ में केस लॉ में यह मालूम पड़ता है कि वेश्यावृत्ति की एक घटना भी अपने आसपास की परिस्थितियों के साथ वेश्यालय चलाने के अपराध को साबित करने के लिए पर्याप्त है।[133] वेश्यावृत्ति से प्राप्त आय पर पूरी तरह या आर्थिक तौर पर निर्भर रहना सेक्शन–4 के अनुसार प्रतिबंधित है और इसकी सजा जेल, या जुर्माना, या दोनों के रूप में हो सकती है। ऐसे व्यक्ति को सजा मिलेगी जो वेश्यावृत्ति करने के लिए अन्य व्यक्ति को उपलब्ध कराए या इस कार्य में सम्मिलित करे, खरीदे या उसकी सक्रियता का कारण बने या प्रलोभित करे या इसमें से कोई कार्य करने की चेष्टा करे (सेक्शन–5)। इस अधिनियम में आगे यह व्यवस्था की गई है कि किसी व्यक्ति को वेश्यावृत्ति की जगह पर इस उद्देश्य से रोक कर रखना अपराध है कि वह ऐसे व्यक्ति के साथ यौन संबंध स्थापित करे जिसके साथ उसका वैवाहिक संबंध नहीं है (सेक्शन–6)।

सेक्शन–7 के अनुसार ऐसे व्यक्ति के लिए 3 महीने की सजा का प्रावधान है जो सार्वजनिक स्थलों के समीप या घोषित इलाकों के परिसर में वेश्यावृत्ति में सक्रिय है या जिसके लिए वेश्यावृत्ति की जाती है। इसके अलावा सेक्शन में किसी औरत द्वारा सार्वजनिक स्थान में या सार्वजनिक स्थान में दृष्टि या श्रवण की परिधि में किसी भवन के अन्दर से या कहीं और से किसी व्यक्ति को वेश्यावृत्ति के लिए प्रलोभित या उत्प्रेरित करना अपराध है। ऐसी औरत के लिए जेल, जुर्माना या दोनों की सजा निश्चित की गई है जो वेश्यावृत्ति के उद्देश्य से लोगों को प्रलोभित या आकर्षित करती है या ऐसा करने का प्रयत्न करती है या ध्यान आकर्षित करती है, या जो इस उद्देश्य से इधर–उधर घूमती है या लोगों के लिए बाधा या परेशानी पैदा करती है या लोक शालीनता भंग करती है (पहली बार अपराध करने के लिए 6 महीने, अगली बार किए गए अपराध के लिए एक साल)। यह ध्यान देने योग्य है कि पुरुष को इसी अपराध के लिए कम से कम 7 दिन तथा अधिक से अधिक 3 महीने की जेल की सजा मिल सकती है। सेक्शन–7 या 8 के अंतर्गत जेल की सजा के बदले अदालत औरत को सुधारात्मक संस्थान में कम से कम 2 साल तथा अधिक से अधिक 5 साल तक सरकार की देखरेख में रखने का आदेश दे सकती है।[134] वर्ष 2004 में उच्च न्यायालय में सहयोग महिला एंड एन बनाम स्टेट ऑव गुजरात[135] के मुकदमे में संविधान की धाराओं 14, 19 तथा 21 के उल्लंघन के आधार पर सेक्शन–7 की संवैधानिक वैधता को चुनौती दी गई।

संवैधानिक वैधता सेक्शन–7

इस मामले के मूल में पुलिस चीफ द्वारा जारी वह अधिसूचना थी जिसमें सेक्शन–7 (1) (बी) का अनुसरण करते हुए 'चकला बाजार' नामक विशेष जगह में हो रही वेश्यावृत्ति को अपराध करार दिया गया था। औरतें पिछले चार सौ सालों से इस इलाके में रहती तथा वेश्यावृत्ति/यौनकार्य में सक्रिय थीं और यह इलाका

132 गौरव जैन बनाम यूनियन ऑव इंडिया एआईआर 1997 एससी 3021, अनुच्छेद–16
133 वही
134 1956 के अधिनियम का सेक्शन–10
135 (2004) 2 जीएलआर 1764

शहर के बाहरी भाग में स्थित था। मगर यह अधिसूचना उस इलाके में धार्मिक तथा शैक्षणिक सुविधाओं की मौजूदगी के कारण जारी की गई थी जिन्होंने शहर के विस्तार के साथ उस इलाके में प्रवेश किया था। यह माना गया था कि वह इलाका असामाजिक तत्त्वों तथा अपराधियों का केन्द्र बन गया था। इसके अलावा इन गतिविधियों से स्वास्थ्य के प्रति गंभीर खतरे पैदा हो रहे थे तथा यहां एचआईवी पॉजिटिव संक्रमण की सबसे ऊंची दरों में से एक दर पाई गई थी।[136]

मगर यौनकर्मियों ने यह आरोप लगाया कि पुलिस ने सेक्शन–7 (1) (बी) की शक्तियों का प्रयोग उस इलाके में कार्य कर रही औरतों पर अत्याचार करने के लिए किया और इस तरह उनके अधिकारों का उल्लंघन किया। यह आरोप लगाया गया कि पुलिस उनके घरों में बिना वारंट के घुस जाती थी, उन्हें मनमाने तरीके से परेशान तथा गिरफ्तार करती थी, उनके घरों को तोड़ा–फोड़ा जाता था, औरतों के साथ मारपीट की जाती थी तथा उन्हें जबरदस्ती बाहर कर दिया जाता था, एक औरत की वास्तव में हिरासत में मौत हो गई थी तथा गिरफ्तार की गई औरतों में से बहुत कम को मजिस्ट्रेट के समक्ष लाया जाता था। उनके मकान मालिकों को यह निर्देश दिया जाता था कि वे उन्हें उनके घरों में प्रवेश नहीं करने दें तथा इसके कारण कई औरतें वस्तुतः बेघर हो गई थीं।[137] पुलिस ने किसी व्यक्ति को शारीरिक या मानसिक क्षति पहुंचाने के आरोप का खंडन किया और इससे भी इंकार किया कि उन्होंने संपत्ति को क्षति पहुंचाई है या मानव अधिकारों का उल्लंघन किया है।[138]

सेक्शन–7 (1) (बी) की संवैधानिक वैधता को अनेक आधारों पर चुनौती दी गई। सबसे पहले याचिकादाताओं ने यह दावा किया कि चकला बाजार में अपने कमरों में रहने का अधिकार यौनकर्मियों का मूलभूत अधिकार है, तथा वे अपनी जगहों पर रहने से न्याय का पालन करने के लिये रोके नहीं जा सकते हैं। वेश्यावृत्ति खुद में अपराध नहीं है। इसे केवल तभी अपराध माना जा सकता है जब यह घोषित इलाके से बाहर की जाए।[139] अतः इन यौनकर्मियों को घोषित इलाके में रहने तथा उस इलाके के बाहर अपना व्यापार करने का अधिकार प्राप्त था।[140] उनके निवास के अधिकार पर पूरा प्रतिबंध लगाने के कारण सेक्शन–7 अन्यायपूर्ण तथा असंवैधानिक था।[141] उनके जीवन तथा स्वतंत्रता के अधिकार तथा आजीविका प्राप्त करने का अधिकार भी प्रभावित हो रहे थे। मगर प्रतिवादियों ने इसका विरोध करते हुए कहा कि अवैध कार्य करने का कोई मूलभूत अधिकार नहीं हो सकता है तथा इस प्रकार याचिकादाता घोषित इलाके में विशेष तौर पर और इससे बाहर भी वेश्यावृत्ति के किसी अधिकार का दावा नहीं कर सकते हैं।[142]

अदालत ने इस दावे को पूरी तरह खारिज कर दिया कि उसे उन औरतों को उस इलाके में रहने तथा उस इलाके से बाहर काम करने की अनुमति प्रदान करते हुए वैसी औरतों की मदद करनी चाहिए जो वेश्यावृत्ति को एक पेशे के रूप में अपनाना चाहती हैं। कमरे में यौन संबंध स्थापित नहीं होने के बावजूद इसे उस स्थिति में वेश्यालय माना जाएगा अगर इसका उपयोग वेश्यावृत्ति हेतु प्रबंध करने के लिए किया जा रहा

---

136 वही, अनुच्छेद–4.2

137 वही, अनुच्छेद–2.1

138 वही, अनुच्छेद–4.1

139 इसके पक्ष में याचिकादाता 1961 के 'इन रेः रतनमाला एंड एन्र बनाम रिस्पॉन्डेंट एंड द 1967 केस ऑव बाई शान्ता बनाम स्टेट ऑव गुजरात' के मुकदमों पर निर्भर थे जिनमें यह माना गया था कि इस अधिनियम का उद्देश्य स्वयं वेश्याओं तथा वेश्यावृत्ति का उन्मूलन करना नहीं था तथा इसमें औरत द्वारा वेश्या के रूप में कार्य करने को खुद में कोई अपराध घोषित नहीं किया गया था, बल्कि इसका उद्देश्य औरतों के व्यापार के दुराचार को रोकना था। देखें इन रेः रत्नवाला तथा एन्र बनाम रिस्पॉन्डेंट, एआईआर 1962 मद्रास 31, अनुच्छेद–5; बाई शान्ता बनाम स्टेट ऑव गुजरात, एआईआर 1967 गुजरात 211, अनुच्छेद–8

140 पूर्वोक्त टिप्पणी 135, अनुच्छेद–5

141 वही, अनुच्छेद–7

142 वही, अनुच्छेद–4.1

है।[143] अदालत ने यह माना कि यद्यपि इस अधिनियम का उद्देश्य स्वयं वेश्यावृत्ति पर प्रतिबंध लगाना नहीं था, सेक्शन–7 को इसके अपवाद के रूप में देखना चाहिए जिसका प्रभाव यह होता है कि निश्चित सार्वजनिक स्थलों पर वेश्यावृत्ति को दंडनीय अपराध बना दिया जाता है।[144]

एक महत्त्वपूर्ण कदम के तौर पर अदालत ने वेश्यावृत्ति को आजीविका का वैध साधन मानने से इंकार कर दिया क्योंकि ऐसा करना औरतों के व्यापार को खुला निमंत्रण देने के समान होगा और यह ऐसी प्रथा है जिसे अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर हर सभ्य देश द्वारा त्याग दिया गया है। अदालत के लिए औरतों तथा लड़कियों के लिए वेश्यावृत्ति के अधिकार को मूलभूत अधिकार के रूप में स्वीकार करना मुश्किल था क्योंकि वेश्यावृत्ति की प्रकृति अपमानजनक होती है तथा इसका यह मानना था कि पुरुष के लिए ऐसा कभी उचित नहीं है कि वह औरतों को खरीद सके।

अदालत का यह मानना था कि वेश्यावृत्ति को स्वीकृति प्रदान करने से औरतों के प्रति दुर्व्यवहार के "संस्थानीकरण, प्रोत्साहन तथा सीख की प्रवृत्ति देखने को मिलेगी और इससे सदा विस्तार करने वाला ऐसा उद्योग खड़ा होगा जो इस दुर्व्यवहार का सामान्यीकरण कर देगा।"[145]

याचिकादाताओं ने यह तर्क भी दिया कि सेक्शन–7 (1) (बी) में पुलिस को इस संदर्भ में पर्याप्त निर्देश नहीं दिए गए थे कि कैसे इलाकों को अधिसूचना जारी की जा सकती थी तथा इसमें इस तथ्य का ध्यान नहीं रखा गया था कि इस मामले में धार्मिक तथा अन्य संस्थान इस इलाके में यौनकर्मियों के बाद आए थे। अतः सेक्शन–7 (1) (बी) मनमाना तथा पक्षपातपूर्ण है तथा यह धाराओं 14, 19 (ए), (ई) और (जी) तथा 21 द्वारा वेश्याओं को प्रदान किए गए मूलभूत अधिकारों का उल्लंघन करता है। मगर अदालत ने इस दावे को खारिज कर दिया कि अधिसूचना जारी करने के लिए सार्वजनिक स्थलों का चुनाव करने के लिए दिशानिर्देश नहीं दिए गए थे। इस व्यवस्था में चुनाव किए जाने वाले इलाकों की प्रकृति के संदर्भ में अन्तर्निहित दिशानिर्देश हैं। इलाके में आने जाने वाले लोगों के प्रकार तथा जनसंख्या की प्रकृति तथा घनत्व जैसे कारकों पर अवश्य विचार करना चाहिए।[146] अदालत ने यह माना कि आवागमन, निवास तथा व्यक्तिगत स्वतंत्रता के अधिकारों पर सेक्शन–7 द्वारा लगाए गए प्रतिबंध उस स्थिति में वैध हैं जब ये तर्कसंगत हों तथा इन्हें कानून द्वारा साधारण जनता के हितों को ध्यान में रखते हुए लगाया जा रहा हो।[147] वेश्यावृत्ति तथा इससे जुड़ी जनता की अन्य परेशानियों को सार्वजनिक स्थलों से मिटाने का एक महत्त्वपूर्ण सरकारी उद्देश्य है तथा सेक्शन–7 की विवादित व्यवस्थाओं तथा इस उद्देश्य के बीच तार्किक संबंध है। उसमे इस दावे को भी खारिज कर दिया कि ऐसे उपाय पक्षपातपूर्ण हैं। ऐसे इलाकों में वेश्यावृत्ति को अपराध मानने से वहां कार्य करने वाली वेश्याओं तथा अन्य जगह की वेश्याओं में कोई द्वेषमूलक भेदभाव नहीं होता है।[148]

1956 के अधिनियम के सेक्शन–14 तथा 15 में विशेष पुलिस अधिकारियों या देह व्यापार पुलिस अधिकारियों के लिए ऐसी शक्तियों की व्यवस्था की गई है जिनके अनुसार वे बिना वारंट के गिरफ्तारी कर सकते हैं या परिसरों में बिना वारंट के प्रवेश तथा छानबीन कर सकते हैं क्योंकि ऐसे मामले में बिना अनावश्यक देरी के वारंट नहीं प्राप्त किया जा सकता है और इसके पीछे तर्कसंगत आधार इस विश्वास से प्राप्त होता है कि इस अधिनियम के अंतर्गत दंडनीय अपराध उस वक्त किया जा रहा होता है या किया जा चुका होता है। ऐसे

143 वही, अनुच्छेद–8.5

144 वही, अनुच्छेद–5.1 इस अपवाद की तरफ वास्तव में उस मूल मुकदमें में ध्यान दिलाया गया था जिसका उपयोग याचिकादाताओं ने अपनी चुनौती के पक्ष में किया था, बाई शान्ता, पूर्वोक्त टिप्पणी 139 अनुच्छेद–8

145 पूर्वोक्त टिप्पणी 135, अनुच्छेद–8.4 तथा 8.5

146 वही, अनुच्छेद–9.2

147 वही, अनुच्छेद–9.5

148 वही, अनुच्छेद–9.4

पुलिस अधिकारी को वहां मौजूद किसी व्यक्ति को वहां से हटाने का अधिकार प्राप्त होता है तथा उस व्यक्ति को मजिस्ट्रेट के समक्ष प्रस्तुत किया जाता है तथा चिकित्सक से जांच करवाकर उसकी उम्र, उसके शरीर में यौन संसर्ग मे फैलने वाले संक्रमण तथा यौन दुर्व्यवहार से लगने वाली चोटों का पता लगाया जाता है।[149] सेक्शन–16 में ऐसे व्यक्ति के बचाव की व्यवस्था है जो किसी वेश्यालय में रहता है, या वेश्यावृत्ति करता है या जिससे जबरदस्ती वेश्यावृत्ति करवायी जाती है ऐसे व्यक्ति को मजिस्ट्रेट के समक्ष प्रस्तुत किया जाना होता है। सेक्शन–15 तथा 16 के अंतर्गत हटाए या बचाए गए व्यक्तियों को सेक्शन–17 (4) के अनुसार कम से कम एक साल तथा अधिक से अधिक तीन साल के लिए किसी सुधारगृह में रखा जा सकता है जहां उन्हें उचित देखभाल, संरक्षण, शिक्षा तथा चिकित्सा और मनोचिकित्सा उपचार प्रदान किए जाए जाते हैं। सेक्शन–21 में सरकार द्वारा सुधार गृहों की स्थापना तथा ऐसे गृहों के लिए लाइसेंस जारी किए जाने पर विस्तृत चर्चा की गई है।

सेक्शन 14, 15 की संवैधानिक वैधता

वारंट के बिना गिरफ्तारी की अनुमति देने वाले सेक्शन–14 की संवैधानिक वैधता को सहयोग महिला मंडल[150] द्वारा इस आधार पर चुनौती दी गई कि इससे अधिनियम के अंतर्गत आने वाले अपराध पुलिस द्वारा हस्तक्षेप्य अपराध बना दिए जाते हैं। यह दावा पेश किया गया कि इसके प्रभाव से संविधान की धारा–14 का उल्लंघन करते हुए असमान व्यक्तियों के साथ समान व्यवहार होता है क्योंकि सेक्शन–7 तथा 8 में अपराधी इस तथ्य के बावजूद बिना वारंट के गिरफ्तार किए जा सकते हैं कि ये अपराध वेश्याओं द्वारा किए गए गौण अपराध हैं। अपीलकर्ताओं ने यह तर्क प्रस्तुत किया कि इस अधिनियम का आशय वेश्यावृत्ति या यौनकार्य में लगी औरतों को दंड देने से नहीं लगाया जा सकता है, बल्कि यह देह व्यापार या दुर्व्यवहार करने वालों को दंड देने के संदर्भ में बनाया गया था।[151] अदालत ने हालांकि अपने फैसले में यह सुनाया कि कुछ अपराधों के लिए अपेक्षाकृत छोटी अवधि के लिए नजरबन्दी का दंड होता है, मगर इस तथ्य से यह साबित नहीं हो जाता है कि उन मामलों में वारंट के बिना गिरफ्तारी न्यायसंगत नहीं है। सजा की अवधि निर्णायक कारक नहीं है। अतः इस आधार पर संविधान का उल्लंघन नहीं होता है। यही नहीं, सेक्शन–14 में भेदभावमूलन तथा निरर्थक गिरफ्तारियों से सुरक्षा के विशेष उपाय किए गए हैं।[152]

अदालत ने इस तर्क पर विचार किया कि यौनकर्मियों के साथ वैसा व्यवहार नहीं किया जाना चाहिए जैसा व्यवहार देह व्यापार करने वालों के साथ या दुर्व्यवहार करने वालों के साथ किया जाता है तथा उसने यह घोषणा की कि अधिनियम में दोनों के बीच अंतर किया गया है और उनके लिए भिन्न अपराधों के लिए अलग तरह की सजाओं की व्यवस्था की गई है। वेश्यालय चलाना तथा दलाली करना या वेश्यावृत्ति के लिए औरतों या लड़कियों को प्रलोभित करने या खरीदने जैसे कार्यों के लिए अधिक कड़ी सजा मिलती है। इस प्रकार यौनकर्मियों तथा औरतों की वेश्यावृत्ति से जुड़े अपराध करने वाले लोगों के बीच स्पष्ट अंतर बना कर रखा गया है।[153] यह अधिनियम वेश्याओं की दुर्भाग्यपूर्ण स्थिति के प्रति सहानुभूतिपूर्ण था तथा इसमें यह माना गया था कि वे शोषण तथा दुर्व्यवहार की शिकार हो सकती हैं। उदाहरण के तौर पर, धारा–15 के अंतर्गत दिए गए तलाशी के अधिकार औरतों तथा लड़कियों को अड्डों से छुड़ाने के लिए हैं, उतने ही संदिग्ध अपराधों

149 सेक्शन–15 (4) तथा (5)
150 पूर्वोक्त टिप्पणी 135
151 वही, अनुच्छेद–2.1
152 वही, अनुच्छेद–11.1
153 वही, अनुच्छेद–14

का पता लगाने के लिए हैं। सेक्शन–17 (4) की व्यवस्थाओं के अनुसार देह व्यापार की शिकारों को बचाना चाहिए, उनके पुनर्वास की व्यवस्था करनी चाहिए और सुरक्षा गृहों में उनकी आवश्यकताओं की पूर्ति करनी चाहिए, न कि उन्हें सजा देनी चाहिए। पुलिस तथा मजिस्ट्रेट के लिए यह अनिवार्य है कि वे देह व्यापार के पीड़ितों तथा वेश्याओं की पहचान करें।[154] बचावकर्मियों को इन पीड़ितों के अधिकार तथा गरिमा का और अधिक उल्लंघन नहीं करना चाहिए। अतः इस अधिनियम द्वारा सभी अपराधियों के प्रति भेदभावमूलक व्यवहार की बात तो दूर रही, यह अधिनियम देह व्यापार तथा वेश्यावृत्ति के शिकार व्यक्तियों के मानव अधिकारों के प्रति अंतर्राष्ट्रीय सरोकार को प्रतिबिंबित करता है।[155]

इस मुकदमे में अधिनियम के सेक्शन–15 (1) को भी इस आधार पर चुनौती दी गई कि इसमें पुलिस अधिकारियों को अड्डों में प्रवेश करने तथा बिना वारंट के तलाशी लेने तथा वहां मौजूद लोगों को वहां से हटाने के लिए दिशाहीन, अस्पष्ट तथा निरंकुश अधिकार प्रदान किया गया है। ऐसे दिशाहीन अधिकार का दुरुपयोग हो सकता था और इस अधिकार तथा अधिनियम के अंतर्गत अपराधों की रोकथाम के बीच कोई तार्किक संबंध नहीं था। यह दावा पेश किया गया कि इस प्रकार इससे संविधान की धारा–14 तथा 21 का उल्लंघन होता है। धारा–15 (4) को भी धारा–14 तथा 21 के आधार पर चुनौती दी गई क्योंकि जिन लोगों ने कोई अपराध नहीं किया था उन्हें भी मनमाने ढंग से उनके घरों से निकाला जा सकता था। यह उन्हें कानून के समक्ष समान व्यवहार के अधिकार से वंचित करता है तथा उनकी आजीविका का साधन छीनकर उन्हें उनके जीवन के अधिकार से वंचित करता है। मगर प्रतिवादियों ने यह तर्क प्रस्तुत किया कि अधिनियम के उद्देश्य को ध्यान में रखते हुए तथा अपराधों की प्रकृति को देखते हुए यह नितांत आवश्यक था कि पुलिस अधिकारियों को तलाशी तथा वारंट के बिना गिरफ्तारी का अधिकार दिया जाए।[156] अदालत ने यह माना कि धारा–15 में अधिकार के दुरुपयोग को रोकने के लिए पर्याप्त उपाय किए गए हैं तथा संवैधानिक चुनौती को खारिज कर दिया गया।[157]

इन तलाशियों के संदर्भ में अपीलकर्ताओं ने निजता के आधार पर तर्क प्रस्तुत किया। मगर प्रतिवादियों ने यह तर्क दिया कि पुलिस की हरकतों से निजता के अधिकार का उल्लंघन नहीं होता है। ऐसे अधिकार की दलील इस अधिनियम के तहत उस जगह की तलाशी रोकने के लिए नहीं दी जा सकती है जहां यह मानने के लिए पर्याप्त आधार हो कि वहां आपराधिक कार्य होता है। अदालत ने यह कहा कि यह अधिकार निरपेक्ष नहीं है तथा इसे निजता के अधिकारों की निरन्तरता में देखना चाहिए जो "पूरी तरह अनुल्लंघनीय अन्तःकरण से शुरू होकर घर तथा एकान्त जीवन के अपेक्षाकृत अप्रभाव्य एकान्त से होते हुए सार्वजनिक क्षेत्र में पहुंचकर समाप्त हो जाता है जहां निजता का अस्तित्व नहीं के बराबर होता है।"[158] यह तर्क दिया गया कि यौनकर्मी के कार्य के व्यावसायिक होने के तथ्य से यह निजता के अधिकार की परिधि से बाहर नहीं हो जाता है मगर अदालत का यह दृष्टिकोण था कि व्यावसायिक यौनकार्य में सबसे अधिक निजी गतिविधि सबसे अवैयक्तिक तथा सार्वजनिक क्षेत्र में होती है और इसमें यौनकार्य तथा धन एक साथ सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण होते हैं। अतः अदालत ने यह माना कि यौनकार्य पर प्रतिबंध से साधारण तथा अंतरंग या सार्थक मानव संबंधों का अतिक्रमण नहीं होता है।" वेश्यावृत्ति वैयक्तिक अंतरंगत के सुरक्षित क्षेत्र से बिल्कुल अलग होती है जहां यौनाभाव की अभिव्यक्ति केन्द्र में होती है, न कि व्यावसायिक पक्ष में। वेश्यावृत्ति की गतिविधि का चरित्र मूलतः भेदभावमूलक तथा प्रेमहीन होता है ....

154 वही, अनुच्छेद–14.2
155 वही, अनुच्छेद–14.6
156 वही, अनुच्छेद–8
157 वही, अनुच्छेद–13
158 वही, अनुच्छेद–10.1

बाजार में अपनी यौन सेवाओं को अपरिचितों के समक्ष भाड़े पर उपलब्ध करते हुए यौनकर्मी यौनकार्य के निजी तथा अंतरंग चरित्र को काफी हद तक नष्ट कर देते हैं।[159] निःसंदेह इससे उसे सम्मान दिए जाने तथा गरिमा के साथ व्यवहार किए जाने के अधिकार से वंचित नहीं किया जाता है मगर यह उसे सुरक्षित निजता अधिकारों के आन्तरिक क्षेत्र से दूर कर देता है। अतः यह निष्कर्ष निकलता है कि व्यावसायिक मूल्य यौनकर्मी के निजता के अधिकार के दावों को खत्म नहीं करता है मगर यह इन दावों को बहुत हद तक कमजोर कर देता है। इस प्रकार इस अधिनियम की संवैधानिक वैधता को दी गई चुनौती खारिज कर दी गई।

यह देखना दिलचस्प है कि अदालत ने यौनकार्य पर तथा इस विषय पर चल रहे विवाद के अस्तित्व को स्वीकार किया कि क्या यह शोषण का वह तरीका है जिसका उन्मूलन किया जाना है या यह वह व्यवसाय है जिसका विनियमन किया जाना है। इस पर अदालत का यह मत था कि कानून से अलग इन विवादों पर विचार करना इसकी भूमिका में सम्मिलित नहीं है। यह तय करना विधायिका का काम है कि कानूनों में किन सामाजिक मानकों को प्रतिबिंबित होना चाहिए।[160] इस निर्णय से हालांकि इस विषय पर अदालत का दृष्टिकोण सामने आया। अदालत ने अपनी टिप्पणी में कहा कि 'यौनकर्मी' शब्द से औरत की गरिमा किसी तरह नहीं बढ़ती है, बल्कि यह दलालों, मध्यस्थों तथा देह व्यापार करने वालों को गौरवान्वित करता है जो अपने आपको मैनेजर या संगठनकर्ता कह सकते हैं। वेश्यावृत्ति में पीड़ित स्वयं वेश्याएं होती हैं जो दास के समान स्थितियों में कार्य करती हैं तथा ये दूसरों की सत्ता के अधीन होती हैं।[161] संविधान में मानव गरिमा को महत्त्व दिया गया है और इसमें मानव शरीर की आधारभूत गरिमा सम्मिलित है। देह व्यापार से संबंधित धारा–23 में निहित संवैधानिक दायित्वों जैसे अन्य दायित्वों पर मानव शरीर के वस्तुकरण का नकारात्मक प्रभाव पड़ा है।[162]

सेक्शन-17 की संवैधानिक वैधता

हैदराबाद में 1997 के पीएन स्वामी, लेबर लिबरेशन फ्रंट, महबूबनगर बनाम स्टेशन हाउस ऑफिसर एंड अदर्स के मुकदमे में आंध्र प्रदेश के उच्च न्यायालय में व्यवस्था 17 (4) की संवैधानिकता को चुनौती दी गई।[163] अदालत में आदेश याचनापत्र दिए जाने के बाद पुलिस को एक खास रेड लाइट इलाके के एक परिसर में पूछताछ करने का निर्देश प्राप्त हुआ और इस प्रक्रिया में 65 औरतों को छुड़ाया गया। इनमें से 21 एचआईवी पॉजिटिव पाई गईं। अदालत ने इनमें से किसी प्रकार की बीमारी से असंक्रमित औरतों को रिहा कर देने का निर्देश दिया तथा बची हुई औरतों को पुनर्वास के लिए कल्याण केन्द्रों में भेजा जाना था। इस व्यवस्था की वैधता को भारत के संविधान की धाराओं 19 तथा 21 के आधार पर चुनौती दी गई। छुड़ाई गई औरतों से अंतर्व्यवहार करने के लिए तथा रिपोर्ट दाखिल करने के लिए अदालत द्वारा नियुक्त न्यायिक परामर्शदाता (आमिकस कुरिए) ने यह दावा किया कि छुड़ायी गई औरतों को अविलम्ब छोड़ देना चाहिए क्योंकि उन्होंने कोई अपराध नहीं किया था। बचाव गृहों या सुरक्षा गृहों में एचआईवी से संक्रमित या असंक्रमित औरतों को बंदी बना कर रखने या अलग–थलग रखने से वे न सिर्फ धारा–21 के अंतर्गत स्वतंत्रता बल्कि धारा–19 (1) (डी) व (ई) द्वारा सुनिश्चित स्वतंत्रतापूर्वक विचरण करने तथा अपनी इच्छा से कहीं निवास करने या बस

159 वही, अनुच्छेद–10.1
160 वही, अनुच्छेद–7.1
161 वही, अनुच्छेद–8
162 वही, अनुच्छेद–8.1
163 पूर्वोक्त टिप्पणी 129

जाने के अधिकार से वंचित होंगे। इसके अलावा बच्चों वाली औरतें अपने बच्चों का ध्यान रखने की स्थिति में नहीं होंगी तथा इसके कारण उनके बच्चे जीवनयापन के साधन से वंचित हो जाएंगे। सरकार ने इसके विरोध में तर्क देते हुए कहा कि छुड़ाई गई औरतों में से अनेक संक्रमित थीं और उनमें से कई एचआईवी से संक्रमित थीं। रिहा किए जाने पर इस बात की पूरी संभावना थी कि वे दुबारा अपना पुराना पेशा चुनतीं तथा इस प्रकार अपने स्त्रीत्व के अधिकार तथा गरिमा को खो देतीं। इसके अलावा एचआईवी से संक्रमित औरतें अपना पेशा जारी रखतीं तथा इस प्रकार दूसरों को संक्रमित करतीं और इस तरह से समाज को और बड़ी क्षति पहुंचातीं। कल्याण या सुधार गृह में उन्हें रख कर इस रोग के प्रसार से संबंधित सलाह तथा शिक्षा दी जा सकती है और उन्हें पुनर्वासित किया जा सकता है और इस प्रकार वे "वेश्यावृत्ति में लिप्त" होने से बचकर साधारण जीवन जी सकती हैं।

अदालत ने सेक्शन–17 (4) की संवैधानिकता को बरकरार रखा तथा यह निर्णय सुनाया कि इसे संविधान में निहित मूलभूत अधिकारों पर समाज के व्यापक हित को देखकर लगाए गए प्रतिबंध के रूप में देखना चाहिए। अदालत ने कहा कि यह स्पष्ट है कि 1956 के अधिनियम में मजिस्ट्रेट को छुड़ाई गई औरतों के संदर्भ में आदेश देने के लिए पर्याप्त अधिकार दिए गए थे जिनमें उन्हें पुनर्वास केन्द्रों या सुधार गृहों में भेजना सम्मिलित था। अतः यह सरकार का कर्तव्य था कि वह छुड़ाई गयी औरतों, विशेषकर एचआईवी तथा एड्स संक्रमितों में उनके अपने तथा समाज के हित में सुधार लाए। 1956 के अधिनियम का उद्देश्य व्यावसायिक यौनकार्य तथा वेश्यालय चलाने वालों द्वारा मासूम और अशिक्षित औरतों के दुरुपयोग का उन्मूलन तथा समाज की भलाई के लिए वेश्यावृत्ति की सामाजिक बुराई को दूर करना है। व्यक्ति के मूलभूत अधिकारों तथा समाज के व्यापक हित के बीच विरोध होने पर व्यक्तिगत मूलभूत अधिकार को पीछे हटना पड़ता है।

1956 का अधिनियम आगे वेश्यालय को बंद करने तथा अपराधियों की बेदखली (सेक्शन–18) तथा वेश्या को किसी जगह से हटाने से संबंधित है (सेक्शन–20)। सेक्शन–20 को इससे पहले कई मुकदमों में अदालत के समक्ष चुनौती दी गई थी।

सेक्शन-20 की संवैधानिक वैधता

सबसे पहले 1959 में श्रीमती शमा बाई बनाम स्टेट ऑव उत्तर प्रदेश[164] के मुकदमे में यह दावा किया गया कि 1959 का अधिनियम असंवैधानिक है। दावेदार ने अपने मकान मालिक द्वारा उसे सेक्शन–20 का प्रयोग करते हुए इस आधार पर बेदखल करने का विरोध किया कि वेश्यावृत्ति उसका खानदानी पेशा था, उसका परिवार वेश्या के रूप में उसकी आय पर पूरी तरह निर्भर था, यह उसकी आजीविका का एकमात्र साधन था, तथा यह कि समाज में अच्छी गृहिणी बनकर उसके पुनर्वासित होने की संभावना बिल्कुल नहीं थी। उसने यह दावा किया कि 1956 का अधिनियम संविधान के अधिकारिक क्षेत्र से बाहर का था क्योंकि यह उसे अपना व्यापार करने से अवैध रूप से रोक रहा था और उस पर अनुचित प्रतिबंध लगा रहा था। अदालत ने याचिकादाता के पहले दावे को खारिज कर दिया जो उसने संविधान की धारा–19 (1) (जी) तथा अपना पेशा करने के अपने अधिकार के आधार पर प्रस्तुत किया था। राज्य साधारण जनता के हित को ध्यान में रखकर किसी व्यवसाय या व्यापार में लगने के अधिकार पर प्रतिबंध लगा सकता है।[165] 1956 का अधिनियम वेश्यावृत्ति पर पूरी मनाही नहीं लगाता है, बल्कि उस पर कुछ पाबंदियां लगाता है। इस मुकदमे में यह तय करना होगा कि क्या इस मामले से संबंधित पाबंदियां तर्कसंगत हैं। वेश्यावृत्ति के बुरे प्रभावों को कम करने के लिए तथा

164 एआईआरए, 1959 एआईआई 57
165 वही, अनुच्छेद–2

जनसाधारण के हितों की रक्षा के लिए इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए यथासंभव प्रतिबंध लगाना चाहिए कि वेश्यावृत्ति तथा इसके लिए होने वाली देह व्यापार की बुराई मानव की गरिमा तथा महत्ता से मेल नहीं खाती हैं और व्यक्ति, परिवार तथा समुदाय के कल्याण तथा गरिमा के लिए खतरा पैदा करते हैं।[166] अदालत ने आगे संविधान की धारा–23 के अंतर्गत देह व्यापार तथा अन्य प्रकार के बलात् श्रम के निषेध के संदर्भ में अपने दायित्वों की ओर संकेत किया। देह व्यापार की अवधारणा में अनैतिक कृत्य के लिए औरतों का व्यापार सम्मिलित है।[167] अतः प्रतिबंधों के लगाए जाने को धारा–19 के मूलभूत अधिकारों तथा धारा–23 के दायित्वों के बीच विरोध के कारण वैध माना गया। अदालत ने यह निष्कर्ष निकाला कि अधिनियम में लगाया गया हर प्रतिबंध धारा–19 के अधिकारों पर जनसाधारण के हित को ध्यान में रखते हुए उचित पाबन्दी लगाता है।

सेक्शन–20 के संदर्भ में हालांकि अदालत ने यह मत जाहिर किया (याचिकादाता के विरुद्ध मौजूदा निर्णय तथा प्रतिवादियों के प्रस्तुतिकरणों की अनुपस्थिति में अदालत पुष्टि नहीं कर सकती थी) कि इससे संविधान की धारा–14 का उल्लंघन हो सकता था क्योंकि इसमें वेश्या समझी जाने वाली औरत को उसके स्थान से हटाने के लिए मजिस्ट्रेट को स्वच्छंद विवेकाधिकार प्रदान किया गया था और इस तरह वेश्या के रूप में कार्य कर रही औरत ऐसी निगरानी के अंतर्गत आ जाती है जिसके अंतर्गत अन्य औरतें नहीं आतीं तथा इस प्रकार इस मामले में भेदभाव होता है। इसके लिए कोई तर्कसंगत वर्गीकरण नहीं है कि क्यों एक औरत को हटाया जाता है जबकि दूसरे को रहने की अनुमति दी जाती है। इसके लिए बस यह तर्क दिया जाता है कि ऐसा किया जाना जनसाधारण के हित में है और यह तर्क इस संदर्भ में बहुत अस्पष्ट है। अदालत ने यह भी माना कि सेक्शन–20 संविधान की धारा–19 (1) (डी) (ई) व (जी) को सीमित कर सकता है क्योंकि समय की ऐसी कोई अवधि तय नहीं है जब तक किसी व्यक्ति को किसी जगह से हटाया या वापस वहां आने से रोका जा सकता है।[168]

यहां यह महत्त्वपूर्ण है कि अदालत ने वेश्या के कार्य को अपराध नहीं बल्कि कारोबार या पेशे के रूप में देखा तथा अनुच्छेद–2 में कहा कि इसमें कोई शंका नहीं है कि संविधान की धारा–19 के अर्थ के अनुसार वेश्या का कार्य पेशा, व्यवसाय या कारोबार है। अदालत ने अपने निर्णय तक पहुंचते हुए यह स्वीकार किया कि वेश्यावृत्ति का पेशा या कारोबार आदिम काल से चला आ रहा है, कि उनके पुनर्वास की संभावना बहुत कम है तथा अक्सर ऐसे बाहरी कारक औरतों को वेश्यावृत्ति की ओर धकेलते हैं जिन पर उनका कोई नियंत्रण नहीं होता है।[169] मगर ऐसे संकट को अधिनियम की संवैधानिकता को समाप्त करने का आधार नहीं माना जा सकता है।

दिल्ली में पंजाब के उच्च न्यायालय को 1961 के कमला चीना बनाम द स्टेट के मुकदमे में सेक्शन–20 के मुद्दे पर विचार करना पड़ा था।[170] अपीलकर्ता, जिस पर वेश्या होने का आरोप था, को अदालत ने सेक्शन–20 के अंतर्गत यह सूचना देते हुए उसे इस बात का कारण बताने का कहा कि उसे उसके निवास स्थल को खाली करने के लिए क्यों नहीं कहा जाए। सबूतों की परीक्षा करने के बाद अदालत ने उसे उस जगह को छोड़ देने और बिना पूर्वानुमति के यहां फिर से प्रवेश नहीं करने का निर्देश दिया। पुनः संवैधानिकता को चुनौती देने के लिए धारा–14 तथा 19 (1) (डी) (ई) (जी) का स्मरण कराया गया। मगर न्यायाधीश सहाई के निष्कर्ष को विशेष रूप से अस्वीकार कर दिया और यह घोषित किया कि जनता का हित मनमाने आधार पर निर्धारित की जाने वाली अस्पष्ट या भ्रामक अवधारणा नहीं है, बल्कि इसका निर्धारण मामले के सबूतों के

166 वही, अनुच्छेद–4
167 वही, अनुच्छेद–5
168 वही, अनुच्छेद–15
169 वही, अनुच्छेद–2
170 एआईआर 1963 पी एंड एच 36; 1963 क्रि.एलजे 59

आधार पर होना चाहिए। इसके अलावा, मजिस्ट्रेट को स्वच्छंद तथा असीमित अधिकार प्राप्त नहीं थे। किसी स्थान से किसी वेश्या को हटाने का आदेश तभी दिया जा सकता है जब सबूतों के आधार पर यह निष्कर्ष निकला हो कि उसका वहां से हटाया जाना जनसाधारण के हित में है।

इस वर्गीकरण को अतर्कसंगत नहीं कहा जा सकता है क्योंकि यह दोहरी परीक्षा पर आधारित है जिसमें पहले इसका सबूत मांगा जाता है कि संबंधित व्यक्ति वेश्या है, और फिर दूसरी परीक्षा के अंतर्गत यह सुनिश्चित किया जाता है कि उसका हटाया जाना जनसाधारण के हित में है। अतः सेक्शन–20 को संविधान की धारा–14 के उल्लंघन का दोषी नहीं कहा जा सकता है।[171] न्यायाधीश खोसला के निष्कर्ष के अनुसार इसे धारा–19 का उल्लंघन करने वाला भी नहीं माना जा सकता है। यह निर्णय सुनाया गया कि (यद्यपि इसमें न्यायिक तर्क बहुत कमजोर था) प्रतिबंध तर्कसंगत थे।

इससे मिलता–जुलता दृष्टिकोण वर्ष 1964 के द स्टेट ऑव उत्तर प्रदेश बनाम कौशल्या[172] के मुकदमे में अपनाया गया था जिसमें सेक्शन–20 को संविधान की धारा–14 तथा 19 (1) (डी) व (ई) के आधार पर चुनौती दी गई थी। इस मामले में, प्रतिवादियों, आरोपित वेश्याओं, से इसका कारण बताने को कहा गया कि सेक्शन–20 का अनुसरण करते हुए उन्हें उनके निवास स्थान से क्यों नहीं हटा दिया जाए तथा पुनः वहां प्रवेश करने से क्यों नहीं रोका जाए। उच्च न्यायालय में यह फैसला सुनाया गया कि सेक्शन–20 प्रतिवादियों को संविधान की धारा–19 (1) (डी) व (ई) के अंतर्गत प्रदान किए गए अधिकारों को सीमित करता है और इस निर्णय को सर्वोच्च न्यायालय में चुनौती दी गई। अदालत ने यह टिप्पणी की कि कोई अधिकार अपना घर चुनने के अधिकार तथा स्वतंत्रतापूर्वक विचरण करने के अधिकार से अधिक महत्त्वपूर्ण नहीं होता है तथा "चरित्रभ्रष्ट औरतों को भी" उनके ऐसे अधिकार से तब तक वंचित नहीं रखा जा सकता है जब तक ऐसा करने के लिए पर्याप्त कारण नहीं हों[173] तथा अदालत ने अनन्तः इस मामले में ऐसे कारणों की उपस्थिति को स्वीकार किया।

यह तर्क दिया गया कि धारा–14 का उल्लंघन उस स्थिति में नहीं होता है जब वर्गीकरण का आधार बुद्धिसंगत अंतर हो और इस अंतर का कानून के उद्देश्य के साथ तर्कसंगत संबंध हो।[174] इस प्रकार वेश्या के रूप में कार्य करने वाली औरत तथा अन्य औरत को भिन्न वर्गों में रखने वाले अंतर तर्कसंगत हैं। इसके अलावा यह कहा गया कि जनता के लिए परेशानी पैदा कर सेक्शन–20 द्वारा स्वयं को हटाए जाने को तर्कसंगत आधार प्रदान करने वाली वेश्या तथा ऐसा नहीं करने वाली वेश्या के बीच अंतर है। ऐसी वेश्या जनता के लिए तुलनात्मक दृष्टि से बहुत अधिक खतरनाक है जो व्यस्त इलाके या भीड़–भाड़ वाले शहर में रहती है या जो सार्वजनिक संस्थानों के आस–पास रहती है। अदालत ने आगे यह कहा कि ऐसे इलाकों में वेश्याओं की अनियंत्रित गतिविधि की स्वतंत्रता से "न केवल जनता में अनैतिकता को बढ़ावा मिलेगा बल्कि इससे बदतर बीमारियों का प्रसार होगा।"[175] इस तरह अदालत ने यह घोषित किया कि औरतों की ऐसी श्रेणियों के बीच स्पष्ट अंतर है जो बाकी श्रेणियों को छोड़कर कुछ विशेष श्रेणियों पर प्रतिबंध लगाने को तर्कसंगत आधार प्रदान करते हैं। इन अंतरों का सेक्शन–20 के उस उद्देश्य के साथ तर्कसंगत संबंध है जिसके अनुसार व्यस्त इलाके में नैतिक पतन को रोकना होता है। अतः धारा–14 के अंतर्गत किसी तरह का उल्लंघन नहीं पाया गया। कपूर और कॉसमैन ने इस निर्णय की कठोर आलोचना करते हुए कहा कि इससे ऐसे औरतों के लिए समानता के अधिकार का मिलना असंभव हो जाता है जो "समस्याग्रस्त" योग्यता, अर्थात् व्यस्त इलाके में

171 वही, अनुच्छेद–7
172 एआईआर 1964, एससी 416
173 वही, अनुच्छेद–7
174 वही, अनुच्छेद–8
175 वही

काम करने वाली की श्रेणी में आती हैं। ऐसा अदालत द्वारा निर्धारित अंतरों के पीछे छिपी वजहों का विस्तृत विश्लेषण किए बिना किया जाता है। इसके विपरीत इन औरतों को इनकी अंतरनिहित अनैतिकता के कारण औरों से अलग मान लिया जाता है और इससे उनका कलंकित होने तथा उनके लिए कठोर आपराधिक कानूनों को तर्कसंगत आधार मिलता है।[176]

धारा–19 के संदर्भ में अदालत ने यह निर्णय सुनाया कि इस बात का फैसला अलग–अलग मुकदमों के आधार पर किया जाना चाहिए कि सेक्शन–20 में निहित प्रतिबंध धारा–19 का उल्लंघन करते हैं या नहीं तथा इसके लिए, उदाहरण के तौर पर, नियंत्रित की जाने वाली बुराई की कोटि तथा तात्कालिकता, समाज के जीवन मूल्य, तथा प्रतिबंध लगाते वक्त समाज की परिस्थितियों को ध्यान में रखना चाहिए।[177] अतः विधायिका के लिए निर्वासन समेत अन्य कठोर प्रतिबंध लगाना तर्कसंगत होता है अगर वेश्यावृत्ति का दुराचार किसी विशेष स्थान तक सीमित हो। इसके अलावा इन प्रतिबंधों का तर्कसंगत आधार इस तथ्य से सुनिश्चित होता है कि ये न्यायिक प्रक्रिया के तहत सुप्रकटित नीति के आधार पर लगाए जाते हैं।[178] इस तरह ये धारा–19 का उल्लंघन नहीं करते हैं।

अनैतिक देह व्यापार (रोकथाम) विधेयक 2006

हाल में एक विधेयक का मसौदा तैयार हुआ है जिससे 1956 के विधान के अंतर्गत बने वर्तमान कानून में महत्त्वपूर्ण बदलाव लाया जाएगा।

यहां सबसे महत्त्वपूर्ण तथ्य यह है कि प्रस्तावित विधेयक, अनैतिक देह व्यापार (रोकथाम) संशोधन अधिनियम, 2006 ने मूल अधिनियम के सेक्शन–8 को छोड़ दिया है और इस प्रकार वेश्यावृत्ति के लिए प्रलोभित या बुलाने के अपराध को हटा दिया गया है। सेक्शन–20 को भी नहीं रखा गया है। मगर दूसरी ओर देह व्यापार करने वालों तथा ग्राहकों के लिए जवाबदेही तथा कठोरता बढ़ा दी गई है। मूल अधिनियम में दलाली अर्थात् वेश्यावृत्ति के उद्देश्य से किसी व्यक्ति को सम्मिलित करने या प्राप्त करने से संबंधित सेक्शन–5 के संदर्भ में यह प्रस्तावित किया गया है कि इसमें निम्नलिखित बातों को जोड़कर देह व्यापार के अर्थ को विस्तृत करना चाहिए "वह व्यक्ति देह व्यापार का अपराध करता है जो किसी व्यक्ति को निम्नलिखित तरीकों से वेश्यावृत्ति के लिए लगाता, पहुंचाता, हस्तांतरित करना, संरक्षण देता या प्राप्त करता है : (ए) धमकी या बलप्रयोग, अपहरण; धोखाधड़ी या दगाबाजी; या (बी) किसी की कमजोर स्थिति का गलत फायदा उठाना, या (सी) ऐसे व्यक्ति पर नियंत्रण रखने वाले व्यक्ति की अनुमति प्राप्त करने के लिए धन या लाभ देना या प्राप्त करना।

सेक्शन–5 (सी) में ऐसे किसी व्यक्ति के लिए सजा की व्यवस्था है जो देह व्यापार के शिकार किसी व्यक्ति का यौन शोषण करने के लिए वेश्यालय जाता है। निम्नलिखित अपराधों के लिए अधिकतम सजा की अवधि को बढ़ाया गया है, (ए) सेक्शन–3 के अंतर्गत वेश्यालय चलाने या परिसर को वेश्यालय के रूप में उपयोग करने के लिए; (बी) सेक्शन–5 के अंतर्गत दलाली के लिए जिसमें किसी व्यक्ति को वेश्यावृत्ति के लिए सम्मिलित या प्राप्त किया जाता है और वह व्यक्ति बालक होता है; तथा सेक्शन–7 के अंतर्गत सार्वजनिक स्थानों में या ऐसे स्थानों के आस–पास वेश्यावृत्ति के लिए, जिसमें अपराधी को सुधार गृह में भेजने के लिए फैसला लिया जाता है। बदलाव के इन प्रस्तावों को विवादास्पद माना गया है। इनमें वेश्यावृत्ति के उद्देश्य से ग्राहकों को बुलाने के अपराध को सम्मिलित नहीं किया गया है, लेकिन इनके द्वारा बढ़ाई गई सजाओं से

---

176 देखें रत्ना कपूर तथा ब्रेन्दा कॉसमैन, 'ऑन वीमेन, इक्वलिटी एंड द कंस्टीच्युशनः थ्रू द लुकिंग ग्लास ऑव फेमिनिज्म', महिलाओं के लिए समान न्याय पर सम्मेलन के भाग के रूप में प्रस्तुत, पृ.67–68 http://ncw.nic.in/pdfreports/Gender%20Sensitisation%20of%20Judicial%20Personnal.pdf पर उपलब्ध (अंतिम बार देखने की तिथि 27 अक्टू, 06)

177 पूर्वोक्त टिप्पणी 172, पृ 14

178 वही

इन कर्मियों की आजीविका पर संकट छा जाएगा। एक समीक्षक ने इस पर टिप्पणी करते हुए कहा है कि ऐसा प्रतीत हो सकता है कि नया मसौदा असुरक्षित स्थिति में जी रही औरतों तथा बच्चों की सुरक्षा करने की इच्छा से प्रेरित है, मगर सच तो यह है कि इसमें "ऐसा कुछ नहीं है।"[179]

V.बी- रेस-एक्सट्रा कमर्शियम के मामले

बम्बई (मुम्बई) के उच्च न्यायालय में वर्ष 2006 के श्रीमती छायादेवी पत्नी सुरेश जायसवाल एंड अदर्स बनाम स्टेट ऑव महाराष्ट्र के मुकदमे में इस मुद्दे पर विचार हुआ था कि क्या किसी ऐसे कार्य को पेशा के रूप में वर्गीकृत किया जा सकता है जो प्रकृति से अश्लील या हानिकारक है।[180]

इस मुकदमे में बम्बई पुलिस (संशोधन) अधिनियम, 2005 द्वारा संशोधित बम्बई पुलिस अधिनियम, के सेक्शन–33 ए तथा 33 बी की संवैधानिक वैधता पर विचार किया गया। इन सेक्शनों के अनुसार किसी भोजनालय, परमिट रूम या बीयर बार में किसी तरह का नृत्य प्रदर्शन प्रतिबंधित था। मगर ये प्रतिबंध तीन से या उससे अधिक स्टार वाले होटल या सरकार द्वारा पर्यटन या सांस्कृतिक गतिविधियों के संदर्भ में विनिर्देशित किसी प्रतिष्ठान पर लागू नहीं होते थे। अपीलकर्ताओं ने यह दावा किया कि सरकार अमीर दर्शकों की हाई सोसाइटी के नाम पर अन्य छूट प्राप्त जगहों पर ऐसे नृत्य को अनुमति देकर दोहरे मानदंडों को अपनाया है। डिस्कोथेक में होने वाली गतिविधियां इस मामले से संबंधित आयोजन स्थलों में होने वाले नृत्य से कहीं अधिक अनैतिक थीं। इस प्रकार प्रतिबंध तथा इसके उद्देश्य के बीच कोई अंतर्संबंध नहीं था। खास प्रतिष्ठानों में नृत्यों को अनुमति देने के तथ्य से यह प्रकट होता है कि यहां उद्देश्य औरतों के शोषण तथा अभद्रता पर रोक लगाना नहीं, बल्कि बड़े होटलों को फायदा पहुंचाना था।[181]

राज्य ने यह तर्क प्रस्तुत किया कि संबंधित सेक्शनों का उद्देश्य औरतों के शोषण को रोकना और "बुरी तथा अनैतिक प्रथाओं"[182] का उन्मूलन करना था ताकि संवैधानिक लक्ष्यों की प्राप्ति की जा सके। प्रतिबंधित बारों में होने वाले अधिकतर नृत्य अशोभनीय, अश्लील तथा असभ्य तरीके से किए जाते थे जिससे औरतों का शोषण और मानमर्दन होता था। इसके अलावा ऐसे नृत्य से समाज में भ्रष्टता फैलती है तथा समाज, विशेषकर जनसुरक्षा नैतिकता तथा स्वास्थ्य पर नकारात्मक प्रभाव पड़ते हैं।[183] अतः इसने यह तर्क दिया कि इसे रेस एक्सट्रा कॉमर्सियम की तरह देखना चाहिए क्योंकि यह प्रकृति से अभद्र तथा हानिकारक है और इसलिए इसे संविधान की धारा–19 के अंतर्गत पेशा या कारोबार के रूप में वर्गीकृत नहीं किया जा सकता है। किसी नागरिक को ऐसा कारोबार करने का मूलभूत अधिकार नहीं मिल सकता है। इस मुद्दे पर विचार करते हुए अदालत ने यह निष्कर्ष निकाला कि नृत्य कला तथा अभिव्यक्ति का रूप है और इसे स्वयं में रेस एक्सट्रा कॉमर्सियम नहीं माना जा सकता है।

मगर राज्य उचित कारणों तथा जनसाधारण के हितों को देखते हुए पाबंदियां तथा प्रतिबंध लगा सकता था।[184]

नृत्य के माध्यम से वाक् तथा अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता के अधिकार (धारा–19 (1) (ए)) के आधार पर प्रतिबंधों को दी गई संवैधानिक चुनौती को अस्वीकार कर दिया गया क्योंकि नर्तक वहां व्यावसायिक मकसद

179 देखें इंदिरा जयसिंह, रिडिकुलस चेन्जेज इन प्रॉस्टिच्युशन लॉ, http://www.rediff.com/news/2006/mar/09indira.htm पर उपलब्ध (अंतिम बार देखने की तिथि 27 अक्टू. 06)
180 2006 (3) बॉम सी.आर. 705
181 वही, अनुच्छेद–38
182 वही, अनुच्छेद–11
183 वही, अनुच्छेद–14, बंबई पुलिस (संशोधन) अधिनियम, 2005 की प्रस्तावना
184 वही, अनुच्छेद–59

से थे और इस प्रकार अभिव्यक्ति का अधिकार कारोबार करने के अधिकार का सहायक उपकरण था।[185] धारा–15 के अंतर्गत भेदभावहीनता के आधार पर दिए गए, क्योंकि यह प्रतिबंध लिंग निरपेक्ष था और इसका विस्तार पुरुषों तक भी हो रहा था।[186] धारा–21 के अंतर्गत जीवन के अधिकार के संदर्भ में अदालत ने यह कहा कि यह उस मामले में लागू हो सकता है जब कारोबार करने का मूलभूत अधिकार प्रभावित हो रहा हो। वैसे किसी व्यक्ति को उसके जीवन के अधिकार से वंचित करने का सबसे आसान तरीका होता है कि उसे उसकी आजीविका से विमुख कर दिया जाए। यह जीवन जीना असंभव कर देगा।[187] मगर यह पाया गया कि बार मालिक प्रतिबंध के कारण व्यापार करने में असमर्थ नहीं हुए थे और यह भी कि नर्तक छूट प्राप्त प्रतिष्ठानों में अभी भी नृत्य कर सकते थे। अतः जीवन के अधिकार का उल्लंघन नहीं हुआ था।[188]

मगर अदालत ने यह माना कि विवादित सेक्शन संविधान की धारा–14 (1) तथा 19 (1) (जी) से मेल नहीं खाते हैं। वर्गीकरण बुद्धिसंगत अंतर पर आधारित था और इसलिए स्वीकार्य था।[189] प्रतिबंधित प्रतिष्ठानों में होने वाले नृत्य की अपनी विशेषताएं तथा लक्षण थे और इस तरह ये स्वीकार्य थे। ऐसे वर्गीकरण को मनमाना नहीं होना चाहिए तथा उद्देश्य के साथ इसका घनिष्ठ अन्तर्संबंध होना चाहिए। इस संदर्भ में अदालत ने इस बात की ओर ध्यान दिलाया कि हर प्रकार के नृत्य पर प्रतिबंध लगा था और यह सिर्फ अश्लील या अभद्र प्रकृति के नृत्य तक सीमित नहीं था। यही नहीं, प्रतिबंधित गतिविधियां छूट प्राप्त परिसरों में भी हो सकती थीं और इस मामले में वहां जाने वाले लोगों के तथाकथित सामाजिक स्तरों से कोई फर्क नहीं पड़ता है।[190] अदालत ने आगे यह कहा कि सरकार जिन अश्लील या अभद्र नृत्यों को रोकना चाहती थी, वे पहले से ही बम्बई पुलिस अधिनियम के अंतर्गत अस्वीकार्य थे। अतः अधिकारियों के पास पहले से ही यह अधिकार था कि वे शर्तों को तोड़ने पर लाइसेंस रद्द कर सकें।[191]

इसके बाद अदालत ने कहा कि ऐसी कोई वजह नहीं थी जिसके कारण प्रतिबंधित प्रतिष्ठानों में सभ्य तथा भद्र नृत्य नहीं हो सकते थे, जबकि प्रतिबंध नृत्य के सभी प्रकारों पर लागू था। इस प्रकार प्रतिबंध का अपने उद्देश्य के साथ कोई अन्तर्संबंध नहीं था। अदालत ने प्रतिबंध को तर्कसंगत या जनता के हित में नहीं माना और इस प्रकार यह धारा–14 तथा 19 (1) (जी) का उल्लंघन करता था।[192]

इन डांस बारों में कम उम्र की लड़कियों के शोषण के संदर्भ में अदालत ने यह कहा कि राज्य इस बारे में समुचित आंकड़ा प्रस्तुत नहीं कर पाया है तथा यह नाचने वालियों के नाचने के अधिकार को ऐसे आंकड़े के अभाव में छीन नहीं सकता है। इसमें से कुछ के शोषण होने की आशंका अन्य को वैध आजीविका प्राप्त करने से रोकने के लिए तर्कसंगत आधार प्रदान नहीं करती है।[193] अदालत ने इन तर्कों को अस्वीकार कर दिया कि डांस बारों में नृत्य से अपराध में वृद्धि होती है तथा इस प्रकार ये सार्वजनिक व्यवस्था के लिए खतरा है। शराब में धुत्त व्यक्ति सार्वजनिक व्यवस्था के लिए खतरा पैदा करते हैं, मगर शराब पर प्रतिबंध नहीं लगाया गया था और आजीविका प्राप्त करने के अधिकार के परिसीमन को उस आधार पर तर्कसंगत आधार प्रदान नहीं किया जा सकता है।[194]

---

185 वही, अनुच्छेद–31
186 वही, अनुच्छेद–24
187 वही, अनुच्छेद–34
188 वही, अनुच्छेद–35
189 वही, अनुच्छेद–44 तथा 46 अदालत ने यह स्वीकार किया कि प्रतिबंधित प्रतिष्ठानों में नृत्यों की सामान्य विशेषता यह थी कि उन्हें इनाम के रूप में बड़ी राशि प्राप्त करने के उद्देश्य से किया जाता था। इसे भी देखें, अनुच्छेद–37
190 वही, अनुच्छेद–48
191 वही, अनुच्छेद–50, इसे भी देखें, अनुच्छेद–62
192 वही, अनुच्छेद–52 तथा 89
193 वही, अनुच्छेद–85
194 वही, अनुच्छेद–83

औरतों के प्रति न्यायपालिका का व्यवहार कई बार असंतोषजनक रहा है। अदालतों में कलंक तथा लैंगिक भेदभाव का एक उदाहरण मधुकर नारायण मार्डिकर के मामले में देखने को मिला था।[195] इस मुकदमे में पुलिस अधिकारी पर अपने साथ यौन दुर्व्यवहार का आरोप लगाने वाली औरत की गवाही को उच्च न्यायालय ने अविश्वसनीय माना क्योंकि यह बात जानकारी में आई थी कि उस समय उस औरत का किसी के साथ विवाहेत्तर संबंध था और इस प्रकार उसके साक्ष्य पर भरोसा करना खतरनाक होता।

अपील करने पर इस निर्णय को पलट दिया गया तथा अदालत ने टिप्पणी करते हुए कहा कि उसकी गवाही को सिर्फ इसलिए नामंजूर नहीं किया जा सकता है कि वह "चरित्रहीन" औरत है। ऐसी औरत को भी निजता, कानून के समान संरक्षण तथा खुद पर हमला होने पर अपनी रक्षा करने का अधिकार है।[196] अपील का फैसला पक्ष में आया लेकिन यह अनेक अदालतों में लैंगिक असमानताओं तथा यौनगत रूढ़ धारणाओं के अस्तित्व को उजागर करती है। इन अदालतों में औरतों को उनकी यौन गतिविधियों के आधार पर खुलेआम पतित, अमर्यादित तथा चरित्रहीन माना जाता है। वैसे हाल के वर्षों में अदालतों में औरतों, विशेष तौर पर यौनकार्य में सक्रिय औरतों के प्रति व्यवहार के संदर्भ में पहले से अधिक सकारात्मक दृष्टिकोण के कुछ उदाहरण मिले हैं।

V.सी- पब्लिक एट लार्ज बनाम द स्टेट ऑव महाराष्ट्र एंड अदर्स[197]

भारत की अदालतों में यौनकार्य तथा एचआईवी से संबंधित प्रयत्नों में से हाल का एक अच्छा उदाहरण बम्बई (मुम्बई) के उच्च न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश एमबी शाह की इस रिपोर्ट में देखने को मिलता है। 1997 में समाचारपत्र में एक रिपोर्ट आई जिसके अनुसार इस बात के पर्याप्त सबूत थे कि शहर में कई वेश्यालयों में वेश्याओं को अवैध रूप से बंद कर रखा गया था और इनमें में एचआईवी संक्रमण का ऊंचा स्तर पाया गया था और इसके साथ सरकार द्वारा उसके पुनर्वास के लिए कुछ नहीं करने की बात जुड़ी थी। अदालत ने इस रिपोर्ट के आधार पर कदम उठाते हुए संबंधित अधिकारियों को यह स्पष्ट करने का आदेश दिया कि वेश्यालय चलाने से संबंधित 1956 के अधिनियम के सेक्शन–5 तथा 6 को कार्यान्वित क्यों नहीं किया जा रहा है। ऐसी समुचित योजना बनाने के भी निर्देश दिए गए जिससे औरतों को यौन दासता से मुक्त किया जा सके, स्वैच्छिक एचआईवी परीक्षण की सुविधा प्रदान की जा सके और समाज में पुनर्वासित किया जा सके।

इन निर्देशों का पालन करते हुए शहर में कई छापे मारे गए तथा औरतों और नाबालिग लड़कियों को छुड़ाया गया। छुड़ाई गई औरतों और लड़कियों में एचआईवी संक्रमण का ऊंचा स्तर था और एक संस्था की रिपोर्ट के अनुसार छुड़ाई गई लड़कियों में परीक्षण से गुजरी 70 प्रतिशत लड़कियां एचआईवी पॉजिटिव पाई गईं तथा बची हुई 30 प्रतिशत रतिजन्य रोगों से ग्रस्त थीं।[198]

अपनी रिपोर्ट में मुख्य न्यायाधीश एमबी शाह औरतों तथा बच्चों, जिनमें से अधिकांश ग्रामीण इलाकों से होते हैं, के शोषण की चर्चा करते हुए इस बात की ओर ध्यान दिलाते हैं कि "औरतों के घृणित व्यापार" की तरफ लोगों का ध्यान गया है, मगर इसे मिटाया नहीं गया है।[199] समाज ने सदियों से अपनी विलासिता के लिए औरतों का शोषण किया है और इस कुप्रथा को मिटाने के लिए कानून बनाने के बावजूद सरकार इस

195 स्टेट ऑव महाराष्ट्र बनाम मधुकर नारायण मार्डिकर, एआईआर (1991) एससी 207
196 वही, अनुच्छेद–8
197 31 जुलाई 1997, 1997 (4) बॉम.सीआर 171
198 वही, अनुच्छेद–11
199 वही, अनुच्छेद–20

पर काबू पाने में असफल रही है। यह गतिविधि कम होने के बजाय बढ़ी है।[200] शाह इस तथ्य के संदर्भ में दुख प्रकट करते हैं कि 1956 के अधिनियम की व्यवस्थाओं का इस्तेमाल नहीं हो रहा है तथा समाज आज तक नागरिकों को शिक्षित या सूचित करने में, या दृष्टिकोणों को बदलने में विफल रहा है।[201] अतः यह निर्णय इस समस्या के प्रति समग्र दृष्टिकोण को बदलने की मांग करता है। ये लड़कियां तथा औरतें मानव हैं तथा इनके साथ सभ्य समाज जैसा व्यवहार करना चाहिए।[202]

यौनकर्मियों के एचआईवी तथा एड्स के अनिवार्य परीक्षण पर विशेष तौर पर चर्चा करते हुए शाह 1987 में यूएन सेक्रेटरी जनरल के इन वचनों को याद करते हैं कि एड्स के विरुद्ध संघर्ष "भय, पक्षपात तथा अज्ञानता से उपजे अतर्कसंगत कार्य के विरुद्ध संघर्ष भी है" तथा इस प्रकार दुनिया को "एड्स के विरुद्ध संग्राम छेड़ना चाहिए, न कि एड्स का सामना कर रहे लोगों के विरुद्ध।"[203] इस रिपोर्ट में आगे राष्ट्रीय एड्स नियंत्रण संस्था नीति संस्तुतियों की ओर ध्यान दिलाया गया है जिनके अनुसार बिना स्पष्ट स्वीकृति के किसी परीक्षण को बढ़ावा नहीं देना चाहिए। मगर परीक्षण से गुजरी लड़कियों में संक्रमण की ऊंची दर की उपेक्षा नहीं करनी चाहिए तथा इसके लिए उपाय नहीं करना विपत्तिकारक होगा। अतः साधारण जनता को इसके खतरों से परिचित कराने के लिए उचित कदम उठाने चाहिए। अवैध होने के बावजूद वेश्यालयों का अस्तित्व है। अगर इन्हें बंद नहीं किया जा सकता है, तब यहां के नियमित ग्राहकों को शिक्षित करने तथा खतरों के बारे में सूचित करने के उपाय करने होंगे।

शाह का कहना है कि अगर समाज सभ्य होने का दावा करता है तब नाबालिग तथा बालिग लड़कियों का अपहरण करने वाले तथा उन्हें इस व्यापार में धकेलने वाले असामाजिक तत्त्वों की असभ्य गतिविधियों को रोकना होगा तथा इसमें सम्मिलित लोगों को कठोर दंड देना होगा। रिपोर्ट में आगे निर्देश जारी किए गए हैं जिनके अनुसार सरकार को अन्य बातों के अलावा देह व्यापार तथा औरतों और लड़कियों को वेश्यावृत्ति में धकेलने पर रोक लगाने के लिए गम्भीर प्रयास करने हैं। ऐसी लड़कियां अपहरण के द्वारा इस क्षेत्र में लाई जा सकती हैं या वे वंचित होने या ऐसी परिस्थितियों की शिकार हो सकती हैं जिन पर उनका कोई नियंत्रण नहीं होता है। इस वजह से यौनकर्मियों के कार्यक्षेत्रों में नियमित तौर पर छापे मारने चाहिए तथा वहां जागरूकता के कार्यक्रम आयोजित करने चाहिए और छुड़ाए गए यौनकर्मियों के पुनर्वास के लिए अधिक घर बनाने चाहिए।

इस रिपोर्ट का स्वागत होना चाहिए क्योंकि इसमें न्यायपालिका को ऐसे मामलों में पहल करते हुए देखा जा सकता है जिनमें सरकार साफ तौर पर कुछ नहीं कर रही है और मुख्य न्यायाधीश शाह के विचार उस स्थिति के प्रति प्रगतिशील दृष्टिकोण तथा सहानुभूति प्रकट करते हैं जिसमें यौनकर्मी स्वयं को पाते हैं। यह सब होने के बावजूद यह रिपोर्ट यौनकर्मियों के अपना कारोबार करने तथा कार्य की उचित तथा सुरक्षित स्थितियों के अधिकारों को किसी प्रकार की वास्तविक मान्यता प्रदान करने में विफल रहा है। यौन उद्योग आज भी अपने सभी रूपों में ऐसी सामाजिक बुराई के रूप में देखा जाता है जिसे हटाया जाना है और यह स्थिति इस उद्योग में लगे हुए व्यक्तियों के कलंकीकरण को रोकने में कहीं से मदद नहीं करती है।

200 वही, अनुच्छेद–20
201 वही, अनुच्छेद–21
202 वही, अनुच्छेद–22
203 वही, अनुच्छेद–29

निष्कर्ष

वर्तमान समय में कानून तथा न्यायपालिका द्वारा यौनकर्मियों, उनके अधिकारों तथा एचआईवी तथा एड्स के प्रभाव से निपटने की पद्धति के कई पक्ष असंतोषजनक हैं। यौनकार्य या इसको बनाए रखने वाली गतिविधियों के निरन्तर अपराधीकरण से यौनकर्मियों का कलंक तथा अलगाव स्थायी हो जाता है और यह स्थिति उन खतरों में वृद्धि करती है जिनका वे सामना कर रहे हैं। औरतों को पीड़ित होने या अनैतिक होने के रूप में देखे जाने की प्रवृत्ति आज भी अधिकांश क्षेत्रों में अदालतों के निर्णय में देखने को मिलती है। यौनकार्य को ऐसी सामाजिक बुराई के रूप में देखा जाता है जिससे छुटकारा पाया जाना है। यहां तक कि भारत में पुराने पड़ चुके 1956 के अधिनियम में संशोधन के हाल के प्रस्ताव भी यह साबित नहीं कर पाते हैं कि नीति निर्माता जागरुक हो चुके हैं। इन औरतों के मानव अधिकारों का आज भी उनकी कार्यस्थितियों तथा पुलिस और अन्य अधिकारियों द्वारा उनके प्रति किए जा रहे व्यवहार के संदर्भ में निरन्तर उल्लंघन हो रहा है।

लेकिन इस बीच कुछ सकारात्मक और स्वागतयोग्य गतिविधियां हुई हैं। उदाहरण के तौर पर, अनेक मामलों में अन्तर्निहित तौर पर यह स्वीकार किया है कि यौनकार्य आर्थिक गतिविधि या पेशा है। हाल के कुछ मुकदमों में यौन उद्योग में कार्यरत व्यक्तियों के दावों को अदालतों द्वारा स्वीकार करने की प्रवृत्ति पहले से अधिक दिखाई देती है। सहायता को सीमित करने के अमेरिका के प्रयत्नों को दी गई सफल चुनौतियों से उम्मीद की एक और किरण तथा समाज में यौनकर्मियों की भूमिका के प्रति स्वीकृति में बढ़ोत्तरी दिखती है।

मगर अभी बहुत काम किया जाना बाकी है क्योंकि इस कार्यक्षेत्र में बिना किसी दंड के भय से मानव अधिकारों का निरन्तर उल्लंघन हो रहा है। ऐसे दुर्व्यवहार तथा समाज की मुख्यधारा से इनका निरन्तर बहिष्कार एचआईवी तथा एड्स के विरुद्ध संघर्ष तथा इन कर्मियों की रक्षा में हमेशा बाधा खड़ी हुई है। उनके अधिकारों की सुरक्षा को वास्तविकता का रूप देना होगा। सेते तथा सेशु के अनुसार, एड्स की महामारी के संदर्भ में इसे संभव करने का सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण तथा व्यावहारिक तरीका उनकी मानवता के प्रति सम्मान दिखाना है।[204] इसमें न सिर्फ उनको सुनना तथा उनके अनुभवों से सीखना शामिल है, बल्कि यह बात भी जुड़ी है कि नीति तथा कार्यक्रम बनाने में उनके निर्णय के अधिकार को सुनिश्चित किया जाना चाहिए।

एचआईवी/एड्स, यौनकर्मी तथा कानूनी मुकदमों का सारांश

बाई शान्ता बनाम स्टेट ऑव गुजरात, एआईआर 1967 गुजरात 211

अभियोगी को औरतों तथा लड़कियों के अनैतिक देह व्यापार का दमन अधिनियम, 1956 के सेक्शन–7 के अंतर्गत दोषी पाया गया (बाद में इसका नाम अनैतिक देह व्यापार (रोकथाम) अधिनियम, 1956 कर दिया गया)। अपीलकर्ता ने यह दावा किया कि उसके द्वारा अपने शरीर को निश्चित अवधि के लिए बेचना; की एक घटना अधिनियम के अंतर्गत वेश्यावृत्ति की परिभाषा से मेल नहीं खाती है।

स्वच्छंदाचारी शब्द तथा 'वेश्यावृत्ति करना' पदबंध को ध्यान में रखते हुए तथा इस क्षेत्र में मुकदमे के कानून पर विचार करते हुए अदालत इस निष्कर्ष पर पहुंची कि अपने शरीर को केवल एक बार निश्चित अवधि के लिए बेचना यहां पर्याप्त नहीं था, बल्कि सेक्शन–7 के अंतर्गत दोषसिद्धि के लिए इस घटना का अनेक बार होना अनिवार्य था। अधिनियम के संदर्भ में 'स्वच्छंद ारी' का अर्थ औरत के शरीर को निश्चित

204 सेते तथा सेशु, पूर्वोक्त टिप्पणी 21 एट 12

अवधि के लिए विवेकरहित आधार पर इस्तेमाल में लाना है और यह एक से अधिक बार की गयी वेश्यावृत्ति का द्योतक है। मगर आस–पास की परिस्थितियों से यह निष्कर्ष निकाला जा सकता था कि वेश्यावृत्ति का कृत्य अनेक बार किया गया था। इस आधार पर दंड को बरकरार रखा गया।

गौरव जैन बनाम यूनियन ऑव इंडिया, एआईआर 1997 एससी 3021

यह याचिका गौरव जैन ने यौनकर्मियों तथा उनके बच्चों का प्रतिनिधि बनकर उनके सामाजिक समन्वय को सुनिश्चित करने तथा उनके अधिकारों की सुरक्षा के प्रयास के रूप में की थी। अदालत ने इन बच्चों के अधिकारों पर विस्तृत चर्चा की और कहा कि इन्हें उपेक्षा, आर्थिक तथा यौन शोषण तथा दुर्व्यवहार से सुरक्षा का अधिकार प्राप्त और पारिवारिक जीवन से वंचित होने पर विशेष सुरक्षा का अधिकार है। ऐसे अधिकार संविधान तथा मानव अधिकार उपकरणों, विशेषकर बालक के अधिकारों पर कन्वेंशन में सुरक्षित हैं। इसने उन समस्याओं पर ध्यान दिया जो यौन उद्योग में कार्य से बच्चों के पालन–पोषण में उत्पन्न होती हैं। इनमें बहिष्कार, भेदभाव तथा दुर्व्यवहार तथा इस वजह से उन्हें रेड लाइट इलाकों से दूर रखने की आवश्यकता सम्मिलित हैं। मगर अदालत ने यौनकर्मियों के बच्चों के लिए अलग शैक्षणिक संस्थानों की व्यवस्था की मांग को नामंजूर कर दिया क्योंकि बच्चों को अलग करना न उनके हित में होगा, न समाज के। इससे बेहतर तरीका यह होगा कि इन बच्चों को इनकी माताओं तथा वेश्यागृहों के अवांछित माहौल से दूर कर दिया जाए। इसके लिए छात्रावास तथा अन्य सुधार गृह उपलब्ध करना चाहिए। अदालत ने यौनकर्मियों तथा उनके बच्चों को समाज की मुख्यधारां में लाने के लिए 'तीन सी' की पद्धति को रेखांकित किया। इन पद्धतियों के अनुसार उन्हें देखभाल तथा सुरक्षा प्रदान करना तथा पुनर्वासित करना था (सलाह देना, फुसलाना तथा जबरदस्ती)।

वेश्यावृत्ति की परिभाषा के संदर्भ में इसने यह निष्कर्ष निकाला कि एक से अधिक ग्राहक का सबूत हमेशा आवश्यक नहीं था। केवल यह साबित करना आवश्यक था कि औरत वह व्यक्ति है जो अपना शरीर स्वच्छंद यौन संबंध संबंध स्थापित करने के उद्देश्य से निश्चित अवधि के लिए सौंपती है। यहां यौन संबंध की परिस्थितियों को देखकर वेश्यावृत्ति का निष्कर्ष निकाला जा सकता है।

इस निर्णय को कानूनी आधार पर गौरव जैन तथा सुप्रीम कोर्ट बार एसोसिएशन बनाम यूनियन ऑव इंडिया एंड अदर्स (1998) 4 एससीसी 270, एआईआर 1998 एससी 2848 के मुकदमे में रद्द कर दिया गया, मगर यौनकर्मियों तथा उनके बच्चों के संदर्भ में अदालत की टिप्पणी आज भी प्रासंगिक है।

संदर्भ : रत्नामाला एंड अन्य बनाम रिस्पॉनडेंट, एआईआर 1962 मद्रास 31

रत्नामाला औरतों तथा लड़कियों के अनैतिक व्यापार का दमन अधिनियम, 1956 (बाद में इसे अनैतिक देह व्यापार (रोकथाम) अधिनियम, 1956 नाम दिया गया) के अंतर्गत दोषसिद्धि तथा कारावास की सजा के विरुद्ध अपील कर रही थी। उसे मामले की जांच कर रही पुलिस द्वारा खुफिया गवाह की मदद से पकड़े जाने के बाद वेश्यावृत्ति करने का दोषी ठहराया गया था। अदालत ने यह निष्कर्ष निकाला कि उस पर गलत तरीके से आरोप लगाया गया था क्योंकि अधिनियम का उद्देश्य देह व्यापार की व्यावसायिक बुराई पर आजीविका के संगठित साधन के रूप में रोक लगाना या इसे समाप्त करना था। इस अधिनियम का उद्देश्य वेश्यावृत्ति को अलग से अपराध घोषित करना नहीं था। अगर विधायिका का यह उद्देश्य होता तो उसके लिए वेश्या को ऐसी किसी गतिविधि के लिए कठोरतापूर्वक जवाबदेह बनाना सर्वाधिक आसान कार्य था। वेश्यालय चलाने के सहअभियोगी की अपील को सबूत के कारण खारिज कर दिया गया।

अदालत ने आगे खुफिया गवाह के इस्तेमाल पर टिप्पणी की। इसने ध्यान दिलाया कि वैकल्पिक साधन उपलब्ध हैं। इसमें संदिग्ध परिसरों में निरीक्षण ऑपरेशन चलाना सम्मिलित है। जब तक ऐसे जालों का इस्तेमाल होगा, तब तक अधिकारियों को उस अपराध में सहायता प्रदान करने के आरोप का सामना करना पड़ेगा जिसे समाप्त करना अधिनियम का उद्देश्य है। इनमें औरत की मर्यादा पर चोट अंतर्निहित है और यह मर्यादा की सुरक्षा का अधिकार सभी औरतों को समान रूप से प्राप्त है। ऐसे छापों के तरीके को पूरी तरह बदलना अनिवार्य है, नहीं तो कानून लागू करने के प्रयत्नों के दौरान कानून के गंभीर दुरुपयोग हो सकते हैं।

कमला चीना बनाम द स्टेट, एआईआर 1963 पी एंड एच 36; 1963 क्रि एलजे 59

अपीलकर्ता, आरोपित यौनकर्मी को अनैतिक देह व्यापार (रोकथाम) अधिनियम, 1956 के सेक्शन–20 के अंतर्गत अपना परिवार छोड़ने तथा बिना पूर्वलिखित अनुमति के उस इलाके में पुनः प्रवेश करने से रोकने के लिए अधिसूचना दी गई। उसने यह दावा किया कि यह धारणा अत्यन्त अस्पष्ट, भ्रामक तथा मनमानी है तथा परिसर छोड़ने या वहां रहने की अनुमति प्राप्त करने वाली औरतों के बीच अंतर निर्धारित करने के लिए मजिस्ट्रेट को मिले अधिकार बंधनमुक्त हैं। इस प्रकार यह सेक्शन धारा–14 के कानून के समक्ष समानता तथा भारत के किसी भाग में स्वतंत्रतापूर्वक विचरण करने, निवास करने या बस जाने के अधिकारों तथा धारा–19 (1) (डी) (ई) (जी) के अंतर्गत किसी पेशे में लगने के अधिकारों का उल्लंघन करता है।

अदालत ने चुनौतियों को खारिज कर दिया। ऐसा करते हुए अदालत ने श्रीमती शमा बाई बनाम स्टेट ऑव उत्तर प्रदेश, एआईआर 1959 एआईआई 57 के मुकदमे में पिछली अदालत के इस मत को स्पष्ट रूप से अस्वीकार कर दिया कि सेक्शन–20 से धारा–14 तथा 19 (1) (डी) (ई) (जी) का उल्लंघन हो सकता है। जन साधारण हित को ऐसी अस्पष्ट या भ्रामक धारणा नहीं कहा जा सकता है जिसका निर्धारण मनमाने ढंग से किया जाता है क्योंकि इसका निर्धारण मामले के सबूत के आधार पर होता है। वर्गीकरण को अतर्कसंगत नहीं कहा जा सकता है क्योंकि यह दोहरी परीक्षा पर आधारित है जिसमें सबसे पहले इसके लिए सबूत की आवश्यकता होती है कि पकड़ी गयी महिला वेश्या है तथा दूसरी परीक्षा के अंतर्गत यह सुनिश्चित करना होता है कि हटाने की प्रक्रिया जनसाधारण के हित में है। मजिस्ट्रेट के पास अनियंत्रित अधिकार नहीं हैं। किसी वेश्या को हटाने का आदेश तभी दिया जा सकता है जब सबूत की परीक्षा के बाद यह निष्कर्ष निकला हो कि हटाया जाना जनसाधारण के हित में है।

ओम कुमार बनाम यूनियन ऑव इंडिया, 2000 (7) एससीएएलई 524

उच्चतम न्यायालय के इस निर्णय में मूलभूत अधिकारों को प्रभावित करने वाले प्रशासनिक तथा वैधानिक निर्णयों की न्यायिक समीक्षा के संदर्भ में राष्ट्रीय तथा अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर विकसित हो रहे कानून पर विचार किया गया। यह मुकदमा उन सजाओं की दुबारा समीक्षा करने से संबंधित था जो विभागीय जांचों में दिल्ली विकास प्राधिकरण के अधिकारियों को अवैध भूमि आंवटन के सिलसिले में सुनाई गई थीं। अदालत ने यह स्वीकार किया कि वह प्रशासनिक अधिकारियों के आदेशों में साधारणतया हस्तक्षेप नहीं करती है और जब इसके द्वारा ऐसा हस्तक्षेप किया जाता है, तब यह या तो वेंजबरी तर्कसंगतता या समानुपातिकता के सिद्धांत की सीमा में रहकर किया जाता है। अदालत ने यह माना कि मूलभूत अधिकारों पर प्रतिबंध के मामलों में वह नियम रूप में प्रतिबंध की समानुपातिकता का मूल्यांकन कर सकती है, जिसमें यह देखना होता है कि कानून या प्रशासनिक आदेश के उद्देश्य की प्राप्ति के लिए विधायिका या प्रशासक ने उपयुक्त या न्यूनतम प्रतिबंधात्मक उपायों का चुनाव किया है।

अदालत ने माना कि भारत में वर्ष 1950 से मूलभूत स्वतंत्रताओं से संबंधित प्रतिबंधों के संदर्भ में सभी वैधानिक तथा प्रशासनिक कार्यों में न्यायपालिका ने समानुपातिकता के सिद्धांत का बहुत अधिक प्रयोग किया है। कई बार इस शब्द का प्रयोग किए बिना इस सिद्धांत का प्रयोग हुआ है। मगर उन मामलों में इसके बदले वेंजबरी तर्कसंगतता परीक्षा का प्रयोग करना चाहिए जो मूलभूत अधिकारों पर प्रतिबंधों से संबंधित नहीं है। इस संदर्भ में निर्णय ने हाउस ऑव लॉर्ड्स का वह फैसला अस्वीकार कर दिया जिसमें पारंपरिक अंतर से हटते हुए समानुपातिकता और वेंजबरी सिद्धांतों को एक समान माना गया था।

धारा–14 के अंतर्गत भेदभाव पर विशेष तौर पर विचार करते हुए अदालत ने प्रशासनिक कार्य की समीक्षा में अपनी भूमिका को स्पष्ट किया। जिन मामलों में ऐसे कार्य को धारा–14 के अंतर्गत भेदभावमूलक होने, समान व्यक्तियों के प्रति असमान व्यवहार करने या असमान व्यक्तियों के प्रति समान व्यवहार करने के कारण चुनौती मिलती है, उन मामलों में अदालत को अपनी प्राथमिक समीक्षा भूमिका के अंतर्गत लागू किए गए विभेद की उपयुक्तता पर विचार करना होता है तथा यह देखना होता है कि क्या यह आवश्यकता से अधिक है या क्या प्रशासक के उद्देश्य के साथ इसका अंतर्निहित संबंध है। इस प्रकार अदालत प्रशासक के संतुलन कार्य की उपयुक्तता पर विचार करती है, और इस प्रकार वस्तुतः 'समानुपातिकता' लागू कर रही है। मगर जब प्रशासनिक कार्य को धारा–14 के अंतर्गत 'मनमाना' होने की चुनौती मिलती है, तब अदालत को दोयम भूमिका की सीमा में रहना होता है और उसे इस पर विचार करना होता है कि क्या आदेश वेंजबरी परीक्षा का अनुसरण करते हुए तर्कसंगत या उचित है। उसे सिर्फ इसका मूल्यांकन करना होता है कि क्या प्रशासक ने अपनी प्राथमिक भूमिका अच्छी तरह निभाई है, क्या उसने अवैध कार्य किया है या उसने प्रासंगिक कारकों पर विचार नहीं किया है या अप्रासंगिक कारकों पर विचार किया है या क्या उसका दृष्टिकोण ऐसा है जो किसी विवेकशील व्यक्ति का नहीं हो सकता है। अगर उसका कार्य इन नियमों की अवमानना करता है, तब उसे मनमाना माना जाता है। इस मुकदमे के तथ्यों के आधार पर अदालत ने वेंजबरी परीक्षा को अपनाया तथा इस निष्कर्ष पर पहुंची कि इस सिद्धांत का उल्लंघन नहीं हुआ था। किसी प्रासंगिक तथ्य को छोड़ा नहीं गया था या अप्रासंगिक तथ्य पर विचार नहीं किया गया था। किसी प्रकार की अवैधता नहीं थी और सजा अत्यधिक अनुपातहीन नहीं थी।

पीएन स्वामी, लेबर लिबरेशन फ्रंट, महबूबनगर बनाम स्टेशन हाउस ऑफिसर हैदराबाद एंड अदर्स, 1998 (1) एएलडी 755, अगस्त 22, 1997

इस उच्च न्यायालय के मुकदमे में अनैतिक देह व्यापार (रोकथाम) अधिनियम, 1956 के सेक्शन–17 (4) की संवैधानिकता को चुनौती दी गई। रेड लाइट इलाके के एक परिसर से पुलिस छानबीन के बाद 65 औरतें छुड़ाई गई। इनमें से 21 एचआईवी पॉजिटिव थीं। इन 21 औरतों को अदालत ने कल्याण गृहों में पुनर्वास के लिए भेजने का निर्देश दिया और बाकी औरतों को छोड़ दिया गया। यह दावा किया गया कि इस बंदीकरण से धारा–21 के अंतर्गत स्वतंत्रता के अधिकार तथा धारा–19 (1) (डी) तथा (ई) के अंतर्गत स्वतंत्रतापूर्वक विचरण करने तथा निवास करने के अधिकारों का उल्लंघन होगा।

अदालत ने सेक्शन–17 (4) की संवैधानिकता को बरकरार रखा तथा यह फैसला सुनाया कि इसे जनता के व्यापक हित में संविधान में सुरक्षित मूलभूत अधिकारों पर उचित प्रतिबंध लगाने के रूप में देखना चाहिए। अतः यह राज्य का कर्तव्य था कि वो छुड़ायी गई औरतों विशेषकर एचआईवी तथा एड्स से संक्रमितों को उनके अपने हित तथा समाज के हित में सुधरने का अवसर प्रदान करे। 1956 के अधिनियम का उद्देश्य व्यावसायिक यौन गतिविधि तथा वेश्यालय चलाने वालों द्वारा मासूम और अनपढ़ औरतों के इस्तेमाल पर रोक लगाना तथा वेश्यावृत्ति की सामाजिक बुराई को दूर करना था।

पब्लिक एट लार्ज बनाम द स्टेट ऑव महाराष्ट्र एंड अदर्स, 31 जुलाई, 1997, 1997 (4) बॉम. सीआर 171
बम्बई (मुम्बई) के उच्च न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश एमबी शाह की रिपोर्ट अखबार में छपी उन खबरों की प्रतिक्रिया में सामने आया था जिनमें शहर के वेश्यालयों के अवैध बंदीकरण के सबूत और इन औरतों में एचआईवी संक्रमण की ऊंची दर तथा इसके साथ इन औरतों को पुनर्वासित करने में सरकार की निष्क्रियता का विवरण था।

मुख्य न्यायाधीश एमबी शाह इन औरतों तथा बच्चों, जिनमें से अधिकांश ग्रामीण इलाकों से होते हैं, के शोषण की चर्चा करते हुए यह टिप्पणी करते हैं कि "औरतों के घृणित व्यापार" की तरफ लोगों का ध्यान गया है, मगर इसे रोका नहीं जा सका है। इस कुप्रथा को रोकने के लिए कानून बनाने के बावजूद सरकार इस पर काबू पाने में असफल रही है। अतः यह निर्णय इस समस्या के प्रति समग्र दृष्टिकोण को बदलने की मांग करता है। सरकार को देह व्यापार रोकने के लिए गंभीर उपाय करते हुए यौनकर्मियों के कार्यक्षेत्रों में नियमित तौर पर छापे मारने चाहिए तथा वहां जागरूकता के कार्यक्रम आयोजित करने चाहिए और छुड़ाए गए यौनकर्मियों के पुनर्वास के लिए अधिक घर बनाने चाहिए। एचआईवी तथा एड्स के अनिवार्य परीक्षण के संदर्भ में रिपोर्ट में यह टिप्पणी की गयी है कि बिना स्पष्ट स्वीकृति के किसी परीक्षण को रोकना चाहिए। मगर परीक्षण से गुजरी लड़कियों में संक्रमण की ऊंची दर की उपेक्षा नहीं करनी चाहिए तथा साधारण जनता को इसके खतरों से परिचित कराने के लिए उचित कदम उठाने चाहिए।

सहयोग महिला मंडल एंड एन. बनाम स्टेट ऑव गुजरात, (2004) 2 जीएलआर 1764)
एक विशेष जगह में रहने वाली तथा यौन उद्योग में कार्यरत औरतों को अनैतिक देह व्यापार (रोकथाम) अधिनियम, 1956 के सेक्शन–7 (1) (बी) के अंतर्गत अधिसूचना जारी कर अपनी जगह छोड़ने पर विवश किया गया। इस अधिनियम के अनुसार उस जगह में धार्मिक तथा शैक्षणिक संस्थानों की मौजूदगी के कारण वेश्यावृत्ति को अपराध माना गया। इस सेक्शन तथा सेक्शन–14 तथा 15 को संविधान की धारा–14, 19 तथा 21 का उल्लंघन करने के आधार पर चुनौती दी गई।

यह तर्क दिया गया कि निवास के अधिकार पर प्रतिबंध लगाने के कारण सेक्शन–7 अन्यायपूर्ण तथा असंवैधानिक है। वेश्यावृत्ति खुद में अपराध नहीं है। यह केवल तभी अपराध माना जा सकता है जब यह घोषित इलाके से बाहर की जाए। अतः इन यौनकर्मियों को घोषित इलाकों में रहने तथा उस इलाके से बाहर अपना व्यापार करने का अधिकार प्राप्त था। मगर अदालत का यह मानना था कि यद्यपि इस अधिनियम का उद्देश्य स्वयं वेश्यावृत्ति पर प्रतिबंध लगाना नहीं था, सेक्शन–7 को इसके अपवाद के रूप में देखना चाहिए और इस तरह निश्चित सार्वजनिक स्थलों पर वेश्यावृत्ति को दंडनीय अपराध बना दिया जाता है। अदालत ने वेश्यावृत्ति को आजीविका का वैध साधन मानने से इंकार कर दिया क्योंकि ऐसा करना औरतों के व्यापार को खुला निमंत्रण देने के समान होगा। अदालत ने वेश्यावृत्ति के अधिकार की औरतों तथा लड़कियों के मूलभूत अधिकार के रूप में मान्यता देने से इंकार कर दिया क्योंकि इसकी अनुमति मिलने से औरतों के प्रति दुर्व्यवहार के संस्थानीकरण, प्रोत्साहन तथा सीख की प्रवृत्ति देखने को मिलेगी। अदालत ने इस दावे को खारिज कर दिया कि उसे उन औरतों को उन इलाकों में रहने तथा उस इलाके से बाहर काम करने की अनुमति प्रदान करते हुए ऐसी औरतों की मदद करनी चाहिए जो वेश्यावृत्ति को एक पेशे के रूप में अपनाना चाहती हैं। इसके अलावा, उनके घरों में यौन संबंध स्थापित नहीं होने के बावजूद उनके घरों को उस स्थिति में वेश्यालय माना जाएगा अगर उनका उपयोग वेश्यावृत्ति करने के लिए किया जा रहा है। धारा–7 मनमाने निर्णय लेने की अनुमति प्रदान नहीं करती है क्योंकि इसमें उन इलाकों की प्रकृति के बारे में समुचित दिशानिर्देश दिए गए हैं जिन्हें चुना जाना होता है।

ऐसा करने से किसी तरह का भेदभाव नहीं हो रहा था। ऐसे इलाकों में वेश्यावृत्ति को अपराध मानने से वहां कार्य करने वाली वेश्याओं तथा अन्य जगह की वेश्याओं के साथ कोई भेदभाव नहीं होता है। अतः सेक्शन–7 की संवैधानिकता को बरकरार रखा गया। सेक्शन–14 तथा 15 को दी गई चुनौतियां भी रद्द कर दी गईं। सेक्शन–14 को संविधान की धारा–14 के अंतर्गत चुनौती दी गई क्योंकि इससे छोटे अपराधों तथा अधिक गंभीर अपराधों के लिए बिना वारंट के गिरफ्तारी की अनुमति देकर असमान व्यक्तियों के साथ समान व्यवहार होता था। मगर अदालत इस निष्कर्ष पर पहुंची कि सजा की गंभीरता को यह निर्धारित करने का कारक नहीं माना जा सकता है कि वारंट के बिना गिरफ्तारी उचित है या नहीं। सच तो यह है कि यौनकर्मियों तथा इनसे अधिक गंभीर अपराध करने वालों के साथ समान व्यवहार नहीं होता था। क्योंकि इस अधिनियम में सजाओं तथा देह व्यापार की शिकार औरतों की सुरक्षा तथा पुनर्वास के लिए अलग पैमाने हैं। अदालत ने इस दावे को खारिज कर दिया कि सेक्शन–15 के अंतर्गत परिसरों में प्रवेश करने तथा तलाशी लेने और लोगों को वहां से हटाने के अधिकार दिशाहीन, अस्पष्ट तथा मनमाने हैं और इस प्रकार से असंवैधानिक हैं। अदालत ने यह निष्कर्ष निकाला कि इस अधिनियम के उद्देश्य को ध्यान में रखते हुए ऐसे अधिकारों का होना नितांत आवश्यक है और इनके दुरुपयोग को रोकने के लिए समुचित दिशानिर्देश दिए गए हैं।

यौनकर्मियों के निजता के अधिकारों के संदर्भ में अदालत का यह विचार था कि यौनकार्य व्यक्तिगत आत्मीयता की साधारण परिधि से भिन्न है। इसके केंद्र में यौनभाव की अभिव्यक्ति नहीं होकर व्यावसायिक पक्ष था। यह व्यावसायिक मूल्य यौनकर्मी के निजता के दावे को समाप्त नहीं करता है, लेकिन इससे उसका यह दावा बहुत कमजोर पड़ जाता था।

श्रीमती छायादेवी पत्नी सुरेश जायसवाल एंड अदर्स बनाम स्टेट ऑव महाराष्ट्र, 2006(3) बॉम. सीआर 705

इस मामले में मुद्दा वह कानून था जिसके कारण किसी प्रकार के भोजनालय, परमिट रूम तथा बीयर बारों में किसी प्रकार का नृत्य प्रदर्शन प्रतिबंधित था। मगर ये प्रतिबंध तीन या तीन से अधिक स्टार वाले होटलों या सरकार द्वारा पर्यटन या सांस्कृतिक गतिविधियों के संदर्भ में विनिर्देशित किसी प्रतिष्ठान पर लागू नहीं होते थे। इस व्यवस्था को धारा–19(1) (ए) के अंतर्गत अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता के आधार पर दी गई चुनौती को खारिज कर दिया गया क्योंकि इस मामले में नृत्य व्यावसायिक उद्देश्य के लिए किया जा रहा था, न कि मत या विचार की अभिव्यक्ति के लिए। धारा–15(1) के अंतर्गत भेदभावहीनता के आधार पर दिए गए तर्क खारिज कर दिए गए, क्योंकि यह प्रतिबंध लिंग–निरपेक्ष था और इसका विस्तार पुरुषों तक भी हो रहा था। धारा–21 के अंतर्गत जीवन के अधिकार के संदर्भ में अदालत ने यह कहा कि यह उस मामले में लागू हो सकता है, जब कारोबार करने का मूलभूत अधिकार प्रभावित हो रहा हो, अन्यथा किसी व्यक्ति को उसके जीवन के अधिकार से वंचित करने का सबसे अच्छा तरीका होता है कि उसे उसकी आजीविका से विमुख कर दिया जाए। मगर इस मामले में प्रतिबंध बार मालिकों को उन्हें व्यापार करने से रोक नहीं पाए और नृत्य करने वाले छूट–प्राप्त प्रतिष्ठानों में अभी भी रोजगार पा सकते थे।

मगर अदालत ने यह माना कि विवादित सेक्शन संविधान की धारा–14 के अंतर्गत कानून के समक्ष समानता तथा धारा–19(1) (जी) के अंतर्गत किसी कारोबार या पेशे में लगने के अधिकारों से मेल नहीं खाते हैं क्योंकि लगाया गया प्रतिबंध तर्कसंगत या जनसाधारण के हित में नहीं था। प्रतिबंधित प्रतिष्ठानों में हर तरह के नृत्य पर प्रतिबंध लगा था और यह सिर्फ अश्लील या अभद्र प्रकृति के नृत्य तक सीमित नहीं था। यही नहीं, प्रतिबंधित गतिविधियां छूट–प्राप्त परिसरों में भी हो सकती थी और इस मामले में वहां जाने वाले लोगों के तथाकथित सामाजिक स्तरों से कोई फर्क नहीं पड़ता है। इस प्रकार दो प्रकार के प्रतिष्ठानों के बीच निर्धारित अंतर का अधिनियम के उद्देश्य के साथ गहरा संबंध नहीं था। रेस एक्सट्रा कॉमर्सियम के विषय

पर टिप्पणी करते हुए अदालत ने कहा कि स्वयं नृत्य की प्रकृति को अश्लील या हानिकारक नहीं माना जा सकता है क्योंकि ऐसा करने से पेशा के रूप में इसका वर्गीकरण नहीं हो पाएगा। मगर अदालत तर्कसंगत आधार पर और जनसाधारण के हित में इस पर प्रतिबंध लगाने के लिये स्वतंत्र है।

श्रीमती शमा बाई बनाम स्टेट ऑव उत्तर प्रदेश, एआईआर 1959 एआईआई 57

यौनकर्मी के रूप में कार्य कर रही अपीलकर्ता ने अपने मकान मालिक द्वारा उससे मकान खाली करवाने के लिए अनैतिक देह व्यापार (रोकथाम) अधिनियम के सेक्शन–20 के प्रयोग का विरोध किया। उसने दावा किया कि यह सेक्शन संविधान की धारा–19 (1) (जी) द्वारा सुनिश्चित कारोबार करने के अधिकार से उसे अवैध रूप से वंचित करता है तथा इस पर अनुचित प्रतिबंध लगाता है। अदालत ने यह दावा खारिज कर दिया और यह निष्कर्ष निकाला कि विवादित सेक्शन वेश्यावृत्ति के कार्य का निषेध नहीं करता है, बल्कि उस पर पाबंदियां लगाता है। राज्य जनसाधारण के हित में किसी कारोबार या पेशे में लगने के अधिकार पर कानूनन पाबंदियां लगा सकता है। इसने निर्णय सुनाया कि ये पाबंदियां इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए तर्कसंगत थीं कि वेश्यावृत्ति तथा इससे जुड़ी देह व्यापार की बुराई मानव की गरिमा तथा महत्ता से मेल नहीं खाती हैं तथा परिवारों और समुदायों के हितों पर नकारात्मक प्रभाव डालती हैं। धारा–23 के अंतर्गत राज्य के दायित्वों तथा औरतों और लड़कियों के व्यापार को रोकने के अंतर्राष्ट्रीय कानून को देखते हुए इन्हें तर्कसंगत माना जाएगा।

अदालत ने मत प्रकट करते हुए, मगर इस विषय पर प्रतिवादियों के प्रस्तुतिकरणों की अनुपस्थिति में इसकी पुष्टि नहीं करते हुए कहा कि सेक्शन–20 से संविधान की धारा–14 का उल्लंघन हो सकता है। इसमें वेश्या होने की आरोपी औरत की उसकी जगह से हटाने के लिए मजिस्ट्रेट को अस्पष्ट तथा स्वच्छंद विवेकाधिकार प्रदान किया गया था और इसके लिए कोई तर्कसंगत वर्गीकरण नहीं है कि क्यों एक वेश्या को हटाया जाता है जबकि दूसरे को रहने की अनुमति दी जाती है। अदालत ने यह भी माना कि सेक्शन–20 संविधान की धारा–19 (1) (डी) (ई) और (जी) को सीमित कर सकता है क्योंकि इसमें समय की ऐसी कोई अवधि तय नहीं है जब तक किसी व्यक्ति को किसी जगह से हटाया या वापस वहां प्रवेश करने से रोका जा सकता है।

धारा–14 तथा 19 के संभावित उल्लंघन के मत को कमला चीना बनाम द स्टेट के मुकदमें में पूरी तरह खारिज कर दिया गया था। एआईआर 1963 पी एंड एच 36; 1963 क्रि. एलजे 59।

स्टेट ऑव महाराष्ट्र बनाम मधुकर नारायण मार्डिकर, एआईआर (1991) एससी 207

इस मुकदमे में प्रतिवादी पुलिस इंस्पेक्टर पर एक स्थानीय औरत पर यौन संबंध स्थापित करने के उद्देश्य से हमला करने का आरोप था। जांच के बाद उसे भ्रष्ट आचरण का दोषी पाया गया तथा उसकी पदच्युति का आदेश जारी कर दिया गया। जांच के दौरान यह सबूत प्रस्तुत किया गया कि महिला ने विवाहेत्तर संबंध स्थापित कर रखा था और इस प्रकार वह चरित्रहीन औरत थी। अतः उच्च न्यायालय ने यह टिप्पणी करते हुए आदेश रद्द कर दिया कि चरित्रहीन औरत की अप्रमाणित गवाही के आधार पर प्रतिवादी के भविष्य तथा कैरियर को अधर में लटकाना पूरी तरह उचित नहीं होगा।

मगर सर्वोच्च न्यायालय ने इस निर्णय को उलट दिया। औरत की गवाही को उसके यौन इतिहास मात्र के आधार पर नामंजूर नहीं किया जा सकता है। ऐसी औरत को भी निजता, कानून के समान संरक्षण तथा खुद पर हमला होने पर अपनी रक्षा का अधिकार है।

स्टेट ऑव उत्तर प्रदेश बनाम कौशल्या, एआईआर, 1964 एससी 416

प्रतिवादियों, आरोपित वेश्याओं से इसका कारण बताने के लिए कहा गया कि 1956 अनैतिक देह व्यापार (रोकथाम) अधिनियम, 1956 के सेक्शन–20 का अनुसरण करते हुए उन्हें उनके निवास स्थान से क्यों नहीं हटा दिया जाए तथा पुनः वहां प्रवेश करने से क्यों नहीं रोका जाए। उच्च न्यायालय में यह फैसला सुनाया गया था कि सेक्शन–20 संविधान की धारा–19 (1) (डी) और (ई) के अंतर्गत भारत के किसी भाग में स्वतंत्रतापूर्वक विचरण करने, निवास करने तथा बस जाने के प्रतिवादियों के मूलभूत अधिकारों का उल्लंघन करता है।

अदालत ने घोषित किया कि अन्य औरतों को छोड़ कर कुछ औरतों पर पाबंदियां लगाना तर्कसंगत है और इससे धारा–14 का उल्लंघन नहीं हो रहा है। जनता को विभिन्न समूहों में वर्गीकृत किया जा सकता है अगर वर्गीकरण का आधार बुद्धिसंगत अंतर हो और इस अंतर का कानून के उद्देश्य के साथ तर्कसंगत संबंध हो और इस मामले में यह उद्देश्य व्यस्त इलाके में जनता के बीच बढ़ रही अनैतिकता को रोकना है। अदालत का यह मानना था कि वेश्या के रूप में कार्य करने वाली औरत तथा अन्य औरत को भिन्न वर्गों में रखने वाले अंतर तर्कसंगत हैं। जनता के लिए परेशानी पैदा कर सेक्शन–20 द्वारा स्वयं को अपनी जगह से हटाए जाने को तर्कसंगत आधार देने वाली वेश्या तथा ऐसा नहीं करने वाली वेश्या के बीच अंतर है।

धारा–19 के संदर्भ में अदालत का यह कहना था कि निर्वासन समेत अन्य कठोर प्रतिबंधों को लगाया जा सकता है अगर वेश्यावृत्ति का दुराचार किसी विशेष स्थान तक सीमित हो तथा इसके लिए नियंत्रित की जाने वाली बुराई की कोटि तथा तात्कालिकता तथा पाबंदियां लगाते समय समाज के जीवन मूल्यों को ध्यान में रखना चाहिए। इन प्रतिबंधों को इस बात से तर्कसंगत आधार मिलता है कि ये न्यायिक प्रक्रिया के तहत सुप्रकटित नीति के आधार पर लगाए जाते हैं।

अंतर्राष्ट्रीय विवाद कानून

एलायंस फॉर ओपन सोसाइटी इंटरनेशनल एट आल बनाम यूनाइटेड स्टेटस एजेंसी फॉर इंटरनेशनल डेवलपमेंट, यूनाइटेड स्टेट्स डिस्ट्रिक्ट कोर्ट, मई 8 2006, 430 एफ. सुप.2 डी 222 (यूनाइटेड स्टेट्स)

डिस्ट्रिक्ट ऑव न्यूयार्क में हाल के इस मुकदमे में अमेरिका के उस कानून को चुनौती दी गई जिसके अनुसार एचआईवी/एड्स तथा मलेरिया के विरुद्ध संयुक्त राज्य नेतृत्व अधिनियम, 2003 (यूएस वैश्विक एड्स अधिनियम) के तहत वित्तीय सहायता प्राप्त करने की शर्त के रूप में गैर–सरकारी संगठनों के लिए यह आवश्यक था कि वे वेश्यावृत्ति का स्पष्ट रूप से विरोध करने वाली नीति का पालन करें। वादियों ने वाक् स्वतंत्रता के आधार पर इस कानून के विवादित सेक्शन को चुनौती दी कि यह उनकी उन गतिविधियों को भी सीमित कर देता है जो वे अपने प्राइवेट फंडों की मदद से चलाते हैं।

यह स्थिति उन्हें उन गतिविधियों में सक्रिय होने में असमर्थ बना देती हैं जिन्हें प्रतिवादी वेश्यावृत्ति के विरुद्ध अपर्याप्त संघर्ष के रूप में देखते हैं, तथा इस प्रकार उन्हें अपने विशिष्ट दृष्टिकोणों को अभिव्यक्त करने के लिए वैकल्पिक मार्ग नहीं मिलते हैं।

अदालत ने वादियों के पक्ष में निर्णय सुनाया। अपने निर्णय में अदालत ने यह सुनाया कि इस व्यवस्था में वेश्यावृत्ति से उत्पन्न बुराइयों के साधारण विरोध की घोषणा मात्र से अधिक की अपेक्षा की जा रही थी। इसमें संविधान के प्रथम संशोधन की वाक् स्वतंत्रता व्यवस्थाओं का उल्लंघन करते हुए वाक् पर अंकुश लगाया गया था और संस्था के प्राइवेट फंडों पर असंवैधानिक रूप से दृष्टिकोण संबंधी भेदभाव करने वाले प्रतिबंधों को लागू किया।

डीकेटी इंटरनेशनल बनाम यूनाइटेड एजेंसी फॉर इंटरनेशनल डेवलपमेंट, डिस्ट्रिक्ट ऑव कोलम्बिया, मई 18, 2006, 435, एफ सप. 2डी (यूनाइटेड स्टेट्स)

इस मुकदमे में डिस्ट्रिक्ट ऑव कोलम्बिया में अमेरिका के कानून के उस अधिनियम को चुनौती दी थी जिसके अनुसार एचआईवी/एड्स, तपेदिक तथा मलेरिया के विरुद्ध संयुक्त राज्य नेतृत्व अधिनियम, 2003 (यूएस वैश्विक एड्स एक्ट) के तहत वित्तीय सहायता प्राप्त करने की शर्त के रूप में गैर सरकारी संगठनों के लिए यह आवश्यक था कि वे वेश्यावृत्ति का स्पष्ट रूप से विरोध करने वाली नीति का पालन करे। इसको मिलने वाली वित्तीय सहायता के विस्तार को तब नामंजूर कर दिया गया जब इसने यह प्रमाणित करने से इंकार कर दिया कि इस संस्था की नीति वेश्यावृत्ति तथा यौनगत देह व्यापार का स्पष्ट तौर पर विरोध करती है। संस्था ने यह दावा पेश किया कि ऐसी नीति से यौनकर्मियों समेत ऐसे अन्य लोगों के अलगाव तथा लांछन की संभावना है जो एचआईवी/एड्स के संदर्भ में विशेष रूप से असुरक्षित हैं और इससे डीकेटी की कार्यक्षमता सीमित हो सकती है।

अदालत ने यह निर्णय सुनाया कि संविधान के प्रथम संशोधन के अनुसार सरकारी कार्यक्रम में हिस्सा लेने की शर्त के रूप में सरकार व्यक्तियों तथा संस्थाओं को इस बात पर मजबूर नहीं कर सकती है कि वे किसी विशेष दृष्टिकोण या विषय वस्तु का अनुसरण करते हुए अपने विचारों को प्रकट करे। यह प्रतिबंध सरकार के हित की रक्षा के लिए कम से कम प्रतिबंध लगाने वाला साधन नहीं था। वित्तीय अनुदान पर पाबंदियां लगाने का अधिकार ऐसी प्राइवेट गतिविधियों पर लागू नहीं हो सकती थी जो अनुदान से संबंधित नहीं थी।

डीपीपी बनाम बुल

डिवीजनल कोर्ट, (1995), क्यूबी 88; क्वीन्स बेंच डिवीजन, (1995) क्यूबी 88; (1994) 4 एआईआईईआर 411; (1994), 3 डब्ल्यूएलआर 1196; (1995)1 क्र. एफ.रिव. 413; (1994) क्रिम एलआर 762 (इंगलैंड तथा वेल्स)

इस मामले में अभियोगी एंड्रयू रोजर पर सामान्य वेश्या होने तथा सड़क या सार्वजनिक स्थान पर वेश्यावृत्ति के उद्देश्य से इधर–उधर घूमने का आरोप था (सड़क अपराध अधिनियम, 1959 के सेक्शन–1(1) के विरुद्ध)। अभियोगी ने इसके विरुद्ध दलील देते हुए कहा कि कानून सिर्फ औरतों पर लागू होता है और इस तरह इस मामले में कोई आरोप नहीं बनता है। पुराने वैधानिक इतिहास का हवाला देते हुए कहा कि कानून बनाने का उद्देश्य सड़कों पर औरतों की वेश्यावृत्ति की समस्या का समाधान करना था। अभियोग पक्ष ने इसके विरुद्ध दलील देते हुए कहा गया कि चूंकि कानून में सामान्य वेश्या की परिभाषा नहीं है और कानून लिंग निरपेक्ष है, इसलिए अदालत इस परिभाषा में पुरुषों को सम्मिलित करने के लिए स्वतंत्र है।

मजिस्ट्रेट के स्तर पर निष्कर्ष निकाला गया कि यह अधिनियम केवल औरतों पर लागू होने के उद्देश्य से बनाया गया था क्योंकि समलिंगी गतिविधियां उपकानून बनाते समय पहले से ही अवैध थीं और इस अधिनियम में उनका शामिल किया जाना अनावश्यक था। अतः आरोप को खारिज कर दिया गया। क्वीन्स बेंच डिविजन में अपील होने पर इसकी पुष्टि हुई जब अदालत ने यह निर्णय सुनाया कि अपनी सही बनावट में 'सामान्य वेश्या' शब्द औरत वेश्याओं तक सीमित है तथा लिंग निरपेक्ष भाषा में होने के बावजूद इसके अर्थ का विस्तार पुरुषों तक नहीं होता है।

एजली बनाम फेडेरल कैपिटल प्रेस ऑव ऑस्ट्रेलिया, 192 एएलआर 395; 2001 डब्ल्यूएल 350260; 2001,एफसीए 397 (ऑस्ट्रेलिया)

एजली बनाम फेडेरल कैपिटल प्रेस ऑव ऑस्ट्रेलिया अपीलकर्ता ने यह दावा किया कि प्रतिवादी ने उसके यौनकर्मी होने के कारण उसके साथ अवैध भेदभाव किया है। प्रतिवादी के समाचारपत्रों में उसके विज्ञापनों

के प्रकाशन पर विशेष पाबंदियां लगायी गयीं। उसने यह दावा किया कि यह व्यवहार आस्ट्रेलिया के भेदभाव अधिनियम, 1991 का उल्लंघन करता है क्योंकि उसके साथ नकारात्मक व्यवहार हुआ और उसके व्यवसाय के कारण उस पर अतर्कसंगत पाबंदियां लगायी गयीं।

मामले की पहली अदालत ने यह निर्णय सुनाया कि ये पाबंदियां अपीलकर्ता के व्यवसाय के कारण नहीं बल्कि विज्ञापनों की विषय वस्तु के कारण लगाई गई थीं। अपील होने पर सर्वोच्च न्यायालय ने यह निर्णय सुनाया कि अदालत का यह निष्कर्ष गलत है। मगर अदालत इस निर्णय को बदल नहीं सकती थी क्योंकि लगाई गई शर्तों के तर्कसंगत होने का मूल्यांकन पूरी तरह से तथ्यात्मक था और इस प्रकार अपील करने पर इसकी समीक्षा नहीं की जा सकती थी।

(जेनी बनाम स्टाट्ससेक्रेटारिस वन जस्टिस, कोर्ट ऑव जस्टिस ऑव द यूरोपियन कम्युनिटीज, केस सी-268/99, 2001 ईसीआरआई-8615एच (यूरोपियन कोर्ट ऑव जस्टिस)

यह मुकदमा पोलैंड तथा चेक गणराज्य के उन नागरिकों से संबंधित था जो हॉलैंड में आत्मनिर्भर वेश्याओं के रूप में कार्य करने हेतु उन्हें निवास परमिट नहीं दिए जाने के निर्णय को चुनौती दे रहे थें। अनैतिकता के आधार पर अपीलकर्ताओं को अनुमति नहीं दिए जाने के तर्कों को अस्वीकार करते हुए अदालत ने यह फैसला सुनाया कि संबंधित सदस्य राज्य में वेश्यावृत्ति को पहले से सहन, यहां तक कि विनियमित किया जा रहा है। इसने हॉलैंड की सरकार के उन तर्को को अस्वीकार कर दिया कि वेश्यावृत्ति को स्वरोजगार के अंतर्गत आने वाली आर्थिक गतिविधि के रूप में नहीं देखा जा सकता है क्योंकि इसकी प्रकृति अवैध होती है, यह सार्वजनिक नैतिकता के खिलाफ होती है तथा यह निर्धारित करना संभव नहीं है कि वेश्या स्वेच्छापूर्वक सदस्य राज्य गई है या अपनी गतिविधियों में स्वतंत्रतापूर्वक सक्रिय है। अदालत ने यह फैसला सुनाया कि वेश्यावृत्ति वह गतिविधि है जिसमें सेवा प्रदान करने वाला व्यक्ति भुगतान के बदले लाभग्राही की मांग की पूर्ति किसी भौतिक वस्तु के उत्पादन या हस्तांतरण के बिना करता है। इस प्रकार वेश्यावृत्ति सेवाओं की वह व्यवस्था है जो आर्थिक गतिविधियों की धारणा के अंतर्गत आती है।

जॉर्डन एंड अदर्स बनाम द स्टेट, 2002 केस सीसीटी 31/01, 2002 (6) एसए 642 (साउथ अफ्रीका)

1957 ई. का दक्षिण अफ्रीका का यौन अपराध अधिनियम 23 पारिश्रमिक के लिए किए गए यौनकार्य को दंडित करता है, मगर इसके अनुसार यौनकार्य के लिए भुगतान करना अपराध नहीं है। इसकी असंवैधानिकता का मुकदमा एक वेश्यालय स्वामी तथा एक यौनकर्मी की ओर से दायर किया गया जो विवादित व्यवस्था के अंतर्गत दोषी पाए गए थे। उन्होंने सबसे पहले यह दावा पेश किया कि, ऐसा करना भेदभावमूलक है तथा यह ग्राहक को छोड़कर केवल यौनकर्मी को सजा देकर समानता के अधिकार का उल्लंघन करता है।

अदालत ने इन तर्कों को खारिज कर दिया कि इस व्यवस्था से गरिमा, स्वतंत्रता तथा व्यक्ति की सुरक्षा, आर्थिक गतिविधि या निजता के अधिकारों का उल्लंघन होता है। अल्पमत का यह मानना था कि इस व्यवस्था से अनुचित भेदभाव होता था क्योंकि कर्मी तथा ग्राहक के साथ दोहरा व्यवहार हो रहा है और यह स्पष्ट है कि यौनकर्मियों में औरतों की संख्या अधिक होती है और उनके ग्राहक प्रायः पुरुष होते हैं। इससे लिंग या यौनकार्य आधार पर अनुचित भेदभाव होता है और इस तरह यौनगत दोहरे मानदंडों तथा लैंगिक रूढ़ धारणाओं को बढ़ावा मिलता है। मगर बहुमत ने इस तर्क को अस्वीकार कर दिया तथा यह निष्कर्ष निकाला कि अधिनियम ऐसे "किसी व्यक्ति" को दंडित करता है जो पारिश्रमिक के लिए यौनकार्य करना है और यह बात स्पष्ट तौर पर पुरुष और महिला यौनकर्मियों पर लागू होती है। अधिनियम ग्राहकों को हालांकि दंडित नहीं करता है, वे अपराध में सहायता करने के कारण साधारण कानून तथा स्टेट्यूट के अंतर्गत अपराध के दोषी हैं।

वेश्यालय चलाने के अपराध से संबंधित सेक्शनों की संवैधानिक चुनौती को भी रद्द कर दिया गया क्योंकि इस शोषण के प्रति जनसाधारण की घृणा से राज्य को व्यक्ति के अधिकारों को सीमित करने का आधार मिल जाता है। जॉर्डन और उसके कर्मी को इसलिए अपराधी घोषित किया गया।

आर बनाम डीएस 2005 डब्ल्यूएल 1010005 (वीसीए); (2006) एएलएमडी 971 2006, एएलएमडी 991, 153, ए. क्रिम. आर. 194; 191, एफएलआर 337; 2005, वीएससीए 99

इस मुकदमे में दासता तथा दास स्वामित्व का आरोप सिद्ध हुआ था और सजा सुनाई गई थी। प्रतिवादी उस अंतर्राष्ट्रीय योजना का हिस्सा थी जिसके अंतर्गत थाईलैंड की औरतों को बहला–फुसलाकर उनसे ऐसी परिस्थितियों में वेश्यावृत्ति करायी जाती थी जिनमें उन्हें बंद रखा जाता था तथा इस प्रकार उन पर प्रबंधकों का स्वामित्व था।

औरतों, जिनमें लगभग सभी बेसहारा थीं, को करार की शर्तों से मुक्त होने तक लंबी अवधि तक बिना किसी पारिश्रमिक के यौनकार्य करना पड़ता था। कर्ज के बकाया होने की अवधि में वे अपने आवासों या वेश्यालयों में बंद रखी जाती थीं और वे बाहर केवल अनुमति प्राप्त करने के बाद जा सकती थीं और उनके साथ किसी व्यक्ति का होना आवश्यक था। औरतों के पासपोर्टों तथा वापसी की हवाई टिकटों को इस आधार पर जब्त कर लिया गया कि कर्ज की अदायगी के बाद वापस किया जाएगा। अदालत ने यह निर्णय सुनाया कि ऐसी स्थितियों में प्रत्येक औरत को दास की तरह काम करना पड़ रहा था और डीएस को मामले के अनुसार सजा सुनाई गयी।

विल्लोफोर्ड फैमिली ट्रस्ट बनाम क्राइस्टचर्च सिटी काउन्सिल (29 जुलाई, 2005) क्राइस्टचर्च सीआईवी 2004-409-002299 (हाई कोर्ट ऑव न्यूजीलैंड)

वेश्या कानून सुधार अधिनियम, 2003 के अनुसार वेश्यावृत्ति वैध कर दिया गया तथा ऐसी व्यवस्था की स्थापना की जिसके द्वारा यौनकार्य तथा वेश्यालयों को विनियमित किया जा सके। इसका अनुसरण करते हुए क्राइस्टचर्च ने एक उपकानून बनाया जिसके अनुसार शहर के अन्य भाग में वेश्यालय चलाना प्रतिबंधित था। इस कानून की वैधता को संगठन की स्वतंत्रता तथा कार्य के अधिकार का उल्लंघन करने के आधार पर चुनौती दी गई। यह तर्क प्रस्तुत किया गया कि यह उपकानून यौनकर्मियों के उन अधिकारों का उल्लंघन करता है जिनके अनुसार वे लघु स्तर पर स्वामी–संचालित वेश्यालयों में काम कर सकते थे। ऐसे वेश्यालय शहर के उपनगरीय क्षेत्र के रिहाइशी इलाकों में तथा परिसीमित इलाके से बाहर से बड़ी संख्या में मौजूद थे। अदालत ने संगठन की स्वतंत्रता के आधार पर दी गई चुनौती को खारिज कर दिया। मगर अदालत ने यौनकर्मियों के लिए कार्य के अधिकार को स्वीकार किया तथा इस निष्कर्ष पर पहुंची कि यह कानून यौनकर्मियों को परिसीमित इलाके से बाहर अपना विधिमान्य व्यापार करने से रोकता है। यह अतर्कसंगत था क्योंकि उनके कार्य से किसी तरह की परेशानी नहीं जुड़ी थी। इससे यौनकार्य के वैधीकरण का मकसद कमजोर हो रहा था। लघु स्तर पर स्वामी–संचालित वेश्यालयों को ऐसे किसी फ्रेमवर्क का केन्द्रीय हिस्सा माना गया जिसमें यौनकर्मियों के अधिकारों की रक्षा हो तथा जो उन्हें शोषण से बचाव प्रदान करे और इस कानून से उन्हें कार्य के अवसर से वंचित किया जा रहा था। अतः ये विवादित सेक्शन हटा दिए गए।

11वीं

एमएसएम और एचआईवी

जो पुरुष, पुरुष के साथ संभोग करे (एमएसएम) वाक्य का इस्तेमाल ऐसे लोगों के समूह के लिए किया जाता है जो खुद को पुरुष कहते हैं और जो जानबूझकर और इच्छापूर्वक उन लोगों के साथ यौन व्यवहार में संलग्न होते हैं जो खुद को पुरुष मानते हैं।[1] एमएसएम सामाजिक पहचान के मामले में समलैंगिक से भिन्न होते हैं। इससे बेखबर कि समान लिंग के साथ यौन व्यवहार की इच्छा रखने वाले के रूप में ये पहचाने जाते हैं, इनका यौन संबंध पुरुषों के बीच सीमित होता है। 'समलैंगिकता' पुरुषों का आपस में केवल यौन संबंध नहीं है बल्कि इसका संबंध समान लिंग, जीवन ढंग, यौनिकता और अन्य संबंधों से है, जो भी हो, दोनों समूहों के बीच की यह खासियत अभी भी विवादित है और एमएसएम तथा समलैंगिक दोनों शब्दों का उपयोग इस अध्याय में एक–दूसरे के लिए किया गया है। 'एमएसएम' आज की तारीख में पहचान की बजाय आचरण प्रवृत्ति के रूप में स्वीकृत है।

पुरुषों के बीच यौन संबंध हर समाज एवं संस्कृति में मौजूद रहा है। यौन व्यवहार के इस रूप के साथ निंदा और शर्म की स्थितियां विभिन्न संस्कृतियों में अलग–अलग रही है। कुछ समाजों में एमएसएम घोर निंदनीय और वर्जित है जबकि कुछ समाजों में यह खुले व्यवहार में है और स्वीकृत है। जो भी हो, एचआईवी के मामले में, एमएसएम लोगों के बीच एचआईवी संक्रमण और संचारण के खतरे की स्थितियां सभी सामाजिक परिधियों से परे खासतौर से अधिक हैं। ये लोग बहुत अधिक कलंकित हैं और बहुत सारी गालियों के केन्द्र में हैं। यौनकर्म के दौरान कर्ता की भूमिका निभानेवाला व्यक्ति, अपने दूसरे साथी के लिए इतना निंदनीय नहीं होता है और सामान्य जन में वह अधिक स्वीकृत है।[2]

हाल ही में न्यूयार्क सिटी सर्वेक्षण में पाया गया कि लगभग प्रत्येक 10 पुरुषों में से, जिन्होंने अपने–आप को विपरीत लिंग के प्रति आकर्षित होने वाला बताया (अब से विपरीत लिंग कामी), एक व्यक्ति दूसरे पुरुषों के साथ सेक्स करता रहा है। विपरीत लिंग कामी शादीशुदा लोगों के 70 प्रतिशत पुरुष शादी के बावजूद पुरुषों से संभोग करते हैं। यह आचरण गे/समलैंगिकों और पुरुषों के साथ संभोग करने वाले पुरुष (एमएसएम) के बीच विभाजक रेखा है। इसका अर्थ यह है कि सुरक्षित यौन सूचनाएं विपरीत लिंग कामी और समलिंगी लोगों तक ही सीमित हैं और एमएसएम लोगों के महत्वपूर्ण उपसमूह पर ये ध्यान नहीं देतीं।[3]

---

1 एनसाइक्लोपीडिया डेफिनिशन। http://en.wikipedia.org

2 खान, शिवानंद; नाज फाउंडेशन इंटरनेशनल; "एमएसएम, एचआईवी/एड्स एंड ह्यूमन राइट्स इन साउथ एशिया"; 2004; पृ.3

3 डेनियल दे नून "मेनी स्ट्रेट मेन हैव गे" (सितंबर 18, 2006) http://www.webmd.com/content/article/127/116736.htm.

भारत में एमएसएम का प्रचलन पुरुष समुदाय के 8 से 50 प्रतिशत तक फैला हुआ है।[4] यूएनएड्स के रिपोर्ट के अनुसार मुंबई में पाए जाने वाले एचआईवी संक्रमण का 17 प्रतिशत एमएसएम से संबंधित है।[5] दूसरी ओर राष्ट्रीय एड्स नियंत्रण संगठन (नाको) के अनुसार 2005 में भारत में एमएसएम लोगों के बीच एचआईवी संक्रमण प्रसार की दर 8.74 प्रतिशत थी।[6] जो भी हो नाको के अनुसार एमएसएम लोगों के बीच एचआईवी के विश्वसनीय आंकड़ों की कमी है।[7] निंदनीय माने जाने के कारण बहुत से एमएसएम चैतन्य रूप में यौन अभिमुख नहीं होते और अपने समान–लिंग व्यवहार को सच्चाईपूर्वक स्वीकार नहीं करते। अक्सर, पुरुष खुद को एमएसएम नहीं मानता क्योंकि जिस पुरुष के साथ वह संभोग करता है उसे वह पुरुष नहीं मानता है।[8]

एचआईवी संवेदनशीलता

एचआईवी के प्रति एमएसएम की संवेदनशीलता के तमाम कारणों में से सबसे बड़ा कारण असुरक्षित संभोग है। जागरूकता की कमी के कारण यह व्यवहार प्रचलित है। विभिन्न अध्ययनों से पता चलता है कि पुरुषों में एचआईवी संक्रमण और संचरण रास्तों के समझ की कमी है। एचआईवी क्या है और यह कैसे फैलता है? इसके बारे में भी बहुत सी भ्रांतियां हैं।[9] इसी प्रकार की एक भ्रांति यह विश्वास है कि सभी प्रकार के यौन संचारित संक्रमणों की वाहक स्त्रियां होती हैं। शैक्षिक अभियानों द्वारा महिला सेक्स वर्करों को लक्ष्य किये जाने के कारण बहुत से लोग स्त्रियों से दूर रहते हैं।[10] गुदा संभोग को यौन संभोग की तुलना में सुरक्षित समझा जाता है क्योंकि इसकी कभी चर्चा नहीं होती।[11] बहुतों का मानना है कि तरुण–पूर्व अवस्था के पुरुष या स्त्री के साथ संभोग करना सुरक्षित होता है।

ऐसा भी माना जाता है कि युवा या बच्चों के साथ सेक्स करने से एचआईवी/एड्स दूर हो सकता है क्योंकि यौन–व्यवहार चर्चाओं में केवल वयस्कों की बात होती है जैसे कि 'पुरुषों का पुरुषों के साथ संभोग।[12] कुछ देशों में, यह अंधविश्वास है कि एचआईवी/एड्स को जवानी प्रदान करने वाली प्रचलित दवाइयों द्वारा रोका जा सकता है। इसके कारण लोगों की यह धारणा बनती है कि सुरक्षित सेक्स वैकल्पिक है जिससे यौन आधारित खतरों में बढ़ोत्तरी होती है। दूसरे देशों में जन स्वास्थ्य प्राधिकरण द्वारा जरूरी शोध सूचनाओं की बजाय कम जानकारी उपलब्ध कराए जाने के कारण असुरक्षित यौन व्यवहार की दर बहुत ऊंची है।[13] युवाओं में एचआईवी संपर्क का खतरा काफी अधिक है क्योंकि उनमें पुरुष–पुरुष यौन संबंध के प्रति उत्सुकता होती है और उनके पास सुरक्षा की मौलिक जानकारी नहीं होती।[14] एमएसएम संवेदनशीलता से जुड़े व्यावहारिक खतरे का एक दूसरा पहलू यह है कि अधिकांश एमएसएम 'कंडोम और कंडोम प्रयोग के प्रति नकारात्मक रुख अपनाते हैं।'[15]

4 मैक्केन्ना, नील; 1996 इन खान, शिवानंद : नाज फाउंडेशन इंटरनेशनल, "एमएसएम एंड एचआईवी/एड्स इन इंडिया", पृ. 6; जनवरी 2004, http://www.nfi.net/NFI%20 पब्लिकेशन/एसेज/2004/एमएसएम % 20 एचआईवी%20 एंड 20 इंडिया.पीडीएफ

5 यूएनएड्स (UNAIDs), 2006 रिपोर्ट आन ग्लोबल एड्स एपिडेमिक; "चैप्टर 5: ऐट रिस्क एंड नेग्लेक्टेड; फोर की पॉपुलेशन", पृ.111

6 नाको; "द एचआईवी/एड्स एपिडेमियोलॉजिकल सर्विलेंस एंड एस्टिमेशन रिपोर्ट", 2005, पृ.5, http://www.nacoontine.org/fnlapil06rprt.pdf.

7 नाको, 2000 इन खान, शिवानंद : नाज फाउंडेशन इंटरनेशनल, "एमएसएम एंड एचआईवी/एड्स इन इंडिया", पृ. 2; जनवरी 2004, http://www.nfi.net/NFI%20Publications/Essays/2004/MSM%20HIV%20and%20India.pdf

8 वही

9 यूएनएड्स, 2006 रिपोर्ट ऑन ग्लोबल एड्स एपिडेमिक, चैप्टर 5, ऐट रिस्क एंड नेग्लेक्टेड : फॉर की पॉपुलेशंस, पृ.111

10 नाज फाउंडेशन इंटरनेशनल; "सेक्सुअल हेल्थ वर्कशाप्स इन बांग्लादेश एंड इंडिया फॉर मेल्स हू हैव सेक्स विद मेल्स"; नाज की पुकार, 17/4/1996

11 वही

12 वही

13 यूएसएआईडी; 2004 इन यूएनएड्स, 2006 रिपोर्ट ऑन ग्लोबल एड्स एपिडेमिक, चैप्टर 5, ऐट रिस्क एंड नेग्लेक्टेड : फॉर की पॉपुलेशंस, पृ.112–113

14 आईसीएडी; "एचआईवी/एड्स एंड होमोफोबिया"; जून 2004; http://www.icad-cisd.com/content/pub_details.cfm?UD=113&CAT=9%E2%8C%A9=e

15 एचआईवी/एड्स एपिडेमियोलॉजी प्रोग्राम; "फैक्ट्स अबाउट... एचआईवी/एड्स इन मेन हू हैव सेक्स विद मेन", 10/2003, पृ.2; http://www.metrokc.gov/health/apu/epi/msm.pdf

इस विश्वास के कारण कि विषमलिंगी सेक्स समलैंगिकता से अधिक प्राकृतिक और श्रेष्ठ है, विषमलिंगी व्यवहार अधिकांश धर्मों और संस्कृतियों में प्रभावी है।[16] इस कलंक के कारण बहुत से मानवाधिकारों का हनन होता है और हिंसा, पुरुष बलात्कार, यौन दुर्व्यवहार और उत्पीड़न इन लोगों को झेलना पड़ता है। इसके परिणामस्वरूप एमएसएम, विशेष रूप से स्त्रैण पुरुषों में निम्न आत्मविश्वास, अक्षमता और उपेक्षित होने का भाव पाया जाता है। इसके कारण दुर्व्यवहार, हिंसा और सामाजिक अलगाव और अधिक बढ़ता है।[17]

एमएसएम लोगों के खिलाफ सामाजिक उपेक्षा बहुत सारे रूपों में प्रदर्शित होती है। विद्यालयों में छात्र और शिक्षक एमएसएम को उनकी स्त्रैण प्रकृति के कारण परेशान करते हैं जिसके कारण उनकी शिक्षा प्रभावित होती है और वे आगे की शिक्षा पूरी नहीं कर पाते हैं। अध्ययन बताते हैं कि एमएसएम लोगों को उनके धार्मिक नेता भी परेशान करते हैं।[18] यह भी पाया गया है कि अगर उनके रिश्तेदारों को उनके यौन व्यवहार के बारे में पता चल जाता है तो एमएसएम लोगों की समलैंगिकता को छुड़ाने के लिए उन्हें डॉक्टर से मिलवाया जाता है, पीटा जाता है, शादी करने के लिए दबाव डाला जाता है, उन्हें पैतृक अधिकार से वंचित किया जाता है और घर से बाहर निकाल दिया जाता है।[19] एमएसएम को गली के दबंगों और पुलिस की भी ज्यादती सहनी पड़ती है। दुर्भाग्यवश अक्सर दबंगों की पुलिस से मिलीभगत होती है इसलिए जब उनकी ज्यादतियों की शिकायत लेकर ये पुलिस के पास जाते हैं तो कोई कार्रवाई नहीं होती।[20]

'होमोफोबिया' (समलैंगिकों से डर का होना) पक्षपात का एक और कारण है जिसके कारण लोगों में समलैंगिकों के प्रति नकारात्मक प्रवृत्ति पैदा होती है। यह समलैंगिकता के प्रति डर या नापसंद से पैदा होती है।[21] लोगों को एचआईवी के बारे में पहली जानकारी उत्तरी अमेरिका के टोरंटो और सॉन फ्रांसिस्को जैसे शहरी केंद्रों के समलैंगिक उपसंस्कृतियों से मिली। इस कारण एचआईवी और समलैंगिकता को लगातार जोड़ा गया जिससे वैज्ञानिकों ने इसका झूठा नामकरण 'समलैंगिक संबंधी प्रतिरक्षा अभाव' कर दिया।[22] समलैंगिकता के बारे में नकारात्मक भाव रखने वाले लोगों के कारण सभी एचआईवी प्रभावित व्यक्तियों, विशेष रूप से समलैंगिक और उभयलिंगी पुरुषों के प्रति यह भावना बढ़ी। अक्सर यह मान लिया जाता है कि सभी समलैंगिक को एचआईवी/एड्स होता है और इस प्रवृत्ति के कारण एमएसएम लोगों के साथ पक्षपात होता है।[23] एमएसएम को शर्म, सदमा, आत्म–आरोप, विश्वासहीनता और आशाहीनता से जूझना पड़ता है। इसके कारण उनमें आत्म–पीड़ा और आत्महत्या जैसी खतरनाक आदतें,[24] सेक्स आक्रामकता, सुरक्षित सेक्स के प्रति अवहेलना और ड्रग या शराब की बुरी आदत पैदा होती है।[25] पक्षपात उन्हें भूमिगत होने को विवश करता है जिसके कारण आंकड़ा इकट्ठा करने में और एमएसएम से व्यवहार करने की योग्यता हासिल करने में कठिनाई आती है तथा उनमें एचआईवी संक्रमण की संभावना और बढ़ जाती है।

---

16 आईसीएडी; "एचआईवी/एड्स एंड होमोफोबिया"; जून 2004; http://www.icad-cisd.com/content/pub_details.cfm?ID=113&CAT=9%E2%8C%A9=e

17 पूर्वोक्त टिप्पणी, 16; पृ.4–5

18 वही

19 वही

20 वही

21 आईसीएडी; "एचआईवी/एड्स एंड होमोफोनिया"; जून 2004; http://www.icad-cisd.com/content/pub_details.cfm?ID=113&CAT=9%E2%8C%A9=e

22 वही

23 कानाडियन एड्स सोसायटी, कनाडियन एचआईवी/एड्स लीगल नेटवर्क, एंड हेल्थ कनाडा; 'द लिंक्स बिटवीन एचआईवी/एड्स एंड होमोफोबिया'; 3/1999; www.aidslaw.ca/maincontent/issues/gaylesbian/e-info-gla2.pdf.

24 पूर्वोक्त टिप्पणी 23

25 क्रॉसबी, मिकेल, पीएचडी एंड दे कारलो, पामेला; यूनिवर्सिटी ऑव कैलिफोर्निया, सेन फ्रांसिस्को सेंटर फॉर एड्स प्रिवेन्सन स्टडीज; "व्हाट आर मेन हू हैव सेक्स विद मेन (एमएसएम), एचआईवी प्रिवेंशन नीड्स", 12/2000; http://www.caps.ucsf.edu/MSMrev.html

अध्ययनों से पता चलता है कि विषमलिंगी लोगों की तुलना में एमएसएम समुदायों में ड्रग के उपयोग की दर काफी अधिक है।[26] सुई से ड्रग लेने वाले (IDUs), एमएसएम अगर संक्रमित सुईयों का एक साथ उपयोग करते हैं तो वे खतरे में हैं।[27] ड्रग दुरुपयोग का संबंध यौनकार्य बढ़ाने से जुड़ता है जो अक्सर असुरक्षित होता है[28] और उन्हें एचआईवी के उच्च खतरे की ओर धकेल देता है। असुरक्षित सेक्स के बहाने के रूप में सामान्यतः उपेक्षा के भाव को लिया जाता है; बहुतों का विश्वास है कि दवाइयां काम शक्ति को बढ़ाती हैं और जब वे ऐसे लोगों के संपर्क में आते हैं तो वे संभोग करना पसंद करते हैं।[29]

एमएसएम समुदायों से एचआईवी का संक्रमण, दूसरों में आसानी से पहुंच जाता है। पुरुष–पुरुष सेक्स को कलंकित माने जाने के कारण अक्सर यह छुप कर किया जाता है और एमएसएम की महिला साथी अक्सर अपने साथी के अन्य यौन संबंधों से अपरिचित रहती है। इसके कारण महिलाएं खतरे में पड़ जाती हैं और अगर वे गर्भवती हुई तो उनकी संतान भी खतरे में पड़ जाती है।[30] आंध्र प्रदेश में 2005 के अध्ययन से पता चलता है कि 42 प्रतिशत एमएसएम शादीशुदा हैं और 50 प्रतिशत का पिछले 3 महीनों में महिलाओं के साथ यौन संबंध रहा है और इनमें से आधे से भी कम ने कंडोम का उपयोग किया था।[31]

अपने यौन संबंध के पता चल जाने के डर, आर्थिक स्थिति और निदान उपलब्ध कराने वाले की उपेक्षा के कारण शायद ही कभी एमएसएम चिकित्सा सुविधा ले पाते हैं।[32] दोहरा पक्षपात, यह है कि उनकी एचआईवी स्थिति के आधार पर पक्षपात होता है और उनके यौन रुझान के आधार पर भेदभाव भी पाया जाता है।[33] बहुत सारे देशों में इस बात की पर्याप्त चिकित्सकीय जानकारी नहीं है कि एमएसएम, विशेष रूप से जो दोनों लिंगों से जुड़ा हो, ऐसे लोगों के साथ कैसा व्यवहार किया जाए।[34]

बहुलैंगिक (ट्रांसजेंडर) समुदाय

नाको के अनुमान के अनुसार बहुलैंगिक समुदाय में एचआईवी संक्रमण 43.9 प्रतिशत तक हो सकता है।[35] भारत में ऐसे पुरुष जो अपनी लैंगिक संरचना के कारण स्त्रियोचित व्यवहार करते हैं या जो आदर्श पुरुष को आकर्षित करते हैं उन्हें कोठी कहा जाता है। वे स्वयं मैथुन करने की बजाय एनल या ओरल (गुदा मैथुन या मुख) मैथुन कराना पसंद करते हैं। यहां तक कि उनका व्यवहार स्त्रैण नहीं होने पर भी उन्हें कोठी ही कहा जाता है। वे केवल वास्तविक पुरुष के साथ सेक्स करना पसंद करते हैं और अपने जैसे किसी अन्य व्यक्ति से सेक्स करना पसंद नहीं करते। फिर भी, कोठी स्त्रियों से विवाह कर सकते हैं। भारतीय हिजड़ा

---

26 स्टॉल, आर. एंड विलि, जे.; "ए कम्पैरिजन ऑव ड्रग यूज पैटर्न्स ऑव होमोसैक्सुअल एंड हेट्रोसेक्सुअल मेन : द सान फ्रांसिस्को मेन्स हेल्थ स्टडी"; 1998 इन क्रास्बी, मिकेल, पीएचडी एंड देकारलो, पामेला; यूनिवर्सिटी ऑव कैलिफोर्निया सान फ्रांसिस्को सेंटर फॉर एड्स प्रिवेंशन स्टडीज; "व्हाट आर मेन हू हैव सेक्स विद मेन (एमएसएम), एचआईवी प्रिवेंशन नीड्स"; 12/2000: http://www.caps.ucsf.edu/MSMrev.html.

27 पूर्वोक्त टिप्पणी, 28

28 रिपोर्ट बैक फ्रॉम एमएसएम आईडीयू फोरम, 4/2002

29 पूर्वोक्त टिप्पणी, 30

30 यूएनएड्स; "मेन हू हैव सेक्स विद मेन"; एक्सेस्ड ऑन 4/7/2006; http://www.unaids.org/en/issues/affected_communities/men_who_have_sex_with_men.asp

31 दानदोना एट अल., 2005 इन यूएनएड्स, 2006 रिपोर्ट ऑन ग्लोबल एड्स एपिडेमिक "चैप्टर 5 : एट रिस्क एंड नेग्लेक्टेड: फोर की पॉपुलेशन्स", पृ.112

32 यूनाइटेड स्टेट्स ऑव अमेरिका डिपार्टमेंट ऑव हेल्थ एंड ह्यूमन सर्विसेज; "एचआईवी/एड्स एंड ट्रांसजेंडर पर्सन्स", पृ.1; http://phas.os.dhhs.gov/aids/factsheets/FSTransgender.pdf#search = 'hiv%2 Faids % 20 and % 20 transgender % 20 persons % 20%20 Defining % 20 transgender'.

33 कनाडियन एड्स सोसायटी, कनाडियन एचआईवी/एड्स लीगल नेटवर्क, एंड हेल्थ कनाडा; 'द लिंक्स बिटवीन एचआईवी/एड्स एंड होमोफोबिया'; 3/1999; www.aidslaw.ca/maincontent/issues/gaylesbian/e-info-gla2.pdf.

34 काम्मेरर, निना, मासन, थेरेसा एंड कन्नर्स, मार्गरेट; "ट्रांसजेंडर हेल्थ एंड सोशल सर्विस नीड्स इन द कंटेक्स्ट ऑव एचआईवी रिस्क", 1999; http:/www.symposion.com/ijt/hiv_risk/kammerer.htm.

35 एचआईवी/एड्स एपिडेमियोलॉजिकल सर्विलेंस एंड एस्टिमेशन रिपोर्ट, 2005, नाको।

भी ट्रांसजेंडर समुदाय का अंग है। हिजड़ा शब्द का उपयोग ऐसे लोगों के लिए किया जाता है जो खुद को न तो पुरुष मानते हैं न स्त्री। वे चाहते हैं कि उन्हें तीसरे लिंग के रूप में जाना जाए। हिजड़े दूसरे लिंग का कपड़ा पहनते हैं और वे मजबूत धार्मिक, सांस्कृतिक और सामाजिक समुदाय के अंग होते हैं। सभी के साथ तो नहीं पर काफी हिजड़ों का पारंपरिक बधियाकरण किया गया होता है।[36] बहुतों का मानना है कि वे पुरुष शरीर में स्त्री होते हैं।[37] उनकी आर्थिक विसंगति और पुलिस द्वारा लगातार सताए जाने के अलावा उनके विभिन्न साथियों के साथ सेक्स की प्रकृति के कारण उनमें एचआईवी संक्रमण बढ़ जाता है। उनकी निर्वासित स्थिति भी उनके सामान्य जीवन जीने की कोशिश को कठिन बना देती है।[38] नकारात्मक आत्मछवि और विश्वासहीनता, जो कि सामाजिक हिकारत से पैदा होती है, के कारण ये असुरक्षित यौनकर्म, जीविका हेतु सेक्स कार्य और लगातार निम्न कार्य करने को मजबूर होते हैं।[39] हिजड़ों और कोठियों को सामाजिक उपेक्षा के कारण अक्सर शिक्षा, रोजगार और घर से वंचित रहना पड़ता है।[40] पुरुष–पुरुष सेक्स कार्य उनमें संक्रमण का महत्वपूर्ण कारक है। गरीबी और बेरोजगारी के कारण हिजड़ा, कोठी और दूसरे पुरुष, मर्दों को शरीर बेचते हैं। यह आजीविका का उपाय है जो उन्हें और उनके परिवार को आधार देता है।[41] ट्रांसजेंडर समुदायों में स्त्री शरीर की चाहत बढ़ रही है और इसी कारण एचआईवी की संभावना भी बढ़ रही है क्योंकि वे हार्मोन की सुई का प्रयोग साथ–साथ करते हैं और सिलिकॉन का असुरक्षित उपयोग करते हैं।[42] सेक्सुअल अभिव्यक्ति के द्वारा अपनी पहचान दिखाने की प्रवृत्ति की असुरक्षित सेक्स संबंधों को प्रेरित करती है।[43]

ट्रांसजेंडर्स समुदायों में स्त्रैण पुरुष ट्रांसजेंडर्स (MTFs) सबसे अधिक खतरे में हैं क्योंकि ये अपने साथी द्वारा असुरक्षित ढंग से ओरल एवं एनल संभोग को पसंद करते हैं।[44] गिरफ्तार होने के बाद ट्रांसजेंडर्स को पुरुष सुधार संस्थानों में भेजा जाता है। इन जेलों में साथ रहने वालों और गार्डों द्वारा जबरन सेक्स और दुर्व्यवहार के कारण ये संक्रमण का प्रसार करते हैं।[45]

एमएसएम, अपराधीकरण और कानून

एमएसएम अक्सर उपेक्षित होने से अपराधी बनने को मजबूर होते हैं। अपराधीकरण के कारण एमएसएम की एचआईवी निरोधक जानकारी, सुविधाएं, इलाज और सुरक्षा पाने के अवसर कम हो जाते हैं।[46] बहुत सारे

---

36 खान, शिवानंद : नाज फाउंडेशन इंटरनेशनल, "एमएसएम एंड एचआईवी/एड्स एंड ह्यूमन राइट्स इन साउथ एशिया", 2004, पृ.3

37 नाज फाउंडेशन इंटरनेशनल, "सेक्सुअल हेल्थ वर्कशॉप्स इन बांग्लादेश एंड इंडिया फॉर मेन्स हू हैव सेक्स विद मेल्स, नाज की पुकार; 17/4/1996

38 द इंटरनेशनल जर्नल ऑव ट्रांसजेन्डरिज्म, www.osoph.dhhs/aids/factsheet/transgender/html.

39 यूनाइटेड स्टेट्स ऑव अमेरिका डिपार्टमेंट ऑव हेल्थ एंड ह्यूमन सर्विसेज; "एचआईवी/एड्स एंड ट्रांसजेंडर पर्सन्स", पृ.1; http://phs.os.dhhs.gov/aids/factsheets/FSTransgender.odf#search ='hiv%2 Faids%20and%20transgender %20persons%20% Defining%20transgender'.

40 यूनाइटेड स्टेट्स ऑव अमेरिका डिपार्टमेंट ऑव हेल्थ एंड ह्यूमन सर्विसेज; "एचआईवी/एड्स एंड ट्रांसजेंडर पर्सन्स", पृ.1; http://phas.os.dhhs.gov/aids/factsheets/FSTransgender.pdf#search='hiv%2Faids%20and%20transgender%20persons%20% Defining%20transgender'.

41 पूर्वोक्त टिप्पणी, 23; पृ.4

42 यूनाइटेड स्टेट्स ऑव अमेरिका डिपार्टमेंट ऑव हेल्थ एंड ह्यूमन सर्विसेज; "एचआईवी/एड्स एंड ट्रांसजेंडर पर्सन्स", पृ.1; http://phs.os.dhhs.gov/aids/factsheets/FSTransgender.pdf#search = 'hiv%2Faids%20and%20transgender%20persons%20% Defining%20transgender'.

43 काम्मेरेर, निना, मासन, थेरेसा एंड कन्नर्स, मार्गरेट; "ट्रांसजेंडर हेल्थ एंड सोशल सर्विस नीड्स इन द कंटेक्स्ट ऑव एचआईवी रिस्क", 1999; http:/www.symposion.com/ijt/hiv_risk/kammerer.htm.

44 डेन्नी, डल्लास एम.ए.; ट्रांसजेंडर्ड यूथ ऐट रिस्क फॉर एक्सप्लायटेशन, एचआईवी, हेट क्राइम्स", 3/1/1997; http://www.aidsinfonyc.org/Q-zone/youth.html.

45 पूर्वोक्त टिप्पणी 46

46 यूएसएआईडी; 2004 इन यूएनएड्स 2006 रिपोर्ट ऑन ग्लोबल एड्स एपिडेमिक; "चैप्टर 5: ऐट रिस्क एंड नेग्लेक्टेड; फोर की पॉपुलेशन", पृ.112

एमएसएम यौन स्वास्थ्य एवं कल्याण एजेंसियों द्वारा छोड़ दिए जाते हैं या स्वयं ही अलग हट जाते हैं क्योंकि उन्हें डर होता है कि कानूनी नतीजे उन पर समलैंगिक का ठप्पा लगा देंगे। एमएसएम का अपराधीकरण उनमें एचआईवी संक्रमण को बढ़ावा देता है।[47] बहुत सारे एमएसएम को अपराधीकरण एचआईवी/एड्स निरोधक उपाय पाने, सूचनाएं, सेवाएं, इलाज और सहयोग पाने के मामले में उन्हें अयोग्य सिद्ध करता है। ये पहचान लिए जाने के भय से यौन स्वास्थ्य एवं कल्याण एजेंसियों द्वारा या तो छोड़ दिये जाते हैं या स्वयं ही किनारा कर लेते हैं। एमएसएम अक्सर पुलिस द्वारा सताए जाते हैं और इन्हें बलात्कार, सामूहिक बलात्कार, पिटाई, यौन आक्रमण, लूट–खसोट, जेल भेजने की धमकी, ब्लैकमेल और सामान्य स्थलों पर जाने पर रोक का सामना करना पड़ता है।[48] उपेक्षा और अपराधीकरण दोनों उस कलंक को और बढ़ाते हैं जिससे एमएसएम लोगों का व्यवहार बुरी तरह प्रभावित होता है। हाल के स्वीडेन के अध्ययन रिपोर्ट से पता चलता है कि समान लिंग सेक्स अभी भी लगभग 70 देशों में अपराधीकृत नहीं हुआ है।[49]

अंतर्राष्ट्रीय अनुभव

ऐतिहासिक रूप से, नेपोलियन कोड के आने के साथ 1791 से भी पहले से सोडोमी (समलैंगिक) कानून इस पर रोक लगाते हैं।[50] 1994 में दक्षिण अफ्रीका पहला देश बना जिसने अपने संविधान में यौन प्रवृत्ति के आधार पर होने वाले उत्पीड़न पर रोक लगायी।[51] मई 1998 में दक्षिण अफ्रीका संविधान सभा ने समलैंगिक सेक्स पर रोक लगाने वाले बहुत सारे कानूनों को हटा दिया।[52] समलैंगिक और लेस्बियन समानता के लिए बने राष्ट्रीय मंडल और दक्षिण अफ्रीका के संवैधानिक न्यायालय के न्याय मंत्री के अनुसार सहमति के साथ समलैंगिकता के अपराधीकरण से व्यक्तिगत सुरक्षा, समानता के कानून और गरिमा के नियम का हनन होता है। न्यायालय ने आगे यह भी जोड़ा कि समानता का पता इस बात से चलता है कि विविधता को कितना स्वीकार किया जाता है और उसे कितना सम्मान दिया जाता है।[53]

अमेरिका में, 2003 में टेक्सास के लारेंस में सर्वोच्च न्यायालय के ऐतिहासिक निर्णय के होने तक सोडोमी क्रमशः धीरे–धीरे अपराधीकरण से मुक्त होती रही। न्यायालय ने माना कि सोडोमी के विरोधी नियमों को राज्य द्वारा मान्यता न दी जाय जिससे कि व्यक्ति के व्यक्तिगत एवं निजी जीवन में हस्तक्षेप हो सकता है। न्यायालय का बल समलैंगिकों और विषम लैंगिकों के समान सुरक्षा आधार पर नहीं बल्कि गोपनीयता के आधार पर था, हालांकि इससे सहमत लोगों ने समान सुरक्षा के मुद्दे के आधार पर भी निर्णय लिए हैं।[54] 1996 में रोमर वी. एवांस में सर्वोच्च न्यायालय ने कोलरैडो संविधान संशोधन किया जिसने राज्य कानूनों और म्युनिसिपल तथा जिला अध्यादेशों पर रोक लगायी, इसके कारण अमरीकी संविधान के समान सुरक्षा नियम की अवहेलना करनेवाले पक्षपात (समलैंगिकों के खिलाफ असंवैधानिक ढंग से) पर रोक लगी।

मानवाधिकार का यूरोपीय न्यायालय, जो कि मानव अधिकारों पर यूरोपीय परंपरा को लागू करता है और उसकी व्याख्या करता है, समान लिंग यौन व्यवहार अधिकार के मामले में सर्वोत्तम है। डडजन बनाम (यूके)

---

47 यूनएड्स 2006 रिपोर्ट ऑन ग्लोबल एड्स एपिडेमिक; "चैप्टर 5: ऐट रिस्क एंड नेग्लेक्टेड; फोर की पॉपुलेशन", पृ.112

48 पूर्वोक्त टिप्पणी 3; पृ.7

49 एसआईडीए (2005), एलजीबीटीआई इस्यूज इन द वर्ल्ड : ए स्टडी ऑन स्वेडिश पॉलिसि एंड ऐडमिनिस्ट्रेशन ऑव लेस्बियन, गे, बाइसेक्सुअल ट्रांसजेंडर एंड इंटरसेक्स इस्यूज इन इंटरनेशनल डेवलपमेंट कोआपरेशन : स्टॉकहोम : गवरमेंट ऑफिस ऑव स्वीडेन

50 आन्द्रे क्रॉवेल, "ह्यूमन राइट्स एंड सेक्सुअल ओरिएन्टेशन आर द डिफिकल्ट बैलेंस बिटवीन मोरलिटि एंड लॉ – ए कम्परिजन ऑव वेस्टर्न, इस्टर्न एंड सेंट्रल यूरोपियन कंट्रीज, स्ट्राइकिंग डाउन सोडोमी स्टेटस – द इंटरनेशनल लीगल सेनारिओ, पृ.38, ह्युमजिन्सी।

51 गायज रीप रिवार्ड स्लोली इन पोस्ट – अपार्थेइड साउथ अफ्रीका जेस्सी डीटर, http://journalism.berkeley.edu/projects/southafrica/features/gaysprinterfriendly.html

52 स्ट्राइकिंग डाउन सोडोमी स्टेटस – द इंटरनेशनल लीगल सिनारियो, पृ.39, ह्युमजिन्सी

53 1999(1) एसए 6 (सीसी) (साउथ अफ्रीका)

54 539 यूएस 558 (यूनाइटेड स्टेट्स) 2003

में मानवाधिकारों के यूरोपीय न्यायालय ने कहा कि आपसी सहमति रखने वाले समलैंगिक अधिनियमों का अपराधीकरण मानवाधिकारों पर यूरोपीय समझौते के उस अनुच्छेद का हनन है जो कि व्यक्ति को उसकी निजी जिंदगी का सम्मान किए जाने का अधिकार देता है।[55]

जो भी हो, डडजन का फैसला सभी यूरोपीय देशों में अपने आप लागू नहीं हुआ। इसका प्रमाण यह है कि आयरलैंड बनाम नारीस (1988) और साइप्रस बनाम मोडीनस बनाम साइप्रस (1993) में यही फैसला तब जाकर लिया गया जब यूरोपियन न्यायालय ने कानूनी प्रक्रिया अपनायी।[56] 2003 में आस्ट्रिया बनाम एसएल के न्यायालय ने आस्ट्रिया के उस अधिनियम को निरस्त कर दिया जिसके अनुसार सामान्य यौन संबंधों की तुलना में दो पुरुषों की आपसी सहमति से सेक्स के लिए जरूरी न्यूनतम उम्र भिन्न रखी गयी थी। यूरोपियन देशों में गे, लेस्बियन और विपरीत लिंग कामी सेक्स के लिए उम्र के भिन्न मानदंड के खत्म किए जाने को सामंजस्य वृद्धि के रूप में देखा जाए। इस तथ्य को भी ध्यान में रखना चाहिए कि पैनल कोड में अल्पसंख्यक समलैंगिकों के खिलाफ बहुसंख्यक इतरलिंगियों के प्रति पक्षधरता पहले से तय कर प्रस्तुत की जाती है। न्यायालय ने माना कि यह कानून पक्षपात न किये जाने की गारंटी देने वाले अनुच्छेद–14 का और मानवाधिकार के यूरोपीय समझौते के अनुच्छेद–8 का, जो किसी के व्यक्तिगत जीवन के सम्मान किए जाने की गारंटी देता है, हनन करता है।[57]

पुर्तगाल के सलग्वेरा दा सिल्वा मौटा में यूरोपीय कोर्ट ने घोषणा की कि सिर्फ इसलिए किसी समलैंगिक पुरुष को बच्चा रखने का अधिकार न देना क्योंकि वह समान लिंग में आकर्षण रखता है और उससे यौन व्यवहार करता है अनुच्छेद–8 का उल्लंघन है जो व्यक्ति को निजी जिंदगी का अधिकार देता है। कोर्ट ने घोषणा की कि यह यौन रुझान के आधार पर पक्षपात भी है जो अनुच्छेद–14 के पक्षपात निरोध के नियम का उल्लंघन करता है।[58] इसी प्रकार हांगकांग कोर्ट में पहली बार, लियांग में न्याय सचिव ने भी कहा कि पुरुष जो पुरुष के साथ करता है और पुरुष जो महिला के साथ सेक्स करता है इनके प्रति व्यवहार में असमानता कानून की नजर में पक्षपात है। इसने चुनौती दिए गए सभी अपराधी अध्यादेशों की व्यवस्था को असंवैधानिक मानते हुए निरस्त कर दिया।[59] आस्ट्रेलिया के तूनेन में संयुक्त राष्ट्र मानवाधिकार कमेटी ने पाया कि आस्ट्रेलियाई कानूनों द्वारा समलैंगिकता को अपराध मानना तर्कसंगत नहीं है और यह सिविल एवं राजनीतिक अधिकारों के अंतर्राष्ट्रीय शपथपत्र के अनुच्छेद–17 के अंतर्गत दिए गए व्यक्ति के गोपनीयता के अधिकार पर निरंकुश हस्तक्षेप है। कमेटी ने ऐसे कानूनों को निरस्त करने की संस्तुति की।[60]

यूके के गुडबिन ने मौलिक स्वतंत्रता और मानव अधिकारों की रक्षा करने वाले यूरोपीय कन्वेंशन के अनुच्छेद–8, 12, 13 और 14 के अंतर्गत नौकरी, सामाजिक सुरक्षा, पेंशन और शादी के मामले में ट्रांस सेक्सुअल के साथ गलत व्यवहार को चुनौती दी। न्यायालय ने माना कि लिंग परिवर्तन की मान्यता के रिकार्ड और जन्म प्रमाण–पत्र, हेर–फेर में सरकार की असफलता, समझौते का उल्लंघन है। विशेष रूप से कोर्ट ने माना कि यूके नियमों द्वारा उनके विवाह के अधिकार (अनु. 12) और निजी जीवन के सम्मान के अधिकार का उल्लंघन हुआ है। महत्वपूर्ण ढंग से कोर्ट ने यह भी माना कि मेडिकल विवाद कानूनी मुद्दों में प्रासंगिक नहीं है और ट्रांससेक्सुअल की मध्यवर्ती लिंग स्थिति न तो जारी रखने लायक थी न ही स्वीकार करने योग्य थी।[61]

55 7525/76 (1981) इसीएचआर 5 (22 अक्टूबर 1981) यूरोपियन कोर्ट ऑव ह्यूमन राइट्स

56 स्ट्राइकिंग डाउन सोडोमी स्टेटस – द इंटरनेशनल लीगल सेनारियो, पृ.40, हुमजिन्सी

57 453390/99 (2003) इसीएचआर 22 (9 जनवरी 2003) यूरोपियन कोर्ट ऑव ह्यूमन राइट्स, http://www.worldlii.org/eu/cases/ECHR/2003/22.html.

58 33290/96 (1999) इसीएचआर 176 (21 दिसंबर 1999)

59 (2005) एचकेइके 1334 (कोर्ट ऑव फस्ट इंस्टेंस) (हांग कांग)।

60 ह्यूमन राइट्स कमिटी, कम्यूनिकेशन न. 488/1992, 31 मार्च 1994, सीसीपीआर/सी/50/डी/488/1992 द

61 28957/95 (2002) इसीएचआर 588 (11 जुलाई 2002) (यूरोपियन कोर्ट ऑव ह्यूमन राइट्स)

भारत

भारतीय पैनल कोड, 1860 अनुच्छेद–377 के अंतर्गत अप्राकृतिक शारीरिक संसर्ग को अपराध योग्य मानता है और इसे उम्रकैद अथवा 10 वर्ष तक की कैद तथा अर्थ–दंड के साथ दंडनीय बनाता है। अपराध को दिखाने के लिए लिंग प्रवेश जरूरी है। अनुच्छेद का एक मजेदार पक्ष यह है कि यह सहमति–जन्य और जबरदस्ती सेक्स के बीच कोई विभेद नहीं करता। इस प्रकार दो समलैंगिक वयस्कों के बीच सहमति जन्य सेक्स को भी अपराधयोग्य ठहराया गया है। अनुच्छेद–377 'लिंग प्रवेश' को परिभाषित न करने के मामले में अस्पष्ट है। इस अनुच्छेद में पिनाइल/वैजिनल को छोड़कर सभी प्रकार के 'लिंग प्रवेश' को अपराध योग्य बताने की क्षमता है।

इस अनुच्छेद ने अपराध योग्य समलैंगिकता और समान–सेक्स व्यवहार का गलत अर्थ लगाया है। अनुच्छेद के भाषा के अंतर्गत, सोडोमी को दंडित किया जाना चाहिए, न कि समलैंगिकता को/यद्यपि अधिकतर जगहों[62] पर, इस अनुच्छेद ने लेस्बियनों को दोषी करार नहीं दिया है, इसने उन्हें भयभीत किया है। इस अनुच्छेद का सबसे प्रमुख प्रयोग समलैंगिकों को धमकाने और ब्लैकमेल करने के लिए है। अधिकतर प्रभावितों में से कुछ समूह वे हैं जो एचआईवी/एड्स से संबंधित मुद्दों के लिए आउटरीच वर्कर के रूप में काम करते हैं। भारत में एमएसएम के पांच शहरों का एक सर्वे यह प्रदर्शित करता है कि एचआईवी/एड्स और एचआईवी/एड्स के लिए एमएसएम संक्रमण के बारे में जागरुकता फैलाने के लिए दोस्तों के माध्यम से शिक्षा सर्वश्रेष्ठ प्रभावी तरीका है।[63] फिर भी, किसी कानूनी सुरक्षा की अनुपस्थिति में, साथी शिक्षक अनुच्छेद–377 की सीमा के अंतर्गत पुलिस और दूसरों से आतंक का सामना करते हैं।

जुलाई 2001 में, एक एमएसएम समुदाय में आउटरीच वर्कर्स तथाकथित रूप से चलाए गए एक समलैंगिक सेक्स रैकेट और अपने ऑफिस में पोर्नोग्राफिक फिल्म दिखाए जाने के आरोप में गिरफ्तार किए गए थे। वे अनुच्छेद–377, आईपीसी के अंतर्गत दंडित किए गए थे। उनकी बेल दो बार अस्वीकृत कर दी गयी। एक बार लखनऊ के प्रमुख न्यायिक जज द्वारा और फिर लखनऊ के जिला जज द्वारा, यह कहा गया कि वे "पूरे समाज को दूषित" कर रहे थे तथा यह कि "अभियुक्त का कार्य समाज के लिए अभिशाप जैसा है।" उनकी बेल इसलिए भी अस्वीकृत कर दी गयी क्योंकि समलैंगिकता "भारतीय संस्कृति के विरुद्ध" है।[64] चारों अभियुक्तों के ऊपर एक मेडिकल परीक्षण किया गया लेकिन अनुच्छेद–377 के अंतर्गत उन्हें दोषी करार देने के लिए कोई साक्ष्य नहीं पाया गया। इस घटना के कुछ ही दिन पहले लखनऊ में एड्स जागरुकता से संबंधित पर्चा बांटने के आरोप में 1980 के राष्ट्रीय सुरक्षा अधिनियम के तहत आउटरीच वर्कर्स को फटकार लगायी गयी थी।[65] अगस्त 2004 में दिल्ली के एक वीआईपी क्षेत्र में आनंद लोक में दोहरे हत्याकांड में दो समलैंगिक पुरुषों क़ी हत्या के मामले में मीडिया ने नकारात्मक भूमिका निभायी।[66]

जनवरी 2006 में, गैरकानूनी रूप से एक गे रैकेट चलाने के लिए और "अप्राकृतिक सेक्स" में लिप्त होने के लिए चार समलैंगिक पुरुषों को गिरफ्तार किया गया। द नेशनल कैम्पेन फॉर सेक्सुअलिटि राइट्स ने पुलिस की इस रिपोर्ट का खंडन किया, जिसमें कहा गया था कि उसने उन्हें पिकनिक मनाते समय गिरफ्तार किया गया था, जबकि पुलिस ने उन्हें उनके अपने–अपने घरों से गिरफ्तार किया था। वास्तव में बहुत कम मुकदमे अदालत तक पहुंच पाते हैं, जबकि कानून, ऑपरेशन के द्वारा लगातार एक प्रभावी साधन बना रहता

---

62 इस मामले को छोड़कर कि गुजरात में तरुणलता/तरुण कुमार ने अपना महिला से पुरुष में ऑपरेशन द्वारा लिंग परिवर्तन कराया और एक महिला से शादी की। उसके पिता ने इस शादी के खिलाफ गुजरात हाईकार्ट में याचिका दायर की (जोजेफ शेरी, दि लॉ एंड शेम–सेक्स सेक्सुलिटी इन इंडिया; पृष्ठ 150–154, 1996; http://www.hsph.harvard.edu/qrhf-asia/suchana/0909/rh374.html).

63 एमएपी 2005 इंडिया एपिडेमिक ऑव एब्यूज : पुलिस हराशमेंट ऑव एचआईवी/एड्स आउटरीच वर्कर्स इन इंडिया, ह्यूमन राइट्स वॉच, 7/2002

64 नारायण सिद्धार्थ, ए क्वीअर केस ऑव 377, www.sorai.net/journal/05_pdf/10/06_siddharth.pdf

65 "द सहयोग अफेयर", द हिंदू, 19/5/2000

66 हिंदुस्तान टाइम्स, 17 अगस्त, 2004

है। पुलिस ब्लैकमेल, हिंसा में लिप्त होकर और मुद्रा तथा अन्य सहायता प्राप्त कर, कभी–कभी सेक्सुअली भी प्रताड़ित कर काम करती रहती है। यह प्रवृति एमएसएम लोगों के बीच एचआईवी/एड्स के प्रतिबंध के खिलाफ खड़ी होती है और पुरुष बलात्कार की रिपोर्ट को हतोत्साहित करती है। एमएसएम स्वास्थ्य संबंधी सुविधाएं पाने से कतराते हैं क्योंकि इस दौरान उनका मजाक उड़ाया जाता है। पुलिस के साथ–साथ प्रशासक भी समलैंगिकता के प्रति कई रूपों में अपना डर (होमोफोबिया) प्रदर्शित करते हैं जैसे – सामूहिक एवं व्यक्तिगत स्थानों से गिरफ्तारी को बढ़ावा देना, समलैंगिकता के लिए उपयोगी प्रकाशनों पर प्रतिबंध लगाना, समलैंगिकता के आधार, जिन्हें धमकी दी जा रही हो उन्हें सुरक्षा न देना, पक्षपात की शिकायतों पर ध्यान न देना, मूल अधिकारों का उल्लंघन, पुलिस शत्रुता और क्रूरता आदि।

अनुच्छेद–377 को कानूनी चुनौती देने का इतिहास 1994 से शुरू होता है। तिहाड़ जेल में बहुत सारे एमएसएम के बंद होने के बाद कंडोम वितरण की सलाह दी गई लेकिन जेल के इंस्पेक्टर जनरल ने यह कहते हुए इस सलाह को नकार दिया कि यह समलैंगिकता को समर्थन देना कानून के खिलाफ है। बाद में, एड्स भेदभाव विरोधी आंदोलन (एबीवीए/एड्स पक्षपात विरोधी अभियान), एक ऐसा समूह जो एड्स पक्षपात के विरुद्ध अभियान चलाता है, के लोगों के जेल के लोगों के बीच कंडोम वितरण के लिए पीआईएल दायर किया और संबद्ध अधिकारियों से प्रार्थना की कि समान सेक्स के लोगों में सेक्स रुचि रखने वालों या ऐसे लोग जो एचआईवी/एड्स से संक्रमित हैं उन कैदियों को अलग रखा जाए। उन्होंने अनुच्छेद–377 को निरस्त करने की मांग की क्योंकि यह गोपनीयता और समानता के अधिकार का उल्लंघन करता है। इस आवेदन पर आगे किसी ने ध्यान नहीं दिया और बाद के वर्षों में नाज फाउंडेशन ने इस कारण के लिए नया पीआईएल दायर किया।[67]

वर्ष 2001 में दिल्ली हाई कोर्ट ने नाज फाउंडेशन इंटरनेशनल ने इंडियन पैनल कोड के अनुच्छेद–377 को निरस्त करने के लिए एक रिट पिटिशन दिया। इसने मांग की कि वयस्कों के बीच सहमतिपूर्ण व्यक्तिगत सेक्स को अपराध नहीं माना जाना चाहिए। उन्होंने तर्क दिया कि अनुच्छेद–377 संविधान की उस धारा–21 का उल्लंघन करता है जो निजता और स्वतंत्रता का अधिकार देता है। उन्होंने यह भी कहा कि धारा–14 जो कि लिंग के आधार पर पक्षपात से सुरक्षा देता है उसके अंतर्गत सेक्सुअल ओरियंटेशन को भी शामिल कर उसे विस्तार देना चाहिए। नाज फाउंडेशन ने बाद में अनुच्छेद–377 को यह कहते हुए भी चुनौती दी कि यह धारा–19 के अंतर्गत मिले अभिव्यक्ति के अधिकार का भी उल्लंघन करता है। याचिका दायर करने वालों ने तर्क दिया कि एचआईवी/एड्स निरोधक कार्य में बांधा डालने के कारण अनुच्छेद–377 स्वास्थ्य के अधिकार का भी उल्लंघन करता है जो कि धारा–21 में उल्लिखित जीवन के अधिकार का हिस्सा है। अनुच्छेद–377 कंडोम वितरण में बाधा डालता है और कंडोम जैसे एचआईवी विरोधी विकल्पों के सार्वजनिक उपयोग को नकार कर लोगों को गलत तरीके (भूमिगत होकर) से काम करने को प्रेरित करता है। जीवन जीने के अधिकार के आधार पर अगला तर्क यह तथ्य था कि किसी व्यक्ति की यौन प्राथमिकता जीवन का मूलभूत अंग है।

इस याचिका के जवाब में भारत सरकार ने कहा कि "जहां व्यक्तिगत एवं पारिवारिक जीवन के सम्मान का अधिकार अविवादित है, वहीं आमजन की सुरक्षा और स्वास्थ्य तथा नैतिकता के बचाव के पक्ष में जन प्रशासकों द्वारा लगायी गई रोक भी उतनी ही उचित है, जो कि अनुच्छेद–377 कहता है।" सरकार ने यह भी तर्क दिया कि ऐसा कोई कार्य जो कि तकनीकी रूप से गैर कानूनी है, उसे सिर्फ इसलिए मान्यता नहीं दी जा सकती कि यह सहमति के आधार पर हो रहा है। यह तर्क कि अनुच्छेद–377 पुराना हो गया है और कई देशों में यह निरस्त हो चुका है, का जवाब देते हुए सरकार ने कहा कि "कानून समाज से मुक्त होकर

67 नारायण सिद्धार्थ, ए क्वीअर केस ऑव 377, www.sarai.net/journal/05_pdf/10/06_siddharth.pdf

कार्य नहीं करता। यह केवल समाज की सोच को प्रतिबिंबित करता है। विभिन्न कार्यों के प्रति पब्लिक की सहनशीलता बदलती रहती है और इन बदलावों से कानून भी प्रेरणा लेता रहता है।" सरकार के अनुसार "वास्तव में देखा जाए तो भारतीय समाज में समलैंगिकता/लेस्बियनिज्म को लेकर अभी ऐसी सहनशीलता का भाव व्यवहार में नहीं आया है।"[68]

विरोधी हलफनामें में सरकार ने तर्क दिया कि अनुच्छेद–21 का उल्लंघन नहीं हुआ है। ऐसा तब होता जब किसी के जीवन पर संकट होता या किसी और तरीके से कानून द्वारा इसका समर्थन होता। सरकार ने कहा कि मुद्दे का संबंध जब मर्यादा, नैतिकता और आम शांति से होता है तो अनुच्छेद–19 लागू नहीं हो सकता। अनुच्छेद–14 भी यहां लागू नहीं होता क्योंकि अनुच्छेद प्रजनन क्षमता युक्त और गैर प्रजनन–क्षमता वाले सेक्स में भेद नहीं करता बल्कि यह केवल अप्राकृतिक सेक्स को अपराधीकृत करता है। सरकार ने आगे जवाब दिया कि अनुच्छेद–377 का हटाया जाना अपराधी प्रवृति वाले लोगों को खतरनाक छूट दे देगा। सरकार ने कहा कि अनुच्छेद–377 का स्थान बलात्कार कानून के अभाव के लिए है और इसका उपयोग बच्चों का यौन शोषण करने वालों को दंडित करने के लिए होता है। (जो भी हो, यहां यह ध्यान देने लायक है कि बाल अधिकार समूहों ने तर्क दिया कि इस नियम को हटाने के लिए बाल यौन शोषण का बहाना नहीं लिया जा सकता और बाल यौन शोषण के लिए अलग से विस्तृत कानून का निर्माण अवश्य होना चाहिए)[69] उन्होंने कहा कि कानून समाज के विरोध में नहीं चलता अर्थात् समलैंगिकता भारतीय समाज की आत्मा को व्यक्त नहीं करता। जो भी हो, वे इस बात को ध्यान दिलाने में असफल रहे, कि इसे अनुमोदित करें या नहीं, पर समलैंगिकता भारत में हमेशा से रही है और बहुत सारी ऐतिहासिक संरचनाएं इसकी प्रमाण हैं।"[70] जैसे कि खजुराहो मंदिर की मूर्तियां। सरकार ने आगे लॉ कमीशन के 42वें और 156वें रिपोर्ट का हवाला दिया जो कि समलैंगिकता को अनुमोदित नहीं करती। जो भी हो उन्होंने लॉ कमीशन के 172वें रिपोर्ट का संदर्भ नहीं दिया जो भारत में लिंग निरपेक्ष बलात्कार कानून के बारे में है और जिसमें बाल यौन उत्पीड़न और अनुच्छेद–377 को हटाने के संबंध में विशेष प्रावधान है।

चार सितंबर 2004 को दिल्ली हाई कोर्ट के दो जजों की बेंच ने याचिका दायर करने वालों की अनुपस्थिति में पिटिशन को खारिज कर दिया।[71] बेंच ने ये आदेश दिया कि पिटिशन में कार्य का कोई कारण नहीं था क्योंकि पिटिशनर के खिलाफ अभियोजन शेष नहीं रह जाता। बाद में पिटिशनर द्वारा एक रिव्यू पिटिशन दायर की गई जो इस बात की वकालत करती है कि आईपीसी का अनुच्छेद–377 वास्तव में समलैंगिकों, गेज और एमएसएम समुदायों को लक्ष्य करता है और अपराधी घोषित करता है जो कि वास्तव में सामाजिक रूप से उपेक्षित समूह हैं। जो अपनी वास्तविकता के उद्घाटित होने पर विभेद, उत्पीड़न और पुलिस की ज्यादती से बचने के लिए कोर्ट जाने से भी डरते हैं। यह तर्क दिया गया कि जनहित याचिका (पीआईएल) किसी भी सदस्य या लोगों के समूह की तरफ से दायर की जा सकती है जिनके साथ कानूनन अन्याय हो रहा हो या किसी के मौलिक अधिकार का हनन हुआ हो और वह अपनी तरफ से कोर्ट जाने में असमर्थ हो या जाने की इच्छा न रखता हो। उच्च न्यायालय ने रिव्यू पिटिशन (पुनर्समीक्षा आवेदन) को भी खारिज कर दिया।

यद्यपि सरकार, राष्ट्रीय एड्स नियंत्रण संगठन और विभिन्न राज्य एड्स नियंत्रण संगठनों के द्वारा विविध सुरक्षित सेक्सुअल कार्यों और एचआईवी/एड्स निवारण नेटवर्क को प्रोत्साहित करती है, यह पूरी तरह से

68 यूनियन ऑव इंडिया'ज रेस्पॉन्स टु द नाज पिटिशन, 8 सितंबर 2003

69 पूर्वोक्त टिप्पणी 25

70 जोसेफ, शेरी, "द लॉ एंड सेम–सेक्स सेक्सिटि इन इंडिया", पृ.150–154; 1998;
http://www.hsph.harvard.edu/grhf_asia/suchana/0909/rh374.html.

71 स्पेशल लीव पिटिशन (सिविल न. 7217–7218, 2005; काउंटर एफिडेविट बाइ द गवर्नमेंट ऑव एनसीटी ऑव दिल्ली

विश्वास करती है कि अनुच्छेद–377 अनिवार्य है।[72] उच्च न्यायालय द्वारा कार्यवाही का कोई कारण नहीं होने के आधार पर पिटिशन नकारे जाने के बाद सर्वोच्च न्यायालय में एक विशेष लीव पिटिशन दायर की गयी थी। एमएसएम समूह के लिए एक महत्वपूर्ण जीत यह रही कि सर्वोच्च न्यायालय ने अर्जी को उच्च न्यायालय के पास पुनर्विचार के लिए भेजा। इस महत्वपूर्ण घटना को देखते हुए, राष्ट्रीय एड्स नियंत्रण संगठन (नाको) ने, अनुच्छेद–377 के 'उपरोक्त तथ्य' के लिए पीआईएल के समर्थन में उच्च न्यायालय में एक शपथपत्र दाखिल किया जिसमें कहा गया कि यह अनुच्छेद एड्स के मुद्दों को कमजोर (भूमिगत) करता है। नाको प्रमुख सुजाता राव ने अनुच्छेद के बारे में कहा कि यह "स्वीकार्य नहीं है, अनुच्छेद–377 बिल्कुल पुराना पड़ चुका है।" मेल सेक्सुअल हेल्थ और एचआईवी पर चार दिवसीय एशिया पैसिफिक सम्मेलन के अंत में उन्होंने इस नियम के लिए 'घृणित' शब्द का इस्तेमाल किया।[73] अनुच्छेद–377 के अलावा, अन्य कानूनी प्रबंध भी हैं जो एमएसएम की निंदा करने और परेशान करने के लिए प्रयोग किये जा सकते हैं। विभिन्न राज्य पुलिस एक्ट और इंडियन पेनल कोड के अनुच्छेद–294 के तहत अश्लील हरकत को जनता के खिलाफ उपद्रव माना जाता है। इसी प्रकार, श्रम कानून, जो नैतिक चरित्रहीनता को रोकने के लिए है, एमएसएम के खिलाफ उपयोग किया जाता है। अनुच्छेद–377 के स्वरूप का 1950 के आर्मी एक्ट के अनुच्छेद–46 में आर्म्ड फोर्स द्वारा अनुसरण किया गया है।

पुलिस लगातार जन उपद्रव, निवेदन और सेक्स कार्य के आधार पर सेक्सुअली उपेक्षित समूहों को परेशान करती है। कानून पहले से ही यह विचार बना चुका है कि ये समूह समाज के लिए बहुत अधिक असुरक्षित हैं।

इंडियन पेनल कोड का अनुच्छेद–377 अंतर्राष्ट्रीय कानून में मौजूद कई सिद्धांतों को नकारता है। इंटरनेशनल कोवेनेंट ऑव सिविल एंड पॉलिटिकल राइट्स (आईसीसीपीआर) की धारा–2, जिसका भारत ने समर्थन किया है, सेक्स के आधार पर समझौते की पक्षपातपूर्ण कार्यान्वयन का निषेध करता है। आईसीसीपीआर का अनुच्छेद–26 सेक्स के आधार पर कानून की समान सुरक्षा और कानून के पक्षपातरहित होने की गारंटी देता है। अनुच्छेद–19 अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता की भी गारंटी देता है जिसके अंतर्गत सभी प्रकार के विचार और अंतरंग सूचनाएं प्राप्त करने की स्वतंत्रता शामिल है। अनुच्छेद–9 स्वतंत्रता और व्यक्ति की सुरक्षा के अधिकार को सुरक्षित रखता है और साथ ही "निरंकुश गिरफ्तारी या भय" से स्वतंत्र होने का अधिकार भी देता है। इसके आगे, मानवाधिकार पर यूएन हाई कमीशन और अन्य यूएन संगठनों ने पाया कि सेक्सुअल रुझान या एचआईवी की स्थिति पर आधारित पक्षपात निषिद्ध है। यद्यपि इसके पास कानून का बल नहीं है, पर एचआईवी/एड्स और मानवाधिकार पर संयुक्त राष्ट्र का निर्देश, मार्ग–दर्शक नीति के रूप में बहुत ज्यादा प्रयोग है। ये दिशा–निर्देश सिफारिश करती है कि जो कानून आपसी सहमति के आधार बनाए गए वयस्कों के व्यक्तिगत यौन व्यवहार का अपराधीकरण करती है उसे समाप्त होना चाहिए। इनके स्थान पर पक्षपात विरोधी कानूनों को लागू होना चाहिए जिसमें एचआईवी/एड्स के संदर्भ में एमएसएम के विस्तार को घटाने का मामला भी शामिल होना चाहिए।[74]

10 जनवरी, 2006 को भारत के प्रधानमंत्री को लिखे गये पत्र में ह्यूमन राइट्स वाच ने भारतीय दंड संहिता के अनुच्छेद–377 को हटाने की मांग की है क्योंकि यह उपेक्षित समूहों के अभिव्यक्ति के अधिकार और गोपनीयता के अधिकार का उल्लंघन करता है। अनुच्छेद–377 एक व्यक्ति के जीवन, स्वतंत्रता, समानता और गरिमा के अधिकार का उल्लंघन करता है। न्यायालय में अनुच्छेद–377 के अंतर्गत आने वाले मामलों

72 नारायण सिद्धार्थ, ए क्वीअर केस ऑव 377, www.sarai.net/journal/05_pdf/10/06_siddharth.pdf

73 'हेटफूल' एंटी–गे लॉ मस्ट गे" नाको, www.expressindia.com/fullstory.php?newsid=74541

74 मैप 2005 इंडिया एपिडेमिक ऑव एब्यूज : पुलिस हरासमेंट ऑव एचआईवी/एड्स आउटरीच वर्कर्स इन इंडिया, ह्यूमन राइट्स वाच, 7/2002; पृ.29–30

(केसों) की संख्या सौ से भी कम है। फरवरी 2006 में सर्वोच्च न्यायालय ने दिल्ली उच्च न्यायालय से कहा कि वह नाज फाउंडेशन की अर्जी (पिटिशन) पर पुनर्विचार करे। अनुच्छेद–377 के निकाले जाने की वकालत राष्ट्रीय महिला आयोग और योजना आयोग द्वारा 11वीं योजना के लिए वितरित किए गए निर्देश पत्रों में भी की गयी है।[75] नाज की पिटिशन, जो कि केवल व्यक्तिगत सहमतिपूर्ण सेक्स को कानूनी मान्यता दिए जाने की वकालत करती है, उन हिंजड़ों को नहीं बचा पाएगी जिन्हें पुलिस जन उपद्रव के बहाने सताती रहती है। सुरक्षा नीतियां असुरक्षितों को मजबूती देने और यौन व्यवहार को समझने की कोशिश करने के साथ एमएसएम को इस योग्य बनायेंगी कि वे सूचनाएं, सलाह एवं बिना किसी पक्षपात और अपराधीकरण के भय के चिकित्सा सुविधा प्राप्त करने में समर्थ होंगे।

75 भान, गौतम; कॉम्बेट लॉ वॉल्यूम 5, "द अदर साइड ऑव द फेंस", पृ.35, अप्रैल–मई 2006

11 सी

सुई द्वारा मादक द्रव्यों का सेवन

मादक द्रव्यों को सुई द्वारा लिए जाने के मामलों को नियंत्रित करने वाला कानून एक "प्रावधानों का जटिल पदानुक्रम है जो कि सरकार के विभिन्न स्तरों द्वारा निस्तारित होता है" जिसके अंतर्गत अंतर्राष्ट्रीय, राष्ट्रीय और स्थानीय कानून शामिल हैं।[1] साथ ही साथ, इसमें सुई के इस्तेमाल से लेकर स्वास्थ्य और वैयक्तिक स्वतंत्रता जैसे कई विषय निहित हैं। रोकथाम के उपायों को प्रमुखता देते हुए बहुत सारे देशों ने इनमें से कई नियमों को सरल बनाकर, इनसे होने वाले नुकसान को कम करने से संबंधित कई कदम उठाए हैं।

मादक द्रव्यों की रोकथाम से संबंधित अंतर्राष्ट्रीय कानून

अंतर्राष्ट्रीय संधियां

संयुक्त राष्ट्रसंघ द्वारा पारित कई कन्वेंशन और प्रोटोकॉल नशीली दवाओं से संबंधित अंतर्राष्ट्रीय कानूनी ढांचे को निर्धारित करते हैं। इन गैर–स्वयं प्रभावी कन्वेंशन में 1961 का मादक द्रव्य संबंधित एकल कन्वेंशन (1961 कन्वेंशन), इसको सुधारने वाला 1972 का प्रोटोकॉल (1972 प्रोटोकॉल), मादक द्रव्यों पर 1971 का कन्वेंशन और 1988 का मादक और संवेदक मादक द्रव्य तस्करी विरोधी कन्वेंशन (1988 कन्वेंशन) में शामिल हैं।[2] ये सारे मुख्यतः निषेधकारी नीतियां प्रतिपादित करते हैं।

1961 का कन्वेंशन 1972 का प्रोटोकॉल तथा 1971 का कन्वेंशन मुख्य रूप से मादक दवाओं की मांग को कम करने से संबंधित है। बहरहाल ये "न तो इन प्रयासों के लिये आवश्यक संस्थाओं अथवा स्थापनाओं का विवरण देते हैं, न ही ये इस्तेमाल की जाने वाली तकनीकों या प्रणालियों का वर्णन करते हैं।"[3] 1961 के कन्वेंशन ने "दवाओं के दुरुपयोग होने की संभावना और उनके चिकित्सीय लाभों"[4] के आधार पर उनके वर्गीकरण की पद्धति प्रस्तुत की। इसमें राज्यों को यह निर्देश दिया गया था कि वे यह सुनिश्चित करें कि "इसे (दवाओं के इस्तेमाल) को केवल वैज्ञानिक तथा चिकित्सा के क्षेत्र तक ही सीमित रखा जाए।"[5] उनकी

---

1 कैनेडियन एचआईवी/एड्स लॉ नेटवर्क (1999), पृ.ए2

2 सिंगल कन्वेंशन ऑन नारकोटिक ड्रग्स, 1961, मार्च, 30, 1961 (13 दिसम्बर, 1964 से प्रभाव में), 1972 के प्रोटोकॉल द्वारा संशोधित अमेन्डिंग द सिंगल कन्वेंशन ऑन नारकोटिक ड्रग्स, 1961 मार्च, 25 1972 (8 अगस्त, 1975 से प्रभाव में); कन्वेंशन ऑन साइकोट्रोपिक सब्स्टांस, 1971 (अगस्त 16, 1976 से प्रभाव में), कन्वेंशन अगेंस्ट इल्लिसिट ट्रैफिक इन नारकोटिक ड्रग्स एंड साइकोट्रापिक सब्स्टांसिज, 1988 (नव. 11, 1990 से प्रभाव में)

3 ग्रोर रेक्सेड इट अल., वर्ल्ड हेल्थ आर्गनाइजेशन, गाईडलाइन फॉर द कंट्रोल ऑव नारकोटिक एंड साइकोट्रापिक सब्स्टांसिज इन द कन्टेक्स्ट ऑव दि इंटरनेशनल ट्रीटीस, 115 (1984)

4 मेलिसा टी. आयेगी, बियोन्ड प्युनीटिव प्रोहिबिशन : लिबरलाइजिंग द डॉयलॉग ऑन इंटरनेशनल ड्रग पॉलिसी, 37 न्यूयार्क यूनिवर्सिटी जर्नल ऑव इंटरनेशनल लॉ एंड पॉलिटिक्स 555 (स्प्रिंग 2005); सिंगल कन्वेंशन ऑन नारकोटिक ड्रग्स, 1961

5 सिंगल कन्वेंशन ऑन नारकोटिक ड्रग्स, 1961, अनुच्छेद–4

यह भी जिम्मेदारी है कि वे "उत्पादन के मानदंड तय करे जिससे इनका उत्पादन उतना ही हो जितना कि वैज्ञानिक और चिकित्सीय जरूरतों में इस्तेमाल हो और दवाओं को अवैध रूप में बाजारों में जाने से रोका जाए।"[6]

1971 के कन्वेंशन ने मादक पदार्थों, जैसे एलएसडी (LSD) और मेथोम्फेटामाइन (Methamphetamine) को अंतर्राष्ट्रीय निषेधकारी रूपरेखा में शामिल किया।[7] 1971 के कन्वेंशन ने "नशीली दवाओं के उत्पादन पर ध्यान केंद्रित किया"।[8] इसने "वैज्ञानिक और बहुत ही सीमित चिकित्सीय इस्तेमाल को छोड़कर"[9], मादक दवाओं के उपयोग को पूरी तरह से रोक दिया। बहरहाल इनमें से किसी भी कन्वेंशन ने खुले तौर पर राज्यों को नशीली दवाओं के इस्तेमाल को आपराधिक परिधि में लाने का दिशा–निर्देश नहीं दिया। यद्यपि 1971 का कन्वेंशन संबंधित पक्षों "वैज्ञानिक और चिकित्सीय इस्तेमाल" को छोड़कर, "उपयोग को सीमित" करने को कहता है, जिसकी व्याख्या यह भी कर सकती है कि उपयोग को दण्डित किया जाए, परंतु ऐसी विस्तृत व्याख्या न तो आवश्यक है और न ही बाध्यकारी।[10]

1988 का कन्वेंशन संयुक्त राष्ट्र का सबसे सख्त कन्वेंशन है। यह नियंत्रित दवाओं की सूची को और विस्तृत करते हुए इसमें 'घटक रसायनों' को भी शामिल करता है जिसका इस्तेमाल नशीली दवाओं के निर्माण में किया जाता है। इसमें कई वित्तीय मामलों जैसे आर्थिक कालाबाजारी को रोकने के उपाय और संपत्ति की जब्ती के प्रावधान हैं।[11] यह कन्वेंशन मुख्य रूप से नशीली दवाओं के उत्पादन और उनके वितरण पर केंद्रित है। सबसे मुख्य अंतर जो 1988 के कन्वेंशन और इसके पिछले कन्वेंशनों में है वह यह है कि, यह कन्वेंशन नशीली दवाओं का इस्तेमाल करने वालों को केंद्रीय विषय बनाता है। 1988 के कन्वेंशन की धारा–3 के अनुसार संबंधित पक्षों को "ऐसे उपाय अपनाने चाहिए जिससे सुनिश्चित रूप से यह स्थापित किया जा सके कि ऐसे कार्य वहां के स्थानीय कानूनों के अंतर्गत अपराध माने जायेंगे जिनमें नारकोटिक्स और मादक पदार्थों का जानबूझ कर व्यक्तिगत इस्तेमाल के लिए अधिग्रहित किया जाना, खरीदा जाना या उत्पादन किया जाना शामिल हो, जो कि 1961 के कन्वेंशन के, 1961 के संशोधित कन्वेंशन के या 1971 कन्वेंशन के प्रावधानों का उल्लंघन करता हो।"

अंतर्राष्ट्रीय संधियों की अस्पष्टता को देखते हुए यह बहुत हद तक संभव है कि व्यक्तिगत इस्तेमाल के लिए मादक द्रव्य अधिग्रहण का तथा नुकसान कम करने के उपायों का गैर अपराधीकरण अंतर्राष्ट्रीय मादक द्रव्य विरोधी कानून के अंतर्गत ही कर दिया जाए। इस संदर्भ में कोई आम राय नहीं है कि किन परिस्थितियों में और कब, ये कन्वेंशन राज्यों को व्यक्तिगत उपयोग के लिए मादक द्रव्य रखने को एक फौजदारी अपराध के रूप में घोषित करने को कहता है;[12] और जहां राज्यों को 1988 के कन्वेंशन के तहत "व्यक्तिगत उपयोग के लिए किए गए अधिग्रहण को (एक) फौजदारी अपराध के रूप में स्थापित करना आवश्यक है" वहीं यह इसके लिए किसी उचित दंड की व्यवस्था नहीं करता।[13] मादक द्रव्यों के अधिग्रहण से संबंधित प्रावधानों

6 डैनियल वोल्फ, ओपेन सोसाइटी इंस्टीच्यूट, इलीसीट ड्रग पॉलिसी एंड द ग्लोबल एचआईवी एपिडेमिक : इफेक्ट्स ऑव यूएन एंड नेशनल गवर्नमेंट अप्रोचेज, 21 (2004)

7 कन्वेंशन ऑन साइकोट्रॉपिक सब्स्टांसिज, 1971, अनुच्छेद–5

8 मेलिसा टी. आयेगी, बियोन्ड प्युनीटिव प्रोहिबिशन : लिबरलाइजिंग द डॉयलॉग ऑन इंटरनेशनल ड्रग पॉलिसी, 37 न्यूयार्क यूनिवर्सिटी जर्नल ऑव इंटरनेशनल लॉ एंड पॉलिटिक्स 555 (स्प्रिंग 2005)

9 कन्वेंशन ऑन साइकोट्रॉपिक सब्स्टांसिज, 1971, अनुच्छेद–7

10 निकोलस डोर्न और एलीसन जैमिसन, ड्रग स्कोप : रूम फॉर मैनुवर : ओवरव्यू रिपोर्ट 5, (मार्च 2000), पृ.8

11 डैनियल वोल्फ, ओपेन सोसाइटी इंस्टीच्यूट, इलीसिट ड्रग पॉलिसी एंड द ग्लोबल एचआईवी एपिडेमिक : इफेक्ट्स ऑव यूएन एंड नेशनल गवर्नमेंट अप्रोचेज, 21 (2004) एट 21

12 रूथ फोर्टसेन, हार्म रिडक्शन एंड द लॉ ऑव द यूनाइटेड किंगडम, जोसफ रॉन्ट्री फाउन्डेशन, पृ.9 (2006)

13 कन्वेंशन अगेंस्ट इलीसिट ट्रैफिक इन नारकोटिक ड्रग एंड साइकोट्रापिक सब्स्टांसिज, 1988 अनुच्छेद–3(2)

की व्याख्या जिन तथ्यों को विचार में रखते हुए करनी चाहिए, वे हैं "(ए) (कन्वेंशन के) स्वयं के मादक द्रव्य के अधिग्रहित (गैर–अपराधीकृत) संबंधित प्रावधान (बी) मादक द्रव्यों के इस्तेमाल से संबंधित राष्ट्रीय कानून और (सी) राष्ट्रीय संवैधानिक सिद्धांत"।[14] अतः जहां पर राष्ट्रीय कानूनी व्यवस्था मादक द्रव्यों के इस्तेमाल को स्वीकार्यता नहीं देती, वहां समान प्रकार से मादक द्रव्यों का संग्रहण भी स्वीकार्य नहीं होना चाहिए। वहां पर भी, जहां कानूनी व्यवस्था मादक द्रव्य के इस्तेमाल पर आपराधिक प्रतिबंध लगाती है, "दंड देने" की वैकल्पिक तरीके इस्तेमाल किये जा सकते हैं।[15] उदाहरण के लिए, मादक द्रव्यों के संग्रहण के लिए दोषी व्यक्ति को दंड देने के बजाय पुनर्वास तथा इलाज के लिए प्रेरित किया जा सकता है।[16] "अंतर्राष्ट्रीय संधियां स्वयं के उपयोग के लिए किये गये अधिग्रहण तथा छोटी–मोटी तस्करियों के मामलों में अभियोजन के संदर्भ में स्वैच्छिक शक्तियों (डिस्क्रीप्शनरी) की व्यवस्था करती है।"[17] अतः "राज्य भी व्यक्तिगत इस्तेमाल से संबंधित गतिविधियों को आपराधिक कृत्यों के रूप में चिन्हित कर सकता है, जिसमें तीव्र मादक द्रव्यों से संबंधित कृत्यों को अपेक्षाकृत हल्के मादक द्रव्यों की छोटी मात्राओं के मामलों के मुकाबले प्राथमिकता दी जा सकती है" और यह इन परिस्थितियों में भी अंतर्राष्ट्रीय कानूनों से जुड़ा रह सकता है क्योंकि संयुक्त राष्ट्र के कन्वेंशन ये कहते हैं कि इस तरह की गतिविधियां "दंडनीय कृत्य हैं परन्तु यह दंडकारी प्रतिबंध लगाने का मत व्यक्त नहीं करता।"[18]

संयुक्त राष्ट्र के कन्वेंशन एचआईवी/एड्स के प्रसार से जुड़ी चिंताओं से पहले के हैं, इसलिए इसके प्रावधानों में से नुकसान कम करने अथवा संक्रमण रोकने के प्रावधान अनुपस्थित हैं।[19] बहरहाल 1993 के अपने वार्षिक रिपोर्ट में अंतर्राष्ट्रीय मादक द्रव्य नियंत्रण बोर्ड ने "मांग को कम करने के उद्देश्य के लिए 'हानि नियंत्रण' के कुछ पहलुओं के महत्व को एक तीसरी निरोधक रणनीति के बतौर माना", जबकि कुछ उपायों का व्यापक विरोध जारी रहा।[20] हालांकि वर्ष 2000 तक आईएनसीबी (इंटरनैशनल कमीशन आन नार्कोटिक ड्रग्स) ने सुरक्षित इंजेक्शन सुविधाओं को "शूटिंग गैलेरीज" (ऐसे स्थान जहां इंजेक्शन द्वारा नशा लिया जा सकता हो) और "ओपियम डेन्स" (ऐसे स्थान जहां अफीम के आदी लोग उसका सेवन कर सकें) के मुकाबले अधिक स्वीकार्य माना और ऐसी सुविधाओं से संबंधित प्रावधानों को "मादक द्रव्यों के वैधानीकरण की दिशा में एक कदम" के रूप में निंदित किया।[21]

संयुक्त राष्ट्र के संधि करारों के वैधानिक मामलों के खंड की व्याख्या

वर्ष 2002 में संयुक्त राष्ट्र अंतर्राष्ट्रीय मादक द्रव्य नियंत्रण बोर्ड (यूएनडीसीपी) के वैधानिक मामलों के खंड ने नुकसान कम करने वाले उपायों के संबंध में, संधि के प्रावधानों के लचीलेपन पर कानूनी राय का खाका तैयार किया।[22] यह इंगित करती है कि मादक द्रव्य नियंत्रण के वर्तमान अंतर्राष्ट्रीय नियमों में ही, नुकसान कम करने वाले उपायों को लागू कर पाना संभव है। कुछ उपाय निश्चित तौर पर अन्य की तुलना में ज्यादा

14 निकोलस डोर्न और एलीसन जैमिएसन, ड्रग स्कोप : रूम फॉर मैनुवर : ओवरव्यू रिपोर्ट 5, (मार्च 2000), पृ.10
15 वही
16 वही
17 मेलिसा टी. आयेगी, बियोन्ड प्युनीटिव प्रोहिबिशन : लिबरलाइजिंग द डॉयलॉग ऑन इंटरनेशनल ड्रग पॉलिसी, 37 न्यूयार्क यूनिवर्सिटी जर्नल ऑव इंटरनेशनल लॉ एंड पॉलिटिक्स 555, 591 (स्प्रिंग 2005)
18 वही, 595–96 पर
19 ह्यूमन राइट्स वॉच (2003), पृ.50
20 लीगल अफेयर सेक्शन ऑव द यूनाइटेड इंटरनेशनल नारकोटिक्स कंट्रोल बोर्ड, E/INCD/1993/1
21 आईएनसीबी, "ड्रग इंजेक्शन रूम–नॉट इन लाईन विद इंटरनेशनल कन्वेंशन" (फरवरी 23, 2000) http:/www.incb.org पर उपलब्ध, इलीयट, आर., (2005), पृ.125 से उद्धृत
22 लीगल एफेयर्स सेक्शन ऑव द यूनाइटेड नेशन्स इंटरनेशनल नारकोटिक्स कंट्रोल बोर्ड, फ्लेक्सीबिलिटी ऑव ट्रीटी प्रोविजंस एस रिगार्ड हार्म रिडक्शन अप्रोचेज (डिशिजन 74/10), सितंबर 30, 2002, E/INCB/2002/W.13/ss.5.

विवाद उत्पन्न करेंगे। यह पत्र यह स्पष्ट करता है कि यद्यपि यूएनडीसीपी द्वारा नुकसान कम करने के उपायों पर आधिकारिक दृष्टिकोण अपनाया जाना बाकी है, चूंकि यह वैसे कदमों का समर्थन नहीं कर सकता है जो कन्वेंशन के नियमों का उल्लंघन करते हों; यह "एक संतुलित प्रस्ताव का समर्थन करेगा जो आपूर्ति घटाने के तरीकों और रोकथाम के उपायों, इलाज और पुनर्वास की पहलकदमियों, साथ ही ऐसे कार्यक्रमों को जो मादक द्रव्यों के सम्पूर्ण इस्तेमाल के संपूर्ण स्वास्थ्य और सामाजिक स्थितियों तथा व्यक्ति समुदाय, दोनों पर पड़ने वाले दुष्प्रभावों को कम करने पर ध्यान केंद्रित करते हों।"[23] इसने अपनी 1993 की मान्यता को पुनर्स्थापित किया है जिनमें कहा गया था कि नुकसान को कम करने के उपाय, मादक द्रव्यों के इस्तेमाल को कम करने के प्रयासों के विकल्प विस्थापित नहीं थे।

वैधानिक मामलों का खंड हानि–न्यूनीकरण उपायों के संदर्भ में सामान्यतः निम्नलिखित कानूनी बातों को देखता है :

- अंतर्राष्ट्रीय मादक द्रव्य–नियंत्रण संधियां, हस्ताक्षरकर्ताओं के लिए यह बाध्य करती हैं कि वे सुनिश्चित करें कि मादक द्रव्यों का इस्तेमाल केवल चिकित्सीय और वैज्ञानिक कार्यों के लिए सीमित हो। यह कन्वेंशन का एक मुख्य हिस्सा है, पर नुकसान कम करने के उपायों के समर्थक "इस प्रमुख दायित्व को, हानि–न्यूनीकरण नीतियों के अंतर्गत शुरू किए गए कार्यक्रमों और पद्धतियों में से, अगर अधिकतर के साथ नहीं, तो कुछ के साथ समंजस्य बिठा पाने में मुश्किल मान सकते हैं।"[24]
- 1961 के कन्वेंशन के अनुच्छेद–33, 36, और 38, 1971 के कन्वेंशन के अनुच्छेद–20 और 22 तथा 1988 के कन्वेंशन का अनुच्छेद–3, "हस्ताक्षरकर्ता पक्ष के लिए विशिष्ट दायित्वों की सूची का निर्माण करते हैं।"[25] इसके अंतर्गत हैं :
  - (ए) कानूनी रूप से सक्षम व्यक्ति/संस्था की अनुमति के बिना मादक द्रव्य अधिग्रहण पर प्रतिबंध
  - (बी) कन्वेंशन के प्रावधानों के विपरीत, व्यक्तिगत इस्तेमाल के लिए मादक द्रव्यों के अधिग्रहण, खरीद अथवा उत्पादन को आपराधिक घोषित करना।
  - (सी) ऊपर उल्लिखित किसी भी कृत्य को करने के लिए और मादक द्रव्य या संवेदनमंदक द्रव्य के अवैध इस्तेमाल के लिए, जनता को प्रोत्साहन या किसी और तरीके से दूसरों को इसके लिए भड़काना।
  - (डी) उल्लिखित कृत्यों में भागीदारी, सहयोग अथवा ऐसा करने की साजिश करने को फौजदारी अपराध घोषित करना।
  - (ई) मादक द्रव्यों के दुरुपयोग को रोकने के लिए और इसकी जल्दी पहचान, इलाज, इसके बारे में जागरूकता, पुनर्वास और नशे के आदी व्यक्तियों को समाज में फिर से सम्मिलित करने के लिए आवश्यक सभी व्यावहारिक कदम उठाना।
- पहले चार स्पष्टतः परिभाषित हैं, परंतु अंतिम में व्याख्या की गुंजाइश है। "ऐसी व्याख्याएं, किसी भी देश की मादक द्रव्यों के दुरुपयोग की विशिष्ट स्थितियों में अच्छी तरह से प्रभावी होने के लिए एक देश से दूसरे देश में भिन्न हो सकती हैं परंतु ये संधि की शर्तों का पालन करते हुए ही ऐसा करती हैं।
- संधि की प्रस्तावना में जाहिर "मानव के स्वास्थ्य और कल्याण तथा मादक द्रव्यों के इस्तेमाल से उत्पन्न स्वास्थ्य तथा सामाजिक समस्याओं" के प्रति चिंता भी गौरतलब है। इसको "संधियों में, स्वास्थ्य तथा कल्याण पर पड़े बुरे परिणामों के चलते, मादक द्रव्यों की बुराई से लड़ने की स्पष्ट इच्छा के रूप में"

---

23 वही
24 वही
25 वही

समझा जाना चाहिए।[26] अतः नुकसान कम करने के उपायों के (हानि न्यूनीकरण उपायों) समर्थक "इसको 1998 के कन्वेंशन के अनुच्छेद–14 के पैराग्राफ चार में अभिव्यक्त विचारों के साथ, नुकसान कम करने के उपायों के द्वारा, मादक द्रव्यों के इस्तेमाल से उत्पन्न मानवता कष्टों को समाप्त करने की स्पष्ट सहमति के रूप में देख सकते हैं। इस तरह की व्याख्या नुकसान कम करने वाले उपायों के समर्थकों को ऐसे तरीके खोजने की स्वतंत्रता देती हैं, जिनकी प्रकृति असंयमित हो, परंतु जो कन्वेंशन के मानदंडों के अंतर्गत हों।

- 1988 के कन्वेंशन अनुच्छेद–14 के प्रावधान संबद्ध पक्षों को यह अधिकार देते हैं कि वे "संयुक्त राष्ट्र की अनुशंषाओं के साथ आधार पर अपने घटाने के उपायों को तय करे।" संयुक्त राष्ट्र महासभा प्रस्ताव ए/आरईएस/एस–20/4 (मादक द्रव्य की मांग को कम करने संबंधी दिशा–निर्देश सिद्धांतों का घोषणापत्र) स्पष्ट रूप से यह कहता है कि :

  (ए) मांग को कम करने वाली नीतियों को–

  (i) मादक द्रव्यों को इस्तेमाल की रोकथाम और इस्तेमाल से पड़ने वाले विपरीत परिणामों की कमी पर ही केंद्रित होना चाहिए;

  (ii) ....

  (iii) संस्कृति और लिंग के प्रति सहयोगात्मक रवैया होना चाहिए;

  (iv) सहयोगात्मक वातावरण को विकसित करने तथा बनाये रखने में योगदान देना चाहिए।

- अतः "यह आसानी से कहा जा सकता है कि मादक द्रव्यों की मांग की कमी से संबंधित निर्देशात्मक सिद्धांत नुकसान कम करने की ऐसी नीतियों के निर्माण का मत देते हैं जो सांस्कृतिक तथा लैंगिक विभिन्नताओं का आदर करें और नशा करने वाले लोगों के लिए सहयोगात्मक माहौल तैयार करें। इस तरह के मत को लागू करना स्वाभाविक रूप से जनता की व्याख्या के लिए प्रस्तुत भी होगा।" यद्यपि यह कानूनी रूप से बाध्य नहीं है, पर यह "मादक द्रव्यों के दुरुपयोग से उत्पन्न समस्याओं और उनसे निपटने के सबसे बेहतर तरीकों पर विभिन्न पक्षों के दृष्टिकोण में हुए विकास" को और साथ ही साथ "अंतर्राष्ट्रीय समुदाय के बीच मादक द्रव्यों के दुरुपयोग के रोकथाम और इलाज के मामलों पर आमसहमति" को जरूर दर्शाता है।

अंततः वैधानिक मामलों से संबंधित खंड घटना दर घटना व्यक्तिगत नुकसान को कम करने वालों उपायों (अब से, हानि–न्यूनीकरण उपायों) की वैधानिकता पर विचार किए जाने के महत्व को संज्ञान में लेता है। नीचे इसके द्वारा की गई हानि–न्यूनीकरण उपायों की समीक्षा दी गई है।[27]

प्रतिस्थापन और देखभाल संबंधी इलाज

द्रव्य पर निर्भर व्यक्तियों को उपचार के परिभाषित लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए, अनुशंसित मनःसक्रियता वाला द्रव्य, जो कि औषधशास्त्रीय रूप से निर्भरता पैदा करनेवाले द्रव्य से जुड़ा होता है, चिकित्सीय रूप से निर्देशित मात्रा में देना,"[28] प्रतिस्थापन उपचार का कार्य है। इस तरह के ज्यादातर कार्यक्रम ओपेइड निर्भरता को मिथाडोन[29] पर निर्भरता से प्रतिस्थापित करते हैं। प्रतिस्थापन के उद्देश्य से अनुशंसित किये जाने वाले अन्य

26 वही

27 वही

28 वर्ल्ड हेल्थ ऑर्गेनाइजेशन, यूनाइटेड नेशन्स ऑफिस ऑन ड्रग एंड क्राइम और यूनाइटेड नेशन्स एड्स, सब्स्टिच्यूशन मेन्टेनेंस थेरेपी इन द मैनेजमेंट ऑव ओपोइड डिपेंडेंस एंड एचआईवी/एड्स, प्रिवेंशनः पोजिशन पेपर, (2004), पृ. 12

29 वही, पृ. 12 पर

द्रव्य हैं– बूप्रेनोरफाइन, एलएएएम, कोडीन तथा मॉर्फीन[30] हैं। परंपरागत प्रतिस्थापन इलाज, जिसमें मेथाडोन का प्रबंध प्रशासन किया जाता है, संयुक्त राष्ट्र के कन्वेंशन से तारतम्य रखता है तथा चिकित्सा समुदाय द्वारा इसकी अनुमति है।"[31]

बहरहाल, ऐसे कार्यक्रमों की वैधता, जिसमें अफीम का वितरण, अफीम पर आश्रित लोगों को (भारत, पाकिस्तान) तथा हेरोइन का वितरण, हेरोइन पर आश्रित लोगों को किया जाए, अधिक प्रश्न योग्य है।[32]

साथ ही साथ, किसी भी प्रतिस्थापन कार्यक्रम की वैधता उपलब्ध कराई जा रही चिकित्सा की परिभाषा पर निर्भर करती है। संधियां चूंकि "इलाज" के तरीकों को परिभाषित नहीं करती हैं, अतः राज्य के पक्ष तथा बोर्ड अपने लिए कोई भी परिभाषा को अपनाने के लिए स्वतंत्र हैं।[33] यह परिभाषा हालांकि किसी संधि के तहत बाध्य नहीं होगी, पर यह व्यावहारिक लक्ष्यों की पूर्ति करेगी।[34]

मादक द्रव्य इंजेक्शन कक्ष

यह दृष्टिकोण, "ऐसे कक्षों की स्थापना, या स्थापना के लिए उचित सुविधा मुहैया करने से संबंधित है जहां नसों में मादक द्रव्य लेने वाले व्यक्ति ऐसा कर सकें।"[35] इसका उद्देश्य नशे के आश्रित लोगों को "स्वच्छ वातावरण प्रदान करना है, जहां वे इंजेक्शन ले सकें और उनके संक्रामक संक्रमणों के संपर्क में आने की संभावनाओं को कम करके इस तरह उन्हें न्यूनतम स्वास्थ्य सुविधाएं उपलब्ध कराई जाएं।"[36]

यह तरीका (प्रयोगात्मक रूप में) ऑस्ट्रेलिया, जर्मनी (हाल में वैधानिक करार दी गई, क्रिया के बतौर), स्पेन (म्युनिसिपल नियंत्रण), नीदरलैंड और स्विट्जरलैंड में (बिना स्पष्ट कानूनी स्थिति के सक्रिय) लागू है। इसके लागू करने की संभावना पर विचार–विमर्श कनाडा तथा नार्वे में शुरू हो चुका है। लक्जमबर्ग में ये कानून द्वारा मान्य प्रतीत होता है, पर अधिकारियों द्वारा यह स्पष्ट नहीं किया गया है कि यह अनुमति प्राप्त है कि नहीं। व्यवहार में लाने वाली बातें तथा प्रक्रिया विभिन्न देशों में भिन्न हैं। कुछ देशों में चिकित्सीय विकल्पों की बड़ी शृंखला स्वैच्छिक रूप से मुहैया करायी जाती हैं, जबकि कुछ में सीमित विकल्प उपलब्ध होते हैं।[37]

इस दृष्टिकोण के चलते राज्यों के पक्षों द्वारा 1961 कन्वेंशन के अनुच्छेद–38 और 1971 कन्वेंशन के अनुच्छेद–20 के तहत मादक द्रव्यों का दुरुपयोग रोकने संबंधित उनके दायित्वों का उल्लंघन नहीं होता।[38] ऐसा इसलिए है, क्योंकि अनुच्छेद–38 और 20 संबंधित पक्षों को "नशे के आदी लोगों के इलाज, पुनर्वास तथा समाज में फिर से सम्मिलित होने का दायित्व भी देते हैं।[39] फिर, दृष्टिकोण की वैधता व्यवहार में लाई गई परिभाषा पर निर्भर करती है।[40] उदाहरण के लिए, अगर इलाज का लक्ष्य केवल रोग का निदान ही न हो, बल्कि कष्ट को कम करना भी हो "(जैसे कि गंभीर पीड़ा नियंत्रण में) तो IV चरण के नशे के आदी लोगों को अन्य प्रकार के रोगों के कारकों से, जिनका संबंध अधिकतर उनकी मादक द्रव्यों के दुरुपयोग की प्रक्रिया

30 ई/आईएनसीबी/2002/डब्ल्यू.2,16
31 वही, 17
32 वही, 18 पर
33 वही, 19
34 वही
35 वही, 21
36 वही
37 वही, 22
38 वही, 23
39 वही
40 वही

से जुड़ा होता है (जैसे, एचआईवी/एड्स या हेपेटाइटिस बी पैदा करने वाले कारक), बचाना भी एक प्रकार से उपचार के रूप में देखा जाना चाहिए।"[41] इसी तरह, "किसी नशे के आदी व्यक्ति को यह मानते हुए, कि उसकी जरूरत पूरी होने पर वह उसे पूरा करने के लिए पैसा जुटाने के लिए किसी प्रकार की आपराधिक गतिविधि में लिप्त नहीं होगा। मादक द्रव्य उपलब्ध कराना, नशे के शिकार व्यक्ति के पुनर्वास और सामाजिक पुनःसम्मिलन का एक कदम कहा जा सकता है।"[42] इस तरह के दृष्टिकोण में "परामर्श और अन्य तरह की स्वास्थ्य तथा कल्याण सुविधाओं की भी जरूरत होती है, ताकि स्वस्थ जीवन शैली, और अंततः नशा-मुक्ति के लक्ष्य को प्राप्त किया जा सके।"[43]

इंजेक्शन द्वारा मादक द्रव्य लिये जाने के लिए बने कक्षों के अंतर्गत मादक द्रव्यों के अवैध प्रयोग को बढ़ावा देने या प्रोत्साहन देने वाले पक्ष 1988 कन्वेंशन के अनुच्छेद–1 के पैरा 1 (सी) (iii) का उल्लंघन नहीं करते। साथ ही साथ मादक द्रव्यों को रखने को प्रोत्साहन देने वाले, मदद देने वाले या आसान बनाने वाले पक्ष भी कन्वेंशन के अनुच्छेद–3 के पैरा 1 (सी) (iv) का उल्लंघन नहीं करते। उपर्युक्त अपराध के लिए मंतव्य (इरादे) की आवश्यकता होती है। 1988 कन्वेंशन पर की गयी टिप्पणी कहती है "अनुच्छेद–3 के पैरा 1 में वर्णित सभी प्रकार के कार्यों को आपराधिक कृत्य के रूप में स्थापित करने के लिए आवश्यक है कि उन्हें "पूरे इरादे (मंतव्य) के साथ किया जाए" इन्हें, गैरइरादतन संपन्न करना इसमें शामिल नहीं है।[44] यह आपराधिक कानून के सामान्य सिद्धांतों से सम्मति प्रकट करता है कि निषिद्ध आचरण के प्रत्येक ताथ्यिक तत्व के संदर्भ में, मंतव्य को सिद्ध किये जाने की आवश्यकता है। यह सिद्ध करना आवश्यक नहीं होगा कि कर्ता यह जानता था कि संबद्ध आचरण कानून विरुद्ध था।"[45]

राज्य के पक्ष इंजेक्शन द्वारा लिये जाने वाले मादक द्रव्यों के लिए बने कक्षों को समर्थन देकर न तो मादक द्रव्यों के इस्तेमाल को उकसावा या प्रेरणा देते हैं, और न ही ऐसे द्रव्यों को रखने में पहुंचने, प्रोत्साहन देने या आसान बनाने का काम कर रहे हैं।[46] यह इसलिए होता है क्योंकि नशा लेने के लिए बने इन कक्षों के पीछे का मंतव्य "नशे के IV व्यसनियों को स्वास्थ्यकर स्थितियां प्रदान करना है, जिसके चलते उन्हें गंभीर संचरण योग्य संक्रमण होने के जोखिमों को कम किया जा सके; तथा कम से कम, कुछ मामलों में ही सही, उन तक परामर्श तथा अन्य चिकित्सा विज्ञान संबंधी उपायों के साथ पहुंचा जा सके। हालांकि मांग घटाने के दृष्टिकोण से यह कितना भी कम क्यों न लगता हो, परंतु उसके बावजूद यह 1988 कन्वेंशन के अंतर्गत कोई अपराध करने की हदों से कहीं दूर है।"[47]

सुई अथवा सिरिंज विनिमय

यह दृष्टिकोण 'IV स्तर तक मादक द्रव्यों के आदी हो चुके लोगों के बीच जो कि एक दूसरे की सुइयां तथा सिरिंजों का उपयोग करते हैं, स्पर्श द्वारा फैलने वाले संक्रमणों के संपर्क में आने के जोखिमों को" कम करता है तथा यह "दुनिया के कई देशों में एचआईवी तथा अन्य संचरित संक्रमणों के नसों में फैलते जाने की दर को कम करने के लिए शुरू किया गया है।"[48] ये कार्यक्रम मादक द्रव्य, इंजेक्शन कक्षों के ही समान

41 वही
42 वही
43 वही, 24
44 वही 26
45 वही
46 वही 27 और 28
47 वही 28
48 वही 29

हैं। अतः मादक द्रव्य इंजेक्शन कक्षों के पक्ष में दिया गया कानूनी तर्क इस दृष्टिकोण पर भी लागू किया जा सकता है।[49]

मादक द्रव्य गुणवत्ता नियंत्रण

"यह यूरोप के कुछ देशों में लागू की गयी नवीनतम हानि न्यूनीकरण पद्धतियों में से एक है। यह वस्तुओं की मिलावट या अशुद्धता के चलते होने वाली हानियों को कम करने तथा नशे के आदियों को ऐसी जगहों पर, जहां मादक द्रव्यों का बार–बार उपयोग होता है (जैसे रेव पार्टियां) अथवा निर्धारित सरकारी सुविधाओं पर निःशुल्क रूप से मादक द्रव्यों का गुणवत्ता नियंत्रण विश्लेषण उपलब्ध कराने की कोशिश करती है।"[50]

इस दृष्टिकोण के हालांकि लघु तथा मध्यम कालीन लाभ हैं जैसे यह मादक द्रव्य संबंधित मौतों को कम करता है, पर दीर्घकालीन संदर्भ में यह मादक द्रव्यों की लत से निपटने में तब तक अक्षम है जब तक कि इसे "परामर्श तथा अन्य हानि–न्यूनीकरण गतिविधियों" से जोड़ा न जाये।[51] बल्कि यह विशेषतः पिछली बार नशा करने वाले युवाओं के बीच में, एक झूठी किस्म का सुरक्षाबोध पैदा कर सकता है अथवा यह नशे के लिए किये जा रहे द्रव्यों के उपयोग को बहुत तेजी से बढ़ाने में भी मदद कर सकता है।[52]

इस "रणनीति का 1971 कन्वेंशन के अनुच्छेद–20 तथा 1961 कन्वेंशन के अनुच्छेद–18 में स्थिर की गई प्रारंभिक शर्तों के साथ सामंजस्य बिठा पाना सबसे ज्यादा कठिन है।[53] हां, मृत्यु दरों तथा अस्पताल में भर्ती किये जाने की दर को कम करके मानव संकटों को कम करने का तर्क अवश्य इसके पक्ष में दिया जा सकता है। बहरहाल इस दृष्टिकोण की बुनियाद में स्थित पराजयवादी प्रवृत्ति तथा कुल मिलाकर समाज में इसके द्वारा भेजे जा रहे भ्रमित करने वाले संदेश कन्वेंशन की भावना के प्रतिकूल जाते हैं।"[54] बहरहाल, कम से कम मादक द्रव्यों के अवैध उपयोग को उकसावा देने या प्रेरणा देने अथवा उनके संग्रह को मदद पहुंचाने, प्रोत्साहन देने और आसान बनाने के संदर्भ में, आवश्यक मंतव्य यहां अवश्य अनुपस्थित होगा।[55]

अंतर्राष्ट्रीय मानव अधिकार कानून : स्वास्थ्य का अधिकार

संयुक्त राष्ट्र घोषणापत्र के अनुच्छेद–55 तथा 56 के अंतर्गत "सभी सदस्य शपथ लेते हैं कि वे संयुक्त रूप से तथा अकेले अंतर्राष्ट्रीय आर्थिक, सामाजिक, स्वास्थ्य तथा संबंधित समस्याओं के समाधान प्राप्त करने के लिए; तथा अंतर्राष्ट्रीय सांस्कृतिक तथा आर्थिक सहयोग के लिए कार्यवाही करेंगे।" यह घोषणापत्र स्वयं स्वास्थ्य के किसी अधिकार का सृजन नहीं करता, यह मात्र शपथकारी पक्षों से स्वास्थ्य संबंधी समस्याओं के समाधान ढूंढ़ने के लिए कहता है। संयुक्त राष्ट्र मानव अधिकार घोषणा (यूएनडीएचआर) कहती है "प्रत्येक व्यक्ति के पास अपने तथा अपने परिवार के स्वास्थ्य के लिए उपयुक्त जीवन स्तर का अधिकार है जिसमें चिकित्सीय देखभाल शामिल है।"[56] व्यक्ति को स्वास्थ्य की बुनियादी जरूरतें कहां तक पूरी हो रही है, इस सीमा को नापने के साधन के तौर पर माना जाता है।[57] स्वास्थ्य जीवन के न्यूनतम स्तर के अधिकार के अंतर्गत आने

49 वही 30
50 वही 31
51 वही 32
52 वही
53 वही 33
54 वही
55 वही 34
56 दिस 10, 1948, जीए रेस. 217, यूएन जीओएआर 3डी सेस. (1948), अनुच्छेद–25(1)
57 स्टीफन डी. जामर, द इंटरनेशनल ह्यूमन राइट टू हैल्थ, 22 साउथ यूनिवर्सिटी लॉ रिव्यू 1, 6 (फॉल 1994)

वाला एक तत्व है।[58] अतः अधिकार सीधे स्वास्थ्य के मुद्दे को संबोधित नहीं करता। साथ ही साथ यह घोषणा वैधानिक रूप से बाध्यकारी कोई उपकरण भी नहीं है।

स्वास्थ्य के अधिकार के संबंध में सबसे अधिक उपयुक्त कथन आर्थिक, सामाजिक तथा सांस्कृतिक अधिकारों के करार (आईसीईएससीआर) के अनुच्छेद–12 में है जिसके अंतर्गत राज्यों के पक्ष "प्रत्येक व्यक्ति के शारीरिक तथा मानसिक स्वास्थ्य के उच्चतम प्राप्त किये जाने योग्य स्तरों का लाभ उठाने के अधिकार को मान्यता देते हैं।"[59] यह अधिकार, "सभी उपयुक्त माध्यमों" द्वारा "प्रगतिशीलतापूर्वक" लागू कराया जाना चाहिए।[60] वे कानून जो इंजेक्शन द्वारा नशा करने वालों को जीवाणुरहित सिरिंजों को प्राप्त करने से रोकते हैं, अंतर्राष्ट्रीय कानून के तहत स्वास्थ्य के उच्चतम प्राप्त योग्य स्तरों तक प्रत्येक व्यक्ति के अधिकार का उल्लंघन करते हुए बताए जा सकते हैं।[61]

आर्थिक, सामाजिक तथा सांस्कृतिक अधिकारों की संयुक्त राष्ट्र कमेटी के अनुसार, जो कि राष्ट्रों के स्तर पर करार की शर्तों के पालन को देखती है, स्वास्थ्य के अधिकार के अंतर्गत स्वास्थ्य देखभाल सुविधाओं, वस्तुओं तथा सेवाओं एवं कार्यक्रमों की उपयुक्त उपलब्धता, तथा उन तक बिना किसी भेदभाव के होने वाली पहुंच, शामिल है।"[62] मादक द्रव्यों तथा उनके आदी लोगों की अवैध स्थिति, व्यक्तियों के अधिकार अथवा देशों की पूर्व स्थापित शर्तों में ऐसे संशोधन नहीं करती, जिनसे यह उनके भी स्वास्थ्य का ध्यान रखे अथवा उनके स्वास्थ्य को भी समान आधारों पर सुरक्षित करने हेतु कदम उठाये। एक ओर स्वास्थ्य संबंधी प्रक्रियाओं में अस्पतालों के मरीजों को जीवाणु रहित उपकरण प्राप्त करने की अनुमति देना अथवा प्राप्त कराना और दूसरी ओर नशे के शिकार लोगों को जीवाणुरहित उपकरण देने से इंकार करना भेदभाव को दर्शाता है।[63]

इसके अलावा आईसीईएसआर का अनुच्छेद–12 सरकारों को विशिष्ट रूप से निर्देशित करता है कि वे "महामारी के ... संक्रमणों के निवारण, इलाज तथा नियंत्रण के लिए; एवं ऐसी परिस्थितियों के निर्माण के लिए, जिनके चलते बीमारी की स्थिति में सभी चिकित्सा सेवाएं तथा चिकित्सा देखरेख उपलब्ध हो सकें.... आवश्यक कदम उठायें।"[64] हानि–न्यूनीकरण उपाय जो कि अब तक दिये गये तथ्यों के अनुसार नसों में नशा लेने वालों के बीच एचआईवी के प्रसार को कम करते हैं, अगर प्रतिबंधित किये जाते हैं तो यह उपर्लिखित सिद्धांत का उल्लंघन करता है। इसी तरह आर्थिक, सामाजिक तथा सांस्कृतिक अधिकारों पर संयुक्त राष्ट्र कमेटी की सामान्य टिप्पणी 14 के अनुसार भी राज्य, स्वास्थ्य के अधिकार का, किसी भी ऐसे कार्य, नीति या कानून द्वारा उल्लंघन करते हैं, जो "अनावश्यक रुग्णता अथवा इलाज द्वारा रोकी जा सकने वाली मृत्यु.... जैसे संभावित परिणाम दे सकते हों।"[65]

एचआईवी/एड्स से निपटने की राज्य की जिम्मेदारी को अक्सर अंतर्राष्ट्रीय मानव अधिकार कानून में शामिल करने की कोशिश की गई है। साथ ही साथ कई टिप्पणीकार यह भी कहते हैं कि स्वास्थ्य के अंतर्राष्ट्रीय अधिकार का पालन करने का राज्य का कर्तव्य उसके लिए यह भी आवश्यक बनाता है कि वह एचआईवी/एड्स से भी निपटे। स्वास्थ्य के अधिकार से संबद्ध अंतर्राष्ट्रीय मानव अधिकार विधेयक को,

58 वही

59 वही 17 पर; इंटरनेशनल कवीनेन्ट ऑन इकॉनॉमिक, सोशल एंड कल्चरल राइट्स (जनवरी 3. 1976) अनुच्छेद–12(1)

60 इंटरनेशनल कोवेनेंट ऑन इकॉनॉमिक, सोशल एंड कल्चरल राइट्स, अनुच्छेद–2

61 ह्यूमन राइट्स वॉच (2003), पृ. 51

62 जनरल कमेंट ऑन आर्टीकल 12, पैरा 12.2000

63 कनाडियन एचआईवी/एड्स लीगल नेटवर्क, लैटर टू टोरन्टो सिटी काउन्सिल, 12/12/2005, (htttp://www.aidslaw.ca/publications/publicationdocEN.phpref=65, अगस्त 2006 पर उपलब्ध)

64 इन्टरनेशल कबीनेट ऑन इकॉनॉमिक, सोशल एंड कल्चरल राइट्स, अनुच्छेद–12(सी)

65 कमेटी ऑन इकॉनॉमिक, सोशल एंड कल्चरल राइट्स. "जनरल कमेंट नं. 14 : द राइट टू द हाइएस्ट अटेनेबल स्टैण्डर्ड ऑव हेल्थ", यून डॉक ई/सी. 12/2000/4, नवम्बर 8, 2000.

मुख्य निषेधकारी पैराडाइम के हानिकारक प्रभावों के एक "मानक प्रतिसंतुलन" उपलब्ध कराने वाले के तौर पर वर्णित किया जाता है।[66] स्वास्थ्य के अधिकार का सम्मान अथवा सुरक्षा करनेवाली सरकार की नीतियां, जैसे कंडोम का उपयोग या सुई–विनिमय योजनाओं जैसे विशिष्ट तौर पर सिद्ध हो चुके उपायों का प्रयोग एचआईवी/एड्स के प्रचार को सबसे सही तरह से रोक सकते हैं।"[67]

कई अदालतों ने नशे की लत को एक बीमारी के बतौर माना है, उदाहरण के लिए रॉबिन्सन बनाम कैलीफोर्निया में, संयुक्त राज्य अमेरिका के सर्वोच्च न्यायालय ने कैलिफोर्निया के एक अधिनियम को खारिज कर दिया, जिसमें किसी व्यक्ति के "मादक द्रव्यों के उपयोग के आदी होने को" कारावास द्वारा दण्डित किये जाने योग्य आपराधिक कृत्य के रूप में स्थापित किया था।[68] अदालत ने माना कि मादक द्रव्यों की लत 'एक बीमारी' है तथा कहा कि कैलीफोर्निया को एक ऐसा अधिनियम बनाना चाहिए जो "एक व्यक्ति के मानसिक रूप से बीमार होने, कोढ़ी होने या खतरनाक संक्रमण से ग्रसित हो जाने को भी आपराधिक कृत्य बना दे।"[69] अदालत ने माना कि यह अधिनियम आठवें संशोधन द्वारा प्रदत्त क्रूर तथा असामान्य दंड से सुरक्षा का उल्लंघन करता है क्योंकि राज्य लोगों को उनकी बीमारी के आधार पर दंडित कर रहा था, न कि उनके किसी विशेष कृत्य के आधार पर।[70] इसी तरह एनट्रॉप बनाम इम्पीरियल ऑयल लिमिटेड[71] के मामले में, ऑन्टेरियो मानव अधिकार कोड के उद्देश्यों से मादक द्रव्यों तथा शराब की लत को भी एक अपंगता माना गया था। अतः किसी राज्य की संक्रमण रोकने, नियंत्रित करने तथा इलाज करने की जिम्मेदारी तथा किसी व्यक्ति के स्वास्थ्य के अधिकार के अंतर्गत, नशे की लत का इलाज और रोकथाम शामिल है। इस स्वास्थ्य संबंधी समस्या के "समाधान" के लिए "आवश्यक" कदम उठाने के तहत, हानि–न्यूनीकरण उपाय शामिल हैं।

इंजेक्शन वाले मादक द्रव्यों की लत पर अंतर्राष्ट्रीय पर्यवेक्षण तथा एचआईवी/एड्स

मानव अधिकार कानून में दिये गये तर्कों को मजबूत करते हुए दिशा निर्देशों तथा घोषणाओं का एक पूरा व्यूह (जाल) है जो संयुक्त राष्ट्र एचआईवी/एड्स कार्यक्रम (यूएनएड्स) तथा डब्ल्यूएचओ जैसे अन्य बहुस्तरीय संगठनों द्वारा जारी किये गये हैं। ये एचआईवी[72] के प्रसार को कम करने के लिए नशीले द्रव्यों के इस्तेमाल के प्रति सार्वजनिक स्वास्थ्य उपाय को प्रोत्साहित करते हैं तथा इनके अंतर्गत शामिल हैं–

एचआईवी/एड्स तथा मानव अधिकारों पर अंतर्राष्ट्रीय दिशानिर्देश[73]

एचआईवी/एड्स तथा मानव अधिकारों के अंतर्राष्ट्रीय दिशानिर्देशों को एचआईवी/एड्स पर संयुक्त राज्य कार्यक्रम तथा यूएनएचसीआर के कार्यालय द्वारा संयुक्त रूप से विकसित किया गया, जो "सरकारी तथा गैरसरकारी विशेषज्ञों और एचआईवी/एड्स के साथ रह रहे लोगों के संचार तंत्रों की आम राय (स्वीकृति) का प्रतिनिधित्व करते हैं।"[74] ये दिशानिर्देश कथनों में परिवर्तित करने तथा "मानव अधिकारों की सुरक्षा तथा

66 इलियट आर. एट अल., (2006), पृ. 121

67 रिआना एम. फ्रोनाप्सेल, एड्स प्रिवेन्सन एंड द राइट टू हेल्थ अंडर इंटरनेशनल लॉ : बर्मा एज द हार्ड केस, 15 पेसिफिक रिम लॉ जर्नल 169, 175 (फरवरी 2006 लेस्ले स्टोन एंड लॉरेन्स ओ. गोस्टिन,

68 रॉबिन्सन बनाम कैलिफोर्निया, 370 यूएस 660 (1962)

69 वही, 666 पर

70 वही, 667 पर

71 एन्ट्रॉप बनाम इम्पीरियल ऑयल लिमिटेड (2000), 50 ओआर. (थर्ड) 18 (सीए)

72 ह्यूमन राइट्स वॉच (2003), पृ. 51

73 ऑफिस ऑव द यूनाईटेड नेशन्स हाई कमिश्नर फॉर ह्यूमन राइट्स एचआईवी/एड्स एंड ह्यूमन राइट्स इंटरनेशनल गाइडलाइन्स, एचआर/पीयूबी/98/1 सितंबर 1998

74 ह्यूमन राइट्स वॉच (2003) पृ. 52

एचआईवी संबंधित सार्वजनिक स्वास्थ्य लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए" सरकारों द्वारा अपनाये जा सकने वाले उपायों की प्राप्ति के प्रति लक्षित हैं।"[75]

- प्रमुखतः दिशा–निर्देश 4 अनुसंशित करता है कि : "इंजेक्शन से नशा करने की लत के शिकार लोगों में एचआईवी संचरण के जोखिम को कम करने तथा ऐसे लोगों को एचआईवी संबंधित देखभाल और इलाज उपलब्ध कराने के लिए सरकार द्वारा किये गये उपायों के रास्ते में आपराधिक कानूनों को बाधक नहीं बनना चाहिए। आपराधिक कानूनों पर निम्न को ध्यान में रखते हुए पुनर्विचार किया जाना चाहिए–
  - सुई तथा सिरिंज विनिमय कार्यक्रमों का वैधानीकरण अथवा अनुमोदन
  - सुइयों तथा सिरिंजों के वितरण, व्यवस्था, तथा अधिग्रहण को आपराधिक करार देने वाले कानूनों की समाप्ति।"[76]
- दिशानिर्देश 6 (2002 में संशोधित) कहता है – राज्यों को, सभी व्यक्तियों की एक समान तथा निरंतर आधार पर, एचआईवी/एड्स की रोकथाम, इलाज, देखभाल तथा सहयोग के लिए अच्छी गुणवत्ता की वस्तुएं, सेवाएं तथा जानकारी एवं एचआईवी/एड्स संक्रमणों एवं स्थितियों के उपचारात्मक, निरोधात्मक तथा हानि कम करने के उद्देश्य से की जाने वाली देखभाल के अंतर्गत आने वाली एंटी रेट्रोवायरल थेरेपी तथा अन्य प्रभावी दवाइयों, निदान संबंधी तथा अन्य संबंधित तकनीकों को, उपलब्ध कराने तथा उन तक पहुंच सुनिश्चित करने के लिए कदम उठाने चाहिएं।"
- दिशानिर्देश 7 कहता है – राज्यों को उन लोगों के लिए विशिष्ट तौर पर बनायी गयी तथा लक्षित एचआईवी रोकथाम तथा देखभाल की योजनाओं को लागू करने का समर्थन करना चाहिए जो गरीबी, भाषा, सामाजिक या कानूनी या शारीरिक कारणों के चलते हाशिये पर हैं, जैसे (.....) इंजेक्शन से मादक द्रव्य लेने वाले।"[77]

विश्व स्वास्थ्य संगठन दिशानिर्देश

मई 2003 में, 56वें विश्व स्वास्थ्य सम्मेलन ने एचआईवी/एड्स के लिए की विश्व स्वास्थ्य संगठन की वैश्विक स्वास्थ्य क्षेत्र रणनीति (जीएचएसएस) 2003–2007 को मंजूरी दे दी। उपयुक्त उपायों द्वारा हानि–न्यूनीकरण को इस रणनीति के केंद्रीयकारक के बतौर रखा गया है, जिसमें "जीवाणु रहित इंजेक्शन उपकरणों तक व्यापक पहुंच, तथा इंजेक्शन द्वारा इसे लिये जाने की आवृत्ति को कम करने के लिए मादक द्रव्य निर्भरता का इलाज एवं बढ़ी हुई सेवाएं प्रदान करना शामिल है।"[78]

एचआईवी/एड्स पर वचनबद्धता की घोषणा 2001

इसके अलावा, सभी यूएन सदस्य राज्यों ने एचआईवी/एड्स पर वचनबद्धता की घोषणा को स्वीकार कर लिया है, जो यह मानती है कि "प्रभावकारी निरोधक... रणनीतियों के लिए जरूरी होगा कि जीवाणु रहित इंजेक्शन उपकरणों.... तक स्वतः गैर–भेदभावपूर्ण पहुंच हो, तथा उनकी उपलब्धता अधिक हो।"[79] निष्कर्षतः उन्होंने 2005 तक "जीवाणुरहित इंजेक्शन उपकरणों" तथा "मादक द्रव्य उपयोग से संबंधित हानि न्यूनीकरण प्रयासों" सहित "निरोधक कार्यक्रमों की एक विस्तृत श्रृंखला" को उपलब्ध कराने का वचन लिया था।[80]

---

75 यूएनएड्स (1998), एचआईवी/एड्स एंड ह्यूमन राइट्स : इंटरनेशनल गाइडलाइन्स. जेनेवा : यूएनएड्स ओएचसीएचआर, 1998, पैरा 10. कनाडियन एचआईवी/एड्स लीगल नेटवर्क (2005) से लिया गया।

76 गाइडलाइन 4, पैरा 29 (डी)

77 गाइडलाइन 6, पैरा 38 (आई)

78 http://www.who.int/hiv/pub/advocacy/ghss/en/

79 पैरा 23. कनाडियन एचआईवी/एड्स लीगल नेटवर्क (2005) से लिया गया.

80 पैरा 52. ह्यूमन राइट्स वॉच (2003), पृ. 51 से लिया गया

समन्वय के लिए संयुक्त राष्ट्र प्रशासनिक कमेटी- पेपर सितं. 2000[81]

- "मादक द्रव्यहानि–न्यूनीकरण तथा एचआईवी निवारण कार्यक्रमों को व्यापक सामाजिक कल्याण तथा स्वास्थ्य सुधार योजनाओं और निवारण की शिक्षा वाले कार्यक्रमों के साथ जोड़ा जाना चाहिए। एक सहयोगात्मक वातावरण, जिसमें स्वस्थ जीवन शैली आकर्षक तथा प्राप्त किये जाने योग्य हो, तथा जिसमें गरीबी निवारण एवं शिक्षा और रोजगार के अवसर शामिल हों, मादक द्रव्यों की जरूरत कम करने तथा एचआईवी को रोकने के विशिष्ट हस्तक्षेपों को बनाए रखेगा।..
- "मादक द्रव्य की समस्याएं आपराधिक न्याय हस्तक्षेपों भर से ही नहीं सुलझाई जा सकतीं। एक दंडकारी दृष्टिकोण निवारण तथा देखभाल सेवाओं के जरूरतमंद लोगों को, भूमिगत होने पर मजबूर कर सकता है। जहां कहीं भी उचित हो, मादक द्रव्यों की लत का इलाज दंड के साथ–साथ या उसके विकल्प के बतौर, उपलब्ध कराया जाना चाहिए। एचआईवी के संचरण को रोकने के लिए आपराधिक न्याय संस्थाओं के अंतर्गत एचआईवी निवारण तथा मादक द्रव्यों की आदत के इलाज के कार्यक्रम भी अत्यंत महत्वपूर्ण होते हैं।"

मादक द्रव्य लेने वालों की देखभाल तथा उनमें एचआईवी निवारण पर यूएनएड्स का संयुक्त वक्तव्य

"यह वक्तव्य इंजेक्शन संबंधित एचआईवी से निपटने तथा हानि न्यूनीकरण के प्रति अधिक वचनबद्धता पर जोर देता है तथा इन्हें द्रव्य उपयोग पर हुए अवैध मादक अंतर्राष्ट्रीय समझौतों के अनुरूप मानता है।

व्यावहारिक (वास्तविक) अनुमोदन बनाम विधि सम्मत अनुमोदन

कई देशों में, हानि–न्यूनीकरण उपायों और सुविधाओं को राज्य द्वारा विधि सम्मत अनुमोदन की जगह (वास्तविक) व्यावहारिक अनुमोदन दिया जाता है। जहां दूसरे के अंतर्गत "कानून अपरिवर्तित रहते हैं, पर कानून लागू करने का तरीका प्रशासनिक नीतियों के द्वारा बदलता रहता है;" वहीं पहले के अंतर्गत स्वयं कानून में ही बदलाव किया जाता है।"[82] उदाहरण के लिए नीदरलैंड में, जहां कैनाबीस की खरीद, बिक्री तथा उपयोग तकनीकी तौर पर एक आपराधिक कृत्य है वही कानून लागू करने वाले अधिकारी "कॉफी की दुकानों" के अस्तित्व को सहन करते हैं जो कि एक "ऐसी जगह होती है जहां व्यक्ति व्यक्तिगत उपभोग के लिए हशीश तथा मारिजुआना को कम मात्रा में खरीद सकते हैं।"[83] बहरहाल, किसी वैधानिक बचाव के अभाव में, इन सुविधाओं का उपयोग करने वाले नशे के आदी लोग कानून लागू करने वाले अधिकारियों के द्वारा किये जा सकने वाले अभियोजन के प्रति आरक्षित रहते हैं। उदाहरण के लिए ह्यूमन राइट्स वॉच द्वारा यूक्रेन में किये गये एक अध्ययन[84] ने यह पाया कि एचआईवी निवारण की सेवाओं, जैसे सुई विनिमय को मिलने वाले सरकारी समर्थन के बावजूद, पुलिस की मनमर्जी के चलते नशे के शिकार लोगों को इन सुविधाओं से वंचित रखा गया था। व्यक्तिगत उपयोग के लिए मादक द्रव्यों की न्यूनतम मात्रा को रखने के भी अपराधीकरण किये जाने के चलते पुलिस अपने गिरफ्तारी कोटे की पूर्ति के लिए आसानी से नशे के आदी व्यक्तियों को शिकार बना लेती है।[85] यदि हानि न्यूनीकरण नीतियों को एक निषेधकारी ढांचे के साथ–साथ रहना होगा, तो कानून प्रवर्तन की समझ तथा सहयोग आवश्यक है।

---

81 फोर्टसन, आर. (2006), पृ. 14 से उद्धृत.

82 नील हन्ट, ए रिव्यू ऑफ द एविडेन्स–बेस फॉर हार्म रिडक्शन अप्रोयज टु ड्रग यूज, फारवर्ड थिंकिंग ऑन ड्रग्सः ए रिलीज इनीशियेटिव, सेक्शन–3.4. http://www.forward-thinking-on-drugs.org/review2-print/html

83 मेलिसा टी. आयोगी, बियॉन्ड प्यूनिटिव प्रोहिबिशन : लिबरालाइजिंग द डायलॉग ऑन इन्टरनेशनल ड्रग पॉलिसी, 37 न्यूयार्क यूनिवर्सिटी जर्नल ऑव इंटरनेशनल लॉ एंड पॉलिटिक्स 555, 594 (स्प्रिंग 2005).

84 ह्यूमन राइट्स वॉच (2006). रिटॉरिक एंड रिस्क : ह्यूमन राइट्स अब्यूजिस इम्पीडिंग यूक्रेन्स फाइट अगेन्स्ट एचआईवी/एड्स, वोल्यूम 18, न. 2(डी) (डाउनलोड किया गया hrw.org/reports/2006/ukraine0306/March 2006, August 2006से)

85 ह्यूमन राइट्स वॉच, (2006),

निषेध तथा हानि न्यूनीकरण विधेयक दोनों के के चलते उठने वाली वैधानिक अस्पष्टताएं तथा विरोधाभास सिरिंज प्राप्त करने का उदाहरण है।

संयुक्त राज्य अमेरिका में सुई विनिमय कार्यक्रम

संयुक्त राज्य अमेरिका में, जनस्वास्थ्य नीतियां परंपरागत तौर पर राज्यों की पुलिस शक्तियों के अंतर्गत आती है।[86] वर्तमान में, संघीय कानून राज्यों को सुई विनिमय कार्यक्रम स्थापित करने से नहीं रोकते। बल्कि संघीय नियंत्रणों ने तो स्थानीय सुई विनिमय कार्यक्रमों को होने वाली संघीय फंडिंग को कम करने पर ध्यान केंद्रित कर रखा है।[87] 1988 स्वास्थ्य ऑम्निवस का विस्तार सुई विनिमय कार्यक्रमों में संघीय फंड के उपयोग को तब तक के लिए प्रतिबंधित कर देता है जब तक जन–स्वास्थ्य सेवा का सर्जन जनरल यह स्थापित न कर ले कि उनका उपयोग नशीली दवाओं की लत तथा एचआईवी/एड्स के प्रसार पर रोक लगायेगा।[88] जहां सर्जन जनरल इस बात को स्थापित कर चुके हैं, वहीं इस प्रतिबंध को अभी तक नहीं हटाया गया है।

बहरहाल, सुई विनिमय कार्यक्रम स्थानीय कानूनों के अंतर्गत अस्तित्व में हैं। उदाहरण के लिए, कैलिफोर्निया में कई स्थानीय सरकारों ने राज्य आपातकालीन प्रावधानों के अंतर्गत सुई विनिमय कार्यक्रमों को वैधानिक ठहराया है। राज्य का आपातकाल प्रावधान एक "स्थानीय आपातकाल" को "काउंटी, शहर तथा काउंटी, अथवा शहर की स्थानीय हदों में, ऐसी परिस्थितियों जैसे.... आपदा द्वारा बना दी गई.... उन दोहरे तौर पर घोषित की गई स्थितियों को कहते हैं जो व्यक्तियों की सुरक्षा के लिए विनाशकारी अथवा अत्यंत खतरनाक हों।"[89] सिरिंज विनिमय कार्यक्रम बिलकुल इसी तरह की एक जनस्वास्थ्य आपात स्थिति से नसों में नशा लेने वालों द्वारा संक्रमण का प्रसार करने के खतरे से लड़ने का उपयुक्त साधन है। यह जन–स्वास्थ्य आपात स्थिति सुई विनिमय कार्यक्रमों को न्यायसंगत ठहराती है जो कि अन्यथा राज्य के मादकद्रव्य कानूनों का उल्लंघन कर रहे होते हैं। बहरहाल, जहां स्थानीय स्वास्थ्य आपातकाल घोषणा द्वारा सुई विनिमय कार्यक्रम का वैधानीकरण कर दिया गया है, वहीं इसके बावजूद "सिरिंज विनिमय को जोनिंग तथा अन्य नगरपालिका उपकानूनों के तहत बंदिशों का शिकार होना पड़ सकता है।"[90] 2004 से ही, कैलीफोर्निया उन काउंटियों तथा शहरों में गैर–अनुशंसित सिरिंजों की बिक्री की अनुमति दे रहा है जो राज्यस्तरीय संक्रमण निवारण प्रदर्शन प्रोजेक्ट में भागीदारी करने के लिए चुनाव करते हैं।

सुई विनिमय कार्यक्रम स्थानीय स्वास्थ्य विभागों द्वारा भी स्थापित किये जाते हैं, जैसे वाशिंगटन तथा न्यूयार्क के उदाहरण।[91] महिलाओं और बच्चों में एड्स की दर से चिंतित हवाई की विधायिका को सुईं विनिमय कार्यक्रमों का राज्य के कानून द्वारा वैध घोषित करना पड़ा।[92] 1990 में, राज्य की विधायिका ने एक राज्यव्यापी सिरिंज विनिमय कार्यक्रम स्थापित किया जिसके अंतर्गत एक ओवरनाइट कमेटी को विस्तृत रूप से रिपोर्ट किया जाना भी आवश्यक बनाया गया है।

---

86 बहरहाल, 1984 में संघीय सरकार ने पारंपरिक रूप से राज्य के नियन्त्रण मे आने वाले इस क्षेत्र में अतिक्रमण किया तथा जीवाणुरहित सुईयों की सप्लाई को सीमित कर दिया जब उसने मेल ऑर्डर ड्रग पैराफर्नेलिया एक्ट का लागू किया, जिसमें दवा–उपकरणें के अंतर्राज्यीय परिवहन पर रोक लगा दी।

87 स्टीफन आर साल्बु, नीडल एक्सचेंज, एचआईवी ट्रान्समिशन, एंड इल्लीगल ड्रग यूज : इन्फॉर्मिंग लॉ एंड पब्लिक पॉलिसी विद साइंस एंड रेशनल डिस्कोर्स, 33 हार्वर्ड जर्नल ऑन लेजिस्टेशन 105, 117 (विन्टर 1996).

88 42 यूएससीएस § 300 ईई–5; स्वास्थ्य तथा मानव सेवाएं सेक्रेटरी भी इस प्रतिबन्ध को जन कानून 10578 के सेक्शन–506 के अंतर्गत हटा सकता है।

89 कैलिफोर्निया गवर्नमेंट कोड 8558(सी)

90 ह्यूमन राइट्स वॉच, इन्जेक्टिंग रीजन : ह्यूमन राइट्स एंड एचआईवी प्रिवेन्शन फॉर इन्जेक्शन ड्रग यूजर्स, कैलीफोर्निया : ए केस स्टडी, वोल. 15 न. 2(जी), पृ. 36 (सितम्बर 2005). http://www.hrw.org/reports/2003/usa0903full.pdf.

91 मेरी एन डेम्पसे, ए शॉट इन द आर्म: लीगल एंड सोशल ऑब्सटेकल्स टु द यूनाईड स्टेट्स नीडल एक्सचेन्ज प्रोग्राम्स, 17 बोस्टन कॉलेज थर्ड वर्ल्ड लॉ जर्नल 31, 38–9 (विन्टर 1997)

92 वही, 40 पर

अमेरिका की न्यायपालिका की प्रतिक्रिया

सिरिंज रखने की वैधानिक स्थिति के बारे में अस्पष्टता, तथा नियंत्रणों के स्थानीय चरित्र की परिणति पूरे संयुक्त राज्य अमेरिका में विभिन्न प्रकार के अदालती आदेशों के घालमेल के रूप में हुई है। "न्यायालयों के मिश्रित परिणामों ने न सिर्फ यह साबित किया कि न्यायपालिका एईपी की वैधानिकता की समस्या नहीं सुलझा सकती, बल्कि यह भी प्रमाणित किया कि सुई विनिमय नीति का उपयुक्त फोरम विधायिका ही है।"[93]

न्यूयार्क में, कार्यकर्ताओं को न्यायिक व्यवस्था के उपयोग द्वारा राज्य के सुई अनुशंसा कानूनों को नीचा दिखाने में सफलता मिली। जनता बनाम बोर्दोविट्ज में प्रतिवादी पक्ष को न्यूयार्क दंडसंहिता धारा–220.45 के तहत आपराधिक रूप से एक हाइपोडर्मिक सुई रखने में आरोपित किया गया।[94] प्रतिवादी पक्ष ने एक सुई विनिमय कार्यक्रम की स्थापना की थी जिसमें वे मैनहट्टम के इलाके में नशे के शिकार लोगों को जीवाणुरहित हाइपोडर्मिक सुइयां उपलब्ध कराते थे। प्रतिवादी पक्ष ने हाइपोडर्मिक सुई रखना स्वीकार किया, पर दावा किया कि एक उनका ऐसा करना गैरकानूनी नहीं है। प्रतिवादी पक्ष ने कहा कि उनका जीवाणुरहित हाइपोडर्मिक सुइयां रखना सही था क्योंकि एड्स की महामारी द्वारा फैलाए खतरों से निपटने के लिए जीवाणुरहित हाइपोडर्मिक सुइयां आवश्यक हैं। न्यायालय ने यह व्यवस्था दी कि प्रतिवादी पक्ष जीवाणुरहित हाइपोडर्मिक सुई के आपराधिक अधिग्रहण के दोषी नहीं थे क्योंकि उनका आचरण चिकित्सीय आवश्यकता के बचाव के अंतर्गत उचित था। न्यूयार्क में, चिकित्सीय आवश्यकता के लिए जरूरी है कि –

1 प्रतिवादी पक्ष ने एक तार्किक विश्वास के आधार पर, जो कि चिकित्सीय साक्ष्यों से समर्थित है, कार्य किया, कि इनका कार्य एक प्रमुख सार्वजनिक या वैयक्तिक चोट को रोकने के लिये किये गये एक आपात उपाय के रूप में आवश्यक था;
2 प्रतिवादी पक्ष के कार्य संकट को जन्म नहीं देते;
3 कानून के उल्लंघन से होने वाले नुकसान के मुकाबले, वैकल्पिक या सार्वजनिक चोट को रोकना स्पष्ट रूप से कहीं अधिक जरूरी है;
4 अन्य विकल्प उपलब्ध नहीं हैं, तथा
5 पिछला विधायिका संबंधी कार्य बचाव को असंभव नहीं बनाता तथा प्रतिवादी पक्ष के कार्य सिर्फ नैतिकता के विचारों तथा उल्लंघित कानून के औचित्य पर ही आधारित नहीं होते हैं। न्यायालय ने स्थापित किया कि "शहर के सामने खड़े संकट की प्रकृति, साथ ही साथ दिए गए चिकित्सकीय साक्ष्य प्रतिवादी पक्ष के कार्य की संस्तुति करते हैं।"

कुछ अदालतों ने स्थानीय विधि निर्माण को राज्य के मादक द्रव्य संबंधी अनुशंसा कानूनों के ऊपर प्रभावी होने की अनुमति दी है। वाशिंगटन में, प्रतिवादी पक्ष – स्पोकान काउंटी जिला अटॉर्नी तथा राज्य अटॉर्नी ने, काउंटी में एक सुई विनिमय कार्यक्रम की संस्तुति करनेवाले एक निचली अदालत के फैसले को चुनौती दी। स्पोकान काउंटी हेल्थ डिस्ट्रिक्ट बनाम ब्रोकेट में, प्रतिवादी पक्ष ने कहा कि काउंटी का सुई विनिमय कार्यक्रम राज्य के मादक द्रव्य संबंधी कानूनों का उल्लंघन करता है।[95] स्पोकान काउंटी स्वास्थ्य जिला (एससीएचडी) स्वास्थ्य बोर्ड ने एक प्रस्ताव स्वीकृत किया जिसके अंतर्गत स्पोकान में एक सुई विनिमय कार्यक्रम को एचआईवी/एड्स की आपदा के प्रसार से लड़ने की अपनी मुहिम के हिस्से के बतौर स्थापित किया गया। अदालत ने यह देखने पर कि राज्य विधायिका ने स्थानीय स्वास्थ्य बोर्डों को संक्रमण के निवारण

---

93 डेनियल गेसर, नीडल एक्सचेंज प्रोग्राम फंडिंग, 37 हार्वर्ड जर्नल ऑन लेजिस्लेशन 265, 269 (विन्टर 2000).
94 जनता बनाम बोर्दोविट्ज, 588 एनवाईएस 2डी 507 (एनवाई सिटी क्रिम. सीटी. 1991)
95 स्पोकान काउंटी हेल्थ डिस्ट्रिक्ट बनाम ब्रोकेट, 839 पी. 2डी 324 (वॉश, 1992)

तथा उससे सुरक्षा के लिए व्यापक शक्तियां दे रखीं थीं, स्पोकान के सुई विनिमय कार्यक्रम की वैधता को बनाये रखा। अदालत ने यह भी तर्क दिया कि राज्य की एड्स एक्ट की, जो कि स्वास्थ्य कर्मियों को नशा करने वालों को उनकी गंदी सुईयां विषाणुमुक्त करके वापस देने का अधिकार देता है, थोड़ी स्वतंत्रता पूर्वक की गई व्याख्या सुई विनिमय कार्यक्रम की अनुमति देती प्रतीत होती है।

बहरहाल, एक सुई विनिमय कार्यक्रम में भागीदारी मात्र ही अधिग्रहण पूरा बचाव उपलब्ध नहीं कराती। जनता बनाम मुनरो में, प्रतिवादी पर एक हाइपोडर्मिक सुई के अपराध का आरोप लगाया गया।[96] प्रतिवादी इस आरोप को खत्म कराने के लिए अदालत गया और तर्क दिया कि राज्य द्वारा चलाये जा रहे एक सुई विनिमय कार्यक्रम में उसकी भागीदारी उसे अभियुक्त बनाये जाने से रोकती है। बहरहाल, अपनी गिरफ्तारी के समय प्रतिवादी के पास जो सुइयां बरामद हुई, उनमें से किसी पर भी वे निशान नहीं थे, जो उन सुइयों पर होते हैं जिन्हें सरकार के सुई विनिमय कार्यक्रम के तहत बांटा जाता है। अदालत ने उसकी प्रार्थना को अस्वीकार कर दिया। अतः सुई विनिमय योजना को स्थापित करने वाले स्वास्थ्य विभाग के निर्देश, किसी प्रतिवादी को अभियोजन से नहीं बचा सकते जबकि तथ्य इस संभावना से इंकार करते हों कि प्रतिवादी के पास से मिली सुइयां राज्य संचालित योजना के तहत विनिमय की गयीं थीं या की जानीं थीं।

न्यूयार्क के विपरीत, मैसाचुसेट्स के कार्यकर्ताओं को अदालतों में प्रतिरोध का सामना करना पड़ा। कॉमनवेल्थ बनाम लेनो में, प्रतिवादियों ने बिना परामर्श के हाइपोडर्मिक सुइयों के अधिग्रहण और वितरण अपराध में दी गयी सजा के विरुद्ध अपील की।[97] प्रतिवादियों ने, जो कि एक सुई विनिमय कार्यक्रम चलाते थे, तर्क दिया कि उन्हें गलत तरीके से मुकदमे के दौरान चिकित्सकीय आवश्यकता पर जूरी के निर्देशों से वंचित किया गया। बहरहाल, अदालत ने आवश्यकता के बचाव को लागू किये जाने योग्य न मानते हुए दोषी ठहराये जाने की संस्तुति कर दी। अदालत ने माना कि आवश्यकता का बचाव केवल तभी लागू होता है जब रोकी जाने वाली हानि प्रत्यक्ष होती है तथा यह भविष्य में आनेवाली हानियों जैसे एचआईवी/एड्स आपदा पर लागू नहीं होता। अदालत ने यह भी तर्क दिया कि मादक द्रव्य संबंधित उपकरणों को सीमित करने का पक्ष लेने की विधायिका की सार्वजनिक नीति को भी न्यायिक सहमति (आदर) प्राप्त करनी चाहिए। साथ ही साथ अगर प्रतिवादी इस नीति से असहमत थे तो वे किसी तरह 'उपचार–हीन' नहीं थे, क्योंकि वे विधायिका से अपील करने जा सकते थे।

ऐसे ही प्रतिरोध का सामना न्यू जर्सी की अदालतों में करना पड़ा। राज्य बनाम सौर्ज के मामले में, प्रतिवादियों को अपने सुई विनिमय कार्यक्रम को स्थापित करने तथा प्रचारित करने वाले गैरजिम्मेदार व्यक्तियों के रूप में न्यू जर्सी के एक कानून के तहत अभियोजित किया गया।[98] उन्होंने इसे खारिज करने के लिए प्रस्ताव दायर किया जिसमें यह तर्क दिया गया "कि उनके आचरण ने वास्तव में ऐसी कोई हानि पहुंचायी या पहुंचाने का खतरा पैदा नहीं किया था, जिसे रोकने के लिए हाइपोडर्मिक सुइयों के अधिग्रहण और वितरण को निषिद्ध करने वाला कानून था"; तथा यह कि उनका आचरण एचआईवी/एड्स के प्रसार को कम करने के लिए था, जो कि ऐसा लक्ष्य है, जो विधायिका के संज्ञान में उस समय नहीं था, जब वह इस अपराध को परिभाषित कर रही थी। अदालत ने यह पता चलने पर कि प्रतिवादियों का आचरण कानून का (डीमिनिमिस) मामूली सा उल्लंघन नहीं करता क्योंकि उनका आचरण साधारण नहीं है तथा प्रासंगिक न्यू जर्सी कानून का उपयोग निरर्थक नहीं हैं, प्रस्ताव को अस्वीकार कर दिया। अदालत को यह भी कहा कि "सुई विनिमय कार्यक्रम के लाभ विवाद का विषय (बने हुए) थे।"

96 जनता बनाम मुनरो, 593 एनवाईएस. 2डी 742 (1992)
97 कॉमनवेल्थ बनाम लेनो, 616 एनई.2डी 453 (मास. 1993)
98 स्टेट बनाम सोर्ज, डीडी591 ए2डी 1382 (एनजे 1991)

राज्य बनाम मैक्कॉग के मामले में एक हाइपोडर्मिक सुई को दूसरी द्वारा बदलने का काम करने के लिए न्यू जर्सी आपराधिक न्याय संहिता के खंड 2 सी–36–6 के अंतर्गत सजा दिये जाने के विरुद्ध प्रतिवादियों ने अपील दायर की।[99] प्रतिवादी एक बिना मुनाफे के चलने वाले निगम के सदस्य थे जो एक सुई विनिमय कार्यक्रम चलाते थे। प्रतिवादियों ने कहा कि उनका अभियोजन वापस ले लिया जाना चाहिए क्योंकि उन्होंने किसी आपराधिक नीयत से नहीं, बल्कि लोगों का जीवन बचाने की नीयत से यह काम किया है, उनका आचरण आवश्यकता के बचाव के अंतर्गत सही था; तथा उनके कार्य बहुत ही न्यून स्तर के थे। न्यायालय ने उनसे असहमति जाहिर की और उनकी दोषसिद्धि बरकरार रखी। अदालत ने माना कि बुरे मंतव्य की अनुपस्थिति के बावजूद दोषसिद्धि से मुक्त नहीं किया जा सकता क्योंकि अध्यादेश के अंतर्गत आचरण वर्णित है तथा प्रतिवादियों को पता था कि वो कानून का उल्लंघन कर रहे थे। अदालत ने यह भी पाया कि 2 सी: 36–6 का अध्यादेशीय प्रावधान मामले में स्वास्थ्य की आवश्यकता के बचाव को भी लागू न किये जा सकने योग्य बना देती है। अदालत ने जनता बनाम बोर्दोविट्ज मामले में भिन्नता प्रकट करते हुए उसे असंगत माना क्योंकि बोर्दोविट्ज में एक सुई विनिमय कार्यक्रम का मामला था, जबकि वर्तमान केस में सामान्यतः सुइयां बांटी गयीं थी न कि विनिमय की गई क्योंकि दी गयी सुइयों के मुकाबले बहुत कम ही लीं गईं थीं। अदालत ने बोर्दोविट्ज मामले में लागू न्यूयार्क अध्यादेश के बीच तथा वर्तमान केस में लागू विस्तृत न्यू जर्सी मादक द्रव्य अधिनियम के बीच अंतर को भी संज्ञान में लिया। अंततः अदालत ने पाया कि प्रतिवादी के कार्य कानून के न्यून उल्लंघन नहीं हैं, क्योंकि वे अवैध मादक द्रव्य उपयोग को मदद पहुंचा रहे थे अतः उनका आचरण कानून का मात्र तकनीकी उल्लंघन नहीं था।

कानून प्रवर्तन (विभागों) (लागू करने वालों) की प्रतिक्रिया

अधिकांशतः पुलिस सिरिंज कानून को मादक द्रव्यों के व्यसनियों पर लागू करती है जिनके पास कानूनी सिरिंज विनिमय कार्यक्रमों से प्राप्त सिरिंजें होती हैं। ह्यूमन राइट्स वॉच द्वारा किये गये एक अध्ययन में तो पुलिस द्वारा जानबूझकर तथा चुनकर सिरिंज विनिमय परिसरों के बिलकुल नजदीक ही, सिरिंज बदलवाने पहुंचे व्यक्तियों को रोकने के कई मौकों को डॉक्यूमेंट किया गया है। ह्यूमन राइट्स वॉच द्वारा डॉक्यूमेंट किये गये कई मामले हालांकि सिरिंज रखने या दूसरे अपराध के अंतर्गत अभियोजित किये जाने में परिणत नहीं हुए, पर इस्तेमाल की हुई तथा जीवाणुरहित, दोनों, सिरिंजों का जब्त किया जाना जरूर देखा गया।[100]

कई न्यायाधिकारों में नियंत्रित द्रव्य अधिग्रहण कानून के तहत मादक द्रव्य की कोई भी वजन योग्य मात्रा शामिल है, या शामिल करती हुई व्याख्या की जा सकती है। इसके परिणामस्वरूप इस्तेमाल के बाद सिरिंज की ट्यूब में बचा रह गया मादकद्रव्य, द्रव्य अधिग्रहण का दोषी ठहराये जाने के लिए पर्याप्त हो सकता है।[101] यह स्थिति यूएस के कुछ न्यायाधिकारों के अंतर्गत उपस्थित है, जहां इंजेक्शन से मादक द्रव्य लेने वाले लोगों को इन परिस्थितियों के अंतर्गत सजा दी गई। ऐसे अभियोजन का भय "खुद अपने पास सिरिंज को रखने (अधिग्रहण) को व्यावहारिक तौर पर नियंत्रित करता है।"[102] इससे कुछ लोग सिरिंजों के विनिमय से जुड़े जोखिम उठाने के मुकाबले उन्हें दोबारा इस्तेमाल करना अधिक सही मानते हैं।

व्यक्तिगत उपयोग के लिए मादक द्रव्य रखने का गैर-अपराधीकरण

कई देशों ने व्यक्तिगत उपयोग के लिए मादक द्रव्यों में से कुछ अधिग्रहण को गैर आपराधिक बनाने अथवा कानून द्वारा वैध बनाने की दिशा में कदम उठाये हैं। उदाहरण के लिए, स्पेन में अधिग्रहण को केवल तभी

99 314 एनजे. सुपर. 254, 267 (एपीपी. डिवीजन 1998)
100 ह्यूमन राइट्स वॉच, (2003), पृ. 15
101 बुरिस, एस, स्ट्रैथडी, एस. एंड वर्निक, जे, (2002) ए स्टेट ऑव आर्ट असेसमेंट ऑव लॉ एंड पॉलिसी, नवम्बर 30, 2002, पृ. 25
102 डो बनाम ब्रिजपोर्ट पुलिस विभाग, 198 एफआरडी 325 (डी कॉन.: 2001); रो बनाम न्यूयार्क शहर, 2002 डब्ल्यूएल 31599622 (एसडीएनवाई, 2002)

अपराध माना जाता है, जब वह सार्वजनिक स्थल पर उपयोग में लिया जाता है।[103] कोलम्बिया और पेरु जैसे दक्षिण अमरीकी देशों में भी व्यक्तिगत उपयोग के लिए मादक द्रव्य रखने को अपराध के दायरे से मुक्त कर दिया गया है।[104]

साथ ही साथ, व्यक्तिगत उपयोग के लिए मादक द्रव्य रखने को निषेध करार देने की संवैधानिकता भी अब दुनिया के कई न्यायालयों में कठघरे में आ गयी है, विशेषतः मारिजुआना के उपयोग तथा अधिग्रहण के संदर्भ में। मादक द्रव्य निषेध के खिलाफ उठने वाली चुनौतियां अधिकतर व्यक्ति के निजता के अधिकार, स्वतंत्रता के अधिकार तथा 'हानि सिद्धांत' पर आधारित होती हैं।

अदालतों ने विभिन्न प्रकार से इन तर्कों का जवाब दिया है। अर्जेंटिना में, कई प्रांतीय अदालतों ने यह स्थापित किया है कि व्यक्तिगत इस्तेमाल के लिए मादक द्रव्य रखने को निषिद्ध करने वाले कानून, संविधान प्रदत्त निजता के अधिकार का उल्लंघन करते हैं।[105] इस तरह के पहले मामलों में से ब्यूनस आयर्स के कोर्ट ऑव गारंटीज के जज लुई एस्तबान निट्टी ने कहा कि "व्यक्तिगत उपयोग के लिए किये गये साधारण मादक द्रव्य अधिग्रहण को दण्डित करके, राज्य सिर्फ नशे के व्यसनियों की समस्या बढ़ाता है या, मादक द्रव्यों का उपयोग करने वाले रचनात्मक लोगों के संदर्भ में उन्हें अपराधी बनाकर दंड व्यवस्था में झोंक देता है।"[106] बहरहाल, न्यायाधीश ने सार्वजनिक रूप से मारिजुआना का उपयोग कर रहे लोगों के खिलाफ आरोप बनाये रखते हुए व्यवस्था दी; कि "वह व्यक्ति जनता में है तथा इस तरह जन स्वास्थ्य को प्रभावित कर रहा है।"[107] निट्टी के निर्णय का अनुसरण करते हुए एक लोमास डी जामोटा के एक अन्य प्रांतीय अदालत के जज डेनियल विगियनो ने भी मादक द्रव्य रखने पर बने कानून को यह मानते हुए असंवैधानिक कहा है, कि व्यक्तिगत मादक द्रव्य उपयोग सार्वजनिक स्वास्थ्य को प्रभावित नहीं करता है। जज ने व्यवस्था दी कि अर्जेन्टिना के संविधान का अनुच्छेद–19 "निजता के अधिकार" की गारंटी देता है तथा "व्यक्तिगत स्वतंत्रता के एक ऐसे क्षेत्र को परिभाषित करता है जो राज्य के हस्तक्षेपों को बाहर रखता है।"

दूसरी ओर कनाडा के सर्वोच्च न्यायालय ने मारिजुआना के अपराधीकरण की संवैधानिकता को कनाडियन नारकोटिक्स कंट्रोल एक्ट के तहत बरकरार रखा। दो मामलों – आर बनाम मालमो–लेविन तथा आर बनाम काइने[108] से संबद्ध एक निर्णय देते हुए कनाडा के सर्वोच्च न्यायालय ने पाया कि कम खतरनाक द्रव्यों पर भी पूरा आपराधिक निषेध बनाये रखना कनाडा के संवैधानिक अधिकारों तथा स्वतंत्रताओं के घोषणापत्र का उल्लंघन नहीं करता। मालमो–लेविन ने तर्क दिया कि संविधान एक्ट, 1867 के खंड 91 (27) में दी गई आपराधिक कानून बनाने की संवैधानिक शक्ति केवल उसी आचरण तक सीमित है जो हानिकारक है। उसने एक और तर्क दिया कि "हानि सिद्धांत" को स्वतंत्रताओं तथा अधिकारों ने कनाडियन घोषणा पत्र के खंड 7 के अंतर्गत न्याय का एक निर्देशक सिद्धांत होना चाहिए। बहुमत ने हानि की आवश्यकता के इन तर्कों को संविधान एक्ट, 1867 के खंड 91 (27) तथा घोषणापत्र के खंड 7 के अंतर्गत यह मानते हुए खारिज कर दिया कि संसद को हानि स्थापित करने की आवश्यकता नहीं है, बल्कि हानि की मात्र एक तार्किक संभावना ही काफी है। इसने यह भी कहा कि आपराधिक कानून के तहत संरक्षित समूहों की सुरक्षा शामिल है। निष्कर्षतः

103 निकोलस डॉर्न एंड एलीसन जेमीसन, ड्रग स्कोप : रूम फॉर मैनूवरः ओवरव्यू रिपोर्ट 5 (मार्च 2000), पृ. 10–11. www.drugscope.org.uk/drug-inf/drugsearch/ds_results.asp?file=%5Cwip%5C11%5C1%

104 नील हन्ट

105 व्यक्तिगत उपयोग के लिए मादक द्रव्य रखना अपराध नहीं है, अर्जेन्टिा कोर्ट रूल्स, http://stopthedrugwar.org/chrocincle/423/notac-rime/shtmll;

106 वही -

107 वही

108 आर. बनाम मालमो–लेविन (2003) 3 एस.सी.आर 571; री. बनाम काइने (2003) 3 एससीआर 571

सरकार मादक द्रव्यों का उपयोग करने वालों तथा समाज दोनों की सुरक्षा के लिए गतिविधियों को नियंत्रित कर सकती है।

आईडीयू (इंजेक्शन ड्रग यूजर्स) तथा एचआईवी : भारतीय परिप्रेक्ष्य

भारत में, इंजेक्शन ड्रग यूजर्स (सुई द्वारा नशा करने वाले, अब से आईडीयू) कुल एचआईवी संक्रमण का मात्र 3 प्रतिशत हैं।[109] बहरहाल, आईडीयू समुदायों में एचआईवी का प्रचलन देश भर के रिहाइशी इलाकों में अधिक है। यह उत्तरपूर्वी राज्यों में विशेषतौर पर अधिक है क्योंकि यहां म्यांमार से सटे बॉर्डर के सहारे सस्ते दामों पर हेरोइन आती रहती है। मणिपुर में 50 प्रतिशत से अधिक आईडीयू एचआईवी प्रभावित हैं।[110] अन्य अध्ययनों ने तमिलनाडु में एचआईवी प्रचलन दर 39 प्रतिशत तथा चेन्नई में 64 प्रतिशत बताई है।[111]

न सिर्फ आईडीयू में, बल्कि उनकी पत्नियों में भी उच्च एचआईवी प्रचलन दरें पाई गयी हैं। कैलीफोर्निया, लॉस एंजिल्स विश्वविद्यालय द्वारा किये गये शोध के अनुसार, जिन, एचआईवी प्रभावित आईडीयू की पत्नियों का परीक्षण किया गया, उनमें से 45 प्रतिशत एचआईवी संक्रमित पाईं गयीं।[112] साथ ही साथ, इसी शोध समूह द्वारा पुरुषों में अन्य संक्रमित बीमारियों की स्तब्धकारी प्रचलन दरें पाईं गयी : हेपेटाइटिस बी के लिए 100 प्रतिशत तथा हेपेटाइटिस सी के लिए 92 प्रतिशत।[113]

एक अत्यंत महत्वपूर्ण समस्या सिरिंजों का बार–बार उपयोग में लाया जाना है। राष्ट्रीय एड्स नियंत्रण संगठन 'नाको' की एक रिपोर्ट दिखाती है कि सभी आईडीयू में से मात्र 44 प्रतिशत ही, हमेशा सुरक्षित इंजेक्शन पद्धतियों को प्रयोग में लाते हैं।[114] कई इलाकों में, एचआईवी संबंधित अज्ञान तथा एक ही सुई का कई लोगों द्वारा उपयोग भी इंजेक्शन द्वारा नशा करने वालों के बीच इस आपदा के प्रसार का अन्य महत्वपूर्ण कारण है। साफ सिरिंजें प्राप्त कर पाना कभी–कभी मुश्किल भी हो सकता है क्योंकि भारतीय दवाखानों में कभी–कभी सिरिंज की डाक्टरीय अनुशंसा आवश्यक होती है।[115]

1985 की नारकोटिक ड्रग्स एंड साइकोट्रॉपिक सब्सटांसिज एक्ट

वर्ष 1985 में, भारतीय सरकार ने नारकोटिक दवाएं तथा मादक पदार्थ एक्ट को लागू किया (एडीपीएस एक्ट के रूप में भी प्रचलित)। एनडीपीएस एक्ट अंतर्राष्ट्रीय कन्वेंशनों के निषेधकारी दृष्टिकोण के ही सामंजस्य में थी। इसके अंतर्गत निम्न दंडकारी प्रावधान शामिल थे – केंद्रीय सरकार द्वारा अवैध करार दिये गये पदार्थों का सेवन कारावास द्वारा (एक टर्म या एक वर्ष के लिए) अथवा जुर्माने द्वारा (जो कि 20,000 रु. तक हो सकता है) अथवा दोनों द्वारा दंडयोग्य बना दिया गया; इसके साथ ही साथ किसी व्यक्ति को विभिन्न पदार्थों की न्यून मात्रा रखने पर भी जेल भेजा जा सकता है – जैसे मात्र आधा ग्राम हेरोइन रखने पर न्यूनतम दस वर्ष की जेल हो सकती है।[116]

एक्ट के इस प्रावधान ने न चाहते हुए भी हानि को कई तरह से बढ़ा दिया है। सबसे पहले, कई लोगों को गिरफ्तार करके बिना किसी इलाज के (जो कानून के तहत दिया जाना जरूरी है) अथवा सुनवाई के,

109 यूएनओडीसी, (2004), अपडेट : फेसिंग एचआईवी/एड्स इन इण्डिया 3 नवम्बर 2004, (http://www.unodc.org/newsletter/en/200403/page002.html, August 2006)

110 डब्ल्यूएचओ, (2005), बाइरीजनल स्ट्रैटजी फॉर हार्म रिडक्शन 2005–2009: एचआईवी एंड इन्जेक्टिंग ड्रग यूज, पृ. 7

111 यूएन जनरल असेम्बली स्पेशल सेशन ऑन एचआईवी/एड्स एंड नाको, (2005) यूएनजीएएसएस इण्डिया रिपोर्ट: रिपोर्ट ऑन द डिक्लेरेशन ऑफ कमिटमेंट ऑन एचआईवी/एड्स, पृ. 14.

112 कोहेन, जे. (2004), द नीडल एंड डैमेज डन से लिया गया, साइन्स, वोल. 304, अप्रैल 2004. पृ. 509–512, पृ. 511

113 जे. कोहेन, (2004), पृ. 511 से लिया गया

114 यूएन जेनरल असेम्बली स्पेशल सेशन ऑन एचआईवी/एड्स एंड नाको, (2005), पृ. 15

115 31–फाल हमर्ट 10

116 कोहेन, जे, पृ. 512 से लिया गया

जेल में सालों तक बंद करके बर्बाद कर दिया गया। न्यायिक प्रक्रिया की यह कमी भारतीय न्यायिक व्यवस्था की अयोग्यता के चलते है। कई लोगों को बहुत थोड़ी मात्रा के अधिग्रहण के चलते जेल में डाल दिया गया, जिससे छोटे स्तर के कानून तोड़ने वालों को एक बड़ी तादाद में जेलों के आपराधिक अंडरवर्ल्ड के संपर्क में ला दिया गया।

मादक द्रव्य उपयोग के प्रभाव

एनडीपीएस एक्ट (1985) की शुरुआत से उपयोग की पद्धतियों में महत्वपूर्ण परिवर्तन आये। 1990 के पूरे दशक के दौरान कई क्षेत्रों में कम नशा करने वाले परंपरागत मादक पदार्थों से तेज नशा जैसे हेरोइन की ओर बढ़ने के ट्रेंड महसूस किए गए। हेरोइन की उपलब्धता कई भौगोलिक कारणों के चलते बढ़ गई, विशेषतः शहरों में। कई अध्ययन यह भी रेखांकित करते हैं कि अफगानिस्तान से भारत तक के हेरोइन के अवैध व्यापार में इन सालों में काफी बढ़ोत्तरी हुई। बाहरी सामाजिक–सांस्कृतिक प्रभावों तथा पर्यटन के कम संपर्क में आने के कारण ग्रामीण इलाकों में पुरानी परंपराओं के बने रहने की अधिक संभावना होती है, जबकि शहरों में मादक द्रव्यों की रुचियां अधिक तेजी से विकसित हुईं।

ज्यादा तेज नशे की तरफ झुकाव के साथ–साथ ज्यादा जोखिम भरे व्यवहार भी शुरू हुए। एक अध्ययन ने पाया कि हेरोइन और अफीम लेने वाले लोगों की एक अच्छी–खासी तादाद एक दूसरे की सुइयां इस्तेमाल करती है। एक व्यक्ति द्वारा रखी जा सकने वाली मात्रा की सीमा पर लगे प्रतिबंधों के चलते कई उपयोग करने वालों ने उपभोग की और जोखिमभरी पद्धतियां अपना लीं, (जैसे कई लोग इन्हें मुंह से लिये जाने के बजाय, ज्यादा मजे के लिए, इंजेक्शन द्वारा लेने लगे) जिससे कम मात्रा में अधिक आनंद प्राप्त हो सके। गैर परपंरागत उपयोग तथा आदत के कारण एचआईवी संचरण के खतरे कहीं अधिक बढ़ जाते हैं, जबकि उपभोग के परंपरागत तरीकों को नियंत्रित करने वाले सांस्कृतिक नियमों के चलते एचआईवी की संभावना कम होती है।

रैपिड असेसमेंट स्टडी ने यह भी पता लगाया कि अपराधीकरण के बाद उपभोग करने वालों की आयु भी कम हुई है। वयस्कों पर ध्यान केंद्रित करने के बजाय इस अध्ययन ने मध्यक आयु को 19 या उससे नीचे दिखाया तथा सैंपल (नमूने) के अंतर्गत आगे उपभोग करने वालों में से 2 प्रतिशत की इसे शुरू करने की आयु 16 से 20 वर्ष पायी गयी।[117] साक्ष्य बताते हैं कि महिलाएं भी तेजी से मादक पदार्थों का उपयोग कर रही हैं। परंतु इस संबंध में जानकारी सीमित है क्योंकि महिलाओं द्वारा प्रयोग कम जानकारी में आ पाता है।

कुल मिलाकर, आलोचक कहते हैं कि एक लंबी न्यायिक प्रक्रिया; एक भेदभावपूर्ण जमानत कानून, जोकि गरीबों को जलाने पर मजबूर करता है, एनडीपीएस एक्ट के प्रक्रियात्मक आवश्यकता का पालन कर पाने में असफल अंन्वेषण संस्थाओं, तथा व्यसन की लत की कमजोर समझदारी के चलते एनडीपीएस एक्ट एक निराशा ही साबित हुआ है।"[118] किसी भी मात्रा को रखने वाला पहले ही दोषी मान लिया जाता है तथा पुलिस को खोज, जब्ती तथा गिरफ्तारी की व्यापक शक्तियां दे दी जाती हैं।

एनडीपीएस एक्ट (1985) में 2001 में किये गये संशोधन तथा संबोधित नहीं की जा सकी समस्याएं

भारत में एचआईवी/एड्स के खतरों तथा मादक द्रव्यों के उपयोग से संबंधित अन्य बीमारियों ने अधिकारियों तथा जन स्वास्थ्य निर्णयकर्ताओं को एनडीपीएस एक्ट की सामर्थ्य की पुनः समीक्षा करने पर मजबूर किया।

117 चार्ल्स, एमएटएल, पृ. 5 (कुमार, 2002, से लिया गया)
118 चार्ल्स, एमएट अल, पृ. 5 (अनुराधा, 2001 से लिया गया)

वर्ष 2001 में, भारत सरकार ने अंततः इस एक्ट को संशोधित किया, जिससे नशे के व्यक्तिगत उपभोग से संबंधित दंडकारी उपायों को कम किया जा सके। उदाहरण के लिए, पांच ग्राम से कम मात्रा में हेरोइन के साथ पकड़े गये व्यसनी लोग अब जेल जाने के स्थान पर इलाज कराने जा सकते हैं। साथ ही साथ, सरकार ने हानि–न्यूनीकरण को भी समर्थित किया है।

बहरहाल, इसके बावजूद कई समस्याएं बनी रह जाती हैं :

- हानि–न्यूनीकरण उपायों को लागू करने में सरकारी सहायता की कमी[119]
- कानून लागू किये जाने पर जोर

मुकदमों का सारांश

रॉबिन्सन बनाम कैलीफॉर्निया, 370 यूएस 660 (1962)

प्रतिवादी पर कैलीफॉर्निया के एक अध्यादेश के उल्लंघन का आरोप था, जो 'मादक द्रव्यों के प्रयोग के आदी होने' को एक आपराधिक कृत्य के रूप में स्थापित करता था तथा उसके आरोप की पुष्टि लॉस एंजिलिस काउंटी वरिष्ठ न्यायालय के कार्यालय से हो चुकी थी। उसने संयुक्त राज्य अमेरिका के सर्वोच्च न्यायालय में राज्य के कानून की संवैधानिकता पर प्रश्न करते हुए अपील की। न्यायालय ने पाया कि मादक द्रव्यों की लत कोढ़ या मानसिक बीमारी जैसी ही कोई बीमारी है। परिणामस्वरूप, न्यायालय ने स्थापित किया, कि एक कानून जो किसी व्यक्ति को मात्र उसके नशे के आदी होने के चलते, बिना उपभोग के साक्ष्यों अथवा मादक पदार्थों के अधिग्रहण के जेल भेज देता है, चौदहवें संशोधन का उल्लंघन करते हुए क्रूर तथा अनुचित दंड देने वाला है।

एन्ट्रॉप बनाम इम्पीरियल आयल लिमिटेड (2000), 50 ओआर (तीसरा) 18 (सीए)

एन्ट्रॉप लगभग बीस वर्षों तक इम्पीरियल ऑयल के कर्मचारी रहे। उन्होंने अपनी शराब की लत पर 7 वर्ष पहले काबू कर लिया था। बहरहाल, इम्पीरियल के कार्यस्थान पर शराब तथा मादक द्रव्य संबंधी जांच की नीति के अनुसार उन पर अपनी पिछली शराब संबंधी समस्याओं को बताने के लिए दबाव डाला गया तथा उसके बाद उन्हें तुरंत अपनी सुरक्षा के प्रति संवेदनशील नौकरी से हाथ धोना पड़ गया। उन्होंने बहाली के लिए अपील की जिसे इंपीरियल ऑयल ने स्वीकार तो कर लिया पर यह बहाली इम्पीरियल के कार्यस्थल पर शराब तथा मादक द्रव्य जांच संबंधी नीति के अधीन थी जिसके अंतर्गत कर्मचारियों को पुनर्वास कार्यक्रम तथा अचानक की जाने वाली शराब तथा मादक द्रव्य संबंधी जांच करानी होती थीं। अदालत ने इम्पीरियल की नीति को भेदभावपूर्ण ठहराया। उसने यह माना कि इम्पीरियल ऑयल द्वारा एनट्रॉप का इलाज आवश्यक नहीं है तथा बहाली संबंधी योग्यताएं समय को ध्यान में रखते हुए कष्ट साध्य थीं, क्योंकि श्री एनट्रॉप अपने लत से पहले ही छुटकारा हासिल कर चुके थे। अदालत ने यह भी पाया कि नशीले पदार्थों का उपयोग तथा उन पर निर्भरता ओन्टारियो मानव अधिकार संहिता के तहत बाधाएं थीं। यह संहिता बताती है कि अपंगताएं शारीरिक और मानसिक दोनों प्रकार की होती हैं, तथा ओन्टारियो मानव अधिकार आयोग एक अपंगता को तब बाधा मानता है जब वह एक व्यक्ति की गतिविधियों पर महत्वपूर्ण बनी रहने वाली सीमाएं लगाती है जो कि सामान्य या अल्पकालीन नहीं होती है।

---

119 बहरहाल नाको ने हाल में एक राष्ट्रव्यापी हानि न्यूनीकरण योजना प्रस्तुत की। नाको योजना वर्तमान मादक कानूनों के उलट है तथा इसके अंतर्गत सुई या सिरिंज विनियम कार्यक्रमों तथा सबस्टीट्यूशन थेरेपी को स्थापित करना शामिल है, जिसमें कोकीन और हेरोइन जैसे अधिक लत लगाने वाले मादक द्रव्यों के विकल्प के बतौर मैथाडोन तथा ब्यूपर्नोफिन जैसे द्रव्य दिए जाएंगे।

जनता बनाम बोर्दोविट्ज, 588 एनवाईएस 2डी. 507 (एनवाई सिटी क्रिम, सिटी, 1991)

प्रतिवादियों पर जानबूझकर अपने पास एक हाइपोडर्मिक सुई को बिना अनुशंसा या किसी चिकित्सकीय कारण के रखने का आरोप लगा जो कि न्यूयार्क के राज्य कानून का उल्लंघन था। प्रतिवादी नशे के आदी लोगों से गंदी सुइयां लेकर बदले में उन्हें साफ सुइयां देने की कोशिश कर रहे थे। प्रतिवादियों ने तर्क दिया कि उनका अधिग्रहण उचित था और इसीलिए वैधानिक भी। उन्होंने कहा कि उनके कार्य आवश्यकता औचित्य के बचाव के अंतर्गत आते थे उनका सुई विनिमय कार्यक्रम एचआईवी/एड्स के प्रसार को रोक रहा था और इस तरह जिंदगियां बचा रहा था। न्यायालय ने इसे स्वीकार कर लिया जब उसने पाया कि –

प्रतिवादियों द्वारा एक हो सकने वाली सार्वजनिक हानि को रोकने के लिए किये गये अपने कार्य को सही मानना तार्किक है; प्रतिवादियों ने संकट को जन्म नहीं दिया; प्रतिवादियों द्वारा जिस हानि को टालने की कोशिश की गई वह अध्यादेश द्वारा रोकी जाने वाली हानि से बड़ी थी; वहां कोई और सही विकल्प उपलब्ध नहीं थे; इससे पिछले विधायिका कार्य बचाव को असंभव नहीं बनाते; तथा प्रतिवादियों के कार्य संग्रहण के विरुद्ध बने अध्यादेश के खिलाफ एक विरोध मात्र नहीं थे बल्कि जन आपातस्थिति से निपटने के प्रति लक्ष्य प्राप्त हेतु केंद्रित थे।

स्पोकान काउंटी हेल्थ डिस्ट्रिक्ट बनाम ब्रोकेट, 839 पी2डी 324 (वाश 1992)

स्पोकान काउंटी के अभियोजन अटॉर्नी (वक़ील) शेरिफ तथा राज्य अटॉर्नी जनरल कैनेथ ने स्पोकान काउन्टी में एक सुई विनिमय कार्यक्रम की अनुशंसा के निर्णय के खिलाफ एक ट्रायल कोर्ट में अपील की। उन्होंने तर्क दिया कि स्पोकान काउंटी हेल्थ डिस्ट्रिक्ट (एससीएचडी) बोर्ड ऑव हेल्थ के द्वारा शुरू किये गये कार्यक्रम के तहत नशे संबंधी उपकरणों का अवैध वितरण शामिल था, जो कि राज्य के नशे संबंधी उपकरणों के एक्ट का उल्लंघन था। वाशिंगटन सर्वोच्च न्यायालय ने असहमत होते हुए कहा कि कार्यक्रम नशे संबंधी उपकरणों का अवैध वितरण नहीं करता। न्यायालय ने तर्क किया कि इस कार्यक्रम को बनाने में एससीएचडी स्वास्थ्य बोर्ड, राज्य के जन–स्वास्थ्य अध्यादेशों में दी गई शक्तियों के प्रभाव क्षेत्र के अंतर्गत ही काम कर रहा था, जिसमें बोर्ड को छूत की बीमारी फैलने से रोकने के लिए व्यापक शक्तियां दी गई थीं। न्यायालय ने यह पाया कि चूंकि प्रतिवादियों के किसी संवैधानिक अधिकार के क्षेत्र में कार्यक्रम ने हस्तक्षेप नहीं किया है, अतः जन–स्वास्थ्य बीमारी नियंत्रण उपायों का विषय, तथा उपयुक्तता, न्यायिक नियंत्रण से बाहर की चीज हैं। इसके अलावा राज्य की एड्स एक्ट सुई को जीवाणुमुक्त करने की अनुमति देती है। जिसके चलते स्वास्थ्य देखभाल कार्यकर्ता नशा करने वालों से गंदी सुइयां लेकर, उन्हें जीवाणुमुक्त करके वापस लौटा दिया करते हैं। एड्स एक्ट हालांकि सुई विनिमय कार्यक्रम को सीधे वैधता नहीं देता पर न्यायालय ने पाया कि दोनों कार्यात्मक स्तर पर एक ही हैं। न्यायालय ने पाया कि सुई स्टलाईजेशन तथा एचआईवी के प्रसार से लड़ने के लिए संसाधनों के समुचित उपयोग के लिए अध्यादेश में दी गई अनुमतियों की एक अधिक स्वतंत्र व्याख्या, सुई विनिमय को भी शामिल कर लेगी। साथ ही साथ....

जनता बनाम मुनरो, 593, एनवाईएस 2डी, 742 (1992)

प्रतिवादी पर एक खुफिया पुलिस अधिकारी को नकली हेरोइन बेचते समय, नौ नई हाइपोडर्मिक सुइयां रखने का आरोप लगाया गया था। प्रतिवादी ने इसे खारिज करने के लिए अदालत में अपील की, जिसमें उसने तर्क दिया कि सुई विनिमय कार्यक्रम को वैधता देने वाले स्वास्थ्य विभाग के निर्देश उसकी दोषसिद्धि के बीच एक कानूनी बाधा हैं क्योंकि यह कार्यक्रम के भागीदारों के लिए हाइपोडर्मिक सुइयां पर लगे प्रतिबंध के संबंध में एक अपवाद का सृजन करता है। न्यायालय ने माना कि चूंकि साक्ष्य यह प्रमाणित करते हैं कि प्रतिवादी

के पास से बरामद सुइयों में से कोई भी कार्यक्रम के तहत प्राप्त नहीं की गई थी, अतः इसे अभियोजन से मुक्त नहीं किया जा सकता।

कॉमनवेल्थ बनाम लेनो, 616 एनई 2डी 453 (मास. 1993)
प्रतिवादी एड्स के प्रसार को रोकने के लिए एक सुई विनिमय कार्यक्रम चलाते थे। बहरहाल, मैसाचुएट्स का राज्य कानून बिना अनुशंसा के हाइपोडर्मिक सुइयां बांटने को प्रतिबंधित करता है। अतः प्रतिवादियों को नियंत्रित द्रव्यों के उपयोग के उपकरणों के अवैध अधिग्रहण तथा वितरण का दोषी पाया गया। अपील के दौरान प्रतिवादियों ने, ट्रायल न्यायाधीश के फैसले को, जिसमें उसने जूरी को आवश्यकता के बचाव के बारे में निर्देश देने से इंकार कर दिया था, चुनौती दी। न्यायालय ने ट्रायल न्यायाधीश के निर्णय को तब बरकरार रखा, जब प्रतिवादी कोई भी ऐसी परिस्थिति सिद्ध नहीं कर पाये जिसके अंतर्गत आवश्यकता का बचाव लागू होता है। विशेषतः प्रतिवादी यह दिखाने में असफल रहे कि :

1 वे विवादित या वैचारिक नहीं बल्कि स्पष्ट और नजदीकी खतरे का सामना कर रहे थे,
2 उन्होंने तार्किक रूप से यह स्थापित कर लिया कि उनके कार्य उस खतरे के सीधे कारण को समाप्त करेंगे,
3 उस खतरे से निपटने के लिए कोई अन्य वैधानिक उपाय उपलब्ध नहीं था; तथा
4 विधायिका ने मामले से संबंद्ध मूल्यों के संदर्भ में एक स्पष्ट तथा सोच–समझाकर किये गये चुनाव द्वारा बचाव को असंभव बनाने के लिए कुछ नहीं किया।

राज्य बनाम सोर्ज, 591 ए2डी 1382 (एनजे 1991)
प्रतिवादी एड्स को फैलने से रोकने की कोशिश के बतौर, इस्तेमाल की गयी सिरिंजों औरं सुइयों के बदले नयी सिरिंजें देते थे। उन्हें मैसाचुसेट्स के गैर जिम्मेदार व्यक्ति के अध्यादेश के अंतर्गत ऐसे उपकरणों को, जो कि नियंत्रित द्रव्यों के उपयोग में काम आते हैं, अवैधानिक रूप से अपने पास रखने तथा बांटने के आरोप में दोषी माना गया। प्रतिवादियों ने आरोप को खारिज कराने के लिए कोर्ट में अपील की। उन्होंने कहा कि उनके आचरण ने कोई हानि न तो पहुंचायी है और न ही पहुंचाने का खतरा पैदा किया है, जिसे रोकने के लिए हाइपोडर्मिक सुईयों के अधिग्रहण या वितरण को प्रतिबंधित करने वाला अध्यादेश बनाया गया था। उन्होंने यह भी तर्क दिया कि उनके कार्यों के साथ एक ऐसी परिस्थिति संबद्ध थी जो निश्चय ही उनके अपराध को कम करती थी तथा जिसे विधायिका अपराध निर्धारण के समय तार्किक रूप से सही में नहीं देख पायी होगी। न्यायालय ने पाया कि प्रतिवादियों के कार्य कानून का (डी मिनिमस) मामूली उल्लंघन नहीं थे। इसके अलावा वे यह साबित कर पाने में भी असमर्थ रहे कि सुई विनिमय कार्यक्रम उनके द्वारा किये जा रहे दावों के अनुरूप समाज सुधार के प्रभाव उत्पन्न करते थे। इसके बजाय, न्यायालय ने पाया कि यह निष्कर्ष निकालना तार्किक था कि उनकी गतिविधियों के द्वारा नशे की बुराई को बढ़ावा मिला। इसके अलावा, एचआईवी के प्रसार को रोकने के लिए स्वयं विनिमय कार्यक्रम ऐसा कोई असाधारण तथा अनुमान न लगाया जा सकने वाला कदम नहीं था, जो आरोप के दायरे से मुक्त कर दिया जाता यदि विधायिका उस पर विचार करती।

राज्य बनाम मैक्कॉफ, 314 एनजे सुपर 254 (एनजे सुप. एपीपी डिव 1998)
प्रतिवादियों को एक हाइपोडर्मिक सुई या सिरिंज एक अन्य वरिष्ठ को देने का दोषी पाया गया। अपीलीय डिविजन ने उनकी दोषसिद्धि का अनुमोदन यह मानते हुए किया कि : (1) प्रतिवादियों के बिना किसी बुरी भावना तथा एचआईवी के प्रसार को रोकने की इच्छा से काम करने के बावजूद, उनके द्वारा किया गया काम गैरकानूनी था; (2) "चिकित्सकीय आवश्यकता" का बचाव लागू नहीं होता था; (3) अभियोजन द्वारा प्रतिवादियों

को "ड्यू प्रोसेस) अधिकारों द्वारा वंचित नहीं किया गया था तथा (4) प्रतिवादियों के कार्य कानून का स्पष्ट, न कि "न्यूनतम (डिमिनिमिस)" उल्लंघन करते थे, जिसके चलते शिकायतें खरिज की गईं।

डो बनाम ब्रिजपोर्ट, पुलिस विभाग, 198 एफआरडी 325 (डी कोन 2001)

ख्यात श्रेणी के इंजेक्शन से नशा करने वालों के समूह की ओर से ब्रिजपोर्ट पुलिस विभाग और उसके प्रमुख के खिलाफ लांछन लगाने वाले अभियोजन तथा फर्जी गिरफ्तारी, गैरकानूनी तलाशी तथा जब्ती से आजादी के वादी के चौथे संशोधन अधिकारों का उल्लंघन करने के लिए ख्यात श्रेणी के अभियोग लगाये गये। कनैक्टीकट विधायिका ने ब्रिजपोर्ट, कनैक्टीकट में एक अध्यादेश के द्वारा सुई विनिमय कार्यक्रम को स्थापित किया था। परिणामस्वरूप ब्रिजपोर्ट में किसी सुई द्वारा नशा करने वाले के लिए 31 से कम हाइपोडर्मिक सुइयां या सिरिंज रखना कानूनी है; तथा सुई विनिमय भागीदार भी 31 से कम पहले इस्तेमाल की गई हाइपोडर्मिक सुइयां या सिरिंजें रख सकते हैं जिनमें पता लगाये जा सकने योग्य मादक द्रव्यों की बची-खुची मात्रा का होना भी स्वीकार्य है। वादियों ने कहा कि प्रतिवादी पुलिस विभाग ब्रिजपोर्ट के सिरिंज से नशा करने वालों को अब भी जीवाणुरहित या पहले इस्तेमाल की हुई सुइयां या सिरिंज रखने के लिए गिरफ्तार या परेशान करता रहता है। वादियों ने न्यायालय से कहा कि वह पुलिस विभाग को, किसी व्यक्ति को 31 से कम जीवाणुरहित या इस्तेमाल की गई हाइपोडर्मिक सुइयों या सिरिंजों को रखने, तथा उनके खाली होने या उनमें बची-खुची मादक द्रव्य की मात्रा होने मात्र के आधार पर ही, गिरफ्तार करने और दण्डित करने से रोकें। न्यायालय ने स्थायी आदेश के लिए तथा वर्तमान एवं भविष्य के 'इंजेक्शन ड्रग यूजर्स के श्रेणी प्रमाणीकरण के लिए, यह पता चलने पर प्रस्ताव (अनुमति) प्रदान कर दिये, कि –

1 श्रेणी प्रमाणीकरण की आवश्यकताएं पूरी थीं; तथा
2 कनेक्टीकट का कानून जीवाणु रहित या पहले इस्तेमाल की गई हाइपोडर्मिक सुइयों या सिरिंजों, तथा उनमें बचे-खुचे रूप से मादक द्रव्यों की मात्रा के पाये जाने को गैर-आपराधिक अधिग्रहण के रूप में स्थापित करता है।

रो बनाम न्यूयॉर्क शहर, 232 एफ. सुप. 2डी 240 (एसडीएनवाई 2002)

वादियों ने, जो कि राज्य द्वारा मान्यता प्राप्त सुई विनिमय कार्यक्रम के ख्यात श्रेणी के भागीदार थे, शहर के पुलिस विभाग तथा पुलिस अधिकारियों के खिलाफ, नागरिक अधिकार श्रेणी के आरोप का मुकदमा यह आरोपित करते हुए शुरू किया कि पुलिस हाइपोडर्मिक सुइयों तथा नियंत्रित द्रव्यों को रखने के चलते, कार्यक्रम के भागीदारों को अवैधानिक तलाशी, गिरफ्तारियों तथा अभियोजनों द्वारा पीड़ित करती है। हालांकि न्यूयार्क का कानून सुई विनिमय कार्यक्रम को मान्यता देता है, परंतु वह नियंत्रित द्रव्यों की पकड़ ली जाने वाली मात्रा रखने को आपराधिक घोषित करते हुए सुई विनिमय कार्यक्रमों तथा उनके भागीदारों को भी आपराधिक जिम्मेदारी से कोई छूट नहीं देता है। वादियों ने एक ऐसी घोषणा वाले निर्णय की प्रार्थना की, जो कि सुई विनिमय तथा उस कार्यक्रम के भागीदारों को, इस्तेमाल की गई सुइयों अथवा सिरिंजों में उपयोग के बाद बची रह गई मादक द्रव्यों की मात्रा के अधिग्रहण की आपराधिक जिम्मेदारी से मुक्त करता हो। न्यायालय ने पाया कि न्यूयार्क कानून में स्पष्ट द्वंद के चलते एक घोषणाकारी निर्णय की आवश्यकता है। उसने यह पता चलने पर घोषणाकारी सहायता प्रदान की कि सुई विनिमय कार्यक्रम को स्थापित करने वाले राज्य कानून के उद्देश्य और मंतव्य को ध्यान में रखते हुए – जो कि एचआईवी/एड्स के प्रसार तथा मादक द्रव्य उपयोग को कम करना है –ये जरूरी था कि मान्यता प्राप्त सुई विनिमय कार्यक्रम के भागीदारों को इस्तेमाल की

गयी सुइयों या सिरिंजों के अधिग्रहण, जिनमें मादक द्रव्यों की बची खुची मात्रा हो, की आपराधिक जिम्मेदारी से मुक्त किया जाये।

आर बनाम मालमो - लेविन (2003) 3एससीआर 571; आर बनाम काइने (2003) 3एससीआर 571
इस निर्णय के तहत दो विवाद शामिल थे। काइने तथा मालमो–लेविन ने नार्कोटिक्स कंट्रोल एक्ट के तहत मारिजुआना के अपराधीकरण की संवैधानिकता को चुनौती दी। काइने ने तर्क दिया कि किसी व्यक्ति को ऐसे आचरण के लिए जेल भेजना, जो कम हानि पहुंचाता हो या कोई हानि नहीं पहुंचाता हो, बुनियादी न्याय के संसद के सिद्धांतों का उल्लंघन करता है। मालमो–लेविन ने मारिजुआना के अवैध व्यापार के लिए किये गये अधिग्रहण को निषिद्ध करने की संवैधानिक बैधता को चुनौती दी। उसने तर्क दिया कि आपराधिक कानून बनाने की संवैधानिक शक्ति मात्र उसी आचरण तक सीमित है जो हानि पहुंचाता हो। न्यायालय ने पाया कि व्यक्तिगत उपयोग के लिए मारिजुआना के संग्रहण को न तो न्यूनतम दंड दिया जा सकता है और न ही इसके लिए बंदी बनाने की आवश्यकता है, बल्कि जेल अधिकतर उन मामलों में आरक्षित होती है, जो तीव्र मादक द्रव्यों या उनके अवैध व्यापार से संबद्ध होते हैं। न्यायालय ने पाया कि विभिन्न निषिद्ध मादक द्रव्यों से संबद्ध किसी अध्यादेश में बिना किसी अन्य विस्तार के कारावास का सिर्फ होना भर ही गंभीर विषमानुपात के सिद्धांतों का उल्लंघन नहीं करता। न्यायालय ने यह भी माना कि यह संभव हो सकता है कि मारिजुआना के लाभ उसके दुष्प्रभावों से अधिक हों, पर यह मुद्दा संसद द्वारा विचार किये जाने योग्य है, न्यायालय द्वारा नहीं। उसने निष्कर्षतः कहा कि मारिजुआना के अधिग्रहण को आपराधिक घोषित करना संसद के विधायिक क्षेत्राधिकार के अंतर्गत आता है, जब तक कि वह हानि की एक तार्किक संभावना पर काम करती है। इसके अलावा न्यायालय ने पाया कि नार्कोटिक्स कंट्रोल एक्ट का उद्देश्य आरक्षित समूहों, जैसे आदी हो चुके उपयोगकर्ताओं तथा समाज की सुरक्षा, राज्य की आपराधिक कानून शक्ति के अनुरूप ही है।

12

खाद्य सुरक्षा तथा एचआईवी/एड्स

गरीबी और एचआईवी/एड्स में आपस में कई परस्पर गुंथे हुए सूत्र हैं। यह पाठ पोषण खाद्य सुरक्षा और एचआईवी/एड्स के संबंधों को रेखांकित करता है और यह सिद्ध करने का प्रयत्न करता है कि एक संसाधन की कमी से जूझती व्यवस्था में, जहां संक्रमण की दर कहीं ज्यादा होती है तथा जहां स्वास्थ्य सुविधाएं बढ़ती जरूरतों को पूरा करने के लिये लगातार संघर्ष करती रहती हैं, एक भोजन आधारित विकल्प कहीं ज्यादा प्रभावकारी भूमिका निभा सकता है। संक्रमण होना न होना हालांकि व्यक्तिगत व्यवहार पर निर्भर करता है, परन्तु संक्रमण के प्रति असुरक्षा को बढ़ावा देने वाली परिस्थितियां पारिवारिक इकाई की प्रकृति और ढांचागत असमानताओं द्वारा प्रभावित होती हैं, जो न सिर्फ गरीबी को जन्म देती हैं, बल्कि उसे बनाये रखने के साथ–साथ उसे मजबूत भी करती हैं। अफ्रीका के सबक इस बात को स्पष्ट रूप से रेखांकित करते हैं कि किस तरह यह महामारी न सिर्फ कुपोषण के कारण, जैसे गरीबी, असमान विकास एवं आपातस्थिति द्वारा फैलती है, बल्कि स्वयं भी इन कारणों को बढ़ावा देती है। भारत जैसे एक देश में जहां कुपोषण के शिकार बच्चों की तादाद पूरी दुनिया में सबसे ज्यादा है, इस महामारी से निपटने की एक व्यापक रणनीति की आवश्यकता है जो भूख एचआईवी तथा एड्स के बीच के सूत्रों को तथा आजीविका के संकट को एक साथ हल करें। एचआईवी संक्रमण का हालांकि कोई इलाज नहीं है, पर व्यक्तियों एवं परिवारों के पोषण स्तर में सुधार के द्वारा एचआईवी के इलाज और रख–रखाव को कई तरह से सुधारा जा सकता है, जैसे– इससे दवा का प्रभाव एवं शरीर की प्रतिरोध क्षमता बढ़ती है, यह एचआईवी प्रभावित व्यक्तियों, अनाथों, असुरक्षित बच्चों तथा परिवार के अन्य प्रभावित सदस्यों पर भूख एवं खाद्य असुरक्षा के कारण पड़ने वाले संक्रमण के प्रभावों को कम करता है एवं अन्ततः यह उन जोखिम भरी आजीविका कमाने की रणनीतियों पर अंकुश लगाता है जिनके चलते संक्रमण के संपर्क में आने की स्थितियां जन्म लेती हैं। इस बात को ध्यान में रखते हुए कि भोजन के अधिकार को भारत में बुनियादी मानव अधिकार के रूप में मान्यता प्राप्त है,[1] घरेलू खाद्य असुरक्षा और कुपोषण की समस्या के हल द्वारा एचआईवी/एड्स के विभिन्न छोटे एवं व्यापक प्रभावों को कम किया जा सकता है जिनके चलते एचआईवी को रोकने की आश्वस्त करने वाली अपार संभावनाओं का द्वार खुल सकता है।

अनुमान के मुताबिक वर्तमान समय में पूरी दुनिया में मोटे तौर पर लगभग 4 करोड़ 3 लाख लोग एचआईवी संक्रमण से प्रभावित हैं। 2005 में लगभग 31 लाख लोग एड्स से जुड़ी बीमारियों से मारे गये और इनमें पांच लाख बच्चे थे।[2] भारत में हालांकि इसकी प्रचलित दर 1 प्रतिशत से भी कम है,[3] यह अनुमान

1 देखें पीयूसीएल बनाम भारत का संघ
2 देखें पीयूसीएल बनाम भारत का संघ
3 यूएनडीपी 2006 वार्षिक रिपोर्ट: ग्लोबल पार्टनर्शिप फॉर डेवलपमेंट. यूनाइटेड नेशन्स डेवलपमेंट प्रोग्राम, पृ. 17

लगाया जाता है कि 2005 के अन्त तक भारत में लगभग 57 लाख लोग एचआईवी से प्रभावित थे।[4] वर्तमान में यह महामारी महाराष्ट्र, तमिलनाडु, नागालैन्ड, आन्ध्रप्रदेश, कर्नाटक और मणिपुर[5] में सबसे बड़ी तादाद में लोगों को प्रभावित कर रही है और एड्स के उच्च प्रचलन वाले इन राज्यों से कुल संक्रमणों का 69.38 प्रतिशत हिस्सा आता है।[6]

एचआईवी आयु, वर्ग, जाति अथवा लिंग के नाम पर हालांकि विभेद नहीं करता, पर सीमित संसाधनों और नियंत्रण वाले लोग इसके खतरों के अधिक नजदीक और संसाधन हीनता के कारण इसका सामना कर पाने के अधिक अयोग्य होते हैं। कुछ व्यक्तियों के संक्रमण के जोखिमों के प्रति अधिक संवेदनशील होने के कारणों के अंतर्गत आजीविका के अस्थायी स्रोत (जैसे पलायन या व्यावसायिक यौनकर्मी) तथा सूचनाओं एवं गर्भनिरोधकों तक सुगम पहुंच का न होना शामिल है। कई कारक ऐसे समूहों की सामना कर पाने की क्षमताओं को प्रभावित करते हैं जिनकी चर्चा इस पाठ के आगे के भाग में विस्तार से की जायेगी। भारत में, महिलाएं अनुमानित राष्ट्रीय एचआईवी/एड्स दर का 39 प्रतिशत हैं, एवं 15 से 24 वर्ष के आयुवर्ग के एड्स प्रभावित व्यक्तियों में महिलाओं की संख्या पुरुषों से दोगुनी है।[7] साथ ही साथ अर्थव्यवस्था के असंगठित क्षेत्रों में काम करने वाले व्यक्ति, ग्रामीण, पलायन करने वाले, माताएं, अनाथ एवं असुरक्षित बच्चे एचआईवी तथा भूख दोनों के प्रति कहीं अधिक असुरक्षित हैं।

परंपरागत रूप से, शोध एवं प्रतिक्रियाओं ने इस महामारी के व्यक्ति से संबंधित जैव चिकित्सकीय एवं व्यावहारिक पहुलओं पर ही ध्यान केन्द्रित किया है। गरीबी के साथ मजबूती से जुड़े होने के बावजूद अफ्रीका और विश्व के अधिकतर भागों में होने वाले अधिकांश प्रयत्नों ने आर्थिक कीमतों (जैसे श्रम अथवा संसाधनों की हानि) तथा प्रभावित के परिवार पर पड़ने वाले सामाजिक प्रभावों की उपेक्षा ही की है। स्टीफन और डेवेरक्स तथा रैचेल सबातेश व्हीलर कहते हैं कि आजीविका संकट के बतौर एचआईवी/एड्स के प्रभावों पर बहुत कम ध्यान दिया गया; इसके अलावा अधिकांश वर्तमान आर्थिक सहयोग के संसाधन भी इस संदर्भ में बहुत सीमित हैं। "भोजन तथा नगद हस्तानान्तरण, अनाथों को दी जाने वाली शैक्षिणिक सुविधाएं तथा उन्हें और उनकी देखभाल करने वालों को दी जाने वाली अन्य सुविधाएं हालांकि आवश्यक तथा कई बार अत्यन्त महत्वपूर्ण होती हैं, परन्तु यह दृष्टिकोण इस बात को संज्ञान में नहीं ले पाता कि इस बीमारी के चलते पूरी आजीविका व्यवस्थाएं ही व्यवस्थित तरीके से कमजोर हो जाती है।"[8] उदाहरण के लिए एक ग्रामीण कृषक परिप्रेक्ष्य में श्रम पूंजी की हानि से निपटने के लिए अपनायी जाने वाली रणनीतियों में वैकल्पिक आजीविका साधनों को (जैसे शहरी केन्द्रों की ओर पलायन) या कृषि पद्धतियों में परिवर्तन (जैसे कम श्रमसाध्य पद्धतियों में निवेश) को सम्मिलित किया जा सकता है। अतः नगदी या सहायता उपलब्ध कराने भर से ही परिवारों पर पड़े व्यापक कष्ट को कम नहीं किया जा सकता जो परस्पर दीर्घकालीन चुनौतियों से जूझने के लिए मजबूर होते हैं।

संक्रमित लोगों के इलाज और देखभाल के लिहाज से भी अगर देखा जाए तो समान जैव चिकित्सकीय और व्यावहारिक हस्तक्षेप जैसे सीधा पर्यवेक्षित इलाज, अल्पकालीन कोर्स डॉट्स तथा एंटीरेट्रो वायरल थेरेपी

4 नाको 2004. एन ओवरव्यू ऑव स्प्रेड एंड प्रिवेलेन्स ऑव एचआईवी/एड्स इन इंडिया, http://www.nacoonline.org/facts_overview.htm (डेट अक्सेस्ड : 29 जुलाई 2006)

5 यूएनएड्स. 2006. "यूएनएड्स फैक्ट शीटः एशिया"

6 "सोशियो–इकॉनोमिक इम्पैक्ट ऑव एचआईवी/एड्स ऑन पीपल लिविंग विद एचआईवी/एड्स एंड देयर फेमिलीज," प्रिवेन्शन ऑव एचआईवी/एड्स इन द वर्ल्ड ऑव वर्कः ए ट्रिपाराईट रैस्पांस में से, इन्टरनेशनल लेबर ऑफिस, 2003; नाको. 2004. एन ओरवरव्यू ऑव द स्प्रेड एंड प्रिवेलेन्स ऑव एचआईवी/एड्स इन इंडिया, http://www.nacoonline.org/facts_overview.htm (आखिरी बार देखने का दिन : 29 जुलाई 2006)

7 यूएनजीएएसएस. 2005. यूएनजीएएसएस इंडिया रिपोर्टः प्रोगेस रिपोर्ट ऑन द डिक्लेरेशन ऑव कमिटमेंट ऑन एचआईवी/एड्स. एचआईवी/एड्स पर संयुक्त राष्ट्र महासभा का विशिष्ट सत्र तथा नेशनल एड्स कन्ट्रोल ऑर्गेनाइजेशन. नई दिल्ली, पृ. 5

8 कैसर फाउंडेशन, एचआईवी/एड्स पॉलिसी फैक्ट शीटः एचआईवी/एड्स इन इंडिया, 2005; यूएनएड्स, यूथ एंड एचआईवी/एड्सः अपॉर्च्युनिटी इन क्राइसिस, 2002.

आदि इस तथ्य को संज्ञान में नहीं ले पाते कि पैसों की किल्लत या पोषण की कमी के चलते इलाज के प्रति उदासीन रहने वालों की दर कहीं ऊंची है।[9] साथ ही साथ व्यवहार या व्यक्ति आधारित प्रतिक्रियाएं भी इस कलंक को और गहरा ही करेंगी।

भूख और गरीबी को समाप्त करना सहस्त्राब्दी का प्रथम विकास लक्ष्य है तथा अन्य सभी लक्ष्यों की पूर्ति के लिये अवश्यंभावी है। विश्व के 46 प्रतिशत अल्प भार वाले बच्चों के साथ दक्षिण एशिया वह क्षेत्र है जहां शिशु कुपोषण की दर विश्व में सर्वाधिक है।[10] एक पोषण सुरक्षा आधारित विकल्प संक्रमण से प्रभावित तथा संक्रमित व्यक्तियों को कई फायदों से लाभान्वित करता है। अगर महामारी से जुड़े व्यवस्थागत कारणों का अनुकूल जवाब नहीं दिया गया तो भारत में भी महामारी का प्रभाव दक्षिण अफ्रीका के पदचिन्हों का अनुकरण कर सकता है। 1991 में दक्षिण अफ्रीका की राष्ट्रीय प्रचलित दर भारत की वर्तमान राष्ट्रीय दर के ही समान थी (लगभग 1 प्रतिशत)। पर एक दशक से थोड़े अधिक समय में ही यह छलांग मार कर 24 प्रतिशत तक पहुंच गयी और राष्ट्र के सामने खड़ी गंभीर समस्याओं में से एक बन गयी।[11] दोनों देशों में कई ऐसे लक्षण समान रूप से मौजूद हैं जिनके चलते भारत में संख्यांओं में ऐसा विस्फोटक इजाफा बहुत संभव है। ये हैं– 1) विस्तृत सामाजिक–आर्थिक असमानता तथा खाद्य असुरक्षा; 2) श्रम पलायन की एक विस्तृत व्यवस्था; 3) बीमारी को कलंक की तरह मानना तथा एचआईवी के कारणों की जानकारी की कमी तथा वीसीटी की कमजोर दरें; 4) सेक्स संबंधी समस्याओं को खुले रूप में संबोधित करने के प्रति हिचकिचाहट (विशेषतः विवाहेत्तर सेक्स); 5) लिंग भेद तथा 6) प्रतिक्रिया के लिए वांछित राजनैतिक इच्छा शक्ति की कमी। व्यक्ति, परिवार समुदाय तथा राष्ट्र पर पड़ने वाले इसके प्रभावों को कम करने के लिये आवश्यक है कि इस काम के लिए वांछित प्रतिक्रियाएं व्यक्ति से परे जाकर देखें तथा गरीबी की समस्या को भी हल करने का प्रयत्न करें। भूख को एचआईवी से जोड़कर देखने से ही व्यक्तिगत तथा सामूहिक कल्याण सुनिश्चित हो सकता है तथा गरीब इलाकों में महामारी के सामाजिक–आर्थिक परिणाम कम किये जा सकते हैं।

एचआईवी/एड्स तथा पोषण के जैविक परिप्रेक्ष्य

एचआईवी रेट्रो विषाणुओं के एक समूह से संबंधित है जो शरीर की प्रतिरोध क्षमता कम करके उसे प्रभावित करते हैं जिसके चलते शरीर कई तरह की बीमारियों और रोगों के प्रति असुरक्षित हो जाता है, जैसे टीबी, थ्रश, निमोनिया, मुंह का थ्रश, अनीमिया तथा कुपोषण। यह एक धीमी गति से काम करने वाला विषाणु है और शरीर में वर्षों तक बिना पकड़े गये (परीक्षण में नहीं आए) मौजूद रह सकता है; जिसके चलते यह महत्वपूर्ण दीर्घकालीन प्रभाव डाल सकता है जो पहले पकड़ में नहीं आते। जब एक एचआईवी प्रभावित व्यक्ति अवसरीय संक्रमणों ओआई से ग्रसित हो जाता है या जब सीडी–4 की संख्या 200 कोशिका/मीमी तक गिर जाती है, तब व्यक्ति को एड्स हो जाता है। एचआईवी संक्रमण तथा एड्स के बीच की समय सीमा विषाणु के प्रभाव, आनुवांशिकीय कारकों, आयु, साथ होने वाले संक्रमणों तथा संक्रमण से पहले एवं बाद में व्यक्ति के सामान्य स्वास्थ्य पर निर्भर करती है।[12] अब तक एचआईवी/एड्स का कोई इलाज या टीका विकसित नहीं किया जा

9 डेवेरेक्स, स्टीफन एंड रचेल सबातेस–व्हीलर, "एड्स वल्नरेबिलिटी एंड सोशल प्रोटेक्शन." इंस्टीट्यूट ऑव डेवेलपमेंट स्टडीज, एड्स एंड वल्नरेबिलिटी कार्यशाला, ब्राइटन, 23–24 जून 2005, पृ. 2

10 एंटीरेट्रो वायरल थेरेपी पर रहने वाले लोग जो दवा संबंधी नियमों का ठीक से पालन नहीं करते अवसरीयं संक्रमणों के तीव्र विकास के प्रति अधिक असुरक्षित होते हैं। इलाज के नियमों का ठीक पालन न किए जाने के चलते संक्रमण में औषधि–रोधक विशिष्टताएं भी जन्म ले सकती हैं, जिसके कारण एचआईवी का हस्तान्तरण ऐसे लोगों में हो जाने का खतरा रहता है जिनका इलाज वर्तमान चिकित्सा सुविधाओं से नहीं हो सकता। कैसल. मेन, टी, ई सियुमो–फोस्सा एंड बी कॉगिल्ल. "फूड एंड न्यूट्रीशन इम्पिलेकशन्स ऑव एण्टीरेट्रोवायरल थेरेपी इन रिसोर्स लिमिटेड सेटिंग्स." फैन्टाः टेक्नीकल नोट नं. 7 से फूड एंड न्यूट्रीशन टैक्नीकल असिस्टेंस (फैन्टा) प्रोजेक्ट द्वारा संपादित. वाशिंगटन, डी. सीः अकादमी फॉर एजुकेशनल डेवलपमेंट, 2004, पृ. 11

11 यूनिसेफ. प्रोग्रेस फॉर चिल्ड्रेनः ए रिपोर्ट कार्ड ऑन न्यूट्रीशन. नम्बर 4, मई 2006, पृ. 6.

12 कंदियल, एस एंड टी बार्ने. 2004. एड्स इन इंडियाः डिजास्टर इन द मेकिंग. इकॉनॉमिक एंड पॉलिटिकल वीकली 39(19) : 1888–1892

सका है, हालांकि विषाणु के द्विगुणन को रोकने तथा एचआईवी के कारण होने वाली बीमारियों एवं लक्षणों को रोकने के लिये कई दवाएं विकसित कर ली गई हैं।

एचआईवी/एड्स के कारण होने वाले प्रतिरोध क्षमता के हनन के चलते कई तरह से कुपोषण की स्थिति और बदतर हो जाती है। प्रथमतः शरीर की शारीरिक ऊर्जा अधिक मात्रा में खर्च होती है,[13] खुराक की मात्रा में कमी आती है,[14] पोषक तत्वों द्वारा अल्प मात्रा में पोषण तथा हानि, एवं परिवर्तित उपापचयी गतिविधियों के चलते वजन कम होता है, जो कि एड्स के सामान्य लक्षण हैं।[15] दूसरे, एंटीरेट्रो वायरल रोधी इलाज के प्रतिकूल प्रभावों (साइड इफेक्ट) के कारण भी पोषण संबंधित दुष्प्रभाव सामने आते हैं जो पोषण स्तर को गिराते हैं। इसके अंतर्गत डायरिया, (नौसिया) उबकाई, उल्टी ऐनोरैक्सिया अथवा ऐवडॉमिनल क्रैम्प्स आदि शामिल हैं। तीसरे, एचआईवी प्रभावित क्षेत्रों में सूक्ष्म पोषक तत्वों की कमी आम है। डब्ल्यूएचओ कहता है कि यद्यपि सूक्ष्म पोषक तत्वों का अनुपूरण एचआईवी के इलाज और थेरेपीका विकल्प नहीं है, पर "एचआईवी प्रभावित बच्चों और वयस्कों को विविधापूर्ण भोजन, मजबूत खाद्यों तथा सूक्ष्म पोषक तत्वों के आवश्यकतानुसार अनुपूरण द्वारा दैनिक आधार पर निर्देशित मात्रा में सूक्ष्मपोषक तत्व उपलब्ध करना बहुत जरूरी है।"[16] संक्रमण को दूर रखने के लिए प्रतिरोध क्षमता को विटामिन ए,बी–कॉमप्लेक्स, सी, ई तथा सेलेनियम एवं जिंक जैसे खनिजों की भी जरूरत पड़ती है।[17] चित्र 1 में दिये गये पोषण एवं प्रतिरोध क्षमता द्वारा एचआईवी/एड्स को दी जाने वाली प्रतिक्रिया के बीच के चक्र को समझा जा सकता है।

चित्र 1 : एचआईवी/एड्स के संदर्भ में अच्छे पोषण तथा संक्रमण के प्रतिरोध के अन्तर्सम्बन्ध का चक्र

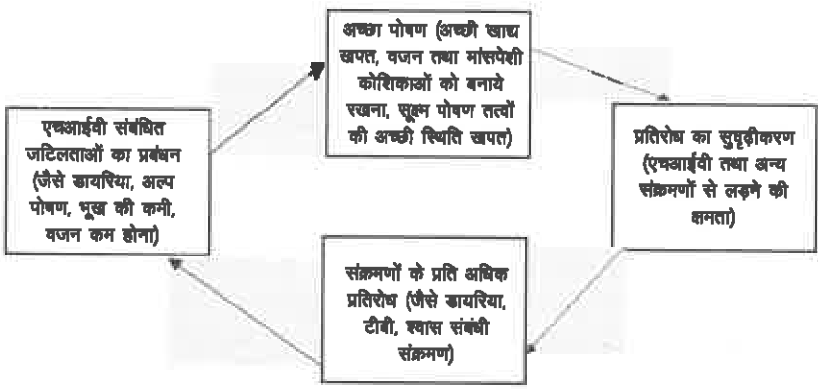

स्रोत : फैन्टा (FANTA). "एचआईवी/एड्स ए गाइड फॉर न्यूट्रीशनल केयर एंड सपोर्ट, दूसरा संस्करण", फूड एंड न्यूट्रिशन टेक्नीकल असिस्टेंस (फैन्टा) प्रोजेक्ट द्वारा संपादित। वाशिंगटन डीसी अकादमी फॉर ऐजुकेशनल डेवलपमेंट, 2004

13 फैन्टा. "एचआईवी/एड्सः ए गाइड फॉर न्यूट्रीशनल केयर एंड सपोर्ट. द्वितीय संसकरण." फूड एंड न्यूट्रीशन टेक्नीकल असिस्टेंस (फैन्टा) प्रोजेक्ट द्वारा संपादित. वाशिंगटन, डी.सी.: ऐकेडमी फॉर एजुकेशनल डेवेलपमेंट, 2004, पृ. 10–11

14 "ऐसे एचआईवी संक्रमित व्यक्ति जिनमें इसके लक्षण अभी प्रकट नहीं हुए हैं, 10 प्रतिशत अधिक ऊर्जा के जरूरतमन्द होते हैं तथा वे पीड़ित जिनके लक्षण प्रकट होने लगे हैं समान आयु, लिंग तथा शारीरिक गतिविधियों वाले एचआईवी अप्रभावित व्यक्ति के मुकाबले 20 से 30 प्रतिशत अधिक ऊर्जा की जरूरत महसूस करते हैं।" देखें पिवोज, ई. 2004. न्यूट्रीशन एंड एचआईवी/एड्सः एविडेंस, गैप्स एंड प्रायरिटी। वजन की कमी से जूझते एचआईवी संक्रमित बच्चों की ऊर्जा आवश्यकताएं 50 से 100 प्रतिशत तक बढ़ जाती हैं। देखें डब्ल्यूएचओ. 2005ए

15 खुराक में कमी पाचन नली अथवा मुंह में दुःखते घावों (कटावों), हताशा, थकान अथवा अन्य मनः सामाजिक समस्याओं अथवा भोजन या आर्थिक संसाधनों तक पहुंच न होने के कारण हो सकती है। डब्ल्यूएचओ अनुमोदित करता है कि खुराक को सुधारने के प्रभावकारी तरीकों को विकसित तथा लिपिबद्ध किए जाने की आवश्यकता है।

16 फैन्टा. "एचआईवी/एड्सः ए गाइड फॉर न्यूट्रीशनल केयर एंड सपोर्ट, द्वितीय संस्करण." इंडिटेड बाई फूड एंड न्यूट्रीशन टेक्निकल एसिसटेंट(फैंटा) वाशिंगटन डीसीः अकादमी फॉर एजुकेशनल डेवेलपमेंट, 2004, पृ. 14; पिवोज, ई. 2004.

17 डब्ल्यूएचओ. 2005ए.

कुपोषण तथा एचआईवी दोनों शरीर को समान रूपों से प्रभावित करते हैं। प्रतिरोध क्षमता पर कुपोषण के प्रभाव विविध तथा अनेक दृष्टिकोण वाले हैं। एचआईवी के अस्तित्व से पहले कुपोषण के कारण होने वाले प्रतिरोध क्षमता के ह्रास को न्यूट्रीशनली ऐक्वायर्ड इम्यून डेफिशयन्सी सिंड्राम (एनएड्स) कहा जाता था।[18] प्रतिरोध क्षमता पर पड़ने वाले कुपोषण के प्रभावों के अंतर्गत सीडी–4 टी–कोशिकाओं की मात्रा में कमी, विलम्बित (परा संवेदनशीलता) हायपरसैन्सिटिविटी का दमन तथा बी कोशिकाओं की असामान्य प्रतिक्रिया शामिल हैं।[19] साथ ही साथ प्रोटीन - ऊर्जा कुपोषण (पीईएम) उपलब्ध भोजन की दयनीय खपत या अपर्याप्त उपयोग के कारण ही जन्म लेता है।[20] कुपोषण भोजन तक कम पहुंच, खराब स्वास्थ्य अथवा उपलब्ध खाद्य पदार्थ के अपूर्ण उपयोग के कारण होता है।[21] यूनिसेफ के अनुसार, इसके अंतर्गत आयु की तुलना में कम वजन होना आयु के अनुसार निर्धारित लम्बाई से कम लम्बाई का होना (स्टन्टिड), स्वास्थ्य के लिए खतरनाक हद तक पतला होना (वेस्टिड) तथा विटामिन एवं खनिजों की कमी से जूझना (सूक्ष्म पोषक तत्व कुपोषण) शामिल है।"[22] साफ एवं स्वच्छ पानी तक पहुंच होना भी डायरिया जैसी सामान्य पोषण संबंधी बीमारियों को रोकने में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करता है। पोषण सुरक्षा को अच्छे स्वास्थ्य, एक स्वस्थ तथा सुरक्षित पर्यावरण एवं अच्छी देखभाल पद्धतियों द्वारा चिह्नित किया जा सकता है।[23] देखभाल तथा परामर्शात्मक सहायता के द्वारा परिवार खपत के संबंध के अधिक जागरुक तथा सशक्त निर्णय लेने में समर्थ हो पाते हैं।

हाल ही में सिंगापुर में एंटीरेट्रो वायरल थेरेपी केन्द्रों की शुरुआत के समय (अत्यधिक सक्रिय एंटीरेट्रो वायरल थेरेपी या हार्ट (एचएएआरटी) के उपयोग द्वारा) कुपोषण के प्रभावों से संबंधित पहला अध्ययन सम्पन्न किया गया।[24] इस अध्ययन में कई घटकों का अध्ययनं किया गया पर[25] बीमारी के कारण होने वाली मृत्यु से सबसे गहन रूप से संबद्ध घटकों में एंटीरेट्रो वायरल थेरेपी का प्रकार, चिकित्सकीय संक्रमण का चरण, पिछले अवसरीय संक्रमणों की संख्या, सीडी–4 संख्या, एंटीरेट्रो वायरल थेरेपी प्रारंभ करने का वर्ष, वजन तथा शरीर संहति (इंडेक्स) शामिल हैं। मृत्यु के तीन सबसे महत्वपूर्ण संकेतक थे– संक्रमण का चरण, रेट्रो विषाणुरोधी थेरेपी का प्रकार तथा कुपोषण। "उन रोगियों की, जो एंटीरेट्रो वायरल थेरेपी शुरू करते समय मध्यम से गम्भीर कुपोषण से ग्रस्त थे, मृत्यु का संकट अनुपात अन्य की तुलना में दोगुना था। हार्ट (एचएएआरटी) लेने वाले रोगियों में, मध्यम से गम्भीर कुपोषण के शिकार रोगियों की मृत्यु का संकट अनुपात, सामान्य पोषण

---

18 पिवोज, ई. 2004.

19 आरसीक्यूएचसी. 2003. "न्यूट्रीशन एंड एचआईवी/एड्सः ए ट्रेनिंग मैन्युअल." रीजनल सेन्टर फॉर क्वालिटी ऑव हेल्थकेयर द्वारा संपादित, कंपाला, यूगांडा, पृ. 27

20 गार्बेक, एस. एल., तामसिन, ए.के., एंड रुबेनॉक आर. इन्टरेक्शन बिटवीन न्यूट्रीशन एंड इनफेक्शन विद ह्यूमन इम्यूनोडेफिशियेन्सी वायरस. न्यूट्रीशन रिव्यू, 1993, पृ. 51

21 फैन्टा, 2004, पृ. 15

22 वर्ल्ड बैंक. रिपोजिशनिंग न्यूट्रीशन एज सेन्ट्रल टु डेवलपमेंटः ए स्ट्रेटजी फॉर लार्ज स्केल ऐक्शन. डब्ल्यू.बी डायरेक्शन इन डेवलपमेंट सीरीज, 2006, पृ. 53

23 यूनिसेफ. 2006, पृ. 5

24 खाद्य सुरक्षा पोषण सुरक्षा से अलग है हालांकि यह पोषण सुरक्षा की एक महत्वपूर्ण घटक है। खाद्य सुरक्षा के अंतर्गत भोजन की समुचित मात्रा तथा गुणवत्ता तक ऐसी आर्थिक एवं भौतिक पहुंच शामिल है जो स्थानीय संस्कृति या परिस्थिति के लिए उपयुक्त हो। पोषण सुरक्षा तब प्राप्त होती है जब एक परिवार भोजन तक सुरक्षित पहुंच, साथ ही साथ स्वच्छ वातावरण, पर्याप्त स्वास्थ्य सुविधाएं तथा उपयुक्त स्वास्थ्य सुविधाओं के बारे में जानकारी प्राप्त कर लेता है। इन दोनों को एक दूसरे से भ्रमित नहीं करना चाहिए क्योंकि एक–दूसरे की गारंटी नहीं करता है। "उदाहरण के लिए, एक मां के पास स्वस्थ भोजन के सारे घटकों तक भरोसेमंद पहुंच हो सकती है, पर खराब स्वास्थ्य, अपर्याप्त देखभाल, गैर जिम्मेदारी, लिंग संबंधी या व्यक्तिगत तरजीहों के चलते वह भोजन को पोषक क्रम में चुनने में असमर्थ हो सकती है या गलत चुनाव कर सकती है.....। एक परिवार (या देश) खाद्य सुरक्षा से युक्त हो सकता है पर फिर भी उसके कई व्यक्ति पोषण के संबंध में असुरक्षित हो सकते हैं। अतः खाद्य सुरक्षा पोषण सुरक्षा की एक बहुधा आवश्यक पर अपर्याप्त परिस्थिति है." देखें विश्व बैंक. 2006, पृ. 66

25 पेटन, एन, एट. अल. द इम्पैक्ट ऑव मलन्यूट्रीशन ऑन सर्वाइवल एंड द सीडी–4 काउन्ट रिस्पान्स इन एचआईवी–इन्फेक्टिड पेशेन्ट्स स्टार्टिंग एन्टीरेट्रोवायरल थेरेपी. एचआईवी मेडिसन (2006). 7, 323–330

स्तर वाले रोगियों की तुलना में छह गुना अधिक था।"[26] अतः एंटीरेट्रो वायरल थेरेपी शुरू करने वाले रोगियों में जीवन दर कुपोषण से महत्वपूर्ण रूप से जुड़ी हुई थी। विकासशील देशों में, जहां खाद्य असुरक्षा अधिक है, एचआईवी पर कुपोषण के प्रभाव को संज्ञान में लिया जाना चाहिए क्योंकि एचआईवी के आने के साथ ही कुपोषण का दायरा भी, इलाज के बावजूद, फैलने की संभावना है।

पोषण तथा एंटीरेट्रो वायरल थेरेपी के बीच की अन्तःक्रियाओं का प्रबन्धन चल रहे इलाज के प्रभाव के लिए महत्वपूर्ण है क्योंकि एंटीरेट्रो वायरल थेरेपी एक एचआईवी संक्रमित लोग की पोषण संबंधी आवश्यकताओं को भी प्रभावित कर सकता है।[27] रोगियों पर कुपोषण के अन्य हानिकारक प्रभावों के अंतर्गत औषधि अवशोषण पर संभावित दुष्प्रभाव न्यूनतम सीमा में औषधि–विषाक्तता संभावना तथा कुपोषण के साथ आने वाली शारीरिक क्रियाओं में आने वाली गिरावट शामिल हैं।[28] दवा के दुष्प्रभावों को रोकने के लिये, अवसरीय प्रतिरोध क्षमता की मजबूती के लिये, संक्रमणों को दूर करने के लिये तथा संक्रमण की प्रगति को रोकने के लिये पर्याप्त पोषण सहायता आवश्यक है।[29] साथ ही साथ लम्बे समय तक एंटीरेट्रो वायरल के उपयोग का संबंध उपपाच्यकारी जटिलताओं में देखने को मिलता है जैसे ह्रदय–रक्त संचालन संबंधी बीमारियां, मधुमेह, तथा हड्डियों से संबंधित समस्याएं।[30] कुल मिलाकर एंटीरेट्रो वायरल थेरेपी विषाणु द्विगुणन की दर को कम करता है जबकि पोषण "शरीर को वह सब उपलब्ध कराता है जो नई प्रतिरोध कोशिकाओं के विकास के लिये आवश्यक है और इस तरह संक्रमण से लड़ने में अपनी भूमिका निभाता है।"[31] अच्छा पोषण शरीर को एंटीरेट्रो वायरल का अधिकतम फायदा प्राप्त करने में मदद करता है; दोनों प्रतिरोध क्षमता को बनाये रखने के लिये विभिन्न परन्तु परस्पर सहयोगी रूपों में साथ काम करते हैं।

एचआईवी से ग्रस्त अधिकतर व्यक्ति उपयुक्त सुविधाओं, सलाह अथवा इलाज की कमी का सामना करते हैं। बहरहाल स्थानीय तथा अंतर्राष्ट्रीय प्रयत्नों तथा परामर्शों के परिणामस्वरूप कई देशों ने महंगे एंटीरेट्रो वायरल को सार्वजनिक क्षेत्र द्वारा जनता को उपलब्ध कराने की शुरुआत की है।[32] फिर भी एंटीरेट्रो वायरल थेरेपी पाने वालों और उसके जरूरतमन्दों के बीच की दूरी अभी बहुत अधिक है। अन्य देशों की तरह जहां एंटीरेट्रो वायरल उपलब्ध हैं, भारत में भी अधिकतर एचआईवी संक्रमित लोग को इलाज पाने के लिये कई चुनौतियों का सामना करना पड़ता है। अप्रैल 2005 तक अनुमानतः 35,000 लोग एआरवी थेरेपीप्राप्त कर पा रहे थे जिनमें से सार्वजनिक क्षेत्र द्वारा इसे पाने वालों की संख्या 7,333 व्यक्ति थी। यह दिसम्बर 2004 तक भारत में एंटीरेट्रो वायरल थेरेपी की जरूरत में बैठे 770,000 वयस्कों का मात्र 5 प्रतिशत है।[33] प्राथमिक स्तर की दवाइयां प्रथम रूप से चिकित्सा महाविद्यालयों से जुड़े अस्पतालों में ही मिल पाती है जिसके चलते कई पीड़ितों को स्वास्थ्य सुविधाओं तक पहुंचने के लिए लंबी दूरी तक चलके जाना होता है। दूसरे राज्यों से आने वाले लोगों को कई बार दवाएं नहीं दी जाती हैं क्योंकि कई एंटीरेट्रो वायरल थेरेपी रोल आउट केन्द्र स्थानीय निवास का प्रमाण मांगते हैं। स्वास्थ्य केन्द्र अधिकांशतः दो बजे दोपहर तक बंद हो जाते हैं जिसके

---

26 चार घटकों की सूची में आयु, नस्ल, लिंग, जोखिम के तत्व (जैसे लिंग, आईडीयू आदि), शरीर–वजन अनुपात, इलाज के आरम्भ के समय विषाणु भार, इलाज की शुरुआत के समय सीडी4 की संख्या, इलाज की शुरुआत का वर्ष, इलाज के आरम्भ के समय मध्यम ऊंचाई तथा मध्यम भार शामिल थे।

27 पैटन, एन, एट. अल. 2006, पृ. 327–328

28 कवियल, सुनीता तथा स्टुअर्ट गिलेस्पी. "रीथिंकिंग फूड एंड टू फाइट एड्स." फूड कन्जम्पशन एंड न्यूट्रीशन डिवीजन डिस्कशन पेपर 169 से. वाशिंगटन डीसी: फूड कन्जम्पशन एंड न्यूट्रीशन डिवीजन, इन्टरनेशनल फूड पालिसी रिसर्च इंस्टीट्यूट, 2003. पृ. 13

29 पैटन, एन, एट. अल. 2006, पृ. 328

30 केसिलमैन, टी. ई., सियुनो–फोस्सो एंड बी. कॉगिल. 2004, पृ. 3.

31 डब्ल्यूएचओ. 2005बी. टेक्नीकल एडवायसरी ग्रुप टू द डब्ल्यूएचओ. "न्यूट्रीशन एंड एचआईवी/एड्सः रिपोर्ट बाई द सेक्रेटेरियट." 12 मई 2005.

32 पेशेन्ट, डेविड तथा नेल ओर्र. "एंटीरेट्रो वायरल थेरेपी एंड न्यूट्रीशन इन एचआईवी एंड एड्स." द थर्ड वॉयस. मई 2006

33 यह अनुमान लगाया जाता है कि 2003 में विकसशील देशों में 60 लाख पीएलडब्ल्यूएचए (पीपल लिविंग विद एचआईवी/एड्स) एंटीरेट्रो वायरल थेरेपी के जरूरतमन्द थे जिनमें से मात्र 4 लाख इसे प्राप्त कर सके। इनमें से एक तिहाई ब्राजील में रहते हैं। देखें डब्ल्यूएचओ. " स्केलिंग अप एन्टीरेट्रोवायरल थेरेपी इन रिसोर्स लिमिटिड सेटिंग्सः ट्रीटमेंट गाइडलाइन्स फॉर ए पब्लिक हेल्थ एप्रोच. 2003 रिवीजन. जेनेवा, दिसम्बर 2003, पृ. 5

कारण दूर से आने वाले लोगों को रात भर रुकना पड़ता है।[34] ये सारे कारक एंटीरेट्रो वायरल थेरेपी के साथ जिसके सफलतापूर्वक काम करने के लिए उसकी शर्तों का कठोरतापूर्वक पालन आवश्यक है, साथ जुड़े रहने की मार्ग में कई बाधाएं खड़ी करते हैं।[35] इसके अलावा महिलाएं और बच्चे गतिशीलता की कमी तथा अन्य कई बंदिशों के कारण आनुपातिक रूप से और भी ज्यादा प्रभावित होते हैं।

खाद्य असुरक्षित क्षेत्रों में पोषण संबंधी हस्तक्षेप के प्रयासों को छोटे बच्चों (खासकर लड़कियों), अनाथों तथा महिलाओं का पहले ध्यान रखना चाहिए। अंदाजा लगाया जाता है कि पूरे विश्व में होने वाली, 5 वर्ष से कम उम्र के बच्चों की मौतों का 53 प्रतिशत पोषण की कमी चलते होती हैं।[36] इसके अलावा, एचआईवी संक्रमण कम आयु में ही बच्चों की वृद्धि को रोक देता है। एचआईवी संक्रमण के लक्षणों के प्रकट होने के पहले ही कई बार कम वृद्धि दर देखी जाती है। कुपोषण तथा मृत्यु के जोखिम को और बढ़ाने का काम विषाणुकृत भार, क्रॉनिक डायरिया एवं अन्य अवसरजन्य संक्रमण (ओआई) कर देते हैं।[37] पोषण संबंधी हस्तक्षेप अल्पकालीन और दीर्घकालीन कुपोषण को दूर करने में तब अधिक प्रभावकारी होते हैं जब वे गर्भधारण से पहले से लेकर बच्चे के प्रारम्भिक दो वर्षों तक चलें क्योंकि बचपन के दौरान मस्तिष्क के विकास तथा शारीरिक विकास को होने वाली हानि "बहुत विस्तृत तथा मुख्य तौर पर अपरिवर्तनीय होती है।"[38] 5 वर्ष से कम के बच्चे कुपोषण तथा बार–बार होने वाली बीमारियों के प्रति अति संवेदनशील होते हैं। एचआईवी की मौजूदगी में बच्चों का विकास विषाणुकृत भार (वॉयरल लोड), क्रानिक डायरिया, तथा अन्य अवसरजन्य संक्रमणों के कारण प्रभावित होता है। एचआईवी के इलाज और देखभाल के अलावा, "बेहतर भोजन का सेवन बच्चों को अवसरजन्य संक्रमणों के बाद होने वाली वजन की कमी को पूरा करने में सहायता देने के लिये जरूरी है।"[39] अतः जीवन के आरंभिक कुछ वर्षों में उपर्युक्त पोषण संबंधी देखरेख खाद्य असुरक्षित क्षेत्रों में रहने वाले बच्चों के लिये अत्यन्त महत्वपूर्ण है।

स्तनपान कराने वाली तथा गर्भवती स्त्रियां (विशेषतः किशोर माताएं) एचआईवी तथा पोषण असुरक्षा दोनों के प्रति असुरक्षित होती हैं। वे पोषक तत्वों की बढ़ती जरूरत महसूस करती हैं और उनका वजन कम बढ़ता है।[40] अपनी सुपोषित सहभागियों के मुकाबले कुपोषित महिलाओं के प्रजनन संबंधी जोखिम कहीं ज्यादा होते हैं तथा गर्भ परिणाम कहीं कमजोर होते हैं। गर्भधारण के दौरान होने वाले शारीरिक परिवर्तनों के कारण ऊर्जा, प्रोटीन तथा अन्य सूक्ष्म पोषक तत्वों की आवश्यकता दुग्ध उत्पादन तथा भ्रूण की वृद्धि और विकास के लिये एवं गर्भ तथा प्रसव के लिए उपयुक्त वजन पाने के लिए बढ़ी हुई जरूरतों को पूरा करने के लिए बढ़ जाती है।

जैसा कि पहले वर्णित किया जा चुका है, एचआईवी संक्रमण पोषक तत्वों की आवश्यकता को बढ़ाता है और अवशोषण की दर को कम करता है जिसके कारण एचआईवी प्रभावित गर्भवती या स्तनपान कराने वाली महिला की पोषण संबंधी आवश्यकताएं अत्यधिक बढ़ जाती हैं। इसी कारण एचआईवी संक्रमित गर्भवती या स्नतपान कराने वाली महिला एचआईवी अप्रभावित महिला की तुलना में पोषण संबंधी जोखिम के अधिक

---

34 कैसर फाउन्डेशन, एचआईवी/एड्स पॉलिसी फैक्ट शीटः एचआईवी/एड्स इन इंडिया, 2005. (डब्ल्यूएचओ के "समरी कन्ट्री प्रोफाइल फॉर एचआईवी/एड्स ट्रीटमेंट स्केल अप : इंडिया," से उद्धृत जून 2005.

35 इन्टरनेशनल ट्रीटमेंट प्रीपेयर्डनेस कोअलिशन. 2005, पृ. 34–37

36 कैसलमैन, टी, ई सियुमो–फोस्सो, एंड बी. कॉगिल. 2004. फूड एंड न्यूट्रीशन इम्प्लिकेशन्स ऑव एन्टीरेट्रोवायरल थेरेपी इन रिसोर्स लिमिटेड सैटिंग्स. टेक्नीकल नोट्स 7. वाशिंगटन, डीसी., फैन्टा

37 यूनिसेफ. 2006 (डब्ल्यूएचओ को उद्धृत करते हुए. 2005 सी. वर्ल्ड हेल्थ रिपोर्ट 2005: मेक एव्री मदर एंड चाइल्ड काउन्ट)

38 डब्ल्यूएचओ 2005ए.

39 वर्ल्ड बैंक. 2006, पृ. 55

40 डब्ल्यूएचओ 2005ए

करीब होती है।[41] अतः गर्भकाल तथा स्तनपान के दौरान माता को मिलने वाला अच्छा पोषण न सिर्फ वजन बढ़ाता है बल्कि गर्भ तथा जन्म के परिणामों को भी सुधारता है।[42]

माता से शिशु को होने वाले एचआईवी संक्रमण के जोखिम को कम करने के लिए पोषण संबंधी सलाह तथा उपयुक्त पद्धतियों का सहयोग लेना आवश्यक है। माताओं से संक्रमण के स्थान्तरण को निर्धारित करने वाले कारकों में प्रतिरोध स्तर के अलावा आने वाले अन्य कारक हैं– माता का विषाणु भार, उसके दूध में विषाणु का संकेन्द्रण, स्तन संक्रमण (जैसे मैस्टिटिस), तथा उसके संक्रमण विशेष का प्रकार। शिशु के संक्रमित होने की संभावना स्तनपान के काल, गैर अन्यापवर्जक स्तनपान (नन–एक्सक्लूसिव), आयु, मुंह अथवा आंतों के घावों की उपस्थिति, प्राक–वयस्कता तथा पुनः बच्चे की प्रतिरोध प्रतिक्रियाओं के द्वारा प्रभावित होती हैं।[43] केवल मां का दूध शिशुओं के भोजन का सबसे पौष्टिक स्रोत माना जाता है क्योंकि यह आवश्यक पोषक तत्वों के साथ–साथ एन्टी बॉडीज तथा एन्जाइम्स से युक्त होता है जो कि संक्रमणों से लड़ने और प्रतिरोध क्षमता को मजबूत करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।[44] बहरहाल एचआईवी की मौजूदगी में डब्ल्यूएचओ सलाह देता है–

तब जबकि वैकल्पिक स्नतपान स्वीकार्य हो, संभव हो, सुरक्षित हो, बनाये रखे जाने योग्य हो तथा वित्तीय रूप से क्षमताओं के अन्दर हो तो एचआईवी प्रभावित सभी महिलाओं को स्तनपान न कराने की सलाह दी जाती है। अन्यथा आरंभ से ही स्तनपान कराने की सलाह दी जाती है। एचआईवी स्थान्तरण के जोखिम को कम करने के लिये स्थानीय परिस्थितियों, संबंधित महिला की व्यक्तिगत स्थिति तथा वैकल्पिक स्तनपान के जोखिमों (जिसमें कुपोषण तथा एचआईवी के अलावा अन्य संक्रमण शामिल हैं) को ध्यान में रखते हुए स्तनपान को, जितना जल्दी संभव हो, बंद कर देना चाहिए।[45]

वैकल्पिक स्तनपान संचरण की संभावनाओं को न्यून कर देता है। परन्तु यह पोषण के दृष्टिकोण से आदर्श नहीं है। वैकल्पिक स्तनपान की गैर मौजूदगी में शुरुआती छः महीनों के लिये सिर्फ मां का दूध ही पिलाने की ही सलाह दी जाती है क्योंकि यह मिश्रित स्तनपान से कहीं कम जोखिम भरा है (जिसमें संक्रमण के अधिकतम जोखिम होते हैं)। सांस्कृतिक कारणों के चलते स्तनपान द्वारा संचरण के जोखिम को कम करने की कोशिशें अधिक कठिन हो जाती हैं। सामाजिक दंश से बचने के लिये वे महिलाएं भी, जो अपनी स्थिति के बारे में जानती हैं, वैकल्पिक स्तनपान के स्थान पर स्वयं ही स्तनपान करायेंगी।[46] वे जो अपनी स्थिति के बारे में अनभिज्ञ हैं, उन्हें भी डब्ल्यूएचओ द्वारा रेखांकित बेहतर पद्धतियों के आधार पर शिक्षित किया जाना चाहिये।

प्राथमिक पोषण संबंधी हस्तक्षेपों के अंतर्गत विशेष व्यवहारों के अनुसार सलाह; निर्धारित तथा लक्षित पोषण अनुपूरक एचआईवी/एड्स तथा पोषण के बारे में जन स्वास्थ्य शिक्षण, तथा भोजन आधारित हस्तक्षेप एवं कार्यक्रमों के साथ संबंध शामिल हैं।[47] तन्जानिया में संक्रमित गर्भवती महिलाओं के साथ किये गये एक अध्ययन में पाया गया कि "विटामिन बी कॉम्प्लेक्स, विटामिन सी तथा विटामिन ई युक्त बहु विटामिन संपूरकों

41 वर्ल्ड बैंक, 2006. पृ. 55; डब्ल्यूएचओ. 2005ए.

42 आरसीक्यूएचसी. 2003. "न्यूट्रीशन एंड एचआईवी/एड्सः ए ट्रेनिंग मैन्युअल." रीजनल सेन्टर ऑव हेल्थकेयर द्वारा संपदित. कम्पाला, युगान्डा, पृ. 125–133

43 डब्ल्यूएचओ. 2005ए.

44 गिलेस्पी, स्टुअर्ट एंड सुनीता कदियल. एचआईवी/एड्स एंड फूट एंड न्यूट्रिशन फॉर क्वालिटी सिक्योरिटी. फूड पॉलिसी रिव्यू 7: इंटरनेशनल फूड पॉलिसी रिसर्च इंस्टीट्यूट, वाशिंगटन, डीसी. 2005, पृ. 52–54

45 फैन्टा 2004, पृ. 59

46 डब्ल्यूएचओ. 2004. "एचआईवी ट्रान्समिशन थ्रू ब्रेस्टफीडिंगः ए रिव्यू ऑव अवेलेबल एविडेन्सिज," पृ. 35

47 वर्ल्ड बैंक. 2006, पृ. 79

के द्वारा एचआईवी संक्रमित महिलाओं में अन्य संक्रमणों का विकास महत्वपूर्ण रूप से रोका जा सका....[तथा] निगलने में होने वाली समस्याओं, मुंह के थ्रश, मुंह के छालों तथा अन्य जटिलताओं को कम किया जा सका।"[48] मितली, वमन तथा डायरिया भी कम आम थे जिनसे सामान्य पोषण स्तर में सुधार हुआ। अधिक सीडी–4, सीडी–8 तथा सीडी–3 कोशिकाओं की उपस्थिति को भी देखा गया।[49] पोषण संबंधी अनुपूरकों की बुनियादी प्रभाविकता शारीरिक वजन तथा संक्रमण के विकास के चरण पर निर्भर करती है। साथ ही साथ, प्रतिक्रियाओं को परिस्थिति के अनुरूप होना चाहिये ताकि वे स्थानीय जरूरतों को समुचित रूप से पूरा कर सकें। जहां प्रभावी पोषण संबंधी सहयोग उपलब्ध कराने के लिये अधिक शोध की आवश्यकता है, वहीं अब तक का अधिकतम शोध इस तथ्य को रेखांकित करता है कि पोषण संबंधी सहयोग अत्यधिक आवश्यक है।

विश्व खाद्य योजना के अनुसार, 2003 में एंटीरेट्रो वायरल कार्यक्रमों के तहत में शामिल किये जाने वाले 64 लाख लोगों में से 10 लाख लोगों को किसी न किसी प्रकार के पोषण संबंधी सहयोग की आवश्यकता पड़ेगी।[50] अतः इलाज तथा देखभाल के हस्तक्षेपों को देखभाल के विभिन्न तत्वों के संबंध में अधिक समग्रतापूर्ण तरीके से सोचने की आवश्यकता है। कुल मिलाकर पोषण सुरक्षा में सुधार के चलते एचआईवी संक्रमित व्यक्ति को निम्न प्रकार से फायदा होगा– इलाज के प्रति बेहतर प्रतिक्रिया (जो संक्रमण को तो कम नहीं करता पर जीवन को जरूर बढ़ता है); बीमारी तथा दवाइयों के प्रतिकूल प्रभावों का बेहतर प्रबंधन, तथा जीवन की गुणवत्ता में सुधार। जीवन के वर्षों में इजाफे तथा व्यक्ति के जीवन की गुणवत्ता में सुधार के द्वारा परिवार तथा समुदाय का कल्याण भी सुनिश्चित हो जाता है। पोषण तथा खाद्य आधारित हस्तक्षेप द्वारा असुरक्षित परिवारों को सहारा देना खासकर उन लोगों के लिये फायदेमंद होगा जो बुनियादी स्वास्थ्य संबंधी देखभाल तथा इलाज के दायरे के अन्दर नहीं आ पाते। यह खंड यह देखने की कोशिश करेगा कि किस तरह एचआईवी तथा एड्स परिवारों को प्रभावित करते हैं तथा कैसे एक खाद्य सुरक्षा तथा पोषण सुरक्षा आधारित विकल्प इस महामारी के सामाजिक–आर्थिक प्रभावों को कम करने में सहायक हो सकता है।

एचआईवी तथा खाद्य सुरक्षा की जटिलताएं

एचआईवी के प्रति प्रतिक्रिया के चारों क्षेत्रों– इलाज, देखभाल, निवारण तथा शमन (कमी) में सफलता के लिये खाद्य सुरक्षा तथा पोषण अति महत्वपूर्ण है। पिछले भाग ने इस बात पर प्रकाश डाला कि किस तरह एचआईवी संक्रमित लोगों के लिये पोषण महत्वपूर्ण है तथा कैसे कुपोषण एचआईवी संक्रमण की संभाव्यता को बढ़ाता है।[51] यहां हम देखेंगे कि संसाधनों की कमी से जूझते इलाकों में खाद्य असुरक्षा किन तरीकों से एचआईवी तथा एड्स के प्रति असुरक्षा को बढ़ावा देती है। खाद्य असुरक्षा तथा गरीबी एचआईवी के प्रति असुरक्षा को बढ़ावा देते हैं क्योंकि संसाधनों की कमी से जूझते इलाकों में, जहां भूख की समस्या लम्बे समय से तथा संतत् रूप से मौजूद रहती है, लोगों में संक्रमण होने की संभावनाएं अधिक हैं तथा वे उसके विभिन्न प्रभावों पर नियंत्रण रख पाने में कम समर्थ हैं। इसके अलावा गरीब इलाकों में एचआईवी तथा एड्स अपने आने के साथ ही मौजूद असमानताओं को मजबूत करते हैं तथा गरीबी, खाद्य असुरक्षा तथा खराब स्वास्थ्य के प्रति असुरक्षा को बढ़ावा देते हैं। इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए कि भोजन, पोषण तथा एचआईवी आपस में बहुत करीब से जुड़े हुए हैं, भोजन तथा गरीबी निवारण योजनाओं तथा हस्तक्षेपों को एक साथ सम्मिलित

48 पिवोज, ई. 2004.
49 फावजी, वाफी डब्ल्यू. एट. अल. 2004. ए रैन्डेमाइज्ड ट्रायल ऑव मल्टीविटामिन सप्लीमेंट्स एंड एचआईवी डिजीज प्रोग्रेशन एंड मोर्टेलिटी. द न्यू इंग्लैण्ड जर्नल ऑव मेडिसिन. 351:1: 23–33, पृ. 25
50 फावजी, वाफी डब्ल्यू. एट. अल. 2004, पृ. 31
51 कुलुम्या शीला एंड सिसय अदीबे. "हंगर टू वर्सन एपिडेमिक इन अफ्रीका." पैनोस्कोप इश्यू 4, 17 अगस्त 2006

किया जाना अत्यन्त महत्वपूर्ण है। यह पाठ भारत में खाद्य सुरक्षा योजना की रूपरेखा पर ध्यान केन्द्रित करने के साथ समाप्त होता है तथा यह परामर्श देता है कि वर्तमान खाद्य, पोषण तथा आजीविका समर्थन योजनाओं को बढ़ते एचआईवी के खतरे के प्रति अधिक संवेदनशीलता विकसित करने की आवश्यकता है।

संयुक्त राष्ट्र विकास योजना (यूएनडीपी) गरीबी को "अच्छे भोजन तथा दैनिक जीवन के लिए आवश्यक अन्य वस्तुओं को प्राप्त कर पाने में असमर्थता" के रूप में परिभाषित करता है।[52] गरीबी तथा खाद्य असुरक्षा, अच्छे भोजन की उपलब्धता, उसकी पर्याप्त मात्रा तक पहुंच, उपयुक्त उपयोग तथा उपयुक्त देखभाल के संसाधनों द्वारा प्रभावित होती है। अतः घरेलू खाद्य सुरक्षा, जो कि उत्पादक जीवन को सुनिश्चित करने वाली भोजन के प्रति स्थायी तथा पर्याप्त सामाजिक तथा आर्थिक पहुंच द्वारा मापी जाती है,[53] विवेचना का एक महत्वपूर्ण घटक है जिसके चलते हम यह समझ सकते हैं कि क्यों कुछ परिवार अथवा व्यक्ति गरीबी तथा एचआईवी के बीच मौजूद अन्तःचक्र के प्रति अधिक असुरक्षित हैं। सीमित संसाधनों वाले इलाकों में अधिकतर एचआईवी संक्रमित लोग बुनियादी देखभाल तथा सहयोग के लिये राज्य तथा बीमा कम्पनियों के मुकाबले स्थानीय सहयोग पर ही ज्यादा निर्भर करते हैं।[54] अतः एचआईवी के प्रभावों तथा अन्य झटकों से उबर पाने की शक्ति, सहयोग के वैकल्पिक संस्थाओं की कमी के चलते कम हो जाती है। व्यक्तियों, परिवारों तथा समुदायों पर पड़ने वाले एचआईवी के प्रभावों की गम्भीरता इन्हीं संस्थाओं की शक्ति और स्थिति पर निर्भर करती है।

एचआईवी के प्रभाव सबसे पहले स्थानीय स्तर पर, सीधे अधिक निकट पड़ने वाली सामाजिक इकाइयों द्वारा मानवीय तथा वित्तीय संसाधनों की हानि, सांस्कृतिक परंपराओं तथा ज्ञान एवं शिक्षा के संदर्भ में महसूस किये जाते हैं। एचआईवी एक परिवार की उत्पादकता को बीमारी, एड्स संबंधित कुपोषण, तथा अन्ततः मृत्यु द्वारा प्रभावित करता है।[55] जब एक व्यक्ति बीमार पड़ जाता है या मर जाता है तो उससे होने वाली आय या संसाधनों की हानि की भरपाई का बोझ उसके परिवार पर आ जाता है। इसके परिणामस्वरूप परिवार के जीवित बचे सदस्यों को अधिक कार्य करने अथवा वैकल्पिक आजीविका ढूंढ़ने के लिये मजबूर होना पड़ता है।[56] परिवार आजीविका कमाने, बच्चों को स्कूल भेजने तथा बीमार सदस्यों की देखभाल का बोझ उठाने के लिये संघर्ष करने लगते हैं।[57] आय की हानि के अलावा चिकित्सा तथा क्रियाकर्म संबंधी खर्चे भी एड्स प्रभावित परिवारों की वित्तीय सुरक्षा को बदतर बना देते हैं। जमीन तथा पशुधन जैसी संपत्ति को क्रियाकर्म तथा इलाज में होने वाले खर्च को पूरा करने के लिये बेच दिया जाता है। पीढ़ी दर पीढ़ी चलने वाले हुनर की हानि भयावह होती है, विशेषतः ग्रामीण इलाकों में क्योंकि वहां कृषि संबंधी ज्ञान आजीविका से गहनरूप

52 संभाव्यता अरक्षितता से निम्न प्रकार से भिन्न है। संभाव्यता का अर्थ एक व्यक्ति, परिवार, समूह या आजीविका व्यवस्था के एचआईवी या प्राभाविक एचआईवी संक्रमण दरों के संपर्क में आने की संभावना से है। यह जोखिम व्यक्तिगत व्यवहार तथा पर्यावरणीय कारकों द्वारा निर्धारित होता है। एक खाद्य सुरक्षा विश्लेषण के लिये अरक्षितता अधिक महत्वपूर्ण है। यह सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक या भौतिक पर्यावरण के फीचरों या प्रक्रियाओं पर निर्भर करता है जिनके चलते यह एक निश्चित स्तर तक एचआईवी/एड्स के हानिकर प्रभाव को सुनिश्चित कर देता है। अरक्षितता के विलोम को समुत्थान शक्ति या झटके से उबर पाने की शक्ति या क्षमता के बतौर माना जाता है। देखें करियल, एस., तथा गिलेस्पी, एस. 2003. रीथिंकिंग फूड एड टु फाइट एड्सः इन्टरनेशनल फूड पॉलिसी रिसर्च इंस्टीट्यूट. फूड कन्जम्पशन एंड न्यूट्रीशन डिवीजन डिस्कशन पेपर नं. 159, पृ. 5–6.

53 भट्ट, एमएस. (संपादित) "इन्ट्रोडक्शन" टु पॉवर्टी एंड फूड सिक्योरिटी इन इंडियाः प्रॉबलम्स एंड पॉलिसीज, नई दिल्ली. आकार बुक्स, 2004

54 फूड एंड एग्रीकल्चरल ऑर्गेनाइजेशन 2001. द इम्पैक्ट ऑव एचआईवी/एड्स ऑन फूड सिक्योरिटी कमेटी ऑन वर्ल्ड फुड सिक्योरिटी, 27वां सत्र, रोम, 28 मेई–1जून।

55 गिलेप्सी, एस, एल हद्दाद, एंड आर. जैक्सन. 2001. एचआईवी/एड्स, फूड एंड न्यूट्रीशन सिक्यूरिटीः इम्पैक्ट्स एंड ऐक्शन्स. न्यूट्रीशन एंड एचआईवी/एड्स से, न्यूट्रीशन पॉलिसी डिस्कशन पेपर 20, जेनेवाः यूनाईटेड नेशन्स एससीएन. (http://www.unsystem.org/scn/publications/NPP/npp20.PDF पर उपलब्ध), पृ. 31

56 कवियल, एस, एंड गिलेस्पी, एस 2003, पृ. 6.

57 बोनार्ड, पेट्रिशिया. "एचआईवी/एड्स मिटीगेशनः यूजिंग व्हाट वी ऑलरेडी नो." फूड एंड न्यूट्रीशन टेक्नीकल असिस्टेंस प्रोजेक्ट, अकादमी फॉर एजुकेशनल डेवलपमेंट, पृ. 2, वाशिंगटन, डीसी, 2002.

से जुड़ा होता है। खेतिहर इलाकों में उत्पादकता की तात्कालिक हानि हुनर, संपत्ति तथा श्रम के नुकसान के कारण दीर्घकालीन कमजोरी बन जाती है। "दक्षिण अफ्रीका में एड्स प्रभावित परिवारों का प्रति व्यक्ति खाद्य व्यय अन्य परिवारों की तुलना में 70 से 80 प्रतिशत था, पर कुल मासिक व्यय में कोई बड़ा अंतर नहीं पाया गया, बहुत हद तक स्वास्थ्य संबंधी खर्चों के बढ़ने के चलते।"[58] ऐसे में मृत्यु निर्भरता अनुपात बढ़ा देती है तथा संसाधनों के दायरे को और सीमित कर देती है। वे गरीब परिवार जो एचआईवी के कारण प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष नुकसान झेलते हैं, गरीब होते जाने के जोखिम में बने रहते हैं। कुल मिलाकर, यह प्रभाव परिवारों को शारीरिक, पूंजीगत तथा मानव संसाधनों के नुकसान द्वारा, खाद्य सुरक्षा तथा कमजोर स्वास्थ्य के प्रति अधिक असुरक्षित बनाते हैं।

विभिन्न क्षेत्रों में एचआईवी के प्रभावों का अनुभव और प्रतिक्रिया भिन्न होते हैं। अधिकतर देशों में जहां एचआईवी की प्रचलित दर है, जनसंख्या के अधिकांश भाग की आजीविका कृषि से चलती है। कृषि क्षेत्र की सुरक्षा भूख को मिटाने की बुनियादी कड़ी है क्योंकि भारत में ग्रामीण क्षेत्रों में जनसंख्या का 70 प्रतिशत हिस्सा रहता है और भारतीयों की एक बड़ी तादाद आजीविका, रोजगार, साथ ही साथ भोजन के लिये भी कृषि पर निर्भर करती है।[59] 60 करोड़ किसानों के साथ यह 1998 में सकल घरेलू उत्पाद (जीडीपी) का 27 प्रतिशत तथा कुल रोजगारों का 62 प्रतिशत उपलब्ध करा रहा था।[60] बहरहाल, इसके साथ ही किसान सबसे ज्यादा गरीब भी हैं। कृषि मजदूरी दरें कम हैं तथा श्रम की परिस्थितियां भी बहुत अनियंत्रित हैं। बहुत से लोग फसलों के बीच के अंतराल में बेरोजगारी झेलते हैं। एड्स संबंधित बीमारियों के चलते मानव तथा श्रम संबंधी संसाधनों की हानि ग्रामीण इलाकों में गरीबी को और बढ़ाती है। एचआईवी संक्रमण, बीमारी तथा मृत्यु के चलते होने वाली श्रम की हानि द्वारा सबसे पहले खाद्य उत्पादन को प्रभावित करता है। "इथोपिया में किये गये एक अध्ययन ने पता लगाया कि एक एड्स प्रभावित परिवार कृषि पर सामान्य परिवारों की तुलना में 50–66 प्रतिशत कम समय खर्च कर पाता है.......एक अनुमान के मुताबिक जब तक एड्स के कारण एक प्रभावित व्यक्ति की मृत्यु होती है, तब तक कमजोरी तथा अन्य लोगों द्वारा की जा रही उसकी देखरेख के चलते लगभग दो व्यक्तियों के श्रमवर्ष के बराबर नुकसान हो जाता है।"[61] मृत्यु के चलते संसाधनों के कमजोर हो जाने के अलावा भी, ग्रामीण इलाकों में एचआईवी/एड्स का आर्थिक प्रभाव शहरी क्षेत्रों के मुकाबले कहीं ज्यादा प्रत्यक्ष होता है क्योंकि ग्रामीण इलाकों में वैकल्पिक रोजगार की संभावनाएं कहीं कम होती हैं।[62] दीर्घकालीन खाद्य संकट को कम करने वाले हस्तक्षेपों का एक आर्थिक सामाजिक महत्व होता है जिसके चलते वे कुपोषण संबंधित बीमारियों अथवा भूख से होने वाली मौतों की ऊंची दर के कारण होने वाली हानि को कम करते हैं। यह पलायन जैसी संक्रमण के प्रति संपर्क बढ़ाने वाली गतिविधियों तथा व्यवहार पर अंकुश लगाकर तनाव के चलते हो सकने वाले संक्रमण की संभावनाएं भी कम करता है।

---

58 पिवोज, ई. 2004.

59 गिलेप्सी, स्टुअर्ट एंड सुनीथा कदियल. एचआईवी/एड्स एंड फूड न्यूट्रीशन सिक्योरिटी. फूड पॉलिसी रिव्यू 7: इंटरनेशनल फूड पॉलिसी रिसर्च इंस्टीट्यूट वाशिंगटन, डीसी. 2005, पृ. 34 (बूयसन, एफ ली आर, एंड एम बाचमान 2002. एचआईवी/एड्स, पॉवर्टी एंड ग्रोथ: एविडेंस फ्रॉम ए हाउसहोल्ड इम्पैक्ट स्टडी कन्डक्टिड इन द फ्री स्टेट प्रोविन्स, दक्षिण अफ्रीका को उद्धृत करते हुए. अफ्रीकी अर्थव्यवस्थाओं के अध्ययन पर हुए वार्षिक समारोह में प्रस्तुत किया गया पत्र, ऑक्सफोर्ड, मार्च 18–19.)

60 जीगलर, जीन. रिपोर्ट ऑव द स्पेशल रेपोर्टियर ऑन द राइट टु फूड. इकॉनॉमिक एंड सोशल काउन्सिल, यूएन कमीशन ऑन ह्यूमन राइट्स मिशन टु इंडिया, 20 अगस्त– 2 सितम्बर 2005.

61 शर्मा, देविन्दर. 2005ए. द इण्डियन एक्सपिरियेंस ऑव लिबरइलाइज़ेशन ऑव एग्रीकल्चर. नेशनल फार्मर्स फेडरेशन तथा ऑक्सफेम ऑस्ट्रेलिया द्वारा कैनबरा में 17 अगस्त 2005 को आयोजित एग्रीकल्चरल ट्रेड डेवेलपमेंट कान्फ्रेंस में की गई वार्ता

62 एफएओ. 2001.

असमान विकास[63] तथा ग्रामीण निर्धनता के परिणामस्वरूप ज्यादा से ज्यादा गरीब किसान शहरों के असंगठित क्षेत्र में मजदूरी करने के लिये गांवों से पलायन कर रहे हैं।[64] एचआईवी संक्रमण तथा गतिशीलता के बीच के संबंध दुनिया भर में सर्वविदित हैं। पलायन द्वारा हालांकि किसी व्यक्ति के आय के स्तर में (या नये क्षेत्र में उसके परिवार के स्तर में) सुधार आ सकता है, पर गतिशीलता के साथ जुड़ी गतिविधियां तथा परिस्थितियां संक्रमण के जोखिम को बढ़ावा देती हैं। सहयोग के अपने परम्परागत संपर्कों से बिछड़कर नये इलाकों में जाना पलायन करने वालों तथा उनके परिवारों को एकदम नयी चुनौतियों के समक्ष खड़ा कर देता है। महिलाएं तथा बच्चे अवैध देह व्यापार, बंधुआ मजदूरी, यौन शोषण, एचआईवी संक्रमण तथा अन्य स्वास्थ्य समस्याओं के शिकार बनते हैं। कई यौनकर्मी गतिशील होते हैं तथा उन्हें खतरनाक कार्य स्थितियां, हिंसा तथा स्वास्थ्य संबंधी जोखिमों से गुजरना पड़ता है।[65] पलायन के चलते परिवारों तथा पत्नियों से दूर रहने वाले पुरुषों के व्यावसायिक यौनकर्मियों के साथ असुरक्षित संबंधों की संभाव्यता अधिक होती है।[66] ग्रामीण भारत में एचआईवी/एड्स पर होने वाले एक अध्ययन ने निम्नलिखित तथ्यों का उद्घाटन किया–

केन्द्रित समूह चर्चा के भागीदारों ने क्षेत्र में होने वाले एचआईवी संक्रमण का मुख्य स्रोत शहर तक की यात्रा को माना। युवाओं द्वारा त्योहारों में यौनकर्मियों के पास जाने का विशेष रूप से उल्लेख किया गया, खासकर गणपति उत्सव के 10 दिनों के दौरान तथा लम्बे रूट के ट्रकचालकों, जीप चालकों एवं व्यापारियों द्वारा भी इसका उल्लेख किया गया जब वे अपने काम के लिये शहर जाते हैं।[67]

संक्रमण के नमूने एक असमान लिंग गतिकी को उद्घाटित करते हैं। जहां अधिकतर पुरुषों को संक्रमण यौनकर्मियों से, शहरी क्षेत्रों की उनकी यात्रा के दौरान हुआ, वहीं उनकी पत्नियों को यह अपने पतियों से मिला।[68] इसके अलावा पलायन के कारण ग्रामीण क्षेत्रों में एचआईवी के जोखिम कहीं बढ़ जाते हैं क्योंकि कई व्यक्ति जो काम की तलाश में शहरों की ओर पलायन कर जाते हैं संक्रमित होने के बाद तब गांव लौट आते हैं जब वे बीमारी के कारण काम करने में और समर्थ नहीं रहते तथा मृत्यु की प्रतीक्षा कर रहे होते हैं। साथ ही साथ चिकित्सा सुविधाएं भी गतिशील जनसंख्याओं की जरूरतें पूरी करने में सक्षम नहीं होती है। एचआईवी गतिशीलता को इस तरह और बढ़ावा देता है कि भारत में कई एचआईवी संक्रमित लोगों को एड्स संबंधित बीमारियों की दवा के लिये लम्बी दूरी तक यात्राएं करनी पड़ती है।[69] तनाव के कारण बड़े स्तर पर होने वाली जनसंख्या गतिशीलता (जैसे सूखे, युद्ध अथवा गरीबी के कारण), संक्रमण में परिणत होने वाले तमाम व्यावहारिक कारणों से कहीं ऊपर है। अतः गरीबी, कृषि नीति, शिक्षा तथा स्वास्थ्य सुविधाओं तक पहुंच आदि ढांचागत कारणों पर ध्यान दिया जाना आवश्यक है।

तनावपूर्ण जनसंख्या पलायन की व्यापकता का अंदाजा भारतीय शहरों की झुग्गी झोपड़ियों में बढ़ती जा रही जनसंख्या से लगाया जा सकता है।[70] जनसंख्या का एक तिहाई हिस्सा शहरों में[71] रहता है तथा भारतीय

---

63 कॉर्निया, गियोवानी एन्ड्रिया एंड फेवियो जागोनारी. "द एचआईवी/एड्स इम्पैक्ट ऑन द रूरल एंड अर्बन इकॉनॉमी" एड्स, पब्लिक पॉलिसी एंड चाइल्ड वैल–बींग से. यूनिसेफ, पृ. 4–7

64 नेशनल कमीशन ऑन रूरल लेबर, जो कि मौसमी पलायन पर ध्यान रखता है, इस निष्कर्ष पर पहुंचा है कि श्रम पलायन का बुनियादी कारण असमान विकास है। देखें श्रम मन्त्रालय रिपोर्ट– द स्टडी ग्रुप ऑन माइग्रन्ट लेबर. नई दिल्ली: नेशनल कमीशन ऑन रूरल लेबर, भारत सरकार; 1991

65 शर्मा, देविन्दर. 2005ए.

66 यूएनएड्स. टेक्नीकल अपडेट, "सेक्स वर्क एंड एचआईवी/एड्स," जून 2002.

67 डब्ल्यूएफपी. 2003. "प्रोग्रामिंग इन एरा ऑव एड्स : डब्ल्यूएफपीज रिस्पान्सिज टु एचआईवी/एड्स." पॉलिसी इश्यूस से, विश्व खाद्य कार्यक्रम रोम द्वारा संपादित : विश्व खाद्य कार्यक्रम, 2003, पृ. 7

68 पल्लिकादावथ, एस., एल. गारदा, एच. आप्टे, जे. फ्रीडमान एंड आरडब्ल्यू स्टोन्स (2005). एचआईवी/एड्स इन रूरल इंडिया: कन्टेक्स्ट एंड हेल्थकेयर नीड्स. जर्नल ऑव बायोसोशल साईन्सेस, आगामी, पृ. 15–16

69 पल्लिकादावथ, एस., एल. एट अल. 2005, पृ. 15–16

70 इंटरनेशनल ट्रीटमेंट प्रीपेयर्डनेस कोअलिशन. "मिसिंग द टार्गेट: अ रिपोर्ट ऑन एचआईवी/एड्स ट्रीटमेंट एक्सेस फ्रॉम द फ्रन्टलाइन्स." 28 नवम्बर 2005, पृ. 34–37

71 जेलिगर, जीन. 2005. (चक्रवर्ती, एस. और दंड, एस. को उद्धृत करते हुए फूड इनसिक्योरिटी इन इंडिया, पृ. 3.)

शहरी जनसंख्या का 21 प्रतिशत झुग्गियों में रहता है जहां उसे दोयम दर्जे की सफाई, अपर्याप्त घरों तथा असुरिक्षत पेयजल के साथ गुजारा करना होता है। झुग्गियों में रहने को अवैध करार दिये जाने, स्वच्छता की दयनीय स्थितियों तथा बराबर होने वाली बीमारियों के चलते शहरी गरीबों के बीच कुपोषण तथा बीमारी एक स्थानीय समस्या बन जाते हैं।[72] ये सभी कारक खाद्य सुरक्षा तक पहुंच तथा उसके समुचित उपयोग का निषेध करते हैं। साथ ही साथ शहरी क्षेत्रों में सबसे ज्यादा रोजगार अर्थव्यवस्था के असंगठित क्षेत्र में उपलब्ध होते हैं जहां श्रम नियंत्रण की स्थितियां बहुत हद तक अपर्याप्त होती हैं। इसमें यौनकर्म, घरेलू काम–काज, ट्रक ड्राइवरी, निर्माण, कृषि तथा अन्य कम आय वाले अनियंत्रित क्षेत्र शामिल हैं। पलायन करके आने वाले शरणार्थी, बेघर लोग, आंतरिक स्तर पर विस्थापित लोग, अनाधिकृत झुग्गी बस्तियों के लोग तथा सड़कों पर रहने वाले बच्चे ही मुख्य रूप से इन कामों को करते हैं।[73] श्रम तथा अन्य नियंत्रणों की असंगठित क्षेत्र में कमी के चलते ये मजदूर, सरकारी योजनाओं तथा सर्वे के लिए 'अदृश्य' हो जाते हैं।[74] अतः अधिकतर को अपने कानूनी अधिकारों से भी वंचित रहना पड़ता है (जैसे– जन सेवाएं तथा खाद्य राशन कार्ड)[75] इत्यादि।

एचआईवी/एड्स ऐसे परिवारों को बढ़ावा दे रहा है जिनके मुखिया अनाथ अथवा बच्चे होते हैं। अनाथों के कुपोषित अथवा खाद्य असुरक्षित होने की संभावना अन्य बच्चों की तुलना में अधिक होती है।[76] कई को श्रम द्वारा घरेलू आय अथवा खाद्य उत्पादन को बढ़ाने के लिये स्कूल छोड़ने पर विवश होना पड़ता है। अनाथ बच्चे अधिकतर बढ़े हुए परिवारों में शामिल कर लिए जाते हैं जिसके चलते सामूहिक स्तर पर देखभाल का बोझ बढ़ जाता है।[77] महाराष्ट्र के सांगली जिले में एचआईवी/एड्स के बच्चों पर पड़ने वाले प्रभावों पर किये गये एक अध्ययन के अनुसार कम आय वाले परिवारों में, ऐसे परिवार की संख्या जहां अनाथ ही घर के मुखिया हों, एचआईवी प्रभावित घरों में अधिक थी। "कम आये वाले समूह में एचआईवी/एड्स परिवारों में अनाथ दर लगभग 85 प्रतिशत है जबकि गैर एचआईवी/एड्स परिवारों में यह लगभग 57 प्रतिशत है।"[78] साथ ही साथ पीढ़ी दर पीढ़ी चलने वाले कृषि संबंधी ज्ञान तथा अन्य आजीविका संबंधी हुनर की हानि खासतौर पर ग्रामीण इलाकों में बहुत महत्वपूर्ण होती है। लम्बे दौर में, बच्चे गरीबी के प्रति अधिक असुरक्षित हो जाते हैं, तथा दयनीय शिक्षा के कारण वैकल्पिक आजीविका की कहीं कम संभावनाएं उनके सामने होती हैं। अफ्रीका में अनाथों की संख्या के बराबर पहुंचने से बचने के लिए भारत को एचआईवी/एड्स, खाद्य सुरक्षा तथा कुपोषण के प्रति बच्चों की अरक्षितता के मामले पर कहीं अधिक ध्यान देना होगा।

देखभाल का बोझ संभालने के लिए बचे वरिष्ठों की बढ़ती जनसंख्या आजीविका का दूसरा मुख्य मुद्दा है। हैल्प एज इन्टरनेशनल के अनुसार देखभाल का 90 प्रतिशत घर पर ही संपन्न होता है, सामान्यतः बूढ़ी महिलाओं के द्वारा। नामीबिया, दक्षिण अफ्रीका तथा जिमवाब्बे में 60 प्रतिशत अनाथ बच्चे दादा–दादी, या

72 कदियल, एस., एंड टी बार्ने. 2004. एड्स इन इंडिया : डिजास्टर इन द मेकिंग. इकॉनॉमिक एंड पॉलिटिकल वीकली 39 (19): 1882–1892. (यूएनडीपी. 2003 को उद्धृत करते हुए. ह्यूमन डेवलपमेंट रिपोर्ट 2003: मिलेनियम डेवलपमेंट गोल्सः ए कॉम्पैक्ट अमंग नेशन्स टु एंड प्रॉपर्टी, ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, न्यूयार्क)

73 मन्दर, हर्ष. 2005. फूड सिक्योरिटी अप्रोचेज इन इंडियाः कन्टैक्स्ट, अनालिसिस एंड प्रोग्राम ऑप्शन्स फॉर डीसीए, इंडिया. ह्यूमन राइट्स लॉ नेटवर्क (आगामी) पृ. 55–63

74 ज़ेलिगर, जीन 2005

75 झबवाला, रेनाना, रत्ना एम सुदर्शन एंड जीमोल उन्नि (संपादित) इनफॉर्मल इकॉनॉमी सेन्टर स्टेजः न्यू स्ट्रक्चर्स ऑव एम्प्लायमेंट, सेज पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली, 2003

76 मन्दर, हर्ष. 2005, पृ. 63.

77 गिलेप्सी, स्टुअर्ट एंड सुनीथा कदियल. एचआईवी/एड्स एंड फूड न्यूट्रीशन सिक्योरिटी. फूड पॉलिसी रिव्यू 7: इंटरनेशनल फूड पॉलिसी रिसर्च इंस्टीट्यूट वाशिंगटन, डीसी. 2005, पृ. 15 (गर्टलर, पी., एस. मार्टिनेज, डी. लेवाइन, तथा एस बरतोज्जी को उद्धृत करते हुए. 2003. लॉसिंग व प्रिजेन्स एंड प्रेजेंट्स ऑव पेरेन्ट्सः हाउ पेरेन्टल डैथ्स अफैक्ट चिल्ड्रन ड्राफ्ट; गिल्बोर्न, एल., आर. न्योनयिन्तोनो, आर. काबम्बुलि, एंड जी. जम्दे–वहा. 2001. मेकिंग ए डिफरेन्स फॉर चिल्ड्रेन अफेक्टिड बाय एड्सः बेसलाइन फाइन्डिंग फ्रॉम आपरेशन्स रिसर्च इन युगांडा. न्यूयार्कः पॉपुलेशन काउन्सिल)

78 वर्ल्ड फूड प्रोग्राम. "प्रोग्रामिंग इन एन एरा ऑव एड्सः डब्ल्यूएफपीज रिस्पांसेज टु एचआईवी/एड्स." पॉलिसी इश्यूज से. वर्ल्ड फूड प्रोग्राम द्वारा संपादित. रोमः 2003, पृ. 7

नानी–नानी के परिवारों में रहते हैं। बोस्तवाना, मालावी तथा तन्जानिया में यह संख्या 50 प्रतिशत से कुछ अधिक है। वहन किये जाने योग्य इलाज तथा स्कूल के अभाव में वृद्धजन अपने वयस्क बच्चों तथा उनके भी बच्चों की समुचित देखभाल कर पाने में अधिक वित्तीय संकट महसूस करते हैं, जिसके चलते उनकी गरीबी और बढ़ जाती है। तमिलनाडु में अनाथ हुए बच्चों की देख–रेख कर रहे वृद्ध अभिभावक इस काम के लिए अपनी संपत्ति 36 प्रतिशत से 21 प्रतिशत तक की ब्याज दरों पर साहूकारों को बेचते या गिरवी रखते बताये गये हैं।[79]

लिंग भूमिकाएं पारिवारिक खाद्य सुरक्षा तथा एचआईवी हस्तान्तरण के प्रति अरक्षितता को आकार देने में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं। एक लिंग आधारित परिप्रेक्ष्य आगे चलकर यह भी दिखाता है कि इस महामारी द्वारा पैदा की गयी चुनौतियों को पूरा कर पाने में व्यावहारिक या स्वास्थ्य आधारित प्रतिक्रियाएं अपर्याप्त हैं। उदाहरण के लिये पुरुषों पर आर्थिक या सामाजिक रूप से निर्भर रहने वाली महिलाएं कंडोम के इस्तेमाल अथवा सेक्स के अन्य सुरक्षित तरीकों के लिए प्रभावकारी रूप से पुरुषों को तैयार नहीं कर सकती हैं। यह एक महिला की जोखिम के प्रति जानकारी के बावजूद सही है।

एड्स प्रभावित अधिकतर महिलाओं के कई सेक्स–पार्टनर नहीं होते, उन्होंने कभी IV दवाईयों का इस्तेमाल नहीं किया होता है तथा कभी संक्रमित खून नहीं चढ़वाया होता है। उनका सबसे बड़ा जोखिम उनका गरीब होना होता है। दूसरों के लिए यह जोखिम शादीशुदा होना, तथा न सिर्फ अपने पतियों को रोक पाने में असमर्थ होना होता है, बल्कि आजीविका कमाने के लिए पतियों द्वारा किये जा रहे रोजगार पर भी किसी नियंत्रण का न होना होता है।[80]

महिलाओं को संक्रमण होने की अधिकतम संभावना उनके एकमात्र विपरीत लिंगी सेक्सपार्टर द्वारा होने की संभावना होती है। अतः जोखिम के व्यावहारिक निर्णायकों के मुकाबले लिंग आधारित गरीबी के मुद्दे को ज्यादा तरजीह दी जानी चाहिये।

अधिकतर भारतीय परिवारों में महिलाएं सबसे अन्त में खाती हैं और इसीलिए पर्याप्त भोजन के अभाव में भूखी रह जाती हैं।[81] विकासशील देशों में 5 वर्ष से छोटे बच्चों में अल्पपोषित बच्चों की प्रचलित दर की तुलना करने के बाद यूनीसेफ ने पाया कि दक्षिण एशिया एकमात्र ऐसा क्षेत्र है जहां अल्पपोषित मादाओं की संख्या अधिक है। अल्पभारीय पुरुषों की प्रतिशत 44 है जबकि लड़कियों के लिए यह 47 प्रतिशत है।[82] बीमारी से प्रभावित परिवारों में महिलाएं परिवार के बीमार सदस्यों की देखभाल के लिए सबसे ज्यादा जिम्मेदार होती हैं। अंतर्राष्ट्रीय श्रम कार्यालय द्वारा किए गए एक अध्ययन में परिवार के बीमार सदस्यों की देखभाल की जिम्मेदारी लेनेवाली महिलाओं पर पड़ने वाले आर्थिक प्रभावों को लिपिबद्ध किया गया। साक्षात्कार देने वाली महिलाओं में से 44 प्रतिशत ने बताया कि उनकी आय कम हुई है, जिसकी सीमा सौ रुपये से लेकर 18,000 रुपये तक थी (औसत हानि रुपये 2,700 थी)।[83] परिवार के संक्रमित सदस्य (सदस्यों) की देखभाल के लिए मजबूर सदस्यों में से, 41 प्रतिशत को परिवार के खर्चों को पूरा करने के लिए नौकरी करनी पड़ी; 37 प्रतिशत ने एक और नौकरी बढ़ती जरूरतों को पूरा करने के लिए करनी शुरू की तथा 15 प्रतिशत

79 वर्मा, रवि के., एस. सलिल, वेर्रा मेन्डोन्का, एसके सिंह, आर प्रसाद एंड आरबी उपाध्याय. "एचआईवी/एड्स एंड चिल्ड्रेन इन सांगली डिस्ट्रिक्ट ऑव महाराष्ट्र (इंडिया)." कार्निया, जी. ए. (संपादित) एड्स, पब्लिक पॉलिसी एंड चाइल्ड वैल–बींग से यूनिसेफ. 2000, पृ. 22

80 हेल्प एज इंटरनेशनल. "ओल्डर पीपल एंड एचआईवी/एड्सः फैक्ट्स एंड फिगर्स" (http://www.helpage.org/Researchandpolicy/HIVAIDS/Fact-sandfigures पर उपलब्ध. 29 अगस्त 2006 को लिया गया)

81 फार्मर, पॉल, मार्गरिट कॉर्नर्स एंड सिमन्स, संपादित 1996. वीमेन, पॉवर्टी एंड एड्स : सेक्स, ड्रग्स, एंड स्ट्रक्चरल वायलेंस. मुनरो, एमई: कॉमन करेज प्रेस, पृ. 29

82 अबुसालेह, शरीफ. "न्यूट्रीशनल फूड इनसिक्योरिटी इन इंडिया." भट्ट, एमएस (संपादित) पॉवर्टी एंड फूड सिक्योरिटी इन इंडियाः प्राबलम्स एंड पॉलिसीज से, आकार बुक्स, नयी दिल्ली, 2004, पृ. 196–7.

83 यूनिसेफ. प्रोग्रेस फॉर चिल्ड्रेनः ए रिपोर्ट कार्ड ऑन न्यूट्रीशन. नम्बर 4, मई 2006, पृ. 10

महिलाओं को अपनी नौकरी, देखभाल की जरूरतों को पूरा करने के चलते छोड़नी पड़ी।[84] ऐसे परिवार जो अपने बच्चों को स्कूल भेज पाना वहन नहीं कर पाते, सबसे पहले परिवार की मदद के लिए लड़कियों को स्कूल से निकालते हैं। महिला श्रम पूंजी में हानि पारिवारिक खाद्य सुरक्षा पर बड़ा भयानक प्रभाव डालती है क्योंकि विकासशील देशों में महिलाएं श्रमभार का एक बड़ा हिस्सा वहन करती हैं।

महिला अशक्तिकरण के पीछे ढांचागत कारणों को निपटाने का एक प्रभावकारी तरीका खाद्य सुरक्षा कार्यक्रम है क्योंकि यदि ठीक ढंग से लागू किया जाए तो ये महिलाओं को निजी तथा सार्वजनिक क्षेत्रों में सशक्त बनाने के प्रति लक्षित रहते हैं। महिलाओं को सुरक्षित, स्थायी आजीविका विकल्प उपलब्ध कराने वाले कार्यक्रम उन्हें पैसे के संग्रह और खर्चे के मामले में प्रभावकारी भूमिका निभा पाने में समर्थ बनाते हैं।[85] यह कुपोषण तथा अन्य स्वास्थ्य समस्याओं के जोखिम में रह रहे व्यक्ति को तो प्रभावित करता ही है, बल्कि पारिवारिक इकाई को भी प्रभावित करता है क्योंकि अब उसके उपलब्ध संसाधनों को बुनियादी पारिवारिक जरूरतों पर खर्च करने की संभावना बढ़ जाती है। खतरनाक कार्य स्थितियों, शारीरिक तथा यौन शोषण, कम मजदूरी तथा श्रम अधिकारों की मांग कर पाने की असमर्थता के चलते सीएसडब्ल्यूज एचआईवी संक्रमण के प्रति अधिक असुरक्षित होते हैं। कई अध्ययनों ने यह सिद्ध किया है कि लोग तब देह–व्यापार की ओर बढ़ते हैं जब अपने तथा परिवार के खाने–पीने, कपड़े, घर जैसी बुनियादी जरूरतों को पूरा करने के लिए कोई सही विकल्प मौजूद नहीं होता है। भारत में व्यावसायिक यौनकर्मियों (अब से सीएसडब्ल्यू) के स्वास्थ्य को लिपिबद्ध करने वाले एक अध्ययन के अनुसार कलकत्ता के चकला घरों में काम कर रही महिलाओं में से 50 प्रतिशत बच्चों को पाल रही थीं।[86] बढ़े हुए रोजगार के विकल्प खासतौर पर उन महिलाओं की संख्या कम करने में सहायक होंगे जो आय के एक विकल्प के बतौर व्यावसायिक सेक्स पर निर्भर करती हैं। अप्रत्यक्ष रूप से, महिला के आर्थिक तथा सामाजिक स्तर में उन्नति से परिवार के निर्भर तथा अन्य सदस्यों का सामान्य पोषण स्तर भी सुधर सकता है।

एचआईवी/एड्स के प्रति की जाने वाली प्रतिक्रियाओं को एड्स संबंधित दंश की सामाजिक जटिलताओं को भी ध्यान में रखना चाहिए। अपने आगमन के समय से ही, एड्स प्रभावित व्यक्तियों अथवा "उच्च जोखिम" वाले समूहों के विरुद्ध लोगों की हेयदृष्टि इस महामारी का प्रमुख लक्षण रहा है।[87] परंपरागत रूप से महामारी के प्रति लक्षित अनुक्रियाओं ने व्यवहार परिवर्तन पर ध्यान केन्द्रित किया है।

जब एड्स निवारण के सरलतम सन्देश, जैसे– 'वृद्धजनो मधुमेह से बचिये' (बढ़ती उम्र वालो मधुमेह से बचो), 'एक ही साथी के प्रति वफादार रहिये', अथवा 'सुरक्षित सेक्स पर जोर दीजिए' – गरीबी, असमानता, नस्लभेद, लिंगभेद तथा अन्य ढांचागत कारकों की कोई सामाजिक आलोचना नहीं कर पाते, तब ये सरलतम नारे भी संक्रमित व्यक्ति को ही जिम्मेदार ठहराकर उसके प्रति समाज की हेय दृष्टि को बढ़ावा दे सकते हैं।[88]

---

84 साक्षात्कार देने वाली महिलाओं की आय 300 रुपये से 7500 रुपये तक थी तथा औसत आय रू. 3500 थी।

85 इंटरनेशनल लेबर ऑफिस. "सोशियो–इकॉनॉमिक इम्पैक्ट ऑव एचआईवी/एड्स आन पीपुल लिविंग विद एचआईवी/एड्स एंड देयर फेमिलीज." इन प्रिवेन्शन ऑव एचआईवी/एड्स इन द वर्ल्ड ऑव वर्क : ए. ट्रिपाटाइट रिस्पॉन्स, इंटरनेशनल लेबर ऑफिस इंडिया प्रोजेक्ट द्वारा संपादित. दिल्लीः इंटरनेशनल लेबर ऑफिस, 2003, प. 26–7.

86 भारत में, अक्सर परिवार की महिला सदस्यों को लिंगभेद के चलते खाना नहीं दिया जाता है, या कम मात्रा में दिया जाता है। अतः सहायता कार्यक्रमों को घर के क्षेत्र में होने वाले लिंग आधारित भेदभाव के प्रति संवेदनशील होना चाहिए।

87 चेन्ज, "वर्किंग विद वीमेन इन प्रास्टिट्यूशन : ए क्रिटिकल डायमेन्शन ऑव एचआईवी प्रिवेन्शन" अप्रैल 2003, पृ. 2 (इवान्स, सी और लाम्बर्ट, एच (1997) को उदधृत करते हुए हेल्थ सीकिंग स्ट्रेटजीस एंड सेक्सुअल हेल्थ अमंग फीमेल सेक्स वर्कर्स इन अर्बन इंडियाः इम्प्लिकेशन्स फॉर रिसर्च एंड सर्विस प्रोवजिन." सो सा मेड वॉ 44, नं. 12: 1791–1803

88 1980 के दशक में, मुख्यधारा की अमरीकी जनता बोलचाल की भाषा में कहे जाने वाले चार 'एच' द्वारा 'छूत की बीमारी' के फैलने से डरते थे, यथा– "समलैंगिक (होमोक्सुअल), हैतियन, हेरोइन के नशेबाज तथा हिमोफीलिया के शिकार" (फार्मर 1996) विभिन्न क्षेत्रों में से आनेवाली वर्तमान व्याख्याएं भी यौनकर्मियों, सुई द्वारा नशा करने वालों (IDUs) पलायन करके आने वालों तथा यौन अल्पसंख्यकों को "उच्च जोखिम वाले समूह" के रूप में चिन्हित करती हैं। साथ ही साथ, यह लोकप्रिय रूप से एक "अफ्रीकी" बीमारी के रूप में पहचानी जाती है। (जारोस, लूसीत्र "कन्सट्रक्टिंग द डार्क कान्टीनेंट : मेटाफर एज जियोग्राफिक रिप्रिजेन्टेशन ऑव अफ्रीका." जियोग्राफिस्का अन्नालेर 74, नं. 2 (1992): 105–115

इस कलंक के चलते महामारी के पीछे के ढांचागत कारक छिप जाते हैं तथा सामाजिक, पारिवारिक अथवा व्यावसायिक अलगाव के डर के कारण किसी संक्रमित व्यक्ति द्वारा अपनी पहचान उजागर करने की प्रेरणा कम हो जाती है। अंतर्राष्ट्रीय श्रम संगठन द्वारा भारत के चार राज्यों में एचआईवी/एड्स के सामाजिक–आर्थिक प्रभावों पर किये गए अध्ययन के अनुसार, अपनी एड्स संबंधी वास्तविकता प्रकट न किये जाने के पीछे का बुनियादी कारण सामाजिक दंश अथवा भेदभाव का भय था।[89] अप्रकटीकरण को गंभीरतापूर्वक लिया जाना चाहिये क्योंकि यह संक्रमण के खतरे को बढ़ाता है तथा जरूरत में पड़े समूहों को हाशिये पर और ज्यादा धकेल देता है। अतः एचआईवी/एड्स निरोध एवं देखभाल के साथ गैर–भेदभावपूर्ण खाद्य सुरक्षा उपायों को जोड़ना भारत में इस महामारी के कलंक को कम किये जाने में मददगार होगा।[90]

ऊपर दिए गए बिन्दु ऐसे कुछ विकास संबंधी तथा सामाजिक कारकों पर प्रकाश डालते हैं जो इस आपदा तथा गरीबी के प्रसार पर असर डालते हैं। ये विविध सामाजिक–आर्थिक, सांस्कृतिक तथा राजनैतिक कारक व्यवस्थित तथा आपस में जुड़े हुए हैं। "ये प्रभाव एक ही बार होने वाली घटनाएं नहीं हैं, ये प्रक्रियाएं हैं जो अक्सर छुपी हुई धीमें चलने वाली, पर अत्यन्त खतरनाक होती हैं। [ये] घटनाओं द्वारा, जैसे संपत्तियों की बिक्री द्वारा, नजर में आती हैं इनमें कुछ अपरिवर्तनीय होती हैं जिनके चलते परिवार, अगर वह उसे झेल पाये तो, पूरी तरह गरीब हो जाता है।"[91] अतः वे देश जहां यह आपदा अपने प्रारम्भिक या मध्यम चरण में है, विकास तथा गरीबी पर शायद ही कोई प्रभाव पड़ते देख पाते हैं और इसी कारण निरोधक उपायों को लागू करना विलंबित कर सकते हैं। भारत को इस आपदा के प्रभावों को रोकने, खाद्य असुरक्षा को और अधिक गहराने न देने तथा गरीबी एवं स्वास्थ्य पर एचआईवी द्वारा पड़ने वाले प्रभावों को कम करने के लिए लक्षित विकास के तरीकों को लागू करना चाहिए।

भारत में कुपोषण का विस्तार

पूरी दुनिया में 80 करोड़ से ज्यादा लोग भूख तथा कुपोषण के शिकार हैं तथा 11 अरब की साफ पीने के पानी तक भी पहुंच नहीं है।[92] भारत में कुपोषित लोगों की तादाद तथा इसकी प्रचलित दर विश्व में सबसे ज्यादा है।[93] प्रत्येक दो में से एक बच्चा कुपोषित है तथा हर तीन में से दो महिलाएं अनीमिया की शिकार हैं। प्रतिवर्ष लगभग 20 लाख बच्चे गंभीर कुपोषण तथा इलाज योग्य बीमारियों के चलते मर जाते हैं।[94] कुपोषक

89 इर्विन, अलेक्सजेन्डर, जॉयस मिलेन एंड गेरोथी फैलोज, 2003– ग्लोबल एड्सः मिथ्स एंड फैक्ट्स. कैम्ब्रिज, एमएः साउथ एंड प्रेस, पृ. 37

90 आईएलओ द्वारा रिपोर्ट किए गए शोषण तथा भेदभाव में शामिल थे, परिवार द्वारा त्याग दिया जाना, स्वास्थ्य कर्मचारियों द्वारा इलाज करने से मना करना, अन्य अस्पतालों को 'रिफर' कर देना, रोजगार देने वालों द्वारा डराया जाना तथा एचआईवी संबंधी सत्य को उद्घाटित करने की धमकी देना, मौखिक तथा शारीरिक शोषण, एचआईवी प्रभावित परिवारों के बच्चों के साथ भेदभाव, अनैतिक व्यवहार के आरोप तथा विभिन्न सामाजिक स्थानो से सामान्य बहिष्कार। देखें इंटरनेशनल लेबर ऑफिस। "सोशियो इकॉनॉमिक इम्पैक्ट ऑव एचआईवी एड्स ऑन पीपल लिविंग विद एचआईवी/एड्स एंड देयर फैमिलीज." प्रिवेन्शन ऑव एचआईवी/एड्स इन द वर्ल्ड ऑव वर्कः ए ट्रिपार्टाइट रिस्पांस से, इन्टरनेशनल लेबर ऑफिस इंडिया प्रोजेक्ट द्वारा संपादित. दिल्लीः इंटरनेशनल लेबर ऑफिस, 2003, पृ. 21–23

91 उदाहरण के लिए, श्रम पलायन एड्स के फैलाने के पीछे के एक महत्वपूर्ण कारक के रूप में व्यापक तौर पर स्वीकार किया गया है। बहरहाल, यौनकर्मियों के साथ जुड़ा यह सामाजिक कलंक कि वे पलायन की स्थिति में संक्रमण को फैलाने वाला मुख्य स्रोत है, भ्रामक है; इस समूह में हालांकि संक्रमण की दर अधिक है। यौनकर्मियों पर अत्यधिक ध्यान देने से न सिर्फ सामाजिक कलंक मजबूत होता है बल्कि यह उन महिलाओं में बढ़ती संक्रमण की दर को नजर अंदाज करा देता है जो "उच्च जोखिम" के अंतर्गत नहीं आतीं। अफ्रीका तथा दक्षिण एशिया के कई हिस्सों में, शादीशुदा महिलाओं तथा किशोरवय लड़कियों के बीच नए संक्रमण तेजी से बढ़ रहे हैं। यौन उद्योग में एचआईवी के जोखिम को कम करने के लिए नीतियों को पहले सामाजिक–आर्थिक कारकों की भरपाई करनी होगी जो यौनकर्मियों को और ज्यादा असुरक्षित बनाते हैं। देखें लिम, लिन लीन. 1998. द सेक्स सेक्टर. द इकॉनॉमिक एंड सोशल बेसिज ऑव प्रॉस्टीट्यूशन इन साउथर्न एशिया. जेनेवाः इंटरनेशनल लेबर ऑर्गेनाइजेशन, पृ. 19, सेन्टर फॉर हेल्थ एंड जेंडर इक्विटी. 2004. डीबंकिंग द मिथ्स इन द यूएस ग्लोबल एड्स स्ट्रैटजीः एन एविडेंस–बेस्ड अनालिसिस. टाकोमा पार्क, एमडीः सेन्टर फॉर हेल्थ एंड जेंडर इक्विटी, पृ. 3

92 कदियल, एस., तथा गिलेस्पी, एस. 2004. रीथिंकिंग फूड एंड टू फाइट एड्स. फूड एंड न्यूट्रीशन बुलेटिन 25(3): 271–282, पृ. 6

93 यूएनडीपी वार्षिक रिपोर्ट 2006, पृ. 8

94 यूनिसेफ. 2006

तत्वों की कमियां स्थानीय होती हैं जो शारीरिक तथा मानसिक विकास को गंभीर नुकसान पहुंचाती है। महिलाओं, किशोरवय लड़कियों तथा अनाथों का 80 प्रतिशत से अधिक अनीमिया ग्रस्त है। भारतीय चिकित्सा शोध परिषद् (आईसीएमआर) के अध्ययन इशारा करते हैं कि 10वीं पंचवर्षीय योजना 2002–2007 में रेखांकित राष्ट्रीय पोषण लक्ष्यों को अभी पूरा किया जाना बाकी है।[95] भूख, शहरी तथा ग्रामीण, दोनों जनसंख्याओं को प्रभावित करती है परन्तु असंगठित क्षेत्र के सदस्यों के बीच यह अधिक केन्द्रित होती है, जैसे भूमिहीन मजदूर तथा कारीगर, सामाजिक रूप से शोषित तबके जैसे दलित[96] एवं आदिवासी, अकेली महिला द्वारा चलाये जाने वाले परिवार, असहाय व्यक्ति, विकलांग व्यक्ति तथा ऐसे बूढ़े जिनकी देखभाल करने वाला कोई न हो, पलायन करके गये मजदूर तथा शहरी फुटपाथों पर रहने वाले बच्चे।[97] इसके अलावा ये जनसंख्या एचआईवी संक्रमण के प्रति सबसे ज्यादा असुरक्षित भी होती है।

सर्वव्यापी भूख तथा बहुधा आने वाले अकाल, जो पहले से गरीब हुए इलाकों में संकट को और अधिक गहरा देते हैं, बार–बार होते रहते हैं, इस तथ्य के बावजूद कि खाद्यान्न उत्पादन जनसंख्या वृद्धि दर से ऊपर रहता है।[98] भारत में अपनी भंडारण क्षमता से कहीं अधिक खाद्यान्न है तथा वह सस्ती दरों में उसका निर्यात भी करता है, जबकि लाखों लोग कुपोषण के शिकार हैं। खाद्यान्न तक पहुंच असमान सामाजिक–आर्थिक परिस्थितियों द्वारा प्रभावित होती है। एक तरफ स्थानीय स्तर पर वे परिवार भी, जिनकी खाद्यान्न तक पहुंच है, घर में भोजन के उपयोग या वितरण के तरीके के चलते खाद्य असुरक्षित हो सकते हैं; वहीं दूसरी तरफ राष्ट्रीय स्तर पर अधिकतम जनसंख्या कुपोषित है तथा असमान विकास एवं असमान कृषि नीतियों के चलते अस्थायी आजीविका विकल्पों से जूझती है।[99] खाद्य असुरक्षा की व्यापकता के बावजूद, भूख, जनता की दृष्टि से अदृश्य रहती है तथा भूख से होने वाली कई मौतें गुमनामी के अंधेरों में ही रह जाती हैं।

भारत विश्व के हालांकि विकासशील राष्ट्रों में सबसे अधिक जनसंख्या वाला देश है, उसके पास भूख से संबंधित मौतों तथा बीमारियों को कम करने की पर्याप्त क्षमता है। इसी परिप्रेक्ष्य में भोजन का अधिकार कैम्पेन (राइट टु फूड) ने यह मांग करते हुए कानूनी कार्यवाही की कि भोजन तथा अन्य महत्वपूर्ण सामाजिक–आर्थिक अधिकारों को एक बुनियादी मानव अधिकार के रूप में वैधानिक तौर पर स्थापित किया जाना चाहिए।[100] इस संदर्भ में दो सबसे महत्वपूर्ण केस हैं– भारतीय वैधानिक सहायता तथा परामर्श परिषद् एवं अन्य द्वारा 1996 में सर्वोच्च न्यायालय में फाइल की गई रिट पिटिशन (दीवानी) संख्या 42/97 तथा पीयूसीएल राजस्थान द्वारा 2001 में सर्वोच्च न्यायालय में फाइल की गई रिट पिटिशन (दीवानी) नं. 196।[101] इसका वैधानिक औचित्य भारतीय संविधान के अनुच्छेद–21 पर आधारित था जो मानवीय गरिमा के साथ "जीवन का बुनियादी अधिकार"

---

95 शर्मा, ए. 2000, "रियलाइजेशन ऑव राइट्स ऑव इण्डियन चाइल्ड: मैजर्स फॉर इम्प्लीमेंटशन ऑव द सीआरसी," प्रयास जर्नल, वोल्यूम II, नं. I

96 जीगलर, जीन. 2005

97 "अनुसूचित जातियां तथा जनजातियां भूख तथा कुपोषण की सबसे ज्यादा शिकार हैं, तथा ग्रामीण जनसंख्या का 25 प्रतिशत होने के बावजूद गरीबों का 42 प्रतिशत हैं। भेदभाव के परिणामस्वरूप कई नीची जाति के दलित से बेगार करने की उम्मीद की जाती है तथा कइयों को उनके ऊंची जाति वाले रोजगार दाताओं द्वारा कर्ज के कारण बन्धक बना लिए जाते हैं। हालांकि कर्जदारों को बंधक बनाना अवैध है, गैर सरकारी संगठन अंदाजा लगाते हैं कि लगभग 2 करोड़ से 6 करोड़ बन्धुआ मजदूर भारत में हैं। "फैरिंगटन, जे एंड सक्सेना, एनसी, फूड इनसिक्योरिटी इन इंडिया, (http://www.odi.org.uk/publication/working_papers/wp291/wp231_annex1_india.pdf.)

98 "सिक्स्थ रिपोर्ट ऑव कमिश्नर्स" रिट पिटिशन (सिविल) 196 ऑव 2001 (पीयूसीएल बनाम भारत का संघ तथा अन्य). अक्टूबर, 2005, नई दिल्ली

99 जीगलर, जीन. 2005. (फैरिंगटन जे., एंड सक्सेना, एन. सी. को उद्धृत करते हुए, फूड इनसिक्योरिटी इन इंडिया, ओवरसीज डेवलपमेंट इंस्टीट्यूट, (http:www/odi.org.uk)publications/working_paper/wp231/wp231_annex1_india.pdf)

100 भारत में अंतर्राष्ट्रीय व्यापार, कृषि नीतियों तथा खाद्य असुरक्षा पर अधिक जानकारी के लिए देविन्दर शर्मा, उत्सा पटनायक तथा पी. साईनाथ द्वारा किए गए शोधकार्य को देखें।

101 भोजन का अधिकार कैम्पेन देश भर के सामाजिक कार्यकर्ताओं, अर्थशास्त्रियों, शोधकर्ताओं तथा वकीलों का एक अनौपचारिक गठजोड़ है। भारत में भोजन का अधिकार कैम्पेन से संबंधित अधिक जानकारी के लिए कृपया देखें : www.righttofoodindia.org

सुनिश्चित करता है।[102] प्रारम्भिक स्तर पर यह मामला भारत सरकार, भारतीय खाद्य निगम (एफसीआई) तथा छह राज्य सरकारों के सामने अपर्याप्त सूखा राहत के संदर्भ में लाया गया। समय के साथ–साथ यह मामला भूख तथा पोषण की कमी के व्यापक मुद्दों तक फैल गया एवं सभी राज्य सरकारों को "जवाबदेहों" की सूची में शामिल कर लिया गया। अतः इस विधि द्वारा प्रदत्त अधिकार को प्रभावित रूप से लागू करने के लिए कई योजनाओं को सुनिश्चित करने की जिम्मेदारी राज्यों की है।[103] 2001 के बाद से ही, यह जनहित याचिका कई सामाजिक–आर्थिक अधिकारों की एक पूरी श्रृंखला को मान्यता दे रहा है जिसमें भोजन का अधिकार, घर तथा काम का अधिकार शामिल हैं।[104] बहरहाल विभिन्न खाद्य सहायता तथा आजीविका सहयोग कार्यक्रमों का वास्तविक कार्यान्वयन कई चीजों को अभिलाषित किये जाने के लिये छोड़ देता है।[105]

एचआईवी/एड्स प्रभावित परिवारों तथा एचआईवी संक्रमित लोगों की जरूरतों पर लौटते हुए, खाद्य असुरक्षा को हल करने वाली सरकार की रूपरेखा को एक "एचआईवी दृष्टि" अपनानी चाहिए। इस पत्र में दिए गए तर्कों के आधार पर एचआईवी तथा एड्स जैसी आपदाएं सार्वजनिक स्वास्थ्य तथा राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा के लिए खतरे के रूप में चिन्हित की जानी चाहिए। एचआईवी प्रभावित व्यक्तियों के जीवन की गुणवत्ता तथा देखभाल में सुधार के लिए, पोषण समर्थन हस्तेक्षेपों की संभावनाओं को खोजना तथा अपनाया जाना चाहिए। परिवार तथा समुदाय स्तरीय दृष्टिकोण से भी एचआईवी प्रभावित असहाय परिवारों को सार्वजनिक वितरण प्रणाली (पीडीएस) के तहत मुफ्त खाद्यान्न तथा खाद्य सुरक्षा उपलब्ध करानी चाहिए। खाद्य सहायता तथा अल्पकालीन सहयोग के अलावा, एचआईवी प्रभावित समुदायों की विशिष्ट आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए आजीविका कार्यक्रम भी विकसित किए जाने की आवश्यकता है, जिससे गरीब हुए समुदायों पर पड़ने वाले एचआईवी के दीर्घकालीन प्रभाव को कम किया जा सके।

उपसंहार

यूएनएड्स के कार्यकारी निदेशक, पीटर पिओट ने सही कहा है कि एचआईवी किसी "वैक्यूम" में नहीं होता है। पोषण सहयोग तथा खाद्य सुरक्षा एचआईवी तथा एड्स सहित आधे से अधिक सहस्त्राब्दी विकास लक्ष्यों के साथ जुड़े हुए हैं। जैसे–जैसे देश वैश्विक बाजार में आर्थिक रूप से बढ़ रहा है, असमानता भी बढ़ती जा रही है। एक मानव अधिकार दृष्टिकोण से, भोजन तक पहुंच को प्रत्येक व्यक्ति के बुनियादी जीवन के एक अधिकार के रूप में मान्यता दी जानी चाहिए। उन लागों के लिए जो बीमार हैं, तथा विशेष तौर पर उन लोगों के लिए जिनकी प्रतिरोध क्षमता संक्रमण के कारण कम हो जाती है, पोषण आधारित कार्यक्रम घरेलू स्थिरता तथा वैयक्तिक स्वास्थ्य के विनाश को रोकने के लिए आवश्यक है। एचआईवी/एड्स के किसी इलाज के अभाव में संक्रमण के प्रसार तथा प्रभावों को रोकने के लिए किए जाने जाने वाले प्रयासों को जीवनकाल को बढ़ाने तथा एचआईवी संक्रमित लोगों के स्वास्थ्य को सुधारने; एचआईवी प्रभावित परिवारों पर इसके प्रभावों को कम करने, अधिक जोखिम वाली गतिविधियों जैसे पलायन के प्रेरकों को कम करने; तथा इलाज की उपलब्धता बढ़ाने के लक्ष्यों पर ध्यान केन्द्रित करना चाहिए। ये अनुशंसाएं विशेष तौर पर एक विकासशील

102 मन्दर, हर्ष. 2005, पृ. 7

103 ड्रेज, ज्यां. "सुप्रीम कोर्ट ऑर्डर्स – ए टूल फॉर एक्शन. "अक्टूबर 2005, पृ. 5

104 सर्वोच्च न्यायालय ने राज्य सरकारों की जिम्मेदारी में आने वाली आठ 'योजनाओं' के लागू किए जाने की मानिटरिंग के लिए एक स्वतंत्र आयोग की स्थापना की। ये योजनाएं रोजगार आश्वासनकारी योजनाएं हैं जो कि सम्पूर्ण ग्रामीण रोजगार योजना, दोपहर भोजन योजना, संयुक्त बाल विकास योजना, 65 वर्ष से ऊपर के असहाय वृद्धों के लिए राष्ट्रीय वृद्धावस्था पेंशन योजना, अन्नपूर्णा योजना, अन्त्योदय योजना, राष्ट्रीय परिवार लाभ योजना तथा गरीबी रेखा से ऊपर के परिवारों के लिए राष्ट्रीय वितरण योजना द्वारा प्रतिस्थापित हो जानी चाहिए।

105 मन्दर, हर्ष. फूड सिक्योरिटी अप्रोचेज इन इंडियाः कन्टेक्स्ट, अनालिसिस एंड प्रोग्राम ऑप्शन्स फॉर डीसीए, इंडिया. ह्यूमन राइट लॉ नेटवर्क, 2005, पृ. 6

संदर्भ में प्रासंगिक हैं जहां स्वास्थ्य सुविधाओं, पोषण, एंटीरेट्रो वायरल थेरेपी तथा जीवन की अन्य आवश्यक जरूरतों तक एचआईवी संक्रमित लोगों एवं गरीबों की पहुंच अक्सर बहुत दोयम दर्जे की होती है।

अधिक जानकारी के लिए इन दस्तावेजों को भी पढ़ें

1. अबूसालेह, शरीफ. "न्यूट्रीशनल फूड सिक्योरिटी इन इन्डिया." भट्ट, एमएस (संपादित) पॉवरिटी एंड फूड सिक्योरिटी इन इन्डियाः प्रॉब्लमृस एंड पॉलिसीज. आकार बुक्स, नई दिल्ली, 2004
2. एईडी (अकादमी फॉर एजुकेशन डेवेलपमेंट) 2003. "मल्टीसेक्टोरल रिस्पान्सेज टु एचआईवी/एड्सः ए कम्पैन्डियम ऑव प्रॉमिसिंग प्रैक्टिसिज फ्रॉम अफ्रीका". वाशिंगटन डीसी
3. एन्सवर्थ, एम., तथा डब्ल्यू. टियोकुल. 2000. "ब्रेकिंग द साइलेंसः सैटिंग रियलिस्टिक प्रायारिटीज फॉर एड्स कन्ट्रोल इन लेस डेवेलप्ड कन्ट्रीज. लान्सेट 356: 55–60
4. बार्ने, टी., तथा ए. व्हाइटसाइड. 1999. "एचआइवी/एड्स तथा विकासः केस स्टडीज एंड कन्सेप्चुअल फ्रेमवर्क." यूरोपियन जर्नल ऑव डेवलपमेंट रिसर्च 11(2): 200–234
5. बार्ने, टोनी. "एचआईवी/एड्स एंड वल्नरेबिलिटीः सन्डरिंग द बॉण्ड्स ऑव ह्यूमन सोसाइटी" आईडीएस/यूएनएड्स एचआईवी/एड्स वल्नरेबिलिटी वर्कशॉप.
6. भट्ट, एमएस (संपादित) "इन्ट्रोडक्शन टु पॉवर्टी एंड फूड सिक्योरिटी इन इंडियाः प्राबलम्स एंड पालिसीज. नई दिल्ली, आकार बुक्स, 2004
7. बोनार्ड, पैट्रिशिया. "एचआईवी/एड्स मिटिगेशनः यूजिंग व्हाट वी ऑलरेडी नो." फूड एंड न्यूट्रीशियन टेक्नीकल असिस्टैंस प्रोजेक्ट, अकादमी फॉर एजुकेशनल डेवेलपमेंट, वाशिंगटन, डीसी 2002.
8. बूयसेन, एफ. ली आर., तथा एम. बाचमान. 2002. "एचआईवी/एड्स, पॉवर्टी एंड ग्रोथः एविडेसं फ्रॉम ए हाउसहोल्ड इम्पैक्ट स्टडी कन्डक्टेड इन दी फ्री स्टेट प्रोविन्स, दक्षिण अफ्रीका, अफ्रीकी अर्थव्यवस्थाओं के अध्ययन पर आयोजित वार्षिक सम्मेलन में पत्र प्रस्तुत किया गया, ऑक्सफोर्ड, मार्च 18–19
9. कैसिलमैन, टी., ई. सियुमो–फॉस्सो, तथा बी. कॉगिल. 2003. "फूड एंड न्यूट्रिशन इमप्लिकेशन्स ऑव एंटीरेट्रो वायरल थेरेपी इन रिसोर्स लिमिटेड सेटिंग्स." टेक्नीकल नोट्स 7. वाशिंगटन, डीसी : फैन्टा
10. सेन्टर फॉर हेल्थ एंड जेण्डर इक्विटी. 2004. "डीबंकिंग द मिथ्स इन द यूएस ग्लोबल एड्स स्ट्रैटजीः एन एविडेंस–बेस्ड एनालिसिस." टाकोना पार्क, एमडीः सेन्टर फॉर हेल्थ एंड जेंडर इक्विटी
11. कॉर्निया, गियोवानी अन्द्रेया तथा फैबियो जागोनारी. "द एचआईवी/एड्स इम्पैक्ट ऑन द रूरल एंड अर्बन इकॉनॉमी" एड्स, पब्लिक पालिसी एंड चाइल्ड वैल बींग. यूनिसेफ से
12. डी वाल, ए., तथा ए. व्हाइटसाइड. 2003. "न्यू वैरियेंट फेमाइनः एड्स एंड फूड क्राइसिस इन सर्दन अफ्रीका." लान्सेल 362 (9391): 1234–1237
13. डैवेरेक्स, स्टीफन तथा रैचेल सबातेस–व्हीलर. "एड्स, वल्नरेबिलिटी एंड सोशल प्रोटेक्शन." इंस्टीट्यूट ऑव डेवेलपमेंट स्टडीज, एड्स एंड वल्नरेबिलिटी वर्कशॉप, ब्राइटन, 23–24 जून 2005
14. एफएओ 2001. "द इम्पैक्ट ऑव एचआईवी/एड्स आन फूड सिक्योरिटी" कमेटी ऑन वर्ल्ड फूड सिक्योरिटी, 27 वां सेशन, रोम, 28 मई–1 जून।
15. एफएओ 2003. "फूड सिक्योरिटी एंड एचआईवी/एड्सः एन अपडेट." कमेटी ऑन वर्ल्ड फूड सिक्योरिटी, 29 वां सेशन, रोम 12–16 मई।
16. फैन्टा. "एचआईवी/एड्सः ए गाइड फॉर न्यूट्रीशनल केयर एंड सपोर्ट." दूसरा एडीशन फूड न्यूट्रीशन टेक्नीकल असिस्टेंस (फैंटा) प्रोजेक्ट द्वारा संपादित. वाशिंगटन, डीसी : अकादमी फॉर एजूकेशनल डेवलपमेंट, 2004.
17. फार्मर, पॉल, मार्गरिट कॉनर्स तथा जेनी सिम्मंस, संपादित 1996. "वीमेन, पोवर्टी, एंड एड्सः सेक्स, ड्रग्स, एंड स्ट्रक्चरल वायलेंस." मुनरो, एमई : कॉमन करेज प्रेस.
18. फरिंगटन, जे. एंड सक्सेना, एनसी, "फूड इनसिक्योरिटी इन इंडिया, ओवरसीज डेवलपमेंट इंस्टीट्यूट." http://www.odi.org.uk/ पर उपलब्ध

19. फॉजी, वाफी डब्ल्यू., एट. अल. "ए रैन्डोमाइज्ड ट्रायल ऑव मल्टीविटामिन सप्लीमेंट्स एंड एचआईवी डिसीज प्रोग्रेशन एंड मॉर्टेलिटी." द न्यू इंग्लैण्ड जर्नल ऑव मेडीसिन, 351.1. जुलाई 1, 2004: 23–32
20. गिलेस्पी, एसएल हद्दाद, तथा जेनी आर. जैक्सन. 2001. "एचआईवी/एड्स, फूड एंड न्यूट्रीशन सिक्योरिटी: इम्पैक्ट्स एंड ऐक्शन्स." न्यूट्रीशन एंड एचआईवी/एड्स न्यूट्रीशन पॉलिसी डिस्कशन पेपर 20, जिनेवा: यूनाईटेड नेशन्स एससीएन से. (http://www.unsystem.org/SCN/Publications/Npp/npp20.PDF)
21. गिलेस्पी, सुटअर्ट और सुनीता कदियल. "एचआईवी/एड्स एंड फूड एंड न्यूट्रीशन सिक्योरिटी." फूड पॉलिसी रिव्यू 7: इंटरनेशनल फूड पॉलिसी रिसर्च इंस्टीट्यूट, वाशिंगटन डीसी 2005
22. गोन्सालिव्स, कॉलिन. "द स्पेक्टर ऑव स्टार्विंग इंडिया." कॉम्बैट लॉ. अगस्त–सितम्बर 2002. वाल्यूम 1, इश्यू 3
23. गॉरबैक, एसएल, टैमसिन, एके, तथा रूबेनॉफ आर. "इन्टरेक्शन बिटवीन न्यूट्रीशन एंड इन्फैक्शन विद ह्यूमन इम्यूनोडेफिसिएन्सी वायरस." न्यूट्रीशन रिव्यू 1993; पृ. 51
24. हार्वे, पी. 2004. "एचआईवी/एड्स एंड ह्यूमेनिटेरियन ऐक्शन" ह्यूमेनिटेरियन पॉलिसी ग्रुप रिपोर्ट 16, लंदन: ओवरसीज डेवेलपमेंट इंस्टीट्यूट.
25. हैल्प एज इन्टरनेशनल. "ओल्डर पीपल एंड एचआईवी/एड्स: फैक्ट्स एंड फिगर्स" (http://www.helpage.org /Researchandpolicy/HIV/AIDS/Factsandfigures,Accessed 29 August 2006.)
26. इन्टरनेशनल लेबर ऑफिस. "सोशियो–इकॉनॉमिक इम्पैक्ट ऑव एचआईवी/एड्स ऑन पीपल लिविंग विद एचआईवी/एड्स एंड देयर फैमिलीज." प्रिवेंशन ऑव एचआईवी/एड्स इन द वर्ल्ड ऑव वर्क: अ ट्रिपार्टाइट रिस्पॉन्स में, इंटरनेशनल लेबर ऑफिस द्वारा संपादित, 2003, पृ. 21–23.
27. इन्टरनेशनल ट्रीटमेंट प्रीपेयर्डनेस कोअलिशन. "मिसिंग द टार्गेट: ए रिपोर्ट ऑन एचआईवी/एड्स ट्रीटमेंट ऐक्सेस फ्राम द फ्रन्टलाइन्स." 28 नवम्बर 2005
28. इर्विन, अलेक्सेंडर, जॉयस मिलन तथा डोरोथी फैलोज. 2003. "ग्लोबल एड्स: मिथ्स एंड फैक्ट्स" कैम्ब्रिज, एम ए: साउथ एंड प्रेस.
29. जारोस, लूसी. "कन्सट्रक्टिंग द डार्क कॉन्टीनेंट: मेटाफर एज जियोग्राफिक रिप्रजेन्टेशन ऑव अफ्रीका." जियोग्राफिस्का अन्नालेर 74, न. 2 (1992): 105–115.
30. ज्यॉं द्रेज "डेमोक्रेसी एंड द राइट टु फूड" इकॉनॉमिक एंड पॉलिटिकल वीकली, अप्रैल 24, 2004 से, www.epw.org.in पर उपलब्ध.
31. झबवाला, रेनाना, रत्ना एम सुदर्शन एंड जीमोल उन्नी (संपादित) "इनफार्मल इकॉनामी सेन्टर स्टेज: न्यू स्ट्रक्चर्स ऑव एम्प्लॉयमेंट," सेज पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली, 2003
32. कदियल, एस., तथा टी. बार्ने. 2004. "एड्स इन इंडिया: डिसास्टर इन द मेकिंग" इकॉनॉमिक एंड पॉलिटिकल वीकली 39 (19): 1888–1892
33. कदियल, एस., तथा गिलेस्पी, एस. 2003. "रीथिंकिंग फूड एड टु फाइट एड्स." इंटरनेशनल एड्स पॉलिसी रीसर्च इंस्टीट्यूट फूड कन्जम्पशन एंड न्यूट्रीशन डिवीजन डिस्कशन पेपर नं. 159
34. कदियल, एस., तथा गिलेस्पी, एस. 2004. "रीथिंकिंग फूड एड टु फाइट एड्स." फूड एंड न्यूट्रीशन बुलेटिन 25(3): 271–282
35. कैसर फाउण्डेशन, "एचआईवी/एड्स पॉलिसी फैक्टशीट: एचआईवी/एड्स इन इंडिया," 2005
36. करात, वृन्दा, "फाइटिंग फॉर अ बेसिक ह्यूमन राइट: अ लाइफ फ्री फॉर हंगर," (2002) http://www.righttofoodindia.org/data/brinda.pdf पर उपलब्ध
37. कुलुब्या, शीला तथा सिसय अदीवे. 2006. "हंगर टु वर्ज़न एपिडेमिक इन अफ्रीका." पैनोस्कोप. इश्यू 4, 17 अगस्त 2006
38. लिम, लिन, लीन. 1998. "द सेक्स सेक्टर: द इकॉनॉमिक एंड सोशल बेसिस ऑव प्रॉस्टिट्यूशन इन साउथ ईस्ट एशिया" जेनेवा : अंतर्राष्ट्रीय श्रम संगठन.
39. लेविन्सन, एम., तथा एसआर गिलेस्पी 2003. "एचआईवी/एड्स, फूड सिक्योरिटी एंड रूरल लाइवलीहुड्स: अण्डरस्टैंडिंग एंड रिस्पॉन्डिंग." फूड कन्जम्पशन एंड न्यूट्रीशन डिवीजन डिस्कशन पेपर 157. वाशिंगटन, डीसी: इंटरनेशनल फूड पॉलिसी रिसर्च इंस्टीट्यूट.

40. मन्दर, हर्ष. 2005. "फूड सिक्योरिटी अप्रोचेज इन इंडिया": कॉनटेक्स्ट, अनालिसिस एंड प्रोग्राम ऑप्शन्स फॉर डी सी ए, इंडिया." ह्यूमन राइट्स लॉ नेटवर्क (आगामी).
41. मिनिस्ट्री ऑव लेबर. "रिपोर्ट ऑव द स्टडी ग्रुप ऑन माइग्रेन्ट लेबर." नई दिल्ली : नेशनल कमीशन ऑन रूरल लेबर, गवर्नमेंट ऑव इंडिया, 1991
42. नाको. 2004. "एन ओवरव्यू ऑव द स्प्रेड एंड प्रिवलेंस ऑव एचआईवी/एड्स इन इंडिया" http://www.nacoonline.org /facts_overview.htm (date accessed: 29 July 2006)
43. पल्लिकादावथ, एसएल गारदा, एच. आप्टे, जे. फ्रीडमान तथा आरडब्ल्यू स्टोन्स (2005). "एचआईवी/एड्स इन रूरल इंडिया: कन्टेक्स्ट एंड हेल्थकेयर नीड्स." जर्नल ऑव वायोसोशल साइंसेज, आगामी.
44. पार्कर, जेआई सिंह, तथा के. हट्टल. 2000. "द रोल ऑव माइक्रोफाइनेंस इन द फाइट अगेंस्ट एचआईवी/एड्स" यूएनएड्स बैकग्राउण्ड पेपर. बेथेस्दा, एमडी.: डेवलपमेंट अल्टरनेटिव्स.
45. पेशेन्ट, डेविड तथा नेल ओर. "एआरटी एंड न्यूट्रीशन इन एचआईवी एंड एड्स." द थर्ड वॉयस, मई, 2006.
46. पटनायक, उत्सा. "थियोराइजिंग फूड सिक्योरिटी एंड पॉवर्टी इन द एरा ऑव इकॉनॉमिक रिफॉर्म्स." "फ्रीडम फ्रॉम हंगर." श्रृंखला के अंतर्गत दिया गया पब्लिक भाषण, इंडिया इंटरनेशनल सेन्टर, नई दिल्ली, अप्रैल 12, 2005.
47. पटनायक, उत्सा. "द रिपब्लिक ऑव हंगर," ह्यूमन राइट्स लॉ नेटवर्क से, राइट टु फूड, सोशियो–लीगल इन्फार्मेशन सेंटर, नई दिल्ली, 2005
48. पेटन, एन, एस संगीता, ए अर्नेस्ट एंड आर बेल्लामी. "द इम्पैक्ट ऑव मालन्यूट्रीशन ऑन सरवाइवल एंड द सीडी–4 काउंट रिपोज इन एचआईवी इन्फेक्टेड पेशेन्ट्स स्टार्टिंग एन्टीरेट्रोवायरल थेरेपी." एचआईवी मेडीसिन (2006), 7, 323–330.
49. पिन्सट्रप–एंडरसन, पीटर पियोट एंड पर. "एड्स: द न्यू चैलेन्ज टु फूड सिक्योरिटी." इंटरनेशनल फूड पॉलिसी रिसर्च इंस्टीट्यूट की 2001–02 रिपोर्ट से. वाशिंगटन, डीसी : आईआरपीआरआई, 2001–2
50. पिवोज, ई. 2004. "न्यूट्रीशन एंड एचआईवी/एड्स: एविडेन्स, गैप्स एंड प्रॉयरिटी ऐक्शन्स." वाशिंगटन, डीसी: अकादमी फॉर एजुकेशनल डेवलपमेंट
51. पिवोज, ई. तथा ई. प्रेब्ले. 2000. "एचआईवी/एड्स एंड न्यूट्रीशन: ए रिव्यू ऑव लिटरेचर एंड रिकमेन्डेशन्स फॉर न्यूट्रीशन केयर एंड सपोर्ट इन सब–सहारन अफ्रीका," एसएआरए प्रोजेक्ट. वाशिंगटन, डीसी : यूएस एजेंसी फॉर इन्टरनेशनल डेवेलपमेंट
52. आरसीक्यूएचसी. 2003. "न्यूट्रीशन एंड एचआईवी/एड्स : अ ट्रेनिंग मैनुअल." रीजनल सेंटर फॉर क्वालिटी ऑव हेल्थकेयर द्वारा सम्पादित कम्पाला, यूगांडा
53. शर्मा, ए. 2000, "रियलाइजेशन ऑव राइट्स ऑव द इंडियन चाइल्ड : मैजर्स फॉर इम्पीमेन्टेशन ऑव द सीआरसी." प्रयास जर्नल, वॉल्यूम II, न. 1
54. शर्मा, देविन्दर. 2005 ए. "द इंडियन एक्सपीरियेंस ऑव लिबरलाइजेशन ऑव एग्रीकल्चर." नेशनल फार्मर्स फेडरेशन तथा ऑक्सफैम आस्ट्रेलिया द्वारा कैनबरा में आयोजित एग्रीकल्चरल ट्रेड एंड डेवलपमेंट कॉन्फ्रेंस में वार्ता, आस्ट्रेलिया, अगस्त 17, 2005.
55. शर्मा, देविन्दर. 2005 बी"डब्ल्यूटीओ, एग्रिकल्चर एंड हंगर: ट्रेडीशन फूड सिक्योरिटी." 27–28 अगस्त 2005, नयी दिल्ली में राइट टु फूड, पर ह्यूमन राइट्स लॉ नेटवर्क द्वारा आयोजित नेशनल जुडीशियल कोलोक्विम में की गई वार्ता, जो यूएन रेपोर्टियर ऑन राइट टु फूड के अधिकारिक दौरे के साथ–साथ हुई।
56. "सिक्सथ् रिपोर्ट ऑव द कमिश्नर्स" रिट पिटिशन (सिविल) 196 ऑव 2001 (पीयूसीएल बनाम यूनियन ऑव इंडिया एंड अदर्स) अक्टूबर 2005, नई दिल्ली
57. "सुप्रीम कोर्ट ऑर्डर्स – ए टूल फॉर एक्शन." प्रीपेयर्ड बाई ज्यां द्रेज, अक्टूबर 2005
58. यूएनएड्स, "यूथ एंड एचआईवी/एड्स : अपॉरच्यूनिटी इन क्राइसिस," 2002
59. यूएनएड्स. 2005. "यूएनएड्स फैक्टशीट: एशिया." मई 18 2002.
60. यूएनएड्स. टेकनीकल अपडेट, "सेक्स वर्क एंड एचआईवी/एड्स," जून 2002
61. यूएनडीपी 2003. ह्यूमन डेवलपमेंट रिपोर्ट 2003: "मिलेनियम डेवलपमेंट गोल्स: ए कॉम्पैक्ट अमंग नेशन्स टु एंड पॉवर्टी," ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, न्यूयार्क

62. यूएनडीपी 2006. एनुअले रिपोर्टः ग्लोबल पार्टनरशिप फॉर डेवलपमेंट यूनाईटेड नेशन्स डेवलपमेंट प्रोग्राम
63. यूएस नेशनल इन्टेलीजेंस कमिटी. "यूएनजीएएसएस इंडिया रिपोर्टः प्रोग्रेस रिपोर्ट ऑन द डिक्लेरेशन ऑव कमिटमेंट ऑन एचआईवी/एड्स एंड नेशनल एड्स कन्ट्रोल ऑर्गेनाइजेशन, नई दिल्ली
64. यूएस नेशनल इन्टेलीजेंस कमेटी. "द नेक्स्ट वेव ऑव एचआईवी/एड्स : नाइजीरिया, इथोपिया, रशिया, इंडिया एंड चाइना." 2002
65. वर्मा, रवि के., एस. सलिल, वेर्रा मेन्डोन्का, एसके सिंह, आर. प्रसाद तथा आरबी उपाध्याय. "एचआईवी/एड्स एंड चिल्ड्रन इन द सांगली डिस्ट्रिक्ट ऑव महाराष्ट्र (इंडिया)" इन कॉर्निया, जीए (संपादित) एड्स, पब्लिक पॉलिसी एंड चाइल्ड वेल–बींग, यूनिसेफ. 2000
66. वर्ल्ड बैंक. "रीपोजीशनिंग न्यूट्रीशन एज सैन्ट्रल टु डेवलपमेंटः ए स्ट्रेटजी फॉर लार्ज–स्केल एक्शन." डायरेक्शन्स इन डेवलपमेंट सीरीज, वाशिंगटन डीसी, 2006.
67. वर्ल्ड फूड प्रोग्राम. "प्रोग्रामिंग इन एन इरा ऑव एड्सः डब्ल्यूएफपीज रिस्पॉन्सेज टु एचआईवी/एड्स." पॉलिसी इश्यूज में से, वर्ल्ड फूड प्रोग्राम द्वारा संपादित, रोम 2003
68. वर्ल्ड हेल्थ ऑर्गेनाइज़ेशन. 2001. "न्यू डाटा ऑन द प्रिवेन्शन ऑव मदर टु चाइल्ड ट्रांसमिशन ऑव एचआईवी एंड देयर पॉलिसी इम्प्लिकेशन्सः कनक्लूजन्स एंड रेकोमेंडेशन." जेनेवा. www.unaids.org/publications/document/mtet.
69. डब्ल्यूएचओ. 2003 रिवीजन. "स्केलिंग अप एन्टीरेट्रोवायरल थेरेपी इन रिसोर्स लिमिटेड सेटिंग्स : ट्रीटमेंट गाइडलाइन्स फॉर ए पब्लिक हेल्थ अप्रोच." जेनेवा, दिसम्बर 2003.
70. डब्ल्यूएचओ. 2004. "एचआईवी ट्रांसमिशन थ्रू ब्रेस्टफीडिंगः अ रिव्यू ऑव अवेलेबल एविडेंस."
71. डब्ल्यूएचओ. 2005 ए. "कन्सलटेशन ऑन न्यूट्रीशन एंड एचआईवी एंड एड्स इन अफ्रीकाः एविडेंस, लेशन्स एंड रिकमेंडेशन्स फॉर एक्शन," 10–14 अप्रैल 2005.
72. डब्ल्यूएचओ. 2005 बी. टेक्नीकल एडवायजरी ग्रुप टु द डब्ल्यूएचओ. "न्यूट्रीशन एंड एचआईवी/एड्सः रिपोर्ट बाई द सेक्रेटेरिएट." 12 मई 2005.
73. डब्ल्यूएचओ. 2005 सी. "वर्ल्ड हेल्थ रिपोर्ट 2005: मेक एव्री मदर एंड चाइल्ड काउंट."
74. जीगलर, जीन. रिपोर्ट ऑव द स्पेशल रेपोर्टियर ऑन द राइट टु फूड. इकॉनॉमिक एंड सोशल काउन्सिल, यूएन कमीशन ऑन ह्यूमन राइट्स. मिशन टु इंडिया, 20 अगस्त–2 सितम्बर 2005.

13

शरणार्थी और एचआईवी/एड्स

एक शरणार्थी को बोलचाल की भाषा में ऐसे व्यक्ति के रूप में परिभाषित किया जाता है जो सामाजिक–आर्थिक और राजनैतिक असुरक्षाओं के चलते अपना देश छोड़कर चला जाता है। बहरहाल, अंतर्राष्ट्रीय नियमों में, 1951 के कन्वेंशन के अनुच्छेद–1 के पैराग्राफ–2 के अनुसार "शरणार्थी एक ऐसा आदमी है जो अपने नियमित आश्रय के देश से बाहर है क्योंकि वहां घटती हुई घटनाओं के चलते उसे भय है कि उसे नस्ल, धर्म, राष्ट्रीयता, किसी विशेष सामाजिक समुदाय की सदस्यता, या राजनीतिक विचार के कारणों से प्रताड़ित किया जा सकता है तथा इस भय की वजह से वापस जाने को अनिच्छुक अथवा ऐसी घटनाओं के चलते वापस लौटने में असमर्थ है।"[1]

पिछले दो दशकों में युद्धों तथा प्राकृतिक आपदाओं के कारण जटिल[2] आपातकालीन परिस्थितियों के विश्व भर में उत्पन्न होने की आवृत्ति बढ़ी है। गंभीर सशस्त्र संघर्ष विश्वभर के विभिन्न क्षेत्रों में होते रहते हैं। 2003 में, 72 से भी ज्यादा देश अस्थिर करार दिये गये हैं तथा बहुत से युद्धों के चलते 4.2 करोड़ से ज्यादा लोग शरणार्थी तथा आंतरिक रूप से विस्थापित हुए हैं।[3] ये सभी परिस्थितियां ही जो जटिल आपातकालीन स्थिति, सामाजिक असुरक्षा, गरीबी और शक्तिहीनता के हालत पैदा करती हैं, ये परिस्थितियां ही एचआईवी/एड्स तथा अन्य यौन संचरित रोगों के प्रसार के लिए अनुकूल साबित होती हैं।

शरणार्थी तथा आंतरिक रूप से विस्थापित लोग प्रायः एचआईवी संक्रमण के लिए सबसे ज्यादा असुरक्षित होते हैं। ऐसा इसलिए ही नहीं है कि विस्थापन से विघटनकारी स्थितियां उत्पन्न होती हैं, बल्कि इसलिए भी है कि इन परिस्थितियों में सामान्य सामाजिक मान्यताओं का पतन हो जाता है।[4] पलायन के लिए बाध्य लोग सामान्यतः सामाजिक तथा आर्थिक रूप से हाशिये पर खड़े लोग होते हैं जिनकी पहुंच स्वास्थ्य कार्यक्रमों के संसाधनों तक समान रूप से नहीं होती है और इनकी राजनीतिक आवाज होने की संभावनाएं कम ही होती हैं। एचआईवी/एड्स से जुड़ी पूर्वधारणाओं तथा विस्थापित लोगों द्वारा झेले गये सामाजिक दंश मिलकर एक अलग सामाजिक परिस्थिति का निर्माण करते हैं।

सशस्त्र संघर्षों से उत्पन्न जटिल आपातकालीन परिस्थितियों के कारण पलायन करने वाली आबादी सामान्यतः असहाय होती है तथा खाद्यान्नों की कमी की शिकार होती है। उनकी पहुंच स्वास्थ्य सेवाओं तक

---

1 यूएन हैन्डबुक; यूएन एचसीआर, सम बेसिक इन्टरनेशनल लीगल डॉक्यूमेंट्स ऑन ह्यूमन राइट्स एंड रिफ्यूजीस, (नई दिल्ली), एन.डी

2 शीतयुद्ध के बाद से, संघर्ष को खुली सशस्त्र संघर्ष झड़पों के रूप में परिभाषित किया जा सकता है जो दो या अधिक केंद्रीय रूप से संगठित पक्षों के बीच सरकार अथवा क्षेत्र के मुद्दे पर होने वाली झड़प के चलते लगातार होते रहते हैं। इन संघर्षों के चलते लोगों को आन्तरिक रूप से विस्थापत व्यक्तियों के रूप में देश के भीतर या शरणार्थियों के रूप में अंतर्राष्ट्रीय सीमाओं पर, शरण के लिए भागना पड़ता है।

3 यूएनएआईडीएस; 2004, रिपोर्ट ऑन ग्लोबल एड्स एपिडेमिक, एड्स एंड कन्फ्लिक्ट; 2004

4 आईएएससी, गाइडलाइन्स फॉर एचआईवी/एड्स इन्टरवेन्शन्स इन इमरजेन्सी सेटिंग्स

न होने के चलते उनकी स्थिति और बुरी हो जाती है जिसके कारण शरणार्थी शिविरों में व्यवस्था का अस्तित्व ही खत्म हो जाता है। उदाहरण के लिए, 1998–2001 में युद्ध के दौरान डेमोक्रेटिक रिपब्लिक ऑव कांगो में ज्यादतियों के चलते होने वाली 25 लाख मौतों में से 80 फीसदी मौतें कुपोषण, संचरित रोगों और उग्र संघर्षों के फलस्वरूप हुईं।[5]

इस तरह के संघर्षों से कई कारक भी जुड़े होते हैं जो प्रभावित आबादी को एचआईवी/एड्स के प्रति और भी ज्यादा असुरक्षित बनाते हैं। जटिल आपातकालीन परिस्थितियों में बलात्कार, जीवन की रक्षा की रणनीति के रूप में सेक्स का इस्तेमाल, शरणदाता–शरणार्थी संवाद, एसटीआईज की उच्च दर, मां से बच्चे को होने वाले संक्रमण, रक्त चढ़ाया जाना, ये सभी एचआईवी के संचरण में योगदान देते हैं। इससे प्रभावित होने वाले जनसंख्या वर्ग में – सैनिक, विद्रोही, मानवाधिकार कार्यकर्ता, विस्थापन से प्रभावित लोग अधिक होते हैं। बहरहाल, महिलायें तथा बच्चे अपनी स्वयं की रक्षा में सबसे कम समर्थ होते हैं और इसलिये सबसे ज्यादा असुरक्षित होते हैं।

लाखों लोग जो सशस्त्र संघर्षों में भाग रहे हैं बड़े शरणार्थी शिविरों में शरण पाते हैं। दुर्भाग्यवश, इनमें से बहुत से शरणार्थी, विशेषकर महिलायें तथा लड़कियां, गरीबी, असहायता, सामाजिक असुरक्षा और यौन शोषण को झेलते हैं (ल्यूबर्स, 2003)। शरणार्थी चूंकि सामाजिक, आर्थिक तथा सांस्कृतिक दृष्टिकोण से सबसे ज्यादा असुरक्षित हैं, इसलिए यह बहुत पहले से यह माना जाता है कि वे एचआईवी संक्रमण के खतरे को ज्यादा झेलते हैं।[6] 2001 और 2003 के बीच, शरणार्थियों के लिए बने कीनिया, रवांडा, सूडान, तंजानिया के 20 कैंपों में, जिसमें 800,000 शरणार्थी रह रहे थे, गर्भवती महिलाओं में एचआईवी की प्रचलन दर को संयुक्त राष्ट्र शरणार्थी संबंधी उच्च आयोग ने मापा।[7]

किसी व्यक्ति की वास्तविक स्थिति जाने बगैर केवल उसके एचआईवी प्रभावित होने की आशंका, उस पर ऐसा कलंक लगा देती है जो उस व्यक्ति, उसके परिवार, यहां तक कि समुदाय को भी नष्ट कर सकती है। प्रभावित आबादी को कई तरह के कष्ट झेलने पड़ सकते हैं जिसमें व्यवस्थापकों द्वारा एचआईवी जांच को अनिवार्य करके शरणार्थियों के आगमन को नियंत्रित करना, रिफाउलमेंट, समस्या के समाधान के प्रयासों में बाधा उत्पन्न करना तथा उनके और शरणदाता आबादी के मिलन, और अपने पूर्व देशों के साथ पुनः सम्मिलन के मार्ग में अवरोध उत्पन्न करना इत्यादि शामिल है।

जब महिलाएं अपने घरों को छोड़कर पलायन करती हैं, तो ऐसी स्थिति में उनका शारीरिक तथा मानसिक, दोनों प्रकार का स्वास्थ्य प्रभावित होता है। शरणार्थी भौतिक संसाधन, नियमित आमदनी, समयबद्ध चिकित्सीय देखभाल, पैतृक देखभाल तथा टीकाकरण जैसे रोकथाम के उपायों से महरूम हो जाते हैं।[8] ज्यादातर लोग अपने न्यूनतम भोजन, आवास और स्वास्थ्य संबंधी जरूरतों के लिए मानवार्थ अनुदानों पर आश्रित हो जाते हैं। साथ ही साथ, महिला शरणार्थियों को, उस सामाजिक तंत्र के विघटन के कारण, जिसमें परिवार, यौन आचरण को नियंत्रित करने वाले सामाजिक नियम और कानून प्रवर्तन व्यवस्थाओं के द्वारा उन्हें सहयोग और सुरक्षा प्राप्त होती थी, व्यवस्थापकों तथा शरणदाताओं के हाथों कई तरह की लैंगिक और यौन हिंसा का शिकार होना पड़ता है। अत्यधिक भीड़–भाड़, अस्वच्छ वातावरण, अलग–अलग तरह की जनसंख्याओं में मेल–जोल और जोखिम भरा यौन आचरण विस्थापित जनसंख्या में संक्रमण जन्य बीमारियों के संचरण,

5 यूएनएआईडीएस; 2004, रिपोर्ट ऑन द ग्लोबल एड्स एपिडेमिक; एड्स एंड कॉन्फ्लिक्ट 2004

6 वही

7 वही

8 गार्डनर, आर. और ब्लैकबर्न, आर. पीपुल हु मूव : न्यू रिप्रोडक्टिव हेल्थ फोकस पॉपुलेशन रिपोर्ट्स, सीरीज जे., नं. 45 (1996) www.jhuccp.org पर उपलब्ध

जिसमें एचआईवी/एड्स और अन्य तरह के यौन संचरित संक्रमण शामिल हैं, की संभावना को विस्थापित लोगों में बढ़ा देते हैं।[9]

शरणार्थी बच्चे विशिष्ट तरह की यौन तथा लैंगिक यातनाओं के शिकार होते हैं : नुकसानदेह परंपरागत आदतें, तस्करी, बाल वेश्यावृत्ति, परिवार में यौन हिंसा और अन्य तरह के यौन शोषण और उस तरह के लोगों द्वारा बच्चों का शोषण और हिंसा जिनकी उन तक अवांछित पहुंच हो। कुछ विशेष वर्ग के शरणार्थी बच्चों के इस तरह के यौन तथा लैंगिक हिंसा के खतरे का शिकार बनने की ज्यादा संभावना होती है। इस श्रेणी के बच्चों के अंतर्गत शामिल है: अकेले रहने वाले तथा बिछड़ गए बच्चे, हिरासत में लिये गये बच्चे, बाल सैनिक[10], किशोर, शारीरिक और मानसिक रूप से विकलांग बच्चे, कामकाजी बच्चे, बाल माताएं, बलात्कार की शिकार/उत्तरजीवी महिलाओं को जन्मे बच्चे, बाल अपराधी, पीड़ित या उत्तरजीवी लड़के आदि। शरणार्थी बच्चे अपनी आश्रित होने की सीमा, अपना बचाव कर पाने की सीमित तथा निर्णयकारी प्रक्रिया में अपनी सीमित भागीदारी तथा सीमित शक्ति के चलते, यौन और लैंगिक हिंसा का शिकार बनने के विशिष्ट खतरे के ज्यादा नजदीक होते हैं।

संयुक्त राष्ट्र की अंतर एजेंसी स्टैंडिंग कमेटी (आईएएससी)[11] द्वारा स्थापित एक कार्य दल ने आपातकालीन स्थितियों में एचआईवी/एड्स हस्तक्षेपों के लिए दिशानिर्देशों की एक पूरी शृंखला विकसित की है। यह महसूस करते हुए कि एक आपदा के लिए की गई कोई भी प्रतिक्रिया बहुक्षेत्रीय होनी होगी, आपातकालीन दिशानिर्देश विशिष्ट हस्तक्षेपों को क्षेत्र–दर–क्षेत्र[12] आधार पर वर्णित करते हैं। ये क्षेत्र हैं :

(1) समन्वय
(2) मूल्यांकन और मॉनिटरिंग (पर्यवेक्षण)
(3) सुरक्षा
(4) जलापूर्ति तथा साफ–सफाई
(5) खाद्य सुरक्षा तथा पोषण
(6) आवास तथा क्षेत्र नियोजन
(7) स्वास्थ्य
(8) शिक्षा
(9) व्यवहार संचार परिवर्तन; बीसीसी
(10) कार्यस्थल पर एचआईवी/एड्स

यूएनएचसीआर शरणार्थियों, आंतरिक रूप से विस्थापित लोगों (आईडीपीज) और एचआईवी/एड्स से प्रभावित अन्य लोगों की सुरक्षा से जुड़े हुए बहुत से मुद्दों को लेकर चिंतित है। यह लेख दस मुख्य सुरक्षा चिंताओं को संबोधित करता है जो एचआईवी और एड्स के संदर्भ में सामने आ सकते हैं और इन सभी के लिए यूएनएचसीआर की नीति को रेखांकित करता है। जैसे–जैसे एचआईवी/एड्स का असरदार इलाज अधिक सुलभ बनता जायेगा, इस नीति के पहलू और उभरते जाएंगे। ये दस मुद्दे और यूएनएचसीआर की

9 होम्स, डब्ल्यू, एचआईवी एंड ह्यूमन राइट्स, इन रिफ्यूजी सेटिंग्स, लॉन्सेट 358: 144–146 (2001), http:/pdf.thelancet.com पर उपलब्ध .
10 बाल सैनिक 18 साल से कम उम्र का कोई भी ऐसा व्यक्ति है जो किसी भी क्षमता में, किसी सशस्त्र सेना में शामिल हो तथा उन लोगों को छोड़कर जो पूर्णतः पारिवारिक सदस्यों की हैसियत से, या यौन आवश्यकताओं की पूर्ति और बलात विवाह के लिए भर्ती की लड़कियों को छोड़कर ऐसे किसी दल के साथ चलने वालों में शामिल हो।
11 इंटर–एजेंसी स्टैंडिंग कमेटी (आईएएससी) की स्थापना जून 1992 में जेनरल असेम्बली रेजोलुशन 46/182; जिसने मानवतावादी सहायता के समन्वय को सशक्त बनाने पर बल दिया; के फलस्वरूप हुई।
12 देखें आईएएससी; एड्स/एचआईवी के आपदाकालीन मामलों संबंधी दिशानिर्देश; 2000

नीति का सारांश निम्नलिखित है :[13]

1. **अपक्षपात :** एचआईवी और एड्स से पीड़ित लोगों को भेदभाव मुक्त और अकलंकित तथा सम्मानपूर्वक जीवन जीने का अधिकार है। शरणार्थी, आंतरिक विस्थापित लोग तथा यूएनएचसीआर से संबद्ध अन्य व्यक्ति, जो एचआईवी/एड्स से पीड़ित हैं, किसी प्रकार के भेदभाव का शिकार नहीं होने चाहिये। शरणार्थियों, आंतरिक विस्थापितों तथा अन्य संबंधित लोगों को तथा एचआईवी और एड्स की दर के बढ़ने को लेकर फैली भ्रांतियां भेदभावपूर्व गतिविधियों का रूप ले सकती है और इन्हें त्यागा जाना चाहिये।
2. **एचआईवी और एड्स संबंधी स्वास्थ्य देखभाल तक पहुँच :** शरणार्थियों, आंतरिक विस्थापितों और अन्य संबंधित व्यक्तियों, जिनके लिए यूएनएचसीआर चिंतित है, को, किसी भी अन्य व्यक्ति की तरह ही "शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्य के उच्चतम स्तर प्राप्त करने का अधिकार" प्रत्येक व्यक्ति का पाने का हक है। यह अधिकार ये सुनिश्चित करता है कि इन समूहों को, आस–पास के शरणदाता समुदायों को मिलनेवाली सेवा के समतुल्य ही, सेवाओं तक भेदभावरहित पहुंच हो। एचआईवी और एड्स की स्थिति में, उच्चतम संभव शारीरिक तथा मानसिक स्वास्थ्य स्तर प्राप्त करने के अधिकार को पूरा करने के लिए राज्य को सभी लोगों को एचआईवी की रोकथाम, उपचार, देखभाल तथा सहयोग मुहैया कराने वाले कदम उठाने चाहिए। इसके अंतर्गत एंटीरेट्रो वायरल थेरेपी अवश्य ही शामिल होनी चाहिये।
3. **आश्रय–स्थल प्रक्रियाओं तक पहुंच एवं निष्कासन तथा रिफाउलमेंट से बचाव :** आश्रय चाहने वाले किसी व्यक्ति को, सिर्फ उसके प्रभावित होने के कारण आश्रय पाने से रोका नहीं जा सकता है। रिफाउलमेंट के खिलाफ सुरक्षा का अधिकार अंतराष्ट्रीय शरणार्थी कानून का अत्यन्त महत्वपूर्ण भाग है और व्यक्ति का एचआईवी प्रभावित होना इस सिद्धांत के लिए किसी भी प्रकार का अपवाद नहीं हो सकता के अंतर्गत है। एचआईवी स्थिति किसी व्यक्ति को तीसरे देश में विस्थापन किए जाने की अनुमति के अंतर्गत नहीं आ सकती है।
4. **मनमाने तरीके से हिरासत में लिये जाने तथा आवागमन की स्वतंत्रता पर अवैधानिक रोक से बचाव :** एचआईवी/एड्स से ग्रस्त किसी भी व्यक्ति को हिरासत में लेना तथा उसकी स्वतंत्र गतिविधियों पर अंकुश लगाना, व्यक्ति के स्वतंत्रता तथा सुरक्षा के मौलिक अधिकार, साथ ही साथ कहीं भी स्वतंत्र रूप से आने–जाने के अधिकार का उल्लंघन होगा, यदि ऐसा केवल इस आधार पर किया जा रहा हो कि वह एचआईवी से ग्रस्त है, या इसकी संभावना है। किसी व्यक्ति के इन अधिकारों से परे उसके एचआईवी ग्रस्त होने के कारण अंकुश लगाने का सार्वजनिक स्वास्थ्य के किसी भी नजरिये से न्यायसंगत नहीं ठहराया जा सकता है। इसके साथ ही साथ इस इस तरह की बंदिशें भेदभावपूर्ण भी होंगी।
5. **गोपनीयता और निजता का सम्मान :** सैद्धांतिक रूप से व्यक्तिगत आंकड़े गोपनीयता होते हैं और उन्हें संबंधित व्यक्ति की बिना सहमति के बांटा नहीं जा सकता है। इसके तहत किसी के स्वास्थ्य से संबंधित आंकड़े भी शामिल हैं। वे व्यक्ति, जिनकी अन्य लोगों की स्वास्थ्य स्थिति तक पहुंच है, उन्हें इनकी गोपनीयता बनाये रखने के लिए उपयुक्त कदम उठाने चाहिए।
6. **स्वैच्छिक परामर्श तथा जांच के प्रावधान (वीसीटी) :** वीसीटी कार्यक्रम एचआईवी संचरण के बारे में लोगों को उचित जानकारी देकर इसके रोकथाम में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। बहरहाल, उचित मानदंडों के बिना गोपनीयता पर आघात हो सकते हैं जिससे बचाव संबंधी समस्या उत्पन्न हो सकती

13 यूएनएचआरसी; www.unhrc.org

हैं। यूएनएचसीआर तब तक वीसीटी कार्यक्रमों का समर्थन करता है जब तक यह अंतर्राष्ट्रीय मानदंडों को पूरा करते हैं, तथा संबद्ध लोगों की इन तक समान पहुंच सुनिश्चित करने का प्रयास करता है अथवा सरकार या भागीदारों की सहायता से इन्हें स्थापित करने का प्रयास करता है, अथवा सरकार या भागीदारों की सहायता से इन्हें स्थापित करने का प्रयत्न करता है।

7. **अनिवार्य जांच से स्वतंत्रता :** यूएनएचसीआर, शरण चाहने वालों, शरणार्थियों, आंतरिक विस्थापितों और अन्य संबंधित लोगों की अनिवार्य एचआईवी जांच का विरोध करता है, क्योंकि यह प्रासंगिक मानवाधिकार मानदंडों से मेल नहीं खाता है। डब्ल्यूएचओ और यूएनएड्स ने यह कहा है कि सार्वजनिक स्वास्थ्य दृष्टिकोण से भी अनिवार्य एचआईवी जांच को यथोचित नहीं माना जा सकता क्योंकि यह किसी भी तरह से एचआईवी के संचरण तथा प्रचार–प्रसार को नहीं रोक पाता है। सार्वजनिक स्वास्थ्य के हितों को सबसे बेहतर तरीके से, स्वैच्छिक परामर्श तथा जांच का माहौल बनाकर जहां गोपनीयता और निजता को बरकरार रखा जाए, साधा जा सकता है।

8. **स्थायी उपायों तक पहुंच :** किसी शरणार्थी या परिवार के सदस्य की एचआईवी स्थिति के कारण, उसे या उसके परिवार को मिल सकने वाली स्थायी सामाधानों से महरूम नहीं किया जा सकता है। स्वैच्छिक पुनः सम्मिलन के संदर्भ में, किसी को उसके एचआईवी संक्रमित होने के कारण, उसके गृहदेश वापस लौटने के अधिकार से वंचित नहीं किया जा सकता है। स्थानीय स्तर पर सम्मिलन के प्रयासों में, स्थायी स्वास्थ्य सेवाओं तथा एचआईवी और एड्स से संबंधित सेवाओं को शरणदाता देश के नागरिकों के समान ही शरणार्थियों को भी मुहैया कराना, शरणार्थियों के बुनियादी अधिकारों की रक्षा के दृष्टिकोण से बहुत महत्वपूर्ण है। पुनर्वास के संदर्भ में, यद्यपि यूएनएचसीआर एचआईवी जांच को एक आवश्यक प्रारंभिक शर्त नहीं मानता है, परंतु कई पुनर्वास करने वाले देश हैं जो प्रस्थान पूर्व स्वास्थ्य जांच जिसमें एचआईवी जांच शामिल है, को आवश्यक मानते हैं। जहां कहीं भी इस तरह की जांच होती है, वहां यह मानव अधिकारों का सम्मान करते हुए होनी चाहिए तथा स्वैच्छिक परामर्श तथा जांच इस के मानदंडों को पूरा किया जाना चाहिए। जहां राज्य एचआईवी संक्रमित व्यक्तियों को आने की अनुमति नहीं देते, वहां स्वतः ऐसे मसलों का निपटारा होना चाहिए।

9. **महिलाओं, लड़कियों और बच्चों की एचआईवी संबंधित सुरक्षा जरूरतें :** एचआईवी, महिलाओं तथा लड़कियों को असमानुपातिक रूप से प्रभावित करता है तथा एड्स और लैंगिक असमानता, उनके द्वारा झेले जाने वाली सुरक्षा समस्याओं, जिसमें हिंसा से संपर्क की अधिक संभावना शामिल है, में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकते हैं। उनकी यौन तथा शारीरिक हिंसा तथा शोषण से सुरक्षा के लिए उपयुक्त कदम उठाने की जरूरत है। एचआईवी से प्रभावित बच्चों की सुरक्षा पर विशेष ध्यान देने की जरूरत है। साथ ही साथ, उन बच्चों की सुरक्षा पर भी ध्यान देना जरूरी है जो एचआईवी द्वारा अनाथ असुरक्षित बना दिए गए हैं।

10. **एचआईवी के बारे में शिक्षा तथा जानकारी को मुहैया कराना :** स्वास्थ्य का अधिकार केवल एचआईवी के उपचार तक ही सीमित नहीं है बल्कि इसमें एचआईवी से संबंधित जानकारी भी शामिल है। राज्य तथा यूएनएचसीआर को चाहिए कि वह एचआईवी तथा एड्स से संबंधित जानकारी शरणार्थियों, आंतरिक विस्थापितों और संबंधित लोगों के बीच मुहैया कराये विशेषकर एचआईवी /एड्स होने की संभावना को समझने तथा-उससे संबंधित जानकारी तथा लैंगिक एवं प्रजनन संबंधी स्वास्थ्य से जुड़ी जानकारी भी।

अंतर्राष्ट्रीय कानून

एक मानव अधिकार रूपरेखा एचआईवी/एड्स के प्रति शरणार्थियों की अरक्षितता को समझने तथा संबोधित करने का अच्छा आधार है। यह उन सामाजिक तथा परिस्थितिजन्य कारकों को संबोधित करने में, जोकि अरक्षितता को निर्धारित करते हैं, तथा किस तरह एचआईवी/एड्स से निपटने के उपाय मानवाधिकारों की सुरक्षित या उल्लंघन कर सकते हैं, इसका विश्लेषण करने में, सहायता देता है।[14] इसमें जनता का स्वास्थ्य और जरूरी दवाओं को प्राप्त करने का अधिकार, भेदभाव की गैरमौजूदगी, गोपनीयता, निजता, सूचना, आवागमन की स्वतंत्रता, आत्म–निर्भरता और हिंसा से सुरक्षा शामिल हैं।

एचआईवी/एड्स पर संयुक्त राष्ट्र महासभा सत्र ने जून 2001 में एचआईवी /एड्स पर वचनबद्धताओं का घोषणापत्र जारी किया जिसमें यह कहा गया कि सशस्त्र संघर्षों के कारण विस्थापित हुए लोगों... जिसमें शरणार्थी, आंतरिक विस्थापित और विशेष रूप से महिला और बच्चे शामिल हैं, के एचआईवी संक्रमण के संपर्क में आने की संभावना ज्यादा है।[15]

नॉन–रिफाउलमेंट का सिद्धांत जो कि 1951 के संयुक्त राष्ट्र कन्वेंशन के अनुच्छेद–33 में शामिल है, अंतर्राष्ट्रीय शरणार्थी कानून का आधारभूत तत्व है। यह कहता है कि "कोई भी अनुबंध करनेवाला राज्य शरणार्थी को किसी भी प्रकार से आने से रोक नहीं सकता तथा किसी भी ऐसे क्षेत्र या सीमाओं पर नहीं भेज सकता जहां उसके जीवन और स्वतंत्रता को खतरा है।" पर्याप्त दिशानिर्देशों तथा प्रक्रियाओं के अभाव में राज्य तथा व्यवस्थापिका शरणार्थियों को उनके अपने देश में लौटने के लिए बाध्य कर सकते हैं जहां पर उन्हें प्रताड़ित किया जा सकता है।

1951 के कन्वेंशन तथा परंपरागत अंतर्राष्ट्रीय नियमों के तहत, राज्य किसी शरणार्थी को ऐसे देश में वापस नहीं भेज सकते जहां उसका/उसकी जीवन तथा स्वतंत्रता को उसका/उसकी नस्ल, धर्म, राष्ट्रीयता, किसी सामाजिक वर्ग विशेष की सदस्यता या राजनीतिक विचारों के आधार पर, संकट उत्पन्न हो सकता हो। हालांकि 1951 के कन्वेंशन के कुछ प्रावधान अपवाद के रूप में कुछ स्थितियों में किसी तीसरे देश में भेजने को (अनुच्छेद–32), या शरणार्थियों के रीफलमेंट (अनुच्छेद–33 (2)) को स्वीकृति देते हैं, पर अगर यह केवल एचआईवी/एड्स के आधार पर किया जाए तो इसको 1951 के कन्वेंशन की शर्तों, और परंपरागत नियमों के अंतर्गत आने वाले नॉन–रिफाउलमेंट संबंधी जिम्मेदारियों का उल्लंघन माना जाएगा।

भेदभाव न करने का सिद्धांत भी मानवाधिकारों के लिए आवश्यक है और यह विशिष्ट रूप से उन लोगों के लिए महत्वपूर्ण है जो एचआईवी /एड्स के साथ जी रहे हैं तथा जो बहुत उच्च स्तर पर भेदभाव तथा सामाजिक कलंक के शिकार होते हैं। यह यूडीएचआर के अनुच्छेद–1 और संयुक्त राष्ट्र के चार्टर, और अनुच्छेद–2 (2) से भी प्रदर्शित होता है जो कहता है कि 'नस्ल, वर्ण, लिंग, भाषा, धर्म, राजनीतिक या अन्य विचार, राष्ट्रीय और सामाजिक उत्पत्ति, संपत्ति, जन्म तथा किसी और स्थिति के आधार पर भेदभाव किये बिना, ये अधिकार लागू होते हैं। भेदभाव की रोकथाम और अल्पसंख्यकों की सुरक्षा के लिए स्थापित संयुक्त राष्ट्र के सब–कमीशन ने यह माना कि 'अन्य स्थिति' के अंतर्गत अपक्षपात के संदर्भ में, की गैरमौजूदगी के अन्य स्थितियों में स्वास्थ्य स्थिति को शामिल किया जाना चाहिए।[16] (UNDOC. E/CN/4/Sub.2/1994/L.42)

संयुक्त राष्ट्र की आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक अधिकारों की समिति, जो विशेषज्ञों की एक संधि समिति आईसीईएससीआर के प्रावधानों को लागू करने की देखरेख करती है, उसने 2000 'साधारण टिप्पणी

14 मान, जे., ग्रुसकिन, एस., ग्रोडीन, एम, एनास, जी. (ईडीएस), हेल्थ एंड ह्यूमन राइट्स, रुटलेज, न्यूयार्क, 1999

15 द यूएन जनरल असेम्बली, 2001

16 एफएमओ रिसर्च गाईड; इंटरनेशनल गाइडलाइंस एंड रिसोर्सेस टु टैकल एचआईवी/एड्स इन कनफिलक्ट सिचुएशन : देखें http://www.forced-migration.org/guides/fmo036/fmo036-5.htm

14' के द्वारा अनुच्छेद–12 की विस्तृत व्याख्या में एचआईवी/एड्स का स्पष्ट उल्लेख किया है। यह समिति यह भी मानती है कि शरणार्थियों, शरण मांगने वालों को और अवैध प्रवासियों तथा हाशिये पर खड़े लोगों को संधि की और 'अपक्षपता वाली धारा' के अंतर्गत प्राप्त सुरक्षा प्रदान करने की जरूरत है।[17]

महिलाओं के प्रति सभी प्रकार के भेदभाव को खत्म करने वाले 1979 के कन्वेंशन (सीईडीएडब्ल्यू) जैसे अंतर्राष्ट्रीय मानवाधिकार कन्वेंशन भी प्रासंगिक हैं। सीईडीएडब्ल्यू समिति, जो कि एक संधि समिति है, ने 1999 में महिलाओं के कन्वेंशन के अनुच्छेद–12 पर साधारण अनुशंसा जारी की, जो कि यह स्पष्ट रूप से कहती है, कि स्वास्थ्य सेवा की उपलब्धता सभी महिलाओं तथा लड़कियों की प्रजननात्मक स्वास्थ्य को शामिल करती है, 'भले ही वे उस देश की वैधानिक रूप से नागरिक न हों।' समिति ने यह माना कि शरणार्थी तथा आंतरिक रूप से विस्थापित महिलाओं की स्वास्थ्य जरूरतों तथा अधिकारों पर विशेष ध्यान दिया जाना चाहिए। बच्चों के अधिकारों पर कन्वेंशन (1989) का भी इस्तेमाल युद्धों तथा एचआईवी/एड्स की महामारी से प्रभावित बच्चों की जरूरतों को पूरा करने के प्रयास के लिये किया जाता है।

बहुत से अंतर्राष्ट्रीय सम्मेलनों ने मानवाधिकार दृष्टिकोण का इस्तेमाल प्रजनन संबंधी स्वास्थ्य को बढ़ावा देने और एचआईवी/एड्स के विरुद्ध लड़ने में किया है। इसमें सबसे महत्वपूर्ण, जनसंख्या तथा विकास पर हुआ 1994 का अंतर्राष्ट्रीय सम्मेलन है जिसने मानवाधिकारों पर आधारित एक ज्यादा व्यापक तथा विस्तृत दृष्टिकोण, प्रजनन संबंधी स्वास्थ्य के बारे में विकसित किया। इसमें संघर्ष की परिस्थितियों में प्रजनन संबंधी स्वास्थ्य तथा एचआईवी/एड्स को शामिल किया गया, ये माना गया कि 'प्रजननात्मक स्वास्थ्य सुविधा हर स्थिति में, शरणार्थियों विशेषकर महिलाओं की जरूरतों और व्यक्त आवश्यकताओं को आधार बनाते हुए, विभिन्न धार्मिक, नैतिक मूल्यों और सांस्कृतिक पृष्ठभूमि का आदर करते हुए, विश्वभर में मान्यताप्राप्त अंतर्राष्ट्रीय मानवाधिकारों के अनुरूप उपलब्ध करानी चाहिए।' जबकि ऐसे आम राय के अंतर्राष्ट्रीय दस्तावेज किसी तरह की बाध्यता की स्थिति उत्पन्न नहीं करते, पर ये सरकारों द्वारा अनुमोदित हैं और इसलिए राजनीतिक इच्छाशक्ति को प्रदर्शित करते हैं। इनका गैर सरकारी संगठनों (एनजीओ) द्वारा बहुधा इस्तेमाल किया जाता है तथा संधि–निरीक्षण संस्थायें इसका इस्तेमाल सरकार द्वारा संधि की शर्तों के पालन का मूल्यांकन करने के मानदंडों के रूप में इस्तेमाल करती हैं।

शरणार्थी अक्सर कारगर बचाव के तरीकों से दूर हाशिये पर रह जाते हैं। राष्ट्रविहीन लोग, किसी राष्ट्रीयता के अभाव में, समुदाय से अलग देखे जाते हैं और इसी आधार पर अंतर्राष्ट्रीय मानवाधिकार कानूनों के व्यवहार से वंचित किये जा सकते हैं।

शरणार्थी प्रजनन संबंधी स्वास्थ्य

वर्ष 1989 में शरणार्थी महिला और बच्चों के महिला कमीशन का गठन, शरणार्थी महिला और बच्चों की सुरक्षा और देखभाल की देखरेख करने वाले पहले परामर्शकारी संगठन के रूप में हुआ। इसने आरएसएच सूचनाओं, शरणार्थियों तथा अन्य बलात् विस्थापित (उदाहरणार्थ आईडीपीएस) आबादी को दी जाने वाली सुविधाओं के बारे में जागृति फैलाने में महत्वपूर्ण भूमिका अदा की है। वर्ष 1990 के दशक के प्रारंभिक वर्षों में महिलाओं

[17] विभिन्न राज्यों की यह सामूहिक तथा व्यक्तिगत जिम्मेदारी होती है कि वे, संयुक्त राष्ट्र के चार्टर तथा संयुक्त राष्ट्र महासभा और विश्व स्वास्थ्य असेंबली के प्रासंगिक प्रस्तावों के अनुसार आपदा की स्थिति में राहत तथा मानवतावादी सहायता जिसमें शरणार्थियों एवं आंतरिक विस्थापितों को सहायता देना शामिल है, मुहैया कराये। प्रत्येक राज्य को इस काम में अपनी क्षमता के अनुरूप योगदान करना चाहिए। अंतर्राष्ट्रीय चिकित्सा सहायता, संसाधनों के बंटवारे तथा प्रबन्धन जैसे साफ पीने का पानी, भोजन तथा चिकित्सा आपूर्तियां तथा वित्तीय सहायता के इस काम में प्राथमिकता जनसंख्या के सबसे आरक्षित अथवा हाशिये पर खड़े समूहों को दी जानी चाहिए। साथ ही साथ, चूंकि कुछ बीमारियां आसानी से राज्यों की सीमाओं के पार फैल जाती है। अतः वैश्विक समुदाय की यह जिम्मेदारी है कि वह इस समस्या को संबोधित करे। इस संबंध में आर्थिक रूप से विकसित राज्य पक्षों की यह विशेष जिम्मेदारी तथा हित में है कि वह इस संबंध में गरीब विकासशील राज्यों की मदद करें।

के कमीशन ने एक दस्तावेज, जिसका शीर्षक शरणार्थी महिला और प्रजनन स्वास्थ्य देखभाल – वरीयताओं का पुनर्मूल्यांकन, प्रकाशित किया जिसमें अस्सी देशों की, साल भर लंबे शोध के आधार पर, शरणार्थी संबंधी जानकारियां प्रस्तुत की गई। इसने इस बात को स्पष्ट किया कि आपातकालीन परिस्थितियों में प्रजनन संबंधी स्वास्थ्य को लगभग ना के बराबर महत्व दिया जाता है। इसमें यह कहा गया कि सामान्य स्वास्थ्य देखभाल को वरीयता देते हुए माता तथा शिशु स्वास्थ्य देखभाल संबंधी सेवाओं को कम महत्व दिया जाता है। परिवार नियोजन, यौन संचरित संक्रमण और एचआईवी /एड्स, यौन तथा लैंगिक हिंसा प्रसव संबंधी मसले पर कोई बल नहीं दिया गया। यह आपातकाल में प्रजनन स्वास्थ्य की आवश्यकता और जरूरत के दस्तावेजीकरण करने वाला पहला वृहद अध्ययन था।

आईसीपीडी तथा एफडब्ल्यूसीडब्ल्यू सम्मेलनों के बाद, जिन्होंने शरणार्थी आरएसएच की जरूरतों को मानवाधिकारों के ढांचे के अंतर्गत, अलग जरूरत मानते हुए लाने की आवश्यकता को महसूस किया, बहुत से गैर सरकारी संगठनों और संयुक्त राष्ट्र की संस्थाओं ने इसे आरएसएच अनुसंधान तथा नीतियों के अग्रसारित तथा शरणार्थी और आंतरिक विस्थापित के लिए बेहतर सुविधा प्रावधानों की वकालत के एक प्लेटफार्म के रूप में इस्तेमाल किया।[18]

दो महत्वपूर्ण संगठनों का निर्माण हुआ। पहला, रिप्रोडक्टिव हेल्थ रिस्पांस इन कॉनफ्लिक्ट कॉन्सोर्टियम था जो पहले रिप्रोडक्टिव हेल्थ फॉर रिफ्यूजी कॉन्सोर्टियम के नाम से स्थापित हुआ था। इसने सात संगठनों को, जो आरएसएच सेवाओं तथा बलात् विस्थापित आबादी के मानदंडों के सुधार के लिए समर्पित थे, साथ लाने का काम किया। आरएचआरसी ने अपना नाम इसलिए बदला क्योंकि यह दिखाना चाहती थी कि ये केवल शरणार्थियों के लिए ही नहीं, बल्कि संघर्षों के कारण प्रभावित हुए लोगों के लिए भी कार्य कर रही है।[19]

दूसरा महत्वपूर्ण संगठन था – इंटर–एजेंसी वर्किंग ग्रुप ऑन रिफ्यूजी रिप्रोडक्टिव हेल्थ बहुत सी गैर सरकारी संगठनों, संयुक्त राष्ट्र संस्थाओं, सरकारों के मिलने से बना है। आईएडब्ल्यूजी ने जो एक बहुत महत्वपूर्ण कार्य किया वह यह है कि उसने आरएसएच दिशानिर्देश तथा विशिष्ट रूप से शरणार्थियों तथा संघर्ष की स्थितियों के लिए फील्ड मैन्युअल का निर्माण किया। यह मैन्युअल, रिप्रोडक्टिव हेल्थ इन रिफ्यूजी सिचुएसन् : एन इन्टर एजेंसी फील्ड मैनुअल, 1997 में पहली बार तैयार किया गया और दो वर्षों तक अंतिम संस्करण के परीक्षण के बाद वर्तमान स्वरूप (1999) में स्वीकार कर लिया गया। इस फील्ड मैन्युअल का उद्देश्य है : बहु–क्षेत्रीय दृष्टिकोण का इस्तेमाल करते हुए आरएसएच सेवाओं को मुहैया कराने तथा इसे मजबूत करने के प्रयासों की वकालत करना; शरणार्थी संबंधी स्थितियों में कार्य करने वाले क्षेत्र कर्मचारियों के लिए गाइड के रूप में इस्तेमाल आना, कार्यक्रम चक्र के सभी पक्षों में निर्णय लेने की प्रक्रिया के लिए एक औजार के रूप में इस्तेमाल होना।

एक स्वस्थ प्रजनन तथा यौन जीवन को अब शरणार्थी तथा बलात् विस्थापित लोगों के साथ सभी लोगों का बुनियादी मानवाधिकार माना जाता है और यह कानून की तीन संस्थाओं द्वारा सुरक्षित होता है : मानवाधिकार कानून, शरणार्थी कानून और मानवतावादी कानून। प्रजनन संबंधी अधिकारों की आधारशिला सबसे पहले बुनियादी मानवाधिकारों की दो संधियों ने रखी– संयुक्त राष्ट्र चार्टर जो 1945 में अपनाया गया, तथा मानव अधिकारों का सार्वभौम घोषणापत्र जो 1948 में अपनाया गया जिसने कि सभी व्यक्तियों के स्वास्थ्य के अधिकार को सुनिश्चित किया। संयुक्त राष्ट्र के शरणार्थियों की स्थिति से संबंधित कन्वेंशन के साथ 1951 में शरणार्थी कानून प्रभाव में आये; इसके 1967 के प्रोटोकॉल ने सभी हस्ताक्षर करनेवाले देशों द्वारा शरणार्थी

18 रिप्रोडक्टिव हेल्थ रिस्पॉन्स इन कॉनफ्लिक्ट कन्सोर्टियम (पहले, रिप्रोडक्टिव हेल्थ फॉर रिफ्यूजी कंसोर्टियम) – http://www.rhrc.org/ व वुमेन्स कमीशन फॉर रिफ्यूजी वुमेन एंड चिल्ड्रेन – http://www.womenscommission.org/index.html रिप्रोडक्टिव हेल्थ इन रिफ्यूजी सिचुएशन : एन इंटर एजेंसी फील्ड मैन्युअलः http://www.who.int/disasters/tg.cfm2doctypeID=20

19 वही

कानून प्रदान करने को रेखांकित किया। इसका मतलब यह है कि सभी हस्ताक्षरकर्ता देश अपने यहां रह रहे शरणार्थियों जो वैध रूप से यहां रह रहे हैं, वे सभी अधिकार मुहैया करायेंगे जो वो आम नागरिकों को देते हैं, इसमें सामाजिक सुरक्षा के प्रावधान, मातृत्व, बीमारी से संबंधित अधिकार भी शामिल होंगे।

लेकिन, मतलब यह भी है कि जो शरणार्थी बिना गैर लोकसम्मत तरीकों से रह रहे हैं, या गैर कानूनी रूप से रह रहे हैं, उनका प्रायः समान अधिकार नहीं मिल सकता है और ऐसे लोगों को प्रजनन संबंधी स्वास्थ्य सेवाओं तथा देखभाल को पा सकने में मुश्किल हो सकती है। 1949 के सामान्य नागरिकों की युद्ध के समय में सुरक्षा से जुड़े हुए कन्वेंशन ने वे आधार प्रदान किए जिनके चलते मानवतावादी नियमों के अंतर्गत प्रजनन स्वास्थ्य के विषय संबोधित किया जा सका। यद्यपि इसने प्रजनन संबंधी स्वास्थ्य को विशिष्ट रूप से संबोधित नहीं किया, पर इसने 'मातृत्व के मामलों' और साथ ही साथ 'बलात्कार, बलात् वेश्यावृति या किसी अन्य प्रकार के अपमानजनक बर्ताव'[20] से महिलाओं के बचाव के बारे में सुरक्षा उपायों तथा विशेष सहायताओं का जिक्र किया है।

1976 में, अंतर्राष्ट्रीय समुदाय एक अतिरिक्त कोवेनेंट पर सहमत हो गया जिसने मानवाधिकार घोषणापत्र और शरणार्थियों की दशा से संबंधित कन्वेंशन में उल्लिखित अधिकारों को विस्तार दिया जिसके प्रभाव लिंग, प्रजनन संबंधी स्वास्थ्य और शरणार्थियों, जिसमें गैर वैधानिक रूप से शरणदाता देश में रह रहे लोग भी शामिल हैं, पर भी पड़े। आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृतिक अधिकारों के अंतर्राष्ट्रीय मसविदे (आईसीईएससी) का अनुच्छेद–12, स्वास्थ्य के अधिकारों के सार्वभौम घोषणापत्र से भी आगे जाता है। बल्कि, अनुच्छेद–12, 'सभी के द्वारा शारीरिक तथा मानसिक स्वास्थ्य के उच्चतम संभव मानदंडों के उपभोग की बात करना है' और इस लक्ष्य की प्राप्ति के लिए उठाये जाने वाले कदमों की रूपरेखा देता है। यद्यपि इसमें प्रजनन संबंधी स्वास्थ्य अधिकारों का विशेष उल्लेख नहीं है, पर इसके कुछ प्रावधान जैसे अनुच्छेद–10(2) और 12 (2ए), प्रजनन स्वास्थ्य संबंधी मुद्दों को संबोधित करते हैं।[21] बहरहाल, बाद में अनुच्छेद–12 पर की गई संयुक्त राष्ट्र सामान्य टिप्पणी 14 कहती है कि 'उच्चतम संभव स्वास्थ्य मानदंडों का अधिकार विशेषतौर पर सभी व्यक्तियों के प्रजनन स्वास्थ्य अधिकारों को संबोधित करता है, जिसमें विशेष रूप से महिलाएं, किशोरियां, शरणार्थी, शरण चाहनेवाले, अवैधानिक प्रवासी, आंतरिक विस्थापित लोग शामिल हैं, तथा इन अधिकारों को पूरा करने को राज्य की जिम्मेदारी के रूप में संबोधित करता है।[22]

आपदा सहयोग में लिए न्यूनतम देखभाल के मानदंड तथा मानवतावादी चार्टर मानवाधिकार तथा शरणार्थी नियमों के दायरे में, ही बहुत सारी एजेंसियों द्वारा 1997 में विकसित किया गया। यह चार्टर मानवतावादी सक्रियता के मूल सिद्धांत का वर्णन प्रभावित लोगों के अधिकारों को पुनःस्थापित करने के उद्देश्य से करता है, साथ ही साथ यह युद्धरत पक्षों तथा राज्यों की जिम्मेदारियों की ओर भी इशारा करता है। यह चार्टर स्फेयर हैंडबुक का आधार तैयार करता है, जो बहु–पक्षीय आपदा प्रतिक्रिया में देखभाल के न्यूनतम मानदंड निर्धारित करती है। वर्ष 2004 में इसका एक पुनःसंवर्धित संस्करण प्रभाव में आया जो पूर्वउल्लिखित विषयों के अलावा, आरएसएच से संबंधित मुद्दों में सुरक्षा, लिंग, बच्चों, एचआईवी/एड्स तथा एचआईवी/एड्स से पीड़ित लोगों को संबोधित करता है। स्फेयर हैंडबुक का पांचवा अध्याय स्वास्थ्य प्रावधान के न्यूनतम मानदंडों की रूपरेखा तैयार करता जिसमें आरएसएच से जुड़े हुए मुद्दे को संबोधित करने वाला एक विशेष खंड भी है।

20 यूनाइटेड नेशन कमीशन फॉर रिफ्यूजीस (यूएनएचसीएचआर) – http://www.unhcr.org/ यूएनएचसीएचआर (1949) जेनेवा कन्वेंशन रिलेटिव टु द प्रोटेक्शन ऑव सिविलियन पर्सन्स इन टाईम ऑव वार – http://ww.unhchr.ch/html/menu3/b/92.htm

21. यूएनएचसीएचआर (1976) इंटरनेशनल कोवेनेंट ऑन इकोनॉमिक, सोशल एंड कल्चरल राइट्स – http://www.unhchr.ch/html/menu3/b/a_ce-scr.html

22 यूएन (2000), कमेटी ऑन इकॉनॉमिक, सोशल एंड कल्चरल राईट्स जनरल कमेंट 14. द राइट टू द हाइयेस्ट अटेनेबल स्टैंडर्ड ऑव हेल्थ – undoc./E/C.12/2000/4 - http://www1.umn.edu/humanrts/gencomn/escogencom14.htm

अंतर्राष्ट्रीय विवाद कानून

यूएनएचसीआर का 1951 का शरणार्थी कन्वेंशन और इससे संबंधित 1967 का प्रोटोकॉल शरणार्थियों के साथ विशिष्ट अधिकारों को संबोधित करते हैं। कन्वेंशन यह मांग करता है कि हस्ताक्षरकर्ता देश वैसे शरणार्थियों जो उनके देश में वैधानिक तरीके से रह रहे हैं, उसी तरह का व्यवहार करें जैसा वे अपने नागरिकों के साथ करते हैं, और इस समान व्यवहार में सामाजिक सुरक्षा की योजनाएं और स्वास्थ्य योजनाएं शामिल हैं (अनुच्छेद–24).

विभिन्न देशों के अंतर्राष्ट्रीय मुकदमों से संबंधित कानून, एचआईवी/एड्स से जुड़े हुए शरणार्थियों के मुद्दे के जटिल चरित्र को समझने के लिए आवश्यक है। यूनाइटेड किंगडम में, एक मुकदमे में एक शरण चाहने वाली, जो एड्स की शिकार थी, ने एन बनाम राज्य के गृह मंत्रालय का सचिव[23] मामले में, उसे आश्रय नहीं दिए जाने के खिलाफ अपील दायर की जिसमें उसने कहा कि उसको यहां से निकाल कर युगांडा भेजा जाना मानवाधिकार अधिनियम 1998 के अनुच्छेद–3 (अमानवीय तथा अपमानजनक व्यवहार से स्वतंत्रता) का उल्लंघन है। न्यायालय ने यह कहा कि अनुच्छेद–3 की व्याख्या इस प्रकार नहीं की जा सकती कि (संधि में शामिल) राज्य को दुनिया भर के एड्स पीड़ितों को स्वीकार करने और जीवन भर इलाज करने के लिए बाध्य होना पड़े। वैसे व्यक्ति, जिन्हें देश से निकाला जा रहा है, देश में रहने के लिए इस आधार पर दावा नहीं कर सकते हैं कि वहां नहीं रहने से उन्हें वहां मिल रहे चिकित्सीय लाभ, सामाजिक या अन्य किसी तरह का सामाजिक या किसी अन्य प्रकार का सहयोग, जो भेजनेवाला देश मुहैया करा रहा था, रूक सकता है। वहां अपवाद की स्थिति उत्पन्न हो सकती है जहां निकाले जाने में चिकित्सीय अड़चनें हों पर ऐसी स्थितियां अपवाद के जैसी होनी चाहिए।

यूनाइटेड किंगडम में ही एक अन्य मुकदमे, जेडटी बनाम राज्य के गृह मंत्रालय का सचिव में,[24] जेडटी जो जिम्बाब्वे की एक महिला है, कानूनी तरीके से यूके में प्रविष्ट करती है और कालक्रम में जांच में एचआईवी की शिकार पाई जाती है। वह अपना इलाज यूके में प्रारंभ करती है और उसकी बीमारी को सफलतापूर्वक आगे बढ़ने से रोक दिया जाता है। यूके के अपीलीय कोर्ट ने उसे निकाले जाने का फैसला बरकरार रखा। यह मानते हुए कि जब तक 'अपवाद परिस्थितियां' न हों, (एड्स के साथ रह रहे लोग) व्यक्ति को ऐसे देशों में भेजा जा सकता है जहां उसका इलाज प्रभावित हो या रुक जाये, और ऐसे अपवाद परिस्थितियां हैं : बीमारी की गंभीर अवस्थाएं, या बिलकुल अमानवीय तरीके का व्यवहार और वंचितता। न्यायालय ने इसे जारी रखते हुए कहा 'अनुच्छेद–3 में राज्यों के लिए यह आवश्यक नहीं कि वह सभी अनजाने लोगों को अनंत काल तक वह चिकित्सा मुहैया कराये, जो उनके गृह देश में अनुपलब्ध हो। न्यायालय ने यह भी कहा कि पीड़ित को अनुच्छेद–8 के तहत मिले अधिकारों का कोई उल्लंघन नहीं हुआ है और यह कोई 'विशेष परिस्थिति' भी नहीं है, जिसके लिए उसे राहत प्रदान की जाए।

बहरहाल, एक अन्य मुकदमे में,[25] घाना की एक गर्भवती महिला, ने शरण के लिए अपील की और कहा कि उसको बलपूर्वक घाना भेजने पर उसके पास अपने बच्चे को स्तनपान कराने के अलावा कोई विकल्प नहीं बचेगा जिससे बच्चे में एचआईवी संक्रमण का खतरा रहेगा। उसका यह दावा मानवाधिकारों पर यूरोपीय कन्वेंशन के अनुच्छेद–3 पर आधारित था। न्यायालय ने यह कहा कि यद्यपि अनुच्छेद का दावा मां के परिस्थिति में खारिज हो जाता है। परंतु यह अजन्मे शिशु का, अनुच्छेद–3 में प्रदत्त अधिकार का उल्लंघन होगा, अगर मां की बलात् घाना वापस भेजा गया।

23 [2005] यूकेएचएल 31 (यूनाइटेड किंगडम)
24 [2005] ईडब्ल्यूसीए सिव. 1426 (यूनाइटेड किंगडम)
25 सीए बनाम सेक्रेटरी ऑव स्टेट फॉर द होम डिपार्टमेंट, (2004) ऑल ईआर (डी) 354 (सीए) (यूनाइटेड किंगडम)

एक दूसरे मुकद्मे[26] में यूनाइटेड किंगडम के न्यायालय ने संक्रमित माता की जरूरतों के प्रति सहानुभूति दिखाई। टी एक एचआईवी संक्रमित इथोपियाई नागरिक थी, जिसने यूके में एचआईवी संक्रमित कन्या को जन्म दिया, जिस दौरान उसको शरण देने की प्रक्रिया लंबित थी। नये सामाजिक सुरक्षा अधिनियम और उसकी प्रवासी स्थिति के चलते, जो धन उसे मिला वह उसके भरण–पोषण के खर्च के लिए पर्याप्त नहीं था, और वह अपने बच्चे के लिए दूध खरीदने में अक्षम थी। टी ने कन्वेंशन के अनुच्छेद–2, 8 और 14 के तहत इस प्रकार भत्ते की योजना को, जो शरण मांगने के लंबित मामले में मिलता है, कोर्ट में चुनौती दी। न्यायालय ने यह पाया कि 'अमुक' की स्थिति 'विशेष परिस्थिति' थी क्योंकि इसमें मां से बच्चे द्वारा संक्रमण फैलने की संभावना थी अगर वह दूध प्राप्त करने में अक्षम होती और यह कहा कि बचाव विभाग एचआईवी संक्रमण के खतरे को महसूस करने में अक्षम सिद्ध हुआ है।

कनाडा में एक मुकदमे, डलगाडिलो बनाम कनाडा[27] में, डेल्गाडिलो एक मैक्सिकन समलैंगिक था जिसे अपने देश से समलैंगिकता विरोधी घटनाओं के कारण बलात् बाहर कर दिया गया था। डेलगाडिलो ने यह महसूस किया कि उसका कार्यस्थल समलैंगिकता विरोधी है जो धारणा इस घटना से भी पुष्ट होती है जिसमें पुलिस ने उससे, उसकी यौन स्थिति सार्वजनिक कर देने की धमकी देकर धन वसूला। डेलगाडिल्लो कनाडा में प्रवेश कर गया, पर आवर्जन तथा शरणार्थी बोर्ड ने उसके शरणार्थी होने के दावे को इस कारण खारिज कर दिया कि उसके पास वह आंतरिक उड़ान विकल्प थे। उसके मामले में मैक्सिको सिटी, जहां वह जा सकता था। मैक्सिको सिटी एचआईवी संक्रमित या इंद्रिय परितंत्र लोगों के लिए आंतरिक उड़ान विकल्प नहीं था अतः आईआरबी ने उसके इस दावे दोनों में से किसी में भी शामिल करने से मना कर दिया। कनाडा की संघीय न्यायालय ने इस फैसले को बरकरार रखा।

यूनाइटेड स्टेट ने हाल ही में एक शरणार्थी से संबंधित मुकदमे, बोअर–सेडानो बनाम गोंजालेज,[28] में न्यायालय ने कहा कि विदेशी समलैंगिक एक अलग सामाजिक वर्ग का निर्माण करते हैं, और वादी का अनुभव प्रताड़ित होने की उचित संभावना का निर्माण करता है, और उसको मैक्सिको भेजने का कदम तार्किक विकल्प नहीं है। न्यायालय ने यह कहा कि चिकित्सीय प्रमाण यह इंगित करता है कि एड्स का इलाज मैक्सिको में उपलब्ध नहीं था और एचआईवी/एड्स के प्रति भेदभाव उसे रोजगार प्राप्त करने से रोकेगा, जिससे वह उपयुक्त इलाज या अपनी स्थिति की देखभाल के लिए आवश्यक सहायता प्राप्त नहीं कर पाएगा।

शरणार्थियों से संबंधित भारतीय कानून

अंतर्राष्ट्रीय नियमों के तहत लगभग सार्वभौमिक प्रभाव रखने वाला एकमात्र संधि–तन्त्र, 1951 का शरणार्थी संबंधी कन्वेंशन और इसका शरणार्थियों की स्थिति संबंधी 1967 का प्रोटोकॉल है जो एक तरह से शरणार्थी नियमों का मेग्नाकार्टा है। भारत ने न तो इस संधि को स्वीकार किया और न ही इस पर हस्ताक्षर किये हैं जबकि वह अंतर्राष्ट्रीय नियमों के अंतर्गत आने वाले बाकी सारे महत्वपूर्ण मानवाधिकार संबंधी उपकरणों का हस्ताक्षरकर्ता है। बहरहाल, भारत यूएनएचसीआर के कार्यकारी समिति का सदस्य है।

शरणार्थियों तथा उनकी समस्याओं के प्रति भारतीय दृष्टिकोण आजादी के बाद से एक प्रकार से अस्थायी ही रहा है। शरणार्थियों से संबंधित कोई विशिष्ट विधान नहीं है तथा जब शरणार्थी के अधिकारों का हनन होता है तो उससे निपटने के लिए कोई तंत्र भी नहीं है। भारत सरकार द्वारा पालन किए जाने वाले कुछ वैधानिक अधिनियम हैं– द रजिस्ट्रेशन ऑव फॉरेनर्स एक्ट, द फॉरेनर्स एक्ट, 1946, द पासपोर्ट (इंट्री) एक्ट

26 टी बनाम सेक्रेटरी ऑव स्टेट फॉर हेल्थ, (2002) ईडब्ल्यूजे नं.4089 (2002) ईडब्ल्यूएचसी 1887 (एडमीन.) सीओ/2042/2002 (यूनाइटेड किंगडम)
27 (2004) एफसीजे नं. 651 (एफसी)
28 418 एफ. 3डी 1082 (9वां सर्किट, 2005) (यूनाइटेड स्टेट्स)

1920 और 1967। द फॉरेनर्स एक्ट, 1946 विदेशियों के नियंत्रण के मामलों में कार्यपालिका को व्यापक स्वैच्छिक (डिस्क्रशनरी) शक्तियां प्रदान करता है। इन्हें रोका जा सकता है, हिरासत में लिया जा सकता है, कारावास में भेजा जा सकता है, पाबंदी में रखा सकता है और यहां तक कि देश छोड़ने के लिए कहा जा सकता है। इन सभी परिस्थितियों में और किसी स्थायी संस्थागत ढांचे, जो शरणार्थी संबंधी मामलों के अभाव के कारण, किसी को शरणार्थी का दर्जा प्रदान करना पूरी तरह से राजनीतिक व्यवस्था के विवेक पर निर्भर है। इस प्रक्रिया में भटकते हुए शरणार्थियों की स्थिति कई बार राजनीतिक स्वेच्छाचारिता का शिकार हुई है।[29]

किसी उपयुक्त म्युनिसिपल विधान के अभाव में, अंतर्राष्ट्रीय शरणार्थी सुरक्षा तंत्र की बहाली के काम में भारतीय न्यायपालिका अपनी भूमिका अदा करने के लिए आगे आई है, जो कि भारत में सामान्य रूप से अंतराष्ट्रीय संधि शर्तों तथा विशेषरूप से शरणार्थी सुरक्षा को बहाल करने में मदद करती है।

न्यायपालिका द्वारा अपनाया गया तरीका संविधान के अनुच्छेद–21 की संरचनात्मक व्याख्या से जन्मा है, जो कि नागरिक तथा गैर–नागरिकों को भी जीवन तथा स्वतंत्रता का अधिकार सुनिश्चित करता है। भारत का सर्वोच्च न्यायालय तथा उच्च न्यायालयों द्वारा ऐसे कई फैसले दिए गए हैं जिनमें अनुच्छेद–21 का हवाला देते हुए शरणार्थी को सुरक्षा प्रदान की गई है।

भारतीय उच्च न्यायालय ने अभूतपूर्व रूप से नागरिकों तथा गैर–नागरिकों, दोनों के अधिकारों का विस्तार करते हुए राज्यों द्वारा इनका पालन किया जाना अनिवार्य कर दिया है। न्यायालय ने अपने आदेशों के द्वारा विधान की कमियों को दुरुस्त किया है और बहुत सारे मुकदमों में शरणार्थियों को मानवतावादी समाधान उपलब्ध कराया है।

सर्वोच्च न्यायालय ने पीपुल्स युनियन फॉर सिविल लिबर्टीज बनाम भारत का संघ[30] मुकदमे में यह कहा कि 'कन्वेंशन के प्रावधान जो संविधान द्वारा प्रदत्त मौलिक अधिकारों को और स्पष्ट करते हैं तथा प्रभावित भी करते हैं, कोर्ट द्वारा निश्चित रूप से मौलिक अधिकार के तत्वों के रूप में लिये जा सकते हैं और इसलिए इन्हें इसी रूप में लागू किया जा सकता है।'

यह इस बात की स्पष्ट व्याख्या करता है कि परिभाषा को विस्तृत करते हुए इसमें अंतर्राष्ट्रीय उपायों को भी शामिल किया जा सकता तथा इस प्रकार उन्हें लागू किया जा सकता है। विशाखा बनाम राजस्थान राज्य मामले में न्यायालय ने अनुच्छेद–51(सी) जो अंतर्राष्ट्रीय संधियों के प्रति हमारी प्रतिबद्धता को रेखांकित करता है, का हवाला देते हुए कहा कि 'कोई भी अंतर्राष्ट्रीय संधि, जो मौलिक अधिकारों के साथ असंगत न हो तथा इसकी भावना से सामंजस्य रखती हो, को इन प्रावधानों के साथ सम्मिलित किया जा सकता है, जो इसके अर्थ तथा संदर्भ दोनों को विस्तृत करते हुए संविधान द्वारा सुनिश्चित लक्ष्यों की प्राप्ति में सहयोग करेगा।

सर्वोच्च न्यायालय ने चकमा शरणार्थियों से संबंधित प्रमुख मुकदमे, राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग बनाम अरुणाचल प्रदेश राज्य[31] में अनुच्छेद–21 के अंतर्गत आने वाले अधिकारों को शरणार्थियों के लिए भी लागू किया। इस मसले में यह पाया गया कि अरुणाचल प्रदेश में रहनेवाले चकमा शरणार्थियों को बहुत खतरा था। वहां के निवासियों ने उन्हें भगाने की धमकी दी थी तथा शरणार्थियों पर स्थानीय स्तर पर राज्य एजेंसियों तथा वहां के निवासियों, दोनों के द्वारा बहुत दबाव था। सर्वोच्च न्यायालय ने यह कहा कि राज्य सभी व्यक्तियों, चाहे वह नागरिक हों या न हों, के जीवन तथा स्वतंत्रता की रक्षा के लिए बाध्य है एवं वह किसी व्यक्ति तथा संस्था को यह अनुमति नहीं दे सकता कि वो चकमा शरणार्थियों को राज्य छोड़ने के लिए धमकायें।

29 बीएस चिमनी, इंटरनेशनल रिफ्यूजी लॉ, ए रीडर, 2002
30 (1997) 3 एससीसी 443
31 एआईआर 1996, एससी 1235

डॉ. मालविका कारलेकर बनाम भारत का संघ[32] मामले में सर्वोच्च न्यायालय ने अंडमान द्वीप में रह रहे बर्मी शरणार्थियों को निकाले जाने पर रोक लगा दी, क्योंकि 'शरणार्थी के दर्जे के लिए उनकी विलंबित है तथा शरणार्थी मान्यता दिये जाने का यह प्रथम दृष्ट्या मामला प्रतीत होता है; और ये लोग राज्य की सुरक्षा के लिए कोई खतरा या संकट भी उत्पन्न नहीं कर रहे हैं...।' न्यायपालिका ने इस मामले में नॉन–रिफाउलमेंट के सिद्धांत को बरकरार रखा।

सर्वोच्च न्यायालय ने अपने हाल के फैसले, रेलवे बोर्ड बनाम चांदी राम तथा अन्य[33] में शरणार्थियों के लिए मानवाधिकारों को लागू करने के मामले में सही पूर्व दृष्टांत प्रस्तुत किया है। इस मामले में, एक बांग्लादेशी नागरिक हावड़ा रेलवे स्टेशन के रेल यात्री निवास में सामूहिक बलात्कार की शिकार हुई थी। उच्च न्यायालय में एक लिखित याचिका दायर की गई जिसमें यह कहा गया कि बलात्कार रेलवे के कर्मचारियों ने किया। उच्च न्यायालय ने दस लाख रुपये के मुआवजे का फैसला सुनाया क्योंकि यह अपराध रेलवे के कर्मचारियों द्वारा किया गया था। सर्वोच्च न्यायालय ने इस फैसले को भुक्तभोगी के अनुच्छेद–21 के तहत प्रदत्त अधिकारों के उल्लंघन के मुआवजे के रूप में बरकरार रखा। न्यायालय ने संविधान की प्रस्तावना तथा यूडीएचआर के विभिन्न अनुच्छेदों, सीईडीएडब्ल्यू के प्रावधानों का हवाला देते हुए ये पाया कि 'हमारा संविधान यूडीएचआर में विदित सभी बुनियादी तथा मौलिक मानव अधिकारों को अपने नागरिकों तथा अन्य व्यक्तियों के लिए सुनिश्चित करता है।

यद्यपि हमारे संविधान ने शरणार्थियों के अधिकारों की सुरक्षा के लिए अग्र–सक्रिय भूमिका निभाई है, पर फिर भी राष्ट्रीय विधान की जरूरत को खारिज नहीं किया जा सकता। कोई भी भारतीय कानून सीधे तौर पर शरणार्थियों का जिक्र नहीं करता है। शरणार्थी की स्थिति निर्धारित करने तथा सुरक्षा प्रदान करने वाले वर्तमान प्रावधान अपर्याप्त हैं। भारत में शरणार्थी को 'विदेशियों' के रूप में वर्गीकृत किया जाता है। विदेशी सामान्यतया वे लोग होते हैं जो बतौर छात्र या पर्यटक देश में आते हैं। शरणार्थियों को विदेशियों के रूप में देखना उनकी असुरक्षित स्थिति को पूरी तरह से नजरअंदाज करना है, क्योंकि शरणार्थी मानवाधिकार उल्लंघन के गंभीर मामलों के शिकार होते हैं। फॉरेनर्स एक्ट तथा यह आदेश दोनों ही सकारात्मक रूप से भारतीय सरकार को यह शक्ति प्रदान करते हैं कि यह भारत के भीतर उनके आवागमन को नियंत्रित कर सकती है, चिकित्सीय परीक्षण करवा सकती है, रोजगार के अवसर सीमित कर सकती है, मेलजोल के अवसर सीमित कर सकती है, साथ ही साथ शरणार्थी का रिफाउलमेंट कर सकती है तथा उसे वापस भेज सकती है। यह शक्ति शरणार्थी कन्वेंशन की सूची में वर्णित उन अधिकारों तथा स्वतंत्रताओं से अन्तर्विरोध उत्पन्न करती है, जिनका पालन किया जाना चाहिए।

विगत राष्ट्रीय एड्स नीति I और II में शरणार्थियों को राष्ट्रीय एड्स नियंत्रण कार्यक्रम से बाहर रखा गया था। बहरहाल, शरणार्थी शब्द को राष्ट्रीय एड्स नियंत्रण नीति III में शामिल कर लिया गया है। इस नई नीति के तहत भारत में रहने वाले शरणार्थी भी एचआईवी/एड्स से संबंधी वे सभी स्वास्थ्य सुविधाएं प्राप्त कर सकेंगे, जो आम नागरिकों को मिलती है। ये उम्मीद की जा सकती है कि इस परिप्रेक्ष्य में उनके साथ कोई भेदभाव नहीं बरता जायेगा।

मुकदमों का सारांश

1. **एन बनाम राज्य के गृहविभाग का सचिव, [2005], यूकेएचएल 31, (यूनाइटेड किंगडम) :** एक युगांडाई नागरिक 'एन', यूके में एड्स की जटिल स्थिति (सीडी–4 गणना : 10) के साथ पहुंचती है।

32 रिट पिटीशन (क्रिमिनल) 583/1992

33 2002 (2) एससीसी 465

'एन' को शरण नहीं दी जाती है और वह इसके खिलाफ अपील इस आधार पर करती है कि उसका युगांडा वापस भेजा जाना 1998 के मानवाधिकार अधिनियम के अनुच्छेद–3 के अंतर्गत प्रदान अधिकारों (अमानवीय अथवा अपमानजनक व्यवहार अथवा दंड से स्वतंत्रता) का उल्लंघन है। वह एड्स से पीड़ित थी और उसने दावा किया कि उसके आवेदन को ठुकराने से उसे युगांडा वापस जाना पड़ेगा जिससे वह चिकित्सीय सहयोग से वंचित हो जायेगी और उसके इलाज की दर धीमी हो जायेगी तथा उसका जीवन काल सीमित हो जायेगा।

न्यायालय ने यह कहा कि अनुच्छेद–3 की व्याख्या इस प्रकार नहीं की जा सकती कि (संधि में शामिल) राज्य दुनियाभर के एड्स पीड़ितों को स्वीकार करने और उनका इलाज जीवन भर करवाने के लिए बाध्य है। वे व्यक्ति, जिन्हें देश से निकाला जा रहा है, वे देश में रहने के लिए इस आधार पर दावा नहीं कर सकते हैं कि मेजबान देश द्वारा उपलब्ध करायी जा रही चिकित्सकीय, सामाजिक या अन्य किसी तरह का सुविधाएं जारी रखने के लिए उन्हें वहां बने रहना जरूरी है। एक अपवाद की स्थिति के लिए जहां निकाले जाने को चिकित्सीय आधार पर रोका जा सके। परंतु इसके लिए स्थितियां अपवाद जैसी होनी चाहिए। यह जांच करने के लिए कि परिस्थितियां 'अपवाद' जैसी हैं कि नहीं यह ध्यान में रखना होगा कि आवेदक की चिकित्सीय अवस्था ऐसे स्तर पर तो नहीं पहुंची जहां से उसे मानवतावादी आधारों पर ऐसी जगह नहीं भेज सकता जहां उसे ऐसी चिकित्सीय और सामाजिक सेवा में नहीं मिले जिसकी उसे इस पीड़ादायक स्थिति से उबरने के लिए आवश्यक है।

2. **जेटी बनाम राज्य के गृह मंत्रालय सचिव, [2005], ईडब्ल्यूसीए, सीव. 1425 (यूनाइटेड किंगडम)]:** जेटी, जो जिमबाब्वे की एक महिला है, कानूनी तरीके से यूके में प्रविष्ट करती है और जांच में एचआईवी प्रभावित पाई जाती है। वह अपना इलाज यूके में प्रारंभ करवाती है और उसकी बीमारी को आगे फैलने से सफलतापूर्वक रोक दिया जाता है। वह अपने वापस भेजे जाने के आदेश को यूरोपीय कन्वेंशन के अनुच्छेद–3 और 8 के आधार पर चुनौती देती है। यह कन्वेंशन कहता है कि "कोई भी अमानवीय तथा अपमानजनक व्यवहार का शिकार नहीं होगा" और यह भी कि "सभी को अपने पारिवारिक तथा निजी जीवन, घर तथा पत्राचार के सम्मान का अधिकार है।

   पिछले मुकदमे से संबंधित कानून का पालन करते हुए यूके की अपीलीय कोर्ट ने यह फैसला जारी रखा कि जब तक कि 'अपवाद परिस्थितियां' न हो व्यक्ति को ऐसे देशों में भेजा जा सकता जहां इलाज प्रभावित हो या रुक जाये और ऐसी अपवाद परिस्थितियां हैं : बीमारी की गंभीर अवस्थायें या बिलकुल अमानवीय तरीके का व्यवहार और वंचितता। न्यायालय ने कहना जारी रखा कि "अनुच्छेद राज्यों के लिए यह आवश्यक नहीं करता कि वह सभी अनजाने लोगों को अनंत काल तक चिकित्सा मुहैया कराये जो उसके गृह देश में अनुपलब्ध हो।" न्यायालय ने यह भी कहा कि पीड़ित को अनुच्छेद–8 के तहत मिले अधिकारों का भी उल्लंघन नहीं हुआ है क्योंकि जेटी के अधिकारों की कोई 'निन्दनीय या बुनियादी' उल्लंघन नहीं हुआ और यह कोई 'विशेष परिस्थिति' भी नहीं है, जिसके लिए उसे राहत प्रदान की जाये।

3. **सीए बनाम राज्य के गृह विभाग का सचिव, [2004], ऑल ईआर(डी) 354 (सीए) (यूनाइटेड किंगडम)** : घाना की एक गर्भवती महिला सीए ने यूके में शरण के लिए अपील की और कहा कि उसको बलपूर्वक घाना भेजने पर उसके पास अपने बच्चे को स्तनपान कराने के अलावा कोई विकल्प नहीं बचेगा जिससे बच्चे को एचआईवी संक्रमण होने का खतरा रहेगा। उसका यह दावा मानवाधिकारों पर यूरोपीय कन्वेंशन के अनुच्छेद–3 पर आधारित था। न्यायालय ने यह कहा कि यद्यपि अनुच्छेद–3

का दावा मां के मामले में खारिज हो जाता है परंतु यह अजन्मे शिशु के अनुच्छेद–3 के अंतर्गत प्राप्त अधिकार का उल्लंघन होगा अगर मां को बलात् घाना वापस भेजा गया।

4. **हेलविद्ज बनाम कनाडा, डी जोन्ग बनाम कनाडा 2005, एससीसी 57 (कनाडा)** : दो परिवारों ने जिनकी आर्थिक स्थिति अच्छी थी और जिनके परिवार में मानसिक रूप से अपंग एक बच्चा था, कनाडा के इमीग्रेशन कानूनों के तहत स्थायी प्रवास के लिए आवेदन किया। बहरहाल इस एक्ट का खंड 19 (1) (ए) (ii), यद्यपि वैसे लोगों को स्थायी रूप से रहने की अनुमति नहीं देता जो किसी तरह अपंगता के शिकार हैं जिसके कारण, चिकित्सा अधिकारी के अनुसार, "स्वास्थ्य अथवा तथा सामाजिक सेवाओं पर अधिक मांग का बोझ पड़ सकता हो या पड़ने की तार्किक संभावना हो।" अधिकारी द्वारा सम्मत भी है। इन परिवारों की कनाडा में स्थायी प्रवास की मांग इस आश्वासन के बावजूद कि बच्चों का भार कानाडाई सामाजिक तंत्र पर नहीं डाला जायेगा, ठुकरा दी गई। न्यायालय ने यह कहा कि स्थायी प्रवास के आवेदन पर उचित ढंग से विचार नहीं किया गया। कोर्ट ने यह माना कि इमीग्रेशन एक्ट से संबंधित मामलों का मूल्यांकन करते समय चिकित्सीय तथा गैर–चिकित्सीय दोनों घटकों (जैसे कि व्यक्तिगत स्थितियां तथा आर्थिक स्थिति) का भी ध्यान रखना चाहिए।

5. **डेल्गाडिलो बनाम कनाडा (नागरिकता तथा इमीग्रेशन संबंधी मंत्री)** [2004] एफसीजे न. 651 (एफसी): डेल्गाडिलो एक मैक्सिकन समलैंगिक था, जिसे अपने देश से समलैंगिकता विरोधी घटनाओं के कारण बलात् बाहर कर दिया गया था। डेल्गाडिलो ने यह महसूस किया कि उसका कार्यस्थल समलैंगिकता विरोधी है, जो धारणा इस घटना से भी पुष्ट होती है जिसमें पुलिस ने उससे उसकी यौन स्थिति सार्वजनिक कर देने की धमकी देकर पैसा वसूला। डेलगाडिलो कनाडा में प्रवेश कर गया, पर आवर्जन तथा शरणार्थी बोर्ड ने उसके शरणार्थी होने के दावे को इस कारण पर खारिज कर दिया क्योंकि उसके पास एक आंतरिक उड़ान विकल्प था, उसके मामले में मैक्सिको, जहां वह जा सकता था। मैक्सिको सिटी एचआईवी संक्रमित या इंद्रिय परितंत्र लोगों के लिए आंतरिक उड़ान विकल्प नहीं था अतः आईआरबी ने उसके दावे को दोनों में से किसी में भी शामिल करने से मना कर दिया। कनाडा की संघीय न्यायालय ने इस फैसले को बरकरार रखा।

6. **टी बनाम राज्य के स्वास्थ्य विभाग का सचिव,** [2002], **ईडब्ल्यूजे न. 4089, (2002, ईडब्ल्यूएचसी 1887 (एडमीन.) सीओ/2042/2002 (यूनाइटेड किंगडम)** : टी एक एचआईवी संक्रमित इथोपियाई नागरिक थी, जिसने यूके में एचआईवी संक्रमित कन्या को तब जन्म दिया जब उसको शरण देने की प्रक्रिया लंबित थी। नये सामाजिक सुरक्षा अधिनियम और उसकी प्रवासी स्थिति के कारण, जो धन उसे मिला वह उसके भरण–पोषण के खर्च के लिए पर्याप्त नहीं था, और वह अपने बच्चे के लिए दूध खरीदने में अक्षम थी। टी ने कन्वेंशन के अनुच्छेद–2, 8 और 14 के तहत शरण मांगने वालों की इस भत्ता योजना को कोर्ट में चुनौती दी। न्यायालय ने यह पाया कि 'अमुक' की स्थिति 'विशेष परिस्थिति' थी क्योंकि इसमें मां से बच्चे को संक्रमण फैलने की संभावना थी अगर वह दूध प्राप्त करने में अक्षम होती और यह कहा कि बचावकर्ता विभाग एचआईवी संक्रमण के खतरे को महसूस करने में असफल सिद्ध हुआ है। यह मानते हुए कि अप्रवासी होने के कारण भिन्न बर्ताव करना भेदभाव है, विशेषतौर पर कोर्ट ने पाया कि अनुच्छेद–14 का उल्लंघन किया गया है। कोर्ट ने अनुच्छेद 8 के अनुसार सरकार को इसके लिए बाध्य नहीं माना। अनुच्छेद–2 सरकार के लिये इन दो आधारों पर आवश्यक नहीं बनाता कि वह दुग्ध टोकन उपलब्ध कराये, क्योंकि इलाज तथा हानि सुरक्षित अधिकारों की परिधि से कहीं दूर है।

7. **बोअर सेडानो बनाम गोंजालेज, 418 एफ 3डी 1082 (9वां सर्किट, 2005) (यूनाइटेड स्टेट्स) :** बोअर–सेडाने का उसके परिवार, साथ काम करनेवालों द्वारा बहिष्कृत कर दिया गया तथा उसे पुलिस के अधिकारियों के साथ मुख मैथुन करने के लिए बाध्य किया गया। उसे प्रताड़ित, शोषित किया गया तथा जान से मारने की धमकियां दी गई। यूएस में पर्यटक वीजा पर आने के बाद उसे एचआईवी जांच में पॉजिटिव पाया गया। बोअर–सेडाने की शरणार्थी की स्थिति की मांग करने वाली अपील को चुनौती देने वाली याचिका पर न्यायालय ने यह कहा कि विदेशी समलैंगिक एक अलग सामाजिक वर्ग है, कि उसके अनुभव प्रताड़ित होने की एक ठोस संभावना को जन्म देते हैं, और उसे मैक्सिको भेजने का कदम तार्किक विकल्प नहीं है। न्यायालय ने यह भी कहा कि चिकित्सीय प्रमाण यह इंगित करते हैं कि एड्स का इलाज मैक्सिको में उपलब्ध नहीं था, और एचआईवी/एड्स के प्रति भेदभाव के चलते वह रोजगार प्राप्त नहीं कर पाएगा जिससे उपयुक्त स्वास्थ्य देखभाल या आय नहीं मिल सकेगी जो उसकी स्थिति में इलाज के लिए आवश्यक है।
8. **कीबानुका बनाम इमीग्रेशन अधिकारी (2002), ईडब्ल्यूएचसी 2013 (एडमीन), सीओ/881/00):** कीबानुका एक युगांडाई नागरिक था जो यूके में बने रहने के लिए आवेदन करती है। यहां पहुंचने के बाद वह एचआईवी जांच में पॉजिटिव पाई जाती है। वह दो आधारों पर अपने को शरण न दिये जाने को चुनौती देती है– इमीग्रेशन नीतियों की न्यायिक पुनर्समीक्षा और कन्वेंशन के अनुच्छेद–3 के तहत दी गई चुनौती। कोर्ट ये कहता है कि दोनों विकल्पों में से, अनुच्छेद–3 के अंतर्गत दी जाने वाली चुनौती उसके मामले में ज्यादा लाभप्रद प्रतीत होती है, जिसमें मरीज आवेदक की चिकित्सीय अवस्था जैसे मुद्दे को भी संज्ञान में लिया जाता है। इसके फलस्वरूप न्यायालय ने उसे अपने प्रवास को जारी रखने के लिए, कन्वेंशन के अनुच्छेद–3 के तहत अनुमति प्रदान कर दी। (पूरा पाठ उपलब्ध नहीं है)

खंड-छह

दीवानी एवं आपराधिक कानून और एचआईवी/एड्स

अध्याय 14 : जानबूझकर या असावधानीवश एचआईवी/एड्स का संचरण

14

जानबूझकर या असावधानीवश एचआईवी/एड्स का संचरण

एचआईवी/एड्स तथा मानवाधिकार पर अंतर्राष्ट्रीय दिशा–निर्देश[1] कहते हैं कि एचआईवी/एड्स प्रभावित लोगों को, सिर्फ उनके संक्रमण प्रभावित होने के आधार पर ही, अपराधीकरण या अन्य ज्यादतियों का शिकार नहीं बनाना चाहिए। एचआईवी/एड्स तथा एचआईवी/एड्स प्रभावित/संक्रमित व्यक्तियों के संबंध में काम कर रहे कई संगठन एचआईवी/एड्स के साथ रह रहे लोगों [अब से] के बढ़ते अपराधीकरण से चिंतित हैं। व्यक्तियों पर, सिर्फ उनके एचआईवी प्रभावित होने के चलते, बाध्यकारी प्रावधान लगा देना उनके बुनियादी मानव अधिकारों का उल्लंघन करता है।[2]

एचआईवी/एड्स की महामारी की खोज होने के समय से ही, एचआईवी के प्रसार को रोकने के लिए संक्रमण से प्रभावित लोगों पर तमाम बंदिशें लगाने की आवाजें उठती रही हैं। कई न्यायिक मामलों में, एचआईवी पॉजिटिव लोगों पर ऐसे आचरण के लिए, जो संक्रमण का संचरण कर सकता है या करने के जोखिम पैदा करता है, आपराधिक आरोप तथा बंदिशें लगायी गयी हैं।[3] एचआईवी के दूरगामी परिणामों के चलते, एचआईवी/एड्स के संचरण के अपराधीकरण से संबद्ध मामले सामने आये हैं। अब तक, एचआईवी/एड्स के संचरण करने या उसके संपर्क में लाने के अपराध में वास्तविक दंड के मामले प्रमुखतः विकसित देशों में ही देखे गए हैं जबकि और जगहों पर इनकी संख्या कम है। बहरहाल, हाल ही के कुछ वर्षों में कई विकासशील देशों तथा संक्रमण (बदलाव) के दौर से गुजर रहे देशों में, एचआईवी के संचरण या संपर्क में लाने के अपराधीकरण को ज्यादा तवज्जो दी जाने लगी है।[4] हाल के वर्षों में, पर्याप्त विश्वसनीय सबूत यह दिखाते हैं कि एचआईवी संचरण के लिए दंड दिए जाने के मामलों में यूरोप भर में तेजी आयी है, विशेष तौर पर फिनलैंड, नीदरलैंड, स्वीडन तथा यूनाइटेड किंगडम में ऐसे मामलों की एक पूरी की पूरी श्रृंखला ही

---

1 ओएचसीएचआर.तथा यूएनएड्स, 1998 द्वारा प्रकाशित

2 क्रिमिनल लॉ, पब्लिक हेल्थ एंड एचआईवी ट्रान्समिशन : ए पॉलिसी ऑप्शन पेपर, 2002 रिचर्ड ईलियट द्वारा

3 डर्बन 2000 क्रिमिनल लॉ एंड एचआईवी/एड्स : स्ट्रेटजिक कन्सीडरेशन्स, ए डिस्कशन पेपर, रिचर्ड ईलियट, कनाडियन एचआईवी/एड्स लीगल नेटवर्क

4 वही 1

है।[5] फौजदारी कानूनों के प्रावधान भी जटिल हैं क्योंकि दोषी की मानसिक स्थिति जैसे कि मंतव्य का सबूत, लापरवाही तथा बचावकर्ता की ओर से तथ्य की गलती की अनुपस्थिति, जैसे मामलों में भी बहुत जटिलता होती है।

कारकों की सीमा पर निर्भर करते हुए, आपराधिक संचरण के आरोपों को हत्या, हत्या का प्रयास, नरसंहार, समान हमला (समूह में हमला), वास्तविक शारीरिक क्षति पहुंचाने वाला हमला, गंभीर शारीरिक क्षति या घाव पहुंचाने की नीयत से किया जाने वाला हमला, असावधानीवश चोट पहुंचाना, एक गंभीर शारीरिक बीमारी लगा देना, हानि पहुंचाने की नीयत से एक हानिकारक चोट बदलने के लिए दूसरी देना तथा लापरवाही से जीवन को खतरे में डालने वाला आचरण में से किसी के अंतर्गत भी रखा जा सकता है। विभिन्न देशों में विभिन्न कानूनों के तहत एचआईवी के संचरण को अपराध माना जाता है।

अंतर्राष्ट्रीय विधि परिदृश्य

यूके में, आपराधिक कानून एक ही संहिता के अंतर्गत नहीं आते हैं बल्कि इनमें सामान्य कानून तथा कई व्यक्तिगत दंडकारी अध्यादेश, जैसे ऑफन्स अगेन्स्ट द पर्सन एक्ट 1861 शामिल हैं। मौजूदा वक्त में, यूके लॉ कमीशन चरणों में लागू किए जाने को प्रस्तावित एक विस्तृत आपराधिक संहिता के निर्माण में व्यस्त है।[6] अब तक, इंग्लैंड और वेल्स में एचआईवी संचरण के चार सफल अभियोजन हुए हैं जिनमें से दो अपील में परिणत हुए।[7] आर. बनाम डीका के मामले में, मोहम्मद डीका को 2003 में दोषी पाया गया तथा एक अपील के बाद, उसे अन्ततः दोषी करार दिया गया तथा 4 वर्ष 6 महीने के कारावास की सजा सुनाई गई।[8] डीका लन्दन का एक एचआईवी संक्रमित व्यक्ति था जिसे तब अभियोजित किया गया जब उसकी सहभागी ने उस पर आरोप लगाया कि उसने अपनी एचआईवी संक्रमित होने की बात बताये बिना उसे अपने साथ असुरक्षित यौन संबंध बनाने के लिए मनाया।

फेस्टन कोन्जानी[9] को मार्च 23, 2005 में दोषी करार दिया गया और 10 वर्ष कारावास की सजा सुनाई गयी। इस केस में, अपील का एक आधार कोजानी का यह तर्क था कि उसके साथ असुरक्षित यौन संबंध बनाने की सहमति का यह अर्थ भी निकलता है कि सहमति कर्ता ऐसे संभोग के साथ जुड़े सभी जोखिमों से भी सहमत है। अदालत ने इसे खारिज कर दिया तथा यह स्पष्टीकरण दिया कि ऐसे शारीरिक संबंधों के लिए जहां एक सहभागी अपने एचआईवी प्रभावित होने के बारे में जानता/जानती हो, दूसरे भागीदार की सहमति के लिए यह आवश्यक है कि उसे अपने एचआईवी प्रभावित भागीदार की वास्तविकता के बारे में "जानकारी दी जाये"। अदालत ने कहा कि शारीरिक संबंधों में, किसी व्यक्ति का इस तथ्य को छुपाना कि वह एचआईवी संक्रमित है, धोखेबाजी का कारण बनता है। अदालत ने कहा, "हम यह मानते हैं कि जहां सहमति व्यक्ति के खिलाफ किए गए एक कृत्य के मामले में बचाव उपलब्ध कराती है, वहीं सामान्यतः यह कहना भी सही है कि कथित पीड़ित की सहमति में प्रतिवादी का (निष्कपट) सरल विश्वास भी एक बचाव

---

5 टीएचटी तथा जीएनपी + यूरोप. जीएनपीप्लस. नेट द्वारा किया गया शोध. क्रिमिनलाइज़ेशन ऑव एचआईवी ट्रान्समिशन इन यूरोप. ए रैपिड स्कैन एंड रेट्स ऑव प्रासीक्यूशन फॉर एचआईवी ट्रान्समिशन विदिन सिग्नेटरी स्टेट्स ऑव द यूरोपियन कन्वेंशन ऑव ह्यूमन राइट्स. http://www.gnpplus.net/criminalisation/intro.shtml

6 क्रिमिनल लॉ एंड एचआईवी/एड्स : फाइनल रिपोर्ट बाई रिचर्ड ईलियट
कनाडियन एचआईवी/एड्स लीगल नेटवर्क एंड कनाडियन एड्स सोसाइटी, मॉन्ट्रीयल, 1996
आईएसबीएन 1896735 080 8.

7 द क्रिमिनलाइजेशन ऑव एचआईवी ट्रांसमिशन इन इंगलैंड एंड वेल्स : क्वेश्चन्स ऑव लॉ एंड पॉलिसी' एचआईवी/एड्स पॉलिसी एंड लॉ रिव्यू (अगस्त 2005) वीइट, मैथ्यू और आजाद, यूसफ द्वारा

8 आर बनाम डीका (2005) ईडब्ल्यूसीए क्रिम 2304 (कोर्ट ऑव अपील क्रिमिनल डिविजन)

9 2005, ईडब्ल्यूसीए क्रिम 706

उपलब्ध करायेगा। बहरहाल, इस काम के लिए प्रतिवादी के सरल विश्वास को बचाव उपलब्ध कराने वाली सहमति का सहगामी होना चाहिए। जब तक कि सहमति एक बचाव उपलब्ध नहीं कराती है, उसमें सरल विश्वास प्रतिवादी की मदद नहीं कर पाएगा।"

अदालत ने यह भी माना कि यह भेद छिपाया जाना लापरवाहीपूर्ण भी है, जो कि अगर क्राउन द्वारा सिद्ध कर दिया जाता है, तो संभोग के जरिए एचआईवी संचरण की स्थिति में गम्भीर शारीरिक क्षति पहुंचाने के आरोप को सिद्ध करने के लिए आवश्यक जरूरतों के लिए पर्याप्त होगा। वे सभी जिनके खिलाफ मुकदमा चला उन्हें 1861 के ऑफेन्सिज अगेन्स्ट द पर्सन्स एक्ट की धारा–20 के तहत अभियुक्त बनाया गया या दोषी ठहराया गया।[10]

धारा–20 के तहत दोषी ठहराये जाने के लिए आवश्यक गलती है वैयक्तिक (कर्ताकारक) लापरवाही। सामान्य सिद्धांत के लिए, एक व्यक्ति अंग्रेजी कानून की धारा–20 के उद्देश्यों के लिए तब लापरवाह होता है जब वह किसी सीमा की शारीरिक क्षति पहुंचाने के जोखिम के बारे में जानता/जानती है, और उसके बावजूद ये जोखिम उठाता/उठाती है। धारा–20 के अंतर्गत गलती का तत्व लापरवाही है।[11] यह तब होता है जब एचआईवी जानबूझकर की गई हरकत से नहीं बल्कि एक लापरवाही से संचरित होता है। उदाहरण के लिए अगर एक व्यक्ति, जिसे पता है कि उसे एचआईवी है, एक एचआईवी निगेटिव व्यक्ति के साथ शारीरिक संबंध बनाता है और उसे इस मामले से संबंधित जोखिमों के बारे में सूचना नहीं देता है, तो इसे कानून के तहत लापरवाही से किया गया संचरण का मामला माना जाएगा।

जानबूझकर संचरण करने के मामले उन व्यक्तियों (एचआईवी पॉजिटिव तथा निगेटिव दोनों) से संबंधित थे जिन्होंने जानबूझकर पूरी नीयत से दूसरों को एचआईवी संक्रमित करने के लिए सुइयों या दूसरे उपकरणों का इस्तेमाल किया हो।[12] मंतव्य का महत्व यह है कि कृत्य के द्वारा प्रस्तुत किया गया वास्तविक जोखिम ही हमेशा निर्णायक नहीं होता है, बल्कि कृत्य की संगीनता व्यक्ति के हानि पहुंचाने के मंतव्य से तय होती है जिसके चलते वह, वह कृत्य करता/करती है जो कि उसे विश्वास है कि इच्छित हानि पहुंचा सकता है। अतः कानून के अनुसार, एक व्यक्ति जो लापरवाही में जरूरी सावधानी लेने में असफल रहने के चलते दूसरे को एचआईवी संक्रमित कर देता है, उस व्यक्ति की तुलना में छोटा अपराध करता है जो कि किसी दूसरे के ऊपर इस विश्वास से थूक देता है कि ऐसा करने से वह व्यक्ति एचआईवी संक्रमित हो जाएगा।[13]

कनाडा की आपराधिक संहिता में वर्तमान में ऐसा कोई प्रावधान शामिल नहीं है जो कि एचआईवी के संचरण या किसी दूसरे व्यक्ति को संक्रमण के संपर्क में लाने के अपराध को खुले तौर पर या विशेष तौर पर वर्णित करता हो। बहरहाल, वर्तमान सामान्य आपराधिक कृत्यों के अंतर्गत ही अभियोजन के कुछ मामले सामने आये हैं।[14] कनाडा में, एक एचआईवी संक्रमित व्यक्ति द्वारा रक्तदान किए जाने के मामले में[15] और कुछ व्यक्तियों को असुरक्षित यौन संबंधों द्वारा संक्रमित किये जाने के मामलों में, सामान्य हानि अधिनियम

10 एस20. कोई भी जो अवैधानिक तथा दुर्भावनापूर्ण रूप से किसी व्यक्ति को, किसी हथियार या उपकरण द्वारा अथवा उसके बिना, घायल करने अथवा कोई गंभीर शारीरिक क्षति पहुंचाने का प्रयत्न करेगा, एक अपराध का आरोपी माना जाएगा, तथा दोषी पाये जाने पर .....दंड की शरण में जाने के लिए बाध्य होगा.....

11 उपरोक्त टिप्पणी नोट 7

12 क्रिमिनल, डेलिबरेट एंड रेकलेस ट्रान्समिशन. http://www.avert.org/criminal-transmission/htm

13 इवेल्युटिंग द इम्पैक्ट ऑव क्रिमिनल लॉ ऑन एचआईवी रिस्क बिहेवियर, जीटा, लज्जारिनी. जेडीएमपीएच, सूसन ब्रे जेडी (कैण्ड.), स्कॉट बुरिस, जेडी. पृ. 3

14 क्रिमिनल लॉ एंड एचआईवी/एड्स : फाइनल रिपोर्ट, रिचर्ड ईलियट द्वारा कनाडियन एचआईवी/एड्स लीगल नेटवर्क एंड कनाडियन एड्स सोसाइटी, मॉन्ट्रियल, 1996, आईएसबीएन 1896735 08 8.

15 आर बनाम थोर्नटन 21 सी.आर. (चौथा) 215

लगाया गया है।[16] सेन्योंगा में,[17] अदालत ने सामान्य हानि के आरोपों को इस आधार पर खारिज कर दिया कि कुछ विशिष्ट व्यक्तियों के साथ शारीरिक संबंधों से "जनता" के स्वास्थ्य को सामान्यतः कोई नुकसान नहीं पहुंचता। बहरहाल, न्यूफाउन्डलैंड के एक न्यायालय ने इस निष्कर्ष को यह कहते हुए खारिज कर दिया कि "विशिष्ट व्यक्ति जनता के सदस्य हैं तथा इस बात से फर्क नहीं पड़ता है कि जान बूझकर असुरक्षित यौन संबंध एक व्यक्ति से बनाये गये हैं, या एक हजार, अथवा 10 लाख सदस्यों से।"[18]

आस्ट्रेलिया में, फौजदारी तथा दीवानी, दोनों प्रकार के कानून राज्यों/क्षेत्रों में भिन्न–भिन्न हैं। बहरहाल, इनके बुनियादी तत्व सभी न्यायाधिकारों में एक समान हैं। कुछ न्यायिक क्षेत्रों, सार्वजनिक स्वास्थ्य विधेयकों में एचआईवी संचरण के प्रावधान शामिल होते हैं, जबकि कुछ अन्य के विधेयकों में संक्रमण वाली बीमारियों के संबंध में व्यापक आपराधिक आरोप होते हैं, जिन्हें एचआईवी के मामलों में लागू किया जा सकता है। कुछ न्यायाधिकारों में फौजदारी कानून संहिताबद्ध है; जबकि अन्य में, यह अध्यादेश तथा सामान्य कानून का मिश्रण होता है।[19]

जर्मनी में, उच्च स्तर के न्यायालयों द्वारा दिए गये कुछ फैसलों में एचआईवी पॉजिटिव लोगों द्वारा, बिना अपनी वास्तविकता प्रकट किए, अन्य लोगों के साथ शारीरिक संबंध बनाने के मामलों को देखा गया है; वह भी वैध सहमति की सफाई के साथ। 1988 में, कनाडा में एक मामले में जिसमें कुरियर मामले से कुछ समानताएं थीं, संघीय उच्चतम न्यायालय (बुन्देसगे रिस्टशॉप) ने एक एचआईवी पॉजिटिव अमरीकी सैनिक की सजा को बरकरार रखा जिस पर अपने सहभागियों को अपनी एचआईवी वास्तविकता बनाये बिना तथा उपयुक्त बचाव उपाय किए बिना, शारीरिक संबंध बनाकर एचआईवी संचरण करने के चलते उग्र हमला करने के प्रयास का आरोप लगाया था।[20] जर्मन फौजदारी कानून के तहत, उग्र यौन हमले के प्रयास में अभियोजित किए जाने के लिए, यह आवश्यक नहीं है कि यह सिद्ध किया जाए कि शारीरिक संबंधों के भागीदारों का जीवन वाकई खतरे में था।[21] न्यायालय ने पाया कि प्रतिवादी ने इरादे (मंतव्य) के साथ अपने सहभागी को, अपनी शारीरिक जरूरतों को पूरा करने के लिए, खतरे में डाला था। यह कहा गया कि प्रतिवादी ने सीमित मंतव्य के साथ काम किया था, मतलब हो सकता है कि उसने वास्तव में अपने साथियों को नुकसान पहुंचाने के इरादे से काम न किया हो, पर उसने जानबूझकर वे तथ्य छिपाये जिनके बारे में उसे जानकारी थी।[22]

न्यूजीलैंड ने ऐसा कोई विशेष आपराधिक विधेयक नहीं बनाया है जो एचआईवी के संचरण को संबोधित करता हो। बहरहाल, एक व्यक्ति को वर्तमान कानून के तहत अभियोजित किया गया है।[23] पर एक हाल ही के मुकदमे में वेलिंग्टन न्यायालय ने यह निर्णय दिया कि एचआईवी पॉजिटिव व्यक्तियों को अपनी एचआईवी संबंधित वास्तविकता अपने साथियों के सामने तब प्रकट करने को कोई आवश्यकता नहीं है जब वे कंडोम का इस्तेमाल कर रहे हों। महत्वपूर्ण यह है कि यह मामला 'संपर्क में लाने' से संबंधित था, 'संचरण' से नहीं, मतलब महिला के एचआईवी नहीं हुआ था।[24] न्यूजीलैंड में सुने गये पिछले सभी मुकदमों में (जिनमें संपर्क

---

16 आर बनाम समर 73 सीआर (तीसरा) 32

17 आर बनाम सेन्योंगा 73 सीसीसी (तीसरा) 216 (ओन्ट सीटी प्रोव डिव)

18 आर बनाम होलिहन (1998) एनजे एनओ. 176 (एनएफआईडी प्रोव सीटी) (क्यूएल)

19 उपरोक्त टिप्पणी नं. 7

20 बीजीएसटी (अर्थात्, एंट्शीडुन्गेन डेस बुन्देसगेरिष्टशॉफ्स इन स्ट्राफ्टाशेन, डिशीजन्स ऑव द क्रिमिनल लॉ सेक्शन द फेडरल सुप्रीम कोर्ट), वॉल्यूम 36 एट 1 एसईक्यू एचआईवी/एड्स एंड द लॉ, एचआईवी/एड्स एंड लीगल डेवलपमेन्ट्स इन जर्मनी, वॉल्यूम 6, सं. 1/2, 2001 से उद्धृत

21 वही

22 वही

23 आर बनाम मवाई (1995) 3 एनजेडएलआर 149

24 न्यूजीलैंड पुलिस बनाम डेली (4 अक्टूबर 2005), सीआरआई–2004–085–009168 (न्यूजीलैंड)

में लाने तथा संचरण के मुकदमे भी शामिल हैं), कंडोम का इस्तेमाल नहीं किया गया था।[25] यह मुकदमा एचआईवी के संचरण को रोकने में एचआईवी पॉजिटिव व्यक्ति की जिम्मेदारी को स्पष्ट करता है।

नीदरलैंड के सर्वोच्च न्यायालय ने यह फैसला दिया कि एक एचआईवी पॉजिटिव व्यक्ति, बिना अपनी एचआईवी वास्तविकता को प्रकट किये असुरक्षित मुख तथा गुदा मैथुन करने की स्थिति में, गंभीर शारीरिक क्षति पहुंचाने का दोषी नहीं ठहराया जा सकता। इस मुकदमे में न्यायालय ने यह पाया कि साक्ष्य इस बात को साबित नहीं करते कि संक्रमण की एक "पारिस्थितिक संभावना" थी। डच कानून के तहत गंभीर शारीरिक क्षति के आरोपों की पुष्टि के लिए "परिस्थिति मंतव्य" के साक्ष्य की आवश्यकता होती है। पारिस्थितिक मंतव्य के अस्तित्व को तब माना जाता है जब अभियोजित व्यक्ति यह स्वीकार करे कि उसके कृत्य से वह हानि होने की "पर्याप्त संभावना" थी। न्यायालय ने चिकित्सकीय विशेषज्ञ के साक्ष्य का हवाला देते हुए कहा कि इस मामले की तरह ही, एक एचआईवी पॉजिटिव व्यक्ति द्वारा बिना कंडोम के दूसरे व्यक्ति की गुदा में लिंग प्रविष्ट कराने से एचआईवी संचरण होने की संभावना, 500 में से एक मामले में होती है; असुरक्षित मुख मैथुन से ऐसा होने की संभावना काफी कम है।[26]

भारतीय वैधानिक (कानूनी) परिदृश्य

संचरण का असावधानीपूर्ण या दुर्भावनापूर्ण कृत्य

एचआईवी/एड्स तथा मानवाधिकारों पर संयुक्त राष्ट्र के दिशा–निर्देश आपराधिक कानून के मुद्दे को विशेष तौर पर संबोधित करते हैं। यह राज्यों को यह सलाह देता है कि यह सुनिश्चित करायें कि अगर वे एचआईवी संचरण करने वाले या संचरण का खतरा पैदा करने वाले आचरण पर आपराधिक धाराएं लगाते हैं, तो "इस अनुप्रयोग को यह सुनिश्चित करना होगा कि अनुमान, मंतव्य, कारण तथा सहमति के तत्वों को स्पष्टतः तथा कानूनी तौर पर स्थापित कर लिया गया है ताकि दोषी ठहराये जाने के फैसले तथा/अथवा कठोर दंड को समर्थन दिया जा सके।"[27]

भारत में, एचआईवी/एड्स के संचरण के लिए, भारतीय दंड संहिता के अंतर्गत कोई भी आपराधिक अभियोजन नहीं हुआ है। बहरहाल, एचआईवी/एड्स के लापरवाहीपूर्ण और मंतव्यपूर्ण संचरण पर चिंता बढ़ रही है। भारत में, एचआईवी/एड्स के संचरण का प्रमुख तरीका मैथुन ही है। इस तरह के विस्तृत प्रमाण हैं जब पति/पत्नी को अपने एचआईवी संक्रमित होने के बारे में पता था, पर वह अपने जीवनसाथी को इसके बारे में बता पाने में असफल रहा, जिसके परिणामस्वरूप जीवनसाथी को भी संक्रमण हो गया। इसी तरह, एक जीवनसाथी विवाह के बाद संक्रमित हो गया तथा दूसरे को इसके बारे में नहीं बता सका, जिससे दूसरा एचआईवी/एड्स संचरण के संपर्क में आने के जोखिम में आ गया।

एचआईवी संचरण को अपराध स्थापित करने के लिए जानकारी/अनुमान, मंतव्य, कारण तथा सहमति को उपस्थित तथा वैधानिक रूप से सिद्ध होना चाहिए। पर एचआईवी/एड्स संचरण के संदर्भ में इन चार तत्वों को स्थापित करना आसान नहीं है, जैसा कि निम्नलिखित खंडों में दिए गये मामलों से स्पष्ट होता है।

---

25 एचआईवी आस्ट्रेलिया–लीगल सेक्शन, सेली कैमरून द्वारा, वॉल्यूम 5 नं 1 : जुलाई–सितम्बर 2006, http://www.afao.org.au/view_articles.asp?pxs=103&pxsc=127&pxsgc=139&pxa=ve&id=312 पर उपलब्ध

26 प्रासीक्यूशन सर्विसिज बनाम एए (18जनवरी 2005), द हेग एआर 1860 02659/03 (नीदरलैंड का सर्वोच्च न्यायालय). क्रिमिनल ट्रान्समिशन एंड एचआईवी ट्रान्समिशन और एक्सपोजरः फॉर न्यू केसिज वॉल. 10, नं. 2, अगस्त 2005 में उद्धृत http://www.aidslaw.ca/Maincontent/other-docs/Newsltter/vol10no22005/incourtrs.htm#IC7 पर उपलब्ध

27 यूएन हाइ कमिश्नर/सेन्टर फॉर ह्यूमन राइट्स एंड जॉइन्ट यूएन प्रोग्राम ऑन एचआईवी/एड्स (यूनएड्स). गाइडलाइन्स ऑन एचआईवी/एड्स एंड ह्यूमन राइट्स (गाइडलाइन 4). न्यूयार्क एंड जेनेवाः यूनाईटेड नेशन्स, 1998 (एचआर/पीयूबी/98/1).

जानकारी

अभियोजन को यह साबित करना होगा कि अभियोग के होने के समय, अभियुक्त को पता था या उसके पास यह मानने के पर्याप्त कारण थे कि वह एचआईवी पॉजिटिव है तथा उसका आचरण दूसरे व्यक्ति को संक्रमित कर सकता है। यह सामान्य कानून का एक सुस्थापित सिद्धांत है कि दोषी मनःस्थिति (मैन्सरिया) आपराधिक कृत्य का एक अनिवार्य घटक होता है। भारतीय दंड संहिता के तहत यह धारणा है कि दोषी मनःस्थिति अध्यादेशीय आपराधिक कृत्य का एक आवश्यक घटक है। परन्तु इसका खंडन कृत्य की रचना करने वाले अध्यादेश के स्पष्ट शब्दों या आवश्यक अभिप्राय से किया जा सकता है। पर सिर्फ यह कि अध्यादेश का उद्देश्य कल्याणकारी गतिविधियों को बढ़ावा देना है अथवा गंभीर सामाजिक बुराइयों को मिटाना है, अपने आप में या अपने आपसे इस प्रश्न का निर्णायक नहीं है कि दोषी मनःस्थिति के तत्व को कृत्य के घटकों में शामिल नहीं किया गया है। अतः पूरी भारतीय दंड संहिता में दोषी मनःस्थिति का सिद्धांत उपस्थित है; धारा–269 तथा 270 में एक विशिष्ट प्रकार की दोषी मनःस्थिति अर्थात् "दुर्भावनापूर्ण" अथवा 'लापरवाहीपूर्ण" शामिल है।

लापरवाही वह आचरण करने में हुई चूक है जो कि एक तार्किक व्यक्ति, जो ऐसी मान्यताओं के आधार पर चलता है, जो मानवीय मामलों का आचरण को नियन्त्रण करती हों, कर सकता हो, अथवा वह करना जो कि एक समझदार तथा तार्किक व्यक्ति नहीं करेगा।[28] एचआईवी संचरण के संदर्भ में, आपराधिक लापरवाही के अंतर्गत शामिल होगा– व्यक्ति द्वारा अपने एचआईवी पॉजिटिव होने की बात को प्रकट न कर पाना, अथवा विषाणु संचरण को कम करने के लिए आवश्यक सावधानियां बरत पाने में असफल रहना।[29] धारा–269 लापरवाही पूर्ण हरकतों के बारे में बात करती है जिनके चलते जीवन के लिए खतरनाक बीमारियों का संक्रमण फैल सकने की संभावना हो। यह आरोप कुछेक मामलों में लगाया गया है जिनमें सिफलिस और कॉलरा का संरचण शामिल है। अतः सहमति भारतीय दंड संहिता के तहत एक बचाव हो सकती है। कृष्णप्पा मेके. जो कि कॉलरा से पीड़ित था, रेलवे अधिकारियों को बिना अपनी स्थिति बताये ट्रेन से सफर करता है, तथा एम, जो कि के. की हालत जानता था, उसकी टिकट खरीदता है तथा उसके साथ सफर करता है। मामले में यह माना गया कि के इस धारा के अन्तर्गत, जानबूझकर ऐसा काम करने का दोषी है जो कि संक्रमण फैला सकता था तथा एम के. के कृत्य को छिपाने का दोषी है।[30]

धारा–270 दुर्भावनापूर्ण कार्यों के बारे में बात करता है जो कि जीवन के लिए खतरनाक बीमारी के संक्रमण को फैला सकते हों; इस धारा के अंतर्गत आने वाला कृत्य 269 के तहत दंडनीय कृत्य का ही एक बड़ा रूप है। इस धारा में 'दुर्भावनापूर्ण' शब्द का उपयोग यह इंगित करता है कि संक्रमण फैलाने वाला व्यक्ति दुर्भावना से भरा हुआ होगा। यह शब्द अभियुक्त के ऊपर एक जानी–समझी (इच्छित) नीयत का आरोपण दिखाता है।[31] अगर एक व्यक्ति "जानता/जानती है कि वह एचआईवी पॉजिटिव है तथा जान–बूझकर किसी दूसरों को यह संक्रमण संचरित कर देता है तो यह प्रावधान लागू होगा। डीका में, न्यायालय ने यह माना कि एक व्यक्ति, जो यह जानता/जानती हो कि वह एचआईवी पॉजिटिव है, दूसरे को जिसे संक्रमण के बारे में नहीं बताया गया है, एचआईवी संचरित कर देता है, तो वह लापरवाह है। यह साबित करना आवश्यक नहीं था कि संचरण के अंतर्गत बीमारी "पहुंचाने" के लिए किया गया हमला शामिल था। उन्होंने यह माना कि एक

28 रतनलाल और धीरजलाल, द इंडियन पीनल कोड, 28 वां संस्करण, पुनः मुद्रण, 2002 (बाधवा एंड कंपनी, नागपुर) पृ. 322

29 क्रिमिनल लॉ एंड एचआईवी/एड्स : रिचर्ड ईलियट द्वारा फाइनल रिपोर्ट, कनाडियन एचआईवी/एड्स लीगल नेटवर्क एंड कनाडियन एड्स सोसाइटी, मॉन्ट्रियल, 1996

30 कृष्णप्पा, (1883) 7 मैड 276

31 रतनलाल और धीरा, द इण्डियन पीनल कोड, 28 वां संस्करण पुनः मुद्रित 2002, (बाधवा एंड कम्पनी नागपुर), पृ. 315

संबंध में, अनौपचारिक मैथुन के "ज्ञात जोखिमों" के मुकाबले, किसी व्यक्ति से अपनी सभी बातें प्रकट करने की उम्मीद के ऊंचे मानदंड हो सकते हैं।

बहरहाल, कैलीफोर्निया सर्वोच्च न्यायालय ने हाल ही में 4–3 से यह फैसला दिया कि एक एचआईवी पॉजिटिव महिला अपने उस शारीरिक संबंध के साथी पर मुकदमा कर सकती है जिससे उसे कथित तौर पर संक्रमण मिला, उस हालत में भी जबकि उस व्यक्ति को उस समय यह न पता रहा हो कि वह एचआईवी पॉजिटिव है। ब्रिजिट ने आरोप लगाया कि जॉन उनकी शादी से पहले और बाद में, कई पुरुषों के साथ असुरक्षित यौन संबंधों में लिप्त रहा। फिर भी उसने इस बात पर हमेशा जोर दिया कि वह स्वस्थ तथा एक ही साथी के प्रति वफादार है और उन दोनों को बिना कंडोम के मैथुन करना चाहिए।[32] न्यायालय ने यह आदेश भी दिया कि आदमी के शारीरिक संबंध से जुड़े इतिहास का एक हिस्सा, मुकदमे में प्रकट किया जाना चाहिए। यह करने में, न्यायालय ने एक और अधिक महत्वपूर्ण फैसला दिया– कि वे व्यक्ति भी, जिन्हें अपनी एचआईवी स्थिति के बारे में कोई "वास्तविक जानकारी" न हो, अपने साथियों को एचआईवी संरचण करने के दोषी पाए जाएंगे अगर उनके पास यह मानने की "रचनात्मक जानकारी" अथवा कारण हों कि वे संक्रमित हैं।[33]

यह निर्णय अन्य संयुक्त राज्य न्यायालयों से भिन्न है जो यह मानते हैं कि एक स्वच्छंद तथा यौन सक्रिय, कई सहभागियों वाली जीवन शैली स्वयं ही जानकारी देने के लिए जरूरी एक वैधानिक कर्तव्य का सृजन नहीं करती है।[34] इसके अलावा, एचआईवी/एड्स संक्रमित की निजता में अतिक्रमण तथा अपराधीकरण के चलते सामाजिक कलंक का कारण बनेगा, यदि इसे न्यायालय द्वारा प्रस्तुत किए गए तरीके से तथा विशिष्ट परिस्थितियों में लागू न किया गया।

सहमति

सारे आपराधिक अभियोजनों में सहमति एक आवश्यक मुद्दा है। एचआईवी/एड्स के संदर्भ में यदि एक आरोपित ने अपने एचआईवी पॉजिटिव होने की बात साधारणतः नहीं बतायी, तो अभियोजन संभवतः यह तर्क देगा कि अभियुक्त ने अपनी स्थिति न बताकर तथा अपने साथी को संभोग के जोखिमों के बारे में न बताकर अपनी लापरवाही का परिचय दिया है। बहरहाल, बचाव पक्ष इसका जबाब देते हुए कह सकता है कि जिम्मेदारी का सन्तुलन बराबर (दोनों पर) होता है, तथा असुरक्षित यौन संबंध बनाने की सहमति देकर 'साथी' संबंधित सभी जोखिमों के प्रति, जिसमें एचआईवी भी शामिल है, प्रभावी रूप से अपनी सहमति दे देती/देता है। यह तर्क मोहम्मद डीका की, जो कि लापरवाही से एचआईवी संक्रमण करने के लिए इंग्लैण्ड में दोषी ठहराया गया पहला व्यक्ति था, अपील पर चले मुकदमे के दौरान इस्तेमाल किया गया था।[35]

अंग्रेजी कानून में, एक प्रतिवादी तब तक यह तर्क नहीं दे सकता कि वादी ने संचरण के जोखिमों पर सहमति प्रकट की थी, अथवा यह कि वे ईमानदारी से यह मानते थे कि वहां ऐसी सहमति थी, जब तक कि यह सहमति ज्ञात (जानकारी पूर्ण) न हो (देखें जॉनसन)। सभी मंतव्यों तथा उद्देश्यों के लिए (जानकारी पूर्ण) ज्ञात सहमति तब अस्तित्व में होती है जब प्रतिवादी द्वारा प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से, अपनी एचआईवी प्रभावित होने की बात वादी के समक्ष प्रकट कर दी जाती है। इससे यह निष्कर्ष निकलता है कि जहां एक

32 32 जॉन. बी बनाम द सुपीरियर कोर्ट ऑव लॉस एन्जिलिस काउन्टी, सीटी. एपीपी. 2/8 बी169563 htttp:www.courtinfo.ca.gov/opinions/documents/S128248 पर उपलब्ध

33 वही

34 डो बनाम जॉनसन 817 एफ सुप. 1382 (डब्ल्यूडी मिच), कारण खारिज किया गया, 826 एफ. सुप. 1106 (डब्ल्यूडी 1993),

35 उपरोक्त टिप्पणी, नोट 9

प्रतिवादी को सजा हुई हो, वहां या तो यह बचाव संभव नहीं होगा, या फिर जूरी द्वारा स्वीकार नहीं किया गया होगा।[36] कोजानी में, उसी न्यायालय ने यह माना था कि एक व्यक्ति, जिस पर लापरवाही से एचआईवी संचरण करने का आरोप हो, केवल तभी सहमति के बचाव की बात, जिसमें सहमति में सरल विश्वास की बात भी शामिल है, कर सकता है जबकि मामला ऐसा हो कि सहमति उसमें एक "जागरूक" तथा "इच्छित" सहमति हो। दूसरे शब्दों में, न्यायालय ने "जानबूझकर संचरण का जोखिम उठाना" तथा "जानबूझकर संचरण के जोखिम पर सहमति देना" में अंतर किया। यह प्रदर्शित करता है कि सहमति सिर्फ बहुत ही अपवादस्वरूप मामलों में बचाव बन सकती है जहां पहले ही एचआईवी पॉजिटिव स्थिति का खुलासा कर दिया गया हो।

कुरियर में, कनाडा सर्वोच्च न्यायालय ने यह फैसला दिया कि किसी व्यक्ति द्वारा अपने एचआईवी पॉजिटिव होने को प्रकट न किए जाने से साथी की सहमति कानूनन अवैध हो जाएगी, जबकि मैथुन संबंधी गतिविधि "गंभीर शारीरिक क्षति के पर्याप्त जोखिम" प्रस्तुत करती हो। अतः एचआईवी पॉजिटिव व्यक्ति को हमले के लिए जिम्मेदार ठहराया जा सकता है। परंतु न्यायालय यह कहने में भी सावधान था कि संचरण के "पर्याप्त जोखिम" के मौजूद होने पर एचआईवी पॉजिटिव स्थिति को प्रकट करना मात्र एक कर्तव्य है। इस मामले ने इस मुद्दे को संबोधित किया कि क्या किसी व्यक्ति द्वारा अपनी एचआईवी स्थिति का अप्रकटीकरण धोखाधड़ी है, जिसके चलते दैहिक संबंधों की सहमति निष्प्रभावी हो जाती है जिससे एचआईवी प्रभावित व्यक्ति पर हमले का आरोप लग सकता है।[37] भारत में भारतीय दंड संहिता, धारा–269 और 270 के तहत दुर्भावनापूर्ण या लापरवाहीपूर्ण एचआईवी संचरण का कोई मामला प्रकाश में नहीं आया है। रकमा में,[38] सिफलिस पीड़ित एक यौनकर्मी को इस धारा के तहत दोषी नहीं पाया गया था क्योंकि अदालत ने यह माना कि वादी एक जिम्मेदार व्यक्ति था और इसलिए उसके साथ संभोग करने में सहमति देने वाला भी। एचआईवी/एड्स के संदर्भ में, सहमति सिर्फ मैथुन करने के लिए ही नहीं होगी बल्कि विशेषतौर पर एचआईवी प्रभावित व्यक्ति के साथ संभोग करने पर होगी। भारतीय दंड संहिता की धारा–269 और 270 जोखिम, सहमति तथा मोलतोल की तरंगों से सामंजस्य बिठा पाने के लिए कभी नहीं बनाई गयी थीं, अतः ये धाराएं इस मुद्दे पर खामोश हैं।

साक्ष्य

संचरण का साक्ष्य तथा यह साबित करना कि अभियुक्त ही वही है जिसने संचरण किया, आसान नहीं है। एक राज्य के लिए यह साबित करने के लिए कि एक व्यक्ति एचआईवी संचरण द्वारा दूसरे को मारना चाहता था, यह स्थापित करना जरूरी है कि अभियुक्त यह मानता था कि वह एचआईवी पॉजिटिव था/थी, कि उसने पूरी नीयत से दूसरे को मारना चाहा था/थी। उन मामलों में जहां पूरे मंतव्य से या जानबूझकर किए गए संचरण को सिद्ध करने की आवश्यकता हो, उन साक्ष्यों को ढूंढ़ना पड़ेगा जो कि साबित करें कि अभियुक्त पूरे मंतव्य से चाहता था कि वादी को चोट पहुंचा सके। जब तक इसका भौतिक साक्ष्य नहीं मिलता, तब तक यह एक व्यक्ति के दूसरे के खिलाफ बोले शब्द ही बनकर रह जायेंगे। यौन संचरण के मामलों में, इरादे को साबित करना लगभग असंभव है क्योंकि संचरण के तरीके की, अर्थात् संभोग की प्रकृति ही ऐसी है कि कोई गवाह नहीं होता : शयनकक्ष में क्या होता है यह नितान्त वैयक्तिक है। यदि जानबूझकर संचरण किए जाने का कोई साक्ष्य नहीं मिलता, तो संभवतः लापरवाहीपूर्ण संचरण का छोटा आरोप चुनना पड़ेगा। किसी व्यक्ति को वैधानिक रूप से लापरवाहीपूर्ण (दुर्भावनापूर्ण के विपरीत) संचरण में दोषी ठहराया जा सकेगा या

36 कन्सल्टेशन पेपर ऑन असॉल्ट्स एंड अदर ऑफेन्सिज अगेन्स्ट द पर्सन. डॉ. मैथ्यू वीइट.

37 क्रिमिनल लॉ एंड एचआईवी/एड्स कोड ऑफेन्सिज अप्लाइड इन कनाडियन प्रॉसीक्यूशन कनाडियन एचआईवी/एड्स लीगल नेटवर्क, मार्च 1999 http://www.aidslaw.ca/Maincontent/issues/criminallaw/e-info-cla2.htm

38 (1886) 11 बोम 59

नहीं, यह पूरी तरह से एक व्यक्तिगत देश के कानूनों तथा अदालतों पर निर्भर करता है। कुछ जगहों पर इन दोनों के बीच कोई विभेद नहीं है।[39]

आपराधिक संचरण के अपराध को स्थापित करने के लिए, यह स्थापित करना आवश्यक है कि अभियुक्त पूरी तरह से वादी के एचआईवी का स्रोत था। फाइलोजेनेटिक्स नामक प्रक्रिया का इस्तेमाल करते हुए विषाणु के डीएनए की तुलना करने से सामान्यतः यह साबित हो जाता है कि दोनों संक्रमित हैं।[40] अगर वे एक से हैं (या बहुत समान हैं) तो यह बहुत संभव है कि अभियुक्त ने वादी को संक्रमित किया। दूसरे, अगर डीएनए मिलता है तो यह साबित करने की आवश्यकता है कि अभियुक्त ने ही वास्तव में वादी को संक्रमित किया, न कि उल्टा। कभी–कभी यह इससे भी दिखाया जा सकता है कि दोनों में से किसकी बीमारी ज्यादा बढ़े हुए स्तर पर है, पर यह हमेशा संभव नहीं है। अतः एकमात्र निश्चित प्रमाण होगा वादी पर की गई जांच का निगेटिव पाया जाना जब प्रतिवादी पहले पॉजिटिव पाया गया हो।[41]

लुसियाना राज्य बनाम रिचर्ड जे. स्चमिड्ट में[42] इस प्रक्रिया का इस्तेमाल अभियुक्त को दुर्भावनापूर्ण संचरण का दोषी ठहराने में किया गया था, यह मुकदमा पहला ऐसा मौका था जब संयुक्त राज्य अमेरिका के किसी आपराधिक मामले में फाइलोजेनेटिक विश्लेषण को साक्ष्य के बतौर इस्तेमाल किया गया। बहरहाल, फाइलोजेनेटिक विश्लेषण प्रतिवादी से वादी को संक्रमण होने का एकमात्र साक्ष्य नहीं माना जा सकता तथा किसी मामले में अभियुक्त के दोषी होने अथवा निर्दोष होने का फैसला लेने से पहले न्यायालयों को डीएनए फॉरेन्सिक साक्ष्य भी जांचने जरूरी होंगे।[43]

निष्कर्ष (उपसंहार)

भारतीय दंड संहिता के वर्तमान प्रावधानों को उन एचआईवी पॉजिटिव व्यक्तियों पर लागू किया जा सकता है जो लापरवाही से काम करते हैं तथा जानबूझकर दूसरे व्यक्ति को संचरित कर देते हैं। अतः भारत में विशिष्ट एचआईवी/एड्स आपराधिक विधि निर्माण की आवश्यकता नहीं है।[44]

वर्तमान में, कोई भी अध्ययन यह नहीं दिखाता है कि एचआईवी संचरण का अपराधीकरण एचआईवी के प्रसार पर रोक लगाने का प्रभावी तरीका है। बल्कि आपराधिक अभियोजन के डर से लोग एचआईवी जांच, परामर्श तथा इलाज से भी हिचकिचाएंगे।[45] एचआईवी संबंधित विशेष अध्यादेश एक मिथ्या सुरक्षाबोध पैदा करेंगे कि एक आपराधिक कानून के चलते असुरक्षित यौन संबंध के सारे खतरे समाप्त हो गये हैं। जन स्वास्थ्य नीति यहां तक कहती है कि प्रत्येक व्यक्ति को यह मानकर चलना चाहिए कि उसका साथी संक्रमित है तथा तदनुसार सावधानी बरतनी चाहिए, यह नीति इस मिथ्या विश्वास से टूट जायेगी कि आपराधिक अध्यादेशों

39 उपरोक्त टिप्पणी, नोट 9

40 फाइलोजेनेटिक विश्लेषण एपिडेमियोलॉजी का एक मानक भाग है, चूंकि यह बीमारी के भण्डार का पता लगा सकती है तथा कुछेक बार बीमारी के चरण दर चरण संचरण पदचिन्ह भी दिखा सकती है। http:www.talkorigins.org/indexcc/CA/CA215.html.

41. वही

42 699 एस.ओ. 2डी 448

43 गेराल्ड एच लर्न एंड जेम्स आई. मुलिन्स द माइक्रोबाइल फॉरेन्सिक यूज ऑव एचआईवी सीक्वेंन्सिज, पृ. 22 http://hiv/lanl/gov/content

44 संयुक्त राष्ट्र, जिसने हाल ही में कहा है कि "आपराधिक (अथवा जन स्वास्थ्य) कानून को एचआईवी के जानबूझकर तथा पूरे मंतव्य से किये गये संचरण के विरुद्ध विशिष्ट आरोप शामिल नहीं करने चाहिए, बल्कि इन अपवाद के मामलों में सामान्य आपराधिक आरोपों को लगाना चाहिए।" जॉइन्ट यूनाइटेड नेशन्स प्रोग्राम ऑन एचआईवी/एड्स एंड यूनाइटेड नेशन्स हाइ कमिश्नर/सेन्टर फॉर ह्यूमन राइट्स. गाइडलाइन्स ऑन एचआईवी/एड्स एंड ह्यूमन राइट्स (रिवाइज्ड ड्राफ्ट डेटिड 11 दिसम्बर 1996) प्रीपेयर्ड बाई द सेकंड इंटरनेशनल कन्सल्टेशन ऑन एचआईवी/एड्स एंड ह्यूमन राइट्स, 23–25 सितम्बर 1996, जेनेवा

45 लेस्ली ई. वोल्फ, जेडी, एमपीएच एंड रिचर्ड वेजिना, एमपीएच, सीएपीएस, इज देयर अ रोल फॉर क्रिमिनल इन एचआईवी मई 2005. फैक्ट सीट http://www.caps.ucsf.edu/publication/crimialization/html.

ने एचआईवी के जोखिमों को कम कर दिया है।[46] एचआईवी संबंधित आपराधिक कानून एचआईवी/एड्स के साथ जुड़े सामाजिक कलंक को बढ़ाने में योगदान करता है। इसके अलावा, यह खतरा भी है कि आपराधिक आरोप उन लोगों के खिलाफ ही ज्यादतियां करने के लिए लगाये जायेंगे जो सामाजिक, सांस्कृतिक तथा आर्थिक रूप से हाशिये पर धकेले गये हैं।[47]

मुकदमों का सारांश

ड्यूक बनाम हाउसेन – 589 पी.2डी 334, पुनः सुनवाई अस्वीकृत 590 पी.2डी 1340 (Wyo. 1979) (संयुक्त राज्य अमेरिका) : हाउसेन कई मौकों पर ड्यूक के साथ, जो कि एक जनरोइया संक्रमित आदमी था, शारीरिक संबंधों में रत हुआ। खुद जनरोइया संक्रमित हो जाने के बाद, हाउसेन ने ड्यूक पर गंभीर लापरवाही से जनरोइया संचरण करने का मुकदमा दायर कर दिया। न्यायालय इस मुकदमे की उपलब्धियों पर कोई वास्तविक स्थापना नहीं देता, बल्कि इसके स्थान पर सीमाओं के अध्यादेश तथा कठिन न्यायाधिकार के मामलों पर ध्यान केन्द्रित करता है जो अन्ततः दावे को खत्म कर देते हैं। न्यायालय अपने कथन में कहता है कि "एक व्यक्ति जो लापरवाही से दूसरे को एक संक्रमण या छूत की बीमारी के संपर्क में लाता है, जिससे कि दूसरा व्यक्ति संचरित हो जाता है, अपने कार्यों से होने वाली हानि के लिए जिम्मेदार ठहराया जा सकता है।"

लांग बनाम एडम्स, 175 Ga. App. 538 (संयुक्त राज्य) (हर्पस टॉर्ट द्वारा संक्रमण) : लांग और एडम्स शारीरिक संबंधरत गैर शादीशुदा लोग थे जिसमें एक ने दूसरे को जेनिटल हर्पस का संक्रमण कर दिया। वादी ने लापरवाही तथा दुर्भावना से बीमारी का संक्रमण करने का मुकदमा दायर कर दिया।

न्यायालय ने स्थापित किया कि लापरवाही से दूसरे को एक हानिकारक बीमारी संक्रमित करना कार्य के एक कारण के बतौर मौजूद है। लापरवाही के तत्वों को लागू करते हुए न्यायालय ने पाया कि 1) एक संक्रमित व्यक्ति का कर्तव्य है कि वह सामान्य सावधानी का पालन करे, तथा 2) एक कारक संबंध स्थापित है क्योंकि हर्पस एक सामान्य तौर पर जानी जाने वाली यौन संचरित बीमारी है जो कि छूत से फैलती है तथा लाइलाज है। न्यायालय यह देखने में सावधान था कि हर्पस से संक्रमित हो जाने भर से ही व्यक्ति पर वैधानिक जिम्मेदारी नहीं आ जाती कि वह अपनी वास्तविकता अपने यौन संबंधों के साथियों को बताये, पर लापरवाही के लिए जरूरी सावधानी बरतने की सामान्य जिम्मेदारी के अंतर्गत ऐसे प्रकटीकरण से छूट भी हो सकती है। तार्किक रूप से, न्यायालय ने कहा कि हानि की गंभीरता और साथ ही साथ आचरण की उत्पीड़क प्रकृति तथा छूत की बीमारियों को काबू करने की राज्य की रुचि, ये सभी एक वैधानिक रूप से मान्यता प्राप्त हानि को निर्धारित करने के लिए पर्याप्त थे।

डो बनाम जॉनसन, 817 F.Supp. 1382 (संयुक्त राज्य) : जेन डो श्री जॉनसान के साथ, उनके कंडोम के उपयोग से मना करने के बावजूद सहमतिपूर्वक यौन संबंध बनाने के लिए तैयार हो गई। इस यौन संबंधों के चलते, डो को एचआईवी हो गया। डो ने यह कहते हुए मुकदमा दायर कर दिया कि जॉनसन की कई सारे साथियों के साथ यौन संबंध बनाने की जीवनशैली के चलते उसे पता था, या पता होना चाहिए था कि उसे एचआईवी संक्रमित हो जाने का बहुत ज्यादा खतरा था।

न्यायालय ने यह माना कि एचआईवी के लापरवाहीपूर्ण तथा धोखाधड़ी वाले संचरण के दावों को केवल तभी स्थापित किया जा सकता है जब प्रतिवादी के पास कुछ "जानकारी के स्तर" हो। साररूप में, कारकों की एक निकटतम पड़ताल जो कि वैधानिक कर्तव्य को जन्म देती है। अतः जॉनसन जिम्मेदार होगा अगर

46 उपरोक्त टिप्पणी, नोट 1
47 उपरोक्त टिप्पणी, नोट 2

उसे पता था कि उसे एचआईवी था, पता था कि वह विषाणु के साथ जुड़े लक्षणों से गुजर रहा था, अथवा पिछले यौन संबंधों के साथियों के एचआईवी पॉजिटिव पाए जाने के बारे में जानता था। न्यायालय ने इस स्थिति में वैधानिक कर्तव्य के तत्वों का वर्णन किया–

(1) संबद्ध सामाजिक हितों का सन्तुलनीकरण (निजता के अधिकार बनाम एचआईवी संचरण के खतरे),
(2) जोखिम की गंभीरता (अन्य विषाणुकृत बीमारियों के मुकाबले अत्यधिक जोखिम वाली बीमारियां),
(3) प्रतिवादी पर कर्तव्य को पूरा करने का बोझ (गोपनीयता तथा कलंक बनाम प्रकटीकरण की आसानी),
(4) (आवृत्ति) होने की संभावना (संक्रमण की कम संभाव्यता जो कि अनुमानतः 1 प्रतिशत है), तथा
(5) पक्षों के बीच का संबंध।

इसके साथ ही साथ, न्यायालय ने यह तथ्य स्थापित किया कि जॉनसन अत्यधिक जोखिम वाली गतिविधि में लिप्त था या अत्यधिक जोखिम वाले समूह का सदस्य था, लापरवाही या धोखेबाजी के सिद्धांतों के आधार पर एचआईवी के गलत संचरण के आरोपों को साबित करने के लिए अपर्याप्त है, तथा यह कि सख्त जिम्मेदारी के सिद्धांतों के तहत, यौन गतिविधि, मुकदमा चलाने के लिए अपर्याप्त रूप से "असामान्य रूप से" खतरनाक है। बहरहाल, न्यायालय ने यह स्थापित किया कि डो का प्रहार का दावा मान्य है।

होगन बनाम टावजेल, 660 So. 2d 350 **(संयुक्त राज्य)** : होगन और टावजेल शादी के 15 साल बाद अलग हो गए। एक पुनः सम्मिलन के प्रयास में, ट्रावेल ने अपनी बीबी होगन को जेनिटल वार्ट्स संक्रमित कर दिया। टावजेल को अपने जेनिटल वार्ट्स की जानकारी थी, पर उसने होगन को चेतावनी नहीं दी तथा उसे संक्रमित होने से बचाने के लिए कोई सावधानी नहीं ली। होगने ने उसके विरुद्ध लापरवाही, धोखाधड़ीपूर्ण छिपाव, भावनात्मक तनाव का जानबूझकर आरोपण तथा प्रहार के आरोप में मुकदमा दायर कर दिया।

कई आरोपों को हालांकि वैवाहिक साथियों के आपसी मामले के प्रतिरोध के आधार पर खारिज कर दिया गया, पर न्यायालय ने यह माना कि प्रतिवादी को, सहमतिपूर्ण यौन संबंधों के दौरान दूसरे को यौन संक्रमित रोग से संक्रमित करने के लिए, प्रहार का जिम्मेदार ठहराया जा सकता है। न्यायालय ने कहा कि यौन संपर्क के लिए दी गई कोई सहमति संक्रमित किए जाने के लिए नहीं होती अगर साथी हानिकारक बीमारी के संक्रमण के खतरे को धोखाधड़ी करते हुए छिपाता है। यह जाने बिना दी गई सहमति कि यौन संबंध का साथी एक यौन संचरित बीमारी से संक्रमित है, प्रभाविक रूप से सहमति का न होना है।

मुटेमेरी बनाम चीजमैन, 100 A. Crim R. **397 (विक्टोरिया का सर्वोच्च न्यायालय 1998) (आस्ट्रेलिया)** : अपीलकर्ता को, जो कि एचआईवी पॉजिटिव था, 1958 के (विक्टोरिया) अपराध अधिनियम की धारा–22 के तहत अभियोजित किया गया था तथा उसे यह पूरी तरह जानते हुए भी उसे एचआईवी है तथा वह दूसरों को संक्रमित कर सकता है, दूसरों को असुरक्षित यौन संबंधों के जरिए लापरवाही से मौत के जोखिम में डालने का दोषी पाया गया।

अपील को स्वीकार करने में तथा आरोपों को खारिज करते हुए विक्टोरिया सर्वोच्च न्यायालय ने यह स्थापित किया कि :

(1) न्यायाधीश ने अध्यादेश के अंतर्गत लापरवाही के मंतव्य की सही जांच को लागू किया था: कि एक व्यक्ति, अपने उस आचरण को पूरा करते हुए, जिस पर सवाल केन्द्रित है, यह देख पा रहा था कि उसके उस आचरण का संभाव्य परिणाम अपने साथी को मृत्यु के खतरे में डाल देना होगा, जहां कि खतरे को एक "संभावना मात्र" न मानकर एक "संभव जोखिम" के रूप में इंगित किया जाएगा। इस जांच के लिए यह आवश्यक नहीं है, जैसा कि अपीलकर्ता ने तर्क दिया कि उसने यह जान लिया कि उसके आचरण का संभव परिणाम अपने साथी की मृत्यु होगा।

(2) बहरहाल, न्यायाधीश न्यायिक संज्ञान में यह बात लेने से चूक गये कि एचआईवी के संपर्क में आना एक "जीवन को खतरे में डालने वाली स्थिति" थी; बल्कि न्यायाधीश को अपना निर्णय सुनवाई के दौरान प्रस्तुत किए गए साक्ष्यों के आधार पर लेना चाहिए था और इस तरह आरोपों को खारिज कर देना चाहिए था।

(3) अपीलकर्ता हेल्थ एक्ट 1958 (विक्टोरिया) की धारा–29 (1) के तहत उसकी पहचान बताने वाली किसी जानकारी अथवा उसके नाम के प्रकाशन को रोकने वाले एक आदेश के लाभ के लिए अधिकृत नहीं था क्योंकि (ए) सुनवाई के पहले तथा अपील के बाद में पर्याप्त प्रचार हो गया था जिसके चलते प्रचार रोकने वाले आदेश से अपीलकर्ता को महत्वपूर्ण सामाजिक तथा आर्थिक परिणामों से पर्याप्त सुरक्षा प्रदान नहीं की जा सकती थी तथा (ए) किसी भी सूरत में, अपीलकर्ता का निंदनीय आचरण अपीलकर्ता की गोपनीयता की प्रार्थना के मुकाबले दूसरे व्यक्तियों की कुशल क्षेम तथा व्यापक जनहित में खुली अदालती कार्यवाही को ज्यादा महत्व देने की ओर इशारा करता था।

रेगिना बनाम डीका [2005] EWCA Crim **2304 (यूनाइटेड किंगडम)** : डीका ने यह जानते हुए भी कि वह एचआईवी पॉजिटिव है, दो महिलाओं के साथ उन्हें यह समझने के बाद कि वह किसी संक्रमण से ग्रस्त नहीं है, उनकी सहमति से असुरक्षित यौन संबंध बनाये। डीका की सफाई यह थी कि असुरक्षित यौन संबंधों की सहमति के अंतर्गत संचरण के खतरों की सहमति भी शामिल है। ट्रायल कोर्ट ने उसे दो महिलाओं को दुर्भावनापूर्वक गंभीर शारीरिक क्षति पहुंचाने का दोषी पाया। अपीलीय कोर्ट ने उसके दोषी साबित किये जाने के फैसले को बरकरार रखा।

आर बनाम कोजानी [2005] EWCA Crim **706 (यूनाइटेड किंगडम)** : कोजानी ने तीन महिलाओं को अपनी एचआईवी स्थिति नहीं बताई जो कि उसके साथ असुरक्षित यौन संबंध बनाने को तैयार हुई। प्रत्येक महिला को एचआईवी हो गया। कोजानी को गंभीर शारीरिक क्षति पहुंचाने के आरोप में सजा दी गई और उसने सहमति के बचाव को सफाई में प्रस्तुत किया। अपीलीय न्यायालय ने यह स्थापना दी कि जहां एक व्यक्ति को अपनी एचआईवी स्थिति के बारे में पता है, वहां उसके यौन संबंध के साथी को भी "सूचित" होने के लिए उसकी एचआईवी स्थिति की सूचना होनी चाहिए। इसके साथ ही साथ, न्यायालय ने यह भी स्थापना दी कि एचआईवी स्थिति को इस तरह छिपाना "धोखाधड़ी" तथा "लापरवाही" भी है।

न्यूजीलैंड पुलिस बनाम डेली (4 अक्टूबर 2005) CRI-2004-085-009168 **(न्यूजीलैंड)** : डेली जो कि एक एचआईवी प्रभावित व्यक्ति था। आपसी मुख मैथुन (हालांकि स्खलन की सीमा तक नहीं) तथा कंडोम के साथ मैथुन में रत हुआ। मुकदमे के तथ्यों तथा चिकित्सीय साक्ष्यों के आधार पर न्यायालय ने यह पाया कि स्खलन के बिना मुख मैथुन से, तथा सुरक्षित मैथुन से, एचआईवी संचरण की संभावना का जोखिम इतना कम है कि डेली का यह वैधानिक कर्तव्य नहीं बनता कि वह अपनी एचआईवी स्थिति अपने साथी को बताये। लापरवाही के न्यायशास्त्र के तहत, कंडोम के इस्तेमाल ने उपयुक्त सावधानी का उदाहरण प्रस्तुत किया।

ह्यूमन राइट्स लॉ नेटवर्क

एचआरएलएन के निम्न कार्यालयों से आप हमारे संगठन के बारे में अधिक जानकारी ले सकते हैं। इन कार्यालयों से हमारे तमाम प्रकाशन और कॉम्बैट लॉ पत्रिका (हिन्दी–अंग्रेजी) भी प्राप्त कर सकते हैं।

दिल्ली
576, मस्जिद रोड, जंगपुरा
नयी दिल्ली 110014
फोन : 011–24374501, 24376922, 24378854–56

पंजाब / चंडीगढ़
2439, सेक्टर 37–सी,
चंडीगढ़–160036,
फोन:0172–23094478, मो : 9815072279

हरियाणा
राजकुमार, ग्राम–नारायणा,
तह. समालका,
पानीपत–132150,
मो. 09315551130

हिमाचल प्रदेश
(i) उत्तम भवन, विकास नगर
शिमला–171002, हिमाचल प्रदेश
फोन : 0177–2621108, मो : 09418141694
(ii) कमलेश जनरल स्टोर, पहली मंजिल,
वीपीओ सिद्घबरी, तहसील–धर्मशाला
जिला–कांगड़ा,
मो. 9418018983

सिक्किम
दूसरी मंजिल, सत्ते बाजार,
महेश सैलून के ऊपर, अपर सिचे,
डिस्ट्रिक्ट कोर्ट के पास, गंतोक–737101
फोन : 03592–203557, मो. : 09434382200

अंडमान–निकोबार द्वीपसमूह
एबी–31 अबरदीन बाजार,
बाबू लेन, पोर्टब्लेयर–744101
फोन: 03192–230756, मो. : 09434281880

राजस्थान
फ्लैट नं. 202, सी–ए, सुफल अपार्टमेंट,
सवाई जयसिंह हाईवे, बनी पार्क,
जयपुर–302006
फोन : 0141–4030366

उत्तर प्रदेश
(i) 105, अशोक नगर,
इलाहाबाद–211001
फोन: 0532–2623893,
मोबाइल: 09415985414
(ii) जे–19 / 66–67,
बड़ी बाजार, थाना–जैतपुरा,
वाराणसी–221002
फोन: 09235887682, 09452037615
(iii) एलआईजी–7,
रामपुरम श्याम नगर
कानपुर–13
फोन : 09956122175

उत्तराखंड
ईश्वरी भवन वेस्ट पोखरखाली,
रानीधारा रोड, अल्मोड़ा–263601
मोबाइल: 09412092159

तमिलनाडु
319 / 155, दूसरी मंजिल,
लिंघी चेट्टी स्ट्रीट,
चेन्नई – 600001, तमिलनाडु
फोन : 044–25243246,
मो. 09841091674

मध्य प्रदेश
(i) 10–बी, पहली मंजिल, अमन काम्प्लेक्स,
गोविन्द गार्डन,
(अप्सरा टाकिज और पंजाब नैशनल बैंक के पास),
नोबल इलेक्ट्रॉनिक के ऊपर,
गोविन्दपुरा, भोपाल–462023
फोन: 0755–4700012, मोबाइल: 9826569013
(ii) डॉ. आभा खरे हॉस्पिटल के पीछे,
चौबे कॉलोनी, छतरपुर,
मध्य प्रदेश
फोन : 09425144315
(iii) 54 / 4, मालवीय नगर
एबी रोड के नजदीक
इंदौर 452008
मो. 09826034053

आंध्र प्रदेश
म. नं. 1–9–312/5/2,
श्री प्ले स्कूल के पीछे, अच्युतरेड्डी मार्ग,
विद्यानगर, हैदराबाद–500044
फोन : 40–27661883, मोबाइल: 9849488022

पश्चिम बंगाल
सोहिनी अपार्टमेंट्स
फ्लैट 1–ए, 3, पार्वती चक्रवर्ती लेन,
कालीघाट, कोलकाता–700026
फोन : 33–30967154, मोबाइल: 9830172462

गुजरात
जनहित
बी–5, सुशील नगर सोसाइटी, आक्ट्रोई नाका के पास,
गांधी लेबर इंस्टीट्यूट के सामने,
ड्राइव–इन–रोड, अहमदाबाद–380052
फोन : 079–7475815

उड़ीसा
फ्लैट 403–बी ब्लॉक, रश्मि विहार अपार्टमेंट्स,
बुधेश्वरी कॉलोनी, कटक रोड, भुवनेश्वर–751006
फोन : 0674–2314260, मो.: 9861023282

महाराष्ट्र
(i) इंडिया सेंटर फॉर ह्यूमन राइट्स एंड लॉ,
पहली मंजिल, मोतीवाला मेंशन,
56 डॉन्टड स्ट्रीट (डामर गली),
मस्जिद (वेस्ट), मुंबई–400009
फोन : 022–23439651, 234336692
(ii) द्वारा वाईएमसीए
140, महात्मा गांधी रोड,
नागपुर–440001
फोन : 0712–2524834, 2524789
(iii) 147, अशोका पैविलियन,
31, डॉ. आम्बेडकर रोड, कैम्प, पूणे – 01
फोन : 020–26050746

मणिपुर
केपीआइसी बिल्डिंग, दूसरी मंजिल,
वीडियोकॉन हाउस के सामने
पनोआ बाजार, इम्फल–795001
फोन: 0385–2442165

जम्मू–कश्मीर
बी.डी. हाउस, पहली मंजिल,
हुर्रियत ऑफिस के पास, कुर्सू राज बाग,
श्रीनगर–190001, कश्मीर
मो. : 09906667957

केरल
(i) टीसी–25/2952, ओल्ड जीपीओ भवन,
अम्बुजा विलासोम रोड,
तिरुवनन्तपुरम–695001
फोन: 0471–5581466, 2460652
(ii) 41/3661, एम्पल्स बिल्डिंग
मूल्य स्ट्रीट, आफिस प्रोविडेंस रोड,
कोच्चि – 682018
फोन: 0484–2390680

कर्नाटक
20, पार्क रोड,
टास्कर टाउन, शिवाजी नगर,
बेंगलूर–560051
फोन: 080–65624757

अरुणाचल प्रदेश
क्वार्टर 7, टाईप–4,
राजनिवास क्षेत्र,
इटानगर, अरुणाचल प्रदेश
फोन: 0360–2292561, मो.09436050907

बिहार
एचआरएलएन
बी–25, मजिस्ट्रेट कालोनी
रोड नं. 4, पटना–800025
मो. 09835441778

झारखंड
हिरन बाला निवास, ईस्ट जेल रोड,
नीयर प्लाजा चौक, रांची–834001
मो. 09431103047

गोवा
रोसले सोलेमन
149डी, गीना मैना कर्टोरियम,
सलीत, गोवा–403709
मो. 09850832980

असम
मकान नं.26, आइकोन एकेडमी के सामने,
राजघर रोड,
गुवाहाटी – 781203
मो. 09864034505

एचआईवी / एड्स और कानून

अपनी जनता के स्वास्थ्य के अधिकारों का संरक्षण और प्रोत्साहन राज्यों का वैधानिक दायित्व है। स्वास्थ्य के अधिकार के अंतर्राष्ट्रीय स्रोतों का अर्थ समाज में स्वास्थ्य की स्थिति वैचारिक स्तर पर निर्धारित करना है। स्वास्थ्य को एक आदर्श मानवीय स्थिति के रूप में परिभाषित किया गया है और एक महत्वपूर्ण सामाजिक तथा राजनीतिक अच्छाई के रूप में भी परिभाषित किया गया है। औषधीय चिकित्सा, स्वास्थ्य रक्षा के तात्कालिक उपाय और जनस्वास्थ्य राष्ट्रीय चिंता के विषय है।

मानवाधिकार उन सार्वभौमिक अधिकारों का समुच्चय है जो व्यक्ति को लिंग भेद, राष्ट्रीयता, धर्म, संस्कृति या अन्य प्रकार के सामाजिक पद–प्रतिष्ठा के बावजूद प्राप्त है, जो मनुष्य को विरासत में प्राप्त है और जो अंतर्राष्ट्रीय कानून द्वारा प्रदत्त और संरक्षित है। मानवाधिकार और जनस्वास्थ्य एक दूसरे के पूरक दृष्टिकोण हैं। ये दोनों विचारणीय क्षेत्र – मानवाधिकार और जनस्वास्थ्य – परस्पर अलग–अलग नहीं हैं बल्कि अक्सर मिले–जुले हैं। अक्सर ऐसे कार्यक्रम जो मनावाधिकार के लिए होते हैं स्वास्थ्य से भी जुड़े होते हैं और ऐसे कार्यक्रम जो मानवाधिकारों को बाधित करते हैं जन–स्वास्थ्य के उद्देश्यों के भी खिलाफ होते हैं। जनस्वास्थ्य के कार्यक्रम मानवाधिकार पर सकारात्मक या नकारात्मक प्रभाव भी डाल सकते हैं और संघर्ष तथा शांति के समय मानवाधिकार के उल्लंघन स्वास्थ्य पर असर डाल सकते हैं।

इस तरह एचआईवी / एड्स के प्रति मानवाधिकार दृष्टिकोण मानवाधिकार संरक्षण के संदर्भ में राज्य के दायित्व पर आधारित है। एचआईवी / एड्स मानवाधिकार की अनिवार्यता को प्रदर्शित करता है क्योंकि प्रभावी कदम उठाने में आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक अधिकारों साथ ही नागरिक तथा राजनीतिक अधिकारों को लागू किया जाना जरूरी है। इसके अलावा एचआईवी / एड्स के प्रति अधिकारों पर आधारित दृष्टिकोण मानवीय गरिमा और समानता की अवधारणा में भी समाहित होता है, जो सभी संस्कृतियों और परंपराओं में पायी जाती है।

एचआईवी / एड्स जैसी महामारी के खिलाफ काम करने के वर्षों के अनुभव से यह स्पष्ट हो गया है कि एचआईवी को फैलने से रोकने और उसका प्रभाव कम करने के लिए मानवाधिकार का संरक्षण और प्रोत्साहन अनिवार्य है। मानवाधिकार का संरक्षण और प्रोत्साहन एचआईवी / एड्स प्रभावित व्यक्तियों की गरिमा के संरक्षण और इनके संक्रमण को कम करने संबंधी जनस्वास्थ्य के लक्ष्यों को पूरा करने के लिए भी जरूरी है। यह एचआईवी / एड्स प्रभावित लोगों पर पड़ रहे प्रतिकूल प्रभाव को कम करने के लिए तथा इनके खिलाफ लड़ रहे व्यक्तियों और समुदायों को अधिकार संपन्न बनाने के लिए भी जरूरी है।

HRLN
ह्यूमन राइट्स लॉ नेटवर्क
नई दिल्ली–110014, भारत

ISBN 81-8947937-7
9788189479374